इदं पुस्तकं सूर्यपुरे श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई जैनपुस्तकोद्धारसंस्थाया अवैतनिककार्यवाहक-मोतीचंद-मगनभाई चोकसी इत्यनेन सरस्वतीमुद्रणालये, गोपीपुरा, मुद्रणमन्दिरे बालुभाई-हीरालाल-लालनद्वारा मुद्रापितम्।

Printed By -
Balubhai Hiralal Lalan at the 'Sarasvati Mudranlaya' Gopipura, Surat.

Published By Sheth -Devchand Lalbhai Jain Pustakoddhar Fund, At Sheth Devchand Lalbhai Jain Boarding House for Shri Ratansagarji Jain Boarding, Badekhan Chakla, Gopipura, Surat. By the Hon. Managing Trustee, Motichand Maganbhai Choksi.

Sheth Devchand Lalbhai Pustakoddhar Fund Series No. 101

Shree Alpaparichit Saidhantik Shabda - Kosh

FIRST PART

[*A To AOU*]

—: *Author* :—

Agmoddharak Acharya Shree Anandsagarsurishwarji

· : *Editor* .—

Agmoddharak Shree Anandsagarsurishwarji 's Sishyo

Muni Kanchanvijay and Muni Kshemankarsagar

Collected:-

SHREE GUNSAGARJI

SHREE ANANDSAGARSURISHWARJI'S ANTEWASI

- **Publisher** :-

Motichand Maganbhai Choksi

Managing Trustee For :-

Sheth DEVCHAND LALBHAI JAIN PUSTAKODDHAR FUND

S U R A T

First Edition **Copies 500**	**Price Rs. 6-0-0**	*Vikram Samvat 2010.* *Christation Era 1954.*

The Board of Trustees:



संस्थानुं ट्रस्टी मंडळ:—

THE LATE
SHETH DEVCHAND LALBHAI JAVERI.

BORN 1853 A D SURAT

DIED 13TH JANUARY 1906 A D, BOMBAY



श्रेष्ठी देवचन्द लालभाई जहवेरी.

जन्म १९०९ वैक्रमाब्दे
कार्तिकशुक्लैकादश्या (देवदीपावलीदिने)
सूर्यपूरे.

निर्याणम् १९६२ वैक्रमाब्दे
पौषकृष्णतृतीयायाम् (मकरसंक्रान्तितिथौ)
मोहमयीनगर्याम्

आगमोनुं मुद्रण-वाचना—आ कलिकालमां विक्रमनी वीसमी सदीमां एवो पण एक समय आव्यो के-ज्यां शास्त्रीय बोध ओछो थवा लाग्यो अने हस्तलिखित प्रतो वांचवानी तेमज वांचवा माटे प्रतो मेळववानी पण मुश्केलीओ ऊभी थई. आथी जो लखाण छापेलु मळी जाय अने तेनो जो बोध अपाय तो ते हितावह निवडे. आ हेतुथी आगमो[४] छपाववा अने तेनी वाचनाओ आपवी एम प. पू. आगमोद्धारकगुरूदेवश्रीनी प्रेरणाथी नक्की थयुं. अने संपादननुं कार्य अने वाचनानुं कार्य आगमज्योतिर्धर, अप्रमादी. आगमोद्धारकश्रीने ज करवानुं थयु. आथी जेम जेम आगमो [illegible] तेम तेम पाटण[५] आदि स्थळोए 'वाचनाओ' अपाई अने तेनो सेंकडो साधुसाध्वीओए [illegible] लीधो.

[illegible] सागर अने तेमां आवता विषयो पण ए सागरना उपसागरो जेवा छे. परंतु [illegible] छूटा छूटा पडया होय तो उपसागर रूपे देखाय, तेथी ते बधा प्रवाहो एकत्र करी [illegible] उपसागरो बनाववा. आ मुद्दाए जेम आगमो छपाता गया तेम तेम वर्तमान श्रुतना [illegible] आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आगमोमां जुदा जुदा विषयोने जणावनारा त्रेपन (५३) अंको पाड्या [illegible] 'शब्दकोष' माटेना शब्दो अंगे पण 'फूल'नुं एक निशान कर्युं ए निशानो एवां हतां [illegible] शब्दथी क्यां सुधीनो भाग लेवानो छे ते जणाववा माटे आदिमां अने अंतमां [illegible] अंक मूकवामां आवतो हतो. ज्यारे आ कोषना शब्दोने अंगे फूलनुं निशान [illegible] तेनां पण खूबी करवामां आवती हती के—जो शब्द एक अक्षरनो होय तो [illegible] होय तो बेनी वच्चे, यावत् जेटला अक्षरनो होय तेना मध्य बिन्दुए निशान [illegible] आवी रीते शब्दोनी संकलना थई. आ बधा विषयो अने शब्दो लहिया [illegible] करावाता हता.

[illegible] नाम 'श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष' राखवामां आव्युं छे कारण [illegible] वपरायेला तमाम शब्दो नथी, परंतु जे शब्दनो परिचय अल्प

[illegible] सं. १९७१ना महा सुद १० ने सोमवार २५-१-१९१५ना दिवसे [illegible] आगमोद्धारककृत 'आगमसमितिस्थापनास्तव' आमां संपादित [illegible]

[illegible]	[illegible]	[illegible]	वाचना आपेल ग्रन्थोना नाम
			श्रीदशवैकालिक, श्रीसूत्रकृतांगसूत्र, ७॥ षट्त्रिंशिकाओ।
	[illegible]	[illegible]	[illegible], श्रीयोगदृष्टिसमुच्चय, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२
	[illegible]	[illegible]	[illegible]सूत्र १/४, श्रीउत्तराध्ययनसूत्र १/३।
			[illegible]सूत्र ८/४, श्रीस्थानांगसूत्र १/२।
	[illegible]	[illegible]	[illegible]सूत्र १/२, श्रीस्थानांगसूत्र १/२, श्रीऔपपातिकसूत्र
	[illegible]	[illegible]	[illegible]सूत्र २/३, श्रीआचारांगसूत्र १/२।
			[illegible]सूत्र ३/४, आचारांगसूत्र १/२, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२,
	[illegible]	[illegible]	[illegible]सूत्र।
			[illegible], श्रीपिंडनिर्युक्ति, श्रीभगवतीसूत्र ८/४१,
	[illegible]	[illegible]	[illegible]सूत्र ३३/३६।
			[illegible]सूत्र ३३/४१ श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३/३६, श्रीसमवायांगसूत्र
	[illegible]	[illegible]	

THE LATE
SHETH DEVCHAND LALBHAI JAVERI.

BORN 1853 A. D. SURAT — DIED 13TH JANUARY 1906 A. D., BOMBAY



श्रेष्ठी देवचन्द लालभाई जहवेरी.

जन्म १९०९ वैक्रमाब्दे
कार्तिकशुक्लैकादश्या (देवदीपावलीदिने)
सूर्यपूरे.

निर्याणम् १९६२ वैक्रमाब्दे
पौषकृष्णतृतीयायाम् (मकरसंक्रान्तितिथौ)
मोहमयीनगर्याम्

प्रकाशकीय

卐

आ अवसर्पिणी कालना दुःषम आरामां चरमशासनपति श्रमण भगवान् महावीर स्वामीना शासनमां शासनना पुण्य प्रतापे ते ते समये आचार्य भगवंतोअे 'आगम' वगेरे साहित्यनो उद्धार, पुनरुद्धार करीने आ कलिकालमां वीसमी सदीमां जे विद्यमान राख्युं छे ते आपणुं अहोभाग्य छे. तेथी तेवा साहित्यने प्रकाशन करवा माटे अमारी आ संस्था सं १९९४मां प पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीना उपदेशथी स्थपाई हती. आ संस्था मारफत अमे आज सुधी १०० ग्रन्थो प्रकाशीत करी चूक्या छीअे अने अमे १०१मा ग्रन्थाङ्क तरीके श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषना नामे आ ग्रन्थने सहर्ष प्रगट करीअे छीअे

तारक आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आ कलिकालना विषम वातावरणमां आगमोनो बोध दुर्बोध न थई जाय ते हेतुअे आगमोदयसमितिनी स्थापना करावी अने आगमवाचना आपवानुं कर्युं. तेथी ते समितिअे आगमो छपाववानुं काय शरू कर्युं. तेमज आ संस्थाअे पण अनुयोगद्वार वगेरे आगमो छपाव्यां ते वखते अने पछीथी आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आगमोना जुदा जुदा विषयो तारवतां 'आगमकोष'नो पण अेक विषय तारव्यो हतो अने कोष छपाववो हतो आ विचारोत्पत्ति आजथी पांत्रीस वर्ष पहेलां थई हति प. ता गुरुदेवश्रीना सदुपदेशथी नीचेना सद्‌गृहस्थो तरफथी नीचेनी रकमो अमारी संस्थाने मळी हती. ते आ प्रमाणे –

१. अमदावादनिवासी शा डाह्याभाई पीतांबरदास रू १५०१.

२. सुरतनिवासी झवेरी सोभागचंद सुरचंद रू १००१.

३ सुरतनिवासी झवेरी सांकळचंद सुरचद रू ५०१

आचार्य देवनो विहार माळवा, बंगाळ तरफ लंबायो होवाथी ते कार्य घणी मुदत सुधी पडी रह्युं हतुं. ते (छपाववानुं कार्य) अमे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी संमतिथी शरू कर्युं आ नीर्णय सं २००४मां थयो

आथी प. ता गुरुदेवश्रीनी आज्ञा अनुसार पू मुनिमहाराज श्रीगुणसागरजी पासेथी श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं प्रेस मेटर अमे मेळव्युं ते श्रीसरस्वतीमुद्राणालय, सुरतमां छपाववा माटे आप्युं अने तेनुं संपादन करवा माटे मुनिमहाराज श्रीकंचनविजयजी तथा श्रीक्षेमंकरसागरजीने विनंति करी तेओश्रीअे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना अनन्य पट्टधर, विद्याभ्यासंगी, श्रुतस्थविर, आचार्य महाराज श्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजनो संयोग मल्यो त्यां सुधि प्रूफ वंचाववा पूर्वक अने ते पछीथी स्वतंत्रपणे (ते मुनिवर्योअे) आ संपादन कार्य कर्युं तेथी अमो आ अद्वितीय आगमतलस्पर्शीज्ञाता, आगामतत्त्व पारदृश्वा, आगमज्योतिर्धर, शासनसंरक्षणबद्धकक्ष, तत्त्वशिरोमणि, आगमाव्युच्छित्तिकर शिलाताम्रपत्रोत्कीर्णागमकारापक, गंभीरानेकग्रन्थप्रणेता, अन्त्यसमये पक्षावधि अर्धपद्मासनस्थायी, ध्यानस्थस्वर्गत

श्री- आगमोद्धारक आचार्यवर्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी[1] महाराजे 'संकलित' करेलो श्री-
अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनो 'संपूर्ण स्वर' सुधीनो पहेलो भाग सहर्ष प्रकाशित करीए छीए
आ संस्थाना प्रथम पुस्तकना संपादक[2] तरीके पण आचार्यदेव श्रीआणंदसागरसूरिश्वरजी
म हता अने बीजा सैंकडानी शरुआतना प्रथम पुस्तक तरीके पण तेओश्रीनो सकलीत अमूल्य
कोष प्रसिद्ध करीए छीए.

कोषनी विशिष्टता अंगे संपादकिय निवेदनमां घणु कह्युं छे, छतां अमारी संस्थाए आना
प्रकाशनमां वधारे रस लीधो तेनु मुख्य कारण ए छे, के आज सुधी छपायेला प्राकृतकोषोमां
अभिधानराजेन्द्रकोष, पाइयसद्दमहण्णवो आदि केटलाक कोषो छे पण तेमां न्यूनाधिकरुपे
विचार करतां उपयोगितामां बाध आवे छे—जेमके अभिधान राजेन्द्र कोष प्रमाणमां एटलो
वधो मोटो छे के तेमांथी कोइ शब्द शोधवा माटे वधारे परिश्रम पडे अने छपाईमां के
सम्पादनमां त्रुटी रहेवाने लीधे सूत्रो अने ते ते प्रकरणो घणा परिश्रम पछी पण जडतां नथी
पाईयसद्दमहण्णवोमां जैनसैद्धान्तिक शब्दो उपर वधारे भार मूक्यो होय तेम जणातुं नथी.
पण प्रस्तुत ग्रन्थमां कोई पण जैन के जैनेतर विद्वान् प्रचलित जन पारिभाषिक शब्दोनो यथार्थ
परिचय टूंकमां अने सहेलाइथी प्राप्त करी शके एवी तक छे, तथा मुनिराजो पण ग्रन्थ सम्पादनना
कार्योमां सहायता लइ शके तेम पण छे.

अमे इच्छीए छीए के आना प्रकाशनने विद्वज्जनो योग्य आदर करशे ज.
आ कोषने अंगे सूचनाओनी समजणो तथा ते ते ग्रन्थोनां पानांओनी सूची पण संपादक
पू महाराजोए आपी छे ते अंगे 'संपादकीय' वांचवा वांचक वर्गने अमारी विनंति छे
आ ग्रन्थना संकलनाकार प पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीनुं स्तोत्र सुमनोहर गूंथी ग्रंथने
अलंकृत करनार सदा ज्ञानोद्यमीव्याकरण-साहित्य-न्यायविसारद × × × × नो
उपकार मानीए छीए

अमारा प्रकाशन कार्यमां जे जे महाशयोए अमने मदद करी छे ते ते महाशयोना अमे ऋणी छीए.

लि० भवदीय
मोतीचंद मगनभाई चोकसी
विगेरे ट्रस्टीओ

वि. सं. २०१०
आशो सुद १५ विजयादशमि
ता ७-९-१९५४

---

१ तेओश्रीनो सुरत उपर तो अनहद उपकार छे तेओश्रीने सवत १९७४ना वैशाख सुद १० ना सुरतमा ज 'आचार्य' पदवी अपाइ हती. श्रीजैनानदपुस्तकालय, श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममदिर वगेरे सुरतमा ज छे. अने स. २००६ना वैशाख वद ५ मे 'स्वर्गवास' पण सुरतमा ज थयो छे. तेओश्रीनो अग्निसस्कार पण सुरत शहेरनी मध्यवर्त्ती गोपीपुरामा आगममदिरना सामे जूनीअदालतथी ओळखाती जमीनमा थयो हतो. वळी तेज जग्या उपर गुरुदेवश्रीना स्मरण तरीके सपूर्ण इतिहासने जणावनारु 'श्रीआगमोद्धारकगुरुमदिर' बधाववामा आव्यु छे.

२. तेओश्रीनु मूख्य कार्यक्षेत्र सुरत ज रह्यु हतु. तेनी प्रतिकतरीके अनेक ज्ञान पिपासानी सस्थाओ स्थपाइ हति.
(१) शेठ देवचद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फड.
(२) शेठ नगीनभाई मछुभाई जैन साहित्योद्धार फड.
(३) श्रीरत्नासागरजीजैनगीडलरकुल (विद्याशाला) कायमि फड
(४) श्रीजैन तत्वबोध बोध पाठशाला वीगेरे अनेक सस्थाओ तेओना उपदेशनु ज परिणाम छे.

संपादकीय वक्तव्य

卐

"ॐ णमो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाईमहावीर पज्जवसाणाण। णमो गोयमाईमहामुणीणं। इक्कारस अंगाइं, बारसुवंगा पइन्नगा दस य। छेया छ चऊ मूला, नंदी अणुओगा णमंसामि[1] ॥१॥"

साहित्यमां ऊंडा ऊतरेला रसिकोने विविध विषयोना बोधनी आवश्यकता रहे छे. जे विषयनो बोध जे मनुष्यने होवो जोइअे ते बोध सिवायनो मनुष्य ते विषयने ग्रहण करवा जाय तो अज्ञानी वांदरानी जेम "मने पकडयो-मने पकडयो" जेवी अेनी दशा थाय तेथी ते विषयना बोध माटे ते विषयना शब्दना ज्ञानंनी, अर्थना ज्ञानंनी अने तेना भावार्थना ज्ञानंनी, अर्थात् ते पदार्थना शब्दार्थ, भावार्थ अने ऐदंपर्यानी जरूर छे जो ते समज्या सिवाय प्रवृत्ति कराय तो भोजन करवा बेठेलो 'सैंधव' मंगावे अने 'घोडो' लावे तेना जेवु थाय

शब्दना बोधने करनारूं जे साहित्य होय तेने 'शब्दकोष' आदि शब्दथी संबोधी शकाय. एवा 'शब्दकोषो'नी उत्पत्ति कां तो आगमोमां आवेला पर्यायो रूपे आपी होय कां तो निघण्टु जेवा 'शब्दकोषो' रूपे होय, अथवा बीजा घणाअे 'शब्दकोषो' रूपे होय. आथी दरेक भाषावार अनेक 'शब्दकोषो' योजाया छे अने योजाय छे.

जैन दर्शन माटे तो ते शब्दोना अर्थ टीकाकारोए प्रकरणना आधारे जे रीते मंजुर कर्या छे ते रीते ज लेवा योग्य छे शब्दो-यौगिक, रूढ अने मिश्र एम साहित्यकारोए मान्या छे, ते यथार्थ छे. आथी जैन दर्शनमां ऊंडा ऊतरवावाळाने पण ते बोधनी जरूर तो छे ज, तेथी तेवा प्रकारना 'शब्दकोष'नी जरूरियात मानवी'ज पडे. आ उद्देश लक्ष्यमां लइशुं तो जैन दर्शनमां आवता शब्दोना अर्थवाला अनेक कोषो होवा छतां पण आ नवा कोष माटे स्थान छे ज.

संकलनाकार—ग्रन्थकार स्वतंत्र लेखिनीथी जे ग्रन्थ करे तेमनी ज कृति कहेवाय छे. परंतु बीजा ग्रन्थोमांथी अेकत्रित करेलुं होय तो आ बधुं बीजा ज ग्रन्थोमांनुं छे, एम जणाववा माटे पोते संकलना करी छे एम जणावे छे. तेथी महत्त्वपूर्ण अनेक जैन ग्रन्थोना संपादक अने संशोधक, तेमज संस्कृत, प्राकृत अने गुजरातीमां विविध विषयोनी कृतिओ रचनारा,[2] आगमोद्धारक[3] आचार्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजे सैद्धान्तिक शब्दोनी आ कोषमां संकलना करी छे, आथी आ ग्रन्थना 'संकलनाकार' प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्री छे

---

(१) मंगळाचरण तरीके आपेलु समग्र अर्धमागधी छेल्ला अेक शब्दने छोडीने 'शिलोत्कीर्ण आगमो'नी पीठिकामांनु छे जुओ—आगमरत्नमंजूषा शिला नं. १/१.

(२) जुओ अमारी संपादन करेली पुस्तिका—(१) प्रशमरति अने संबंधकारिका, परि. ३ थी ८ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (२) उपदेशरत्नाकर (भावार्थ) पृ १९-२७ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (३) आचारांगसूत्र पृ २५२-२५६ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (४) आनंदसुधासिन्धु भा २ परि. ४ 'आगमोद्धारकना व्याख्यानोनी सूत्रों तथा 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि', (५) आराधनामार्ग भा. १ पृ २२-२३ 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि.

(३) आ संबंधमां जुओ—"आगमोद्धारकबिरुद" अे नामनो प्रो हीरालाल र. कापडियानो लघु लेख अे लेख सुरतना "प्रभाकर"पत्रना ता १४-५-५०ना अंकमां छपायो छे

आगमोनुं मुद्रण-वाचना—आ कलिकालमां विक्रमनी वीसमी सदीमां एवो पण एक समय आव्यो के-ज्यां शास्त्रीय बोध ओछो थवा लाग्यो अने हस्तलिखित प्रतो वांचवानी तेमज वांचवा माटे प्रतो मेळववानी पण मुश्केलीओ ऊभी थई. आथी जो लखाण छापेलु मळी जाय अने तेनो जो बोध अपाय तो ते हितावह निवडे. आ हेतुथी आगमो[४] छपाववा अने तेनी वाचनाओ आपवी एम प पू. आगमोद्धारकगुरूदेवश्रीनी प्रेरणाथी नक्की थयुं. अने संपादननुं कार्य अने वाचनानुं कार्य आगमज्योतिर्धर, अप्रमादी. आगमोद्धारकश्रीने ज करवानुं थयु आथी जेम जेम आगमो छपाता तेम तेम पाटण[५] आदि स्थलोए 'वाचनाओ' अपाई अने तेनो सेंकडो साधुसाध्वीओए लाभ लीधो.

आगमो रूपी सागर अने तेमां आवता विषयो पण ए सागरना उपसागरो जेवा छे. परन्तु ते अखात रूपे छूटा छूटा पडया होय तो उपसागर रूपे देखाय, तेथी ते वधा प्रवाहो एकत्र करी जुदा जुदा उपसागरो बनाववा. आ मुद्दाए जेम आगमो छपाता गया तेम तेम वर्तमान श्रुतना ज्ञाता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आगमोमां जुदा जुदा विषयोने जणावनारा त्रेपन (५३) अंको पाड्या अने 'शब्दकोष' माटेना शब्दो अंगे पण 'फूल'नुं एक निशान कर्युं ए निशानो एवां हतां के—अंकोमां कया शब्दथी क्यां सुधीनो भाग लेवानो छे ते जणाववा माटे आदिमां अने अंतमां निशाननी साथे अंक मूकवामां आवतो हतो. ज्यारे आ कोषना शब्दोने अंगे फूलनुं निशान मूकवामां आवतुं हतुं तेमां पण खूबी करवामां आवती हती के—जो शब्द एक अक्षरनो होय तो एकनी नीचे, बेनो होय तो बेनी वच्चे, यावत् जेटला अक्षरनो होय तेना मध्य बिन्दुए निशान मूकवामां आवतुं हतुं आवी रीते शब्दोनी संकलना थई. आ वधा विषयो अने शब्दो लहिया द्वारा उताराईने एकत्रित करावाता हता.

नाम—आ कोषनुं नाम 'श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष' राखवामां आव्युं छे कारण ए छे के—आ कोषमां आगमोमां वपरायेला तमाम शब्दो नथी, परंतु जे शब्दनो परिचय अल्प

---

४ आगमो छपाववा माटे भोयणीतीर्थमां स १९७१ना महा सुद १० ने सोमवार २५-१-१९१५ना दिवसे श्रीआगमोदयसमितिनी स्थापना थई- आना अंगेनु आगमोद्धारककृत 'आगमसमितिस्थापनास्तव' अमारा संपादित आचारंगसूत्र (भाग १) (व्या. स) मा छपायु छे

५न	स्थळ	वि स	वाचना आपेल ग्रन्थोना नाम
१	पाटण	१९७१	श्रीदशवैकालिक, श्रीसूत्रकृतांगसूत्र, ३।। पट्त्रिंशिकाओ।
२	कपडवणज	१९७२	श्रीललितविस्तरा, श्रीयोगदृष्टिसमुच्चय, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२ श्रीआवश्यकसूत्र १/४, श्रीउत्तराध्ययनसूत्र १/३।
३	अमदावाद	१९७३	श्रीविशेषावश्यकसूत्र ८/४, श्रीस्थानागसूत्र १/२।
४	सूरत	१९७४	श्रीविशेषावश्यकसूत्र १/२, श्रीस्थानागसूत्र १/२, श्रीऔपपातिकसूत्र श्रीउत्तराध्ययनसूत्र २/३, श्रीआचारागसूत्र १/२।
५	सूरत	१९७५	श्रीआवश्यकसूत्र ३/४, आचारागसूत्र १/२, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२, श्रीनन्दीसूत्र।
६	पालीताणा	१९७६	श्रीओघनिर्युक्ति, श्रीपिण्डनिर्युक्ति, श्रीभगवतीसूत्र ८/४१, श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३३/३६।
७	रतलाम (मालवा)	१९७७	श्रीभगवतीसूत्र ३३/४१, श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३/३६, श्रीसमवायागसूत्र

छे, तेवा आगमगत–सैद्धान्तिक शब्दोनो आमां संग्रह करवामां आवेलो छे. आ 'श्रीअल्पपरिचित-सैद्धान्तिकशब्दकोष' माटे हवे पछी 'अ सै श.' एवी संज्ञानो उपयोग कराशे.

शब्द अने तेना अर्थो—अ. से श. मां जे शब्दो जणाव्या छे ते शब्दो घणे भागे तो जेवा छे तेवा ज राखवामां आव्या छे. अर्थात् अकार अने थोडा आकार सिवायना बाकी वधा शब्दो जे मूलना छे ते अर्धमागधीमां छे अने टीकाकारोए टीकामां आपेला जे शब्दो जे भाषामां छे ते ज भाषामां मोटे भागे कायम राख्या छे एटले के अकार अने थोडा आकारमां आवेला संस्कृत शब्दो अर्धमागधीमां पण आप्या छे.

शब्दोना बहुश्रुत टीकाकारोए भिन्न भिन्न टीकाओमां भिन्न भिन्न अर्थो कर्या छे, तेथी भिन्न भिन्न स्थळोमांथी ते ते अर्थो लईने ते ते टीकाकारोना अर्थोने कायम राख्या छे. आ कारणथी आ अ सै श मां छेदना ग्रणना ज शब्दो लेवामां आव्या छे तेमज बृहत्कल्प जेवा कोईकमां आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना हाथना ऊतारेला शब्दो छे. तेमां टीकाकारोना आधारे अर्थोनुं टुंकाववापणुं पण छे

---

६ तारवेला ५३ अंकोना नामो— (चोथा पानानी फुटनोट)

१ विषयानुक्रमः *	१४ छन्दोविचार.	२७ खण्डनपक्षा	४० वैद्यकम्
२ अधिकारानुक्रम	१५ अलकारा	२८ पाठान्तराणि	४१ नया.
३ विशेषोपयोगिनो विषया.	१६ न्याया	२९ प्रस्तावना	४२ स्थापनानि
४ विशिष्टा	१७ साक्षिभूतग्रन्था	३० सूत्राद्यकारादिक्रम	४३ विधि
५ साक्षिपाठानामकारादिक्रम	१८ उपोद्घात प्रशस्तिश्च	३१ शङ्कासमाधानानि	४४ अेकार्थिकशब्दाः
६ वादा	१९ आचार्यनामानि	३२ काठिन्यार्थ.	४५ अल्पबहुत्वम्
७ लक्षणदूषणाधिकार.	२० प्राचिनमतानि	३३ सुभापितानि	४६ अनुमानानि
८ विशेषनामानि	२१ मताना समाधानानि	३४ निक्षेपाना सग्रह.	४७ सङ्कलनाः
९ इतिहास	२२ सूक्तावलि.	३५ वायुवृष्टि.	४८ प्रत्येकबुद्धनामानि
१० भूगोल.	२३ राजकीयविभाग	३६ समानशब्दाना पर्यायः	४९ विसंवादा
११ ज्योतिष्क	२४ प्रज्ञाप्यम्	३७ गच्छा पट्टावल्यश्च	५० सग्रहश्लोकाः
१२ प्रचलितमतानि	२५ लोकोक्तिसग्रह	३८ दृष्टान्ता'	५१ स्थलनिर्देश
१३ व्याकरणविचार	२६ व्याख्यानान्तराणि	३९ सम्प्रदाया	५२ सामुद्रिकम्

५३ निशीथाधिकारानुक्रम निशीथभाष्यगाथाद्यपदानि च

* नन्दी आदि २७ना विषयानुक्रम अने सूत्रादि अकारादि वगेरे छपाया छे, तेमां नीचे प्रमाणेना नंबरो सूत्रोने अपाया छे—

१ नन्दी, २ अनुयोगद्वार, ३ आवश्यक, ४ ओघनिर्युक्ति, ५ दशवैकालिक, ६ पिण्डनिर्युक्ति, ७ उत्तराध्ययन, ८ आचाराङ्ग, ९ सूत्रकृताङ्ग, १० स्थानाङ्ग, ११ समवायाङ्ग, १२ भगवती, १३ ज्ञाताधर्मकथा, १४ उपासक, १५ अन्तकृद्दशा, १६ अनुत्तरौपपातिकदशा, १७ विपाकश्रुत, १८ प्रश्नव्याकरण, १९ औपपातिक, २० राजप्रश्नीय, २१ जीवाजीवाभिगम, २२ प्रज्ञापना, २३–२४ सूर्यचन्द्रप्रज्ञप्तियुग्म, २५ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति २६ निरयावलिका अने २७ प्रकीर्णकदशक।

(५३ नंबरोमांना न. २२, २५, ३३ अने ५० आगमीयसूक्तावलीना नामे छपाया छे)

आ अ. सै. श. मां भिन्न भिन्न शब्दो व्याकरणना प्रयोगो रूपे, कोई तेवां नामो रूपे, कोई इतिहास तरीके, कोई भूगोळ तरीके तथा कोई पर्यायो तरीके पण आव्या छे.

काचो खरडो—शरूआतमां लहियो एकेक आगम लईने कापलीमां ते शब्दने ऊतारतो अने टीकाकारनो बतावेल अर्थ लक्ष्यमां आवे तो ते अर्थ लखतो. आवी रीते ऊतारेली छूटी कापलीओने प. पू. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना विनयगुणसंपन्न, तीक्ष्णबुद्धि, स्वर्गस्थ मुनिराज श्रीमहेन्द्रसागरजीए अकारादि क्रममां गोठवी कागलमां सलग चोटाडीने तैयार करी ते उपरथी ए लखाण लहिया आदि द्वारा लखावीने तेमज तेओश्रीए (श्रीमहेन्द्रसागरजीए) पोते पण लखीने काचो खरडो तैयार कर्यो.

प्रकाशननी तैयारी—आ अ. सै. श ने छपाववानी प. ता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी घणी इच्छा हती तेथी लगभग त्रण दशका उपर सद्गृहस्थो पासेथी अ सै श ना प्रकाशनने अंगे रूपिया शेठ देवचन्द्र लालभाई पुस्तकोद्धारकफंडने अपाव्या हता. ते पछी वि स. २०१४ मां ते संस्थाए आ अ सै श छपाववा माटे ठराव कर्यो. आथी मुद्रणालयपुस्तिका करवानुं कार्य पू स्व. मुनिश्री महेन्द्रसागरजीना शिष्य मुनिश्रीसौभाग्यसागरजीने (तेओश्रीना लघुबन्धुने) सोंपायुं तेथी तेओ दरेक आगमना ते ते पत्रमां ते ते शब्दो मेळवता अने तेना अर्थोने पण मेळवता तेमज ज्यां टीकाकारना शब्दो लेवाना हता त्यां प. ता आगमोद्धारकगुरुदेवश्री पासेथी तेना मूळ शब्दो वनावी लेता अने जे शब्दोना अर्थ टीकाकारे न आप्या होय तेना अर्थो पण पूछी लेता आवी रीते तेमणे लगभग बार फार्म सुधीनुं मेटर तैयार कर्युं.

उपर जणावेली संस्था (दे + ला)ना ट्रस्टीओए प ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी जीवन पर्यंत सेवा करनार मुनिराज श्रीगुणसागरजी महाराज पासेथी आ कोपीनुं लखाण मेळव्युं अने छपाववा माटे प्रबंध कर्यो तेमज अमने संपादन माटे विज्ञप्ति करी. तेथी अमे आ संपादननुं कार्य शरू कर्युं. साथोसाथ मेटर पण तैयार करवा मांडयुं

संपादन पद्धति—दरेके दरेक शब्द ते ते आगमनी साथे मेळववो अने तेमां जणावेल अर्थ मेळवी लेवो ते रीते कार्य करतां केटलाक आगमोना अंगे शब्दोना प्रश्नो ऊभा थया तेमां श्रीव्यवहारसूत्रना त्रीजा उद्देशाना शब्दो हता पण ते सिवायना बाकीना उद्देशाना शब्दो न हता. तेथी प ता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए व्यवहारनी आखी प्रतमां निशानो करी आप्यां आथी तेनी कापलीओ उतारी तेना शब्दोनो उमेरो कर्यो आगळ जतां बीजा पण आगमोना शब्दो नथी एम देखायु, तेनी तपास करतां-नंदी, अंतगड, अणुत्तरोववाइय, उपासकदसा, रायपसेणीय, अने निरयावलिना शब्दो न हता. तेथी तेना शब्दो पण उतार्या. अने ते शब्दो धीरे धीरे मेळववामां आव्या. आगळ चालतां नायाधम्मकहाना शब्दो बिलकुल नथी एम मालम पडयु. नायाधम्मकहानी प्रत तो प. ता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी निशानवाळी प्राप्त न थई, तेमज जे समये शब्दो नथी तेवी शंका थई ते समये तो अमारु पुण्य पण न हतु के पू गुरुदेवश्री 'विद्यमान' होय आथी अमे अमारी मंदमति अनुसारे आ आगमनी सटीक प्रतमां निशानो कर्यां, शब्दो तारव्या अने ते तारवेला शब्दोने कोशमां स्थान आप्युं

आ अ. सै. श. मां अग्यार अंग, बार उपांग, त्रण[७] (बृहत्कल्प, व्यवहार अने निशीथ) छेदसूत्र, चार मूल, ओघनिर्युक्ति. विशेषावश्यक, नंदी, अनुयोगद्वार, अने दशवैकालिकचूर्णिना शब्दोनो संग्रह

७ विस्तारथी चूर्णि वगेरे जेना पर नथी तेना जीतकल्प, पंचकल्प, दशाश्रुतस्कंध, अने महानिशीथना शब्दो लीधा नथी

करवामां आवेल छे. तेमज दशाश्रुतस्कन्ध, दशप्रकीर्णक, पउमचरिय, उपदेशमाला, अने तत्त्वार्थ· सूत्रना केटलाक शब्दो पण लेवामां आवेल छे.

संज्ञा पत्रक—अ. सै. श. मां जे शब्दोनो संग्रह करवामां आव्यो छे अने तेमां आगमो-शास्त्रो वगेरेनी जे संज्ञाओ आपवामां आवेली छे, ते संज्ञाओना स्पष्टीकरण माटे तेमज लीधेली प्रत-टीका वगेरे शेनी छे ते जणाववा अने तेना संपादक तथा प्रकाशक जणाववा एक संज्ञापत्रक नामथी प्रकरण राख्युं छे तेमज बीजी बीजी प्रतोनी साथे पण शब्दो मेळववानुं शक्य बने ते उद्देशथी पत्राङ्कसूचा नामथी एक प्रकरण आप्युं छे.

वर्णक्रम—अ. सै. श. मां अनुस्वारने पहेलुं स्थान आपवामां आव्युं छे. कारण के शरूआतमा प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आ रीते शरू करवानुं जणाव्युं हतुं. आथी ए पद्धति कायम राखी छे. पण आनो हेतु हमे जाणी शक्या नथी, तेथी अत्रे हेतु आप्यो नथी

विद्वज्जनो प्रत्ये—सुज्ञ विद्वज्जनो ! अमो गूर्जर भाषाना संपादनना कार्यमां अनुभव मेळवतां संपादनमां आगळ वध्या छीए ते रीते संस्कृत अने प्राकृतना संपादनमां प्रवेश करता थया एवा समयमां प ता गुरुदेवश्रीनी सेवाना प्रतापे अमने 'अ. सै. श.' संपादन कार्य मळ्युं. आथी अमे ते कार्यमां रस लीधो ने संपादन कार्य शरु कर्युं आथी पंडितोनी अपेक्षाए के विद्वानोनी अपेक्षाए अमारा आ संपादनना अंगे जे सूचनाओ करवी उचित छे ते अमे विद्वज्जनोनी समक्ष रजू करीए छीए —

१ मूळ शब्दो विभक्तिवाला तेम विभक्ति वगरना एम बन्ने प्रकारना छे तेथी ते जे लिंगनो जे शब्द होय ते शब्द तेवी तेवी विभक्तिथी ते ते लिंगमां समजी लेवो. जेमके-अंकुर (पृ. १, २), अंकूसय (पृ. १, २) इत्यादि (कोईक शब्दकोशमां विभक्ति सहित शब्दो नथी तेवु पण प्राये अमारा जाणवामां छे

२ जो के शब्दो बधा एक जातना विभक्ति विगर अगर एक विभक्तिथी भेगा लेवा जोईए, परंतु आमां भिन्न भिन्न लेवाया छे. जेमके-अंकावइ (पृ. १, २), अंकावइओ (पृ. १, १) इत्यादि.

३. वैकल्पिक शब्दोना विकल्पने साचववा माटे अर्थात् तेवा प्रयोगोने साचवी राखवा माटे आमां भिन्न लेवाया छे जेमके-अंकवडेंसए (पृ. १, १), अंकावडिंसए (पृ १, १) इत्यादि.

४ टीकाकार महाराजे जे शब्दोना प्रयोगो टीकामां कर्या छे ने ते शब्दो मूळमां नथी तेवा शब्दोनुं प्राकृत जे कौंसमां अपाय छे ते प पू आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीने पूछीने मुनिश्रीसौभाग्यसागरजीए आपेलु छे. वळी तेवा शब्दो कोई वखत शरुआतमां अपाया छे. अने कोइ वखत संस्कृत-शब्दनी पछी पण अपाया छे. तेनी बन्ने बाजुए बनतांसुधी कौंस आप्यो छे जेमके (अकील्ल)नर्तक (पृ १, १), अंगार (इंगाल) (पृ २ २) इत्यादि

५. शरूआतमां तो शब्दोना अर्थो अने शब्दोना संग्रहनी शैलि नियमित रही नथी, पण जेम जेम अनुभव थतो गयो अने तेना अभ्यासमां वधारो थतो गयो तेम तेम पद्धतिमां सुधारो थतो गयो छे. छतां एटलुं कहेवानी जरूर छे के पहेला भाग करतां बीजा भागमां पद्धति इत्यादिनो सुधारो मळेला अनुभव प्रमाणे करी शकीशुं एवी आशा छे.

६ (१) अध्ययन, (२) विशेषनाम, (३) वनस्पतिना नामना अंगे तेनी साथे अर्थना रूपमां संस्कृतमां अपायुं छे जेमके (१) अंडे-विपाकश्रुताद्यश्रुत० (पृ. २, २), (२) अंगारवई-अंगारवती सवेगोदाहरणे० (पृ २, २), (३) अंकोल्ल वृक्षविशेष (पृ २, १) इत्यादि

७ टीकाकारोए शब्दोना जे जगो पर अर्थ नथी कर्या तेवा शब्दो पण अत्रे अर्थ वगर अपाया छे. जेमके ओली (पृ २२५, २), उवट्ठगा (पृ. २०७, २) इत्यादि वळी आ शब्दोना अर्थो जो कदाच मेळवी शकीशुं तो परिशिष्टमां आपवा विचार छे.

८. देशी शब्दोना अंगे 'देशीय' अगर 'देशी' एवुं कौंसमां लखायुं छे. अर्थात् टीकाकारे आपेलुं कायम राख्युं छे. जेमके-उत्तुइउ (देशी०)-गर्वे (पृ. १८७, १)

९. चूर्णिकार महाराज चूर्णिनी अंदर प्राकृत अने संस्कृत अेम बन्ने भाषाना प्रयोगो करे छे, तेथी चूर्णिना शब्दोना अर्थोमां प्राकृतना अने संस्कृतना बन्नेना प्रयोगो छे. परंतु बहुधा तो प्राकृत ज होय छे.

१०. आ 'अ. सै. श. मां एवा पण शब्दो छे के जे अभिधानराजेन्द्र के पाइयसद्दमहण्णवोमां न होय.

अ सं श. तुं सपादन कार्य शरू थतां सुरतमां हता त्यां सुधी एक वखतनु प्रुफ जोई आपवा प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना एकेव पट्टधर, श्रुतवारिधि, शास्त्रतत्त्वदर्शी, गच्छनायक, आचार्यश्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजे कृपा करी हती.

ए रीते संपादननुं कार्य चालतुं हतुं, तेमां प्रथम भागनुं पंदर आनी काम थई गया पछी सुरतथी दक्षिण तरफ विहार थवाना कारणे अने प्रेस आदिना प्रतिकूल संयोगोमां अमारी अनिच्छाए पण नहि जेवा कार्यमां वर्षोनां वर्षो वीती गया बाद आजे आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिक-शब्दकोषनो 'प्रथम भाग' विद्वानोना करकमळमां उपस्थित करी शक्या छीए.

आ प्रथम भागमां 'संपूर्ण स्वरो' आपवामां आवेला छे स्वरोमां तेमज बीजा रही गयेला 'शब्दो' तथा देशीनाममालाना शब्दो श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष पूर्ण थतां 'परिशिष्ट' तरीके आपवा विचार छे.

प. पू. आगमवाचनादाता, देवसूरतपागच्छसामाचारीसंरक्षणकटिवद्ध, अनेक ग्रन्थोना प्रणेता, वादीमानमर्दक, चरमशासनपति महावीर परमात्माना शासनमां आगममंदिरोना संस्थापक, जैनआनन्दपुस्तकालयादि संस्थाना संस्थापक, शैलानानरेशप्रतिबोधक, युगप्रधानसदृश, वर्तमान श्रुतना ज्ञाता, स्वआराधनर्थे आराधनामार्ग करनारा, मौनपणे रही अर्धपद्मासने स्वर्गे संचरनार, प. पू आगमोद्धारक *आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजनी पुनित सेवाना प्रतापे जे कंई बोध-शक्ति मेळवेल छे, ते आधारे अमे अमारी बुद्धि केळवीने काळजीपूर्वक आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं संपादन कर्युं छे.

मुनिराज श्रीअभयसागजी महाराजे संजोग मळतां आमां मार्ग बताव्यो छे. तेओश्रीने तेमज प्रो. हिरालाल र. कापडीयाने पण हमे अत्रे भूलता नथी.

आमां जे अशुध्धिओ जणायी छे तेनुं शुद्धिकरण पण आप्युं छे, छतां विद्वज्जनो प्रति अमारी प्रार्थना छे के क्षति देखाय तो जणाववा उदारता दाखवे.

वीरसं. २८८०, वि सं. २०१०
ज्येष्ठ पुर्णिमा
हींगनघाट
(मध्यप्रदेश)

आगमोद्धारकउपसंपदाप्राप्त शिष्याणु
कंचनविजय
तथा
आगमोद्धारक शिष्यलव
क्षेमंकरसागर

---

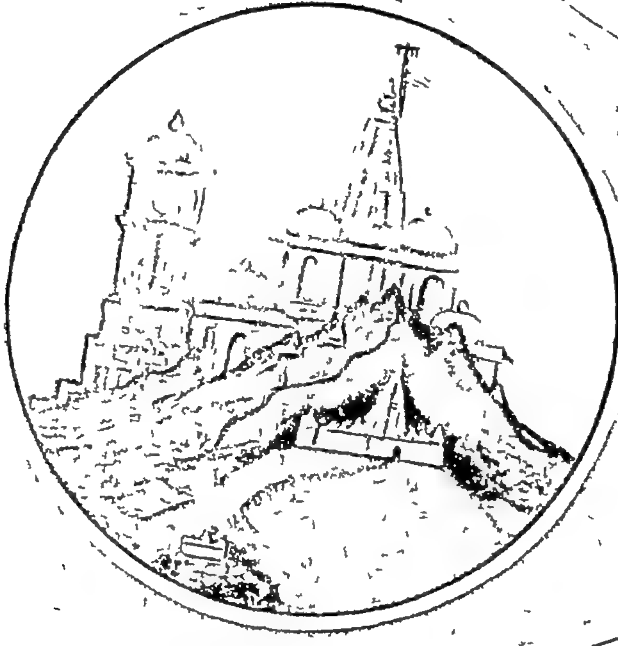
* जेमना स्मरणार्थे सुरतमा 'आगमोद्धारक गुरुमंदिर' झलहळी रह्यु छे

पंडुं
रे
ना

अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

प्रथमो विभागः





ता :—
द्धारक-आचार्य
दसागरसूरीश्वरजी

प्रकाशक :—
शेठ देवचन्द लालभाई-जैनपुस्तकोद्धार
फण्डस्य
कार्यवाहक :-
चोकसी मोतीचंद मगनभाई : सुरत

शेठ-देवचंद-लालभाई-जैनविद्यार्थी भुवन



जेमा
शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोध्धार फंड तरफथी
पुस्तकालय अने
प्रसिद्धथतां पुस्तकोनो संग्रह अने वेचाण थाय छे.

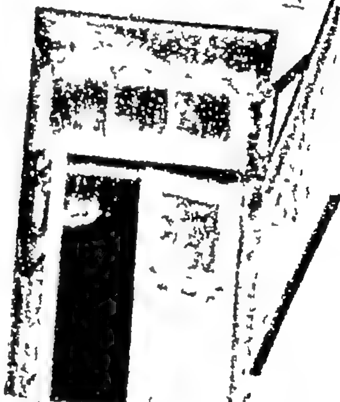
●

गोपीपुरा, वडेखांनो चकलो, सुरत

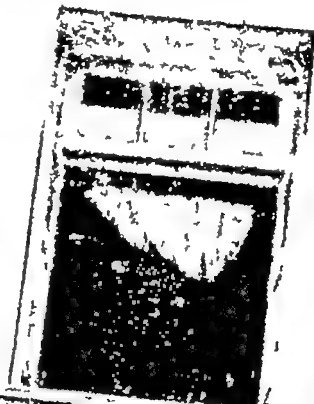
आ मकान

शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंडनी कायमी रकमथी खरीदवामां आवेलु छे.
रु-१,१०,०००. एक लाख दश हजार.

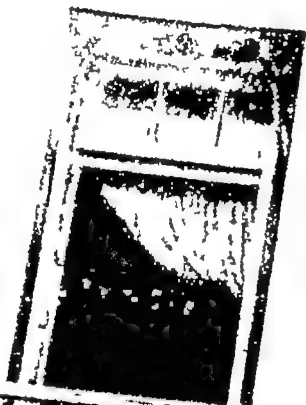














कालबादेवी नं १६६ आ मकान छे. तेमां भोंयतळीए शयाजी विजय वीविंग कु. पहेले माळे— एल. काशिनाथ वेकर बीजे माळे— जादवजी प्रेमजी गांधी ना बोर्डो छे.



શેઠ દેવચંદ લાલભાઇ જૈન પુસ્તકોદ્ધાર ફંડના

હાલમાં મળતા નવીન ગ્રંથો.

ગ્રંથાંક નં.		
૧૦૧	અલ્પ પરિચિત સિદ્ધાન્તિકશબ્દકોષ (વિભાગ પહેલો સંપૂર્ણ સ્વર) પ્રેરક-આચાર્ય આણંદસાગરસૂરિજી	૬-૦-૦
૧૦૨	શ્રાવક ધર્મ પંચાશકચૂર્ણી	૨-૦-૦
૧૦૩	દશવૈકાલિક લઘુવૃત્તિ સુમતિસાધુસૂરિ	૩-૦-૦
૮૫	આવશ્યકસૂત્ર મલયગિરિ ત્રીજો ભાગ	૨-૮-૦
૮૬	લોકપ્રકાશ મૂલ ચોથો વિભાગ પ્રત	૧-૦-૦
૮૭	ભરતેશ્વર બાહુબલિ વૃત્તિ દ્વિતીય વિભાગ સંપૂર્ણ	૨-૦-૦
૮૮	પ્રશમરતિપ્રકરણ બૃહદ્ગચ્છીય શ્રી હરીભદ્રસૂરિ-કૃત વિવરણ સમેત	૧-૪-૦
૮૯	અધ્યાત્મકલ્પદ્રુમ રત્નચંદ્રગણિ વર્ધનવિજયગણિ કૃત ટીકા યુક્ત	૩-૦-૦
૯૦	ગૌતમીય કાવ્ય રૂપચંદ્રગણિકૃત	૧-૮-૦
૯૧	સટીક વૈરાગ્યશતકાદિ ગ્રંથપંચકમ	૧-૦-૦
૯૨	અભિધાનચિંતામણી કોશ	૪-૦-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૯૩	જૈન કુમારસંભવ	૨-૮-૦
૯૪	સિદ્ધહેમશબ્દાનુશાસન બૃહદ્વૃત્યચૂર્ણી નવપાદ અવચૂર્ણિકાર શ્રીમદ્ અમરચંદ્ર	૫-૦-૦
૯૫	વીતરાગસ્તોત્ર અવચૂર્ણી વિવરણ અને ભાષાંતર સમેત	૧-૮-૦
૯૮	પંચપ્રતિક્રમણ વિધિ સહિત	૧-૪-૦
૯૯	શ્રમણસૂત્રાદિ અવચૂરિ	૧-૦-૦
૧૦૦	વંદન પ્રતિક્રમણ અવચૂરિ	૧-૮-૦
૧૦૪	**ઉત્તરાધ્યયન અવચૂરિ**	**પ્રેસમાં**
૧૦૫	**પિંડનિર્યુક્તિ અવચૂરી**	,,
૧૦૬	**શ્રાદ્ધવિધિ**	,,
૧૦૭	**નંદિ અવચૂરી**	,,
૧૦૯	**સૂયગડાંગ દીપીકા**	,,
૧૧૦	**જંબુદ્વિપ ચૂર્ણી**	,,
૧૧૧	**ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તી**	,,

આગમોદય સમિતિ પ્રકાશિત

ગ્રંથાંક નં.		
૪૫	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય પ્રથમવિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૦-૦
૪૭	પંચસંગ્રહ ટીકા સહ	૨-૮-૦
૫૦	જીવસમાસ પ્રકરણશતક	૧-૮-૦
૫૧	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર શોભનમુનિકૃત સંસ્કૃત	૮-૦-૦
૫૨	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર કવિ ધનપાલકૃત ઐંદ્રસ્તુતિ	૬-૦-૦
૫૩	સ્તુતિચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર બપ્પભટ્ટસૂરિકૃત ભાષાંતર યુક્ત	૬-૦-૦
૫૪	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય બીજો વિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૮-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૫૫	નદ્યાદિ ગાથાલંકારાદિ યુતો (સપ્તસૂત્ર) વિષયાનુક્રમ	૨-૦-૦
૫૬	આવશ્યક મલયગિરિકૃત ટીકા યુક્ત પૂર્વભાગ	૪-૦-૦
૫૭	લોકપ્રકાશ પ્રથમવિભાગ, દ્રવ્યલોક ૧ થી ૧૧ ભાષાતર	૩-૮-૦
૫૯	ચતુર્વિંશતિકા જિનાનંદ સ્તુતિ મેરૂવિજયકૃત ભાષાતર સમેત	૬-૦-૦
૬૦	આવશ્યક મલયગિરિકૃત ટીકા યુક્ત બીજો ભાગ	૨-૮-૦
૬૧	લોકપ્રકાશ દ્વિતીય વિભાગ, ક્ષેત્રલોક સર્ગ ૧૨ થી ૨૦	૩-૮-૦

संज्ञापत्रकम्।

क्रमाङ्क	संज्ञा	सूत्रनाम	सम्पादक	प्रकाशक
१	अनु	मलधारगच्छीयश्रीहेमचन्द्राचार्यविरचितवृत्तियुक्तं श्रीअनुयोगद्वारसूत्रम्।	आगमोद्धारक.	दे[1] ला. जै
२	अनुत्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम्।	,,	आ.[2] स
३	अन्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्यभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअन्तकृद्दशाङ्गम्।	,,	आ स
४	आउ.	श्रीआतुरप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ स.
५	आचा	निर्युक्तिकलितशीलाङ्काचार्यविहितवृत्तियुतं श्रीआचाराङ्गसूत्रम्।	,,	आ. स
६	आव.	निर्युक्तियुतभाष्यकलितश्रीभवविरहहरिभद्रसूरिविहितवृत्तियुतं श्रीआवश्यकसूत्रम।	,,	आ स.
७	उत्त,	निर्युक्तियुतानि श्वादिवेतालश्रीशान्तिसूरिसूत्रितवृत्तियुतानि श्रीउत्तराध्ययनानि।	,,	दे ला जै
८	उप मा गा.	श्रीधर्मदासगणिदब्धा श्रीउपदेशमाला (गाथा)।	,,	
९	उपा.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीउपासकदशाङ्गम्।	,,	आ. स.
१०	ओघ	भाष्ययुता श्रीद्रोणाचार्यसूत्रितवृत्तिविभूपिता श्रीओघनिर्युक्ति	,,	आ स.
११	औप	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीऔपपातिकोपाङ्गम्।	,,	आ. स
१२	ग	श्रीगच्छाचारप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ स.
१३	गणि	श्रीगणिविद्याप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ स
१४	चउ.	श्रीचतु शरणप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ स.
१५	जं प्र	उपाध्यायश्रीशान्तिचन्द्रविहितवृत्तियुतं श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्युपाङ्गम्।	,,	दे ला जै.
१६	जीवा	श्रीमलगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीजीवाजीवाभिगमोपाङ्गम्।	,,	दे ला जै
१७	ज्ञाता.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीज्ञाताधर्मकथाङ्गम।	,,	आ स
१८	ठाणा	श्रीचान्द्रकुलीनाभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुत श्रीस्थानाङ्गसुत्रम।	,,	आ स
१९	तं.	श्रीतन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकम (गाथा)।	,,	आ स.

१ दे ला जै.=शेठदेवचन्दलालभाईजैनपुस्तकोद्धारफड।

२ आ स=श्रीआगमोदयसमिति।

२०	तत्त्वा	भाष्योपेतं श्रीतत्त्वार्थसूत्रम (अध्याय:, सूत्रम)।	आगमोद्धारक	ऋ[3] के
२१	दश.	निर्युक्तिभाष्योपेतं श्रीभवविरहहरिभद्रसूरिविरचित-विवरणयुतं श्रीदशवैकालिकसूत्रम।	,,	दे ल जै.
२२	दशचू	श्रीदशवैकालिकचूर्णि:	हस्तपोथी	जै.[4] पु नं १६७२
२३	दशाश्रु	श्रीदशाश्रुतस्कन्ध	,,	
२४	देव.	श्रीदेवेन्द्रस्तवप्रकीर्णकम।	आगमोद्धारक	आ स.
२५	नंदी	श्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुत श्रीनन्दीसूत्रम।	,,	आ. स.
२६	निरय	श्रीचन्द्रसूरिविरचितवृत्तियुत श्रीनिरयावलिकापंचकम।	श्रीदानविजयगणी	वीर[5]
२७	नि चू. प्र.	- भाष्यचूर्ण्युपेतस्य श्रीनिशीथसूत्रस्य प्रथमो विभाग.	हस्तपोथी	जै पु न ४८३
२८	नि. चू द्वि	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै पु नं ४८४
२९	नि चू तृ.	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै पु. नं.४८५
३०	पउ	श्रीविमलाचार्यविरचितं 'पउमचरियं' (उल्लास:)	प्रो.हर्मन जेकोबी	[6]जै. ध.
३१	पिंड पिण्ड	भाष्यश्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुता पिण्डनिर्युक्ति.	आगमोद्धारक	दे ला जै
३२	प्रज्ञा	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुतं श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम।	,,	आ स.
३३	प्रश्न.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम।	,,	आ स
३४	बृ प्र	निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीबृहत्कल्पसूत्रस्य प्रथमो विभाग:	हस्तपोथी	जै. पु. नं ३०३
३५	बृ द्वि.	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै पु नं, ३०४
३६	बृ तृ	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै. पु नं. ३०५
३७	भक्त	श्रीभक्तपरिज्ञाप्रकीर्णकम (गाथा)।	आगमोद्धारक.	आ स.
३८	भग.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीभगवतीसूत्रम (श्रीव्याख्याप्रज्ञप्ति)।	,,	आ. स.
३९	मर मरण.	श्रीमरणसमाधिप्रकीर्णकम (गाथा)।	,,	आ स
४०	महा. महाप्र	श्रीमहाप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम (गाथा)।	,,	आ. स

३ ऋ के =शेठऋषभदेवजीकेशरीमलजी, रतलाम

४ जै पु न =श्रीजैनआनदपुस्तकालय, सुरत, हस्तपोथी नवर

५ वीर =श्रीवीरसमाज, अमदावाद.

- सूत्र, निर्युक्ति अने भाष्यगाथाना मात्र प्रतीक छे

६ जै ध =श्रीजैनधर्मप्रसारक सभा, भावनगर.

४१	राज.	श्रीमलयगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीराजप्रश्नीयोपाङ्गम	आगमोद्धारक	आ स
४२	विपा	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुत श्रीविपाकश्रुताङ्गम।	,,	आ स.
४३	विशे.	मलधारिश्रीहेमचन्द्रसूरिविरचितबृहद्वृत्तियुतं श्रीविशेषावश्यकभाष्यम्।	पं हरगोवनदासः	[1]य जे.
४४	व्य प्र	·निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीव्यवहारसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै पु नं ४८७
४५	व्य द्वि	,, ,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै पु नं. २६६
४६	सं	श्रीसंस्तारकप्रकीर्णकम् (गाथा)।	आगमोद्धारकः	आ स
४७	सम.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुत श्रीसमवायाङ्गम।	,,	आ स
४८	सूत्र.	निर्युक्तिभाष्यशीलाङ्काचार्यविरचितविवरणयु श्रीसूत्रकृताङ्गम।	,,	आ स.
४९	सूर्य	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुत श्रीसूर्यप्रज्ञप्त्युपाङ्गम।	,,	आ स.

१ य जै.=श्रीयशोविजयजीजैनग्रन्थमाला

· सूत्रादिना मात्र प्रतिक ज छे

पत्राङ्क सूचा

श्रीनिशीथसूत्रम्

हस्तपोथी			लीथोप्रिन्ट	
भाग.	उद्देशक	आपत्र	भाग	आपत्र
१	१	१२९	१	२०२
	२	१८२	२	३०८
	३	१९४		३३४
	४	२२२		३०४
	५	२४७		४४५
	६	२५३	३	४६३
	७	२५७		४७८
	८	२७०		५०५
	९	२७७		५३३
	१०	३६१		६६५
२	११	५८	४	७७३
	१२	८२		८३२
	१३	१०३		८७५
	१४	१२३		९१६
	१५	२७३	५	१००८
३	१६	५६		११४१
	१७	६२		११६०
	१८	६५	६	११६७
	१९	८८		१२१२
	२०	१७२		१३३८
				+२
				+३५

श्रीबृहत्कल्पसूत्रम्

हस्तपोथी			
भाग	उद्देशक.	आपत्रं	आगाथा
१	१	७७	५००
		१६६	१०००
		२३५	१५००
		३१७	२१३०
२		१११	३०००
		१५५	३२९२
	२	२०३	४६४
	३	२९३	७२८
३		६४	११९२
	४	१६८	८०५
	५	२१२	३७५
	६	२६७	४३०
— मुद्रित —			
१	१	२५४	८०५
२		६१०	२१२४
३		९२१	३२८९
४	२	१०२२	३६७२
	३	१३०६	४८७६
५	४	१५०२	५६८१
	५	१५९९	६०५९
६	६	१७१२	६४९०

श्रीव्यवहारसूत्रम्

हस्तपोथी			मुद्रित.	
भाग:	उद्देशक	आपत्र	उद्देशक.	आपत्र
१	१	१७४	१	१–६१
		०		१–९९
		०		१–३७०
	२	२१९	२	१–८७
	३	२५८	३	१–७३
२	४	११०	४	१–१०४
	५	१३५	५	१–२९
	६	१९९	६	१–७१
	७	२८३	७	१–९५
	८	३३६	८	१–६०
	९	३५५	९	१–२३
	१०	४५८	१०	१–११४

श्रीआवश्यकसूत्रम्

आविषय	आपत्र
पिठिका	५०
प्रथमवरवरिका	१३६
द्वितीयवरवरिका	१८८
गणधरवाद.	२५६
निण्हववाद	३२५
नमस्कारनिर्युक्ति	४५२
१ सामायिकनिर्युक्ति	४९२
२ अध्ययनम्	५१०
३ ,,	५५०
४ ,,	७६३
५ ,,	८०१
६ ,,	८६६

श्रीदशवैकालिकम्

टीका मुद्रित अध्ययनानि	आपत्र	चूर्णि हस्पोथी आपत्र	मुद्रित आपृष्ठ
१	८१	३२	७०
२	९९	४१	९२
३	११९	५२	११७
४	१६०	७२	१५८
५	१९०	८९	२०६
६	२०६	१०१	२३४
७	२२३	११५	२६५
८	२३८	१२८	२९४
९	२५८	१४३	३२९
१०	२६८	१५२	३४८
चू १	२७७	१६०	३६६
चू. २	२८६	१६६	३८०

श्रीउत्तराध्ययनानि

अध्ययनानि	आपत्र	अध्ययनानि	आपत्र
१	७०	१९	४६५
२	१४०	२०	४८१
३	१८९	२१	४८७
४	२२८	२२	४९६
५	२५४	२३	५१२
६	२७०	२४	५१९
७	२८५	२५	५३१
८	२९७	२६	५४७
९	३१९	२७	५५३
१०	३४१	२८	५६९
११	३५३	२९	५९७
१२	३७३	३०	६०९
१३	३९२	३१	६१८
१४	४११	३२	६३९
१५	४१९	३३	६४८
१६	४३०	३४	६६२
१७	४३६	३५	६६८
१८	४४९	३६	७१४

श्रीविशेषावश्यकम्

पृष्ठ आविषय	आपत्र
आभिनिवोधिकज्ञान	२४९
केवलज्ञान	२९९
उद्देशादिद्वारव्याख्या	६६२
गणधरवाद	८३६
निण्हववाद	१०४४
अर्हन्नमस्कार.	११८०
सिद्धनमस्कार	१२२७
प्रशस्ति	१३६०

श्रीपिण्डनिर्युक्ति

आविषय	आपत्र
पिण्डनिरूपणम्	२८
उद्गमादिदोषा	११९
उत्पादनादोषा	१४६
ग्रासैषणा	१७८

श्रीअनुयोगद्वाराणि

आविषय	आपत्र
आवश्यकश्रुतस्कंध-निक्षेपा	४३
आनुपूर्वी	१०४
दशनामाधिकार	१५०
प्रमाणद्वाराधिकार	२४१
निक्षेपाधिकार	२५७
अनुगमाधिकार	२६२
नयाधिकार.	२६७

श्रीनंदीसूत्रम्

आविषय	आपत्र
पर्षद्	६४
अवधिज्ञानम्	९८
मन.पर्यवज्ञानम्	१२१
केवलज्ञानम्	१२९
मतिज्ञानम्	१८४
श्रुतज्ञानम्	२४७

श्रीओघनिर्युक्ति

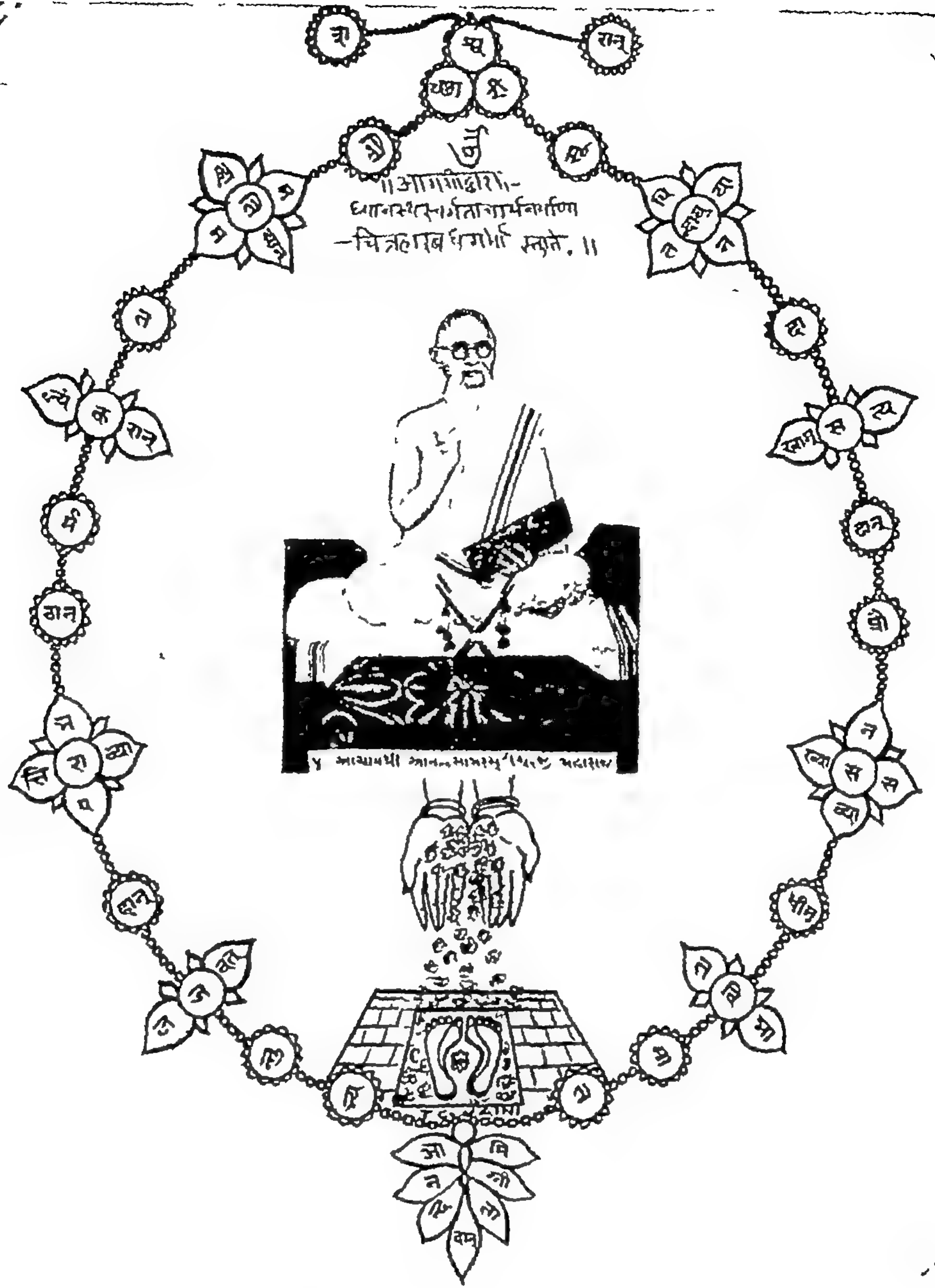
आविषय	आपत्र
प्रतिलेखनादि	१२७
पिण्डद्वारम्	२०७
विशुद्धिद्वारम्	२३७

शुद्धिपत्रकम्

पृष्ठ	विभाग	पंक्ति.	अशुद्धम्	शुद्धम्
५	१	९	विपतृ०	विषयतृ०
५	१	३४	दशाय्‌य०	दशाध्यय०
७	१	७	अन्त०	आन्त०
१५	२	३५	शब्दो–प०	शब्दोप०
१८	१	३		
१८	१	१८	०त्त	०त्तुण
२०	२	७	०नक्षत्र०	०नक्षत्रगोत्र०
२१	१	१६	०ष्टपदिष्टयु०	०ष्ट्युपदिष्ट०
२१	१	३३	०सा	०सा वा
२४	१	९	क्षिप्पते	क्षिप्यन्ते
२५	२	१७	०त्	०द् अजीवप्राद्वेषिकी
२७	१	९	आर्जवम्	ऋजो –रागद्वेषवक्रत्ववर्जितस्य सामायिकगत कर्म भावो वा आर्जव सवर इत्यर्थ., तस्य स्थानानि–भेदा आर्जवस्थानानि
३६	२	२५	प्रज्ञा	प्रज्ञा
३९	१	१७	क्रूर०	कूर०
४१	१	१९	अनिश्रेयम	अनि श्रेयसाय
४३	२	५	०न०	०नु०
५३	१	३३	०भापी	०भासी
५६	१–२	३५,१	अर्यते-गम्यत इति	अर्यते-गम्यत इति अर्थ
५८	१	६	आद्रा०	आर्द्रा०
५९	१	१९	द्वापे	द्वीपे
६०	१	३०	अधर्मे	अधर्म
६४	२	२५	०श्रतम्	श्रुतम्
६५	२	२३	०त्ति–नि०	०त्तिनि
७२	१	२७	०कलिका	०कल्पिका
७८	१	९	०नार्थ	०नार्थं प्रयुञ्जान इत्यर्थ

पृष्ठ	विभाग	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
८७	२	२९	द्वाप	द्वीप
८९	१	१	अट्टा०	अट्टा० त्रसाना स्थावराणा वा आत्मन परस्य वोपकाराय हिंसाऽर्थदण्ड ,
९६	१	२८	०दिगाग०	०दिग्गा०
११५	१	७	आचाय.	आचार्य
११९	२	२	०युष्ममा०	०युष्मा०
१२१	२	१३	समा०	सम०
१२८	१	१२	निर्युक्त्या०	सूत्रव्याख्यान निर्युक्त्या० रुचि – श्रद्धानम्
१३६	१	२६	०हेत्व	०हेतव
१३९	१	२	०इति	०इति आदान
१३९	१	९	०नेति	०नेति आदान.
१३९	१	२१	०देवाता०	०देवता०
१४८	१	८	०सदो	०सद्दो
१६२	२	१	०तीथ०	०तीर्थ०
१६३	१	२४	उक०	उत्क०
१७१	२	७	उक्षि०	उत्क्षि०
१७२	२	१५	पनाका	पनक
१८९	१	२२	०शास्र	०शास्त्र०
२०४	२	२६	०विपय०	०विषयी०
२०९	१	२५	नादका०	नारका०
२११	१	२९	अेतद्रप	अेतद्रूप
२२७	१	११	०वचसि	०वचसि
२२७	१	३५	साद०	साधु०
२२८	२	२२	अर्वाका०	अर्वाका०
२२९	१	२८	०चरा	०चरा
२३१	२	१०	ओमह्रिया	ओमह्यिा
२३२	२	२७	मासाथिस्ना०	मासास्थिस्ना०
२३३	२			

—.—

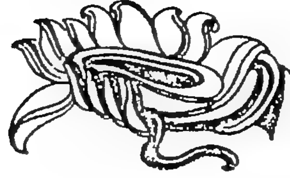


चित्रहारबन्ध :

[छन्द – शार्दूलविक्रीडित.]

शश्वच्छान्तिप्रयान महामतिमतः कल्यङ्करान् कर्मठान्,
भव्यापत्तिभरापहान् जलजवज्जन्तुभ्य आनन्ददान् ।
दान्तान् नौमितमां विभावितविधीन् व्याख्यानसव्यासनान् ,
प्रौढान् सत्यसखान् सदा नतिधिया ऽऽनन्दाब्धिसूरीश्वरान् ॥ १२८ ॥

સમર્પણ



આગમોદ્ધાર-આચાર્ય

શ્રી આનન્દસાગરસૂરીશ્વરજી મહારાજના

ચરણકમલમાં સમર્પણ.



જેઓએ અમારા
શહેર સૂર્યપુર અને સંસ્થાના
સર્વોદય માટે અહોનીશ અમોઘઉપદેશોદ્વારા
કૃપા વરસાવી ઉત્કર્ષ સધાવ્યો છે. અમારી સંસ્થાના
બીજા સૈંકડાનુ પ્રથમ પુષ્પ પ્રાતિક પણ તેઓને જ
સમર્પણ કરવામાં અમો અમારી કર્તવ્યતા
અનુભવીશું. આ ગ્રન્થ તેઓશ્રીના આગમોદ્ધારના
દોહન રૂપે જીવનકાર્ય
ગણાશે

— પ્રકાશકો

॥ શ્રી તામ્રપત્રાગમ મંદીર - સુરતના ભુમિગૃહમાં ઉત્કૃષ્ટ
॥ ૐ હ્રીં ॥ - શ્રુતમંદીરમાં સ્થિત સ્વર્ણાક્ષરી આગમ પુરૂષ ॥

संकलनाकार





आगमोद्धारक श्री आनन्दसागरसूरीश्वरजी

॥ गीतार्थसूरये नम ॥

卐 श्रीआगमोद्धारक–स्तवः 卐

[अनुष्टुप्छन्द]

श्रीमत्पार्श्वं १ सदापार्श्वं, नत्वा ध्यात्वा च सद्गुरून्।
प्रकुर्वे भक्तिप्रह्वोऽहमागमोद्धारकस्तवम् ॥ १ ॥

[उपजातिछन्द]

सद्भि प्रशस्येन सुधर्मभाजा, जैनागमज्योतिसमर्थन सत् ।
कृतं २ सदाराद्धश्रुतेन येन, जीयात्स 'आनन्दसूरीश्वरेन्दु ' ॥ २ ॥

[वसन्ततिलकाछन्द]

शैलाणराजमनसि श्रुतधर्मतुष्ट्या,
३ हिंसानिषेधविधिना कृतधर्मपुष्टिम्।
गीतार्थहेमनिकषं श्रुतसार[४]मुष्टि-
'मानन्दसागरगुरुं' नुत मुक्त[५]रुष्टिम् ॥ ३ ॥

[मन्दाक्रान्ताछन्द]

स्वस्तिङ्काराङ्किविबुधमहिनाध्यात्मतत्त्वात्प्रकृष्टे,
६ धर्मार्थश्रीन्द्रियसुखभरे 'भारते' भारतेऽस्ति।
७ जैनेन्द्राज्ञाऽप्रहतविधया राजमानो वदान्य,
श्रीधीप्राज्य' प्रथितमहिमा 'गूर्जरत्रा'ख्यदेश ॥ ४ ॥

तस्यापाऽचेऽधरितधनदश्रेष्ठिधर्मिष्ठकीर्णे,
शोभाभासे सुगुणबहुले मण्डले खेटकाख्ये।
८ धर्मज्ञप्तौ सुविशदमतेर्लब्धतत्त्वप्रतिष्ठं,
सर्वोत्कृष्टं 'कपडवणजं' राजते पूर्गरिष्ठम् ॥ ५ ॥

यत्रोत्तुङ्गं नवजिनगृहं 'पार्श्वनाथादि'मुख्यं,
यद्वास्तव्याः बहुभवभयाः दीक्षिता नैकभव्याः
पट्टावल्या ९ 'अभयमुनिप'–स्वर्गभूमि' सुगीता,
'वाणिज्या'ख्यं 'कपड'सहितं तन्नु वर्ण्यत केन ? ॥ ६ ॥

---

१ मध्यमपदलोपिसमासोऽत्रज्ञेय । २ सत्=सम्यक् आराद्ध श्रुत येनेति विग्रह । ३ अमारिपटहार्थपरकोऽय शब्द । ४ सारसचयार्थपरकाऽय शब्द । ५ क्रोधवाची शब्दोऽयम्। ६ धर्मस्यार्थ श्री इन्द्रियाणि सुखभरश्च यस्य (देशस्य) इति विग्रहोऽत्र ज्ञेय । ७ जैनेन्द्राज्ञाया अप्रहतत्वरूपप्रकारेणेत्यर्थ । ८ धर्मावबोधे। ९ नवाङ्गीवृत्तिकारश्रीअभयदेवसूरीश्वरस्येत्यर्थ ।

तस्योत्तंसे कलिमलहरे वर्य'दालालपाटे,'
'मीठाभ्रातु' भवभयमथोपाश्रयस्योपकण्ठम् ।
ख्यातं रम्यं जनिततिहरं 'वासुपूज्य'स्य चैत्यं,
तत्सान्निध्ये विहितकुशल 'भाइचन्द्रो'ह्यवात्सीत् ॥ ७ ॥

तस्यासीद्धै सुकृतरुचिरा सुज्ञ'मञ्छा'ख्यपत्नी,
शीलोदात्ता सुगुणसदना धर्मतत्त्वे प्रवीणा ।
धर्माबाधं समनुभवतो [१] पुण्यसारं तयोर्वै,
'ताराचन्द्रा'नुज'मगनलाला'ख्यपुत्रो बभूव ॥ ८ ॥

[२] य पूर्वाराधितसुचरणज्ञानवैराग्यसारात्,
[३] सारूप्याप्तेर्वर'धनगिरेः' कालवैषम्यवारी ।
शास्त्राभ्यासाद् तनुभवरतिस्साधु[४]भावस्पृहालु-
'[५]वज्रस्वामे'र्जनक इव यो जातरागाल्पभाव[६] ॥ ९ ॥

यद्वद् भोगान् किल'धनगिरि'र्मन्यमानो [६] विघातान्,
[७] वाग्दानार्थं सुबहु यतत शुद्धबुद्धिः समाख्यत् ।
दीक्षां लास्ये सपदि सुतरां कार्यमालोच्य कार्य-
मेतच्छ्रुत्वा चकितमनस' श्रेष्ठिनो मौनमासुः ॥ १० ॥

तद्वद्गाढ शमितमनसा 'मग्नलाले'न कन्या-
[८] दानात्स्वेष्टप्रभवनलपा श्रेष्ठिनोऽकारि मोघा ।
किन्त्वम्बादे[९]स्समधिकमुहः मानस तोषयन् वै,
औपायस्तातिरति'यमुना'ख्यां [१०] कणेहत्य कन्याम् ॥ ११ ॥

मोहाद्वैते जगति सुतरामुन्मनीभूय सम्यक्,
ससारीयां कृतिकुशलतां व्यज्य विश्वास्य सर्वान् ।
कालच्छिद्राधिगतिमुदित संविजानोऽग्रहीय',
सार्वीं दीक्षां सुमुनिसविधे भावशुद्धिप्रकर्षात् ॥ १२ ॥

---

१ शुभानुबन्धि सुखमित्यर्थ । २ पूर्वजन्मन्याराधिताना सच्चरणज्ञानवैराग्याना सारभूतान्निर्विकारभावादित्यर्थ । ३ श्रीवज्रस्वामिपितु धनगिरिमहर्षेर्गृहस्थावस्थाया यादृशी मनोदशाऽऽसीत्तादृशीं शुभा परिणतिं समधिगम्य तत्सादृश्यवता येन मगनलालेन चरित्रनायकजनकेनाऽज्ञप्रमादिजनयुक्तिठलस्यकालदिपमतोया असारत्व प्रथितमिति द्वितीयपादरहस्यम् । ४ मोहजन्यासक्तिसूचकमिद पदम् । ५ वेदोदयसूचकमिद पदम् । ६ मोक्षमार्गेऽन्तरायभूतानित्यर्थ । ७ व्यवहारे 'सगाई' पदेन अेतदर्थ प्रतीत । ८ स्वस्य इष्टस्य=लग्नसम्बन्धस्थापनरूपस्य प्रभवन लपन्ति–कामयन्ति ये ते इति विग्रह । ९ प्रबलमोहवत इत्यर्थ । १० 'अनिच्छये'त्यर्थकमेतदव्ययम् ।

किन्त्वज्ञानाद्धितमतिभराः 'मग्नलाल'स्य स्वीयाः,
दीक्षाच्यावां प्रचुरविधयाऽकार्पुरूर्जस्विचेष्टाम्[१]।
झञ्झावातैरचलप्रतिमं नैकविघ्नैश्च मत्वा,
राजद्वारेऽसदभियुजनात्[२] कार्यसिद्धिं प्रचक्रुः ॥ १३ ॥

एवं दैवाद् विषमभवके चारके [३] बद्धरूपात्,
भोगान् भव्यान् प्रवलविधिना भुञ्जमानादकामम्।
लेभे पत्युः सुभग'यमुना'देस्तथा पुत्ररत्नं,
शुक्तिर्मुक्तां लभति हि यथा स्वातिजाद् वारिवर्षात् ॥ १४ ॥

१ ३ ९ १
ऊर्वीब्रह्मग्रहशशधराब्दे सदाषाढमासे,
[४] दर्शाख्याहे [५] विदितमहसः धुर्यस्वप्नात्सुतस्य।
[६] सच्चन्द्रार्कज्ञभृगुसहिते कर्कलग्ने सुरम्ये,
जातास्वाधु मुदितपितरो 'हेमचन्द्रे'ति संज्ञाम् ॥ १५ ॥

यो व वाल्ये धृतिमतियुत [७] मार्गदीपस्य भङ्गे
नाभिव्येजे पुलिससविधे छद्मतां सत्यनिष्ठः।
धर्माभ्यासं व्यवहृतिकलां द्राग् समभ्यस्य चित्रं,
वाचां पत्युः सुमतिलघुतां स्वीयबुद्ध्या हि व्येजे ॥ १६ ॥

जैनाचारे स्वपितुरनिशं प्रेरणाल्लब्धनिष्ठ-
स्तत्त्वज्ञानाद् विमलमनसा भोगवैगुण्यमानी।
आत्मोन्नत्यै प्रगुणमतिक मोहभूपं जिगीषु
सच्चारित्रग्रहणपरतां व्येज उद्वाहकाले ॥ १७ ॥

---

६ पूज्यवर्याणां जन्मकुण्डलिकेयम्।

५
च
३
६ के
शु ४ बु सू
२
७ गु
१
८ म
१० श
१२ श
९
११

आगमोद्धारकश्रीणां जन्मकुण्डली

१ व्यवहारे ह्येतत्पदभावार्थं 'धमाल–तोफान'शब्देन व्यज्यते। २ लग्नविधान–(कायदो)स्यासदालम्बनेनासदारोपहेतुकाधिकरण(दावो–केस)प्रयोगेनेत्यर्थः। ३ बद्धसदृशादिति भावः। ४ अमावास्यायामित्यर्थः। ५ वृषभस्वप्नादिति भावः।
७ 'म्युनिसिपालिटीफानस' इत्यर्थपरकोऽयं शब्दः।

किन्तु प्रेम्णा परवशधियां १ बन्धूनां विघ्नरूपा
२ सन्निर्बन्धाच्चरणमलनाच्छन्दतस्स्नग्धमातु ।
मन्वानो वै परिणयविधिं ३ चारकापत्तिरूपां,
'माणेका'ख्यां कुलजसुकनीं ४ पर्यणैषीद्विचेताः ॥ १८ ॥

मोहान्ध्याढये जगति विषमं ५ प्रस्तरूपोऽपि दुःखा-
ग्न्युत्तापाद्यैः ६ प्रकृतिमजहन् 'हेमवच्चन्द्र'शुद्ध ।
ज्येष्ठभ्रातुः सुमुनिभवनाच्चेरणाद् भूरि ७ वप्तुः,
छित्वा मोहं समयमिषतः प्राव्रज'द्धेमचन्द्रः' ॥ १९ ॥

८ किन्तून्मुह्यच्छ्वशुरजननिस्वीयकैर्ध्यान्ध्यवृत्ते-
र्न्यायागारे १० परिणयविधे ९धाजतो ११ रावितं वै ।
न्यायाध्यक्ष चकितममसं धैर्यसारैस्सदुक्तै,
कृत्वाऽत्याप्तद [१२] द्विगुणचरणात्कर्मणा च्यावितोऽसौ ॥ २० ॥

१३ नन्द्याद्रर्दिप्रकृतिजहनात्कर्मणोऽपूर्वशक्ते-
र्मोहात्क्रान्तोऽपि १४जनकसुचोद्यात् स्त्रियो भूषणार्थम् ।
१५आहम्मद्ये पुरि शुभविधेर्जग्मुषो जम्बुरासात्,
दीक्षोत्कोऽगाज्जनकसहगो 'निम्बपुर्यां' 'सुराष्ट्रे' ॥ २१ ॥

'झव्हेराब्धी'न् कुमततिमिरोज्जासकान् दिव्यधाम्न,
७ ४ ९ १ ५
निश्चायेतिश्रुतिनिधिविधौ माघशुक्लपुघस्त्रे ।
प्रव्रज्या'नन्दयुतजलधि'हेमचन्द्रो' बभूव,
तुष्टो वप्ता निजसुतहितश्रेष्ठरीतिप्रसेधात् ॥ २२ ॥

---

१ विघ्नभूतादसदाग्रहादित्यर्थ । २ चारित्रस्यान्तरायभूतादित्यर्थ, अेतद्धि'छन्दत'पदविशेषण ज्ञेयम् । ३ कारागारप्रसनरूपा-मित्यर्थ. । ४ विमनस्क इत्यर्थ । ५ प्रस्तसदृशोऽपीति भाव । ६ स्वजनसम्बन्धिवर्गजनितनानाकष्टरूपाग्नेरुत्तापादि-भिरित्यर्थ. । ७ पितुरित्यर्थ । ८ प्रकर्षेण मोहाधीना इत्यर्थ । ९ अेतत्पदस्यार्थो हि लोकभाषायां 'धांधल' इति पदेन व्यवह्रियते । १० लग्नविधान (कायदे) स्येत्यर्थ. । ११ लोके हि 'फरियाद करी' इति कथ्यते । १२ अेतत्पादस्यात्र भावार्थ – हेमचन्द्रो हि कर्मणा विवशीभूतस्सन् द्विगुणचरणात्=द्विविधचरणात् (अेक च बाह्यवेषरूप द्वितीयं चान्तरभावस्फीतिरूप) च्यावित. इति । १३ (कर्मविवशतया चरणपतितानां) नदिषेणार्द्रकुमारादीनां प्रकृते (स्वभावस्य) जहन (त्याग –परिवर्तन-मितियावन्) यस्मादिति विग्रह, इद च 'कर्मण' इत्यस्य विशेषणम् । १४ पितु.शुभप्रेरणयेत्यर्थ. । १५ अहमदाबाद-नगरे इत्यर्थ ।

'आनन्दाब्धिः' शिवसुखजनौ संयमे दत्तचित्त-
श्चातुर्मासं प्रथममुषित. 'लींबडौ' गुर्वुपान्ते।
वह्वभ्यस्तं यतिजनहितं तत्र दैवात्प्रतीपान्,
[1]मार्गस्याश्वेतभवद्दिवसे पूज्यपादा ययु स्व ॥२३॥

उद्यद्रोहे हिमपतनवद् गुर्वभावाधिक्षिप्तो
[2]ऽप्युद्यद्धैर्यो गुरुवरवचो धारयन्नागमीयम्।
'आनन्दाख्या'-गुणमनसा क्षिप्तमोहो द्वितीयां,
[3]चातुर्मासीं सुविधि विदधे 'ऽहम्मदे शाहपुरे' ॥२४॥

यात्रां कुर्वन् विहरणविधेः 'केशरीयादितीर्थे'-
[4]ष्वातीत्याप्तरस'दुदयपुरे' लोकसंख्यां सुवर्षाम्।
मौने धर्मं सुवहु कुयतन् शास्त्रवार्त्तासु विश-
स्तीर्थोद्भासी कुसमयमथान् 'मारवाडे' व्यहार्षीत् ॥२५॥

सिद्धान्तोक्त्या विशकलयिता लुम्पकादिप्रचारं,
कृत्वा यात्रां वरमुनिमतां 'गोलवाडे'[5]पुतीर्थ्यां।
'पालौ' तुर्यं जिनमतमहैर्वृष्टिकालं व्यतीत्या-
[6]स्थात् सद्वृत्त पठनसुयती 'सोजते'ऽक्षाङ्कवर्षाम् ॥२६॥

सार्वं तत्त्वं सुविशदमथो वोधयन् भव्यजन्तून्,
विहृत्योग्रं 'मरुधरभुवि' प्रागवात् गूर्जरत्रान्।
तस्योत्संसे 'चरुतरभुवो' भूषके 'पेटलादे,'
[7]संजुष्टौ 'जीव-मणिविजयौ' वप्तृबन्धू सुदीक्षौ ॥२७॥

पेहामुत्रोपकृतिचतुरं रुगणमायुक्तचेता.,
निर्यामित्यासाच्चरितचतुरः पञ्चवर्षामवात्सीत्।
'संवत्सर्यां अवमतिथिजे वृद्धिभेदप्रसङ्गे,
पर्यायाल्पोऽप्यधिगतरहश्शास्त्रमान्यं जुघोष' ॥२८॥

---

१ मार्गशीर्षकृष्ण एकादशीतिथौ इत्यर्थः। २ श्रीमद्भि झवेरसागरपूज्यपादैरन्तिमसमये स्वशिष्यायानन्दसागराय आगमाभ्यासपरताया श्रुतप्रचारस्य च भारपूर्वक शिक्षादत्ताऽऽसीत्। ३ अहमदावादनगरे शाहपुरमध्ये इत्यर्थः। ४ तृतीया। ५ गोलवाडीयपञ्चतीर्थ्यां। ६ पञ्चमीमित्यर्थः। ७ पिता ज्येष्ठभ्राता चेत्यर्थः।

वर्षान्ते 'चारुतर'जनतां बोधयित्वार्यतत्त्व,
'छाणीग्रामे'[1]ऽवसदृषिमितं वृष्टिकालं सुधीर ।
मूर्त्ति[2]न्द्वावाञ्जिनमतरिपून् ढुण्ढकान् जोषमाऽऽस्य,
'कल्लोलाख्ये'पुरि विहरता येन दीप्तं सुचारु ॥ २९ ॥

शास्त्रव्याख्याचकितसुबुध'स्स्तम्भने' यो ह्यकार्षी-
च्चातुर्मासं वसुमित[3]मथो क्लृप्तधर्मप्रचारः ।
प्रश्नोत्कर्षाञ्जिनमतहितात् पार्श्वचन्द्रान्यतीर्थ्यान्,
कृत्वा वादे प्रतिहतधियो भासिता जैनदृष्टि ॥ ३० ॥

वर्षान्ते षड्[4]रियुतभविकं सङ्घमादाय भव्यं,
यात्रां कृत्वा विमलगिरिसत्तीर्थराजस्य सम्यक् ।
भव्योद्बोधं सुविधिविचरन् वर्षे साणंद'पुर्यां',
चातुर्मासं नवममवसच्छास्त्रतत्त्वप्रकाशी ॥ ३१ ॥

चातुर्मासत्रय'महमदावाद'माश्रित्य लब्धा,
शाब्दे[5] न्याये रुचिरपटुता येन विद्वत्सुमान्या ।
कृत्वा रम्यां सुविधि तमसां[6] नोदिकां तीर्थयात्रां,
दुष्कालार्त्तौ सहकृतिनिधि[7] कारिता 'पट्टणे'[8] ये ॥ ३२ ॥

८ ५ ९ १
नागाक्षाङ्केन्दुमितशरदो माघराकाह्निरम्ये,
प्रायच्छद्र्म[9]सजजरणछोडाय दीक्षां सुशिक्षाम् ।
आद्यं शिष्यं 'विजयसहितं सागरा'न्त विधाय,
९ ५ ९ १
वर्षा ग्रहेषुनिधिकुभवां 'भावपुर्यां'[10]मवात्सीत् ॥ ३३ ॥

१ सप्तमम् । २ मूर्त्तेरपलापकारिण । ३ अष्टमम् । ४ एत्र हि शब्द भाषाया 'छरीपालतो सघ' इत्युच्यते । ५ व्याकरणे इत्यर्थ. । ६ पापानामित्यर्थ, । ७ 'सहायकारी फड' इति भाव । ८ गूर्जरदेशीयाणहिल्लपुराख्य पट्टणे इति भावः । ९ (पेटलादापन्न) धर्मजवासिने रणछोडदासाख्यपाटीदारज्ञातिकाय भव्यायेत्यर्थः । १० भावनगरे इत्यर्थ ।

शास्त्रोपज्ञ हितमुपदिशन भूरिभव्यप्रबोधं,
वर्षाकालं[1] मनुमितमथो 'राजपुर्या'[2]मुवास ।
सत्रा श्री'नेमिमुनिपति'नोद्वह्य सिद्धान्तयोगान्,
'पन्न्यासाख्य' पदमलभत ज्येष्ठशुक्ले दशम्याम ॥ ३४ ॥

वर्षां नीत्वा 'कपडवणजे' धर्मकृत्यैस्सुरम्यै-
र्यात'स्सौराष्ट्र'मथ विचरन् देशनादानदक्ष. ।
कृत्वेतस्ना[3]रणवरगिरेस्स्पर्शनां धर्मवाचा,
प्रीतैः[4] 'पेथापुर'परिषदो योजकैस्सत्कृतोऽभूत् ॥ ३५ ॥

मज्जद्भव्यान् भवजलनिधौ रक्षिता जैनवाग्भि-
र्वर्षे[5] नीत्वाऽऽगमविधियुते 'भावराजाख्यपुर्यो'[6] ।
'सूर्यद्रङ्गे' विविधसुमहैस्सत्कृतस्सूरतीयै-
श्चातुर्मासीं 'सुरतनगरे' यापयास रम्याम ॥ ३६ ॥

चैत्यान् सर्वान् सविधि 'सुरते'श्राद्धसङ्घेन नत्वा,
गत्वा 'मुम्बापुरि' भविजनैः प्रार्थित. 'लालबागे' ।
गौराङ्गाणां 'समितशिखरे' हर्म्यसन्निर्मिमीपां,
धैर्यात् सत्तामियमगणयन् ध्वस्तवान् यः क्षणेन ॥ ३७ ॥

'दे×ला. श्रातु'र्निधिमपि वरं स्थापयित्वोपदेशा-
दारेमे सद्विषयखचितग्रन्थरत्नप्रकाशम ।
सङ्घं नीत्वा[7]'ऽभयविधु'मुखं 'चान्तरीक्षाद्रतीर्थे,'
यात्रां[8] चक्रे रसरिनिरतैः श्राद्धवर्यैस्समेतः ॥ ३८ ॥

धार्ष्ट्यं[9] नग्नैस्सुबहु विहितं तत्र पूजाप्रसङ्गे,
मिथ्याभ्याख्यानमपि च ततो न्यायगेहे प्रयुक्तम ।
जित्वाऽकार्षु झगिति गुरवस्सत्यतत्त्वप्रयोगा-
दाङ्ग्लन्यायाधिपतिहृदये जैनधर्मप्रकाशम् ॥ ३९ ॥

---

१ चतुर्दशममित्यर्थ । २ राजनगरे–अहमदावादपुरे। ३ तारगातीर्थस्येत्यर्थ । ४ पेथापुरीयप्रान्तिकपरिषदि गुरुवरस्य जातसत्कृतेस्सूचकोऽयपाद । ५ चातुर्मासद्वयमित्यर्थ. । ६ भावनगरे–राजनगरे। '७ अभयचन्द्रज्ञवेरिणस्सघपतिपदेन नियोजितमित्यर्थ । ८ 'छरी पालतो सघ' इतिभाव. । ९ दिगम्बरैरित्यर्थः ।

५ ६ ९ १ १
बाणार्यङ्केन्दुमितसमसि प्रावृषं 'शेवलायां,'
स्थित्वोद्वाह्य प्रथममुपधानव्रतं श्रावकाणाम ।
'सूर्यद्रङ्गे' जलदसमयौ यापितौ धर्मकृत्यै-
२
र्दीक्षित्वैतर्हितनगणपं 'माणिकं' चान्यभव्यान् ॥ ४० ॥

धर्मक्रान्तिच्छलमुपदधन् लालनाख्यो हि विद्वन्-
३
मन्य'स्सिद्धाचल'भुवि तदाऽपूजयत्स्वं शिवाद्यैः ।
पाखण्डं तत् भृशमपगतं कर्त्तुकामैर्गणीन्द्रै-
४
र्मन्द्श्रीः कान्तिविजयमुखैस्सङ्घबाह्य कृतस्स ॥ ४१ ॥

५ ६
स्थित्वा वर्षं विषयजिनमौ 'स्तम्भतीर्थे' च'छाण्यां,'
ज्येष्ठभ्रात्रे 'विजयमणये' वर्यपन्न्यासभूषाम ।
दत्वा तीर्थानि सविधि नमन् 'पत्तनं चाणहिलं,'
भव्यश्रोतॄन् जिनमतसुधां पाययन्नाप रम्यम ॥ ४२ ॥

७
तत्रायाप्य श्रुतवरमुदाप्यायिनीं भव्यवर्या,
८ ९ १० ११
सङ्घस्थित्यां तपसि धवले दिक्तिथौ मल्लितीर्थे ।
१२
अज्ञानान्धंतमसमथनायागमोद्धारकर्त्रीं,
श्रीऽर्यां संस्थाप्य समितिमथो हर्षयामास भव्यान् ॥ ४३ ॥

आज्ञप्तं य'स्स्वगुरु'जयवीरा'भिधैरागमाना-
मुद्धारार्थं चरमसमये' पालितुं तद् यथेष्टम ।
वह्वायासेन च गणिवरस्साधुसङ्घोपकृत्यै,
प्रारेभे मुद्रणमथ महत् स्वाश्रयेणागमानाम ॥ ४४ ॥

---

१ वर्षे । २ वर्त्तमानकालीनगच्छाधिपतिमिति भाव । ३ शिवजीदेवशीप्रभृतिभि । ४ प्रवर्त्तककान्तिविजयमहाराजमुख्यै सूरिभिरित्यध्याहार्यम् । ५ चातुर्मासद्वयम् । ६ त्रयोविंशति-चतुर्विंशतितमस्त्यर्थ । ७ श्रुतज्ञानस्य वरमुद -हर्षस्याप्यायिनीं-पोषिकां । ८ चतुर्विधसघस्योपस्थितिसूचकमिद पदम् । ९ वैशाखमासे । १० दशम्याम् । ११ भोयणीतीर्थे । १२ आगमोदयसमितिसूचकोऽय शब्द ।

वर्षायां 'पाटण'मुपगतैर्वाचनाऽद्या ह्यकारि,
निर्ग्रन्थानां वरमतिमतामागमाभ्यासवृद्ध्यै ।
तस्यां श्री'सूयगडदशवैकालषट्त्रिंशिकादीं'न्,
व्याख्यायाऽयुः 'कपडवणजे' वाचनायै गणीशाः ॥ ४५ ॥

तत्र व्याख्याय पटु 'ललितावश्यकादीं'न्[1] सुयत्नं
जग्मुर्वर्षार्थे 'महमदपुर्यां'[2] स्वधर्माभिवृद्ध्यै ।
तत्र'स्थानाङ्ग'मथ सविशेषाकरं[3] वाचयित्वा,
वर्षामस्थात् 'सुरतनगरे' भासयन् जैनधर्मम् ॥ ४६ ॥

तत्राकार्षुर्युगशरमिते[4] वाचने 'चानुयोग-[5]
श्रीनन्द्याचारमुखमहदावश्यकाद्या'गमानाम् ।
एवंकारात् सुयतिसमजे[6] कालदोषात्प्रहीणं,
सच्छास्त्राणां विततपठनं संततं वृद्धिमाप ॥ ४७ ॥

'आनन्दाब्धेः' प्रवरगणिनस्तत्त्वनिष्णागरिष्ठौ,
भक्त्युत्साहौ श्रुतजिनमतस्फीतिकायेषु दृष्ट्वा ।
(४)(७)(९)(१)
वर्षेऽयात्त्रिग्रहतनुमते राधशुक्ले[7] दशम्या-
मा यत्वं 'कमलविजया'ख्यसूरयः 'सूरते'ऽदुः ॥ ४८ ॥

स्वर्णे माणिक्यमिव खचितं योग्यसाम्यं च सूरे-
र्वीक्ष्य प्रीतस्सुमहमकरोत्'सूर्यपुर्या'स्सुसङ्घः ।
न्यायागारे ललनविषयानिष्टवादं[8] विजित्य,
धर्मभ्राजी मुनिपतिरथो 'मोहमय्यां' समेतः ॥ ४९ ॥

---

१ ललितविस्तरा–आवश्यकसूत्र(१/४)–अनुयोगद्वारसूत्र–योगदृष्टिसमुच्चय–उत्तराध्ययनसूत्र(१/३)ग्रन्थानित्यर्थः । २ अमदावादनगरे । ३ विशेषावश्यकभाष्य(८/४)सहितमित्यर्थः । ४ चतुर्थो–पञ्चमो चेति भावः । ५ ललितविस्तरा–योगदृष्टि० अनुयोग०(१/२)–आवश्यक०(१/४)–उत्तराध्ययन०(१/३)–विशेषावश्यक०(८/४)–स्थानाग०(१/२)–सूत्राणामित्यर्थः । ६ साधुसङ्घे इति भावः । ७ वैशाखशुक्ले । ८ लालन–शिवजीप्रकरणे न्यायागारेऽपि विजित्येत्यर्थः ।

(२८)		[१]
लब्ध्यङ्कप्रावृषि वृषमहिम्नोऽङ्को नैककार्यैं-
दुर्भिक्षार्त्तीयनिधिकरणेऽप्रेरयद् दानशौण्डान् ।
'कीकाभ्रातु'र्भवनमुषितस्सूरिराड् 'भायखल्ले,'
स्वाग क्षान्त्यै विहितविनय प्रार्थितो लालनेन ॥ ५० ॥

(५) (७) (९) (१)
चातुर्मासे शरमुनिनवेन्दौ श्रुतप्रोक्तरीत्या,
[२]
देवस्वोत्सर्पणविवदने वादगल्भान् विजेतु. ।
सूरेस्सङ्घार्पितनिखिलसद्ग्रन्थरत्नानि सङ्घो
[३]
'जैनानन्दश्रुतवरगृहे'ऽस्थापय'त्सूरतीयः' ॥ ५१ ॥

'सिद्धाद्रेर्जीवणनवलचन्द्रो'हि यत्प्रेरणातो,
यात्रासङ्घं विविधसुमहैः' पादचारं निनाय ।
कृत्वा यात्रां सह सुभविकैस्सूरिवर्यश्चकार,
[४]
'पालीताणे' गुहमुखमितां वाचनां साधुसङ्घे ॥ ५२ ॥

'पिण्ड-प्रज्ञापन-भगवतीनोघनिर्युक्तिका'श्च,
व्याख्यायो ह्य शुभमुपधानव्रतं भाविकानाम् ।
विज्ञप्ति'मालववसिमतां मानयित्वा च सूरि-
[५]
श्शिष्यै साकं किल 'रतिललामाख्यपुर्या' समेत ॥ ५३ ॥

धर्मोन्नत्या 'ऋषभसहितां केशरीमल्लनाम्नीं,
[६]
संस्थां' तत्राखिलजिनमतोद्भासिकां स्थापयित्वा ।
[७]
'व्याख्याप्रज्ञप्तिसमवयसूत्रादिप्रज्ञापना'नां,
[८]
चक्रे व्याख्यां कुलगिरिमितां वाचनां कत्तकामः ॥ ५४ ॥

'शैलाणाख्यं' पुरमथ यतीन्द्रो हि सङ्घाग्रहेण,
चातुर्मासार्थमुपगमितो धर्ममुद्धान् प्रबोद्धुम ।
मत्वा धन्यं नृपतिरपि गच्छाग्रवाचो निशम्या-
मार्युद्घोषं दयितहृदयस्स्वीयराज्ये चकार ॥ ५५ ॥

---

१ धर्मप्रभावनाया इत्यर्थ । २ उत्सर्पण(बोली)स्याशास्त्रीयताया देवद्रव्यस्य च चर्चासूचकमेतत्पदम् । ३ श्रीजैनानन्द-पुस्तकालये इत्यर्थ. । ४ षष्टीमित्यर्थ । ५ रतलामनगरे इत्यर्थ. । ६ खिलशब्दो हि विघ्नापरपर्यायोऽतोऽत्र निर्विघ्नतया जिनमतस्योद्भासकारिणीमित्यर्थो ज्ञेय । ७ छन्दोभङ्गभिया विहित श्रीसमवायाङ्गसूत्रार्थे एतादृशपदप्रयोग. मर्षणीय. धीधनै विद्वद्भि । ८ सप्तमीम् ।

पूर्णे[1] शैलाणनृपविषये' ह्यष्टमीरुद्रदर्शा-
ऽऽख्याताह्न पर्युपणदिवसे मारीचारं न्यषैधीत् ।
प्राच्यं वृत्तं ह्यकवरविबोध्धु स्मृतिं 'हीरसूरे'-
रानीयायाद्विविधनिगमान् पावयन् 'रत्नपुर्याम्[2] ॥ ५६ ॥

प्रेमक्षप्त्या श्रुतवरतपस्सम्यगुद्ग्राह्य चान्यैः-
पुण्यैः कृत्यैर्जलदसमये भ्राजयित्वा सुधर्मम् ।
'माण्डूतीर्थे'[3] प्रचलितविधौ वाधकं 'धारभूपं,'[4]
हस्तक्षेपोन्निरसविधये[5]ऽवोधयत्तत्र गत्वा ॥ ५७ ॥

'माण्डू-भोपावर'लसितसच्चैत्ययोस्स्वोपदेशा-
ज्जीर्णोद्धारं प्रवरभविकैः कारयित्वा यतीन्द्र ।
बोधं'पञ्चेडपुरपतये' 'सेमलीठक्कुराय,'
प्रादात्ताभ्यां निजभुवि ततो मारयो[6] वारिता वै ॥ ५८ ॥

वर्षाकाले जिनमतविभां वर्द्धयन् 'रत्नपुर्यां,'
शास्त्रैर्वादे यतिपविजयं[7] त्रिस्तुतीयं न्यजैषीत् ।
सङ्घस्याभ्यर्थनमथनिशम्योपधानं सुवाह्य,
'सम्मेताद्रिंव्रजितुमभिवङ्ग' प्रतस्थे मुनीन्द्र· ॥ ५९ ॥

मध्ये मार्गं निजप्रतिभया धर्मभासं वितन्वन्,
लोकं नानाविधमुपदिशान् 'कालिकाता'मयासीत् ।
(४) (३)
चातुर्मासे युगगुणमिते तत्र चैत्यादिधर्म्य-
स्थानस्थित्यै बहुतरनिधिः कारितो देशनात ॥ ६० ॥

---

१ अष्टम्यामेकादश्याममावास्याया पर्युषणासु चेत्यर्थ । २ रतलामनगरे । ३ माण्डवगढार्थपरकमिद पदम् । ४ धारसस्थानाधीशमिति भाव । ५ उत्कर्षेण निरसनार्थमित्यर्थ । ६ हिंसा । ७ श्रीयतीन्द्रविजयाह्वमितिभाव ।

(०) (२)

तीर्थेशानां खयमलमितानां सुनिर्वाणभूमे-

'स्सम्मेताद्रे' प्रथितयशस पुण्ययात्रामकार्षीत्।

राज्ञो 'दुद्धेडियविजअसिंह'स्य भक्त्या विहृत्य,

वर्षाहेतोस्सुमुनिपतयोऽजीमगञ्जे' न्यवात्सु ॥ ६१ ॥

बाबूलोकं विषयजसुखास्वादलीनं विबोध्य,

संवेगापूरितसुवचनैर्धर्ममार्गे न्ययुङ्क्त।

दीक्षाब्रह्मव्रतविधियुतानुत्सवान् कारयित्वा,

पावं पावं विविधनिगमान् 'सादडी'ग्राममापु ॥ ६२ ॥

पावं पावं जिनमतसुधीर्भव्यलोकं यतीन्द्र,

प्राग्वाटानां मरुजसहजं वैमनस्य चिरत्नम्।

कृत्वा दूरे श्रुततपविधि सोत्सवं कारयित्वा,

बोद्धुं धर्मं शिथिलकृतिकान् 'मेदपाट' विजह्रे ॥ ६३ ॥

१ (७) (३)

नीत्वा वर्षा'मुदयनगरे' सम्मितां धातुस्त्वै-

र्जग्मुस्सङ्घेन सह गुरव 'केशरीया'ख्यतीर्थम्।

२

तत्रौद्दण्डयं क्षपणककृत स्वीयबुद्ध्या व्यपास्या-

ध्यारोप्योच्चैस्सितपटयशोऽवर्धयन् सद्ध्वजं वै ॥ ६४ ॥

१

नग्नाटीयै प्रतिहतमथो धर्मतेजो विवर्द्ध्य,

न्यायागारेऽधिगतविजया आययुर्गूर्जरत्रान्।

चातुर्मासं सुमुनिसहिता ह्यम्मदाबादपुर्यां,'

तस्थुर्भव्यान् विविधममलं जैनतत्त्वं दिशन्त ॥ ६५ ॥

'माकुभ्रातु'र्विनतिवशगा 'आश्विनीं सङ्घचक्री-

मोलीं' दिव्यां नवपदमहो बोधिकां कारयन्त।

३

संस्थां संस्थाप्य च नवपदाराधिकां स्वोपदेशा-

४

द्धंग्मेन्सोसायटिविनयतंश्चख्युरास्तिक्यतत्त्वम् ॥ ६६ ॥

---

१ उदयपुरे। २ दिगंबरविहितम्। ३ श्रीनवपदआराधकसमाजस्थापनाया. सूचक अेष पाद। ४ विद्याशाला(डोशीवाडानी पोळ) मध्ये आस्तिक–नास्तिक चर्चा स्फोटस्वरूपप्रसिद्धव्याख्यानवार्ता सूचकोऽयं पादः।

तद्व्याख्यानात् क्षुभितमतिकान् शिक्षितान्[१] शास्त्रपाठे-

स्सन्तोष्यार्थं धनवितरणौचित्यतत्त्वं[२] विबोध्य।

याता 'श्रीदेशविरतिसमाजं' ततस्स्थापयित्वा,

'श्रीभोयण्या'मतिशुभमहैराद्यतन्मेलकाय[३] ॥ ६७ ॥

वर्षावासं निधि[(९)]गुण[(३)]मितं यापितुं 'ज्ञामपुर्यां'[४]

यान्तौ मार्गे'ऽहमदनगरे' 'तीर्थसिद्धाचलस्य'।

रक्षाहेतोस्सपदि निधये प्रेरयित्वा सुभव्यान्,

लक्षाधिक्यं द्रविणचयनं कारयामासुराशु[५] ॥ ६८ ॥

स्थाने स्थाने जिनमतमहं वर्द्धयन्तो गणीन्द्रा-

स्स्थित्वा वर्षा 'नवलनगरे'[६] चारुवाग्भिस्स्वकीयैः।

सत्र[७]चामाम्लगृहमथ चास्थापयन् छात्रगेहं[८],

दान्ताः[९] पूज्यै धृतिमतिबलात् बालदीक्षाविरुद्धाः ॥ ६९ ॥

पश्चादेता'स्सुरतनगरे' जैनसाहित्य[१०]वृद्धि-

सत्कोशार्थं धनिक'नगिनं मछुपुत्रं'[११]व्यबोधन्।

'मुर्शीदाबादपविजयसिंह'स्समेतोऽत्र सूरे-

र्भक्तिव्यक्तीकरणपटुको भावतो दर्शनाय ॥ ७० ॥

आसीच्छ्री'देशविरतिसमाजस्य' पर्षत्[१२]सुरम्या,

दत्ता तस्यां भविकहितदा देशना सारगर्भा।

'रत्नाम्भोधे'[१३]पठनसदनस्थायि कोशं विवर्द्धयं,

दृब्धा 'तत्त्वप्रसारणकरी बोधमालाख्यसंस्था' ॥ ७१ ॥

---

१ आंग्लशिक्षाप्रभावितान् नवयुवकानित्यर्थः। २ धनस्य व्यये दाने वा पात्रापात्रविवेकमित्यर्थः, एतद्धि तस्मिन् समये ज्ञानप्रचारनाम्नी भौतिकवादसमर्थककेलवणीपोषककॉलेज–हाइस्कूल–बोर्डिंगादीनां हिताहितकरत्वमीमांसा सूचक पदमस्ति। ३ श्रीदेशविरतिसमाजस्य प्रथमाधिवेशनायेत्यर्थः। ४ जामनगरे। ५ षष्टिसहस्राणि रूप्यकाना वार्षिक दत्त्वा तीर्थस्वामित्वनिर्णयस्यानुकूल्याय श्रीसिद्धाचलरखोपाफंडपोषणप्रवृत्तिरेतच्छ्लोके प्रदर्शितास्ति। ६ जामनगरमित्यर्थः। ७ सत्रं=भोजनशाला, आचाम्लगृह=आंबिलखातु। ८ बोर्डिंगाख्यविद्यार्थिगृहमिति भावः। ९ निष्फलप्रवृत्तिमत कृता इत्यर्थः। १० जैनसाहित्योद्धारकफंडमित्यर्थ। ११ नगीनभाई–मछुभाई–श्रेष्ठिनमित्यर्थ। १२ अधिवेशनमित्यर्थः। १३ श्रीरत्नसागरजैनबोर्डिंगस्थार्थिफंडमिति भाव।

प्रव्राज्यानेकभविकजनान् पावयन्त स्सुराष्ट्रान्,
प्रावृट्कालं शुभकृतिभरै'स्स्तम्भतीर्थे' व्यतीयु ।
सस्था प्याहम्मद्पुर'मितास्तत्रसंस्थाय वर्षा,
श्रुत्वोद्यच्छन् 'घटपुरनृपाज्ञां[1] सुदीक्षाविरुद्धाम् ॥ ७२ ॥

सूरेश्शास्त्राभ्यसनमुदिता जङ्गमज्ञानशाले-
त्येवं चाशंसदतिविदुषी जाभंनी क्राउझाख्या'।
(२) (४) [2]
नेत्राम्भोधिप्रमितजलमुक्काललाभस्पृहावन्-
मुम्बापुर्यां गतभविजनप्रार्थनातो विजह्रे ॥ ७३ ॥

शास्त्रव्याख्याप्रथितयशसो 'लालबागे' हि सूरे
र्दीक्षापुष्टि, प्रवचनविधेः क्षुव्धयूनां प्रचारैः ।
व्यामूढाया ऋजुजनततेर्मोहहत्यै समित्या,[3]
पत्रं संस्थाप्रथनजनितं चालितं 'सिद्धचक्रम्' ॥ ७४ ॥

'माणेकाम्भोनिधि'सदुपदेशात्प्रकृतोपधाने,
मालारोपोत्सवमुपगता 'घट्टकाद्रे पुरे'[4] वै ।
व्याख्यानैस्स्वैस्समयसहितैस्संयमायोग्यसूचि-[5]
नाट्यं रुद्धा युवजनमतं भासितं शीघ्नं हि ॥ ७५ ॥

पश्चाद्याता'स्सुरतनगरं' शिष्यवृन्दैस्समेता-
स्संवत्सर्यास्तिथिगतविसंवादमुन्मुच्य शास्त्रे ।
भाव्युत्सूत्राध्वगविषमता याञ्जसा व्यञ्जिता सा,
किन्नोऽद्यापि प्रकटविदिता वर्त्तते पर्वतिथ्या ? ॥ ७६ ॥

---

१ वडोदराराज्यदीक्षाप्रतिबन्धककायदार्थपरकमेतत्पदम् । २ चातुर्मासवाची अय शब्दः । ३ श्रीसिद्धचकसाहित्यप्रचारक-समिते स्थापनं सिद्धचक्राख्यपाक्षिकप्रारभ्येत्यर्थ. । ४ घाटकोपरे इत्यर्थ. । ५ दीक्षाया अयोग्यताप्रदर्शक युवकसंघप्रेरित नाटकमित्यर्थः ।

नानाप्रश्नोत्थितमतिगतभ्रान्तिशान्त्यै सुपर्षत्[1],
सङ्घायासात् सितपटमतालम्बिनां सद्यतीनाम् ।
० (९)(९)(१)
'आकाशाङ्काङ्कशशिसहिते वत्सरे राजपुर्यां[2],
जाता यस्यां यतिपतिवरास्सम्यगामन्त्रिता वै ॥ ७७ ॥

शङ्कापङ्कं भविकमनसो क्षालितुं दत्तचित्ताः,
गत्वा तत्र स्वकमतिभराच्छास्त्रपाठैश्च सर्वान्' ।
सन्तोष्यैता भविकविनयान्नोरदैस्साकमेवा-
सेक्तुं सांसारिकजनगणं सूरयो 'मेहसाणाम्' ॥ ७८ ॥

मध्ये[3] वर्षं सुबहु विहितश्शासनोन्नायिकार्यै-[4]
रत्नःक्षेत्रे[5] सुभविकनृणां धर्मपीयुषसेकः ।
यूरोपीयः श्रुतिपटपुटैर्'ब्राउनः' सूरिशंसां,
पीत्वाऽत्रेतो ह्यमृतवचनैर्वीततृड्कः शशंस ॥ ७९ ॥

काले काले पुनरपि पुनः सूरयः पालितेभ्यः,
शिक्षा-दीक्षा-वितरणमपि प्रायशो योग्यमेव ।
तस्मात् पादार्पणकरुणया पावयन्त्वेषमोऽस्मा-[6]
नेवंसङ्घादरभरभृतः संययुः' पालिताणाम् ॥ ८० ॥

चातुर्मासे गतवति यथा भ्राजते शारदी श्रीः,
पद्मव्याजैस्सरसि सरसा सन्ततं तद्वदेव ।
सज्ज्ञानश्रीरपि गुरुवराणां च सन्तन्यमाना,
नानारूपैर्नवनवमहैर्धर्मकृत्यैश्च रेजे ॥ ८१ ॥

---

१ समेलनमित्यर्थः । २ राजनगरे—अहमदावादे । ३ चातुर्मासमध्ये इत्यर्थः । ४ शासनप्रभावककार्यैरिति भावः ।
५ अन्तःकरणरूपक्षेत्रे इति भावः । ६ आता नहि ।

'श्रीमाणिक्य'[१] 'कुमुदविजय'श्चेत्युपाध्यायवर्यौ,
पन्न्यासौ द्वौ बहुगुणयुतौ 'भक्ति'ते-'पद्मा'भिधौ च।
अत्युत्साहैस्सह शुभकृपासिन्धुवद्भ्यो भवद्भ्यो
लब्ध्वाऽऽचार्याह्वयसुपदवीं धर्मभ्राजो विरेजुः ॥ ८२ ॥

'आनन्दस्याम्बुनिधि'रिति यद् वर्त्तते नाम सत्यं,
प्रत्यक्षन्तत् भुवि विदधती किं न जैनी प्रजाऽभूत्।
तस्मात् सूरीन् झगिति 'नगरे जामपूर्वे'[२]ऽपि सङ्घ,
प्रार्थं प्रार्थं कथमपि चतुर्मासवासाय निन्ये ॥ ८३ ॥

अज्ञैः कैश्चित् श्रुतकथितसिद्धान्तवाचा विरुद्धं,
प्रोक्तं वृद्धिक्षयविषयक पर्वतिथ्याः मत यत्।
उग्रं तत्खण्डनमथ कृतं शास्त्रदृष्ट्यापि लोकं
बोधित्वाऽरं नवमतवतो लज्जितास्यान् प्रचक्रुः ॥ ८४ ॥

तत्रैवाग्रे जलदसमये स्थापितो 'देवबाग-
लक्ष्म्या'नाम्नाऽऽश्रमवर उपादिश्य लोकं सुखेन।
पश्चाद् भक्तो 'नगरधनपः पोपटाह्व'स्सुभक्त्या,
सौराष्ट्रीयाखिलजिनपसत्तीर्थसंस्पर्शनाय ॥ ८५ ॥

सङ्घं नीत्वाचरणचलनं षड्रिसम्पालनोत्कं,
सानन्दोऽगात्[३], सकलमपि तद्वर्णनं चारुरीत्या।
'तीर्थाः सौराष्ट्रविषयभवाः सङ्घयात्रा च'[४] नाम्ना-
ख्याते ग्रन्थे लसति तदिवाऽऽयोकुमाकेतयन्द्रून् ॥ ८६ ॥

(संदानितकम्)

---

१ श्रीमाणिक्यसागरोपाध्याय श्रीकुमुदविजयोपाध्याय-श्रीभक्तिविजयपन्न्यास-श्रीपद्मविजयपन्न्यासेभ्य आचार्यपदप्रदानसूचकमिद पूर्वार्द्धम्। २ जामनगरे। ३ आनन्दसागरसूरीश्वरेण सहेत्यर्थ। ४ 'सौराष्ट्रना तीर्थो अने सघयात्रा' इत्याख्यग्रन्थे इति भाव।

(८) (४)
एवं वस्वब्धिमितमथ ये वृष्टिवासं जनानां,
पुण्याढ्यानामतिविनयतः 'सिद्धक्षेत्रे हि कृत्वा ।
[1]'खातारम्भं चरमजिनपस्याह्वया ह्यागमानां,
रक्षागेहस्य च' शुभविकैः कारयामासुरत्र ॥ ८७ ॥

अन्यत्तत्र[2] श्रमणनिकरग्रन्थसंग्राहि सद्मं,
संस्थाप्यारं शुभ'महमदावादपुर्या' यतीन्द्रा ।
भक्त[3]'श्रीमोहन' इति महच्छ्रेष्ठिना सद्व्रतानां;
रम्ये ह्युद्यापनविधिमखेऽभ्यर्थ्यमानाः प्रजग्मु ॥ ८८ ॥

सिद्धं शास्त्रैरुपकृतिकरं लक्षशो रूप्यकैस्तं,
सम्पाद्योद्यापनविधिमलं 'झाम्पडापोल' मध्ये ।
(५)(५)(९)(१)
तत्रावात्सु शरनवनवैकाङ्किते[4]ऽब्देऽब्दकाले,
चाव्यां[5] वीथ्यां सुगुरुचरणा 'नागजिद् भूधराणाम्' ॥ ८९ ॥

पश्चादेताः क्षरणसमयं[6] यापयित्वाऽऽगमाना[7]-
मागारस्य प्रचलितविधिं वीक्षितुं 'पालीताणाम्' ।
साङ्गोपाङ्गं त्रुटिविरहितं सत्यमारब्धकृत्य,
त्यक्त्वा सर्वस्वमपि सततं साधयन्त्येव सन्त ॥ ९० ॥

कृत्वा लोकोत्तरसुचरितं ये तरन्तीह लोकं,
धन्यास्ते वै सफलजनना भूमराः सन्ति चान्ये ।
सत्यामेतां भणितीमथ ते कर्तुकामा यतीन्द्रा-
स्तत्रातिष्ठन् वरसलिलदाऽऽसेककालत्रयीं[8] ते ॥ ९१ ॥

---

१ श्रीवर्धमानजैनागममंदिरस्य खातमुहूर्त्तमिति भावः । २ श्रमणसंघपुस्तकालयाख्यज्ञानालयस्थापनामित्यर्थः । ३ श्रेष्ठिवर्य-श्रीमोहनलाल छोटालाल इति भाव । ४ वृष्टिकाले । ५ पोलवाची अय शब्दो ज्ञेय. । ६ चातुर्मासमिति भावः । ७ शिलोत्कीर्णागममंदिरस्येत्यर्थः । ८ चातुर्मासत्रयमित्यर्थ. ।

दीर्घायासैर्गणधरवरप्रोक्तजैनागमानां,

पाठं शुद्धं दृषदुदरगं शिल्पविद्याप्रवीणैः ।

कारं कारं किमु न कलितं सूरिभिः कर्म चित्रं,

यस्माज्जातो ह्युपलनिकरोऽप्यागमज्ञ (आढ्य) परे के? ॥ ९२ ॥

रम्योपाध्यायकपदमदु 'श्रीक्षमासागरेभ्य,

श्रीमच्चन्द्रेभ्य उचितपदं चारु पन्न्यासकाह्वम् ।

वर्षे चाग्रे गणधरगृह[1] सिद्धचक्राह्वपूर्वं,'

संस्थाप्यैव[2] जिनमतविभाभासकं सत्समाजम् ॥ ९३ ॥

(९)(९)(९) १)

अङ्काङ्काङ्काब्जमितशरदि ह्यागमानां गृहस्य,

सत्यां पूर्त्तावभिनवप्रतिष्ठाविधिं माघमासे ।

पञ्चम्यामञ्जनशुभशलाकोत्सवेनापि सत्रां,

सन्मूर्त्तीनां श्रुतविधियुतं कारयामासुरत्र ॥ ९४ ॥

सम्पाद्यैवं 'कपडवणजश्रेष्ठिचीमनलाल-

डाह्याभाईत्यभिधपरमश्रावकप्रार्थनातः ।

निश्रायां सूरिवरसुगुरोश्चारु संयोजिताया

एताश्चैत्र्या नवपदसमाराधनायाः सुसिद्ध्यै' ॥ ९५ ॥

चातुर्मासं भविकहितकृच्चापि तत्रैव कृत्वा,

श्रीसङ्घस्यानुनयसहितप्रार्थना'न्मोहमय्याः' ।

धर्मोद्भासं विहृतिममलां कुर्वतां भक्तवृन्द-

स्थाने स्थाने मुदितमनसा स्वागतं सुष्ठु चक्रे ॥ ९६ ॥

---

१ श्रीसिद्धचक्रगणधरमदिरमित्यर्थः । २ श्रीजैनधर्मप्रभावकसमाजाख्यसंस्थास्थापनसूचकोऽयं पदसमूहः ।

शामं शामं चिरसमयजां सद्दिदृक्षा पिपासां,
व्याख्यानैः स्वैरपि च जनता अभ्यषिञ्चन् प्रकामम् ।
सम्प्राप्ता 'श्रीसुरतनगरं' यत्र चाभूतपूर्वं,
भव्यं भव्ये कृतमतितमां स्वागतं भासमानम् ॥ ९७ ॥

अर्धक्रोशादपि[1] चलसमारोह आसीद् दवीयान्,
यस्मिन् केतुप्रवर[2]लसितप्राग्रहस्ताश्च केचित् ।
सुप्रेष्ठा[3]स्संवरगुणमिता[(५७)] बेण्डवाघीयसङ्घाः (!)
वादं वादं शुभततघनानद्धवाद्यान् विरेजुः ॥ ९८ ॥

लक्षाधिक्या नगरजनता राजमार्गेऽभिसूरि,
शीर्षाण्युच्चैर्गुणरतिभरान्नम्रयन्ती बभूव ।
मार्गे मार्गे वसन-कुसुम-स्वर्ण-रुप्यादिपात्रैः,
श्चालं द्वाराण्यति विरचितान्यार्थ सद्भक्तिभावैः ॥ ९९ ॥

गिन्नीमुक्ताप्रभृतिसमुहर्घैश्च रत्नैर्गहूंली,
बद्धवजातश्शुचिगुणलसद् रागदाढ्यीद् यतीशे ।
स्वर्णैः रौप्यैर्वरसुम[4]भरैस्सत्यमुक्ता[5]सुलाजैः
प्रोद्यद्रङ्गं विविधसुमहैस्सत्कृतं'स्सूरतीयैः' ॥ १०० ॥

साम्बेलानां[(७)]भयशर[(५)]मितानां मुदापादिदीप्ति,
स्सूरेर्नानासुगुणमहिमाख्यायकास्साधुवादाः[6] ।
रीत्या चैवं प्रचुरनिरावर्णितुश्चाप्यक्या,
ग्रन्थाज्ज्ञेया प्रविशनकथा 'सागरस्वागता'-ख्यात् ॥ १०१ ॥

वक्खारीयाकुलजसुजनैः क्षत्रियैः मीलपै[7]र्वै,
पक्वान्हि विंशतिमियसहस्राधिकं रार्च्ययित्वा ।
सूरे पादार्पणमुदितया कारयित्वा सुभक्त्या,
पायं पायं जिनमतसुधां सूरिवक्त्राज्जहर्षुः ॥ १०२ ॥

---

१ स्वागतयात्रा (सामैयु) २ झंडा-निशानधारिण । ३ उत्तमा. । ४ श्रेष्ठकुसुमसमूहैः । ५ सत्यमुक्ताफलानां वर्धापनैरितिभावः ।
६ व्यवहारे हि एतच्छन्दार्थ. "साइन बॉर्डो" इतिपदेन कथ्यते। ७ अन्यालयपतिरिति ।

सत्रा सङ्घेन च विधियुता [1]चैत्ययात्रा सुरम्या-

ऽकार्यास्ते यद् समविवरणं मुद्रितं [2]पुस्तके वै।

सोत्साहं विंशतिमणमितान् मोदकान् संवितीर्य,

धन्या जाता 'सुरत'-जनता देशनादर्शनाभ्याम् ॥ १०३ ॥

चातुर्मासं तदनु विहितं '[3]मोह्मय्यां' प्रशस्तं,

यस्मिन् [4]धर्मोन्नतिततिकृतीः कारयित्वा सुबह्व्यः।

भूयोऽप्येतास्सुरतनगरं श्रावकाभ्यर्थनात-

स्तत्राभूवन् रुचिरचरमाः वृष्टिवासाश्च पञ्च ॥ १०४ ॥

२ ० ० २

द्वया-काशाभ्राक्षिमितशरदो [5]माधवे मासि शुक्ले,

ह्येकादश्यां शुभशनिदिने [6]श्रावकेभ्यः सुशास्ता।

संस्थाऽस्थापि प्रयतमनसा ताम्रपत्रागमानां,

भव्यादर्शस्थितिकरमहन्मन्दिरस्थापनायै ॥ १०५ ॥

[7]वर्षे चाग्रेऽ[8]हमदवरपूःश्रेष्ठिनो [9]माकुनाम्न

हस्ताभ्यामागमवरगृहस्यादिमं खातकर्म।

संस्कार्यारं तदनु च शिलारोपणं [10]वाडीलाले-

त्याख्यश्रेष्ठिप्रवरकरत कारितं मोदपूर्वम् ॥ १०६ ॥

३ ० ८ २

वर्षे रुद्रा-क्ष-ख-ख-मिथुने ह्याश्विने शुक्लपक्षे,

[11]आशातिथ्यां सुजिनप्रतिमा पालिताणात इद्धा।

[12]सद्विंशत्युत्तरशतमिता आगमागारहेतो-

रानाय्याकारि च सुविधिना तत्र भव्यप्रवेश ॥ १०७ ॥

४ ० ० २

'तुर्योद्र्धे-द्वयभ्र-नयन-मिते ह्यायने माघशुक्ले,

शुक्रे श्रेष्ठे [13]क्षणतिथियुते सन्मुहूर्त्ते समासाम्।

सन्मूर्त्तीनामपरिगणितोत्साहयुक्तैर्जनौघै-

रम्ये तस्मिन् श्रुतवरगृहे कारिता सुप्रतिष्ठा ॥ १०८ ॥

---

१ चैत्यपरिपाटीत्यर्थ । २ 'सूर्यपुरनु स्वागत' इत्याह इति शेष । ३ मुबाईनगरे । ४ धर्मस्योन्नतिविस्तार-कारिकार्याणीत्यर्थ । ५ वैशाखे इत्यर्थ । ६ श्रावकद्वारेत्यर्थ । ७ २००३ वर्षे इत्यर्थ । ८ अमदावादनगरवासिन इत्यर्थ । ९ माकुभाईत्यभिधया प्रसिद्धस्य माणेकलाल-मनसुखलालाख्यश्रेष्ठिन इत्यर्थ । १० मुंबापुरीयख्यातव्यापारि श्रीवाडीलाल चत्रभुजाह्वश्रेष्ठिकरत इत्यर्थ । ११ दशमीदिने। १२ १२० सख्याका । १३ क्षणशब्दस्य कालवाचित्वमत्र ज्ञेयं, कालस्य च भूतवर्तमानभाविरूपेण त्रैविध्यस्य विदितत्वात् तृतीयायामित्यर्थो वोध्य ।

संवत्सर्यास्तिथिवरसमाराधनायाः प्रसङ्गे-
ऽस्मिन्नेवाब्दे समुदितविसंवादनिर्यासकार्ये।
नैकैर्वर्षैः प्रचलितविधेर्ये श्रुतप्रोक्ततां वै,
संसाध्यान्यानपि जिनपथ. पोपणोत्कान् प्रचक्रु ॥ १०९ ॥

काले गच्छत्यविरतमितो ह्यग्रिमे पौपमासे,
कृष्णे पक्षे [1]शरतिथिगतेऽचिन्तितो वायुरोगः।
वृद्धिं यातो वहुतरचिकित्साविधि[2] सुयत्नात्,
सज्जा जातास्समुपचरिता किन्तु शान्तो,न जात ॥ ११० ॥

सैवाऽपूर्वा स्थितिरथ तदाऽऽसीन्नचाल्पाप्यशान्ति-
श्चेतोऽप्राक्षीज्जिनपतिपदेऽभूदपूर्वोऽनुरागः।
स्थित्यां तस्यामपि नवनवश्लोकनिर्माणकार्यं,
ज्ञानध्यानादिकमपि मनाङ् नावरुद्धं कदाचित्॥ १११ ॥

६ ० ० २ २
षड्-खा-काश द्वि-मितपरवाणौ पुनर्वायुवेगो
वारंवारं प्रवलरभसा पीडयामास देहम्।
मध्ये यस्य स्थितिपरवशाच्छ्रीनमस्कारमन्त्र-
स्यायातोऽभूदहह! सनतं श्रावणस्य प्रसङ्गः॥ ११२ ॥

आदे स्वभ्यस्तमथ च तथा देहास्थत्यादि सम्यग्
दार्ढ्यं येनेतरजनगणासह्यरोगेऽपि शान्त्या।
ये स्तम्भाद्याश्रयविरहिताश्चारु पद्मासनेन,
स्वेष्टस्मृत्यामथ निजमनो योजयामासुरारात्॥ ११३ ॥

दृष्ट्वाऽऽश्चर्यं भृशमुपगता डॉक्टरा अप्यवोचन्,
धन्या एते यदिह विषमस्थेऽपि रोगे सुशान्ता।
अन्यः कश्चिद् यदि गदहतोऽस्यां स्थितौ स्यात्तदा तु,
स्वान्तर्भीत. स खलु सहसान्यां दशामेव यायात्॥ ११४ ॥

---

१ पचमीतिथौ। २ अयशब्द सवत्सरापरपर्याय इति हैमलिंगानुशासने।

एवं रुग्णां स्थितिमथ निजां वीक्ष्य विज्ञाय चास्या-

ऽनित्यत्वं वै सपदि वपुषो माधवे[1] शुक्लषष्ठ्याम्।

सर्वानाहूय च निजशरीरं ततो व्युत्सृजन्तो-

ऽस्मार्षुर्भक्त्या जिनपतिवरान् ह्यर्धपद्मासनस्था ॥ ११५ ॥

एकादश्यां निशि कविदिनेऽप्येकवारं त्वतीव-

वेगादाक्रान्तिरभवदहा! येन सर्वेऽप्यचेष्टा।

सन्त्यक्ताशाः जिनवरवच श्रावयामासुराशु,

सत्पुण्यानामतिबलतया किन्त्वितं[2] दुर्दिनं तत्॥ ११६ ॥

[3]वैशाखस्यासितदलगते पञ्चमेऽह्न्यस्तकाले,

सूर्यस्याभूत् त्रिदशनिलये श्रीगुरूणां प्रयाणम्।

हन्ताकस्माद् सुरतजनताऽचिन्त्यदम्भोलिपाताद्,

भीता व्यग्रा प्रकृतिविधुरा कृत्यशून्या बभूव॥ ११७ ॥

सङ्घेनोच्चैस्तरशिखरिता चारु दोला ह्यकारि,

प्रासादस्यानुकरणकरी सत्कलाभिश्च युक्ता।

[4]विद्युत्पत्रैरधिगतसमाचारवन्तश्च भक्ता

ग्रामाद्ग्रामादरमुपगता[5] अन्त्ययात्रार्थमाशु॥ ११८ ॥

दोलोत्थानाय च कृतसहस्रादिमुद्रापणा वै,

भक्ताः स्वीयं मनुजजननं सार्थकीचक्रुरेव।

अन्ये प्रादुर्द्रविणनिचयं वह्निसंस्कारकार्ये,

भव्या यात्रा निखिलनगरे भ्रामिता भक्तिभावै.॥ ११९ ॥

पश्चाद्गोपीपुरपरिसरे स्वागमौकः[6]समीप,

संस्थित्यां चापरिमितजनानां गुरूणां सुभव्यम।

नानाकाष्ठैर्मलयगिरिजैर्दाहसंस्कारकृत्यं,

नाभूत् पूर्वं न च परमितो भावि तादृग् बभूव॥ १२० ॥

---

१ वैशाख मासे। २ किंतु इत = गतम् इति पदच्छेदोऽत्र बोध्य। ३ गूर्जरदेशीयपद्धत्येद ज्ञेय, पूर्णिमान्तमास (शास्त्रीय) पद्धत्या तु ज्येष्ठस्येति बोध्यम्। ४ तार-टेलिग्रामाख्याधुनिकशीघ्रसन्देशावहपत्रैरित्यर्थ। ५ अरम्=शीघ्रम्। ६ सुदरागममन्दिरपार्श्वे।

शिष्या पादोत्तरशतमिताः[१२५] अष्टत्रिंशत्[३८] सुसंस्थाः,
ज्ञानागारा मुनिमितमता[१२] सन्ति यत्कीर्त्तिदीपाः।
यैश्चाकारि श्रुतहितकरीर्वाचनाः सप्त[७] यासु,
ग्रन्था लक्षद्वयधिकगणितश्लोकमात्रा[१] ह्यवाचि॥ १२१ ॥

सप्तत्रिंशत्सुरपनयनाङ्काधिकाना[२] नवीन-
श्लोकानां ते भुवि रचयितारः कथ स्युर्न नम्या ।
ऊनाशीत्युत्तरगतशत[१७९]ग्रन्थसम्पादकास्ते,
धन्याः पञ्चाशदधिक[५०]शुभग्रन्थसङ्ग्राहकाश्च॥ १२२ ॥

व्याख्यानानामपि कतिपये ग्रन्थवर्याः प्रसिद्धाः,
येषां सन्ति प्रथितविभवा भूमिका[३] प्राथमिक्यः।
द्व्यनाशीति[७८]प्रमितरुचिरग्रन्थरत्नेषु येषां,
मार्गं लोकान् जनिहितकरं बोधयन्त्यो लसन्ति॥ १२३ ॥

आदित्याङ्का[१२] सुनतमुपधानव्रताः कारिता यैः,
शोधं शोधं सकलसुजिनोक्तागमानां सुपाठान्।
सच्छ्लोकानामुपकृतिहित मञ्जु मुद्रापयित्वा,
नैकान् योग्यानभ्यसकृतिनोऽधीतयेऽयूयुजॅश्च॥ १२४ ॥

एवं नानाव्रतजपतपोध्यानदीक्षाप्रतिष्ठा-
यात्रास्नात्रादिकबहुविधोद्यापनैश्चोपधानैः ।
भव्यान् जीवान् जिनपगदिते रम्यमार्गे नियुज्य,
त्यक्त्वा देहं सुरपतिगृहं संययु सूरिवर्या॥ १२५ ॥

---

१ २२३३४२ श्लोकप्रमाणग्रन्था वाचनासु वाचिता । २ सप्तत्रिंशत्सहस्रमितानामित्यर्थः। ३ प्रस्तावना इत्यर्थ ।

येषां कीर्ति विमलविमलामश्मताम्रागमाना-
मागारस्था दिशि दिशि दिशन्त्य पताका नितान्तम्
[1] यावच्चन्द्रारुणकिरणवन्तौ दिवि द्योतमानौ,
गायं गायं तदवधि मुदा रञ्जयिष्यन्ति लोकम्॥ १२६ ॥

॥ अन्त्यमंगलम् ॥

(शिखरिणी)

कृतं यैर्लोकानामुपकृतिहितं वाचनिकया,
श्रुतानामभ्यासस्त्रुटिविरहितः सम्प्रचलितः।
सुपूज्यॉस्तान् 'श्रीसागर'इति शुभाख्याप्रथितकान्,
नमामः सूरीन्द्रान् श्रुतवरसमुद्धारनिरतान्॥ १२७ ॥

चित्र-हार-बन्ध *

(शार्दूलविक्रीडितम्)

शश्वच्छान्तिमयान् महामतिमतः कल्यङ्कारान्[2] कर्मठान्[3],
भव्यापत्तिभरापहान् जलजवज्जन्तुभ्य आनन्ददान्।
दान्तान् नौमितमां विभावितविधीन् व्याख्यानसव्यासनान्[4],
प्रौढान् सत्यसखान् सदा नतधियाऽऽनन्दाब्धिसूरीश्वरान्॥ १२८ ॥

(स्रग्धराछन्द)

धन्या मान्या वदान्या गुणिगणगणनास्वग्रगण्या महान्तो,
विद्वद्ग गरिष्ठाः जिनपतिचरणेन्दीवरेन्दिन्दिराश्च[5]।
वादीन्द्रा देशकेन्द्रा अविकलनिगमज्ञाततत्त्वा[6] मह्ष्ठिा[7].
'आचार्यानन्दवर्या' प्रथितगुणगणा 'सागरान्ता' जयन्ति॥ १२९ ॥

॥ आगमपर्यालोचनप्राण आगमोपजीवी च श्रमण
श्रामण्यसारमवाप्नोति लभते च निर्वृतिम्॥

॥ जीयासुरागमोद्धारकाः सद्गुरवः ।

१ यावच्चन्द्रार्काविवित्यर्थ । २ कल्यशब्दो हि कल्याणापरपर्यायभद्रवाचकस्तत भद्रङ्करानित्यर्थोऽत्र ज्ञेय. । ३ क्रियाकुशलान्। ४ व्याख्यानलब्धप्रतिष्ठानित्यर्थ । ५ तीर्थकृच्चरणकमलभ्रमरा इत्यर्थ. । ६ शास्त्रापरपर्यायोऽयम्। ७ पूज्या ।

* अय हि श्लोक आधुनिकभूषणपरिभाषया नेकलेसेत्याख्य स्वर्णमयरत्नहाररूपेण संयोजितोऽस्ति-उ तत्प्रतिकृतिरप्यस्मिन्नेव ग्रथे मुद्रिताऽस्त्यन्यत्र ।

॥ ॐ अर्हम् ॥

णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

शेठ देवचन्द्रलालभाइ-जैन-पुस्तकोद्धार-ग्रन्थाङ्के-१०१

आगमोद्धारक-आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरिसङ्कलितः-

अल्पपरिचितसैद्धांतिकशब्दकोषः

अकारः

अकः-लाञ्छनम् । जीवा० पृष्ठ २७० । अङ्क, उत्सङ्गः । ओघ० १४३ । रत्नविशेष । जं० प्र० २३ ।

अंककरेलुगं-शाकविशेष । आचा० ३४८ ।

अंकणं-अङ्कनं, तप्ताय शलाकादिना चिह्नकरणम् । प्रश्न० २२ । लाञ्छनम् श्वशृगालचरणादिभिः । आव० ५८८ ।

अंकधाती-अङ्कधातृ, धात्रीदोषे । नि० चू० द्वि० ९३आ ।

(अकपतिता)-दासी । उत्त० २६२ ।

अंकमुहसंठिया-अङ्कमुखसंस्थिता, पद्मासनोपविष्टोत्सङ्गमुखवत् अर्धवलयाकार । सूर्य० ७१ ।

अकलिवी-लिपिविशेष । प्रज्ञा० ५६ ।

अकवडेंसए-ईशानकल्पपूर्वदिगावतंसक । भग० २०३ ।

अकविद्या-(अकविज्जा) गणितम् । जं० प्र० १३६ ।

अकहरो-अङ्कधर, चन्द्रमा । जीवा० २७० ।

अकावइ-अङ्कावती, वक्षस्कारपर्वतः । जं० प्र० ३५७ ।

अकावई-अङ्कावती, रम्यविजये राजधानी नाम । जं० प्र० ३५२ । शीतोदादक्षिणकूले वक्षस्कार । ठाणा० ८० । दक्षिणवर्ती वक्षस्कार । ठाणा० ३२६ ।

अकावईओ-महाविदेहे विजयराजधानी । ठाणा० ८० ।

अकावडिंसए-अङ्कावतंसक, ईशानस्य पूर्वस्यामवतंसक । जीवा० ३९१ ।

अंकितो-अङ्कित, चिह्नित । आव० ८२२ ।

(अंकिल्ल)-नर्तक । औप० ३ ।

(अंकुडिओ)-अङ्कुटिक, नागदत्तक, । जं० प्र० ५० । जीवा० २०५ ।

अंकुर-अङ्कुर, प्रवाल । जं० प्र० ३० ।

अंकुर-अङ्कुर, शाल्यादिबीजसूचि । भग० ३०६ । जं० प्र० १६८ ।

अंकुल्ल-अङ्कोठ । वृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१ ।

अंकुसं-महाशुक्रे विमानविशेष । सम० ३२ । अंकुशं, येन रजोहरणमङ्कुशवत्करद्वयेन गृहीत्वा वन्दते तत् । कृतिकर्मणि षष्ठदोषः । आव० ५४३ ।

अंकुस-अङ्कुश, सृणि । प्रश्न० २२ ।

अंकुसपलंबं-महाशुक्रे विमानविशेषः । सम० ३२ ।

अंकुसयं-अङ्कुशकम्, तरुपल्लवग्रहणार्थमंकुशाकृति । भग० ११३ ।

अंकुसये-अङ्कुशका, देवार्चनार्थवृक्षपल्लवाकर्षणार्थम् । औप० ९५ ।

अंकुसो-अङ्कुशः । अङ्कुशाकारो मुक्तादामावलम्बनाश्रयभूत । जीवा० २१० ।

अंके-अङ्ककाण्डं खरकाण्डे चतुर्दशं काण्डम् । जीवा० ८९ । अङ्क, । प्रज्ञा० २७ । उत्सङ्गे । जं० प्र० ३८ । मणिभेद. उत्त० ६८९ । श्वेतरत्नविशेष । प्रज्ञा० ३६१ । रत्नविशेषः । जीवा० २३ ।

अंकेल्लण-अकेलण, तर्जनकविशेष. । जं० प्र० २३५ ।

अंको-अङ्क, पृथिवीभेद । आचा० २९ । रत्नविशेष । भग० ४७९ । एकोरुमैथुनं । नि० चू० प्र० २५५आ । रूढिगम्य, शंखजातिविशेष । प्रश्न० ३७ । रत्नविशेष । जीवा० १८०, १९१ । पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूप आसनबन्ध । सूर्य० ७१ । जं० प्र० ४५४ ।

अंकोल-गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अंकोल्ल–वृक्षविशेष । भग० ८०३ ।
अंकोल्लाणं–गुल्मविशेष । भग० ८०३ ।
अंगं–अङ्गम्, अङ्गविषयम् । आव० ६६० । कारणमवयव. । ठाणा० ३ । कारणम् । प्रश्न० १०३ । शरीरावयवप्रमाण-स्पन्दितादिविकारफलोद्भावकं शास्त्रम् । सम० ४९ । समग्रं वपु । जीवा० २७० । कारणम् । जं० प्र० ९९ । अज्यते व्यक्तीक्रियतेऽस्मिन्नित्यङ्गम् । आचा० ५ । भेद कारणं वा । दश० ९० । शिर-प्रभृति । दश० २३७ । आगं–अक्षिबाहुस्फुरणादिकम् । सूत्र० ३१८ । शिर स्फुरणादि । ठाणा० ४२७ ।
अंग–अङ्गानि । शिक्षादीनि षडङ्गानि । भग० ११४ ।
अंगओ–अङ्गकः, भद्रप्रकृतिक । आव० ७०४ ।
अंगचूलिया–अगचूलिका, अगानामुपासकदशाप्रभृतीनां पंचाना चूलिका–निरयावलिका । व्य० द्वि० ४५४आ ।
अंगणं–मंडवथाणं । नि० चू० प्र० १९२अ । अजिरम् । प्रश्न० १३८ । अङ्गग–षट्स्थंडिलभूमिस्थानम् । ओघ० २०० ।
अंगणेत्रिका–हस्तमालक आभरणविशेष. । औप० ५५ ।
अंगदं–वाहुशीर्षाभरणविशेष । जीवा० १६२ । केयूरम् । जं० प्र० १०६ ।
अंगदे–केयूरे । ठाणा० ४२१ । अङ्गनिका । उत्त० ७८ ।
अंगनाम–शिरउर पृष्ठवाहूदरपादनामानि । तत्त्वा० ८ ।
अंगपडिहारिणि–अन्त पुरप्रतिहारिणी । आव० ७०० ।
अंगपविट्ठे–गणधरकृतं मातृकापदत्रयप्रभवं वा ध्रुवश्रुत वा । ठाणा० ४९ । अङ्गप्रविष्टम् । ठाणा० २०० ।
अंगप्रविष्टं–गणधरदब्धमाचारादि । तत्त्वा० १–२४ ।
अंगवाहिरे–अङ्गबाह्यम्, स्थविरकृतं मातृकापदत्रयव्यतिरिक्त-व्याकरणनिबद्धमध्रुवश्रुतं वा उत्तराध्ययनादि । ठाणा० ५१ ।
अंगमंगं–अङ्गमङ्गम्, गात्रम् । औप० ११ ।
अंगमंगो–अङ्गमङ्गम्, अङ्गप्रत्यङ्गम् । जीवा० २७७ ।
अंगमंदिरंमि–चंपाचैत्याभिधानम् । भग० ६७५ ।
अंगमद्दियाओ–अंगस्वल्पमर्दनकारिका । भग० ५४८ ।
अंगयं–अङ्गदं, वाह्याभरणविशेष. । जीवा० २५३ । प्रश्न० ७१ । वाहुशीर्षाभरणविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ८८ ।
अंगय–अङ्गके, मूर्द्धादौ । जं० प्र० १८९ । अङ्गदम्, वाह्या-भरणविशेष । भग० १३२ ।
अंगरिसी–अङ्गर्षि, आर्जवोदाहरणे भद्रक कौशिकार्यज्ये-ष्ठशिष्य । आव० ७०४ । येनोपशमे सत्यवाप्त सामायिकम् । आव० ३४७ ।
अंगलोअं–अङ्गलोकं, म्लेच्छजातीयजनाश्रयस्थानम् । जं० प्र० २२० ।
अंगवंसो–अङ्गवंश, अङ्गराजसन्तानस्य सम्वन्धिन· सप्त-सप्ततिराजान प्रव्रजिता । सम० ८५ ।
अंगविगारं–अङ्गविकार, शिर स्फुरणादिस्तच्छुभाशुभसूचकं शास्त्रमपि । उ० ४१७ ।
अंगविज्जं–अङ्गविद्याम्, शिर प्रभृत्यंगस्फुरणत शुभाशुभ-सूचिका विद्याम् । उत्त० २९५ ।
अंगविज्जा–अङ्गविद्या, अङ्ग–पाद विद्या–प्रासादपातनात्मिका (सत्कारपुरस्कारपरिषहे दृष्टांतपदम्) । उत्त० १२५ ।
अंगहारिका–नृत्यकलाद्वितीयभेद· । सम० ८४ ।
अंगा–अगा, जनपदविशेष· । प्रज्ञा० ५५ ।
अंगाइं–अगानि, शिर.प्रभृतीनि । प्रज्ञा० ४६९ । एकादशांगानि प्रज्ञा० ५६ । अवयवा· । ठाणा० १७० । शिर.प्रभृतीनि, । उत्त० ४२८ ।
अंगाणं–देशविशेष । भग० ६८० ।
अंगादाणं–मेढ्रम् । नि० चू० प्र० ११६अ ।
अंगादानं–मेहनम् । नि० चू० द्वि० ३०आ ।
अंगारः–(इंगाल), विगतज्वालोऽग्नि, । भग० १२२ । विगतधूमज्वालो दह्यमानेन्धनात्मक । उत्त० ६९४ । कृष्णवर्णवस्तु । आचा० २९ ।
अंगारओ–अगारकः, महाग्रह । जीवा० ३३६, ३३७ ।
अंगारकारिका–(इंगालकारिया), अग्निशकटिका । भग० ६९७ ।
अंगारदोषः–(इंगालदोस), आहाररागाद्गार्द्ध्याद्धु ज्ञानस्य चारित्रांगारत्वापादनाद् । आचा० ३५१ ।
अंगारमर्द्दकः–(अगारमद्दय) द्रव्यप्रव्रजित । दश० ११५ । उत्त० ५६६ । विशे० १०६४ ।
अंगारय–अगारक, मंगल । औप० ५२ ।
अंगारवई–अगारवती, सवेगोदाहरणे शिशुमारपुरपति-धुन्धुमारदुहिता श्राविका । आव० ७०९ ।
अंगारवई प०–अगारवती प्र० । आव० ६७ ।
अंगारशकटिका–(इंगालकारिया) । आचा० ३०९ ।
अंगारा–(इंगाल), लघुतराग्निकणा । ठाणा० ४२० ।

अंगारियं–अंगारकित, विवर्णीभूतम् । आचा० ३४९ ।
अंगिरसा–गौतमगोत्रोत्तरभेद । ठाणा० ३९० ।
अंगुट्ठं–अगुष्ठम् । आव० ८४५ ।
अंगुट्ठपसिणा–विद्याविशेष· । नि० चू० प्र० १७७अ ।
अंगुट्ठिं–स्नानम् । नि० चू० प्र० १९१आ ।
अंगुट्ठी–अगुष्ठी, शिरोऽवगुण्ठनम् । आव० ९५ ।
अंगुलपुहुत्तिया–अगुलपृथक्त्वम् । जीवा० ३९ ।
अंगुलभावो–अगुलभाव, शुभाशुभपदार्थ । विशे० ८७६ ।
अंगुलिं–अगुलि, करशाखा । आचा० ३८ ।
अंगुलिको–चर्ममयोपकरणम् । नि० चू० प्र० १३७अ । नखभंगादिरक्खट्ठा । नि० चू० द्वि० १८अ । अगुलिकोश, शृङ्गमयो दारुमयो वंशमयो वा येनाङ्गुलिसलमेन तन्त्री आहन्यते स । जीवा० १९५ । अगुलिकोशक, शृङ्गदारु-दन्तादिमय· । जं० प्र० ४० ।
अंगुलिज्जं–अंगुलीयकम्, अंगुल्याभरणविशेष. । औप० ५५ ।
अंगुलिज्जग–अंगुलीयकम्, मुद्रिका । जं० प्र० १०६ ।
अंगुलिज्जयं–अंगुलीयकम् । आव० १७० ।
अंगुलिधणुहओ–अंगुलधनु । आव० ४८४ ।
अंगुलिभमुहा–कार्योत्सर्गदोष । आव० ७९८ ।
अंगुलिसत्थयं–शस्त्रकोशविशेष । नि० चू० द्वि० १८अ ।
अंगुलीयगं–अगुलीयकं, भूषणविधिविशेष· । जीवा० २६९ ।
अंगुले–प्रमाणभेद ।भग० २७५। अंगुष्ठ–प्रश्नभेद । ठाणा० ३०१ । अंगुष्ठप्रश्न, शुभाशुभसूचक प्रश्न. ।उत्त० ४४६ ।
अंगोवंगाइं–अंगोपांगानि । प्रज्ञा० ४६९ ।
अंगोहलिं–अंगरुक्षणम्, देशस्नानम् । आव० ४१७ । व्य० द्वि० ४०५अ ।
अंचइ–अञ्चति, उत्पाटयति । जं० प्र० ४२१ । जीवा० २५५ ।
अंचिअं–अञ्चित, नृत्यविशेष । जं० प्र० ४१२ ।
अंचिअंचियं–उत्पतनिपतां पार्श्वत करोति । ठाणा० ५२२ ।
अंचिओ–अञ्चित, व्याप्त । आव० १६७ । अञ्चितनामा पञ्चविंशतितमो नाट्यविधि· । जीवा० २४७ ।
अंचितरिभितं–अञ्चितरिभितनामा सप्तविंशतितमो नाट्य-विधि । जीवा० २४७ ।
अंचितांचि–गमागम । भग० ६८३ ।
अञ्चिते–सकृद्गते । भग० ६८३ ।
अञ्चियं–दुर्भिक्ष· । नि० चू० प्र० १४८आ । दात्रसधी । नि० चू० प्र० १८३आ । नाट्यभेद । नि० चू० तृ० १अ । अञ्चितं, नाट्यम् । जं० प्र० ४१७ । आव० ३९९ ।
अंचेइ–आकुञ्चयति । औप० २५ ।
अंछंति–आकर्षन्ति । विशे० ३८३ । आव० ४८ ।
अंछणं–पण्हपसिरणं । नि० चू० प्र० १९१आ । अगुल्या लिप्तस्य रंगितस्य । ओघ० १४४ । आकर्षणं–समारणम् । ओघ० १४४ ।
अंछमाणाणं–आकर्षताम् । आव० ४८ ।
अंछवियंछियं–आकर्षविकर्षम् । आव० ८३२ ।
अंछिऊण–आकृष्य । आव० ४२७ ।
अंछित्ता–अपहृियतां माया । व्य० द्वि० ८४आ ।
अंछिय–आकृष्यते, प्रक्षाल्यते । बृ० प्र० ८१अ ।
अंछियनयना–आकृष्टनेत्रा· । प्रश्न० २१ । (जिब्भिन्दियं-छिय) आञ्छितम्-आकृष्टम् (आकृष्टजिह्वेन्द्रिया)। प्रश्न० ६० ।
अंछिया–आकृष्टा । आव० २२७ ।
अंजणं–आणतकल्पे विमानविशेष· । सम० ३५ । सौवीरा-ञ्जनादि । बृ० द्वि० ९२अ । सोवीरयं रसंजणं वा । नि० चू० प्र० ३१८आ । अञ्जनम्, सौवीरादि । आव० ५३० ।
अंजण–अञ्जनं, तद्याय शलाकया नेत्रयो म्रक्षणम् वा देहस्य क्षारतैलादिना । सम० १२६ । अञ्जनं, सौवीराञ्जनादि । प्रज्ञा० २७ । सौवीराञ्जनम् । जं० प्र० ६० । अञ्जना, अञ्जनरत्नमयत्वात् । ज० प्र० १६३ ।
अंजणई–वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।
अंजणए–अञ्जनक, वनस्पतिविशेष । औप० १० ।
अंजणकेसिया–अञ्जनकेशिका, वनस्पतिविशेष. । जं० प्र० ३३ ।
अंजणकेसियाकुसुमं–अञ्जनकेसिकाकुसुमम्, वनस्पति-विशेषपुष्पम् । प्रज्ञा० ३६१ ।
अंजणगं–अञ्जनक, पर्वतविशेषः । आव० ८२७ ।
अंजणगपव्वय–अञ्जनकपर्वत । आव० ३८९ । सम० ९० ।
अंजणगा–अञ्जनका, नन्दीश्वरचक्रवालमध्यवर्त्तिन· पर्वता । प्रज्ञा० ९६ । ठाणा० ४८० ।
अंजणगिरि–अञ्जनगिरि । जं० प्र० १९६ ।
अंजणपव्वय–अञ्जनपर्वत, नन्दीश्वरद्वीपे पर्वतविशेष । जीवा० ३५८ ।

अंजणपुलए-अञ्जनपुलककाण्डम्, एकादशं, अञ्जनपुलाकाना विशिष्टो भूभाग.। जीवा० ८९।

अंजणप्पभा-अञ्जनप्रभा, पुष्करिणीनाम। जं० प्र० ३६०।

अंजणमओ-अञ्जनमय', अञ्जनरत्नात्मक। जीवा० ३५८।

अंजणसमुग्गयं-अजनसमुद्गकम्। जीवा० २३४।

(अंजणसिज्झ)-अजनसिद्ध'। दश० १२८।

अंजणा-पर्वतविशेष। ठाणा० ८०। अजना, पुष्करिणीनाम। जं० प्र० ३३५। जं० प्र० ३६०।

अंजणागिरि-अजनागिरि, दिग्हस्तिकूटनाम। जं० प्र० ३६०।

अंजणिं-अंजनिका, कज्जलाधारभूता नलिका। सूत्र० ११७।

अंजणे-प्रभंजनेंद्रलोकपालः। ठाणा० १९८। सीतादक्षिणवर्ती तृतीयवक्षस्कार.। ठाणा० ३२६। अजन., वेलम्बाभिधानवायुकुमारराजस्य लोकपाल', वरुणस्य पुत्रस्थानीयो देव.। भग० १९८। सद्वप्रलापीमते कृष्णपुद्गलविशेषा'। सूर्य० २८७। अजनकाण्ड दशमं, अञ्जनानां विशिष्टो भूभाग.। जीवा० ८९। कर्मजीवमालिन्ये हेतुत्वात्। जं० प्र० १४८। अञ्जनो वक्षस्कार'। जं० प्र० ३५२। सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा। प्रज्ञा० ३६१। रसाञ्जनादि। दश० १७०।

अंजणेइ-अञ्जनं, सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा। जं० प्र० ३२। अञ्जनं, कृष्णरत्नविशेष। ठाणा० २३२। अञ्जनं सौवीराञ्जनादि। जीवा० २३। कज्जलम्। उत्त० ६५२। समीरकम् उत्त० ६८९। रजोभेद। आचा० ३४२।

अंजणगपव्वय-अंजनकपर्वत। सम० ९०।

अंजलिं-अञ्जलि', हस्तन्यासविशेष। सूर्य० ६। भग० १४। अञ्जलिं, मुकुलितकमलाकारकरद्वयरूपम्। जं० प्र० १८७।

अंजली-अञ्जलि, हत्थुस्सेहो। द० चू० १२९। नि० चू० प्र० ७अ। अञ्जलि, द्वयोर्हस्तयोरन्योऽन्यान्तरितागुलिकयो' सम्पुटरूपतया यदेकत्रमीलनं सा। जीवा० २४३। सयुतहस्तमुद्राविशेष। जं० प्र० १७। प्रसृतिद्वयम्। नि० चू० द्वि० १२०आ।

अंजु-ऋजु, ऋजो-संयमस्यानुष्ठानात्। आचा० २०३। मायाप्रपञ्चरहितत्वादवक्र। सूत्र० १७७।

अंजुया-शान्तिजिनप्रवर्तिनीनाम। सम० १५२। अंजुका, शक्रदेवेन्द्रस्याग्रमहिषी। जीवा० ३६५।

अंजुल-वनस्पतिविशेष। भग० ८०२।

अंजू-प्रगुणोऽव्यभिचारी। सूत्र० ५१। अंजू, व्यक्तम्, प्रगुणेन न्यायेन खरसप्रवृत्त्या वा। सूत्र० २९६। अंजु, व्यक्त, निर्दोषत्वात्प्रकट, (ऋजुर्वा) वक्रैकान्तपरित्यागादकुटिल। सूत्र० २९३। अंजू, सार्थवाहसुता। विपा० ३५। अञ्जु, धनदेवसार्थवाहसुता। विपा० ८८। शक्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० १५९। भग० ५०५।

अंजूए-शक्राग्रमहिषीराजधानी। ठाणा० २३१।

अंड-अण्डम्, काष्ठनिश्रितो जीवविशेष'। आचा० ५५।

अंडए-अण्डज., हंसादि. ममायमित्युल्लेखेन वा प्रतिबन्ध., अण्डजं-पट्टसूत्रजम्। ठाणा० ४६५। हंसादि मयूराण्डकादिः वा अण्डज, पक्षी कोशिकारकीटाण्डकप्रभवं वस्त्रं वा। औप० ३६।

अंडओ-अण्डक, जन्तुयोनिविशेष। प्रश्न० ३३।

अंडग-अण्डकम्, आहार। भग० ३९२। मुख। व्य० द्वि० ३३३आ। अण्डजा', अण्डाज्जाता'। ठाणा० ११४।

अंडय-अण्डज, हंसादि.। भग० ३०३। अण्डजा, पक्षिगृहकोकिलादय'। दश० १४१।

अंडसुहुम-अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिकाकीटिकागृहकोलिंकाब्राह्मणीकृकलासाद्यण्डम्। दश० २३०। अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिकाकीटिकागृहकोकिलाब्राह्मणीकृकलास्याद्यण्डकमिति। ठाणा० ४३०।

अंडु-अण्ड, अन्दुकं काष्ठमयं लोहमयं वा हस्तयो' पादयोर्वा। औप० ८७।

अंडे-विपाकश्रुताद्यश्रुतस्कंधतृतीयाध्ययनम्। ठाणा० ५०७। ज्ञाताया तृतीयाध्ययनम्। आव० ६५३। सम० ३६। अण्डम्, षष्ठांगे तृतीयं ज्ञातम्। उत्त० ६१४।

अन्तःकरणम्-मनः। आव० ५८५।

अन्तःशल्यः-(अतोसल्ल), अन्त-मध्ये मनसीत्यर्थ, शल्यमिव शल्यमपराधपद यस्य सो अन्त शल्यो-लज्जाभिमानादिभिरनालोचितातिचार। सम० ३४।

अंतं-अन्त शब्दो मध्यवचन। विशे० १९७। परिजीर्णम्, । बृ० द्वि० १७५आ। वस्त्रस्य दशान्तम्। बृ० द्वि० २३५अ। अन्त्यम्, अन्ते भवम्, जघन्यधान्यम्। औप० ४०। अन्त्रम्-पुरीतत्। प्रश्न० ८। कुल्मापादिकम्। बृ० प्र० २२०आ।

(अंतचरे)-आन्तम्-अन्ते भवं-आन्तम्-भुक्तावशेषं वल्लादि (तच्चरति)। ठाणा० २९८।

अन्तयोः–अचलयो.। भग० ४७७। भूभाग. ।भग०१२२। अवसानम्। पज्ञा० ३९७। भूमिभाग । भग० ३२३। ठाणा० १३९। समीपम्। जं० प्र० ४५५। वल्लचणकादि। प्रश्न० १०६। समीप । ठाणा० ११७। अधिकरणप्रधान-मव्ययम्। उत्त० २६१। (अतचरे)–आन्तम्, अन्ते भवं आन्तम्, भुक्तावशेषवल्लादि (तच्चरति)। ठाणा० २९८।

अंतंतं–पर्युषितं वल्लचणकादि। ओघ० १८८।

अंत–अन्त, निश्चय । भग० २९०। परिच्छेद.। ठाणा० १७४।

अंतओ–अन्तक, विषतृष्णाया पर्यन्तवर्ती। सूत्र० २५९। अन्तकम्, पर्यन्तम्। उत्त० ६२८।

अतकडे–अन्तकृत्। भग० १११। अन्तो भवस्य कृतो येन सः अन्तकृत·। ठाणा० ३६।

अंतकम्मं–अन्तकर्म, अञ्चलकर्म वा न लक्षणम्। औप० ५५। अन्तकर्म्माणि, अञ्चलयोर्वा न लक्षणानि। ज० प्र० २७५। अन्तकर्म, अञ्चलयोर्वा न लक्षणम्। जीवा० २५३।

अतकम्मा–अन्तकर्मा, प्रान्त । औप० ११।

अंतकरे–अन्तकर, भवच्छेदकर । भग० २१९।

अंतकरो–अन्तकर, प्रशस्तभावकरविशेषः, कर्मण· समारस्य वा अतकर। आव० ४९९।

अंतकिरिआ–अन्तक्रिया, निर्वाणलक्षणा। आव० १३५।

अंतकिरिय–अन्त्य(न्त)क्रिया, अन्त्या च सा पर्यन्त-वर्तिनी क्रिया चान्त्यक्रिया। अन्त्यस्य वा कर्मान्तस्य क्रिया अन्तक्रिया। कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणा मोक्षप्राप्तिम्। भग० ४९।

अंतकिरिया–अन्तक्रिया, अन्त.–कर्मणामवमानं तस्य क्रिया–करणम्, कर्म्मान्तकरणं मोक्ष इति। प्रज्ञा० ३९६। निर्वाणम्। भग० ९१। प्रज्ञापनाया विंशतितम पदम्। प्रज्ञा० ६। मोक्ष । सम० ११८। भवस्यान्तकरणम्। ठाणा० १८०।

अंतकुलाणि–अन्तकुलानि–वरुटछिम्पकादीनाम्। ठाणा० ४२०।

अंतक्खरिया–लिपिविशेष । प्रज्ञा० ५६।

अंतगडदसा–अन्तकृद्दशा, अन्तो–भवान्त कृतो विहितो यैस्तेऽन्तकृता·, तद्वक्तव्यताप्रतिवद्धा दशा –दशायध्यनरूपा ग्रन्थपद्धतय इति। अन्त० १।

अंतगडो–अन्तकृत्, ज्ञानावरणीयादिकर्म्मान्तकृत्। आव० १६३। तेनैव भवेनेति। आव०, ११७। अन्तकृता.– तीर्थकरादय·। सम० १२१।

अंतगतावधिः–(अतगतावही)–आत्मान्तगत, शरीरान्त-गत, अवधिक्षेत्रान्तगत (पुर पृष्टपार्श्वेषु)। प्रज्ञा० ५३७।

अतगो–अन्तक·, विनाशकारी, आत्मनि वा गच्छतीति; आन्तर आतमगो वा। सूत्र० १७८। अन्तग, अन्तं गच्छतीति, दुष्परित्यज्य। सूत्र० १७८।

अंतचारी–अन्तचारी, पार्श्वचारीति। ठाणा० ३४२।

अतदीवगं–सव्वेहिं अभिसवज्झात अमज्जमसासी भवेज्जा। दश० चू० १६३।

अंतदीपकम्–प्रागुक्तेष्वपि समन्वय । विशे० ३३०।

अंतद्धाणं–अदृश्य.। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अतद्धाणपिंडो–अप्पाणं अतरहितं करेत्ता जो पिंडं गेण्हति सो अतद्धाणपिंडो भण्णति। नि० चू० द्वि० १०२ अ।

अंतरं–उववासो। नि० चू० प्र० १७४ आ। अन्तर प्राप्ति । विशे० २४७। मज्झं। नि० चू० तृ० १४० अ। समुद्रमध्यम्। उत्त० ७००। उत्तरम्। आव० ४४२। विशेष । उत्त० २१७। अवसर । आचा० १०७। अवकाश.। प्रज्ञा० ६९। मध्य.। जीवा० ४६। शैलान्तरम्–कन्दरान्तरम्, वनान्तरम् वा आश्रयरूप। प्रज्ञा० ६९। अन्तरालम्। आव० ३३। विशेषो रूपनिर्म्माणादिभि । ठाणा० २०३। पूर्वत्यागापरवस्त्रादानकाले–प्रतिमाविशेष । नि० चू० द्वि० १६३ आ। पार्श्वरूपम्। जं० प्र० ३८७। व्यवधानम्। जीवा० १२२। अन्तरायम्। ओघ० १७६। उपवास। आव० २०३। राजगमनस्यान्तरम्। विपा० ५३। अवसर । विपा० ७३। अपान्त-रालम्। सूर्य० ४९। अवसर·। प्रश्न० ४२। ग्रामादीनामर्धपथ । प्रश्न० ५२। पृष्ठोदरयोरन्तरालं पार्श्वे इति। जीवा० २७७। विचालं। व्य० प्र० १२८ अ।

अंतरंजिया–अन्तरञ्जिका, नगरी यत्र त्रैराशिकदृष्टिरुत्पन्ना, बलश्रीराजधानी। उत्त० १६८। पुरी यत्र त्रैराशिकनिह्नवस्य दृष्टिरुत्पन्ना। आव० ३१८। नगरी। विशे० ९८१।

अंतरंत–अतरतो नाम असहा मूधा। व्य० द्वि० १० आ।

अंतरंतगो–गिलाणो। नि० चू० प्र० १९८ अ।

अंतर–वस्त्रैषणाभेद । आचा० २७७। अन्तरशब्दो मध्यवाची । प्रज्ञा० ५०। अन्तरे, पृष्ठोदरयोरन्तराले, पार्श्वे। जं० प्र० ११७। अतराणि–पार्श्वदेशः । प्रश्न० ८३ ।

अंतरकंदे–अन्तरकन्द । जलजवनस्पतिविशेषकन्द । प्रज्ञा० ३७ ।

अंतरकरणं–औपशमिककाल । प्रज्ञा० ३८७।

अंतरगए–अन्तरगत, संस्पर्शी। सूर्य० ७९ ।

अंतरगामम्मि–अपान्तराल एव यो ग्रामस्तस्मिन्। ओघ० ७७ ।

अंतरगिरिपरिरिओ–अन्तर्गिरिपरिरय, गिरेरन्त. परिक्षेप । जीवा० ३४३ ।

अंतरजातम्–भावभाषाजातः तृतीयो भेद । अन्तरे भाषाद्रव्यमिश्रणं। आचा० ३८५।

अंतरतेणो–गामदेसंतरेसु हरंतो। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अंतरदीव–अन्तरद्वीप । भग० ४२५।

अंतरदीवगा–अन्तरद्वीपगा, अन्तरे लवणसमुद्रस्य मध्ये द्वीपा अन्तरद्वीपा, तद्गता अन्तरद्वीपगा । प्रज्ञा० ५०।

अंतरदीवगो–अन्तरद्वीपः, लवणसमुद्रमध्ये अन्तरेऽन्तरे द्वीप । जीवा० १४४ ।

अंतरदीविगा–आन्तरद्वीपजा । ठाणा ११५ ।

अंतरद्धा–अन्तर्द्धानम्, भ्रंश। आव० ८२७।

अंतरद्धाए–अन्तरकालेऽर्धसलिखिते देहे । आचा० २९१।

अन्तरद्वीपजा:–अन्तरम्, इह समुद्रमध्यं तस्मिन् द्वीपास्तेषु। उत्त० ७०० । अन्तरद्वीपजा, सम० १३५। अन्तरद्वीपा, अन्तरम्। इह समुद्रमध्यं तस्मिन् द्वीपा । उत्त० ७०० ।

अंतरपल्ली–अन्तरपल्लिकाऋषभग्रामयोरन्तरालम्। बृ० प्र० ३०५।

अंतरपल्ली–बहि सन्निवेश. । नि० चू० प्र० ३३६अ । मूलग्रामादर्धतृतीयगव्यूतान्तर्गतो ग्रामः। बृ० तृ० १२१ आ। तस्माद्ग्रामात्परतो योऽन्य आसन्नग्राम । ओघ० १०४।

अंतरभासिल्ल–अन्तरभाषिल्ल, अन्तरभाषावान्, गुरुवचनापान्तराल एव स्वाभिमतभाषक । उत्त० ५५२।

अंतरभासा–अन्तरभाषा, आचार्यस्य भाषमाणस्यान्ते यद्भाषते सा। आव० ७९२।

अंतरवीहिअं–अन्तरवीथी, अवान्तरमार्ग । ज० प्र० १८८।

अंतरा–अगृहीतवीप्सा । जीव० १९९ ।

अंतराइयदोसो–अन्तरायिकदोष, अन्तर्भवो दोष. । आव० ८३८ ।

अंतराए–अन्तराय., शक्त्यभाव । सूत्र० १८४। अन्तरायिक (मध्यभव)। आचा० ३४० ।

अंतराणि–उत्कर्षापकर्षात्मकविशेषरूपाणि निवासभूतानि वा गिरिकन्दरविवरादीनि । उत्त० ७०१।

अंतरापहे–अन्तरापन्था, अन्तरालमार्ग । भग० ११६।

अंतरायं–अन्तराय, असज्झायस्वाध्यायादिभि । आव० ५८० ।

अंतरालं–अन्तरालं, अन्तरम् । उत्त० ३८१ । आव० ३३ ।

अंतरावणं–अन्तरापण । उत्त० २२२ । आवणान्तरम् । उत्त० २०९ । राजमार्गमध्यभागवर्तिहट्टम्। विपा० ५८।

अंतरावासं–वृष्टेरवसर, वर्षाकालश्च । भग० ६६ ।

अंतरिए–लघ्वन्तररूपा । जं० प्र० ४९ ।

अंतरिओ–अन्तरित, । आव० ४२९ ।

अंतरिका–अन्तरस्य–विच्छेदस्य करणमन्तरिका। जं० प्र० १५० ।

अंतरिक्खं–अन्तरिक्षं, आकाशप्रभवंग्रहयुद्धभेदादिभावफलनिवेदकशास्त्रम् । सम० ४९ ।

अंतरिक्खो–मेहो । दश० चू० ११४।

अंतरिच्छा–अन्तरेच्छा, अन्तरा–मध्ये इच्छा–अभिमतवस्त्वभिलाष । उत्त० ४७४।

अंतरिज्जं–अतरिज्जं णाम पाउरणं अथवा जं सिज्जाए हेट्ठिल्लापात्त। नि० चू० द्वि० १६३ आ ।

अंतरिया–अन्तरिका । सूर्य० १४१ । लघ्वन्तररूपा । जीवा० २०४ । विच्छेदकरणम् । भग० २२० ।

अंतरीयं–परिधानं । बृ० प्र० ९८ अ ।

अंतरुच्छुअं–इक्षुपर्वमध्यम् । आचा० ३५४।

अन्तरे–पथि। ओघ० ६६ । मध्ये परस्परविभाग । ठाणा० २२७। अन्तरे, अन्तराले। उत्त० ३८१ । अन्तरे, अवसर । भग० ३८१।

अंतरो–अन्तर., अवसर । आव० ४२१ ।

अंतरोदगाणं–अन्तरोदकानाम्, जलान्तर्वर्तिसन्निवेशविशेषाणाम्। जं० प्र० २७७।

अंतर्मुहूर्त्तम्–मुहूर्तस्यान्तरं, मुहूर्त्तमपि न्यूनम्। उत्त० ६९७। भिन्नमुहूर्त्तम्। जीवा० १३०।

अंतर्हित–(अतद्धिओ) अदृश्य। ठाणा० ५१३।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्षं, ग्रहभेदादिविषयम्। आव० ६६०।

अंतलिक्ख–अन्तरिक्षम्, नभः। दशं० २२३। अमोघादिकम्। सूत्र० ३१८।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्षम्–गंधर्वनगरादि। ठाणा० ४२७।

अंतवाले–अन्तपाल, अन्तं–त्वदादेश्यदेशसम्बन्धिनं पालयति–रक्षयति उपद्रवादिभ्य इति। जं० प्र० २०३।

अंतसो–अन्तश, निरवशेषतः। सूत्र० १७१।

अंताः–अवयवा। उत्त० ४५९। उत्त० ५८५।

अंता–अते ठिता, ण अता अणंता। नि० चू० प्र० २५५ आ।

अंताक्षरिका–(अतक्खरिया) क्रीडाविशेष। उत्त० ४७।

अंतिए–अन्तिके, समीपे। भग० ९०। उत्त० २७७।

अंतिमधन्नं–अतिमे–अकस्थाने परिमाणं। व्य० प्र० ७६।

अंतिमराइयंसि–रात्रेरवसाने। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

अंतिमसरीर–अन्तिमशरीरम्, चरमशरीरम्। भग० २१९।

अंतियं–समीपम्। भग० ६५९। अत्यन्तमरणं, मरणस्य तृतीयो भेद। उत्त० २३०। आन्तिकं, मामीप्यम्। आव० २६७।

अंतिय–अन्तिकम्, आसन्नम्। भग० २१७। अत्यन्तमरणम्। उत्त० २३०।

अंतिया–आन्तिकी समीपाभ्युपगता। उपा० १५।

अंते–अन्त, पर्यन्त, अतिदूरं वा। सूत्र० २०४। अन्ते, अग्रे। उत्त० ६०१। परिसमाप्ति। बृ० द्वि० १९९ आ।

अंतेउरे–(आत पुरिकी), आतुरस्य नाम गृहीत्वा आत्मनोऽगं प्रमार्जयति–आतुरश्च प्रगुणो जायते। व्य० द्वि० १३३ आ।

अंतेण–मार्गेण। नि० चू० प्र० ६ आ।

अतेणं–आन्त्रेण। ठाणा० ५०२।

अंतेवासि–भर्तृज्जुका। नि० चू० प्र० २५० अ।

अंतेवासी–शिष्य। जं० प्र० १५। भग० ११।

अंतेहि–अरसतया सर्वधान्यान्तवर्तिभिर्वल्लचणकादिभि। भग० ४८४। रागद्वेषौ। आचा० १५८। आचा० १६६।

अंतो–अन्तो, विभाग। भग० ३९३। विभागं। ठाणा० ३८०। अन्त, परिच्छेद। प्रज्ञा० ५३२। मार्गः। आव० ४०२। अन्तः निवेशनस्य। आव० ७४५। अन्तो, रोग, भङ्गः, विनाश। विशे० १३०७। अन्त, मध्यभागे। जीवा० २०१। मार्ग। आव० ६८६। विभाग। जं० प्र० ४५९। भिन्नम्। आव० ५८४। मार्ग। आव० ४८५। आव० १८९। मध्ये। प्रज्ञा० ४७। इन्द्रियाननुकूल आश्रय। प्रश्न० १३८। मध्यकरणम्। आव० ५८३। चतुर्दशभेदान्तरग्रन्थ। उत्त० २६१।

अंतोजलगयपव्वय–जलान्तर्गतपर्वत। उत्त० २६४।

अंतोधूमं–अभ्यन्तरधूमम्। आव० ६६२।

अंतोनायं–अन्तोनादं, हृदये सदुःखमारसन्। आव० ६६१।

अंतोनियंसणी–निर्ग्रंथ्युपकरणविशेषः। ओघ० २०९।

अंतोमुहुत्त–अन्तर्मुहूर्त्तम्, भिन्नमुहूर्तम्। भग० २९। उत्त० ६९७।

अतोवणीते–आहरणतद्दोषविशेष। ठाणा० २५३।

अंतोवाहिणी–अन्तर्वाहिनी नदी। जं० प्र० ३५७। ठाणा ८०।

अंतोवेइया–प्रतिलेखनादोष। नि० चू० प्र० १८२ अ।

अंतोसंबुक्कावट्टा–गोयरपिंडेसणाए कमेणं तिं, तत्थ गोयरातिमे अभिग्गहविसेसतो जाणियव्वा। नि० चू० तृ० १२ अ।

अंतोसल्लं–अन्तःशल्यमरणम्। मरणस्य षष्ठो भेद। उत्त० २३०।

अंतोसल्लमरणे–अन्तःशल्यमरणम्, अन्तःशल्यस्य द्रव्यतोऽनुद्धृततोमरादे, भावत सातिचारस्य यन्मरणं तत्। भग० १२०। सम० ३३।

अंतोहिंतो–गृहादेर्मध्याद्बहिर्नयन्त। ठाणा० ३५३।

अंत्यः–आनुपूर्व्यन्त्यपक्त्यका। सूत्र० १०। विशेषम्। ठाणा० ३९१।

अंदुकम्–हस्तिबन्धनविशेष। उत्त० ४११।

अंदेरे–गुच्छाविशेष। प्रज्ञा० ३२।

अंदोलगा–पक्ष्यन्दोलकाश्च तत्र यत्रागत्य २ मनुष्या आत्मावमन्दोलयन्ति। जं० प्र० ४४।

अंदोलगो–आन्दोलक यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमन्दोलयति सः। जीवा० २००।

अंध–अन्ध, अज्ञान। भग० ३१२।

अंधकण्टकीयम्–अतर्कितसम्भवो न्यायविशेष। आचा० १८।

अंधकारे–अन्धकारम्, तमोरूपम्। भग० २७०।

अंधकारेति–तमस्कायनाम। ठाणा० २१७।

अंधगवण्हिणो–अह्निपा–वृक्षास्तेषा वह्नयस्तदाश्रयत्वेनेत्यं-ह्निपवह्नयो बादरतेजस्कायिका। भग० ७४६।

अंधगवण्ही–अन्धकवृष्णि, द्वारवत्यां राजा यादवविशेष। अन्त० २। दश० ९७।

अंधतमसं–अन्धतमसम्। आव० ३६६।

अंधपुरं–नगरविशेष। बृ० तृ० १०८ आ०। नि०चू० द्वि० ४२आ।

अंधप्रदीतपलायनम्–(अधपलितपलाणं)। दश० १५८।

अंधमूढि–अविमर्शकारिता। आचा० ६२।

अंधयं–अन्धकम्, नयनयोरादित एवानिष्पत्ते, कुत्सिताङ्गम्। विपा० ३६।

अंधलीभूय–अन्धीभूत। आव० ६८८।

अंधिय–चतुरिन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

अंधिया–चतुरिन्द्रियजीवभेद। उत्त० ६९६। चतुरिन्द्रिय-जन्तुविशेष। जीवा० ३२।

अंधिल्लगो–अन्धिल्लक, जात्यन्ध। प्रश्न० १६२।

अंधीयताम्–अन्धीभवतु। दश० १०६।

अंधो–अन्ध, चिलातदेशनिवासी म्लेच्छविशेष। प्रश्न० १४।

अंधोपल–(अधोवल), अन्धपाषाण। दश० ४०।

अंधोपलादिः–छायारहितपाषाण। विशे० ९१८।

अंध्र–(अध), अध्रादिदेशोद्भवा म्लेच्छप्राया, आर्यभाषामजानाना। व्य० द्वि० २८अ।

अंध्री–(अधी), अन्ध्रदेशीया स्त्री, उत्कृष्टरूपा। आव० ५८१।

अंब–अम्लवचनयोगाद् परुषवचनव्यवहार। व्य० प्र. २५६।

अंब–आम्र। प्रज्ञा० ३१।

अंब–आम्रम्। प्रज्ञा० ३२८। फलविशेष। प्रज्ञा० ३६४। थोवेण ऊणं अबं भण्णति। नि० चू० द्वि० १२४आ।

अंबए–अग्रप्रलंबविशेष। बृ० प्र० १४३आ।

अंबकंजिय–सुगंधिकाञ्जिकम्। ओघ १६०।

अबकुज्जं–पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ आ।

अंबकूणए–आम्रास्थिकम्। भग० ६८१।

अंबकूणगहत्थगए–आम्रफलहस्तगत। भग० ६८४।

अंबक्खलगं–अम्लखलम्। आव० ३५३।

अंबखुज्ज–आम्रकुब्ज, आम्रफलवत् कुब्जो वक्र। भग० ९०। पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ अ। तं०

अंबगपाणगं–पानकविशेष। आचा० ३४७।

अंबगपिंडी–आम्रपिण्डी। आव० ६९७।

अंबचोयए–आम्रत्वक्। भग० ६८१।

अंबचोयगं– ,, आम्रछल्ली। आचा० ४०५।

अंबजुज्झं–पादतलमध्यम्। नि० चू० प्र० १३७ अ।

अंबट्ठ–अम्बष्ठ, ब्राह्मपुरुषेण वैश्यस्त्रियां जातो वर्ण.। आचा० ८।

अंबट्ठो–अम्बष्ठ, ब्राह्मणेन वैश्याया जात। उत्त० १८२।

अंबडे–अम्बड, माहणपरिव्राजकभेद। औप० ९१। (अमड) परिव्राजकविद्याधरश्रमणोपासक। ठाणा० ४५७। अम्बड.। सम० १५४।

अंबडो–अम्बड, अमूढदृष्टित्वोदाहरणे लौकिकऋषि.। दश० १०२। सुलसाश्राविकापरीक्षकपरिव्राजक। व्य० प्र० १८ आ। म्लेच्छविशेष। प्रज्ञा० ५५। अम्बडपरिव्राजक। प्रज्ञा० ६१।

अंबपलंबं–फलविशेष। आचा० ३४८।

अंबपेसी–आम्रफाली। आचा० ४०५।

अंबप्पहारो–प्रहारार्त्त.। उत्त० १९३।

अंबभित्तयं–आम्रार्द्धम्। आचा० ४०५।

अंबय–आम्र। आव० ४१७।

अंबयरुक्खे–अष्टादशजिनचैत्यवृक्ष। सम० १५२।

अम्बरतलम्–(गगनयल)। सूर्य० २६४।

अंबरवत्थं–अम्बरवस्त्र, स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पम्। ज० प्र० ४०६। स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पवसनम्। भग० १७४।

अंबरसे–अम्बा–पूर्वोक्तयुक्त्या जलं तद्रूपो रसो यस्मात् तन्निरुक्तितोऽम्बरसम्। भग० ७७६।

अंबरिस–अम्बरीष, द्वितीय परमाधार्मिक। भग० १९८।

अंबरिसी–नारकान् कल्पनिकाभि खण्डश कल्पयित्वा भ्राष्ट्रपाकयोग्यान् करोति। सम० २८। अम्बर्षि, द्वितीय परमाधार्मिक। सूत्र० १२४। पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु द्वितीय। उत्त० ६१४। नरके द्वितीयः परमाधार्मिक। आव० ६५०। विनयविषये उज्जयिन्यां ब्राह्मण श्रावक। आव० ७०८।

अंवरिसे–अम्बरीष., कोष्टक । जीवा० १२४ । अम्बरीषम्–भ्राष्ट्रम् । प्रश्न० १७ । अम्बरीषा–भ्राष्ट्र आकरणानि । ठाणा० ४१९ ।

अंवले–अम्बराणि । बृ० द्वि० २८३ अ ।

अंवसालवणं–आम्रशालवनं, आमलकल्पानगर्यां वनविशेष. । उत्त० १५९ । चैत्यविशेष । आव० ७०७ । आम्रशालवनम् । आव० ३१४ ।

अंवा–विद्याविशेष । आव० ४११ । जलम् । भग० ७७६ ।

अंवाडगं–अम्बालकम्, फलविशेष । अनुत्त० ६ । अवाटकं–फलविशेषः, अधोगतिमत् । प्रज्ञा० ३२८ ।

अंवाडग–बहुबीजको वृक्ष । भग० ८०३ । अवाडक–बहुबीजविशेष । प्रज्ञा० ३२ । आम्राटक –कापोतलेश्यारसे । प्रज्ञा० ३६४ ।

अवाडगपलंवं–फलविशेष । आचा० ३४८ ।

अवाडगपाणगं–पानकविशेष । आचा० ३४७ ।

अंवाडिओ–तिरस्कृत । बृ० प्र० ३०आ । तिरस्कृत । आव० ९१ । तर्जित । आव० १८७ । उपालब्ध । आव० ३९८ ।

अंवाडिय–निर्भर्त्सित । आव० ३०६ ।

अंवाडिया-तिरस्कृता । आव० २२५ ।

अंवाडेइ–तिरस्कुरते । उत्त० १४७ । उपलभते । आव० २२३ । नि० चू० प्र० २११ आ ।

अंवाण–गंधाम्रे, आम्रा । बृ० प्र० १४३आ ।

अंवारेवई–अम्बारेवती, व्यन्तरीविशेष । आव० ६९१ ।

अंवावल्ली–वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अंवियपहारो–प्रहारार्त्त. । आव० ६६६ ।

अंविया–प्राप्ता गवेषितलब्धा वा । बृ० द्वि० ८२अ ।

अंविलं–अम्लम् । आव० २०० । अम्लम्, तक्रारनालादि । दश० १८० । आचाम्लम्–अवश्यानम् । आचा० ३४६ ।

अंविल–पर्वगवनस्पति । भग० ८०२ । अम्बोऽम्लिकाद्याश्रित । जं० प्र० १७४ । हरितविशेष । प्रज्ञा० ३३ । रव्वा । बृ० प्र० २९अ ।

अंविलजवागू–अम्लयवागू । आव० ९१ ।

अंविला–आम्लिका । ओघ० २१५ ।

अंविलि–आम्लभाजनम्, चिञ्चिणिकापात्री । आव० ६२४ । रव्वा । बृ० प्र० २८आ ।

अंविलिवीयं–अम्लिकाबीजम्, चिञ्चिणिकाबीजम् । आव० ६२४ ।

अंविलोदए–आम्लोदकम्, अतीवस्वभावत एवाम्लपरिणामम् । जीवा० २५ । आम्लोदकम्, स्वभावत एवाम्लपरिणामं काञ्जिकवत् । प्रज्ञा० २८ ।

अंबूखुज्जो–आम्रकुब्जः । आव० ६४८ ।

अंबे–आम्ल । नि० चू० प्र० ३५६ आ । प्रथमपरमाधार्मिक । सम० २८ । अम्ब, नरके प्रथम. परमाधार्मिक. । आव० ६५० । पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु प्रथम । उत्त० ६१४ । अम्ब, प्रथम परमाधार्मिक । सूत्र० १२४ ।

अंबेल्ली– (रव्वा) । आव० ९१ ।

अंबो–आम्रवृक्ष, भावुके दृष्टात । ओघ० २२३ ।

अंमिया–प्राप्ता । नि० चू० द्वि० १० आ ।

अंमेउं–प्राप्तुम् । नि० चू० प्र० २०२ अ ।

अंवाडेति–खरंटेति । नि० चू० प्र० २११ आ ।

अंस–अस्रि, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तर, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरं, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरम् । चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शरीरावयवो वा । भग० ११ । अस्रेषु–कोणेषु । जं० प्र० ११५ । अंश, सत्पर्यायोऽयं शब्द । उत्त० ५८९ ।

असलग–असगत । तं० ।

अंसहरा–अशधरा, अंश–प्रक्रमाज्जीवितव्यभागं धारयन्ति–मृत्युना नीयमानं रक्षन्ति । उत्त० ३८८ । अश – दुःखभागस्त हरन्ति अपनयन्ति ये ते । उत्त० ३८९ ।

असातो–एकस्मात् । ठाणा० २३६ ।

अंसिया–अविभक्तोऽंश । बृ० द्वि० १९९ आ । गामतृतियभागादि । नि० चू० द्वि० ७०आ । अंशिका–यत्र ग्रामस्यार्द्ध, आदिशब्दात् त्रिभागो वा चतुर्भागो वा गत्वा स्थित सा ग्रामस्यांश एव अंशिका । बृ० प्र० १८१ आ ।

असियालए–अस्यालये । दश० ३७ ।

अंसी–अस्रि, चतुर्दिग्विभागोपलक्षित शरीरावयव । जीवा० ४२ । प्रज्ञा० ४१२ । (अर्शांसि) रोगविशेष. । नि० चू० प्र० १८९ अ ।

अंसुए–श्लक्ष्णपट्ट । बृ० द्वि० २०१ आ ।
अंसुयं–वस्त्रम् । नि० चू० प्र० २५४ आ । दुकूल–विशेषरूपम् । जीवा० २६९ ।
अंसुय–श्लक्ष्णपट्ट । ठाणा० ३३८ ।
अंसुयाणि–अंशुकानि, वस्त्राणि । आचा० ३९३ ।
अंसो–अंश, भेद । विशे० २५१ । अस्रिः, चतुर्दिग्विभागोपलक्षितः । सूर्य० ४ । अस्रि, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तर १, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम् २, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरम् ३, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरं ४ । सूर्य० ४ । अंश–भेद । प्रज्ञा० ६०१ । अंश–भाग । उत्त० १८८ । भाग । आचा० १७७ ।
अइं–अमुना । बृ० द्वि० २१३ अ ।
अइंताणं–अतियता–आगच्छता । व्य० द्वि० ३६६ आ ।
अइंति–प्रविशन्ति । ओघ० ६७ । आगच्छन्ति । प्रश्न० १२० ।
अइंतु–प्रविशन्तु । ओघ० ७९ ।
अइंते–प्रविशति । बृ० द्वि० ६०अ ।
अइंतो–आगच्छन् । आव० २६५ ।
अइ–अयि, आमन्त्रणे । उत्त० ३५४ ।
अइअच्च–अतिगत्य, अत्येत्यातिक्रम्य । आचा० २४१ । अविगणय्य । आचा० ३०३ ।
अइआरो–अतिचार, पापम् । आव० ७७८ । अतिक्रम । आव० ५७५ । स्खलना । ओघ० ३८ ।
अइकाए–अतिकाय, दक्षिणनिकाये सप्तमो व्यन्तरेन्द्र । भग० १५८ ।
अइकाय–अतिकाय, महोरगेन्द्र । जीवा० १७४ ।
अइकुंडियं–अतिबाधितम् । आव० ५७४ ।
अइकोहग्गहघत्थं–अतिक्रोधग्रहग्रस्तम्, अतीवोत्कटरोषग्रहाभिभूतम् । आव० ५८८ ।
अइक्कंतं–अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणात् । आव० ८४० ।
अइक्कंत–अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणादतिक्रान्तम् । भग० २९६ ।
अइक्कंता–अतिक्रान्ता, जाता । उत्त० २१५ । अतीता । आचा० १७८ ।
अइक्कंतो–अतिक्रान्त, पर्यन्तवर्ती । प्रज्ञा० ९१ ।
अइक्कमओ–अतिक्रम, अनानुपूर्वी भवनम् । विशे० १७४ ।
अइक्कमे–अतिक्रामेत्, प्रविशेत् । उत्त० ६० ।
अइक्कमो–अतिक्रम, आधाकर्मनिमन्त्रणे प्रतिश्रृण्वति साधुक्रियोल्लङ्घनरूपः दोषविशेष, यावदुपयोगकरणम् । आव० ५७६ । अतिलङ्घनम् । आव० ८२३ । पीडात्मको महाव्रतातिक्रमो वा मनोऽवष्टब्धतया परतिरस्कारं वा । सूत्र० १७३ ।
अइगच्छिहिति–अतिगमिष्यति । आव० ३६९ ।
अइगतो–पविट्ठो । नि० चू० तृ० १३ आ । अतिगत । आव० ३४९ ।
अइगमणं–अतिगमनम्, अतिगमनकथा, राज्ञ आगमनसम्बन्धी विचार, राजकथाया द्वितीयभेद । आव० ५८१ । उत्तरायणम् । भग० १४७ ।
अइगया–अतिगता । ओघ० १५८ ।
अइगुविलगव्वरा–अतिगुपिलगह्वरा । आव० ३८४ ।
अइचारो–अतिचार, स्खलना । ओघ० ३८ । मिथ्यात्वमोहनीयकर्मोदयादात्मनोऽशुभ परिणामविशेष । आव० ८१३ । अतिचरणानि–चारित्रविराधनाविशेषा । विशे० ५५० ।
अइच्चिराविओ–अतिचिरायित । आव० ५१२ ।
अइच्छ–अतीच्छा, अदाने सत्यतिगच्छेति वचनम् । आव० ४७८ ।
अइच्छओ–अतिक्रामन्, भिन्दान । बृ० प्र० १७ आ ।
अइण्णं–आकीर्णम्, सव्वलोगो आयरइ । नि० चू० प्र० २७४ अ ।
अइणा–गोरमिगादिणो । नि० चू० प्र० २५५ अ ।
अइनिद्धं–अतिस्निग्धम्, हवि प्रचुरम् । आव० ५६८ ।
अइपंडुकंबलसिला–अतिपाण्डुकम्बलशिला । आव० १२४ ।
अइपडागा–अतिपताका, एका पताकामतिक्रम्य या पताका सा । औप० ५ । पताकोपरिवर्तिनी । भग० ४७६ ।
अइ(णु)परियट्टित्ता–अति(नु)परिवर्त्त्य, सामस्त्येन परिभ्राम्य । प्रज्ञा० ६०० ।
अइपहाए–अतिप्रभाते । आव० ६४१ ।
अइप्पयं–अतिप्रभाते । ओघ० ९८ ।
अइवले–आगामिन्या पञ्चमो हरि । सम० १५४ । अतिवल–भरतसताने तृतीय । ठाणा० ४३० ।

अइभद्दा–अतिभद्रा, प्रभासमाता। आव० २५५।

अइभारे–अतिभार, प्रभूतपूगफलादे: स्कन्धपृष्ठयादिष्वारोपणम्। आव० ८१८।

अइभूमि–अतिभूमि, गृहस्थैरनुज्ञाता यत्रान्ये भिक्षाचरा न यान्ति। दश० १६८।

अइमत्तं–अतिमात्र, अतिरिक्तम्, अतिक्रान्तमर्यादम्। उत्त० ४२९।

अइमत्ते–अतिमात्रे, बृहत्प्रमाणे। ओघ० १७०।

अइमुत्तग–पुष्पविशेष। नि० चू० प्र० ११८ आ।

अइमुत्तगचंदसंठाणसंठिते–अतिमुक्तकचन्द्रसस्थानसस्थितम्, घ्राणेन्द्रियसस्थानम्। प्रज्ञा० २९३।

अइमुत्तगणा–वल्लीविशेष। प्रज्ञा० ३२।

अइमुत्तय–लताविशेष। प्रज्ञा० ३८२।

अइमुत्ते–अतिमुक्त, महावीरस्वामिन: कुमारश्रमण शिष्य। भग० २१९। अन्तकृद्दशाना षष्ठवर्गस्य पञ्चदशाध्ययनम्। अन्त० १८।

अइयंचिय–अतिक्रम्य। ठाणा० ३००।

अइयारो–अतिचार, गृहीते आधाकर्मणि दोषविशेष:, यावद्वसतिं गत्वेर्यापथप्रतिक्रमणाद्युत्तरकालं लम्बनोत्क्षेप। आव० ५७६। अतिचरणं–चारित्रस्खलनाविशेष। आव० ७८। अपराधम्। उत्त० २३३।

अइर–अचिरा, शान्तिमाता। आव० १६१।

अइरत्त–अतिरात्र, अधिकदिनं, दिनवृद्धि। ठाणा० ३७०।

अइरत्तकंबलसिलाओ–मेरुमस्तकशिला। ठाणा० ८०।

अइरा–अचिरा, शान्तिजिनमाता। आव० १६०। सम० १५२। सम० १५१।

अइरित्तसिज्जआसणिए–अतिरिक्तशय्यासनिक, चतुर्थसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अइरेगो–अतिरेक, अतिशायिता। जीवा० २७४। अतिशय। जीवा० २६७।

अइवत्तियं–पातकादतिपातिका, निर्दोषाम्। आचा० ३०५।

अइवाइज्ज–अतिपातयेत्, व्यथेत। आचा० १२८।

अइवायंमि–अतिपाते। ठाणा० ३२९।

अइवाय–द्वादशशतके प्राणातिपातादिविषय पञ्चमोद्देशक। भग० ५५२। अतिपातः, हिंसादिदोषः। ओघ० ३६। वध:। भग० २८९।

अइवालग–अजापालक, वाचकविशेष। बृ० तृ० २०आ।

अइवेलं–अतिवेलं, स्वाध्यायादिवेलातिक्रमेण। उत्त० ११०। अतिवेला अन्यसमयातिशायिनी मर्यादा समतारूपा। उत्त० ११०।

अइसंधणपरो–अतिसन्धानपर, परवञ्चनाप्रवृत्त:। आव० ५८९।

अइसंपओगो–अतिसम्प्रयोग, गार्ध्यम्। सूत्र० ३२९।

अइसय–अतिशय, आमर्षौषध्यादि:। सम० १२४। अर्थविशेष। बृ० प्र० १९२ आ।

अइसुहुमं–अतिसूक्ष्मम्। आव० ५३६।

अइसेस–अतिशय, अतिशयनं, अवध्यादिप्रत्यक्षं ज्ञानं। ओघ० १४। अतिशयी–अवध्यादिज्ञानयुक्त। दश० १०३। सूत्रार्थसामाचारीवियायोगमन्त्रातिशय। बृ० प्र० २०३ आ।

अइसेसी–अतिशायिनी, स्निग्धमधुरद्रव्याणि। बृ० प्र० २४६ आ।

अइसेसो–अतिशेष, अतिशायी। जीवा० २७७। शेषाणि–मत्यादिचक्षुर्दर्शनादीनि अतिक्रान्तं–सर्वाववोधादिगुणैर्यत्तदतिशेषमतिशयवत्केवलम्। ठाणा० २१३।

अईइ–अतीति, आगच्छति, प्रविशति। आव० २३२।

अईतेआ–अतितेजा –चतुर्दशरात्रिनाम। जं० प्र० ४९१।

अईया–अतीता, अतिक्रान्ता। आचा० १७८।

अईह–अतियासी। आव० १७३।

अउअगाति–अयुतागानि, संख्याविशेष। ठाणा० ८६। सूर्य० ९१। भग० ८८८।

अउआति–अयुतानि, सख्याविशेष। ठाणा० ८६। सूर्य० ९१। भग० ८८८। भग० २९०। भग० २७५।

अउज्झं–अयोध्यम्, अनभिभवनीयम्। जं० प्र० २१२।

अउज्झा–अयोध्यानि, परैर्योद्धुमशक्यानि। प्रज्ञा० ८६।

अउज्झाओ–नगरविशेष। ठाणा० ८०।

अए–अज, बर्कर:। प्रज्ञा० २५२। उत्त० २७५।

अओज्झा–अयोध्या, राजधानी। जं० प्र० ३५७। अजितस्य प्रथमपारणकस्थानम्, आव० १४६।

अओमुहदीवे–अतरद्वीपविशेष । ठाणा० २२६ ।
अओमुहो–अयोमुख., अन्तरद्वीपविशेष. । जीवा० १४४ ।
अकंटए–अकण्टक , कण्टकरहित । जीवा० १८८ ।
अकंठगमणाइं–अकण्ठगमनादि,कण्ठेन भक्तकवलो नोपक्रामति । ओघ० ८० ।
अकंडूयते–अकण्डूयक , न कण्डूयत इति । ठाणा० २९९।
अकंतं–सरोषभणितम् । नि० चू प्र० २७८ अ ।
अकंतत्ता–अकान्तता, अकमनीयता । भग० २३ । असुन्दरता । भग० २५३ । अकान्तता । प्रज्ञा० ५०४ ।
अकंतदुक्खी–अनभिप्रेताशातावेदनीया । आचा० ४३० ।
अकंता–अकान्ता', अकमनीया । भग० ७२ ।
अकंपिए–अकम्पित , अष्टमगणधर । आव० २४० ।
अकक्कसं–अकर्कशम्, सुखम् । भग० ३०५ ।
अकज्जं–अकार्यम्–मैथुनासेवालक्षणम् । व्य० प्र० २०५ आ ।
अकडजोगी–यतनया योगमकृतवान् । व्य० प्र० २५१ ।
अकडसामायारी–सामायारिं जो न करेति सो अकडसामायारी । नि० चू० तृ० ८१अ ।
अकण्णा–अकर्णनामा अन्तरद्वीपा । प्रज्ञा० ५० ।
अकण्णो–अकर्ण , अन्तरद्वीपविशेष । जीवा० १४४ ।
अकति–असङ्ख्याता अनन्ता वा । ठाणा० १०५ ।
अकतिसञ्चिता–असङ्ख्याता, एकैकसमये उत्पन्ना सन्तस्तथैव सञ्चितास्ते । ठाणा० १०५ ।
अकतिसंचया–कतिसंचिता न ये । भग० ७९६ ।
अकन्नदीवे–अकर्णद्वीप , अन्तरद्वीपविशेष । ठाणा० २२६ ।
अकप्प–अकल्प', शिक्षकस्थापनाकल्पादि । दश० १९६ ।
अकप्पए–अकल्पिके, वसतिपालके । व्य० द्वि० १३ अ ।
अकप्पट्ठवणा–अयोग्यानीतपिंडवर्जनम् । नि० चू० प्र० २४२ अ ।
अकप्पणारुमणा–अकल्पनारुग्मनस । मरण० ।
अकप्पे–सामायिकसयम', अस्थितकल्पश्चतुर्यामधर्मो वा । बृ० तृ० १२५ अ ।
अकप्पो–अकल्प , आव० ७७८ । अकृत्यम् । आव० ७६१ ।
अकब्बरसुरत्ताण–मोगलनृप । ज० प्र० ८८ ।
अकम्मंसे–अकर्मांश । आव० ६१५ ।
अकम्मंसो–अकर्मांश , अशाः–कर्मणोऽवयवास्तेऽपगता यस्य स. । उत्त० २५७ ।
अकम्म–आक्रम्य, बलात्कारेण । आव० ६६२ ।
अकम्मगं–अकर्मकं, अविद्यमानदुश्चेष्टितं । सम० ५२ ।
अकम्मभूमगा–अकर्मभूमका , अकर्मा–यथोक्तकर्मविकला भूमिर्येषां ते अकर्मभूमा , ते एव अकर्मभूमका । प्रज्ञा० ५० । सम० १३५ ।
अकम्मभूमी–अकर्मभूमि , हैमवतादिकभोगभूमि' । प्रश्न० ९६ । ठाणा० ११५ ।
अकम्मयं–अकर्मकं, अप्रमादम् । सूत्र० १६९ । उत्त०७०० ।
अकम्मयारो–अकर्मकारी, स्वभूमिकानुचितकर्मकारी । प्रश्न० ३६ ।
अकम्मा–अकर्मा, न विद्यते कर्माऽस्येति, वीर्यान्तरायक्षयजनितं जीवस्य सहजं वीर्यम् । सूत्र० १६८ ।
अकम्हा–अकस्मात् , वाह्यनिमित्तानपेक्षम् । आव० ६४६ । अकस्मात् क्रिया, अकस्माद्यत्करणम् , क्रियायाश्चतुर्थो भेद । आव० ६४८ ।
अकम्हादंडे–अकस्माद्दण्ड. । सम० २५ ।
अकम्हाभयं–अकस्माद्भयम् , वाह्यनिमित्तानपेक्षं गृहादिष्वेवावस्थितस्य रात्र्यादौ यद्भयम् । आव० ६४६ । सम० १३ । ठाणा० ३८९ ।
अकयकरणो–अकृतकरण , अनभ्यस्तत्रिय । आव० ७०३ । अकृतकरण । आव० ३४४ ।
अकयकिरिए–अकृतयोगोद्वहन । नि० चू० प्र० २९२ अ ।
अकयपरलोयसंबलो–अकृतपरलोकशम्बल । आव० ३६७ ।
अकयन्नुया–अकृतज्ञता । आउ० ।
अकयपुण्णे–अकृतपुण्य । उत्त० ३२९ ।
अकयपुण्णो–अकृतपुण्य', अविहिताश्रवनिरोधलक्षणपवित्रानुष्ठाना । प्रज्ञा० ९८ ।
अकयमुहो–अकृताक्षरसस्कारमुख. । बृ० तृ० २५ आ ।
अकयरूवो–वक्कलपिंडठितो । नि० चू० द्वि० ८७ अ ।
अकयागम–अकृतकर्म्मोदय । आव० २७४ ।
अकरंडुअं–अकरण्डुकम् , अनुपलक्ष्यमाणपृष्ठवंशास्थिकम् । औप० १९ ।

अकरंडुयं–अविद्यमानपृष्ठिपार्श्वास्थिकम्। प्रश्न० ८१।
अकरंडुय–अकरण्डुक, अनुपलक्ष्यपृष्ठास्थिक'। प्रश्न०८४।
अकरणं–मैथुनम्। व्य० प्र० २५१ अ।
अकरण–अलेश्यस्य केवलिन कृत्स्नयोर्ज्ञेयदृश्ययोरर्थयोः केवलं ज्ञानं दर्शनं योपयुञ्जानस्य योऽसावपरिस्पन्दोऽप्रतिघो वीर्यविशेष स। ठाणा० १०६। भग० ५७।
अकरणतयैव–अक्रिययैव संयमानुष्ठानमन्तरेण। आचा० १४९।
अकरणयाइ–अकरणेन, अपूर्वानुपार्जनेन। उत्त० ५८७।
अकरणयाए–अव्यापारतया। आचा० ३०५।
अकरणिज्जं–अकृत्यम्, असंयमं मन्दधर्माण.। आव० ५३६।
अकरणिज्जो–अकरणीय। आव० ७७८।
अकरिंतो–अकुर्वन्। आव० ५०९।
अकलिज्जंता–अज्ञायमाना। ओघ० १६०।
अकलुसे–अकलुष, द्वेषवर्जित। अन्त० २२।
अकलेवरसेणि–अकडेवरश्रेणि, कलेवरं–शरीरं अविद्यमानं कडेवरमेषामकडेवरा सिद्धास्तेषां श्रेणिरिव श्रेणि. क्षपकश्रेणिरिति। उत्त० ३४१।
अकल्पम्–(अकप्पं)–असमर्थ। आचा० १०६।
अकविल–अकपिला, श्यामा। जं० प्र० ११५।
अकसिणपवत्तगो–अकृत्स्नप्रवर्तक'। आव० ४९३।
अकसिणा–आचारप्रकल्पस्य अष्टाविंशतितमो भेद। सम० ४७। अकृत्स्ना–यत्र किंचित् क्षोप्यते। व्य० प्र० १२४ आ।
अकसिणो–अकृत्स्न। विशे० ४२४।
अकस्मात्–(आकस्मिक), निर्युक्तिक। आचा० २६६।
अकस्मात्–कस्मादिति हेतुर्न कस्माद् अकस्मात्। आचा० २६७।
अकस्माद्दण्ड–अनभिसन्धिना दण्ड। प्रश्न० १४३।
अकस्माद्भयम्–बाह्यनिमित्तानपेक्षम्। प्रश्न० १४३। बाह्यनिमित्तमन्तरेणाहेतुक भयम्। आव० ४७२।
अकहा–अकथा, मिथ्यात्वमोहनीय कर्म वेदयन् विपाकेन या काञ्चिदज्ञानी कथा कथयति सा। दश० ११५।
अकांडे–अकाले। वृ० प्र० १५५ अ।
अकाऊण–अकृत्वा, अभणित्वा। ओघ० १५५।
अकाम–अकाम, मोक्ष.। उत्त० ४१४। अकाम., उपरोधशीलता। दश० १७७। निरभिप्राय। भग० ३६। निर्जराद्यनभिलाषी। भग० ३६।
अकामकामे–अकामकाम', कामान्–इच्छाकाममदनकामभेदान् कामयते–प्रार्थयते य. स कामकामो न तथा अकामकाम, अकामो–मोक्षस्तत्र सकलाभिलाषनिवृत्तेस्तं कामयते य. स तथा। उत्त० ४१४।
अकामणिज्जराए–अकामनिर्जरया। आव० ६५।
अकामतण्हा–अकामतृष्णा। औप० ८६।
अकामनिकरणं–अकामनिकरणम्, अकामो वेदनानुभावेऽनिच्छाऽमनस्कत्वात् स एव निकरणं–कारणं यत्र तदकामनिकरणं–अज्ञानप्रत्ययं, अनिच्छाप्रत्ययम्। भग० ३१२।
अकामनिर्जरा – पराधीनतयाऽनुरोधाच्चाकुशलनिवृत्तिराहारादिनिरोधश्च। तत्त्वा० ६–२०।
अकाममरणम्–बालमरणाद्यमप्रशस्तम्। उत्त० २४१। अकाममरणं–उत्तराध्ययनेषु पञ्चमाध्ययनम्। उत्त० ९।
अकाममरणिज्जं–उत्तराध्ययनेषु पञ्चमाध्ययनम्। सम० ६४।
अकारए–अकारक, अरोचक। विपा० ४०।
अकारकम्–अपथ्यम्। ओघ० १३९। ओघ० १८३। शीतलम्। ओघ० १७६।
अकारिजणो–अकारिजन। आव० १७६।
अकारिणो–अकारिण आमोषाद्यविधायिन.। उत्त० ३१३।
अकाल–अवर्षा। ठाणा० ३९९।
अकालपडिबोधी–रातो चेव पडिबुज्झंति। नि० चू० तृ० ४३ अ। एषा न कश्चिदपर्यटनकाल.। आचा० ३७७।
अकालपरिभोगी–रातो सव्वादरेण भुजंति। नि० चू० तृ० ४३ अ। एषां न कश्चिदभोजनकाल.। आचा० ३७७।
अकालपरिहीणं–अविलम्बेन। भग० ७३८। निर्विलम्बम्। जं० प्र० ३९७।
अकालसज्झायकारए–अकालस्वाध्यायकारकं। सम० ३७।
अकालसज्झायकारी–अकालस्वाध्यायकारी, य कालिकश्रुतमुद्घाटपौरुष्या पठति, चतुर्दशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५४। अकालस्वाध्यायकरणम्, पञ्चदशमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।
अकालिचरिया–अकालचर्या, रात्रौ पथि गमनम्। व्य० प्र० १९ आ।

अकालियं–आकालिकं, यथास्थित्यायुरुपरमादर्वागेव । उत्त० ६३० ।

अकाले–अकाल , मध्याह्नादि । विपा० ६९ ।

अकाहलं–अमन्मनाक्षरम् । प्रश्न० १२० ।

अकिंचणे–अकिञ्चन, न विद्यते किमप्यस्येत्यकिञ्चन, निष्परिग्रह । आचा० ४०३ । अकिंचनं–निष्परिग्रहत्वम् । उत्त० ५९० ।

अकिच्चं–अकृत्यम्, अकरणीयम्, प्राणवधस्य पञ्चमः पर्याय । प्रश्न० ५ । मेहुणं । नि० चू० प्र० ७९ आ । अनिर्वर्त्तनीयम् । भग० १०४ ।

अकिट्ठे–अकृष्ट, अक्लिष्टो वा, अविलिखित, अवाधितो निर्वेदनमिति वा । भग० १८० ।

अकित्तिम–अकृत्रिम, क्रमाद्रत्नखानिसम्भूतानुप्तसम्भूतैरुपशोभित । जं० प्र० ७० ।

अकित्ती–अवर्णवादभाषणम् । बृ० तृ० ९९ आ ।

अकिरियं–अक्रिया, नास्तिवाद । आव० ७६२ ।

अकिरियवादी–अक्रियावादी, क्रिया–जीवादिपदार्थो नास्तीत्यादिका वदितुं शीलं यस्य स । सूत्र० २०८ ।

अकिरिया–अक्रिया । आव० ३६८ । योगनिरोधः । भग० १४१ । अक्रिया । आव० ४१२ । अवर्ण । आव० ४२९ । आव० ४१२ ।

अकिरिया–दुष्टक्रिया मिथ्यात्वाद्युपहतस्यामोक्षसाधकमनुष्ठानम् । ठाणा० १५३ । योगनिरोध । ठाणा० १५७ । योगनिरोधलक्षणा नास्तिकत्वं वा । सम० ५ । अविद्यमानक्रियं, व्युपरतक्रियाख्यं शुक्लध्यानचतुर्थभेद । उत्त० ५८६ ।

अकिरियाओ–अकप्पपडिसेवणं । नि० चू० तृ० २०अ ।

अकिरियावाइ–क्रियाभाववादिनः, आत्माभाववादिन., चित्तशुद्धिवादिन । भग० ९४४ ।

अकिरियावाती–एकात्मकवाद्यादयोऽष्टौ । ठाणा० ४२५ । नास्तिका. । ठाणा० २६८ ।

अकीयकडं–अक्रीतकृत, न क्रीयते–न क्रयेण साध्वर्थं कृतः । प्रश्न० १०८ ।

अकित्ती–अकीर्त्ति, एकदिग्गामिन्यप्रसिद्धिः । ठाणा० ४१८ । भग० ४९० ।

अकुऊहले–अकुतूहल, कुहकादिष्वकौतुकवान् । उत्त० ६५१ ।

अकुओभय–अकुतोभयः, संयम, अप्कायलोको वा । आचा० ४४ ।

अकुक्कुए–अकुक्कुच, अशिष्टचेष्टारहितः । उत्त० १०९ । अकुत्कुच., कुन्थ्वादिविराधनाभयात्कर्मवन्धहेतुत्वेन कुत्सितं हस्तपादादिभिरस्पन्दमानः । उत्त० १०९ । अकौत्कुच – मुखविकारादिरहित । आचा० ३१५ ।

अकुक्कुयं–अकुक्कुच, अस्पन्दमानम् । उत्त० ५८ ।

अकुक्कुय–कुत्सितं कूजति–पीडितः सन्नाक्रन्दति कुकूजो न तथेत्यकुकूजः । उत्त० ४८६ ।

अकुचो–निश्चल । नि० चू० प्र० १६७ अ ।

अकुट्ठिले–अ हे । दश० चू० १५१ ।

अकुट्टो–(आकुष्ट.) । जारजातोतिवयणेण । नि० । चू० प्र० २९६ अ ।

अकुसल–अकुशल., अनिपुण स्थूलमतिश्चरकादि । दश० ६४ ।

अकुसलो–अप्रधान वन्धाय ससाराय । नि० चू० प्र० २५ आ ।

अकुहए–कुहगं–इंदजालादी त न करेइत्ति वाइत्तादि वा । दश० चू० १४० ।

अकेल्ला–राजस्तोत्रपाठका । नि० चू प्र० २७७ अ ।

अकोवणिज्जो–अकप्पो अदूसणिज्जोत्ति वुत्त भवति । नि० चू० द्वि० १३९ अ ।

अकोसायंतं–विकाशीभवत् । औप० २० ।

अकोहणे–अक्रोधनः,अपराधिन्यनपराधिनि वा न कथञ्चित् कुप्यति । उत्त० ३४५ ।

अकोहे–अक्रोध., स्वल्पक्रोधेण । जं० प्र० १४८ ।

अकंडे–अकाले (आउ०)

अकंता–आक्रान्ता । आव० ५०४ । अवष्टब्धा । आचा० २५७ ।

अकंतितो–अडाडाए वला हरंतो । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

अकंतिया–न कुतोऽपि विभ्यति ये स्तेना । बृ० द्वि० ११८ अ ।

अकंते–अचित्तस्य प्रथमो भेद. । ओघ० १३३ । आक्रान्ते–पादादिना भूतलादौ यो भवति स' । ठाणा० ३३६ ।

अकंतो–आक्रान्तः । आव० २२७ ।

अकंदणं–आक्रन्दनम्, महता शब्देन विरवणम्। आव० ५८७ ।

अक्क–(अर्कतूलम्) । नि० चू० द्वि० ६१ अ ।

अक्कबोंदी–वल्लीविशेषः । प्रज्ञा० ३३ ।

अक्कबोंदीणं–वल्लीविशेष । भग० ८०३ ।

अक्कम–आक्रम, तदुच्छेद इतियावत्। आव० ६० ।

अक्कमणं–आक्रमणम् । विशे० ४८६ । आक्रमणं–पादेन पीडन । आव० ५७३ ।

अक्कमइ–आक्रामति, अवष्टभ्नाति । उत्त० १३४ ।

अक्कमित्ता–हत्वा । भग० ६३७ । आक्रम्य–मिश्रीकृत्य । ओघ० १९५ ।

अक्किट्ठा–अक्लिष्टा, स्वशरीरोत्थक्लेशवर्जिता । जं० प्र० १२६ ।

अकिट्ठो–अक्लिष्ट', स्वशरीरोत्थक्लेशरहित । जीवा० २८४ ।

अक्कोडियाओ–प्रवेशिता । बृ० प्र० ३० आ ।

अक्कोस–आक्रोश, अनिष्टवचनम्, द्वादश परीषह । आव० ६५६ । यकारादिभि । दश० २६७ । दुर्वचनपरीषह. । सम० ४१ ।

अक्कोसेज्ज–आक्रोशेत्, तिरस्कुर्यात् । उत्त० १११ ।

अक्कोसो–आक्रोश, असभ्यभाषणम् । उत्त० ६२ । आक्रोशनं, असभ्यभाषात्मक । उत्त० ८३ । म्रियस्वेत्यादि वचनम् । प्रश्न० १६० ।

अक्खं–अक्षम्, चन्दनकम् । आव० ७६७ । अक्षाटकम् । आव० ३४४ । वराटका । आव० ८८ । आत्मा । ठाणा० ४९ । इन्द्रियम् । प्रज्ञा० ८८ । अश्नीते नवनीतादिकमित्यक्षो–धू । उत्त० २४७ ।

अक्ख–अक्षः, अक्षोपाङ्गदानवच्चेति साधोरुपमानम् । दश० १८ । जीव इन्द्रिय वा । भग० २२२ । सखाणियप्पदोसो अण्णतरं इंदियजाय वा । नि० चू० प्र० २५५-अ । अक्षं–चक्रनाभिक्षेप्यकाष्ठम् । जं० प्र० १७१ ।

अक्खए–अक्षयम्, अविनाशी । भग० ११९ । सदाभावेन, अवयविद्रव्यापेक्षया अक्षतो वा परिपूर्णत्वात् । ठाणा० ३३३ ।

अक्खओदए–अक्षयोदकः, अक्षयसम्यग्ज्ञानोदक' । अक्षतोदय, अक्षत उदय प्रादुर्भावो वा । उत्त० ३५३ ।

अक्षणिक–(अक्खणिए), व्यग्र' । ओघ० १७५ ।

अक्खणिओ–अक्षणिक', निर्व्यापार' । दश० चू० ५८ ।

अक्खति–आख्याति (गणि०) ।

अक्खपडिय–अक्षपतितः, अक्षपातनिका । आव० ४५३ ।

अक्खपाडओ–अक्षपाटक' । जीवा० २५७ । चतुरस्राकार पाटक । जीवा० २२८ ।

अक्खपाद–हेतुसत्यं । नि० चू० तृ० ३० आ ।

अक्खमाते–अक्षमाय–अयुक्तत्वाय । ठाणा० १४९ । अनुचितत्वाय असमर्थत्वाय वा । ठाणा० २९२ । असङ्गतत्वाय अक्षान्त्यै वा । ठाणा० ३५८ ।

अक्खयं–अक्षयम्, साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात् ततो नाशरहित, महावीर' । भग० ७ । विनाशकारणाभावात् । जीवा० २५६ । अक्षया, अवयविद्रव्यस्यापरिहाणे. । जं० प्र० २५७ । अपुनरावृत्तिकं । सम० १२० ।

अनाशं–साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात्, अक्षतं वा परिपूर्णत्वात् । सम० ५ ।

अक्खयणिहि–अक्षयनिधि., देवभाण्डागारम् । विपा० ७७ ।

अक्खयणिही–अक्षयनिधि' । आव० ३६० ।

अक्खया–अक्षया, अक्षयत्वात् । जीवा० ९९ । न विद्यते क्षयो यथोक्तस्वरूपाकारपरिभ्रंशो यस्या' सा । जं० प्र० २७ ।

अक्खयायारचरित्तो–अक्षताचारचारित्री, अक्षताचार एव चारित्रं तद्वान् । आव० ७६३ ।

अक्खरं–अक्षरम्, निरुक्तिविधिनार्थकारलोपादक्षरम्, अथवा क्षीयत इति क्षरं न क्षरमक्षरम्, अन्यान्यवर्णसंयोगेऽनन्तानर्थान् प्रतिपादयति, न च स्वयं क्षीयते येन तेनाक्षरमिति भाव' । विशे० २५५ । अविशुद्धनयाभिप्रायेण सर्वमपि ज्ञानमक्षरम्, तथा सर्वेऽपि भावा अक्षरास्तथापि रूढिवशाद्वर्ण एवेहाक्षरं भण्यते । विशे० २५४ । 'अक्खरं सो य चेयणाभावो' .अक्षरं, क्षर–सञ्चलने, न क्षरति न चलति–अनुपयोगेऽपि न प्रच्यवत इत्यक्षरम् । विशे० २५३ । अक्षरम् । आव० ७९३ ।

अक्खर–अक्षरम्, न क्षरति न विनश्यति । विशे० १११६ । अक्षराणा 'स्तृ' शब्दो–पतापयो' अक्षराणा व्यञ्जनाना स्वरणेन सशब्दनेन स्वरा अकारादय प्रोच्यन्ते,

अथवा अक्षरस्य चैतन्यस्य स्वरणात् सशब्दनात्स्वरा । विशे० २५५ । न क्षरतीत्यक्षरं, तच्च ज्ञानं चेतनेत्यर्थ. । आव० २४ ।

अक्खरडियत्ति–अखरडितम् । ठाणा० ३८६ ।

अक्खरपुट्ठिया–लिपिविशेष । प्रज्ञा० ५६ ।

अक्खरसंन्निवाति–अक्षरसंनिपात, अकारादिसयोगाः । ठाणा० १७९ ।

अक्खरसमं–तत्र दीर्घे अक्षरे दीर्घ स्वरः क्रियते, ह्रस्वे ह्रस्व., प्लुते प्लुत:, सानुनासिके सानुनासिक तदक्षरसमम् । ठाणा० ३९६ ।

अक्खराणि–लिपिज्ञानम् । बृ० द्वि० १६३ अ ।

अक्खवाउ–अक्षपाद. । विशे० ६४९ । विशे० ६४८ ।

अक्खसोय–अक्षश्रोत, चक्रधुरः प्रवेशरन्ध्रम् । भग० ३०९ ।

अक्खा–अक्षा, चंदनका । नि० चू० प्र० १०६ अ । अनुयोगे भङ्गचारणोपकरणम् । बृ० द्वि० २५३ आ । आख्या, शब्दप्रथा । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइं–अक्षाणि, इन्द्रियाणि । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइ–आख्याति प्रथमतो वाच्यमात्रकथनेन । जं० प्र० ५४० ।

अक्खाइउवक्खाइया–आख्यायिकोपाख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाइयं–आख्यातिकम् , नामिकादिपंचसु पदेषु चतुर्थं । आव० ३७९ ।

अक्खाइयाणिस्सिया–आख्यायिकानि स्रता, यत्कथाख-संभाव्याभिधानम् । प्रज्ञा० २५६ ।

अक्खाइया–आख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाओ–आख्यायिका, कथानका । सम० ११९ ।

अक्खाग–म्लेच्छविशेष । प्रज्ञा० ५५ ।

अक्खाडए–अक्खाटकः, मल्लयुद्धस्थानम् । पिंड० १२९ ।

अक्खाडगा–आखाटका, प्रेक्षाकारिजनासनभूता । ठाणा० २३० ।

अक्खाडगे–आखाटक , प्रेक्षास्थाने आसनविशेषलक्षण. । भग० २७१ ।

अक्खाडगो–चतुरस्र । ठाणा० १४५ ।

अक्खाणं–आख्यानं, त्वामिमुख्येन वाऽऽदरेण वा । विशे० १३१८ । समवसरणस्य । आव० २६८ ।

अक्खाणग–आख्यानकम् । नि० चू० द्वि ७१ अ ।

अक्खाणयं–आख्यानकं । नि० चू० प्र० ३४६ आ ।

अक्खातित–आख्यायिकानिश्रितं तत्प्रतिबद्धोऽसत्प्रलापः । ठाणा० ४८९ ।

अक्खायं–आख्यातं, सकलजन्तुभाषाभिव्याप्त्या कथितम् । उत्त० ८० ।

अक्खाय–आख्यातम् , केवलज्ञानेनोपलभ्यावेदितम् । दश० १३६ ।

अक्खायगो–आख्यायक , य शुभाशुभमाख्योति सः । जीवा० २८१ ।

अक्खायपयं–आख्यातपदम्, साध्यक्रियापदम् । प्रश्न० ११७ ।

अक्खासुयं–आख्याश्रुतम्, आख्यानकप्रतिबद्धश्रुतम् । प्रश्न० १०८ ।

अक्खिसंति–आख्यास्यन्ति । नि० चू० प्र० ३५० आ ।

अक्खित्त–आक्षिप्तम्, आवर्जितम् । दश० ११४ ।

अक्खित्तनियंसणा–आक्षिप्तनिवसना,आकृष्टपरिधानवस्त्रा । प्रश्न० ५६ ।

अक्खित्ते–ठिता । नि० चू० प्र० १८६ अ ।

अक्खित्तो–आक्षिप्त । आव० १७५ ।

अक्खिवणं–आक्षेपणम्, चित्तव्यग्रतापादनम् । प्रश्न० ४३ ।

अक्खीण–अक्षीण, अक्षीणायुष्कमप्रासुकम् । संग० ३७२ ।

अक्खीणझंझए–अक्षीणझञ्झ,अक्षीणकलहः । आव०६६१ ।

अक्खीणमहाणसितो–अक्षीणमहानसिकः । उत्त० ३३२ ।

अक्खीणमहाणसियं–अक्षीणमहानसिकम् । आव० २९१ । ठाणा० ३३२

अक्खीणमहाणसी–अक्षीणमहानसी, अत्रुटितभिक्षालब्ध-भोजनवान् । औप० २८ ।

अक्खुडिय–आस्फालित , स्खलित । आव० ५५५ ।

अक्खुंदइ–चक्खिउं मुंचति । नि० चू० द्वि० १२४ अ ।

अक्खुन्नइ–आक्षुणत्ति, विलिखति । बृ० द्वि० ६६ अ ।

अक्खुन्ना–अमर्दिता । बृ० द्वि० ७८ अ ।

अक्खे–अक्ष., शकटावयवविशेषः । भग० २७७ । सम० ९८ । आख्या–प्रसिद्धि । जं० प्र० ६२ ।

अक्खे इ–षणवतिरङ्गुलानि एकोऽक्ष । जं० प्र० ९४ ।

अक्खेव–आक्षेप, प्रश्न. । भग० ११४ । आव० ९७ । उत्त० ५२४ ।

अक्खेवणि–आक्षेपणी, धर्मकथाया प्रथमो भेद, आक्षिप्यन्ते मोहात्तत्त्वं प्रत्यनया भव्यप्राणिन इति । दश० ११० । धर्मकथाभेद । आचा० १४५ ।

अक्खेवणी–आक्षिप्यते–मोहात् तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोताऽनयेत्याक्षेपणी । ठाणा० २१० । आक्षिप्यते–मोहात्तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोता यकासिरिति । औप० ४६ ।

अक्खेवी–आक्षेपी, आक्षिपति वशीकरणादिना य स ततो मुष्णाति स । प्रश्न० ४६ ।

अक्खेवो–आक्षेप', आक्षेपणम्, आशङ्का । आव० ३७७ । पूर्वपक्ष । बृ० तृ० १२५ अ । परद्रव्यस्य, अधर्मद्वारस्यैकोनविंशतितम नाम । प्रश्न० ४३ ।

अक्खो–अक्ष, श्रुतपासक । आव० ५०२ । फलविशेष, अनुत्त० ६ ।

अक्खोडगा-क्रियाविशेष । नि० चू० प्र० १८२ अ ।

अक्खोडभंगपरिहरणा–आस्फोटकभङ्गपरिहरणा, आस्कोटकाना यो भङ्गस्तस्य प्रतिलेखनादिविधिविराधनापरिहरणा । आव० ५५२ ।

अक्खोडयं–अक्षोटकम्, अक्षोडवृक्षफलम् । प्रज्ञा० ३६४ ।

अक्खोमे–अक्षोभ, अन्तकृद्दशाना प्रथमवर्गस्याष्टमाध्ययनम् । अन्त० १ । अन्तकृद्दशाना द्वितीयवर्गस्य प्रथमाध्ययनम् । अन्त० ३ ।

अक्खोलं–फलविशेष । प्रज्ञा० ३२८ ।

अक्खोवंगं–चक्रोंजनं । गणि० ।

अक्खोवंजण–अक्षोपाञ्जनम्, शकटधूर्म्रक्षणम् । भग० २९४ ।

अक्रियावादिन –क्रिया–अस्तीतिरूपा सकलपदार्थसार्थव्यापिनी सैवायथावस्तुविषयतया कुत्सिता, अक्रिया नञ कुत्सार्थत्वात्तामक्रिया वदन्तीत्येवशीला अक्रियावादिन, यथावस्थितं हि वस्त्वनेकान्तात्मक तन्नास्त्येकान्तात्मकमेव चास्तीति प्रतिपत्तिमन्त इत्यर्थ । ठाणा० ४२५ । (अकिरियावाई)–नियतकृष्णपाक्षिका । दशाश्रु० १६ ।

अक्षः–विभीतक । प्रज्ञा० ३१ ।

अक्षर –घोलना स्वरविशेष । जीवा० १९५ ।

अक्षरकुटी–अक्षरच्छेदेन । विशे० ८३२ ।

अक्षरकोविदपरिषद्–(विद्वत्परिषद्) । आचा० १४६ ।

अक्षरश्रुतम्–ज्ञानं इन्द्रियमनोनिमित्त श्रुतग्रन्थानुसारि तदावरणक्षयोपशमो वा । आव० २४ ।

अक्षि–नेत्रम् । आचा० ३७ ।

अक्षीणमहानसीलब्धि –येनाऽऽनीतं, भैक्षं बहुभिरप्यन्यैर्भुक्तं न क्षीयते किन्तु स्वयमेव भुक्तं निष्ठां याति । विशे० ३८५ ।

अक्षोपाङ्गन्याय –(अक्खुवंजण)–चक्रोञ्जनं । दश० १८० ।

अखंड–अखण्ड', सम्पूर्णावयव । आव० २३९ । अखण्डम्-अस्फुटितम् । दश० १९५ ।

अखमे–अक्षमा, परकृतापराधस्यासहनं । भग० ५७२ ।

अखित्तं–इन्द्रकीलादियुत ग्रामादि । बृ० तृ० ३६ अ ।

अखुण्णा–अमर्दिता । नि० चू० प्र० ३३५ अ ।

अखेत्तं–जं० छिण्णमडवं । नि० चू० प्र० ३४१ आ । सचित्तपृथ्व्यादिमदस्थण्डिलम् । बृ० द्वि० १४० आ ।

अगंथिमा–कयलआ मरहट्ठविसये फलाण कयलक्कपमाणाओ पेण्डीओ एक्कंमि डाले बहुक्कीओ भवन्ति ताणि फलाणि खंडाखडीकयाणि । नि० चू० तृ० ३९ अ ।

अगंधण–अगन्धन, मानी सर्प' । दश० ३७ ।

अगंधणा–अगन्धना, सर्पजातिविशेष । उत्त० ४९५ ।

अगंधि–दुर्गन्धि । बृ० तृ० ९९ अ ।

अगइचरमे–अगतिचरम, न गतिचरम' । प्रज्ञा० २४५ ।

अगड–कूप । बृ० प्र० १०९ आ । अवट खड्डा । आव० ६९१ । आव० २०४ । कूप. । भग० २३८ । जं० प्र० १२३ ।

अगडदत्तो–अगडदत्त., अमोघरथरथिकपुत्र । उत्त० २१३ । रक्षकविशेष । व्य० द्वि० १७० आ ।

अगडमहेसु–कूपमहेषु । आचा० ३२८ ।

अगडाति–अवटा–कूपा । ठाणा० ८६ ।

अगडेसु–अवटेषु, कूपेषु । प्रज्ञा० ७२ ।

अगडो–कूप । नि० चू० प्र० ४३ अ । अवट, कूप । प्रज्ञा० २६७ ।

अगणि–अग्नि, इन्धनस्य प्लोषक्रियाविशिष्टरूपस्तथा विद्युदुल्काशनिसङ्घर्षसमुत्थित. सूर्यमणिसंसृतादिरूपश्च । आचा० ४९ । आव० ६२१ । अय.पिण्डानुगत । दश० २२८ । दश० १५४ । अग्निभयात्–प्रदीपनभयात् । ओघ० ११८ ।

अगणिज्झामिय–अग्निध्यामितम्, वह्निना ध्यामितं, श्यामीकृतम्। भग० २१३।

अगणि-झूसिए–सेवित', क्षपित.। भग० ६८३।

अगणिज्झूसिय–अग्निना शोषितं, पूर्वस्वभावक्षपणात्, अग्निना सेवितं वा। भग० २१३।

अगणिपरिणामिय–अग्निपरिणामितम्, सञ्जाताग्निपरिणामम्। भग० २१३।

अगणी–अग्नि.। ओघ० १५६। चतुर्दशशतके पञ्चमोद्देशक। भग० ६३०।

अगतं–नकुलाजादि। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अगतो–अगद, औषधि'। आव० ८३५।

अगत्थिओ–वृक्षविशेषः। अनुत्त० ५।

अगत्थिगुम्मा–अगस्त्यगुल्मा.। जं० प्र० ९८।

अगत्थी–अगस्ति',ग्रहविशेष। जं० प्र० ५३५। ठाणा० ७९।

अगदो–अणेगदव्वेहि। नि० चू० द्वि० १८ आ।

अगमा–वृक्षा। बृ० द्वि० १८३ आ। नि० चू० प्र० १५२ आ, १८३ अ।

अगमेत्त–ज्ञात्वा, आज्ञापयेदात्मानमनासेवनयेति। आचा० २१९।

अगम्मगामी–अगम्यगामी, भगिन्याद्यभिगन्ता। प्रश्न० ३६।

अगर–अगुरु–दारुविशेष.। प्रश्न० १६२।

अगरला–सुविभक्ताक्षरता। औप० ७८।

अगरिहिअं–अगर्हणीयम्, सामायिकनवमपर्याय। आव० ४७४।

अगलदत्तो–अगडदत्त,। उत्त० २१५।

अगहणे–अग्रहणे–अकरणे। ओघ० १४९।

अगा–वृक्षा। नि० चू० तृ० १४० अ।

अगामितं–अगामिकं, अकामिक–अनभिलषणीय। ठाणा० ३१४।

अगामियं–अगामिका, अकामिका वा–अनभिलाषविषयभूताम्। भग० ६७२।

अगारं–अगै कृत गृहम्। नि० चू० तृ० १४० अ। गेहम्। प्रश्न० ८। गृहम्। आव० ३२९। अगार, गृहस्थ'। आव० ३२९।

अगार–अगारम्, गृहम्। दश० ६२।

अगारट्ठिय–अगारस्थितभाषा–गृहस्थभाषा। व्य० प्र० ५४ आ।

अगारधम्मं–अगारधर्मम्, गृहाचारं गार्हस्थ्यम्। उत्त० ५७८।

अगारबंधणं–गृहपाशं पुत्रकलत्रधनधान्यादिरूपम्। आचा० ४२९।

अगारस्थेभ्यः–(गारत्थेहिं), अनुमतिवर्जसर्वोत्तमदेशविरतिप्राप्तेभ्य। उत्त० २५०।

अगार–अगारा, गृहिण। ठाणा० ५३।

अगाराओ–गृहवासात्। जं० प्र० १४५।

अगारिसामाइयङ्गाइं–अगारिणो–गृहिणः सामायिक-सम्यक्त्वश्रुतदेशविरतिरूपं तस्याङ्गानि–नि शङ्कताकालाध्ययनाणुव्रतादिरूपाणि अगारिसामायिकाङ्गानि। उत्त० २५१।

अगारी–अगारी, क्षत्रियादिक। सूत्र० १४३। गृही, असयतः। ठाणा० १८१। जं० प्र० १४५।

अगारो–अगार, गृहस्थस्तस्येदमगारिकं, देशचारित्रसामायिकं देशविरतिसामायिकम्। विशे० १०६३।

अगालिणो–अगारिण। बृ० द्वि० २८२ अ।

अगाहा–अगाधा, अपरिमितजला। आव० ८१९। प्रायोगंमीरम्। दश० २२०।

अगिण्हियव्वं–अग्रहीतव्यम्, अनुपादेयं, हेयम्। दश० ८०।

अगिला–अग्लानि। नि० चू० प्र० १७ आ। अग्लान–उचितकर्तव्यसहिष्णु'। आचा० २८१।

अगिलाए–अग्लान्या, अखिन्नतया बहुमानेनेत्यर्थ। ठाणा० २९९। विशे० ८७५।

अगिलायउ–अग्लान्यैव, शरीरश्रममविचिन्त्यैव। उत्त० ५३६।

अगीयत्थं-अपरीणामग, अतिपरिणामगाय। नि० चू० प्र० ४५ आ।

अगीयत्थत्त–अगीतार्थत्वम्। आव० ५२।

अगीयत्थो–जेण आवस्सगादीयाण अत्थो ण सुतो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अगुण–अगुण, अविद्यमानगुण। दश० २६३।

अगुणगुणे–वक्रता। आचा० ८६।

अगुणरिणं–अगुणा एव अणंतगुणाणं अणंति वा रिणंति वा एगट्ठा तं च। दश० चू० ८९।

अगुणा–अगुणा, मिथ्यात्वादयो दोषा। उत्त० ४३१।

अगुत्ती–अगुप्ति, इच्छाया अगोपनम्। परिग्रहस्य त्रयोविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अगुरु–अगुरु, सुगन्धिद्रव्य.। आव० १०१। काष्ठविशेष। जीवा० १३६।

अगुरुलहु–अगुरुकलघुकम्, अत्यन्तसूक्ष्म भाषामन-कर्मद्रव्यादि। ठाणा० ४७५।

अगुरुलघु–यदुदयात् प्राणिना शरीराणि न गुरूणि नापि लघूनि तत्। प्रज्ञा० ४७३। सूक्ष्मपुद्गलद्रव्याणि। जं० प्र० १३०।

अगुरुलहुफासपरिणामे–स्पर्शविशेष। सम० ४९।

अगेहि–अगृद्धि –भोजनादिषु परिभोगकाले अनासक्ति। भग० ९७।

अगो–अग', विपाककालेऽपि जीवविपाकितया शरीरपुद्गलादिषु वहि प्रवृत्तिरहित, अनन्तानुवन्ध्यादि। उत्त ०१९।

अगाधे–(गाधे), पदप्रचारालङ्घनीये। विशे० ५७६।

अग्गं–अग्रम्, अपरिभुक्तम्। जीवा० २५४। अग्र्यम्, प्रधानम्। प्रश्न० १३६। अन्त। भग० ३५। मूर्धा। प्रज्ञा० १०८। परिणाम'। सूर्य० २८०। आलम्वनम्, आव०। २६५। परिमाणम्। भग० ३५। सयमतपसी मोक्षो वा। आचा० १६०। भवोपग्राहिकर्म्मचतुष्टय। आचा० १६०। प्रमाणम्। ठाणा० ४६२। कोटि। उत्त० २८३। अग्र, वर प्रधानं अहवा जं पढमम्। नि० चू० प्र० १४२ अ।

अग्ग–निर्वाणस्थानम्। आव० १४८। द्रव्यावगाहनाद्यग्रेषु। आचा० ३१८।

अग्गकूरमंडी–अग्रकूरमण्डी, ओदनस्योपरिभाग। आव० ५७५।

अग्गकोडीणं–अग्रकोटय, प्रकृष्टा विभागा'। जं० प्र० ९५।

अग्गजायाणि–अग्रजातानि, वनस्पतिविशेष.। आचा० ३४९।

अग्गजिब्भा–अग्रजिह्वा, जिह्वाग्रं। ठाणा० ३९५।

अग्गतावसगोत्ते–अग्रतापसगोत्रम्। सूर्य० १५०।

अग्गपलंवं–आम्रातकफल। वृ० प्र० १४३ आ। तलादिप्रलंवा। नि० चू० द्वि० १२४ आ।

अग्गपिंडो–जइ दिणे २ दाहिसि, अग्गपिंडो अग्गकूरो। नि० चू० द्वि० ९० आ। अग्रपिण्डम्–निष्पन्नस्य शाल्योदनादेराहारस्य देवताद्यर्थं स्तोकस्तोकोद्धारं। आचा० ३३६। काकपिण्ड्या। आचा० ३४०। शाल्योदनादे' प्रथममुद्धृत्य भिक्षार्थं व्यवस्थाप्यते। आचा० ३२६। अग्रभृत्ते परिवेषणे आदावेव यो गृह्यते। ठाणा० ५१५।

अग्गबीए–अग्रबीजा', अग्रे वीजं येषामुत्पद्यते ते तलताली–सहकारादय. शाल्यादयो वा, अग्राण्येवोत्पत्तौ कारणतां प्रतिपद्यन्ते येषां कोरण्टादीनां ते वा। सूत्र० ३५०।

अग्गवीय–अग्रवीजा, कोरण्टकादय। दश० १३९। आचा० ५८। व्रीह्यादय.। ठाणा १८६। जपाकुसुमादि। आचा० ३४९।

अग्गभावे–अग्रभावम्, धनिष्ठा गोत्रम्। ज० प्र० ५००।

अग्गमहिसी–अग्रमहिषी, पट्टराज्ञी। जीवा० १६२। ठाणा० ११७।

अग्गरसो–अग्र्य रसश्च, प्रधानो मधुरादिकश्च, अग्र्यो रसः शृङ्गारादिक.। उत्त० ४०५।

अग्गल–अर्गलम्, गोपुरकपाटादिसम्वन्धि। दश० १८४।

अग्गल–अर्गल, षडशीतितमग्रहनाम। जं० प्र० ५३५।

अग्गलपासाया–अर्गलाप्रासादा., यत्रार्गला नियम्यन्ते। जं० प्र० ४८। जीवा० २०४।

अग्गला–गोवाडावीहारेसु भवति। दश० चू० ८५। अर्गला, प्रतीता। जीवा० २०४। जीवा० ३५९। अधिकं। उत्त० ७, ६६०।

अग्गलापासाय–अर्गलाप्रासाद, प्रासादे यत्रार्गला प्रविशति स। जीवा० ३५९।

अग्गवपूरओ–परिधानविशेष.। वृ० तृ० १०२ अ।

अग्गविडवं–अग्रविटपम्, शाखामध्यभागाग्र्य, विस्ताराग्रं वा। प्रश्न० ९२।

अग्रशिरः–(अग्गसिरा), उष्णीषलक्षणम्। ज० प्र० ११३।

अग्गसिंगं–अग्रशृङ्गम्। आव० १७४।

अग्गहणं–अनादर। ओघ० ९४। वृ० प्र० २४५ अ।

अग्गहत्था–अग्रहस्ता, वाहोरग्रभूता शया। अनुत्त० ६। अग्रहस्तौ, भुजौ। प्रज्ञा० ९१।

अग्गहत्थो–अग्रहस्त, वाह्वग्रभागवर्ती हस्त। जीवा० २७५।

अग्गाइं–अग्र्याणि, मद्यस्कानि। जं० प्र० २१८।

अग्गासणे कूरं-अग्रासनम्, प्रतिगृहं सदक्षिणं भोजनम्। आव० ६७९।

अग्गाहारो-अग्रासनम्। आव० ३००।

अग्गितेण-अग्न्यन्तेन, अग्निमार्गेण। आव० ७१।

अग्गि-तीर्थकरविशेषशिबिका। सम० १५१।

अग्गिउत्तं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकर। सम० १५३।

अग्गिओ-अग्निक, उत्सन्नवंशजो दारक। आव० ३९१।

अग्गिकुमारा-अग्निकुमारा., सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिनो देवा। भग० १९५। भवनपतिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

अग्गिकुमारीओ-अग्निकुमार्य', सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्त्तिन्यो देव्य। भग० १९५।

अग्गिघरं-अग्निगृहम्। आव० २९५।

अग्गिच्चा-कौशिकगोत्रभेद। ठाणा० ३९०। सुप्रतिष्ठाभविमानवासी अष्टमो लोकान्तिकदेव। भग० २७१। ठाणा० ४३२।

अग्गिचामे-कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानम्। ठाणा० ४३२। सम० १४।

अग्गिच्चो-अग्निः, मरुत्। आव० १३५।

अग्गिज्जोओ-अग्निद्योत, पुष्पमित्रजीव। आव० १७१।

अग्गितरोगी-अग्निकरोगी। आव० २७४।

अग्गिभीरु-अग्निभीरु, प्रद्योतस्य रथ, द्वितीय रत्नम्। आव० ६७३।

अग्गिभूई-अग्निभूति, अग्निद्योतजीव। आव० १७२। द्वितीयगणधर। आव० २४०। श्रीवीरस्य द्वितीयगणधर। भग० १५३। सम ८४।

अग्गिमाणव-अग्निमानव', उत्तरनिकाये पञ्चम इन्द्र.। भग० १५७।

अग्गिमाणवे-अग्निमाणव, उत्तरदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपति। प्रज्ञा० ९४। ठाणा० ८४। जीवा० १७०।

अग्गिमेह-अग्निमेघा, अग्निवद्दाहकारिजला मेघा। भग० ३०६।

अग्गिमो-प्रथम। ओघ० ३३।

अग्गिय-व्याधिविशेष.। नि० चू० द्वि० ६० अ।

अग्गियए-अग्नि, तितिक्षोदाहरणे प्रथमो दासचेटः। आव० ७०२। अग्निक, भस्मकाभिधानो वायुविकार। विपा० ४२।

अग्गियओ-अग्नि, दासचेट। आव० ३४३।

अग्गियतो-अग्निक, इन्द्रदत्तराजस्य दासचेट। उत्त० १४८।

अग्गिल्लए-ग्रहविशेष। ठाणा० ७९।

अग्गिवेससगोते-कृत्तिकानक्षत्रनाम। सूर्य० १५०।

अग्गिवेसाणं-अग्निवेशस्यापत्यं वृद्धं अग्निवेश्यो 'गर्गादेर्य'-चिति यञ् प्रत्यय तस्याप्यपत्यमाग्निवेश्यायन। नदी० ४८।

अग्गिवेसायणे-गोशालनिशाचर.। भग० ६५९।

अग्गिवेसे-अग्निवेश्य, शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। सूर्य० १४७। द्वाविंशतिमुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। अग्निवेश्म-शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। अग्निवेश्य-कृत्तिकागोत्रम्। ज० प्र० ५००।

अग्गिसिहा-अग्निशिखम्, वनविशेष। दश० १०३।

अग्गिसिहे-अग्निसिंह, दत्तवासुदेवपिता। आव० १६३।

अग्गिसिहो-त्रिष्णुविशेषपिता। सम० १५२।

अग्गिसीहे-अग्निसिंह, दक्षिणदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपति। जीवा० १७०। ठाणा० ८४। प्रज्ञा० ९४। पञ्चमो दक्षिणनिकायेन्द्र। भग० १५७।

अग्गिसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकर। सम० १५३।

अग्गिहोत्त-अग्निहोत्र, अग्निकारिका। उत्त० ५२५।

अग्गिहोत्तसाला-अग्निहोत्रशाला। आव० २२५।

अग्गी-अग्नि, ग्रहविशेष। जं० प्र० ५३५। वह्नि। आचा० ३३। आव० २७३।

अग्गीसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकर। सम० १५३।

अग्गुज्जाणं-अग्रोद्यानम्, अग्न्युद्यानम्। आव० १९०।

अग्गे-दसिकापर्यन्ते। ओघ० २१४।

अग्गेई-आग्नेयी, पूर्वदक्षिणमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

अग्गेज्ज-आग्नेय, मण्डलकोण। सूर्य० २२।

अग्गेणियं-द्वितीयपूर्वम्। सम० २६।

अग्गेणीयं-अग्रायणीयम्, द्वितीयपूर्वनाम। ठाणा० १९९।

अग्गेया-वत्सगोत्रान्तर्गत गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अग्गेयी-अग्निकोण। भग० ४९३। ठाणा० १३३।

अग्गोवरयंकरेति। नि० चू० द्वि० ३५ अ।

अग्गोदयं–अग्रोदकम्, देशोनयोजनार्धजलादुपरि षर्द्धमानं जलम्। जीवा० ३०९। षोडशसहस्रोच्छ्रितायां वेलाया यदुपरि गव्यूतद्वयमानं वृद्धिहानिस्वभावं तदग्रोदकम्। सम० ७५।

अग्घं–अर्घम्। आव० ३००। महार्घ्यम्। आव० ८२७। आव० २९५। अर्घ्यम्-मूल्यम्। आव० ८२६।

अग्घंति–अर्घन्ति, महार्घन्ति। आव० ८२९।

अग्घविए–अर्घितम्, कृतमूल्यम्। दश० ६१।

अग्घाडग–गुच्छाविशेष। प्रज्ञा० ३२।

अग्घाया–आघ्राता, आहूता। विशे० ९६०।

अग्घियं–बहुमोल्ल। नि० चू० प्र० १३९ अ।

अग्घेइ–अर्हति। उत्त० १४२।

अग्घेऊणं–अर्घित्वा। आव० २६१।

अग्घो–अर्घ, मत्स्यकच्छपविशेष। जीवा० ३२१।

अग्निमानव–भवनपतीन्द्रविशेष। ठाणा० २०५।

अग्निशर्मा–यो मिथ्यादृष्टपदिष्टयुतपसाऽपि अनन्त कालं संसारे पर्यटत्। सूत्र० ५७।

अग्निशिख–भवनपतीन्द्रविशेष। ठाणा० २०५।

अग्निष्टोम–यागविशेष। दश० २७६।

अग्रश्रुतस्कन्धः–द्वितीयश्रुतस्कध। आचा० ३१८।

अग्राह्य–अप्रमेय। जीवा० १८७।

अघा· गर्ता हृदो। बृ० प्र० १०९ आ।

अघोर–मन्त्रविशेषः। उत्त० २६७।

अङ्कुसल–अङ्कुशयुक्त। (मर०)

अङ्गमंगो–अंगोपागानि। (मर०)

अचंड–अचण्ड., सौम्य। उत्त० ४७।

अचंडो–अचण्ड., कारणविकलकोपविकल। प्रश्न० ७४।

अचक्किय–अचकिता, अत्रामिता। उत्त० ३५३।

अचक्खुदंसण–अचक्षुर्दर्शनम्, चक्षुर्वर्जशेषेन्द्रियमनोभिर्दर्शनम्। जीवा० १८।

अचक्खुसे–अचाक्षुषम्, चक्षुरिन्द्रियाग्राह्यम्। दश० २०२।

अचक्खुस्सं–अनिष्टम्। बृ० तृ० ४१ अ।

अचक्षुषा–चक्षुर्वर्जेन्द्रियचतुष्टयेन मनसा। ठाणा० ४४८।

अचरम–अचरम, यस्य चरमो भवो न भविष्यति सोऽचरम·। भग० २५९।

अचरमसमयनियंठो–अचरमसमयनिर्ग्रन्थः, अचरमा–आदिमध्यास्तेषु यो वर्तमान· स। उत्त० २५७।

अचरिमं–अचरमम्। प्रज्ञा० २३४। अप्रान्तं, मध्यवर्ति। प्रज्ञा० २२८।

अचरिमंतपएस–अचरमान्तप्रदेशः। भग० ३६६।

अचरिमो–अचरम·, अभव्य· सिद्धश्च। प्रज्ञा० १४३। जीवा० ४४४।

अचल–(अयलो) कलाशिक्षायामुदाहरणगत पुरुषः। दश० १०९।

अचलेन्द्रः–मेरु.। आव० ४७।

अचले–अचलः, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्य पंचमाध्ययनम्। अन्त० ३।

अचवचवं–चवचवेतिशब्दरहितम्। प्रश्न० ११२। अचवचवम्। अनुकरणशब्दोऽयम्। भग० २९४। वल्कमिव चर्वयन् न चवचवावेइ। ओघ० १८७।

अचवलं–अचपलम्, मानसचापल्यरहितम्। भग० १४०।

अचवलो–अचपल·, कायिकादिचापल्यरहित। प्रश्न० ७४। नाऽऽरब्धकार्यं प्रत्यस्थिर, अथवा अचपलो–गतिस्थानभाषाभावभेदत चतुर्धा। उत्त० ३४६।

अचिअत्तं–अप्रीतिकरम्। दश० २२१।

अचिअत्तकुलं–अप्रीतिकुलम्, यत्र प्रविशद्भि· साधुभिरप्रीतिरुत्पद्यते तत्कुलम्। दश० १६६।

अचिअत्ति–य साधुभिरागच्छद्भिर्दुखेनास्ते। ओघ० ९३।

अचिणित्तु–आचित्य, आत्मप्रदेशै· सहोपचित्य। प्रश्न० ९८।

अचित्तं–आयु क्षयेणाचित्त न परसयतार्थम्। बृ० द्वि० १०६ अ। अचित्तम्, दग्धदेशादि। दश० १७८।

अचित्तद्रव्यपरिद्यून–(अचित्तदव्वपरिज्जुण्ण), जीर्णपटादि। आचा० ३५।

अचित्त–अचित्तमहास्कन्ध। आव० ३५।

अचित्तस्कन्ध–द्विप्रदेशिकादिस्कंध। विशे० ४२४।

अचियत्त–अचियत्त, स्वचेतसि करोति वाचा न किमपि ब्रूते एष देशीभाषया। बृ० प्र० २४६ अ।

अचियत्तं–अदानशीलं। ओघ० १५६। अप्रतीति·। ओघ० १६९। अप्रीतिकम्। आव० १९१। आव० ११८।

अचियत्ता–न रोचते। ओघ० १५४।

अचियत्ते–अचियत्तः, अनभिमत । सूत्र० ३३७। अप्रीतिकर । उत्त० ३४६ । अप्रीतिकानि–नास्ति प्रीति साधुषु गृहमुपगतेषु येषां तानि । बृ० प्र० २३५ अ ।

अचियत्तो–साधुन् प्रत्यप्रीतिमान्। प्रश्न० १२४। अप्रतीत्युत्पादक. । प्रश्न० ६४ ।

अचियत्तोग्गहो–अप्रीतिकावग्रह. । आव० ३०४। आव० १८९ ।

अचिरं–स्थानम्, स्थण्डिलम्। आचा० २९४।

अचिरकालकयं–अचिरकालकृतम्, द्विमासिके ऋतौ यदग्न्यादिना प्राशुकीकृतम्। ओघ० १२३।

अचिरवत्तवीवाहे–अचिरवृत्तवीवाह । सूर्य० २९२ ।

अचुल्ला–चुल्लीए समीवे। नि० चू० प्र० ३२८ आ ।

अचेल–अचेल, अल्पचेलो जिनकल्पिको वा। आचा० २४२ । अपगतचेलोऽल्पचेलो वा अचलनस्वरूपो वा। आचा० २४५। य. साधुर्नास्य चेलं–वस्त्रमस्तीति अचेल, अल्पचेल इत्यर्थः। आचा० २४४। नास्य चेलं–वस्त्रमित्यचेल । आचा० २४४। षष्ठः परीषह. । आव० ६५६ ।

अचेलक–अवमानि, असाराणि लघुत्वजीर्णत्वादिना चेलानि–वस्त्राण्यस्येति । उत्त० ३५९ । अविद्यमानचेलक कुत्सितचेलको वा । उत्त० ५०० ।

अचोक्खं–अचोक्षम्, अपवित्रम्। जीवा० २८२ ।

अचोक्षाः–पिशाचभेदविशेष । प्रज्ञा० ७० ।

अच्चंतत्थावरा–अत्यन्तस्थावरा, अनादिवनस्पतिकायादुद्वृत्त्य । आव० ४६५।

अच्चंतिओ–आत्यन्तिक, सर्वकालभावी। सूत्र० ३९५।

अच्चंतिया–तेन सह तत्रैवासितुकामा । बृ० तृ० १३२ अ।

अच्चइओ–व्यथित., पीडित । दश० ४४।

अच्चणिज्जं–अर्चनीयम्। सूर्य० २६७। चन्दनगन्धादिभि । औप० ५।

अच्चणिज्जाओ–चन्दनादिना। भग० ५०५।

अच्चणिय–अर्चनिका। आव० ३५०।

अच्चणियवावडा–अर्चनिकाव्यापृता। आव० ८६३।

अच्चंतो–विबुद्धोवि जं फुडं ण सभरति सभरतो वा जस्सत्थं ण वि बुज्झति सो अच्चंतो। नि० चू० द्वि० ८६ अ। अन्तमतिक्रान्तोऽत्यन्त । उत्त० ६२१। अनादि । उत्त० ६२१। अतिक्रान्तपर्यन्तम्। उत्त० ६३९।

अच्चल्लीणो–आसण्णं। नि० चू० प्र० १७५ अ।

अच्चल्लूढो–अतीव प्रज्वलिते। नि० चू० प्र० १७५ अ।

अच्चसणे–अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०।

अच्चा–प्रतिमा। बृ० तृ० २६आ। नि० चू० प्र० ११७ आ। अर्चा, मनुष्यतनुर्भाविनी। औप० ८१। तनुः, शरीरं, पद्मादिका लेश्या वा। सूत्र० २३८। लेश्या चित्तवृत्ति । सूत्र० २३४।

अच्चासणयाए–अत्यन्तं सततमासनं–उपवेशनं यस्य सोऽत्यासनस्तद्भावस्तत्ता तया। ठाणा० ४४६।

अच्चासणे–अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। सूर्य० १४७।

अच्चासाइत्तए–अत्याशातयितुम्, छायाया भ्रंशयितुम्। भग० १७५।

अच्चासायणा–अत्याशातना, किमेभि कलहशास्त्रैरिति। आव० ५८०।

अच्चिं–ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेष । सम० १४।

अच्चि–अर्चि, छिन्नज्वालम्। दश० २२८। मूलाग्निविच्छिन्ना ज्वाला। दश० १५४। अनलविच्छिन्ना ज्वाला। जीवा० १०७।

अच्चिकंतं–अर्चि कान्तम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिकूडं–अर्चि कूटम्, विमानविशेष । जीवा० १३८।

अच्चिज्झयं–अर्चिर्ध्वजम्, विमानविशेष । जीवा० १३८।

अच्चिप्पभं–अर्चि प्रभम्, विमानविशेष । जीवा० १३८।

अच्चिमालिं–कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमान । सम० १४। भग० २७१।

अच्चिमाली–अर्चिर्मालि, अर्चिषां माला। प्रज्ञा० १०१। अर्चिर्माली, चन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। जं० प्र० ५३२। शक्राग्रमहिषीराजधानी। ठाणा० २३१। सूर्यस्य तृतीयाग्रमहिषी। ठाणा० २०४, भग० ५०५। चन्द्रस्याग्रमहिषी। ठाणा० २०४, भग० ५०५। दक्षिणपूर्वरतिकरपर्वतस्यापरस्यां शक्रदेवेन्द्रस्य शच्या अग्रमहिष्या राजधानी। जीवा० ३६५। अर्चीषि–किरणास्तेषां माला, साऽस्यास्तीति किरणमालापरिवृत इति। जीवा० ३८७। चन्द्रस्य सूर्यस्य च ज्योतिषेन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। जीवा० ३८४। कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमान । ठाणा० ४३२। द्वितीयं लोकान्तिकविमानम्। भग० २७१।

अच्चिरावत्तं–अर्चिरावर्त्तम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।
अच्चिरुत्तरावडिंसए–अर्चिरुत्तरावर्तसकम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।
अच्चिलेस्सं–अर्चिर्लेश्यम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।
अच्चिवन्नं–अर्चिर्वर्णम्, विमानविशेष। जीवा० १३८।
अच्चिसिंगारं–अर्चिःशृङ्गारम्, विमानविशेष। जीवा० १३८।
अच्चिसिट्ठं–अर्चिःसृ(शि)ष्टम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।
अच्ची–अर्चि, अनलाप्रतिबद्धा ज्वाला। प्रज्ञा० २९, जीवा० २९। प्रथम लोकान्तिकविमानम्। भग० २७१। कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमान। ठाणा० ४३२। अर्चि, शरीरस्थरत्नादितेजोज्वाला। औप० ५०, भग० १३२। विमानविशेष। जीवा० १३८। स्वशरीरगतरत्नादितेजोज्वाला। जीवा० १६२। अर्चि, लेश्या। सूत्र० १९०। दाह्यपतिबद्धो ज्वालाविशेषोऽर्चिः। आचा० ४९।
अच्चीकरणं–गुणवण्णणं। नि० चू० प्र० १९५ आ।
अच्चीसहस्समालिणीयं – चन्द्रप्रभाशिबिकाविशेषणम्। आचा० ४२३।
अच्चुओ–अच्युत, देवलोकविशेष। आव० ११७।
अच्चुत्तवडिंसगं–अच्युतकल्पगतविमानविशेष। सम० ४१।
अच्चुदयं–अत्युदकम्, महान् वर्ष। ओघ० ३१।
अच्चुयवडिंसए–अच्युतावतंसक, अच्युतदेवलोकस्य मध्येऽवर्तंसक। जीवा० ३९३।
अच्चुया–अच्युता, कल्पोपपन्नवैमानिकभेदविशेषा। प्रज्ञा० ६९। अच्चुत –आयात। ओघ० ५०।
अच्चुव्वाया–परिश्रान्ता। बृ० द्वि० २११ आ।
अच्चेइ–अत्येति, अतिक्रामति। आचा० १४४।
अच्छं–ऋक्षम्। आचा० ३३८। अतिस्वच्छम्। जीवा० १६०। स्फटिकवच्छुद्धम्। जीवा० १२३। आकाशस्फटिकवदतिस्वच्छम्। प्रज्ञा० ८७।
अच्छंद–अच्छन्द, अस्ववश। दश० ९१।
अच्छंदो–यथाछन्द, पाषण्डस्थ। आव० १९३।
अच्छ–ऋक्ष., प्रसिद्ध। भग० १९०; नि० चू० प्र० १३८ आ। ऋक्ष.। भग० ३०९। ऋक्षा., अच्छभल्ला.। जं० प्र० १२४।
अच्छउ–तिष्ठतु। दश० ३७।
अच्छणं–अवस्थानम्। बृ० प्र० २३६ अ। 'सन्निधौ आसनम्। आव० ५२४।'
अच्छण–उपविश्यावस्थानम्। बृ० प्र० ११० अ।
अच्छणए–यत्र स्वाध्यायं कुर्वद्भिरास्यते। ओघ० ९४।
अच्छणघरं–अवस्थानगृहकम्, यत्र यदा तदा वाऽऽगत्य वहव सुखासिकयाऽवतिष्ठन्ते। जीवा० २००।
अच्छणघरगा–अवस्थानगृहकाणि। जं० प्र० ४५।
अच्छणजोए–अक्षणयोग, अहिंसाव्यापार। दश० २२८।
अच्छणिउपूरे–संख्याविशेष.। भग० ८८८।
अच्छणिउराति–सख्याविशेष। ठाणा० ८६।
अच्छणिउरे–सख्याविशेष। भग० २१०। भग० २७५।
अच्छणिकुरंगाति–सख्याविशेषः। ठाणा० ८६।
अच्छणे–आसने, प्रक्रमादाचार्यान्तरादिसन्निधौ अवस्थाने। उत्त० ५३५।
अच्छण्णपडिच्छण्णो–आच्छादितप्रत्याच्छादित। जीवा० १४५।
अच्छते–तिष्ठति। आव० ८३२।
अच्छभल्ल–ऋक्ष। नि० चू० द्वि० ५८ अ। वनजीवा। (मर०)
अच्छभल्लो–ऋक्षः। नि० चू० द्वि० १२९ अ।
अच्छरं–आस्तरकम्, आच्छादनम्। जीवा० २१०।
अच्छरसा–अच्छरसा, अतिनिर्मला.। जं० प्र० १९२।
अच्छरा–अप्सरा, चप्पुटिका। सूत्र० ३२५। शक्रस्याग्रमहिषीनाम। भग० ५०५।
अच्छराणिवातो–अप्सरोनिपात, चप्पुटिका। प्रज्ञा० ६००।
अच्छराते–शक्रस्याग्रमहिष्या राजधानीविशेष। ठाणा० २३१।
अच्छरानिवाए–अप्सरोनिपात, तिस्रश्चप्पुटिका। औप० १०९। चप्पुटिका। भग० २६९। जीवा० १०९।
अच्छरीयं–आश्चर्यम्। आव० ३९५।
अच्छवि–अक्षपि, अशरीर., अव्ययक। भग० ८९२।
अच्छवी–अच्छवि, अव्ययक। उत्त० २५७, ठाणा० ३३६।

अच्छह–तिष्ठत। ओघ० १५८।

अच्छा–अच्छा., आकाशस्फटिकवत्। ठाणा० २३२।

अच्छा–अच्छापुरी, वरणजनपदे आर्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५५। सनखपदविशेषः। प्रज्ञा० ४५। आकाशस्फटिकवदति-स्वच्छा। जं० प्र० २०।

अच्छाडेइ–आच्छादयति। आव० ४३४।

अच्छारियभत्तं–लावकभक्तम्। आव० २०७।

अच्छारिया–लावकम्। आव० २०७। मूल्यप्रदानेन शालि-लवनाय कर्म्मकरा, अस्तारिका–क्षेत्रे क्षिप्पंते ते। व्य० द्वि० १६९ आ।

अच्छाविज्जइ–स्थाप्यते। आव० ६३३।

अच्छावित्तो–स्थापित। आव० ३५२।

अच्छावेइ–स्थापयति। आव० ६३१।

अच्छि–(रोडए), चतुरिन्द्रियजीवभेद.। उत्त० ६९६।

अच्छि–अक्षी। आव० १९२। बीजप्रदेशस्थानानि यस्या. सा निंदिता।, ओघ० ,२१८।

अच्छिउं–स्थातुम्। उत्त० १५३।

अच्छिको–अस्पृष्ट·। व्य० प्र० १८६ आ।

अच्छिचमढणं–चक्षुषोर्मीलनम्। बृ० द्वि० २०७ आ।

अच्छिज्जं–आच्छेद्यम्। आचा० ३२९।

अच्छिढोक्कणियं–अक्षिछादनम्।, आव० ५६१।

अच्छिणिउपूरंगे–सख्याविशेष.।, भग० ८८८।

अच्छिण्णे–अच्छिन्न, अव्यवहित ,नान्यै· शब्दान्तरैर्वातादि-कैर्वाऽप्रतिहतशक्तिक। प्रज्ञा० २९९।

अच्छिद्द–अच्छिद्रम्, अविरलम्, निर्दूषणं वा-। भग० १३६।

अच्छिद्दजालो–अच्छिद्रजाल·, अङ्गुल्यन्तरालसमूहरहित। जीवा० २७२।

अच्छिद्दे–गोशालकदिशाचर.। भग० ६५९।

अच्छिद्रपाणि–प्रतिमापन्नो जिनकल्पिको वा। आचा० २७७।

अच्छिन्न–अच्छिन्न, अपृथग्भूत·। ठाणा० ४७२।

अच्छिपत्ताइं–अक्षिपत्राणि, नेत्ररोमाणि। जं० -प्र० ८१। जीवा० २३४।

अच्छिफुलुयं–अक्षिपुष्पिका। नि० चू० प्र० ७ अ।

अच्छियं–वृक्षविशेषफलम्। आचा० ३४९।

अच्छियाइओ–स्थितवान्। आव० ६८३।

अच्छिरे–चतुरिन्द्रियजीवभेद.। उत्त० ६९६।

अच्छिरोडा–चतुरिन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२। चतुरि-न्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

अच्छिवेयणा–अक्षिवेदना, नेत्रपीडा। भग० १९७।

अच्छिवेहए–चतुरिन्द्रियजीवभेद.। उत्त० ६९६।

अच्छिवेहा–चतुरिन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

अच्छिवेहो–अक्षिवेध, चतुरिन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२।

अच्छुत्ता–उद्धृत्य। नि० चू० द्वि० १४ आ।

अच्छुरंति–आस्तृण्वन्ति। ओघ० ८३।

अच्छुरलभे–प्रचुरलाभे। नि० चू० द्वि० १४ आ।

अच्छुढं–अक्षिप्तम्। ओघ० १६५।

अच्छे–अच्छ., सुनिर्मल, जाम्बूनदरत्नबहुलत्वात् मेरुनाम। जं० प्र० ३७५। ऋक्ष.–अच्छभल्ल। प्रज्ञा० २५३।

अच्छेओ–अच्छेक., अविकल। आव० ५२७।

अच्छेज्ज–आसीत। भग० ९०। आच्छेद्य–षष्ठशबलदोषे। प्रश्न० १४४।

अच्छेज्जे–आच्छेद्य–बलाद् भृत्यादिसत्कमाच्छिद्य यत्स्वामी साधवे ददाति। ठाणा० ४६०।

अच्छेज्जेइ–भोजनदोष·। भग० ४६६।

अच्छेण्णं–आच्छेद्यं, यदाच्छिद्य भृत्यादिभ्य स्वामी ददाति। प्रश्न० १५५।

अच्छेरं–आश्चर्यम्। जीवा० २७७।

अच्छेरगा–आश्चर्याणि, अद्भुतानि। ठाणा० ५२३।

अच्छेरियं–आश्चर्यम्, आश्चर्यवस्तु। दश० ५५।

अच्छो–अच्छ., स्वच्छ। सूर्य० ७८। ऋक्ष। जीवा० ३८। नाखरविशेष·। प्रश्न० ७।

अच्छोड–आच्छोटनम्। ओघ० १३३।

अछिन्नछेयनयाइं–अच्छिन्नच्छेदनयिका–सूत्रविशेष·। सम० १२८।

अजगर–अजगरः, शयुपर्यायः, उर परिसर्पविशेष। प्रश्न० ७। सम०। १३५।

अजज्जो–अजय्य, जेतुमशक्य.। उत्त० १६९।

अजताभासविवज्जी–अयताभाषाविवर्जी, दुष्टवाक्परि-हर्त्ता। आव० ७७५।

अजयं–अयतम्, अनुपदेशेन । दश० १५६ । अणुवएसेण । दश० चू० ७० ।

अजय–अयत, अयत्नपर. । ओघ० ३७ । तत्तत्पापस्थाने-भ्योऽनुपरत । उत्त० १९४ ।

अजरणं–अजीर्णम् । आव० १३१ ।

अजवणिज्जोदए–अयापनीयोदका, अयापनीयं–न यापना-प्रयोजनमुदकं येषां ते । भग० ३०६ ।

अजसो–छायाघात । बृ० तृ० ९९ अ ।

अजहण्णमणुक्कोसे–अजघन्योत्कृष्ट., अजघन्योत्कृष्टस्थितिः । आव० ३३५ ।

अजाकृपाणीयम्–अवितर्कितसम्भवो न्यायविशेष. । आचा० १८ ।

अजाणंतिया–अजानती पर्षत् जे होइ पगयसुद्धा । बृ० प्र० ५८ अ ।

अजाणू–अज्ञस्य अज्ञानाद् वा व्यावृत्तिः । ठाणा० १७४ ।

अजाता–उत्तरगुणैश्चाधाकर्मादिभिरशुद्धा । ओघ० १९३ ।

अजायकप्पिओ–अजातकल्पिको, अगीतार्थ । बृ० प्र० ११२ आ ।

अजाया–अजाता, याऽतिरिक्तनिरवद्याहारपरित्यागविषया । आव० ६४१ ।

अजिओ–अजित, परीषहोपसर्गादिभिर्न जित, द्वितीयजिन, यस्मिन् गर्भे सति माता राज्ञाऽजिताऽत । आव० ५०२ ।

अजिणं–अजिनं, चर्म । सूत्र० ३०७, आचा० ७१ ।

अजिण्णओ–अजीर्णम् । आव० ३५२ ।

अजिम्हं–अमन्दम् । प्रश्न० ८४ ।

अजिम्ह–अमन्दे, भद्रभावतया निर्विकारत्वपले । जं० प्र० ११५ ।

अजियसंतित्थयं–अजितशान्तिस्तव. । आव० ६३८ ।

अजियसेणं–ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकर. । सम० १५३ ।

अजियसेणे–अजितसेन, अज्ञातोदाहरणे कौशाम्बीराजा । आव० ६१९ । अतीतोत्सर्पिणीकुलकर । सम० १५० । अलोभोदाहरणे श्रावस्त्यामाचार्य । आव० ७०१ । वसतपुरे नृप खड्गप्रमादिसैनिकशिक्षक । प्रज्ञा० ४४१ ।

अजियं–अपराजिता (आज्ञा) । आव० ५९६ ।

अजिया–अभिनन्दनजिनप्रवर्तिनीनाम । सम० १५२ ।

अजिरं–अङ्गणम् । प्रश्न० १३८ ।

अजीरं–अजरणम् । ओघ० ६३ ।

अजीरगं–अजीर्णत्वम् । आव० ६५५ ।

अजीरय–अजीर्णम् । भग० १९७ ।

अजीर्णम्–रोगविशेष । जीवा० २८४ ।

अजीव–अजीवाः, जीवविपरीतस्वरूपा । प्रज्ञा० ७ ।

अजीवअपच्चक्खाणकिरिया – यदजीवेषु–मद्यादिषु–प्रत्याख्यानात् कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया । ठाणा० ४१ ।

अजीवकरणं–अजीवभावकरणं, परप्रयोगमन्तरेणाभ्रादेर्ना-नावर्णान्तरगमनम् । आव० ४६४ ।

अजीवकिरिया–अजीवक्रिया, अजीवस्य–पुद्गलसमुदायस्य यत्कर्मतया परिणमनं सा अजीवक्रिया । ठाणा० ४० ।

अजीवणेसत्थिया–अजीवनैसृष्टिकी, यत्तु काण्डादीना धनुरा-दिभिः निसर्जनम् । ठाणा० ४३ ।

अजीवपाउसिया–अजीवप्राद्वेषिकी, अजीवस्योपरि प्रद्वेषाद्या क्रिया प्रद्वेषकरणमेव वा । भग० १८२ । अजीवे–पाषाणादौ स्खलितस्य प्रद्वेषात् । ठाणा० ४१ ।

अजीवपाओगियं–अजीवप्रायोगिकम्, अजीवप्रयोगेन नि-र्वृत्तं, जीवप्रायोगिकद्वितीयभेद । आव० ४५७ ।

अजीवपारिग्गहिया–अजीवपारिग्रहिकी, पारिग्रहिकीक्रियाया द्वितीयो भेद । आव० ६१२ ।

अजीवमिस्सिया–अजीवमिश्रिता, प्रभूतेषु मृतेषु स्तोकेषु जीवत्सु एकत्र राशीकृतेषु–अहो महानयं मृतो जीवराशिरिति भाषा । प्रज्ञा० २५६ ।

अजीवमीसए–अजीवानाश्रित्य मिश्रमजीवमिश्रं । ठाणा० । ४९० ।

अजीवमीसग–अजीवमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेदः । दश० २०९ ।

अजीववेयारणिया – पुरुषादिविप्रतारणबुद्ध्यैव वाऽजीवं भणत्येतादृशमेतदिति । ठाणा० ४३ ।

अजीवसामंतोवणिवाइया – अजीवसामन्तोपनिपातिकी, सामन्तोपनिपातिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः । आव० ६१३ ।

अजीवसाहत्थिया–यच्च स्वहस्तगृहीतेनैवाजीवेन–खड्गादिना जीवं मारयति सा अजीवस्वाहस्तिकी । ठाणा० ४२ ।

अजीवारंभिया – जीवकडेवराणि पिष्टादिमयजीवाकृतींश्च-वस्त्रादीन् वा आरभमाणस्य सा अजीवारभिकी । ठाणा० ४१ ।

अजुतं–अयुतम्, चतुरशीतिरयुताङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अजुतंगं – अयुताङ्गम्, चतुरशीतिरर्थनिकुरशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अजुत्तं–अयुक्तम्, अनुपपत्तिक्षमम्, सूत्रदोषविशेष । आव० ३७५ ।

अजुत्तो–अनुपयुक्तः । बृ० तृ० ६ आ ।

अजुरणया–शरीरापचयकारिशोकानुत्पादनेन । भग० ३०५ ।

अजो–अज, छगलको द्विखुरश्चतुष्पद । जीवा० ३८ ।

अजोगवं–अयोगवम्, वैश्याशूद्राभ्यां जातो वर्ण । आचा० ८ ।

अजोगी–अयोगी, निरुद्धयोग, शैलेश्या गतो ह्रस्वपञ्चाक्षरोद्गिरणमात्रकाल यावत्, भूतग्रामस्य चतुर्दशं गुणस्थानम् । आव० ६५० ।

अयोनिभूतम्–(अजोणिब्भूए), विध्वस्तयोनि, प्ररोहासमर्थम् । दश० १४० ।

अजोसिया–अजुष्टा, असेविता, क्षयं वा अवसायलक्षणमतीता । सूत्र० ७० ।

अज्झंहिज्जो–अद्यश्व- । आव० ७१५ ।

अज्ज–अद्य, आरब्ध, आर्यः । उत्त० ३६३ । आर्य-आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यात –प्राप्तो गुणैरित्यार्य । प्रज्ञा० ५ । भावाराधनयोगादारायातः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्य । दश० २८४ । आर्या–प्रशान्तरूपा चण्डिका । भग० १६४ । अद्य–सान्प्रतम् । ज० प्र० २४६, आचा० १५८ । आर्य–(गौतम) । आचा० १५८ । पापकर्मवहिर्भूतत्वेनापाप (क्षेत्रादिभेदेन नवधा) । ठाणा० २०८ ।

अज्जए–हरितविशेष । प्रज्ञा० ३३ ।

अज्जकण्हा–आर्यकृष्णा, आचार्या । उत्त० १७८ ।

अज्जकण्हो–आर्यकृष्ण, आचार्य । आव० ३२३ ।

अज्जकालका–नाम आयरिया । बृ० प्र० ३९ अ ।

अज्जकालगायरिए–चतुर्थीप्रवर्तको युगप्रधान । नि० चू० प्र० ३३९ आ ।

अज्जकालगो–आर्यकालकः । आव० ३६९ ।

अज्जकालय–प्रज्ञादृष्टान्त । (मर०)

अज्जखउडो–विद्यासिद्ध आचार्य । नि० चू० प्र० ३०४ अ, नि० चू० प्र० २७६ अ, नि० चू० प्र० १६ अ । आर्यखपुट, विद्यासिद्ध आचार्यविशेष । आव० ४११ ।

अज्जगो–आर्यक, वनस्पतिविशेष. लोके आजओ । जं० प्र० ४२४ । प्रत्येकवनस्पतिविशेष । नि० चू० द्वि० ६० अ ।

अज्जगोविंदो–आर्यगोविन्द, मिथ्योपस्थितायामुदाहरणम् । आव० ८६१ ।

अज्जचंदणा–आर्यचन्दना, आर्याविशेष, यस्या पार्श्वे मृगावत्या केवलोत्पत्ति । आव० ४८५, नि० चू० तृ० १३४ आ ।

अज्जत्ताए–आर्यतया, पापकर्मवहिर्भूतया अद्यतया वा अधुनातनतया वर्त्तमानकालतया । भग० ६५६ ।

अज्जपयं–आर्यपदम्, शुद्धधर्मपदम् । दश० २६९ ।

अज्जप्पभिई – अद्यप्रभृति, सम्यक्त्वप्रतिपत्तिकालादारभ्याद्य यावत् । आव० ८११ ।

अज्जभावे–आर्यभाव क्षायिकादिज्ञानादियुक्त । ठाणा० २०९ ।

अज्जमंगू–आर्यमङ्गु, ऋद्धिरससातगौरवदृष्टान्ते मथुरायामाचार्य. । आव० ५७९ । अवसन्नाचार्य । नि० चू० प्र० ३५१ अ । आचार्यातिसेवक. दुर्बलाऽऽचार्य । व्य० द्वि० १७४ आ ।

अज्जमणग–आर्यमणक, आर्यश्चासौ मणकश्चेति विग्रह, षण्मासैर्दशवैकालिकस्याध्येता । दश० २८४ ।

अज्जमहागिरि–स्थूलभद्रदत्तगणधारकाचार्य । नि० चू० प्र० २४३ अ ।

अज्जमहागिरी–आयरिओ । नि० चू० तृ० ४४ आ ।

अज्जमूलं–आर्यमूलम्, मातामहपादमूलम् । आव० ६८४ ।

अज्जय–आर्यक, पिता । उत्त० ९८ । आव० ३०५ । भग० ४७० । आव० ३५७ ।

अज्जयमंजरी–आर्यमञ्जरी । आव० १२५ ।

अज्जरक्खितो–मातृकानुज्ञाकृदाचार्य । नि० चू० द्वि० १०९ अ ।

अज्जरक्खिय–गोष्ठामाहिलप्रेषकाचार्य । नि० चू० प्र० ३३५ आ, १०१ आ । उज्जयिन्यामचेलकत्वे । (मर०) । आर्यरक्षित । विशे० १००२ । आचार्यविशेष । व्य० द्वि० ३१९ अ ।

अज्जव–आर्जवम्, परस्मिन्निकृतिपरेऽपि मायापरित्याग । दश० २६३ ।

अज्जवइरसामि–आर्यरक्षितविद्यागुरुः। नि० चू० प्र० १०१ आ।

अज्जवइरा–आर्यवैरा। विशे० ९२८। आर्यवज्र, वात्सल्योदाहरणे आर्य। दश० १०३।

अज्जवइरो–आर्यवैर। आव० २९५। आर्यवज्र, युगप्रधान। आव० ३०२। आर्यवैर, चैत्यभक्तिद्वारे'आचार्य। आव० ५३६।

अज्जवट्ठाणा–आर्जवम्, सवरभेदाः। ठाणा ३०२।

अज्जवे–आर्जवम्, ऋजुता योगसङ्ग्रहे दशमो योग। आव० ६६४।

अज्जसमिओ–आर्यसमित, सुनन्दाभ्राता। आव० २८९। आर्यसमित। उत्त० ३३३।

अज्जसमिया–आर्यसमिता, वज्रस्वामिनो मातुलाः। आव० ४१२।

अज्जसमुद्दा–आचार्यातिशेषानतिसेवि। व्य० द्वि० १४७ अ। नि० चू० प्र० १५१ अ।

(अज्जसा)–अजसा, प्रगुणेन न्यायेन। विशे० ७७९।

अज्जसामस्स–आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यात–प्राप्तो गुणैरित्यार्य स चासौ श्यामश्च आर्यश्याम, तस्मै। प्रज्ञा० ५।

अज्जसुनन्दा–आर्यसुनन्दा। उत्त० ३२१।

अज्जसुहत्थी–आर्यसुहस्ती, योगसग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते आर्यस्थूलभद्रस्य लघु शिष्य। आव० ६६८। स्थूलभद्रदत्तगणधारकाचार्य। नि० चू० प्र० २४३ अ। आयरिओ। नि० चू० तृ० ४४, वृ० द्वि० १५३ आ।

अज्जसुहम्मे–आर्यसुधर्मा, महावीरस्यान्तेवासी स्थविर। प्रश्न० १।

अज्जहिज्जो–अद्यह्य (श्व)। आव० ६९२।

अज्जा–तुलसीसमो वनस्पतिविशेष। भग० ८०२। मुनिसुव्रतजिनप्रवर्तिनीनाम। १५२। आर्या, सप्तचतु कलगणादिव्यवस्थानिबद्धा मात्राछन्दोरूपा। जं० प्र० १३८।

अज्जाकल्पं–आर्यानीतम्। (गणि०)

अज्जाघरे–आर्यागृहे। ठाणा० ३७२।

अज्जावेयव्वा–आज्ञापयितव्या। आचा० १७८।

अज्जासाढो–आर्याषाढ, स्थिरीकरणोदाहरणे उज्जयिन्यामार्याषाढ। दश० १०३। वत्सभूम्यामाचार्यविशेष। उत्त० १३३। आचार्य। आव० ३१५।

अज्जिए–आर्जिका, आर्यिका मातु. पितुर्वा माता। दश० २१६।

अज्जिया–पितामही मातामही वा। वृ० द्वि० ५८ आ। माउ पिउ वा जा माता सा। दश० चू० १०९।

अज्जिया–आर्यिका। आव० ७९३।

अज्जियालाभो–आर्यिकालाभ, आर्यिकाभ्यो लाभ। आव० ५३५।

अज्जुण–अर्जुन, वृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३२। अर्जुनाभिधानं यत्पाण्डुरस्वर्णम्। जं० प्र० २४२। बहुबीजविशेषः। भग० ८०३। चौरविशेष। व्य० द्वि० १७७ आ। तृणविशेष। प्रज्ञा० ३३।

अज्जुणए–अर्जुनक, राजगृहे मालाकारविशेष। अन्त० १८।

अज्जुणओ–अर्जुनक, राजगृहे मालाकार। उत्त० ११२।

अज्जुणगस्स–अर्जुनक, गोशालपरावर्तिस्थानम्। भग० ६७४।

अज्जुणमालाए–अर्जुनमालाकार, आक्रोशसह। (मर०)।

अज्जुणसुवण्णं–अर्जुनसुवर्णं, श्वेतकाञ्चनम्। औप० ११५।

अज्जुणस्स–गौतमगोत्रो गोशालगृहीतत्यक्तशरीर। भग० ६७३।

अज्जुणो–अर्जुन, सुघोषनगरनृपति। विपा० ९५।

अज्जुन्ने–गोशालकदिशाचर। भग० ६५९।

अज्जे–आर्य। उत्त० २८६। अद्य, आर्य, स्वामिन्। भग० १७६।

अज्जो–आर्य, पितामह, तीर्थकराणाम् प्रथम। आव० १६८। आर्य। आव० ७९३। श्रीवर्द्धमानस्वामी। जं० प्र० ५४१।

अज्जोत्ति–आरात्पापकर्मभ्यो याता आर्यास्तदामन्त्रणं हे आर्या। ठाणा० १३५।

अज्जोरुह–हरितविशेष। प्रज्ञा० ३३।

अज्झत्त–अध्यात्मम्, चेत। दश० १६।

अज्झत्थं–अध्यात्मम्, सुखदु खादि। आचा० ७६। आत्मविषय। जीवा० २४२। आत्मस्था मिथ्यात्वादय। उत्त० ४०२। अन्त करणम्। आचा० २९०। अध्यात्मम्। आचा० २०८। अध्यात्मक्रिया–यस्केनापि कथञ्चनाप्यपरिभूतस्य दौर्मनस्यकरणम्। ठाणा० ३१६। अध्यात्म–परिणाम। व्य० प्र० १८१आ। अध्यात्मम्–मन। ठाणा० ५५

अज्झत्थदंडे–अध्यात्मदण्ड , शोकाद्यभिभव.। प्रश्न० १४३।
अज्झत्थनिप्फन्नं–अध्यात्मनिष्पन्नम् , अध्यवसानोद्गतम्। दश० २२६।
अज्झत्थवयणं–अध्यात्मवचनम् , अभिप्रेतमर्थं गोपयितुकामस्य सहसा तस्यैव भणनम्। प्रश्न० ११८। यदन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्ध्याऽन्यद् बिभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव ब्रूते तत्। प्रज्ञा० २६७, आचा० ३८७।
अज्झत्थिए–अध्यात्मिक , अभ्यर्थित । विपा० ३८। अध्यात्मिक–आत्माश्रित । भग० ४६३। आध्यात्मिक–क्रियास्थानविशेष । सम० २५।
अज्झत्थिओ–आध्यात्मिकः, आत्मविषय, सङ्कल्पविशेष.। जीवा० २४२।
अज्झत्थियं–अध्यवसितं, सङ्कल्पम्। आव० ६६९। आध्यात्मिकं–अन्तःकरणोद्भवम्। सूत्र० ३११।
अज्झत्थीओ–अध्यात्मस्थ । आव० ६४९।
अज्झत्थेव–अध्यात्मन्येव, ब्रह्मचर्ये व्यवस्थित । आचा० २०८।
अज्झत्थो – आध्यात्मिक , आत्मन्यध्यध्यात्मं – तत्रभव दण्डविशेषः। सूत्र० ३०६।
अज्झप्पं–अध्यात्मं, सद्भावनारूढं चित्तमेव। प्रश्न० १३४। आध्यात्मिकं, आत्मन्यधीत्यध्यात्मं तत्र भवम्। आन्तरशक्तिजनितं सात्त्विक। सूत्र० १६७। आत्मानमधिकृत्यात्मालम्बनम्। प्रश्न० १२८। मन । सूत्र० ६५। अधि आत्मनि वर्त्तत इति अध्यात्मं–ध्यानम्। आव० ७७४। रूढितो मन । उत्त० ७। आत्मनि। उत्त० ६१८। चेत। आव० ५२५। धर्मध्यानादिकम्। सूत्र० २६९। मन.। आचा० २१९। आत्मनि। उत्त० ४६५। मन। उत्त० ५९१।
अज्झप्पजोग–अध्यात्मयोग। (महाप्र०)
अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते – अध्यात्मयोगमाधनयुक्त , अध्यात्मं–मनस्तस्य योगा – व्यापारा धर्मध्यानादयस्तेषा साधनानि एकाग्रतादीनि तैर्युक्त.। उत्त० ५९१।
अज्झप्पज्झाणं–अध्यात्मध्यानं, अमुकोऽहं अमुककुले अमुगसिस्से अमुगधम्मट्ठाणठिइए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम्। प्रश्न० १२८।
अज्झप्परए–अध्यात्मरतः, प्रशस्तध्यानासक्त। दश० २६७।
अज्झप्पसंवुडे–अध्यात्मसवृत, स्त्रीभोगादत्तमना. सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोग । आचा० २१९।
अज्झप्पे–अध्यात्मनि, आन्तरम्। सूत्र० २३०।
अज्झयणं–अध्ययनम् , विशिष्टार्थध्वनिसन्दर्भरूपम्। जीवा० ४। ठाणा० ६। पाठः। आव० ७३२, विशे० ४५०। सज्झाओ। दश० चू० १२५। स्वस्वभावे आनीयतेऽनेनेति आनयनं प्रस्तावादात्मन , निरुक्तविधिना। उत्त० ६। निरुक्तविधिनाऽर्थनिर्देशपरत्वाद्वाऽस्य अयतेरेतेर्वाऽधिपूर्वस्य। उत्त० ७। नाम। सूर्य० ९, १४६। आव० ७१५। अध्यात्मानयनाच्चेतसो विशुद्धयापादनात्। दश० १३८। अनेन करणभूतेन साधुर्बोधसयममोक्षान् प्रत्यधिकं गच्छति यस्मादेवं तस्मादध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं, अधिगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते वा अर्था अनेनेत्यधिगमनमेव प्राकृतशैल्या तथाविधार्थप्रदर्शकत्वाच्चास्य वचसोऽध्ययनमिति, अधिक नयनमधिकनयनं चाध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं–अध्ययनश्रुतनाम। दश० १६। शास्त्रम्। दश० २८४।
अज्झयणछक्कं–अध्ययनषट्कं। विशे० ४१५।
अज्झल–म्लेच्छविशेष.। प्रज्ञा० ५५।
अज्झवसाए–अध्यवसाय , सूक्ष्मो मन परिणामसमुत्थ । आचा० ६८। सूक्ष्म आत्मन परिणामविशेष.। आचा० ३१।
अज्झवसाणं–अध्यवसानं, अन्त करणप्रवृत्ति । सूत्र० ३४०। मनोविशेष । औप० ९९। जीवा० १३०। अन्त.करणसव्यपेक्षम्। आव० १८४। रागस्नेहभयभेदानि 'अध्यवसानानि। आव० २७२। अध्यवसाया । प्रज्ञा० ५४३। श्रवणविधिक्रियाप्रयत्नविशेषरूपम्। औप० ६०। मन एकाग्रतालम्बनम्। आव० ५८३। रागस्नेहभयात्मकोऽध्यवसाय । ठाणा० ४००। विशे० ८४२।
अज्झवसाणावरणिज्जाणं–भावचारित्रावरणीयानि। भग० ४३३।
अज्झवसाणेहिं–अध्यवसानै , मन परिणामै । जं० प्र० २७९।
अज्झवसिए–अध्यवसितम् , परिभोगक्रियासपादनविषयम्। भग० ८९। अध्यवसानम् , प्रयत्नविशेष । भग० ८९।
अज्झवसियं–अध्यवसित, क्रियासंपादनविषयम्। औप० ६०

अज्झवस्संति–अध्यवस्यत । दश० ३५ ।
अज्झाइतं–अधीतम् । आव० ३४७ ।
अज्झाय–अध्ययनम् । विशे० ५०६ । अध्याय । भग० ४ । कुवुद्धीनां मन पीडानां वा आयः । भग० ४ । पाठ । उत्त० ७१३ । शास्त्रोऽंगविशेष । आव० ६८ । अध्ययनानि । उत्त० ७१२ ।
अज्झारुहो–अध्यारुह, वृक्षयोनिकेषु वृक्षेषु कर्मोपादान-निष्पादितेषु उपर्युपरि अध्यारोहतीति, वृक्षोपरिजातो वृक्ष, वल्लीवृक्षाभिधान कामवृक्षाभिधानो वा वृक्ष । सूत्र० ३५२ ।
अज्झावसित्त–अभ्युष्येति । ठाणा० ३५१ ।
अज्झियगं–उपयाचितक । बृ० तृ० ७४ आ ।
अज्झीणं–अक्षीणम् । विशे० ४५० । अक्षीणश्रुतनाम । दश० १६ । यद्दीयमानं न क्षीयते स्म तद् अक्षीणम् । ठाणा० ६ ।
अज्झुववातो–अगमगमणामवणे वि (आसक्ति) । नि० चू० द्वि० ७१ आ ।
अज्झुसिरं–अशुषिरम्–अग्गंथिला दशिका निषद्या च । ओघ० २१४ ।
अज्झुसिरे–तृणादिच्छन्नं न । ओघ० १२३ ।
अज्झुसिरो–गृहिसीवनिकारहितः प्रतिथिग्गलरहितो वा । बृ० द्वि० २५२ आ ।
अज्झोअर–अध्यवपूरकम्, स्वार्थमूलाद्ग्रहणप्रक्षेपरूपम् । दश० १७४ । नि० चू० प्र० १४२ आ ।
अज्झोयरए इ–भोजनदोष । भग० ४६६ । स्वार्थमूलाद्ग्रहणे .साध्वाद्यर्थं कणप्रक्षेपणमध्यवपूरक । ठाणा० ४६० ।
अज्झोवगमियाए–आभ्युपगमिकी, प्रव्रज्याप्रतिपत्तितो ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशलुञ्चनादीनामङ्गीकारेण निर्वृता वेदना । भग० ६५ ।
अज्झोववज्जंति–अध्युपपद्यन्ते–तदेकचित्ता भवन्तीति तद्-र्जनाय वाधिक्येनोपपद्यन्ते उपपन्ना घटमाना । ठाणा० २९२ ।
अज्झोववज्जणं–अध्युपपादन, क्वचिदिन्द्रियार्थेऽध्युपपत्तिर-भिष्वङ्ग । ठाणा० १७४ ।
अज्झोवज्जिज्ज–अभ्युपपद्येत, अभिष्वङ्गं कुर्यात् । दश० ४५ ।
अज्झोववण्णं–अध्युपपन्न, विषयपरिभोगायत्तजीवितः । आचा० ७८ ।
अज्झोववण्णो–अध्युपपन्न, आसक्तः । ओघ० १९४ । अध्युपपन्न । आव० ३५९, ९२ ।
अज्झोववन्नं–अध्युपपन्न, आसक्त । दश० ४५ । अप्राप्ताहारचिन्तामाधिक्येनोपपन्न । भग० ६५० ।
अज्झोववन्ने–अध्युपपन्न, तदेकाग्रता गत । भग० २९२ । मूर्च्छित । विपा० ३८ ।
अज्झोववन्नो–अध्युपपन्नः । आव० ३९९ ।
अज्झोववाय–अध्युपपात, ग्रहणैकाग्रचित्तता । प्रश्न० १५३ ।
अज्झोवात–अध्युपपात –श्रद्धा । व्य० प्र० २१७ आ ।
अझंझपत्ते–अझञ्झाप्राप्त, अकलहप्राप्त सम्यग्दृष्टिर्वा । सूत्र० २३४ । वीतराग । सूत्र० २३५ ।
अज्ञातोञ्छवृत्ति–(अन्नाउञ्छवित्ती), कुले कुले भिक्षणम् । उत्त० ४०४ ।
अज्ञानम्–अनाभोग, अननुस्मरणं वा । दश० १७९ ।
अट्टं–आर्त्तम्, सङ्क्लिष्टाध्यवसाय । दश० चू० १४ । ऋतस्य पीडितस्येदं वचनमिति कृत्वा । अधर्मद्वारस्य षोडशनाम । प्रश्न० २६ । आर्त्तध्यान – शोकाक्रन्दनविलपनादिलक्षणं ध्यानम् । आव० ५८२ ।
अट्टट्टहासं–अट्टाट्टहास्यम् । आव० १९१ ।
अट्टट्टहासो–अट्टट्टहास । आव० ८३० ।
अट्टणसाला–व्यायामशाला । भग० ५४२ । अट्टनशाला । औप० ६५ ।
अट्टणे–अट्टन, योगसङ्ग्रहे आलोचनादृष्टान्ते उज्जयिन्यां मल्लविशेष । आव० ६६४ ।
अट्टणो–अट्टनः, उज्जयिन्या जितशत्रुराजमल्ल । उत्त० १९२ ।
अट्टदुहट्टवसट्टे–आर्त्तदु खार्त्तवशार्त्त । उत्त० ३३१ ।
अट्टदुहट्टा–आर्त्तदु खस्थिता, आर्त्तदु खार्त्ता । आव० ३९५ ।
अट्टदुहट्टो–आर्त्तदु खार्त्त । आव० ३८८ ।
अट्टनियट्टियचित्ता–आर्त्तनिर्वर्त्तितचित्ताः, आर्त्तं निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते तथा, आर्त्ताद्वा निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते । भग० १२१ ।
अट्टमगा–अभिमारका । नि० चू० द्वि० ११ अ ।
अट्टमट्टाइ–अर्दवितर्द । उप० गा० ४८६ ।
अट्टवसट्टा–आर्त्तवशार्त्ता । आव० ३८८ ।

अज्झत्थदंडे–अध्यात्मदण्ड., शोकाद्यभिभव. । प्रश्न० १४३ ।

अज्झत्थनिप्फन्नं–अध्यात्मनिष्पन्नम्, अध्यवसानोद्गतम् । दश० २२६ ।

अज्झत्थवयणं–अध्यात्मवचनम्, अभिप्रेतमर्थं गोपयितुकामस्य सहसा तस्यैव भणनम् । प्रश्न० ११८ । यदन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्धयाऽन्यद् विभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव ब्रूते तत् । प्रज्ञा० २६७, आचा० ३८७ ।

अज्झत्थिए–अध्यात्मिक, अभ्यर्थित । विपा० ३८ । अध्यात्मिक.–आत्माश्रित. । भग० ४६३ । आध्यात्मिक – क्रियास्थानविशेष. । सम० २५ ।

अज्झत्थिओ–आध्यात्मिक', आत्मविषय', सङ्कल्पविशेष. । जीवा० २४२ ।

अज्झत्थियं–अध्यवसितं, सङ्कल्पम् । आव० ६६९ । आध्यात्मिकं–अन्तःकरणोद्भवम् । सूत्र० ३११ ।

अज्झत्थीओ–अध्यात्मस्थ' । आव० ६४९ ।

अज्झत्थेव–अध्यात्मन्येव, ब्रह्मचर्ये व्यवस्थितः । आचा० २०८ ।

अज्झत्थो – आध्यात्मिकः, आत्मन्यध्यध्यात्मं – तत्रभव. दण्डविशेषः । सूत्र० ३०६ ।

अज्झप्पं–अध्यात्मं, सद्भावनारूढं चित्तमेव । प्रश्न० १३४ । आध्यात्मिकं, आत्मन्यधीत्यध्यात्मं तत्र भवम् । आन्तरशक्तिजनितं सात्त्विक । सूत्र० १६७ । आत्मानमधिकृत्यात्मालम्बनम् । प्रश्न० १२८ । मनः । सूत्र० ६५ । अधि आत्मनि वर्त्तत इति अध्यात्म–ध्यानम् । आव० ७७४ । रूढितो मन । उत्त० ७ । आत्मनि । उत्त० ६१८ । चेत' । आव० ५२५ । धर्मध्यानादिकम् । सूत्र० २६९ । मनः । आचा० २१९ । आत्मनि । उत्त० ४६५ । मन' । उत्त० ५९१ ।

अज्झप्पजोग–अध्यात्मयोगः । (महाप्र०)

अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते – अध्यात्मयोगसाधनयुक्त, अध्यात्मं–मनस्तस्य योगा – व्यापारा धर्मध्यानादयस्तेषां साधनानि एकाग्रतादीनि तैर्युक्तः । उत्त० ५९१ ।

अज्झप्पज्झाणं–अध्यात्मध्यानं, अमुकोऽहं अमुककुले अमुगसिस्से अमुगधम्मट्ठाणठिइए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम् । प्रश्न० १२८ ।

अज्झप्परए–अध्यात्मरत, प्रशस्तध्यानासक्त । दश० २६७ ।

अज्झप्पसंवुडे–अध्यात्मसवृत', स्त्रीभोगादत्तमना' सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोग । आचा० २१९ ।

अज्झप्पे–अध्यात्मनि, आन्तरम् । सूत्र० २३० ।

अज्झयणं–अध्ययनम्, विशिष्टार्थध्वनिसन्दर्भरूपम् । जीवा० ४ । ठाणा० ६ । पाठ. । आव० ७३२, विशे० ४५० । सज्झाओ । दश० चू० १२५ । स्वस्वभावे आनीयतेऽनेनेति आनयनं प्रस्तावादात्मन', निरुक्तविधिना । उत्त० ६ । निरुक्तविधिनाऽर्थनिर्देशपरत्वाद्वाऽस्य अयतेरेतेर्वाऽधिपूर्वस्य । उत्त० ७ । नाम । सूर्य० ९, १४६ । आव० ७१५ । अध्यात्मानयनाच्चेतसो विशुद्धयापादनात् । दश० १३८ । अनेन करणभूतेन साधुर्बोधसंयममोक्षान् प्रत्यधिकं गच्छति यस्मादेवं तस्मादध्ययनम् । दश० १६ । अध्यात्मानयनं, अधिगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते वा अर्था अनेनेत्यधिगमनमेव प्राकृतशैल्या तथाविधार्थप्रदर्शकत्वाच्चास्य वचसोऽध्ययनमिति, अधिकं नयनमधिकनयनं चाध्ययनम् । दश० १६ । अध्यात्मानयनं–अध्ययनश्रुतनाम । दश० १६ । शास्त्रम् । दश० २८४ ।

अज्झयणछक्कं–अध्ययनषट्कं । विशे० ४१५ ।

अज्झल–म्लेच्छविशेष. । प्रज्ञा० ५५ ।

अज्झवसाए–अध्यवसाय, सूक्ष्मो मन'परिणामसमुत्थ' । आचा० ६८ । सूक्ष्म आत्मनः परिणामविशेष' । आचा० ३१ ।

अज्झवसाणं–अध्यवसानं, अन्त करणप्रवृत्ति' । सूत्र० ३४० । मनोविशेषः । औप० ९९ । जीवा० १३० । अन्त करणसव्यपेक्षम् । आव० १८४ । रागस्नेहभयभेदानि अध्यवसानानि । आव० २७२ । अध्यवसाया' । प्रज्ञा० ५४३ । श्रवणविधिक्रियाप्रयत्नविशेषरूपम् । औप० ६० । मन एकाग्रतालम्बनम् । आव० ५८३ । रागस्नेहभयात्मकोऽध्यवसाय. । ठाणा० ४०० । विशे० ८४२ ।

अज्झवसाणावरणिज्जाणं–भावचारित्रावरणीयानि । भग० ४३३ ।

अज्झवसाणेहिं–अध्यवसानै', मन परिणामै । जं० प्र० २७९ ।

अज्झवसिए–अध्यवसितम्, परिभोगक्रियासपादनविषयम् । भग० ८९ । अध्यवसानम्, प्रयत्नविशेष. । भग० ८९ ।

अज्झवसियं–अध्यवसित, क्रियासपादनविषयम् । औप० ६०

अज्झवस्संति–अध्यवस्यत । दश० ३५ ।

अज्झाइतं–अधीतम् । आव० ३४७ ।

अज्झाय–अध्ययनम् । विशे० ५०६ । अध्याय । भग० ४ । कुबुद्धीना मन.पीडाना वा आयः । भग० ४ । पाठ । उत्त० ७१३ । शास्त्रोऽगविशेष. । आव० ६८ । अध्ययनानि । उत्त० ७१२ ।

अज्झारुहो–अध्यारुह , वृक्षयोनिकेषु वृक्षेपु कर्मोपादाननिष्पादितेषु उपर्युपरि अध्यारोहतीति, वृक्षोपरिजातो वृक्ष , वल्लीवृक्षाभिधान कामवृक्षाभिधानो वा वृक्ष । सूत्र० ३५२ ।

अज्झावसित्त–अध्युष्येति । ठाणा० ३५१ ।

अज्झियगं–उपयाचितक । बृ० तृ० ७४ आ ।

अज्झीणं–अक्षीणम् । विशे० ४५० । अक्षीणश्रुतनाम । दश० १६ । यद्दीयमानं न क्षीयते स्म तद् अक्षीणम् । ठाणा० ६ ।

अज्झुववातो–अगमगमणामवणे वि (आमक्ति) । नि० चू० द्वि० ७१ आ ।

अज्झुसिरं–अशुषिरम्–अगंथिला दशिका निषया च । ओघ० २१४ ।

अज्झुसिरे–तृणादिच्छन्नं न । ओघ० १२३ ।

अज्झुसिरो – गृहिसीवनिकारहित प्रतिथिग्गलरहितो वा । बृ० द्वि० २५२ आ ।

अज्झोअर – अध्यवपूरकम् , स्वार्थमूलाद्ग्रहणप्रक्षेपरूपम् । दश० १७४ । नि० चू० प्र० १४२ आ ।

अज्झोयरए इ–भोजनदोष । भग० ४६६ । स्वार्थमूलाद्ग्रहणे .माध्वाद्यर्थं कणप्रक्षेपणमध्यवपूरक । ठाणा० ४६० ।

अज्झोवगमियाए – आभ्युपगमिकी, प्रव्रज्याप्रतिपत्तितो ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशलुञ्चनादीनामङ्गीकारेण निर्वृता वेदना । भग० ६५ ।

अज्झोववज्जंति–अध्युपपद्यन्ते–तदेकचित्ता भवन्तीति तदर्जनाय वाधिक्येनोपपद्यन्ते उपपन्ना घटमाना । ठाणा० २९२ ।

अज्झोववज्जणं–अध्युपपादनं, क्वचिदिन्द्रियार्थेऽध्युपपत्तिरभिष्वङ्ग । ठाणा० १७४ ।

अज्झोवज्जिज्ज–अभ्युपपद्येत, अभिष्वङ्गं कुर्यात् । दश० ४५ ।

अज्झोववण्णं – अध्युपपन्न, विषयपरिभोगार्थत्तजीवित. । आचा० ७८ ।

अज्झोववण्णो–अध्युपपन्न, आसक्त । ओघ० १९४ । अध्युपपन्न । आव० ३५९, ९२ ।

अज्झोववन्नं–अध्युपपन्न , आसक्त । दश० ४५ । अप्राप्ताहारचिन्तामाधिक्येनोपपन्न । भग० ६५० ।

अज्झोववन्ने–अध्युपपन्न , तदेकाग्रता गतः । भग० २९२ । मूर्च्छित । विपा० ३८ ।

अज्झोववन्नो–अध्युपपन्नः । आव० ३९९ ।

अज्झोववाय–अध्युपपात., ग्रहणैकाग्रचित्तता । प्रश्न० १५३ ।

अज्झोवात–अध्युपपात –श्रद्धा । व्य० प्र० २१७ आ ।

अझंझपत्ते – अझञ्झाप्राप्त , अकलहप्राप्त सम्यग्दृष्टिर्वा । सूत्र० २३४ । वीतराग । सूत्र० २३५ ।

अञ्ञातोञ्छवृत्ति–(अन्नाउञ्छवित्ती), कुले कुले भिक्षणम् । उत्त० ४०४ ।

अञ्ञानम्–अनाभोगः, अननुस्मरणं वा । दश० १७९ ।

अट्टं–आर्त्तम्, सक्लिष्टाध्यवसाय । दश० चू० १४ । ऋतस्य पीडितस्येदं वचनमिति कृत्वा । अधर्मद्वारस्य षोडशनाम । प्रश्न० २६ । आर्त्तध्यान – शोकाक्रन्दनविलपनादिलक्षणं ध्यानम् । आव० ५८२ ।

अट्टट्टहासं–अट्टाट्टहास्यम् । आव० १९१ ।

अट्टट्टहासो–अट्टट्टहास । आव० ८३० ।

अट्टणसाला–व्यायामशाला । भग० ५४२ । अट्टनशाला । औप० ६५ ।

अट्टणे–अट्टन , योगसङ्ग्रहे आलोचनादृष्टान्ते उज्जयिन्यां मल्लविशेष । आव० ६६४ ।

अट्टणो–अट्टन , उज्जयिन्या जितशत्रुराजमल्ल । उत्त० १९२ ।

अट्टदुहट्टवसट्टे–आर्त्तदु.खार्त्तवशार्त्त । उत्त० ३३१ ।

अट्टदुहट्टा–आर्त्तदु खस्थिता , आर्त्तदु खार्त्ता. । आव० ३९५ ।

अट्टदुहट्टो–आर्त्तदु खार्त्त । आव० ७८८ ।

अट्टनियट्टियचित्ता–आर्तनिर्वर्त्तितचित्ता , आर्त्तं निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते तथा, आर्त्ताद्वा निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते । भग० १२१ ।

अट्टमगा–अभिमारका । नि० चू० द्वि० ११ अ ।

अट्टमट्टाइ–अर्दवितर्द । उप० गा० ४८६ ।

अट्टवसट्टा–आर्त्तवशार्त्ता । आव० ३८८ ।

अट्टहासं-अट्टट्टहासम्। आव० ६३४।
अट्टा-आर्ताः, दुखिनः रागद्वेषोदयेन। आचा० १८३।
अट्टाल-प्राकारसम्बन्धिन्यट्टालादौ। आचा० ४११।
अट्टालकं-प्राकारकोष्ठकोपरिवर्त्ति आयोधनस्थानम्। उत्त० ३११।
अट्टालक-अट्टालकः, प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषः। जीवा० १५९।
अट्टालका-प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषा। सम० १३७।
अट्टालगं-अट्टालक। जीवा० १६९।
अट्टालग-अट्टालक., प्राकारोपरिवर्त्ती आश्रयविशेष.। प्रश्न० ८। अट्टालकम्, प्राकारोपर्याश्रयविशेषः। भग० २३८।
अट्टालगा-पागारस्स अहे अट्ठहत्थो मग्गो। नि० चू० प्र० २६५ अ।
अट्टालगो-अट्टालक', प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेष'। जीवा० २५८।
अट्टालयं-अट्टालकं। आव० ६७५।
अट्टालय-अट्टालका, प्राकारस्योपरिवर्त्त्याश्रयविशेषा'। जं० प्र० ७६, १०६। औप ३। प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषाः। प्रज्ञा० ८६। प्राकारस्योपर्याश्रयविशेष.। जीवा० २७९।
अट्टालयसंठिओ-अट्टालकसंस्थितः। जीवा० २७९।
अट्टे झाणे-ध्यानस्य प्रथमो भेद। भग० ९२३।
अट्टो-आर्त्त, मनसा। विपा० ४१।
अट्ठं-अर्थ.। आव० ७९३।
अट्ठ-अर्थान्, वर्णादीन्। जं० प्र० ९८। अर्थाय। उत्त० ३६०।
अट्ठकरणं-अर्थकरणं, अर्थाभिनिर्वर्त्तकमधिकरण्यादि येन द्रम्मादि निष्पाद्यते। अर्थार्थं वा करणं, यत्र राज्ञोऽर्थाश्चिन्त्यन्ते। अर्थ एव वा तैस्तैरुपायै' क्रियत इति। उत्त० १९५।
अट्ठखंभसतसंनिविट्ठा-अष्टोत्तरस्तम्भशतसन्निविष्टा, सभाविशेष। आव० ३४२।
अट्ठग-अष्टकः। ओघ० १४४। अष्टकम्-चतुर्विंशत्यधिकशतसत्कभागाष्टकप्रमाणम्। सूर्य० २३८।
अट्ठगुणाए-अष्टगुणया। आव० ६३।
अट्ठगुणे-अष्टगुणा.। ठाणा० ३९४।
अट्ठजायं-अर्थकार्या अर्थिकार्या अर्थप्रयोजना वा। बृ० तृ० २४२ अ।
अट्ठजुत्तं-अर्थयुक्तं-अर्थते-गम्यत इत्यर्थस्तेन युक्तमन्वितम्। उत्त० ४६।
अट्ठट्ठमियं-अष्टाष्टमिका, भिक्षुप्रतिमाविशेष'। अन्त० २९।
अट्ठट्ठमिया-अष्टावष्टमानि। सम० ७७। अष्टावष्टमम्। ठाणा० ४४०।
अट्ठपयंति-अनुभागसंक्रमस्वरूपनिर्द्धारणम्। ठाणा० २२२।
अट्ठपिट्ठपुट्ठा(निट्ठिया)-अष्टवारपिष्टप्रदाननिष्पन्ना। जीवा० ३५१।
अट्ठपिट्ठणिट्ठिया-अष्टपिष्टनिष्ठिता, अष्टभि शास्त्रप्रसिद्धै पिष्टैर्निष्ठिता। प्रज्ञा० ३६४।
अट्ठफास-अष्टस्पर्शम्, बादरपरिणामम्। भग० ९६।
अट्ठभाइया-अष्टमभागमात्रो मानविशेष। भग० ३१३।
अट्ठट्ठमंगलए-अष्टमङ्गलकानि, अष्टेति सख्याशब्द', अष्टमङ्गलकानीति चाखण्ड सज्ञाशब्द.। जं० प्र० १९२।
अट्ठमभत्तं-अष्टमभक्तम्, त्रिरात्रोपवास। आव० २२८। समयपरिभाषयोपवासत्रय, यद्वाऽष्टमभक्तमिति सान्वयं नाम, तच्चैवम्-एकैकस्मिन् दिने द्विवारभोजनौचित्येन दिनत्रयस्य षण्णा भक्तानामुत्तरपारणकदिनयोरेकैकस्य भक्तस्य च त्यागेनाष्टमं भक्त त्याज्यं यत्र। ज० प्र० १९७। उपवासत्रयस्य सज्ञा। जं० प्र० ११८।
अट्ठमभत्तिआ-अष्टमभक्तिका, दिनत्रयमनाहारिण। जं० प्र० २३९।
अट्ठमेणं-अष्टमेन, उपवासत्रयलक्षणेन। ज० प्र० १५१।
अट्ठय-तलं। आव० ६४३।
अट्ठरससंपउत्त-अष्टमी रसः शृङ्गारादिभिः सम्यक् प्रकर्षेण युक्तम्। जं० प्र० ३९।
अट्ठसइआहिं-अर्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभि, अथवा अर्थाना-इष्टकार्याणा शतानि याभ्यस्ता अर्थशतास्ता एवार्थशतिका.। जं० प्र० १४३, भग० ४८२।
अट्ठसते-अष्टशतं। आव० ३४२।
अट्ठसयं-अष्टाधिकं शतम्। ज० प्र० ६०।
अट्ठसयंसिओ-अष्टशतास्रिक'। आव० ३४२।

अट्ठसहस्सं–अष्टसहस्रम्, अष्टोत्तरं सहस्रम्। जं० प्र० ४१०।

अट्ठसहस्सवरकंचणसलागा–अष्टौ सहस्राणि–अष्ट सहस्रसङ्ख्याका वरकाञ्चनशलाका–वरकाञ्चनमय्य शलाका येषु तानि। जं० प्र० ५९।

अट्ठसिरे–अष्टशिराः, अष्टकोणः। औप० १०।

अट्ठसोवण्णिअं–अष्टसुवर्णा मानमस्येत्यष्टसौवर्णिकं, सुवर्णमानमिदम्–चत्वारि मधुरतृणफलान्येकः श्वेतसर्षपः, षोडश श्वेतसर्षपा एकं धान्यमाषफलं, द्वे धान्यमाषफले एका गुञ्जा, पञ्च गुञ्जा एकः कर्ममाषकः, षोडश कर्ममाषकाः एकः सुवर्णः। जं० प्र० २२६।

अट्ठा–अर्थक्रिया, अर्थाय यत्करणम्, क्रियायाः प्रथमो भेदः। आव० ६४८।

अट्ठाणं–अस्थानम्, अयुक्तं, असाम्प्रतं वा। सूत्र० १६०। शब्दप्रतिबद्धावसतिः। बृ० तृ० १९७ आ।

अट्ठाणट्ठवणा–अस्थानस्थापना–गुर्वग्रहादिके अस्थाने प्रत्युपेक्षितोपधेः स्थापनं–निक्षेपः। ठाणा० ३६२।

अट्ठादंडे–अर्थाय–शरीरस्वजनधर्मादिप्रयोजनाय दण्डः–त्रसस्थावरहिंसा। सम० २५।

अट्ठावय–(अष्टापदः) पर्वतविशेषः। आव० ८२७।

अट्ठापदं–अर्थापदम्। आव० ३५२।

अट्ठारसवंको–अष्टादशवक्रः, अष्टादशसरिको हारः। आव० ६८१।

अट्ठारसवंजणाउलं–अष्टादशव्यञ्जनाकुलम्। सूर्य० २९३। ठाणा० ११७।

अट्ठावए–अष्टापदम्, द्युतम्, अर्थपदं वा। दश०-११७।

अट्ठावओ–पर्वतविशेषः। आव० १४८।

अट्ठावयं–अष्टापदम्। जीवा० २७६। अर्थपदम्। आव० ४१२। शारिफलकद्यूतं तद्विषयकलाम्। जं० प्र० १३७। द्यूतफलकम्। प्रश्न० ८४। पर्वतविशेषः। आव० १५१। द्यूतक्रीडाविशेषः। सूत्र० १८१। द्यूतफलकं, कैलाशः पर्वतविशेषो वा। प्रश्न० ७०। अष्टापदः, पर्वतविशेषः। आव० ८२७। द्यूतफलकम्। जं० प्र० ११४।

अट्ठावयसेलसिहरंसि–अष्टापदशैलशिखरे। जं० प्र० १५८।

अट्ठाहिअं–अष्टाहिकाम्, अष्टानामह्ना–दिवसानां समाहारोऽष्टाहं तदस्ति यस्यां महिमायां सा अष्टाहिका ताम्। जं० प्र० १६३।

अट्ठाहिया–अष्टाहिका, महामहिमाविशेषः। जीवा० ३६५। जं० प्र० ४२३।

अट्ठि–अस्थि, कीकशम्। प्रश्न० ८, भग० १३५।

अट्ठिकच्छभा–ये अस्थिबहुलाः कच्छपास्ते अस्थिकच्छपाः। प्रज्ञा० ४४।

अट्ठिकच्छभो–अस्थिकच्छपः, कच्छपविशेषः। जीवा० ३६।

अट्ठिकरकम्–तन्दुलोदकम्। दश० १७७।

अट्ठिखंडं–अस्थिखण्डं। आव० ३६९।

अट्ठिग–अस्थिकम्–कीकसम्। भग० ३०८।

अट्ठिचम्मावणद्धे–अस्थिचर्मावनद्धम्, अस्थीनि चर्मावनद्धानि यस्य। भग० १२५।

अट्ठिज्झामे–अस्थिध्यामम्, अस्थि च तद् ध्यामं च–अग्निना ध्यामलीकृतं–आपादितपर्यायान्तरम्। भग० २१३।

अट्ठितगामं–अस्थिकग्रामम्, पूर्वं वर्द्धमानकनामकम्। आव० १८९।

अट्ठिभंजणं–अस्थिभञ्जनम्, कीकसामर्द्दनम्। प्रश्न० २२।

अट्ठिमिंज–अस्थिमिञ्जः–त्रीन्द्रियजीवविशेषः। उत्त० ६९५।

अट्ठिमिंजा–अस्थिमिञ्जा, अस्थिमध्यम्। सूत्र० ४०८। भग० ५२६।

अट्ठिय–आर्थिकः, अर्यतः इत्यर्थः–मोक्षः, स प्रयोजनमस्येति अर्थः स एव प्रयोजनरूपोऽस्यास्तीति। उत्त० ६५।

अट्ठियकट्ठुट्ठियं–अस्थिकाष्ठोत्थितम्। उत्त० ३२९।

अट्ठियगामं–अस्थिकग्रामं–श्रीवीरस्य प्रथमचातुर्मासग्रामः। भग० ६६१।

अट्ठिलग्गो–मुष्टिं कृत्वा। आव० ६९०।

अट्ठिलगो–अस्थि (बीजम्)। नि० चू० प्र० ५६ आ।

अट्ठिसरक्खा–अस्थिसरजस्का–कापालिका। व्य० द्वि० २७३ आ।

अट्ठिसेणा–वत्सगोत्रान्तर्गतं गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अट्ठि–अस्थि–मज्जा। अनुत्त० ५। एट्ठसरक्खा। नि० चू० द्वि० १७२ अ।

अट्ठुप्पत्ती–ववहारो। नि० चू० तृ० १०१ अ।

अट्ठे–अर्थः, भावः। भग० ३८।

अट्टेति–निवसति । नि० चू० द्वि० ६२ आ ।

अट्ठो–अर्थित्वं च धर्मे. । आव० ३४१ । अर्थ –विज्ञानम् । सूत्र० ३९८ । अर्थेन इत्यर्थो मोक्षः । उत्त० ६५ ।

अट्टियकप्पा–मध्यमजिनाना महाविदेहजिनानां वा साधव । बृ० तृ० २५४ आ ।

अडंडिमकुदंडिमं–अदण्डिमकुदण्डिमम् , दण्डो निग्रहस्तेन निर्वृत्तं राजदेयतया व्यवस्थापित दण्डिमं, कुदण्ड –असम्यग्निग्रहस्तेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिम, ते अविद्यमाने यत्र प्रमोदे स । विपा० ६३ ।

अडडं – चतुरशीतिरडडाङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अडडंगं–अडडाङ्ग, चतुरशीतिस्त्रुटितशतसहस्राणि । जीवा० ३४६ । सख्याविशेष । ठाणा ८६ । भग० ८८८ । अडडाङ्ग., सख्याविशेष. । सूर्य० ९१ ।

अडडाति–सख्याविशेष. । ठाणा० ८६ ।

अडडे–अडड , सख्याविशेष. । सूर्य० ९१ । भग० २१०, २७५, ८८८ ।

अडयालं–अष्टचत्वारिंशत् , प्रशस्तं वा । जीवा० १६० । अडयालशब्दो देशीवचनत्वात् प्रशंसावाची । प्रज्ञा० ८६ । देशीशब्द. प्रशसावाची अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तय कृता वनमाला येषु तानि । जं० प्र० ७६ ।

अडयालकोट्ठगरइय – अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविचित्रच्छन्दगोपुररचितानि । सम० १३८ ।

अडयालकोट्ठरइयं–अष्टचत्वारिंशत्कोष्ठकरचितम् , अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तिकलिता कोष्ठका –अपवरका रचिता –स्वयमेव रचना प्राप्ता येषु तत् । प्रशस्तकोष्ठकरचित वा । जीवा० १६० ।

अडयालिय (ल)–शब्द. किल प्रशंसावाचक । सम० १३८ ।

अडविंगतो–देस देसेण हिंडइ । व्य० प्र० १६२ अ ।

अडविणीहुत्तं – अटवीनि सृतम् , अरण्याभिनिष्क्रान्तम् । उत्त० ३७५ ।

अडविमिगी–अटवीमृगी । आव० ३९२ ।

अडवी – अटवी, अटव्यो–दूरतरजननिवासस्थाना भमय । जं० प्र० ६६ ।

अडिला–चर्मपक्षिविशेष । जीवा० ४१ । अडिल्ला, चर्मपक्षिविशेष । प्रज्ञा० ४९ ।

अडुयालित्ता–आश्रित्य, बलात्कारं कृत्वा । दश० ३८ ।

अडेइ–चढापयति, लगयति । आव० ६९० ।

अडो–लोमपक्षिविशेष । जीवा० ४१ ।

अडोलिया–यवोनाम राजा तस्य दुहिता । बृ० प्र० १९१ अ । उंदोइयाए । बृ० प्र० १९१ अ ।

अड्ढ–तिर्यग्वलितम् । जीवा० २०७ । तिर्यक् । आव० ३६० ।

अड्ढपल्लाणं–लाटविषये प्रसिद्धम् , यदन्यविषये थिल्लीरिति रूढम् । जीवा० २८२ ।

अड्ढया–कंबिका । नि० चू० प्र० १६७ अ । थिल्ली । भग० ३९९ ।

अड्डवियड्ड–अर्द्धवितर्दम्–क्रमहीनम् । ओघ० १७७ । विप्रकीर्णम् । नि० चू० तृ० १३ अ ।

अड्डवियड्डा–अक्रमम् । ओघ० १७६ ।

अड्डिया–अड्डिका, द्वात्रिंशत् , लौकिकमबद्धकरणम् । आव० ४६५ ।

अड्ढ–आढ्यम् , परिपूर्णम् । औप० १०१ ।

अड्ढ–आढ्य , धनधान्यादिभि. परिपूर्ण । भग० १३४ ।

अड्ढग–आढ्य , सम्पन्न. । आव० २६४ ।

अड्ढरत्त–अर्द्धरात्र , निशीथ । दश० १०४ । आर्धरात्रिक । व्य० द्वि० २५५ आ ।

अड्ढाइं–धनवन्ति । ठाणा० ४२१ ।

अड्ढाइज्जा–अर्द्धतृतीयानि । आव० ३९ ।

अड्ढायति–आद्रियते । आव० ८४८ ।

अड्ढेऊण–अवष्टभ्य । आव० ६२० ।

अड्ढेज्ज – आढ्यत्वं–धनपतित्वं सुखकारणत्वात्सुख अथवा आढ्यै क्रियमाणा इज्या–पूजा आढ्येज्या । ठाणा० ४८८ ।

अड्ढोकंति–अर्धापक्रान्त्या । नि० चू० प्र० ११७ आ ।

अड्ढोक्कंती–अर्धापक्रान्ति । बृ० द्वि० १९ अ ।

अड्ढोरुगो–कटिविभागाच्छादक निर्ग्रन्थ्युपकरणम् । ओघ० २०९ । निर्ग्रन्थ्युपकरणविशेष । नि० चू० प्र० १७९ आ ।

अणं–कम्म । दश० चू० १४५ । पापम् । विशे० ११०९ । अणं–अगति–गच्छति , तासु तासु जीवा योनिष्वनेनेति पापम् , सावद्ययोगं वा । आव० ३७३ । कर्म्म । आचा० १४७ । ऋणम् ; कर्म्म । दश० २६२ ।

अणंगकीडा–अनङ्गक्रीडा, अनङ्ग–कुचकक्षोरुवदनादि, मोहोद्भवो द्भूतस्तीव्रो मैथुनाध्यवसायाख्य कामो वा, तेन तस्मिन

वा क्रीडा कृतकृत्यस्यापि स्वलिङ्गेनाहार्यैः काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मादिघटितप्रजननैर्योषिदवाच्यप्रदेशासेवनम्। आव० ८२५। कुचकक्षोरुवदनादिमोहोदयोद्भूतस्तीव्रो मैथुनाध्यवसायाख्य कामः। आव० ८२५। मैथुनादावर्थक्रियासम्प्राप्तकामस्य चतुर्दशो भेदः। दश० १९४।

अणंगपडिसेवणी—मैथुने प्रधानमङ्गं मेहनं भगश्च तत्प्रतिषेधोऽनङ्गः तेनानङ्गेनाहार्यलिंगादिना अनङ्गे वा-मुखादौ प्रतिसेवाऽस्ति यस्या अनङ्गं वा-काममपरापरपुरुषसम्पर्कतोऽतिशयेन प्रतिषेवत इत्येवंशीलाऽनङ्गप्रतिषेविणी। ठाणा० ३१३।

अणंगसेण—सुवर्णकारो, भद्रविमर्शे दृष्टान्तः। नि० चू० तृ० ५ अ।

अणंगसेणा—अनङ्गसेना, गणिकामुख्या। अन्त० २।

अणंगसेणो—चम्पावास्तव्य स्वर्णकृत्, हासाप्रहासालुब्ध। वृ० द्वि० ४४ अ।

अणंगरति—अनङ्गक्रीडा। वृ० तृ० १०७ आ।

अणंतं—अनन्तम्। विशे० ३९६। केवलात्मनाऽनन्तत्वात्। जीवा० २५६। अनन्त, अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वादन्तरहित। भग० ७, सम० ५। अपरिमाणम्। भग० ६६। अनन्तकर्मपुद्गलनिर्वृत्तत्वात्तदनन्तमिति अनन्ताना वा भवाना हेतुर्यत्तदनन्तम्। ओघ० १२८।

अणंतकायं—मूलकादिकम्। प्रज्ञा० २५९।

अणंतकिरिया—अनन्तक्रिया, परम्परामुक्तिफला। उत्त० ५८३।

अणंतखुत्तो—अनन्तकृत्व, अनन्तवारान्। भग० १३०।

अणतग—कम्बलादिवस्त्रम्। ओघ० ३४।

अणंतगमजुत्त—अनन्ता-अपर्यवसिता गम्यते वस्तुस्वरूपमेभिरिति गमा-वस्तुपरिच्छेदप्रकारा नामादयस्तैर्युक्तानि-अन्विनान्यनन्तगमयुक्तानि। उत्त० ३४२।

अणंतगुणपरिहाणीए — अनन्तगुणपरिहानि, अनन्तगुणाना परिहानि। ज० प्र० १२९।

अणतगुणविसिट्ठतरा — अनन्तगुणविशिष्टतरा। सूर्य० २९४।

अणंतघाई—अनन्तघातिन-अनन्ते ज्ञानदर्शने हन्तु शील येषा ते। उत्त० ५८०।

अणतजिणेण—रागद्वेषजेता, ज्ञानी नित्यश्च। आचा० ४३०।

अणंतजीविया—अनंतजीविका-पनकादय। ठाणा० १२२।

अणंतणाणी—अनन्तज्ञानी, केवली। आव० ६६२।

अणंतते—अनन्तकम्-एकश्रेणिकं क्षेत्रम्। ठाणा० १४७।

अणंतमिस्सिया – अनन्तमिश्रिता, मूलकादिकमनन्तकाय तस्यैव सत्कैः परिपाण्डुपत्रैरन्येन वा केनचित्प्रत्येकवनस्पतिना मिश्रमवलोक्य सर्वोऽप्येषोऽनन्तकायिक इति वदतो भाषा। प्रज्ञा० २५९। ठाणा० ४९०।

अणंतमीसग—अनन्तमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेद। दश० २०९।

अणंतयं—अनतकम्-जिनम्। सम० १५३।

अणंतरं—अनन्तरम्, बहिर्भूतम्। सूर्य० ३४। सम० १२८।

अणंतरगढिया—अनन्तरग्रथिता, अनन्तर व्यवस्थापितैः ग्रन्थिभिः सह ग्रथिता (जालिका)। भग० २१४।

अणंतरपज्जता—अनन्तरपर्याप्तका-प्रथमसमयपर्याप्तकाः। ठाणा० ५१४।

अणंतरपुरक्खडे—अनन्तरपुरस्कृतः, अनन्तरं-अव्यवधानेन पुरस्कृत-अग्रेकृतो य स। सूर्य० ९०।

अणंतरबंधे—येषा पुद्गलाना बद्धाना सतामनन्तर समयो वर्तते तेषामनन्तरबन्ध। भग० ७९१।

अणंतरहिता—अंते ठिता-अता न अता-अनता सचिता। नि० चू० प्र० २५५ आ। नि० चू० द्वि० ८२ आ।

अणंतरहियाए – अनन्तर्हि(रहि)तया – अव्यवहितया। आचा० ३३७।

अणंतरा—अनन्तरौ, एष्यातीतौ। आव० ७६९।

अणंतरिया—अनन्तरिका, अन्तरस्य विच्छेदस्य करणम्। भग० २२०।

अणंतरो—अनन्तर-वर्तमान समय। ठाणा० ५१४।

अणंतरोगाढं—अनन्तरावगाढम्, येषु प्रदेशेष्वात्मावगाढस्तेष्वेव यदवगाढ तदनन्तरभावेनावगाढत्वादनन्तरावगाढम्। भग० २१। अव्यवधानेनावगाढम्। जीवा० २०।

अणंतरोगाढे—उत्पत्त्यनन्तरसमयावगाढत्वम्। भग० ९३७।

अणंतरोववण्णगा—उपप(न्प)त्तिप्रथमसमयवर्तिन। प्रज्ञा० ३०४।

अणंतवत्तियाणुप्पेहा – अनन्तवर्त्तितानुप्रेक्षा। ठाणा० १९२। भवसन्तानस्यानन्तवृत्तितानुचिन्तनम्। औप० ४५।

अणंतविजए–आगामिन्यां उत्सर्पिण्या भरते चतुर्विंशे जिननाम। सम० १५४। ऐरवते भविष्यजिन। सम० १५४।

अणंतवीरिय–अनन्तवीर्य। आव० ३९२।

अणंतसंजयं–एकेन्द्रियादिषु सम्यग् यत। आचा० ४२९।

अणंतसंसारा–अपर्यवसितससारा अभव्या। उत्त० ७१३।

अणंतसंसारवद्धणा–अनन्तससारवद्धन.। उत्त० ३३०।

अणंतसेणे–अनन्तसेन, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य द्वितीयाध्ययनम्। अन्त० ३। भरतेऽतीतोत्सर्पिणीकुलकर। सम० १५०। ठाणा० ५१८।

अणंतसो–अनन्तश, अविच्छेदेन। सूत्र० ३४।

अणंतहिअ–अनन्तहितम्–मोक्ष.। दश० २५०।

अणंता–तित्थकरा। बृ० प्र० २२४ आ।

अणंताणुवंधी–अनन्तानुवन्धी, अनन्तं ससारमनुवध्नन्तीत्येवंशील। प्रज्ञा० ४६८। षोडशकषाये प्रथमो भेद। सम० ३१, आचा० ९१। अनन्तं भव अविच्छिन्न करोति; अनन्तो वाऽनुवन्धो यस्य। ठाणा० १९४।

अणंतियं–अनन्तिकम्, नञोऽल्पार्थत्वान्नात्यन्तमन्तिकमदूरासन्नमित्यर्थ। भग० २१७। अनामन्नम्। भग० २१७।

अणंतेहिं–अनादित्वात् अनन्ता। भग० ६१०।

अणंतो–अनन्तः अनन्तकर्मांशजयात्, अनन्तानि वा ज्ञानादीन्यस्येति, चतुर्दशो जिन, रत्नखचितमनन्त दामस्वप्ने जनन्या दृष्टमत। आव० ५०४। अपर्यवसित। उत्त० २१३। अनन्तानामेकैक शरीरम्। ओघ० ३४।

अणंधो–राजविशेष। नि० चू० द्वि० ४२ आ।

अणंविलं–अनाम्लम्–स्वस्वादादचलितम्। आचा० ३४६।

अण–अणा, अणन्ति–शब्दयन्ति अविकलहेतुत्वेनासातवेद्य नारकाद्यायुष्कमिति, अनन्तानुबन्धिन. क्रोधादयो वा। आव० ८१। नारकाद्यायुष्क च शब्दयन्त्याकारयन्तीत्यणा, अना.। विशे० ५६१।

अणइक्कमणाइ–अनतिक्रमणं, सयमयोगानामनुल्लङ्घनम्। उत्त० ५४३।

अणइक्खा–अनाख्याता। (गणि०)

अणइवत्तियं–अनतिपत्य–यथावस्थित वस्त्वागमाभिहितं तथाऽनतिक्रम्य। आचा० २५६।

अणइवरं–अनतिवर, अविद्यमानद्दामतया प्रधानं न विद्यतेऽनिवरं यस्मात्तत। औप० ५४।

अणईइपत्तो–अनीतिपत्र, न विद्यते ईति–गड्डरिकादिरूपेति रहितपत्र.। जीवा० १८८।

अणकरो–ऋणकर, ऋणं–पापं करोतीति, प्राणवधस्य चतुर्विंशतितम पर्याय.। प्रश्न० ६।

अणक्को–अणक्क चिलातदेशवासी म्लेच्छविशेष.। प्रश्न० १४।

अणक्खित–परीक्षित। नि० चू० द्वि० ८१ आ।

अणगार–अनगार, सूत्रकृताङ्गे पञ्चममध्ययनम्। आव० ६५८। साधु। दश० ६२। सूत्रकृताङ्गस्यैकविंशमध्ययनम्। उत्त० ६१६। चतुर्दशशतके नवमोद्देशक। भग० ६३०। द्रव्यतो भावतश्चाविद्यमानागार। दश० १५९। न विद्यतेऽगार गृहमेषामित्यनगारा.–यतय। आचा० ३६। तीर्थिकप्रव्रजिता। आचा० ३०९। अनगारी–यति.। उत्त० ५७८। साधु.। आव० ३२९।

अणगारमग्गे–उत्तराध्ययने पञ्चत्रिंशत्तमाध्ययनम्। सम० ६४।

अणगारसुयं–सूत्रकृताङ्गे एकविंशतितमाध्ययनम्। सम० ४२।

अणगारस्सभिक्खू–अनगारास्वभिक्षु, अस्वेषु भिक्षुरस्वभिक्षु–जात्याद्यनाजीवनादनात्मीकृतत्वेनानात्मीयानेव गृहिणोऽन्नादि भिक्षत इतिकृत्वा, स च यतिरेव, ततोऽनगारश्चासावस्वभिक्षुश्च। उत्त० १९।

अणगारियं–अनगारिक (अनगारितं वा), अनगारेषु–भावभिक्षुषु भवं अनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

अणगारे–अनगार, न विद्यते अगारं-गृहं यस्यासौ साधु। जीवा० १४२। भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात्। भग० ५९६। न विद्यते अगारं–गृहं द्रव्यतो भावतश्च यस्यासौ सयत इति। प्रज्ञा० ३०३। न विद्यते अगारं–गृहं यस्य स। सूर्य० ४। अगा–वृक्षास्तैर्निष्पन्नमगारं तन्न विद्यते त्यक्तगृहपाश। आचा० ४०३।

अणगारो–ऋणकार, ऋणमिव कालान्तरक्लेशानुभवहेतुतया ऋणम्–अष्टप्रकारं कर्म तत् करोतीति, तथा तथा गुरुवचनविपरीतप्रवृत्तिभिरुपचिनोतीति। उत्त० २०।

अणगालो–दुष्काल। बृ० तृ० २३ अ।

अणघा–निरोगा। नि० चू० प्र० ८० अ।

अणन्नाविअं–अनर्नायितम्। ओघ० १०९।

अणच्चावितं-वस्त्रमात्मा वा यत्र न नर्तित । ठाणा० ३६१। प्रस्फोटन प्रमार्जनं वा। उत्त० ५४०।

अणच्चासादणाविणए-आशातना तन्निषेधरूपो विनयोऽनत्याशातनाविनय.। भग० ९२२।

अणज्जं – अनार्यम अनार्यवचनत्वात. अधर्मद्वारस्य तृतीय नाम। प्रश्न० २६।

अणज्जधम्मे-अनार्यधर्म, क्रूरकर्मकारी। सूत्र० १५८।

अणज्जभावे-अनार्यभाव क्रोधादिमान्। ठाणा० २०९।

अणज्जे-अन्याय्य, न न्यायोपेत । प्रश्न० ५।

अणज्जो-अनार्यः, म्लेच्छचेष्टित । दश० २७५। पापकर्मा। प्रश्न० ४०।

अणज्झाए-अकाले, अस्वाध्यायिके वा। नि० चू० प्र० १० आ।

अणट्टा-अनार्त –आर्तध्यानविकल । उत्त० ४४८। सकलदोषविगमतोऽबाधिता। उत्त० ४४९।

अणट्ठा-अनर्थक्रिया, अनर्थाय यत्करणम्, क्रियाया द्वितीयो भेद । आव० ६४८।

अणट्ठादंडे-अर्थविलक्षणो दण्ड । सम० २५।

अणणुगामी-अननुगामुक –स्थितप्रदीपवत्। आव० ४२।

अणण्णं-अनन्य –ज्ञानादिक । आचा० १६३।

अणण्हकर – 'स्नु–प्रश्रवण' इति वचनात् आस्नव –आश्रव कर्म्मोपादान तत्करणशील आस्नवकरस्तन्निषेधादनास्नवकर –प्राणातिपात आश्रववर्जित इत्यर्थ । ठाणा० ४०९।

अणण्हय-अनाश्रव । आव० २८०।

अणण्हयत्तं-अनहस्कत्वम्–अविद्यमानकर्मत्व। उत्त० ५८६।

अणण्हयफले-अनाश्रवफल, सयम । भग० १३८।

अणति-प्रज्ञापयति। उत्त० १२८। शब्दयति। आव० ७८८। आदत्ते–गृण्हाति। नि० चू० द्वि० ९ आ।

अणतिक्कमणिज्ज-अनतिक्रमणीयम्, अचालनीयम्। भग० १३५।

अणत्तट्ठिए-अनात्मार्थिक, नात्मार्थ एव यस्यास्त्ययमौ परमार्थकारी। प्रश्न० १११।

अणत्तट्ठियं-अस्वीकृतम्। आचा० ३२५।

अणत्तपन्ने-अनात्मप्रज्ञ –नात्मने हिता प्रज्ञा येषा ते। आचा० २३४।

अणत्ते-ऋणपीडित.। ठाणा० १६५।

अणत्थको-अनर्थक, परमार्थवृत्त्या निरर्थक, परिग्रहस्याष्टाविंशतितम नाम। प्रश्न० ९३।

अणत्थदंडे-अनर्थदण्डः, अप्रयोजनदण्ड.। आव० ८३०।

अणत्थमियसंकप्पे – सूर्यानस्तसमयभोजनसकल्पवान्। बृ० तृ० १७९ अ।

अणत्थो-अनर्थ अपाय। प्रश्न० ६२। अनर्थहेतुत्वात् परिग्रहस्यैकविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अणदिट्ठं-अनादिष्टं–अविशेषितम्। बृ० तृ० ६६ अ।

अणन्नदंसी-अनन्यदर्शी–यथावस्थितपदार्थद्रष्टा, भगवदुपदेशादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणन्नपरमं-अनन्यपरम –सयम । आचा० १६६।

अणन्नारामे – अनन्यारामो–मोक्षमार्गादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणपज्झो-अजाणमाणो। नि० चू० प्र० ११९ अ।

अणपन्निय-अवान्तरव्यन्तरभेद । जीवा० १७२।

अणप्पगंथो-अनल्पग्रन्थ (अनर्घ्यग्रन्थ) बह्वागम अविद्यमानो वाऽऽत्मन सम्बन्धी ग्रन्थो–हिरण्यादिर्यस्य स। भावधनयुक्त। औप० ३७।

अणप्पज्झ-(देशी) अनात्मवशः। बृ० द्वि० २०९ अ।

अणप्पज्झो-अनात्मवश । बृ० तृ० २५८ अ।

अणप्पियं-अनर्पितविषयविभागम्। बृ० तृ० ११० अ। अविशेषितम्। ठाणा० ४८१।

अणप्फिडंतं-अचलत्। नि० चू० द्वि० २२ अ।

अणबलो-ऋणबल, बलवानुत्तमर्ण । प्रश्न० ३०।

अणब्भुवगओ-अनभ्युपगत, श्रुतसम्पदाऽनुपसम्पन्नोऽनिवेदितात्मेत्यर्थ । विशे० ६२५।

अणभञ्जक:-ऋणं–देय द्रव्य भञ्जति–न ददाति य स। प्रश्न० ४६।

अणभिक्कंत-अनभिक्रान्त, अनतिलङ्घित.। आचा० १९३। नाभिक्रान्ता जीवितादनभिक्रान्ता सचेतनेत्यर्थ । आचा० ३२३।

अणभिगताणं-अपरिणता। बृ० प्र० १३० अ।

अणभिग्गहिओ – अविद्यमाभमभीति–आभिमुख्येन गृहीतं ग्रहण–ज्ञानमस्येत्यनभिगृहीत – अनभिज्ञ । उत्त० ५६५ अनङ्गीकृता। उत्त० ५६५।

अणभिग्गहिय – न विद्यते आभिमुख्येनोपादेयतया गृहीतं-ग्रहणमस्येत्यनभिगृहीत । प्रज्ञा० ६० । अनिश्रितमशिवादिभिर्निर्गमभावात् । ठाणा० ३०९ ।

अणभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया – अनभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, जेहिं न किंचि कुतित्थियमयं पडिवण्ण । आव० ६१२ ।

अणभिग्गहिया–अनभिगृहीता, अनभिग्रहा यत्र न प्रतिनियतार्थावधारण सा भाषा । प्रज्ञा० २५६ । असत्यमृषाभाषाभेद । दश० २१० । अर्थानभिग्रहेण योच्यते । भग० ५०० ।

अणभिजोग–अनभियोग , इच्छा । आव० ६६८ ।

अणभिहियं–अनभिहितं, अनुपदिष्ट स्वसिद्धान्ते सूत्रदोपविशेष । आव० ३७५ ।

अणभिज्जय–अच्छिद्रे, अभिन्ने । (मर०)

अणराए–रण्णो कालगते–भिक्खए वि जाव णो राया ठविज्जति । नि० चू० तृ० ७१ अ ।

अणरायं–राजयुवराजोभयाभिषेकरहितं राज्यम् । बृ० द्वि० ८२ अ । मते रायाणे जाव मूलराया युवराया य एते दोवि अणभिसित्ता । नि० चू० द्वि० १० आ ।

अणलगिरि–अनलगिरि । आव० २९९ ।

अणला – अपर्याप्ता , दीक्षापालनेऽसमर्था । बृ० द्वि० २८७ आ ।

अणलो–अनल., असमर्थ । आव० २५९ । वेयावच्च प्रति सुत्ते अत्थे अभिगमे परिहरणे । नि० चू० द्वि० ४९ आ ।

अणल्लिअंता–अनाश्रयन्त । ओघ० ९७ ।

अणवः–स्वरपा । उत्त० ४२० ।

अणवं–ऋणवान । सूर्य० १४६ । ज० प्र० ४९१ ।

अणवकंखवत्तिया–अनवकाङ्क्षाप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये पञ्चदशी । आव० ६१२ । अनवकाक्षा–स्वशरीराद्यनपेक्षत्व सैव प्रत्ययो यस्या सा । ठाणा० ४३ । इहलोकपरलोकापायानपेक्षस्येति । ठाणा० । ३१७ ।

अणवगल्ल–अनवकल्प , जरया अनभिभूत. । भग० २८६ । ज० प्र० ९० ।

अणवज्जं – अनवद्यम् , सामायिकदशमपर्याय । आव० ४७४ । सामायिकम् । आव० ३६४ । पापानुबन्धरहितम् । दश० ११५ ।

अणवज्जय–अणवर्ज्यता, पापवर्ज्यता । आव० ३७३ ।

अणवज्जुत्तो–तत्रस्थ , अपृथग्भूत । आव० ७५८ ।

अणवट्टप्पा–अनवस्थाप्य –नावस्थाप्यते-नाधिक्रियते । ठाणा० १६४ । कृततपसो व्रतारोपणम् । भग० ९२० ।

अणवट्टप्पारिहे–कृततपसो व्रतारोपणम् । भग० ९२० ।

अणवट्टया–अनवस्थाप्यता, हस्ततालादिप्रदानदोषाद्दुष्टतरपरिणामत्वाद् व्रतेषु नावस्थाप्यते इति अनवस्थाप्य , तद्भाव । आव० ७६४ । ठाणा० २०० ।

अणवट्ठिओ–अनवस्थित । बृ० प्र० १२५ अ ।

अणवट्ठियं–अनवस्थित, सन्ततम् । जीवा० ३४५ । अनियतप्रमाणम् । सूर्य० ८७ ।

अणवट्ठिया–नावश्यभाविन । ठाणा० ३७४ ।

अणवट्ठिया–अनवस्थिना–येन पुन प्रतिसेवितेनोत्थापनाया अप्ययोग्य सन कञ्चित्काल न व्रतेषु स्थाप्यते यावन्नाद्यापि विशिष्ट तपश्चीर्णं भवति पश्चाच्च चीर्णतपास्तद्दोषोपरतो व्रतेषु स्थाप्यते । व्य० प्र० १४ आ ।

अणवत्था – अनवस्था, यद्यकार्यमाचरणात्प्रायश्चित्त न दीयते क्रियते वा सा । ओघ० २२७ ।

अणवदग्गं–अनवदग्रम् , अनन्तम् । प्रश्न० ६३ । ठाणा० १२० । औप० ४८ । अपर्यवसानम् । सूत्र० ३०२ ।

अणवन्निय – अणपन्निका , व्यन्तरनिकायानामुपरिवर्त्तिनो व्यन्तरजातिविशेषा । प्रश्न० ६९ । वाणमन्तरविशेष । प्रज्ञा० ९५ ।

अणवयक्खित्ता–अनवेक्ष्य पश्चाद्भागमनवलोक्य । भग० ३१२ ।

अणवयग्गं–अनवनताग्र–अपर्यन्तम् । ठाणा० ४८ । अनन्त, अपार, अनवनताग्र–अनवनत–अनासन्न अग्र–अन्तो यस्य तत् । अनवगताग्र–अनवगत–अपरिच्छिन्न अग्र–परिमाण यस्य तत् । भग० ३५ । कालतोऽपरिमाणम् । व्य० प्र० २५५ अ ।

अणवयग्ग–अनवदत , अनपगच्छन् । उत्त० ५८५ ।

अणविक्खया–अप्रेक्षणा (गणि०)

अणसणं–अनशन, भोजननिवृत्ति । औप० ३७ । बाह्यतपोऽश । उत्त० ६०० ।

अणसण–अनशनम्, आहारत्याग.। दश० २६। भग० ९२१।

अणसणा–अनशनम्, व्रतविशेष॰, उपवास। भग० १२८।

अणसायणा–अनाशातना, अहीलना। दश० २४१। मनोवाक्कायैरप्रतीपप्रवर्तनम्। उत्त० १७।

अणसिओ–अनशित, न अशित.–भिक्षाप्रदानानभिज्ञेन लोकेनाभ्यर्हित.। आव० १४४।

अणहं–अनघ, अक्षतम्। सूर्य० २९२। अणहशब्दोऽक्षतपर्यायो देश्यस्तेनाणहं–अक्षतं। ज० प्र० २२१।

अणहवीया–अविणट्ठवीया। नि० चू० प्र० ८० अ।

अणहारए–ऋणधारक। विपा० ७२।

अणहारेणं–स्वदेशजाहाराभावेनेति। ठाणा० ५४।

अणहिअपरमत्था–अनधिगतपरमार्था। (गणि०)

अणहिकडा–अनधिकृता–तल्लक्षणायोगतस्तत्रानन्तर्भाविनी। प्रज्ञा० २४८।

अणहियासिया–अनध्यासिनी। आव० ४२८।

अणहियासी–अनधिकासिका., सञ्ज्ञावेगोत्पीडित॰ सन् ग्रा याति सा। ओघ० २००।

अणहे–अनघ, नास्याघमस्तीति, निरवद्यानुष्ठायी। सूत्र० ६९।

अणहो–अनघ., अक्षतशरीर। प्रश्न० ११५।

अणाइण्णं–पणगपरिहाणीक्रमेण पत्त। नि० चू० द्वि० १५७ अ।

अणाइण्णा–अणासेविय। नि० चू० द्वि० १४४ आ।

अणाइन्नं–अनाकीर्णं –असकुल। उत्त० ४२८।

अणाइयं–अणातीतं, अनादिकं, अज्ञातिकं, ऋणातीतं अणातीत वा, अविद्यमानादिकं, अविद्यमानस्वजनं,, ऋणं वाऽतीत ऋणजन्यद्दु स्थतातिक्रान्तम्, दुस्थतानिमित्ततयेति ऋणातीत, अर्णं वा अणकं–पापमतिशयेनेत–गतमणातीतम्। भग० ३५। आ–समन्तादतीव इतो–गतोऽनाद्यनन्ते समारे आतीत, न आतीत अनातीन, अनादत्तो वा समागे येन स तथा, ससारार्णवपारगामी। आचा० २८६।

अणाइत्तो–अनुपयुक्त। (महाप्र०)

अणाइयंतो–त्रिवादानतिक्रामन्। व्य० प्र० १० अ।

अणाइले–अनाविल, अदीनस्य चतुर्थं नाम। अन्त० २२।

अकलुष.। प्रश्न० १११। अकलुषः, शुद्धस्वभाव.। प्रश्न० १३६।

अणाइसेसि–अनतिशयी, अवध्याद्यतिशयरहितः। आव० २४०।

अणाई–अनादि, नास्यादिरस्तीति ससारः। सूत्र० ३४१।

अणाउट्टी–अनाकुट्टि.। आव० ३७३।

अणाउत्तं–असावधानता। औप० ४२। अनुपयुक्त.। ठाणा० ४३।

अणाउत्तआइयणया–अनायुक्तवस्त्रादिग्रहणता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तपमज्जणया–अनायुक्तपात्रादिप्रमार्जनता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तो–अनाकुल –अक्षणिकता। बृ० तृ० ४४ आ।

अणाउल–अनाकुल, क्रोधादिरहित। दश० १६६।

अणाउले–अनाकुल। आचा० ४२४।

अणाउलो–अनाकुल॰। आव० ४०४।

अणाए–अनया। आव० ३९९।

अणाएसे–अनादेश, न आदेश॰, सामान्यम्। उत्त० ३२।

अणागई–अनागति, सिद्धि॰, अशेषकर्मच्युतिरूपा लोकाग्राकाशदेशस्थानरूपा वा। सूत्र० २२३।

अणागतं–अनागतम्, अनागतकरणात्, पर्युषणादावाचार्यादिवैयावृत्त्यकरणान्तरायसद्भावादारत एव तत्तप करणम्। आव० ८४०, ठाणा० ४९८।

अणागमणधम्मिणो–अनागमनधर्म्माण –यस्मिन् मनुष्यलोके अनागमन धर्मो येषां ते, न पुनर्गृहं प्रत्यागमनेप्सव। आचा० २४३।

अणागमो–अनागम –अनवसर.। आचा० १२२।

अणागयं–अनागतम्, एष्यत्कालम्। आव० ५०९।

अणागय–अनागताम्–आयत्याम्। आव० ५०९। अनागतं, अनागतकरणादनागतम्। भग० २९६।

अणागलिय–अनिर्गलित –अनिवारितोऽनाकलित। भग० ६७३।

अणागारं–अनाकारम्, अविद्यमानाकारम्। आव० ८४०। ठाणा० ४९८। अविद्यमानाकारं–यद्विशिष्टप्रयोजनसम्भवाभावे कान्तारदुर्भिक्षादौ महत्तराद्याकारमनुच्चारयद्भिर्विधीयते तदनाकारम्। भग० २९६।

अणागारपासणया–अनाकारपश्यत्ता-चिन्त्यमानाया प्रकृष्टं परिस्फुटरूपमीक्षणमवसेयम् । प्रज्ञा० ५३० ।

अणागारो–अनाकार., यथोक्ताकारविकल. । जीवा० १८ । सामान्यग्राही । भग० ७३ ।

अणाजीवी–अनाशंसी । नि० चू० प्र० १८ अ । अनाजीविको–नि स्पृहः । दश० १०६ ।

अणाडिया–अनादृति. । आव० ९५ । अपराध । बृ० प्र० ३० आ ।

अणादायमाणे–अनाद्रियमाण.–सखडिमनादरयन् । आचा० ३२९ ।

अणाढिअस्स–अनादृतनाम्नः जम्बूद्वीपाधिपते । जं० प्र० ३३४, जीवा० ३२६ ।

अणाढिउ–जम्बूवृक्षस्थो देव । ठाणा० ६९ ।

अणाढियं – अनादृतम् , अनादर सम्भ्रमरहितम् , कृति-कर्मणि प्रथमदोष । आव० ५४३ ।

अणाढिय–अनादृत:, जम्बूद्वीपाधिपतिर्व्यन्तरसुर । उत्त० ३५२ । अनादृताद्–अनादरायां सा अनादृता, शिथिलस्य या सा । ठाणा० ४७४ ।

अणाणत्ता – अनानात्वा–नानात्ववर्जिता येष्वेवाधारभूता-काशप्रदेशेष्वेके तेष्वेवेतरेऽपि । भग० ९६१ । नानात्ववर्जिता देशभेदेनालक्षितनानात्वा । प्रज्ञा० ७४ ।

अणाणाए–अनाज्ञया, स्वैरिण्या बुद्धया । आचा० ११३ । स्वमनीषिकाचरितोऽवाचार. । आचा० २२७ ।

अणाणुकिंसी–जो एवं ण कथयति । नि० चू० प्र० ३३३ आ ।

अणाणुगामिते–अवधिज्ञानस्य द्वितीयो भेद. । ठाणा ३७० ।

अणाणुगामियत्ताते–अननुगामिकत्वाय–अशुभानुबन्धाय । ठाणा० १४९, ३५८ ।

अणाणुपुव्वी–अनानुपूर्वी, यत्र पूर्वपश्चाद्विभागो नास्ति । भग० ८० । अत्थग्गहणाईए पदे अप्पत्तो । नि० चू० द्वि० ५३ अ । अनियतक्रमानुपूर्वी । ठाणा० ४ । यथोक्तप्र-कारद्वयातिरिक्तस्वरूपा । अनु० ७३ ।

अणाणुबंधि–न विद्यतेऽनुबन्धः–सातत्यप्रस्फोटकादीनां यत्र तदननुबन्धि । ठाणा० ३६१ ।

अणादिट्ठी–अनादृष्टि., अन्तकृद्दशाना तृतीयवर्गस्य त्रयो-दशमध्ययनम् । अन्त० ३ ।

अणादीओ–अणादिकः; अणं–पापं कर्म, आदिः–कारणं यस्य सः । ऋणातीत, ऋणं–अधर्मेण न देयं द्रव्यं तदतीतो-ऽतिदुरन्तत्वेनातिक्रान्त । प्रश्न० ४ । अनादिक, प्रवाहा-पेक्षयाऽऽदिविरहित । प्रश्न० ४ ।

अणादीयं–नास्त्यादिरस्येत्यनादिक । ठाणा० ४४ ।

अणादेज्ज–अनादेयम्–यदुदयवशादुपपन्नमपि ब्रुवाणो नोपा-देयवचनो भवति, नाप्युपक्रियमाणोऽपि जनस्तस्याभ्युत्थानादि समाचरति । प्रज्ञा० ४७५ ।

अणापुच्छा–अनापृच्छा । आव० १९८ ।

अणाबाहं–अनाबाधकत्वं वेदनाभावत्ववत् । उत्त० ५१० ।

अणाबाहि–अनाबाध –मोक्षसुखम् । ठाणा० ४८८ ।

अणाभिगता–अगहियसुत्तत्था । नि० चू० तृ० १४३ अ ।

अणाभिडंतो–अस्पृशन् । नि० चू० प्र० १८७ अ ।

अणाभोगं–अनाभोगम् , अतिचारविशेष । आव० ५६४ । विस्मृति । ठाणा० ४८५ ।

अणाभोगनिव्वत्तिए – अनाभोगनिर्वर्तित , यदा त्वेवमेव तथाविधमुहूर्त्तवशाद्गुणदोषविचारणाशून्य परवशीभूय कोपं कुरुते तदा सकोप. । प्रज्ञा० २९१ ।

अणाभोगबकुसो – अनाभोगबकुश, योऽनाभोगेनाजानन् करोति स , बकुशस्य द्वितीयो भेद । उत्त० २५६ । सहसाकारी । ठाणा० ३३७ ।

अणाभोगवत्तिया – अनाभोगप्रत्ययिकी, विंशतिक्रिया-मध्ये चतुर्दशी । आव० ६१२ । अनाभोगेन पात्राद्याददतो निक्षिपतो वा । ठाणा० ३१७ । अनाभोग–अज्ञानं प्रत्ययो-निमित्तं यस्या. सा । ठाणा० ४३ ।

अणाभोगे–अनाभोग–अज्ञानम् । भग० ९१९ ।–एकान्त-विस्मरणम् । व्य० द्वि० ३३२ आ ।

अणाभोगो–अनाभोग , अत्यन्तविस्मृति । आव० ८५० । नि० चू० प्र० २९ आ । अज्ञान । नि० चू० प्र० १४७ आ । विस्मृति. । आव० ८४८ ।

अणायगे–अनायक , अन्यो न विद्यते नायकोऽस्येति अनायक–स्वयम्प्रभुश्चक्रवर्त्यादि । सूत्र० ६१ । अविद्यमान-नायको राजा । सम० ५३ ।

अणायण–अनायतनम्, विरुद्धस्थानम् । दश० २२६ । अस्थानम् , वेश्यामामन्तादि । दश० १६५ ।

अणायतणं–अनायतनं, साधूनामनाश्रय·। प्रश्न० १३८। नि० चू० प्र० ११६ अ। स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तं स्थानम्। ओघ० १२।
अणाययणं–पशुपक्षिमद्‌गृहं। बृ० तृ० १९५ आ।
अणाययण – स्त्रीपशुपण्डकससक्तगृहवर्जणं। नि० चू० तृ० २५ आ।
अणायरिया–अनार्या–अर्द्धषड्‌विंशजनपदवाह्यानि। आचा० ३७७।
अणायवेतियं–छायायाम्। नि० चू० द्वि० ७६ आ।
अणाया–अनात्मा घटादिपदार्थं। सम० ५।
अणायार–अनाचारः, सावद्ययोग.। दश० २३३।
अणायारो–अनाचार.। आव० ७७८। गिलिते सति आधाकर्मगि दोषविशेष·, यावल्लम्बनोत्क्षेपोत्तरकालम्। आव० ५७६। व्यभिचारः। आव० ५७८। आचारस्य साध्वाचारस्याभाव परिभोगतो ध्वंस.। व्य० प्र० ९० अ।
अणारद्धं–अनारब्धम्, अनाचीर्णम्। आचा० १४८।
अणारिओ–अनार्यः म्लेच्छादिः। प्रश्न० ५। क्रूरकर्म्माणि। आचा० १८६।
अणारिय–आचार्यं मुक्त्वा। बृ० प्र० २४५ अ। म्लेच्छा। ठाणा० ३०९।
अणारिया–कामकहा। नि० चू० प्र० २५८ अ। अनार्य·–क्षेत्रभाषाकर्मभिर्बहिष्कृत·। सूत्र० ३९३। उत्त० ३५८। अनार्यः–न आर्य·, अज्ञानावृतत्वादसदनुष्ठायी। सूत्र० ३३।
अणारोहए–अनारोहक, योधवर्जित.। भग० ३२२।
अणालावे–अनालाप.–कुत्सित आलापः। ठाणा० ४०७।
अणालिओ–अन्वेष्टा। आव० ३७०।
अणावडंतो–अस्पृशन्। नि० चू० प्र० १८७ अ।
अणावसं–अवशम्। (मर०)
अणावाय–अनापात.। आचा० ३३५। अनापात–आपातादिरहिता उच्चारभूमी। दश० २३१। उत्त० ५१८। विजनम्। आचा० ३३९। स्त्र्यापातरहित। उत्त० ६०८।
अणावायमसंलोए–अनापातासलोकम्। ओघ० १२२।
अणाबाहो–मोक्खो। दश० चू० १३।
अणासगं–परिज्ञा। नि० चू० प्र० ३५२ आ। अनशनं। नि० चू० प्र० २५८ अ।
अणासए–अनश्व·, अश्वरहित। भग० ३२२।
अणासन्नं–अनासन्नं, यद्‌द्रव्यासन्नं भावासन्नं वा न भवति। ओघ० १२३।
अणासवो – अनाश्रवः, मध्यस्थो रागद्वेषरहित·। सूत्र० २४४। कर्मबन्धनिरोधोपायत्वात्, अहिंसाया पञ्चत्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९। अनास्रवा–व्रतविशेषाः। आचा० १८२।
अणासायणाविणअ – अनाशातनाविनय·, उपचारविनयभेदः। दश० २४९।
अणासेवियं–अनास्वादितम्। आचा० ३२५।
अणाहपव्वज्जा–उत्तराध्ययनस्य विंशतितमाध्ययननाम। सम० ६४।
अणाहप्पाओ–अनाथात्मानौ। आव० ७१।
अणाहसाला – अनाथशाला–आरोग्यशाला। व्य० द्वि० ५७ आ। नि० चू० द्वि० ३८ आ।
अणाहसालालओ–अनाथशालालयः। आचा० ११९।
अणाहारो–अनिष्ट शोभनमपि न रोचते यदि अणाहारो भवति। नि० चू० द्वि० ५१ अ।
अणाहूय – अनाहूत., अनित्यपिण्ड, अनभ्याहृतो वा, स्पर्धारहितः। भग० २९३। भग० २९४।
अणिंगालं–रागपरिहारेणेत्यर्थ·। प्रश्न० ११२।
अणित–अनिर्गच्छन्। नि० चू० प्र० २५८ आ।
अणिंदियं–अनिन्दितं–शिष्टनिन्द्येन – स्वपरप्रशंसादिहेतुनाऽनुत्पादितम्। उत्त० ६६७।
अणिंदिआ–अनिन्दिता, अष्टमी दिक्कुमारी। ज० प्र० ३८३।
अणिंदिया – अनिन्दिता, अधोलोकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२१।
अणिंदिया – अनिन्द्रिया अपर्याप्ताः, केवलिन, सिद्धा· उपयोगत.। ठाणा० ३५५, ५१९।
अणिगणा–अनग्ना, अनग्ना नाम द्रुमगणा.। जं० प्र० ९९।
अणिगामसुक्खा–अनिकामसौख्या.–अप्रकृष्टसुखा। उत्त० ४००।
अणिगिण– अनग्नत्वम्, सवस्त्रत्व तद्धेतुत्वादनग्ना इति। सम० १८।
अणिगूहंतो–अनिगूहन्, प्रकटयन्। आव० ५३४।
अणिगूहियबलविरिए – अनिगूहितबलवीर्य·, न निगूहिते बलवीर्ये येन स· बलं–शारीरं वीर्यं–आन्तर, शक्तिविशेष·। आव० २५९।

अणिग्गहो–अनिग्रह, अनिषेधो मनसो विषयेषु प्रवर्त्तमानस्य, अब्रह्मण एकादशं नाम। प्रश्न० ६६। स्वैरः। प्रश्न० ३१।

अणिच्चं–अनित्यम्, न नित्यमस्थिरत्वात्। प्रश्न० ९६।

अणिच्चमावासं–अनित्यावासः–मनुष्यादिभवस्तच्छरीरम्। आचा० ४२९।

अणिच्चाणुप्पेहा – अनित्यानुप्रेक्षा – जीवितादेरनित्यस्यानुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

अणिच्चेऊण–अ(न)र्चयित्वा। आव० १४६।

अणिच्छियत्ता–अनीप्सितता, आप्तुमनिष्टता। भग० २३। प्राप्तुमनभिवाञ्छितत्वम्। भग० २५३। प्रज्ञा० ५०४।

अणिच्छियव्वो–अनेष्टव्यः, मनागपि मनसाऽपि न प्रार्थनीय। आव० ५७२, ७७८।

अणिज्जिण्णा–अनिर्जीण., सामस्त्येनात्मप्रदेशेभ्योऽपरिशाटित'। प्रज्ञा० ६०२।

अणिज्जुहियाअंसी–अनिर्यूढा–कृतविभागापि नान्यत्र नीताशिका। बृ० द्वि० १९९ आ।

अणिज्झापत्ता–अनिद्ध्याय, चक्षुर्व्यापार्य। भग० ३१२।

अणिट्ठं–अनिष्टम्, सतामनभिलषणीयम्। आव० ५८९।

अणिट्ठत्ता–अनिष्टता, इष्टा–मनसा इच्छाविषयीकृता तद्विपरीता अनिष्टा तस्या भाव। प्रज्ञा० ५०४। अनिष्टता, इच्छाया अविषयता। भग० २५३।

अणिण्हवणं–अनपलापः। नि० चू० प्र० ९ अ।

अणितणा–वस्त्रदायिनः। ठाणा० ५१७।

अणितिप–अनितिक–अविद्यमाननियतस्वरूप। भग० ४६९।

अणित्थंतथं – अनित्थंस्थम्, इतीदंप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं, न इत्थंस्थं अनित्थंस्थमिति, केनचित्प्रकारेण लौकिकेनास्थितमिति। आव० ४४५। नेत्थं तिष्ठतीति, अनियताकारम्। जीवा० २५।

अणित्थंथे–अनित्थंस्थं परिमण्डलादिव्यतिरिक्तम्। भग० ८५८, ८५९।

अणिदा–अनिदा–अनिर्द्धारणा। भग० ४४। चित्तविकला सम्यग्विवेकविकला वा। प्रज्ञा० ५५७।

अणिदाणो–अनिदान', देवेन्द्राद्यैश्वर्याप्रार्थक। प्रश्न० १४७।

अणिद्देसं–अनिर्देश्यं। विशे० १५५।

अणिपत्तियं–(अणिज्जंत) कम्म ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिमिसच्छो–अनिमेषाक्ष, निश्चलनयनः। आव० ७८४।

अणिमिसनयणे–अनिमिषनयनम्, विकसित नयनम्। भग० १७१।

अणिमिसा–अनिमेषा। आव० १२४।

अणिमिसे–अनिमिषा, मत्स्या'। दश० १०२।

अणियं–अणिकं, अग्रम्–तुण्डम्। प्रश्न० ११५। अनीकं–कटकम्। उत्त० ४३८।

अणियट्ट–अनिवर्त्त', मोक्ष.। आचा० १९३।

अणियट्टिबायरो–अनिवृत्तिवादर', निवृत्तिबादरादूर्ध्वं लोभाणुवेदनं यावत् भूतग्रामस्य नवमं गुणस्थानम्। आव० ६५०।

अणिअट्टी–भरते भविष्यज्जिन। सम० १५४।

अणियण–अनग्नकारणत्वादनग्ना–विशिष्टवस्त्रदायिन., सञ्ज्ञाशब्दो वाऽयमिति। ठाणा० ३९९।

अणियणो–अनग्न। आव० १११।

अणियतो–अनियत', अनियमवान्, अनवस्थित.। प्रश्न० २८।

अणियत्तो–अनिवृत्त'। आव० ८२३।

अणियदरिसणं-हयगजरथपदात्यनीकदर्शनम्। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

अणियया–अनियता–अनिर्धारिता। प्रज्ञा० ३३९।

अणिया–अनिदा, अकारणम्। आचा० ३४। मेधाधारणेन्द्रियपादवदेहायुर्वर्धनकारी। नि० चू० प्र० २५४ अ। अनाभोगत। सम० १४६।

अणियाणे–प्रार्थनारहित। भग० १२३।

अणियाहिवई – अनीकाधिपतय –गजादिसैन्यप्रधाना ऐरावतादय.। ठाणा० ११७।

अणिलामयी–वातरोगिणी। बृ० द्वि० २१९ अ।

अणिलो–निलओ जस्स नत्थि। दश० चू० ९८।

अणिवारिए–अनिवारित, निषेधकरहित। विपा० ५२।

अणिविद्धं–कम्म ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिव्वणं–सचित्तं। नि० चू० प्र० ४३ आ।

अणिसिट्ठं–अनिसृष्टं, बहुमाधार। सत यदेक एव ददाति। प्रश्न० १५५। परिहारिकम्। नि० चू० प्र० १६१ आ। मृष्ट-;

कर्तव्यं। ओघ० २१४। ठाणा० ४६०। भग० ४६६। नि० चू० तृ० १६ अ, ४८ आ। तत्स्वामिनाऽनुत्सकलितम्। आचा० ३२५। दोषविशेषः। आचा० ३२९। साधारणं बहूनामेकादिना अननुज्ञातं दीयमानम्। ठाणा० ४६७। दोषविशेषः। प्रश्न० १४४।

अणिसिद्धो–अनिषिद्ध, अनुपयुक्त.। आव० २६७।

अणिस्सि(ब्भि)अप्पा–अनिभृतात्मा, अनिदानः। आव० ८४३।

अणिस्सिए–अनिश्रित', द्रव्यभावनिश्रारहित प्रतिबन्धविमुक्त। दश० २२३।

अणिस्सिओवहाणे–अनिश्रितोपधानं, ऐहिकामुष्मिकापेक्षाविकल तप, योगसग्रहे चतुर्थो योग। आव० ६६४। अनिश्रितं तप.। प्रश्न० १४६।

अणिस्सितं–अनिश्रितम्। आव० ३५८। सर्वाशंसारहित'। भग० ३८५।

अणिस्सियं–अनिश्रितम्, कीर्त्यादिनिरपेक्षम्। प्रश्न० १२६।

अणिस्सिय – अनिश्रितम्, कुलादिष्वप्रतिबद्धम्। दश० ७२।

अणिस्सेयस – अनिश्रेयस –अमोक्षाय। ठाणा० १४९। अकल्याणाय, अमोक्षाय। ठाणा० २९२। अकल्याणाय। ठाणा० ३५८।

अणिस्सो–अनिश्र –कस्यचित्सवन्धिनाऽवष्टम्भेन रहित'। उत्त० ६३३।

अणिहय–अनिहत, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य तृतीयमध्ययनम्। अन्त० ३।

अणिहे–अनिभ, अमाय.। दश० २६८। अनिह, परीषहोपसर्गैर्निहन्यत इति निह, न निह अनिह –उपसर्गैरपराजित इति। सूत्र० ६९। अस्निह –अष्टकर्म्मरहित, अराग –रागद्वेषरहित, भावरिपुभिरनिहत। आचा० १९०। स्निह्यत इति स्निह, न स्निह अस्निह –सर्वत्र ममत्वरहित इति। सूत्र० ६९। अकुट्टिले। दश० चू० १५१।

अणीए–अनीकम्, सैन्यम्। भग० ८९।

अणीयजसे – अनीकयशा, नागस्य गाथापते कुमार। अन्त० ४।

अणीयसे – अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य प्रथममध्ययनम्। अन्त० ३।

अणीसट्ठं–हस्तमानावग्रहादस्फिटितम्। बृ० द्वि० २३९ अ।

अणीहारि–अनिर्हारि, तपोभेदः। उत्त० ६००।

अणीहारिमे–अनिर्हरणाद् गिरिकन्दरादौ अनशनम्। ठाणा० ९४। जइ बहिं पडिवज्जइ। नि० चू० द्वि० ५८ अ।

अणु – अनु–प्रतिदिवसम्। सूर्य० १३६, १३३। थेवे। दश० चू० ८९। स्तोकप्रदेशम्। प्रज्ञा० २६३। पश्चाद्भावे स्तोके च। बृ० प्र० ३३अ,। स्तोकम्। प्रज्ञा ५०२। प्रमाणतो वज्रादि। दश० १४७। लघु', हीन'। सूर्य० २६१। जं० प्र० ५२२।

अणुअतणुअ–अनुकतनुकाना–अतिसूक्ष्माणाम्। जं० प्र० २३७।

अणुओग – अनुयोग, अर्थकथनम् सूत्रादनु–पश्चादर्थस्य योगोऽनुयोग सूत्राध्ययनात्पश्चादर्थकथनम्। अणोर्वा लघीयस सूत्रस्य महताऽर्थेन योगोऽनुयोग.। आचा० २। व्याख्यान। ओघ० ७१।

अणुओगत्थो–अनुयोगार्थ, व्याख्यानभूतोऽर्थ। आचा० ७।

अणुओगदारं – अनुयोगद्वारम्, सूत्रविशेष। आव० ७४०। अस्वाध्याये परिहर्तव्यसूत्रविशेष। नि० चू० तृ० ७१ आ०।

अणुओगदारे–अनुयोगद्वारम्; अनुयोगद्वारसूत्रम्। भग० २२१।

अणुओगस्स–अनुयोगस्य। विशे० ५९३।

अणुओगो – अनुयोग, सूत्रस्यार्थेनानुयोजनम्, अभिधेये व्यापार सूत्रस्य योगो वा, अनुकूलोऽनुरूपो वा योग। आव० ८६, ठाणा० ४८१। निजेनाभिधेयेनार्थेनानुयोजनं–सम्बन्धनम्। विशे० ५९३। सूत्रपाठानन्तरमनु–पश्चात्सूत्रस्यार्थेन सह योगो–घटना। जीवा० २। अनुकूल –अविरोधी सूत्रस्यार्थेन सह योगो वा। जीवा० २। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनं, अनुरूपोऽनुकूलो वा योगो व्यापार सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूप। अणो –लघो पश्चाज्जाततया वाऽनुशब्दवाच्यस्य योऽभिधेयो योगो–व्यापारस्तत्सम्बन्धो वाऽणुयोगो अनुयोगो वा। जं० प्र० ४। दृष्टिवादचतुर्थो भेद। सम० १२८। नियोग। आव० ६९४। अनुयोजनम्, अनुकूलो वा योग। अणु–सूत्रं, महान

अर्थस्ततो महतोऽर्थस्याणुना सूत्रेण योगो वा। ओघ० ४। विचार.। ठाणा० ४८१, ४९५। अनुरूपोऽनुकूलो वा योगः। मम० १३१। अध्ययनार्थं। आव० ५४। सूत्रस्पर्शकनिर्युक्तिः सूत्रानुगमश्च। आव० ८६। परीक्षा। आव० १५७।

अणुकंपं–अनुकम्पां–उपष्टम्भम्। ठाणा० १७०।

अणुकंपओ–अनुकम्पकः–अनुरूपक्रियाप्रवृत्तिः। उत्त० ३५९।

अणुकंपा–अनुकम्पा, अनुग्रहः। दश० ६७। भक्तिः। ओघ० १९६। आव० ३४८। सम्यक्त्वगुणविशेष.। आव० ५९१। अनुक्रोशः। सम० १२७। दीनानाथविषयं दानम्। ठाणा० ४९६।

अणुकंपाए–अनुकम्पया–अनुग्रहेण। व्य० द्वि०-१७२ आ।

अणुकंपे–अनुकम्पते, उपकुरुते। उत्त० ४१९।

अणुकड्ढइ–अनुकर्षयति। आव० २१८।

अणुकुएति–प्रच्छादयति, अणुक्षिप्ता। नि० चू० प्र०१८० अ।

अणुकुयितं–अश्लथम्। बृ० द्वि० २५२ अ।

अणुकूला–सजमविघ्नकरा (राज्यार्पणादिका)। नि० चू० प्र० १९४ आ।

अणुक्कंतो–अनुक्रान्त –अनुचीर्णः। आचा० ३०६।

अणुक्कमं–अनुक्रमः। आव० ३४२। पारम्पर्यम्। उत्त० १४७।

अणुक्कमंतो–अनुक्रम्यमाण., प्रेर्यमाण। सूत्र० १३६।

अणुक्कसाई–अनुत्कशायी, अणुकषायी, उत्कण्ठित.। सत्कारादिषु शेत इत्येवं शील उत्कषायी, न तथा। यो न सत्कारादिकमकुर्वते कुप्यति, तत्सम्पत्तौ वा नाहङ्कारवान् भवति सः। उत्त० १२४। अणव –स्वल्पा. सज्वलननामान इतियावत् कषाया –क्रोधादयो यस्य। उत्त० ४२०।

अणुगच्छइ–अनुगच्छति, आसन्नो भवति। जं० प्र० १८७।

अणुगच्छण–अनुगमनम्; आगच्छत प्रत्युद्गमनम्। दश० २४१।

अणुगच्छमाणो–अनुगच्छन्–अवगच्छन्–बुद्ध्यमान सन्। आचा० २२२।

अणुगम–अनुगम:, अनुगमनमनेनास्मादस्मिन्निति वा अर्थकथनम्। आचा० ३। अन्वयः। विशे० ९६४।

अणुगमणं–अनुगमनम्, आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। उत्त० १७।

अणुगमिओ–अनुगमित, अनुनीत। आव० ५५।

अणुगमो–अनुगमः, सूत्रार्थयोरनुरूपसंबंधकरणम्। विशे० ४३१। निक्षिप्तसूत्रस्यानुकूल परिच्छेदोऽर्थकथनम्। जं० प्र० ५।

अणुगयं–अनुगतं, अनवच्छिन्नम्। प्रश्न० ६६। युक्तम्। दश० २०७। अभिप्रायानुवर्तिनमात्मानम्। उत्त० ३२२। युक्त.। उत्त० ६३१।

अणुगामं–अनुग्राम, ग्राममार्गानुकूल लघुर्वा ग्राम., रूढित एकस्माद्वा ग्रामादन्यो ग्राम। उत्त० ९१।

अणुगामियत्ताए–अनुगामिकता–परम्परया शुभानुबन्धसुखाय भविष्यति। जीवा० २४२।

अणुगीया–अनुगीता तीर्थकरादिभ्यः श्रुत्वा प्रतिपादिता। उत्त० ३८५।

अणुग्गह–अनुग्रहः, अनुग्रहपरिहरणा अक्खोडभंगपरिहरणा, (अकृष्टभूशुल्कपरिहार) आव० ५५२। ज्ञानाद्युपकारः। ठाणा० १५५।

अणुग्गहकसिणं–छण्हं मासाणं आरोवियाणं छद्दिवसा गता, ताहे अण्णो छम्मासो आवण्णो, ताहे जं तेण अद्धवूढं त ज्झोसितं जं पच्छा आवण्ण छम्मासित तं वहति, एत्थ पंचमासा चउव्वीसं च दिवसा जेग ज्झोसिया। नि० चू० तृ० १३५ अ।

अणुग्गहत्थं – अनुग्रहार्थं–अनुग्रह – उपकारोऽभिधीयते, अर्थशब्द प्रयोजनवचन.। ओघ० ४।

अणुग्गहपरिहारो–अनुग्रहपरिहार –राजकृतानुग्रहवशेन एकद्वित्र्यादिवर्षमर्यादया यथोक्तरूप खोटादिर्भजन् एक द्वे त्रीणि वर्षाणि यावत् वसति, यावन्तं वा कालं राज्ञानुग्रहः कृतस्तावन्तं काल वसति, न च हिरण्यादि प्रददाति, नापि वेष्टिं करोति, न चापि चारभटादीनां भोजनादि प्रदान विधत्ते, एष खोटादिभगो। व्य० प्र० ४५ अ। तत्तिय काल सो दव्वादिसु परिहरिज्जति तावत्कालं न दण्ड्येतेत्यर्थ। नि० चू० तृ० ८९ आ।

अणुग्गहो–अनुग्रह, उपकार.। ओघ० ४।

अणुग्गामो–अनुग्रामः, विवक्षितग्रामानन्तरो ग्राम.। औप० २२।

अणुग्घाई–अनुद्घातिक–यत्र गुरुमासादि प्रायश्चित्तं वर्ण्यते। प्रश्न० १४५।

अणुग्घाडिया–अनुद्घाटिता, अस्पृष्टा। दश० ४१।

अणुग्घाता गुरव । नि० चू० प्र० ८७ अ ।
अणुग्घातियं–ज गिरंतरं वहति गुरुं। नि० चू० प्र० ३०५ आ। गुरुगं। नि० चू० प्र० २५७ अ।
अणुग्घायं–आचारप्रकल्पस्य सप्तविंशतितमो भेदः। आव० ६६०।
अणुग्घायकसिणं–जं कालगं जहा मासगुरुगादि अहवा ज गिरंतरं दागं एस मासलहुगार्दिपि णिरतरं दिज्जमाणं अणुग्घात भवति। नि० चू० तृ० १३५ आ।
अणुग्घायण–अणोद्‌घातन–अणत्यनेन जन्तुगणश्चतुर्गतिकं ससारमित्यण–कर्म्म तस्योत्–प्राबल्येन घातनम्–अपनयनम्। आचा० १४७।
अणुग्घायाणि–गुरूणि प्रायश्चित्तानि। बृ० तृ० ६७ अ।
अणुघट्टंता–अतृप्यन्त'। ओघ० ७८।
अणुघाइय–अनुद्घातं, न विद्यते उद्घातो–लघुकरणलक्षणो यस्य तपोविशेषस्य तत् यथाश्रुतदानं, तद्येषा प्रतिषेवा-विशेषतोऽस्ति ते। ठाणा० ३११।
अणुचरिया–चरिका, नगरप्राकारयोरपान्तराले। बृ० तृ० ५३ अ।
अणुचिण्णो–अनुचीर्णम्, आचरितम्। आव० २२७। अनुष्ठित । ओघ० १०३।
अणुचिंतणं–अनुचिन्तनम्, पर्यालोचनम्। आव० ५८९।
अणुचिन्नं–अनुचीर्णम्, सम्यक् तदर्थावगमासगशक्तिग-र्भानिवर्तकसमभावप्राप्त्या धर्ममेघनामकसमाधिरूपेण परिणमि-तम्। जीवा० ४। अनुचीर्णाः–कायसंगमागता सम्पाति-मादय । आचा० २१७।
अणुचिय–अनुचित –भावित. शैक्षो वा। बृ० द्वि० २३८ अ।
अणुजत्तं–अनुयात्रम्। उत्त० ३०४। अनुयात्रा, राजपा-टिका। आव० ७२०।
अणुजत्ता–अनुयात्रा। आव० ३६५।
अणुजाए–अनुजात', सदृश । सूर्य० २३३।
अणुजाणं–रथयात्रा। बृ० द्वि० १५५ अ। बृ० प्र० २५८ आ। व्य० द्वि० १७ आ।
अणुजाणपेक्खओ–अनुयानप्रेक्षक.। आव० ५७७।
अणुजाणे–अनुजानन्। उत्त० २९३।
अणुजाते–पितृसम । ठाणा० १८४।
अणुजायं–अनुयातं, मृतम्। जं० प्र० २१२।
अणुजीवंति–अनुजीवन्ति–तदुपार्जितवित्ताद्युपभोगत. उप-जीवन्ति। उत्त० ४४१।
अणुजोगगत – तीर्थकरादिपूर्वभवादिव्याख्यानग्रंथो गण्डि-कानुयोगश्च भरतनरपतिवंशजानां निर्वाणगमनानुत्तरविमान-वक्तव्यताव्याख्यानग्रन्थ इति द्विरूपेऽनुयोगे गतोऽनयोग-गत । ठाणा० ४९१।
अणुजोगी – अनुयोगी–अनुयोगो–व्याख्यानं प्ररूपणं वा। ठाणा० ३७५।
अणुजोगो–अणो.–लघो पश्चाज्जाततया वा अनुशब्दवाच्यस्य सूत्रस्य योऽभिधेये योगो–व्यापारस्तेन 'सम्बन्धो' वा सो-ऽणुयोगोऽनुयोगो वेति। ठाणा० ३। अणु–पच्छाभावओ य थेवे य। बृ० प्र० ३३ अ। विचार । सम० ५०। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनम्, सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूपः। ठाणा० ३।
अणुज्जंगी–अनवद्याङ्गी, शिवादेवीविशेषणम्। उत्त० ४९६। श्रीमहावीरस्वामिन सुता जमालेर्भार्या, प्रियदर्शनाऽपर-नाम। उत्त० १५३।
अणुज्जइज्जमाणाई–एकं स्वरूपतोऽनृजूनि अपर च तेषां क्वचित्कार्येऽनुपयोगात्केनचिदनृजूक्रियमाणानि। उत्त० ५४९।
अणुज्जता–ऋजुभावविरहितं'। नि० चू० प्र० २८९ आ।
अणुज्जा–अनवद्याङ्गी, श्रीमहावीरस्वामिनो ज्येष्ठा भगिनी, सुदर्शनाऽपरनाम। उत्त० १५३। महावीरस्वामिन' पुत्री-नाम। आचा० ४२२।
अणुज्झियत्तं–वराकत्वम्। बृ० तृ० २ आ।
अणुज्जुए – अनृजुक, कश्चिदृजूकर्त्तुमशक्यतया। उत्त० ६५६।
अणुज्जुकं–अनृजुकम्, वक्रम्, अधर्मद्वारस्य नवमं नाम। प्रश्न० २६।
अणुट्ठाणे–अनुत्थाने। ठाणा० ३३०।
अणुट्ठिएसु–अनुत्थितेषु–श्रावकादिषु। आचा० २५६।
अणुट्ठिया–अनुत्थिता, निविष्टा। आव० ७२७।
अणुट्ठिहंतो–अनुत्तिष्ठन्त'। बृ० तृ० ४ अ।
अणुण्णवण–अनुज्ञापयति। ओघ० १९९।
अणुण्णवणाजयणा – वसत्याद्यनुज्ञापनदोषगुणा । नि० चू० तृ० १२ आ।
अणुण्णवेंति–अनुज्ञापयन्ति। आव० ११७।
अणुण्णासं–नासिकाविनिर्गतस्वरानुगतम्। जं० प्र० ४०।

अणुण्णेत्ता–अनुनीय–प्राप्य ध्यात्वा। सम० १२३।

अणुतडियमेय–अनुतटिकाभेदः, अवटतटभेदवद् यो भेद.। भग० २२४।

अणुतडियाभेदे–अनुतटिकाभेद., इक्षुत्वगादिकः। प्रज्ञा० २६७।

अणुत्तपत्तो–लज्जनीय। नि० चू० प्र० २६६ आ।

अणुत्तरं–अनुत्तरम्, सम्यक्। दश० १५९। अनन्यसदृशः। आव० ६०। अनुत्तर–सर्वसंयमस्थानोपरिवर्त्तिनं। उत्त० ३९३। अनुत्तरा–सर्वलोकाकाशोपरिवर्त्तिनीमतिप्रधानां वा। उत्त० ३९३।

अणुत्तर–अनुत्तरम्, वृद्धिरहितम्। आचा० १४।

अणुत्तरणवासो–अनुत्तरणपाश, आत्मन पारतन्त्र्यहेतुतया पाशवत्पाश', अनुत्तरणश्चासौ पाशश्च। उत्त० ४३। अनुत्तरणवास –न विद्यते उत्तरणं–पारगमनमस्मिन् सतीत्यनुत्तरण, स चासौ वासश्च–अवस्थानम्। उत्त० ४३।

अणुत्तरनाणी–केवलज्ञानवान्। उत्त० २७०।

अणुत्तरधरे–न विद्यते उत्तरमन्यत्प्रधानमेषामिति। उत्त० ३५७।

अणुत्तरधरो–अनुत्तरधर., न विद्यते उत्तर–अन्यत्प्रधानमेषामित्यनुत्तरा, ते च प्रक्रमात्प्रकर्षप्राप्ता ज्ञानादय एव गुणास्तान् धारयतीति। अनुत्तरान् गुणान् धारयतीति वा। उत्त० ३५७।

अणुत्तरविमाणे–नैषामन्यान्युत्तराणि विमानानि सन्ति इति अनुत्तरविमानानि। अनु० ९२।

अणुत्तरे – स्थित्यादिभि' सकलनरकज्येष्ठेऽप्रतिष्ठान इति। उत्त० ३९२।

अणुत्तरो–अनुत्तर –न विद्यन्ते उत्तरा –प्रधाना स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्यादिभिरेभ्योऽन्ये देवा'। उत्त० ७०२।

अणुत्तरो–अनुत्तर, कृष्णवासुदेवागमनम्। आव० १६३। अचल १ विजयभद्र २ बलदेवत्रयागमनम्। आव० १६३।

अणुत्तरोववाइय–अनत्तरोपपातिकम्। भग० २२२।

अणुत्तरोववाइया–अनुत्तरोपपातिका। प्रज्ञा० ६९।

अणुदिन्नं–(अनुदीर्णम्)। भग० ५८।

अणुदिसा–अनुदिश, प्रतिदिश। दश० २०१। एकप्रदेशा अनुत्तरा (दिक्कोणा)। ठाणा० १३३।

अणुद्दिट्ठो–अनुद्दिष्ट, यात्रान्तिकादिभेदवर्जित। प्रश्न० १०८।

अणुद्धरी–अनुद्धरी, आत्मदोषोपसहारविषये द्वारवत्यामर्हमित्रश्रेष्ठिभार्या। आव० ७१४।

अणुद्धुअ – अनुद्धूताम्, आनुरूप्येण यथामार्दङ्गिकविधि उद्धूता–वादनार्थमुत्क्षिप्ता। जं० प्र० १९४।

अणुधम्मो–अनुधर्म। सूत्र० ३९९।

अणुनई–अनुनदि, नदीं नदीं प्रति। आव० ४५३।

अणुन्नवनं–अनुज्ञातम्। ओघ० १६०।

अणुनाओ–अनुज्ञात.। ओघ० २१५।

अणुनासं–सानुनासिक नासिकाकृतस्वरम्। ठाणा० ३९६।

अणुन्नया–अनुन्नया–नोर्ध्वमुखा। व्य० द्वि० २३७ आ।

अणुन्नवणा–अनुज्ञापना, वन्दनके द्वितीयं स्थानम्। आव० ५४८।

अणुन्नविय – अनुज्ञापित। आचा० ४२६। अनुज्ञाप्य–याचित्वा। आचा० ३३८।

अणुन्नवेमाण – तत्स्वजनादींस्तत्परिष्ठापनायानुज्ञापयन्त। ठाणा० ३५४।

अणुन्ना–अनुज्ञा, अनुमोदनम्। सूत्र० ३२९। सूत्रार्थयोरन्यप्रदानम्। व्य० प्र० २६ अ। अधिकारदान। ठाणा० १३९।

अणुन्नायं–अनुज्ञातम्, भोग्यतयैव वितीर्णम्। प्रश्न० १०२।

अणुपभु – जुवराया, सेणावति। नि० चू० प्र० १७४ आ। सेनाधिपति। बृ० प्र० ९०आ।

अणुपरियन्ति–अनुपरियन्ति, सातत्येन पर्यटन्ति। उत्त० २९६।

अणुपरिवट्टइ – अनुपरिवर्त्तयते, आत्मनश्चावयते। सूर्य० १०७।

अणुपरिवट्टिय – अनुपरिवर्त्त्य, प्रादक्षिण्येन परिभ्रम्य। जीवा० ३७५, ३९९।

अणुपरिहारी–जतो जतो परिहारी गच्छति ततो ततो अणुपिट्ठतो गच्छति। अणु–थोवं पडिलेहणादि 'माहेज्जं करेतीति। नि० चू० तृ० १३२ आ।

अणुपविट्ठे अनुप्रविष्ट –तदुदयवर्ती। ठाणा० २१९।

अणुपस्सओ–अनुपश्यत –पर्यालोचयत'। उत्त० ३१०।

अणुपात्तं–कम्मं ण कारविज्जतित्ति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणुपालइत्ता–अनुपाल्य–सततमासेव्य। उत्त० ५७२।

अणुपालणा–अनुपालना, अमु० विशुद्धिः, प्रत्याख्यानशुद्धया पञ्चमो भेदः । आव० ८४७ ।

अणुपालणासुद्धं–अनुपालनाशुद्धं–कान्तारादिषु न भग्नं यत्प्रत्याख्यानम् । ठाणा० ३४९ ।

अणुपालियं–अनुपालितं, पूर्वकालसाधुभिः पालितत्वाद्विवक्षितसाधुभिश्चानु–पश्चात्पालितमिति । प्रश्न० ११२ ।

अणुपालिया–आत्मसंयमानुकूलतया पालिता । ठाणा० ४४० ।

अणुपालेइ–अनुपालयति । भग० १२५ ।

अणुपालेमि–अनुपालयामि, पौनःपुन्यकरणेन । आव० ७६१ ।

अणुपिट्टि–आनुपूर्व्या । सम० ६८ ।

अणुपुव्वसो–अनुपूर्वतः, क्रमेण । उत्त० २५२ । आनुपूर्व्या–क्रमेण । उत्त० ५१८ ।

अणुपुव्वि–आनुपूर्वी, मूलादिपरिपाटी । जं० प्र० २९ । शास्त्रीयोपक्रमभेदः । आचा० ३ ।

अणुपुव्विविहारीणं–अनुपूर्वविहारिणां–प्रतिपालितदीर्घसंयमानां शास्त्रार्थग्रहणप्रतिपादनोत्तरकालमवसीदत्संयमाध्ययनाध्यापनक्रियाणां निष्पादितशिष्याणामुत्सर्गतः द्वादशसंवत्सरसंलेखनाक्रमसंलिखितदेहानां । आचा० २६७ ।

अणुपुव्वेणं–आनुपूर्व्या–यथेष्टकालावश्यकक्रियारूपया चतुर्थषष्ठाचाम्लादिकया । आचा० २८४ । अनुक्रमेण–परिपाट्या यौगपद्येन । आचा० २४१ ।

अणुपुव्वो–अनुपूर्वः, पूर्वस्याः पूर्वस्या अनु । जीवा० २७० ।

अणुपेहा–अनुप्रेक्षा, अनु–पश्चाद्भावे प्रेक्ष ..., प्रेक्षा, स्मृति, ध्यानाद्भ्रष्टस्य चित्तचेष्टा । आचा० ४३१ ।

अणुपेहे–अनुगुणनं करोति । ओघ० ...।

अणुप्प–अनर्घ्यः–अनार्पणीयः, अलौकनीयः । ठाणा० ४८५ ।

अणुप्पग्गंथे–अनुरूपतया औचित्येन विरतेनेत्वपुण्योऽणुभ्या-दणुरपि वा–सूक्ष्मोऽप्यल्पोऽपि प्रगतो ग्रन्थो–धनादिर्यस्य यस्माद्वा । ठाणा० ...

अणुप्पयाउं–अनुप्रदातुं–परपरकेण प्रदातुम् । व्य० प्र० २१७ आ ।

अणुप्पवाए–अनुप्रवादः, पूर्वविशेषः । उत्त० ... । विशे० ९६१ ।

अणुप्पवादपुव्वं–अनुप्रवादपूर्वम् । आव० ३१६ ।

अणुप्पविसे–अनुप्रविशेत्, मनसि लब्धास्पदो भवेत् । उत्त० ९९ ।

अणुप्पसूयाइं–अनुप्रसूता–आश्रिता । आचा० ३४८ ।

अणुप्पियं–अनुमतम् । बृ० द्वि० ३ अ ।

अणुपेच्छा–अविह्वला । उप० मा० १४० ।

अणुप्पेह–धर्मध्यानस्य पश्चात्प्रेक्षणानि–पर्यालोचनान्यनुप्रेक्षा । भग० ९२६ ।

अणुप्पेहा–मनसा । बृ० द्वि० ५४ आ । अनुप्रेक्षा, अर्हद्गुणानां मुहुर्मुहुः सततमनुचिन्तना । आव० ७८६ । यो मनसा परिवर्तयति, न वाचा । दश० ३२ । ध्यानोपरमकालभाविनी अनित्यत्वाद्यालोचनारूपा । आव० ५९० । सूत्रार्थानुस्मरणं ध्यानस्य पश्चात् पर्यालोचनानि, भावना । ठाणा० १९० । सूत्रवदर्थेऽपि सम्भवति विस्मरणमतः सोऽपि परिभावनीय इत्यनुप्रेक्षणं, चिन्तनिका । ठाणा० ३४९ । ग्रन्थार्थयो चिन्तनम् । ओघ० १८९ ।

अणुप्फासे–अनुस्पर्शः, अनुभावः । दश० १९८ ।

अणुफासो–अणुभवो । दश० चू० ९६ ।

अणुबंध–अनुबन्ध, निरन्तरम् । ओघ० १९८ । सन्तानभावेन प्रवृत्ति । जं० प्र० १२५ ।

अणुबंधो–विवक्षितपर्यायेणाव्यवच्छिन्नेनावस्थानम् । भग० ८०२ । सातत्येन भवनं तत्परिणामानाम् । उत्त० ३३९ ।

अणुबद्धं–अनुबद्धम्, सन्ततम् । आव० २२८ । ठाणा० ४३० ।

अणुबद्धरोसपसरो–अनुबद्धः सन्ततः कोऽर्थः अव्यवच्छिन्नो रोषस्य–क्रोधस्य प्रसरो–विस्तारोऽस्येति अनुबद्धरोषप्रसरः । उत्त० ७११ ।

अणुबद्धा–सन्ततमालिङ्गिता । सम० १२६ ।

अणुबलं–अनुवेलम् । उत्त० १७८ ।

अणुब्भडो–अनुद्भट, अनुल्बण । जीवा० २७५ । उत्त० ५८७ ।

अणुभवणसण्णा–अनुभवनसंज्ञा, आहाराद्या । आचा० १२ ।

अणुभवो–अनुभव, स्वेन स्वेन रूपेण प्रकृतीनां विपाकतो वेदनानुभवः । विशे० १००६ ।

अणुभाग– अनुभाग, आयुर्द्रव्याणामेव विपाक.। भग० ,२८०। अचिन्त्या शक्तिर्वैक्रियकरणादिका। ठाणा० ६९, १४४।

अणुभागकम्मे – अनुभागकर्म–कर्मप्रदेशानां सवेद्यमानताविषयो रसस्तद्रूपं कर्म। भग० ६५।

अणुभागो–अनुभाग., विशिष्टवैक्रियादिकरणविषयाऽचिन्त्या शक्ति.। जीवा० १०९। सामर्थ्यम्। प्रज्ञा० ८८।

अणुभावकम्मे–यथाबद्धरसो वेद्यते तदनुभावतो वेद्यं कर्मानुभावकर्मेति। ठाणा० ६६।

अणुभावनामनिहत्ताउए – अनुभावनामनिधत्तायु –अनुभाव.–प्रकर्षप्राप्तो विपाकः, तत्प्रधानं नाम, यद्यस्मिन् भवे तीव्रविपाकं नामकर्मानुभूयते त(य)था नारकायुषि अशुभवर्णगन्धरसस्पर्शोपघातानादेयदु स्वरायश.कीर्त्यादिनामानि तदनुभावनाम तेन सह निधत्तमायुरनुभावनामनिधत्तायुः। प्रज्ञा० २१८।

अणुभावे–अनुभाव., विपाको रसविशेष.। भग० ३५। तीव्रतमदु खादि। आव० ४९६। अनुभाव। सूर्य० २७९। विपाक उदयो रस इत्यर्थ.। ठाणा० ४१४।

अणुभावो–अनुभावः, माहात्म्यम्। सूत्र० १२६। विपाकः। प्रज्ञा० २१८। स्वभाव, स्वरूपम्। जं० प्र० २९९। तीव्रादिभेदो रसः। सम० १०। शापानुग्रहसामर्थ्यम्। उत्त० ३६५। प्रभाव। जं० प्र० २४६। रसः, विपाक। विशे० ५६५। कारणम्। जीवा० ३२९। विपाकोदय। जीवा० १३०। सामर्थ्यादिलक्षण। आव० ५९६। विपाक.। आव० ५९८। रसः। उत्त० २३०।

अणुभासइ–अणुभापते। आव० ३११।

अणुभासणा–अनुभाषणा, प्रत्याख्यानशुद्धि.। आव० ८४७।

अणुभासमाणे–अनुभाषमाण। विशे० १००५।

अणुमए–अनुमतम्, मानितम्। भग० १२२। कार्यव्याघातस्य पश्चादपि मत.। भग० ४६८।

अणुमओ–अनुमत, अभिष्टो. मोक्षाङ्गता। आव० ३२६। अभिप्रेता। बृ० प्र० २८९ आ।

अणुमगा–शीघ्रम्। (आउ०)

अणुमतं–अनुमत, वैगुण्यदर्शनस्यापि पश्चान्मतम्। औप० ९६।

अणुमत्ता–अनुमति। बृ० तृ० १२८ अ।

अणुमयं–अनुमतम्, अभिरुचितम्। ओघ० ६४। अनुमतः–सम्मन। जीवा० २७६।

अणुमया–अनुमता, अनुज्ञाता। प्रज्ञा० २५७। विप्रियदर्शनस्य पश्चादपि मता। विपा० ४२।

अणुमहत्तरो – मूलमहत्तरे असण्णिहिते जो पुच्छणिज्जो धुरे ठायति सो। नि० चू० प्र० १५८ आ।

अणुमहयरो–मूलमहत्तराभावे प्रष्टव्य पुर.स्थानश्च। बृ० द्वि० १९० आ।

अणुमाणं–अनुमानम्, स्वार्थम्। आव० ४२७। दृष्टान्त। दश० १३०, १२६।

अणुमाणइत्ता–लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादित्वमाचार्यस्याकलय्य यदालोचनम्। भग० ९१९। अनुमानं कृत्वा। ठाणा० ४८४।

अणुमाणे–अनुमानम्, अनु–लिङ्गग्रहणसम्बन्धस्मरणादेः पश्चान्मीयतेऽनेनेत्यनुमानम्। भग० २२२। अन्विति–लिंगदर्शनसम्बन्धानुस्मरणयो पश्चान्मानं – ज्ञानमनुमानम्। ठाणा० २५४।

अणुमाणेउं – अनुमान्य, सम्यक् क्षमयित्वा। व्य० प्र० २५४ अ।

अणुमोदणे–साइज्जणामेओ। नि० चू० प्र० १०३ आ।

अणुम्मुयंतो–अनुन्मुञ्चन्, अपरित्यजन्। आव० ४०७।

अणुयत्तंतं–अनुवर्त्तयन्। आव० ३०५।

अणुया–अणुकाः। दश० १९३।

अणुयाणं–रथयात्रा। बृ० तृ० ६१ आ। पडिमातिमहिमा। नि० चू० प्र० २३९ आ।

अणुयोगं–अनुयोगो, व्याख्यानं विधिप्रतिषेधाभ्यामर्थप्ररूपणम्। विशे० २।

अणुरंगा–गड्डीए। नि० चू० प्र० ३२४ अ। घंसिका, यानविशेष। बृ० द्वि० १२५ आ।

अणुरंगिणी–अनुरङ्गिनी, अनुरज्यते–अनुकारं विदधातीत्येवशीला। जं० प्र० ५१८। सूर्य० १३६।

अणुरगो–घंजिओ। नि० चू० तृ० ३७ आ।

अणुरत्ता–अनुराग – भावत प्रतिबन्ध। उत्त० ३९४। आन्तरप्रतियोगत परस्परस्नेहवन्तौ। उत्त० ५२१। अनुरक्ता –सतन प्रतिबद्धा.। उत्त० ७०८।

अणुराओ–अनुराग। आव० ३०४।

अणुरागयं–अन्वागतम्, अनुरूपमागमनम्। भग० ११७।

अणुराधा–अनुराधा, नक्षत्रविशेष। सूर्य० १३०।

अणुराहा–नक्षत्रविशेष.। ठाणा० ७७।

अणुलिंपइ–अनुलिम्पति। जीवा० २५४।

अणुलिंपणं–अनुलिम्पन–सकृल्लिप्ताया भूमे पुनर्लेपनम्। प्रश्न० १२७।

अणुलिहंत–अनुलिखत्, अभिलङ्घयत्। सूर्य० २६४, जीवा० ३७९, ज० प्र० २९७। अनुलिखत्–अतिलङ्घयत्। प्रज्ञा० ९९।

अणुलिहति–अनुलिखति, अभिलङ्घयति। जीवा० २०९।

अणुलेवणं–अनुलेपनम्, सकृल्लिप्तस्य पुन पुनरुपलेपनम्। प्रज्ञा० ८०।

अणुलोमं–अनुलोमम्, अनुकूलमनुगुणं वा। जीवा० ३। अनुकूलकरणम्०। ठाणा० ३७६।

अणुलोमछाया–अनुलोमच्छाया, सूर्यच्छायाविशेष.। सूर्य० ९५।

अणुलोमणा–अनुलोमना–प्रज्ञापना। वृ० तृ० १२३ आ।

अणुलोमवाउवेगो–अनुलोमवायुवेग। अनुलोम–अनुकूलो वायुवेग, शरीरान्तर्वर्त्तिवातजवो यस्य स। वायुगुल्मरहितोदरमध्यप्रदेश। जीवा० २७७।

अणुलोमिअ–अनुलोमम्, मनोहारि। दश० २२३।

अणुलोमियं–कटुगफरिमादिदोसवज्जिय जं भासमाणो अभासओ लभइ। दश० चू० ११५।

अणुल्लय–द्वीन्द्रियविशेष। उत्त० ६९५।

अणुल्लसिओ–असिच्यमान। आव० ६२१।

अणुल्लावे–अनुलाप–पौन पुन्यभाषणम्। ठाणा० ४०८।

अणुवउत्तो–अनुपयुक्त, साधुं प्रत्यदत्तावधान। ओघ० ७३।

अणुवकयं–अनुपकृतम्, परैरवर्तितम्। आव० ५९७।

अणुवघाइए–अनुपघातिके–उपघातश्च यत्र न भवति उच्चाहादि तस्मिन्। ओघ० १२२।

अणुवघाइया–आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेद.। सम० ४७।

अणुवचओ–अनुपचय, अनुपचीयमानता, अनुपादानमिति। उत्त० ६।

अणुवट्टंते–अनुपतिष्ठति, अरुध्यमाणे अरूज्झते। ओघ० १४५।

अणुवट्टावणीया–अनुवर्तनीया। ओघ० १३४।

अणुवट्टेति–करोति। भग० ३२०।

अणुवत्त–अनुवृत्त–भूयः प्रवृतो वारद्वयं प्रवृत्तः। व्य० द्वि० ४४१ अ।

अणुवत्तइ–अनुवर्त्तते। आव० ५६१।

अणुवत्ति–अनुवृत्ति–सर्वेषु अर्थेषु अप्रतिकूलता। वृ० प्र० ४३ अ।

अणुवत्तिओ–अनुवर्तित। आव० १११। परिगृहीतो महाजनेन। व्य० द्वि० ४४१ आ।

अणुवत्तिया–परिवेष्टिता। नि० चू० प्र० १८४ आ।

अणुवत्ती–अनुवृत्ति। आव० ५१५।

अणुवत्ते–अनुवर्तमान–साम्प्रतकालभावी। दश० ६२।

अणुवदिट्ठं–जं नो आयरियपरंपरागयं मुत्कलव्याकरणवत्। नि० चू० द्वि० २३ आ।

अणुवदेसा–अनुपदेश.–गुरुणाऽनुक्त। ओघ० १५१।

अणुवभुज्जो–समक्तासवपिशितादिराहार., शुषिरतृणवल्कलादिरुपधि। वृ० तृ० ४७ अ।

अणुवमा–अनुपमा। जीवा० २७८।

अणुवयमाणा–अनुवदत–अनु–पश्चाद्वदत–पृष्ठतो वदतोऽन्येन वा मिथ्यादृष्ट्यादिना कुशीला इत्येवमुक्तः। आचा० २५१।

अणुवयारं–निष्ठुरं। नि० चू० प्र० २७८ अ।

अणुवरय–अनुपरतम्, अविरतम्। भग० १८१।

अणुवरयकाइया–अनुपरतकायिकी–देशत सर्वतो वा सावद्ययोगाद्विरत नोपरतोऽनुपरत कुतश्चिदप्यनिवृत्त इत्यर्थ तस्य कायिकी। प्रज्ञा० ४३६।

अणुवरयकायकिरिया–अनुपरतस्य–अविरतस्य सावद्यात् मिथ्यादृष्टे सम्यग्दृष्टेर्वा कायक्रिया–उत्क्षेपादिलक्षणा कर्म्मबन्धनिबन्धनम्। ठाणा० ४१।

अणुवसंते–अनुपशान्त, उदयावस्थ। प्रज्ञा० २९१।

अणुवसंपज्जमाणगती–अनुपसम्पद्यमानगति, परस्परमुपष्टम्भरहिताना पथि गमने, विहायोगतेश्चतुर्थो भेद। प्रज्ञा० ३२७।

अणुवसु–अनुवसु–सराग श्रावकश्च। आचा० २४०।

अणुवाए–अनुपात, अनुसार। प्रज्ञा० १४४। अनुगमनं–अनुराग उत्त० ६३१।

अणुवायगइए–अनुपातगति.–अनुसारगति.। सूर्य० १६

अणुभाग– अनुभाग, आयुर्द्रव्याणामेव विपाकः। भग० ,२८०। अचिन्त्या शक्तिर्वैक्रियकरणादिका। ठाणा० ६९, १४४।

अणुभागकम्मे – अनुभागकर्म–कर्मप्रदेशानां सवेद्यमानताविषयो रसस्तद्रूपं कर्म। भग० ६५।

अणुभागो–अनुभागः, विशिष्टवैक्रियादिकरणविषयाऽचिन्त्या शक्ति.। जीवा० १०९। सामर्थ्यम्। प्रज्ञा० ८८।

अणुभावकम्मे–यथाबद्धरसो वेद्यते तदनुभावतो वेद्यं कर्मानुभावकर्मेति। ठाणा० ६६।

अणुभावनामनिहत्ताउए – अनुभावनामनिधत्तायु–अनुभावः–प्रकर्षप्राप्तो विपाकः, तत्प्रधानं नाम, यद्यस्मिन् भवे तीव्रविपाकं नामकर्मानुभूयते त(य)था नारकायुषि अशुभवर्णगन्धरसस्पर्शोपघातानादेयदु स्वरायश.कीर्त्यादिनामानि तदनुभावनाम तेन सह निधत्तमायुरनुभावनामनिधत्तायु। प्रज्ञा० २१८।

अणुभावे–अनुभाव, विपाको रसविशेष। भग० ३५। तीव्रतमदु खादि। आव० ४९६। अनुभाव। सूर्य० २७९। विपाक उदयो रस इत्यर्थ। ठाणा० ४१४।

अणुभावो–अनुभाव, माहात्म्यम्। सूत्र० १२६। विपाक। प्रज्ञा० २१८। स्वभाव, स्वरूपम्। जं० प्र० २९९। तीव्रादिभेदो रसः। सम० १०। शापानुग्रहसामर्थ्यम्। उत्त० ३६५। प्रभाव। जं० प्र० २४६। रस., विपाक। विशे० ५६५। कारणम्। जीवा० ३२९। विपाकोदय। जीवा० १३०। सामर्थ्यादिलक्षण। आव० ५९६। विपाक। आव० ५९८। रसः। उत्त० २३०।

अणुभासइ–अणुभाषते। आव० ३११।

अणुभासणा–अनुभाषणा, प्रत्याख्यानशुद्धिः। आव० ८४७।

अणुभासमाण–अनुभाषप्रमाण। विशे० १००५।

अणुमए–अनुमतम्, मानितम्। भग० १२२। कार्य्यव्याघातस्य पश्चादपि मत.। भग० ४६८।

अणुमओ–अनुमत, अभिष्टो मोक्षाङ्गता। आव० ३२६। अभिप्रेता। वृ० प्र० २८९ आ।

अणुमगा–शीघ्रम्। (आउ०)

अणुमतं–अनुमत, वैगुण्यदर्शनस्यापि पश्चान्मतम्। औप० ९६।

अणुमन्ना–अनुमति। वृ० तृ० १२८ अ।

अणुमयं–अनुमतम्, अभिरुचितम्। ओघ० ६४। अनुमत–सम्मत। जीवा० २७६।

अणुमया–अनुमता, अनुज्ञाता। प्रज्ञा० २५७। विप्रियदर्शनस्य पश्चादपि मता। विपा० ४२।

अणुमहत्तरो – मूलमहत्तरे असण्णिहिते जो पुच्छणिज्जो धुरे ठायति सो। नि० चू० प्र० १५८ आ।

अणुमहयरो–मूलमहत्तराभावे प्रष्टव्यः पुर स्थानश्च। बृ० द्वि० १९० आ।

अणुमाणं–अनुमानम्, स्वार्थम्। आव० ४२७। दृष्टान्त। दश० १३०, १२६।

अणुमाणइत्ता–लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादित्वमाचार्यस्याकलय्य यदालोचनम्। भग० ९१९। अनुमानं कृत्वा। ठाणा० ४८४।

अणुमाणे–अनुमानम्, अनु–लिङ्गग्रहणसम्बन्धस्मरणादेः पश्चान्मीयतेऽनेनेत्यनुमानम्। भग० २२२। अन्विति–लिंगदर्शनसम्बन्धानुस्मरणयो पश्चान्मानं – ज्ञानमनुमानम्। ठाणा० २५४।

अणुमाणेउं – अनुमान्य, सम्यक् क्षमयित्वा। व्य० प्र० २५४ अ।

अणुमोदणे–साइज्जणामेओ। नि० चू० प्र० १०३ आ।

अणुम्मुअंतो–अनुन्मुञ्चन्, अपरित्यजन्। आव० ४०७।

अणुयत्तंतं–अनुवर्त्तयन्। आव० ३०५।

अणुया–अणुका.। दश० १९३।

अणुयाणं–रथयात्रा। बृ० तृ० ६१ आ। पडिमातिमहिमा। नि० चू० प्र० २३९ आ।

अणुयोगं–अनुयोगो, व्याख्यानं विधिप्रतिषेधाभ्यामर्थप्रख्याणम्। विशे० २।

अणुरंगा–गड्डीए। नि० चू० प्र० ३२४ अ। घंमिका, यानविशेष। बृ० द्वि० १२५ आ।

अणुरंगिणी–अनुरङ्गिनी, अनुरज्यते–अनुकारं विदधातीत्येवशीला। जं० प्र० ५१८। सूर्य० १३६।

अणुरगो–घंसिओ। नि० चू० तृ० ३७ आ।

अणुरत्ता–अनुराग – भावत प्रतिबन्ध। उत्त० ३९४। आन्तरप्रतियोगत परस्परस्नेहवन्तौ। उत्त० ५२१। अनुरक्ता –सतत प्रतिबद्धा.। उत्त० ७०८।

अणुराओ–अनुरागः। आव० ३०४।

अणुरागयं–अन्वागतम्, अनुरूपमागमनम्। भग० ११७

अणुराधा–अनुराधा, नक्षत्रविशेष। सूर्य १३०।

अणुसिट्ठी–अनुशासनमनुशास्ति,–सद्गुणोत्कीर्त्तनेनोपबृंहणं सा विधेयेति यत्रोपदिश्यते सा । ठाणा० २५३ । अनुशिष्टिः–उपदेशप्रदानम् । व्य० प्र० ११७ अ । शिक्षाम् । उत्त० ३२३ । धर्मकथाम् । ओघ० ७३ ।

अणुसूयगा – अनुसूचकाः–नगराभ्यतरे चारमुपलभन्ते, सर्वमनुसूचकेभ्य. कथयंति । व्य० प्र० १७० आ ।

अणुसूयत्तं–अपरशरीराश्रितता, परनिश्रा । सूत्र० ३५७ । अनुस्यूतत्वं–परनिश्रया कृम्यादित्वम् । सूत्र० ३५७ ।

अणुसोयचारी – अनुश्रोतश्चारि–प्रतिश्रयादारभ्य भिक्षाचारी । ठाणा० ३४२ । नद्यादिप्रवाहगामी । ठाणा० २७२ ।

अणुस्सासिय–अनुच्छ्वसत् । दश० १९ ।

अणुस्सियत्त–अनुत्सिक्तत्वम्–अनुद्धतत्वम् । उत्त० ५९१ ।

अणुस्सुयं–अनुश्रुतम्–अवधारितम् । उत्त० २४७ ।

अणुस्सुयत्तं–अनुत्सुकत्वम्–विषयसुख प्रति नि स्पृहत्वम् । उत्त० ५८६ ।

अणूया–अनूप , सजलप्रदेश । विशे० ७२७ ।

अणेगचित्ते–अनेकचित्त , अनेकानि चित्तानि कृषिवाणिज्यावलगनादीनि यस्यासौ, खलुरवधारणे, समारसुखाभिलाष्यनेकचित्त एव भवति । आचा० १६३ । अनेकसख्यानि चञ्चलतया चित्तानि–मनांसि यासा सा । उत्त० २९७ ।

अणेगगुणा–अनेकगुणा.–अनेकप्रकारा । बृ० प्र० ७५ अ ।

अणेगतालायराणुचरियं – नानाविधप्रेक्षाचारिसेविताम् । भग० ५४४ ।

अणेगदव्वो–अनेकद्रव्य । विशे० ४२४ ।

अणेगपत्ती–अनेकपत्नी । आव० ९५ ।

अणेगरूवधुणा–बहूनि वस्त्राणि एकीकृत्य धुनाति । ओघ० ११० ।

अणेगरूवधुणे – अनेकरूपा चासौ सङ्ख्यात्रयातिक्रमणतो युगपदनेकवस्त्रग्रहणतो वा धूनना च प्रकम्पनात्मिका अनेकरूपधूनना । उत्त० ५४२ ।

अणेगवासानउयं–अनेकवर्षनयुत, अनेकवर्षाणा–असङ्ख्येयवत्सराणां नयुत–सङ्ख्याविशेषम् । उत्त० २७७ ।

अणेगावाती–परस्परविलक्षणा एव भावा इति वादिनः । ठाणा० ४२५ ।

अणेलिस–अनीदृश–अनन्यसदृशम् । आचा० ४२९ ।

अणेव्वाणी – जाहे ताणि सुरादीणि ण लब्भति ताहे तेसिं अभावे परमं दुक्ख समुप्पज्जतित्ति, मोक्खऽभावो वा । दश० चू० ८८ ।

अणेसणा–अनेषणा–भिक्षादोषविशेष । आव० ५७५ ।

अणेसणिज्जं–अनेषणीयम्–आधाकर्मादिदोषदुष्टम् । आचा० ३२१ ।

अणोक्कंता–अनुपक्रान्ता–अनिराकृता । औप० ३४ ।

अणोग्घसिअ–अनिर्माजनम् । ज० प्र० ५७ ।

अणोज्जा–अनवद्या, स्वामिदुहिता । आव० ३९१ ।

अणोतप्पया–अलज्जनीयता । बृ० प्र० ३०९ आ ।

अणोदरया–अपारा (स०)

अणोमदंसी–अवमं–हीनं मिथ्यादर्शनाविरत्यादि तद्विपर्यस्तमनवमं तद्द्रष्टुं शीलमस्येत्यनवमदर्शी, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवान् । आचा० १६४ ।

अणोमाणं–अपमान अनादरकृतं न भवति । ओघ० १०३ ।

अणोरपारं–अनर्वाक्पारम्–विस्तीर्णस्वरूपम् । प्रश्न० ६२ । अनाद्यपर्यवसितम् । आव० ६०१ । अर्वाग्भागपरभागवर्जितमनाद्यनन्तम् । सूत्र० ४०३ । अनर्वाक्पारमिव महत्त्वादनर्वाक्पारम् । प्रश्न० ५१ । देशीवचनं, प्रचुरार्थे, आराद्भागपरभागरहिते । आव० ३४५ । (भक्त०)

अणोलहविज्जंतो–अविध्यापित । आव० ३८४ ।

अणोवणिहिआ – अनौपनिधिकी –वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेणाविरचनं प्रयोजनं यस्या इति । अनु० ५२ ।

अणोवमा–अनुपमा । प्रज्ञा० ३६४ ।

अणोवमाइ–खाद्यविशेष । ज० प्र० ११८ ।

अणोहट्टं–अजाजिय, कोटलाति उवकारेण विरहिय । नि० चू० प्र० १८३ अ ।

अणोहतरा–समारतरणासमर्था । आचा० १२३ ।

अणोहट्टिए–अनपघट्टक , यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्त्तमान निवारयति सोऽपघट्टकस्तदभावान् । विपा० ५२ ।

अणोहियं – अविद्यमानजलौघिकामतिगहनत्वेनाविद्यमानोद्दा वा । भग० ६७२ ।

अण्णउत्थिए – अन्ययूथिका अन्ययूथ–विवक्षितसघादपर सघस्तदस्ति येषां तेऽन्ययूथिकाः तीर्थान्तरीया । भग० ९८ । अन्यतीर्थिका । जीवा० १४३ ।

अणुवालए–गोशालकश्रावकविशेषः । भग० ३७० ।

अणुवासग–अनुप्रासकः, मिथ्यादृष्टिः । नि० चू० द्वि० २५ अ ।

अणुवासणा–अनुवासना, अपानेन जठरे तैलप्रवेशनम् । विपा० ४१ ।

अणुवित्तिवुद्धी–अनुवृत्तिबुद्धि–अनुगताकारबुद्धि । विशे० ।

अणुविद्धं–अनुविद्धं–मिश्रा व्याप्तास्य । जं० प्र० ९३ ।

अणुवीइ–अनुवीचि, आनुकूल्यम्, मैथुनाभिलाषम् । सूत्र० १११ । अनुचिन्त्य, विचार्य- सम्यग्विचिन्त्य । आचा० ३८६ । आलोच्य । दश० २२१ ।

अणुवीइनिट्ठाभासी–अनुविचिन्त्य निष्ठाभाषी पर्यालोच्य निश्चितभाषक । आचा० ३९२ ।

अणुवीइभासए–अनुविचिन्त्यभाषकः पर्यालोच्य भाषकः, द्वितीयव्रतस्य द्वितीया भावना । आव० ६ ।

अणुवीति–चिंतेऊण । नि० चू० प्र० १०७ आ ।

अणुवीयि–पुव्विं बुद्धीए अणुचिंतिय । दश० चू० ११५ ।

अणुवूहेत्ता–अनुबृंहयिता–परेण स्वस्य क्रियमाणस्य तत्सानुमोदयिता, सद्भावे हर्षकारी । ठाणा० ३६९ ।

अणुवेलंधर–लवणसमुद्रशिखारक्षक. । सम० ३३ ।

अणुवेलंधरराया–अनुवेलन्धरराजा, भुजगेन्द्रः । जीवा० ३१३ ।

अणुवेलंधरनागरातीणं–अनुवेलंधरनागराजानां नागजातिविशेषः । ठाणा० २२० ।

अणुवेहसलागा–शस्त्रकोशविशेषः । नि० चू० द्वि० १८ आ ।

अणुव्वट्टे–अनुद्वर्तयन्, तन्नस्य ... आव० २२ ।

अणुव्वणो–अनाश्रित– ... नि० चू० ...

अणुव्वतं–अनुव्रतम् । आव० ८२ ।

अणुव्वत्ता–अनुव्रतानि–अनु–महाव्रतकथनस्य पश्चात्तदप्रतिपत्तौ यानि व्रतानि कथ्यन्ते तानि अथवा सर्वविरतापेक्षया अणूनि गुणिनो व्रतानि । ठाणा० ३६१ ।

अणुव्वय – अनुवर्त्तिनी, पारिणामिकीबुद्धिदृष्टान्ते भार्या । आव० ४३५ । अन्विति–कुलानुरूपं व्रतम्–आचारोऽस्या अनुव्रता पतिव्रता इति, वयोऽनुरूपा वा । उत्त० ४०६ । अनुव्रतं–स्थूलप्राणातिपातनिवृत्ति । दश० १९२ ।

अणुव्वाणं–अनोध्या(स्या)नं–स्निग्धम् । ओघ० १७१ ।

अणुव्विग्गो–अनुद्विग्न–प्रशान्त परीषहादिभ्योऽबिभ्यत् । दश० १६३, १७९ । ...

अणुसंचरे – अनुसञ्चरे, अन्विति–लक्षीकृत्य सञ्चरे–त्वं सम्यक् सयमाध्वनि याया । उत्त० ४४६ ।

अणुसंसरइ–अनुसंसरति, दिग्विदिशागमनं भावदिगागमनं वा स्मरति, अनुसंस्मरति वा । आचा० २० ।

अणुसजइ–अनुसजति, सन्तानेनानुवर्त्तते । जीवा० २८४ ।

अणुसज्जणा–अनुसंजना । आव० १५७ । अव्यवच्छेदं करोति । उत्त० ५८४ । अनुवर्त्तना । बृ० प्र० २८९ अ ।

अणुसज्जमाणा–अनुसज्जन्त., सन्तानेनानुवर्तमाना । जं० प्र० ९५ ।

अणुसज्जित्था–अनुसक्तवन्त, पूर्वकालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्तः । भग० २७८ ।

अणुसज्जित्था – अनुषक्तवन्तः, कालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्त. सन्ततिभावेन भवन्ति स्म । जं० प्र० १२८ ।

अणुसट्ठं–अनुशिष्टं–उत्कलनम् । व्य० प्र० १९९ अ ।

अणुसट्ठि–अनुशासनम् – अनुशास्ति. सद्गुणोत्कीर्तनेनोपबृंहणम् । दश० ४६ । धम्मकहा । नि० चू० द्वि० १७० अ ।

अणुसट्ठी–उवदेसपदाणं, थुतिकरणं वा । नि० चू० तृ० १३४ आ । सद्भावपुरस्सरं प्रज्ञापना । बृ० द्वि० ८७ आ । उवदेसो । नि० चू० प्र० २०७ आ । ... अ । इहलोकापायदर्शनम् । बृ० द्वि० १०३ अ । अनुशासनम् । ठाणा० १५५ ।

अणुसम–अनुसमा–अनुरूपा, अविषमा । ठाणा० ...

अणुसमयं–समयमाश्रित्य । उत्त० २३१ । अनुसमयं प्रतिक्षणम् । सूर्य० ८० । सम० २० । सततम् । उत्त० ... ।

अणुसया–अनुशय– ... । जं० प्र० ११२ ।

अणुसारं–अनुस्वारवदनुस्वारम् । विशे० २७४ । अनक्षरमपि यदनुस्वारवदुच्चार्यते हुंकारकरणादिवत् तत् । आव० २५ । अलाक्षणिक मुखमुखोच्चारणार्थ । दश० ८६ ।

अणुसासणाणि–अनुशासनानि–हुत्थस्य सुस्थितासपादनानि । सम० ११८ । शिक्षणम् । उत्त० ६६७ ।

अणुसासम्मि–अनुशास्ति । उत्त० ... ।

अणुसासिज्जंतो–अनुशास्यमान, तत्र तत्र चोद्यमान । दश० २६६ । ...

अणुसिट्ठी–अनुशासनमनुशास्ति,–सद्गुणोत्कीर्त्तनेनोपबृंहणं सा विधेयेति यत्रोपदिश्यते सा। ठाणा० २५३। अनुशिष्टि–उपदेशप्रदानम्। व्य० प्र० ११७ अ। शिक्षाम्। उत्त० ३२३। धर्मकथाम्। ओघ० ७३।

अणुसूयगा – अनुसूचका –नगराभ्यंतरे चारमुपलभन्ते, सर्वमनुसूचकेभ्य कथयंति। व्य० प्र० १७० आ।

अणुसूयसं–अपरशरीराश्रितता, परनिश्रा। सूत्र० ३५७। अनुस्यूतत्वं–परनिश्रया कृम्यादित्वम्। सूत्र० ३५७।

अणुसोयचारी – अनुश्रोतश्चारि–प्रतिश्रयादारभ्य भिक्षाचारी। ठाणा० ३४२। नद्यादिप्रवाहगामी। ठाणा० २७२।

अणुस्सासिय–अनुच्छ्वसत्। दश० १९।

अणुस्सियत्त–अनुत्सिक्तत्वम्–अनुद्धतत्वम्। उत्त० ५९१।

अणुस्सुयं–अनुश्रुतम्–अवधारितम्। उत्त० २४७।

अणुस्सुयत्तं–अनुत्सुकत्वम्–विषयसुख प्रति निःस्पृहत्वम्। उत्त० ५८६।

अणूया–अनूप., सजलप्रदेश। विशे० ७२७।

अणेगचित्ते–अनेकचित्त, अनेकानि चित्तानि कृषिवाणिज्यावलगनादीनि यस्यासौ, खलुरवधारणे, समारसुखाभिलाष्यनेकचित्त एव भवति। आचा० १६२। अनेकसख्यानि चञ्चलतया चित्तानि–मनासि यासा सा। उत्त० २९७।

अणेगगुणा–अनेकगुणा –अनेकप्रकारा। बृ० प्र० ७५ अ।

अणेगतालाचराणुचरियं –नानाविधप्रेक्षाचारिसेविताम्। भग० ५४४।

अणेगदव्वो–अनेकद्रव्य। विशे० ४२४।

अणेगपत्ती–अनेकपत्नी। आव० ९५।

अणेगरूवधुणा–वहूनि वस्त्राणि एकीकृत्य धुनाति। ओघ० ११०।

अणेगरूवधुणे – अनेकरूपा चासौ सङ्ख्यात्रयातिक्रमणतो युगपदनेकवस्त्रग्रहणतो वा धूनना च प्रकम्पनात्मिका अनेकरूपधूनना। उत्त० ५४२।

अणेगवासानउयं–अनेकवर्षनयुत, अनेकवर्षाणा–असङ्ख्येयवत्सराणा नयुत–सङ्ख्याविशेषम्। उत्त० २७७।

अणेगावाती-परस्परविलक्षणा एव भावा इति वादिनः। ठाणा० ४२५।

अणेलिस–अनीदृश–अनन्यसदृशम्। आचा० ४२९।

अणेव्वाणी – जाहे ताणि सुरादीणि ण लब्भंति ताहे तेसिं अभावे परमं दुक्ख समुप्पज्जतित्ति, मोक्खऽभावो वा। दश० चू० ८८।

अणेसणा–अनेषणा–भिक्षादोषविशेष। ओघ० ५७५।

अणेसणिज्जं–अनेषणीयम्–आधाकर्मादिदोषदुष्टम्। आचा० ३२१।

अणोक्कंता–अनुपक्रान्ता–अनिराकृता। औप० ३४।

अणोग्घसिअ–अनिर्मार्जनम्। जं० प्र० ५७।

अणोज्जा–अनवद्या, स्वामिदुहिता। आव० ३१२।

अणोतप्पया–अलज्जनीयता। बृ० प्र० ३०१ आ।

अणोदरया–अपारा (स०)

अणोमदंसी–अवमं–हीन मिथ्यादर्शनाविरत्यादि तद्विपर्यस्तमनवम तदद्रष्टुं शीलमस्येत्यनवमदर्शी, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवान। आचा० १६४।

अणोमाणं–अपमान अनादरकृत न भवति। ओघ० १०३।

अणोरपारं–अनर्वाक्पारम्–विस्तीर्णस्वरूपम्। प्रश्न० ६२। अनाद्यपर्यवसितम्। आव० ६०१। अर्वाग्भागपरभागवर्जितमनाद्यनन्तम्। सूत्र० ४०३। अनर्वाक्पारमिव महत्त्वादनर्वाक्पारम्। प्रश्न० ५११। देशीवचनं, प्रचुरार्थे, आराद्भागपरभागरहिते। आव० ३४५। (भक्त०)

अणोलहविज्जंतो–अविध्यापितः। आव० ३८४।

अणोवणिहिआ – अनौपनिधिकी –वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेणाविरचन प्रयोजन यस्या इति। अनु० ५२।

अणोवमा–अनुपमा। प्रज्ञा० ३६४।

अणोवमाइ–खाद्यविशेष। जं० प्र० ११८।

अणोहट्टं–अजाजियं, कोंटलाति उवकारेण विरहियं। नि० चू० प्र० १८३ अ।

अणोहंतरा–ससारतरणासमर्था। आचा० १२३।

अणोहट्टिए–अनपघट्टक, यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्त्तमान निवारयति सोऽपघट्टकस्तदभावात्। विपा० ५२।

अणोहियं – अविद्यमानजलौघिकामतिगहनत्वेनाविद्यमानोहा वा। भग० ६७२।

अण्णउत्थिए – अन्ययूथिका अन्ययूथ–विवक्षितसघादपर सघस्तदस्ति येषा तेऽन्ययूथिका तीर्थान्तरीयाः। भग० ९८। अन्यतीर्थिकाः। जीवा० १४३।

अण्णउत्थिया – तच्चण्णियादि वंभणा खत्तिया गारत्था। नि० चू० द्वि०।

अण्णओमुहो–अन्यतोमुख । आव० ६४०।

अण्णओहुत्तं–अन्यतोभूतम्। आव० २०५।

अण्णगच्छेल्लय–अन्यगच्छीय । आव० ३२३।

अण्णगिलायं–अन्नग्लान –पर्युषितमन्नं मया भोक्तव्यमित्येवं प्रतिपन्नाभिग्रह.। बृ० प्र० ३१२ अ।

अण्णगिलायए–अन्नग्लायक.। औप० ३९। बृ० प्र० ११२ आ।

अण्णतित्थियपवत्ताणुजोगे–अन्यतीर्थिकेभ्य –कपिलादिभ्यः सकाशाद्य. प्रवृत्तः–स्वकीयाचारवस्तुतत्त्वानामनुयोगो– विचार तत्पुरस्करणार्थं शास्त्रसंदर्भ इत्यर्थ सोऽन्यतीर्थिकप्रवृत्तानुयोग.। सम० ४९।

अण्णतित्थिया – रक्तपटादय.। नि० चू० प्र० ७६ अ। अन्यतीर्थिका – चरकपरिव्राजकशाक्याजीवकवृद्धश्रावकप्रभृतय । नि० चू० प्र० १४७ आ।

अण्णत्थ–अन्यत्र, परिवर्जनार्थे। आव० ८५०।

अण्णत्थे–अन्वर्थे–अनुगत सवद्ध परमैश्वर्यादिकोऽर्थो यत्र स.। विशे० २२।

अण्णदत्तहरे–अन्यदत्तहर –अन्येभ्यो दत्त–राजादिना वितीर्णं हरति अपान्तराल एवाच्छिनत्ति। उत्त० २७४। अन्यादत्तहरः–ग्रामनगरादिषु चौर्यकृत्। उत्त० २७४।

अण्णमण्णघडत्ता–अन्योऽन्यघटता, अन्योऽन्यं घटा– समुदायरचना यत्र तदन्योऽन्यघटं तद्भावस्तत्ता, जालिका। भग० ७१५।

अण्णवं–अर्णव –अर्णो–जलं विद्यते यत्रासावर्णव । उत्त० ७४१।

अण्णसंभोइय–अन्यसाम्भोगिक.। आव० ८४७।

अण्णहम्मिणी–परतीर्थिका अगारस्था अविरतिका। बृ० तृ० ४७ आ।।

अण्णाइट्ठसरीरं–अन्याविष्टशरीरम्,व्यन्तराधिष्ठितशरीरम्। आव० ६३३।

अण्णाइट्ठो–अन्याविष्ट., परायत्त, यक्षाविष्टो वा। उत्त० ११३। आविष्ट। अन्त २०।

अण्णाइस्तो–अपराद्ध । नि० चू० तृ० १०१ अ।

अण्णाएसि–अज्ञातैषी, अज्ञातो जातिश्रुतादिभि. एषति–उञ्छति पिण्डादीति। उत्त० १२४।

अण्णाणं–अज्ञानम्, चतुर्थ कुडङ्ग । आव० ८५६। एकत्रिंशतितम परीषह, कर्मविपाकजादज्ञानान्नोद्विजेत। आव० ६५७।

अण्णाणदोसे–अज्ञानदोष । औप० ४४।

अण्णाणिय–अज्ञानिकः, कुत्सितं ज्ञानमस्यास्तीति। आव० ८१७।

अण्णाणियवाई – सप्तषष्ठिभेदा अज्ञानवादिनः। सम० १११।

अण्णाणो–अज्ञान, कुदृष्टिमोहित। आव० ३४६।

अण्णातचज्जा–अज्ञातचर्या। आव० ८२२।

अण्णातपिंडे–अज्ञातपिण्ड, अन्तप्रान्त, अज्ञातेभ्यो वा– पूर्वापरासस्तुतेभ्यो वा पिण्डोऽज्ञातोञ्छवृत्त्या लब्ध। सूत्र० १६४।

अण्णायं–अज्ञातोञ्छं। बृ० द्वि० १८६ आ।

अण्णाय–अज्ञातम्, अनुमानत अज्ञातम्। भग० १९७, २००।

अण्णायया–अज्ञानता, तपसोऽप्रकाशनम्। प्रश्न० १४६। अज्ञातता, तपस्यज्ञातता, योगसङ्ग्रहे सप्तमो योग । आव० ६६४।

अण्णावदेसो–अदंसियभावो। नि० चू० प्र० ७२ आ।

अण्णियपुत्तो–अर्णिकापुत्र । नि० चू० प्र० १९४ आ।

अण्णिया अर्णिका, दक्षिणमथुराया वणिक्पुत्री। आव० ६८८।

अण्णियापुत्ते–अर्णिकापुत्र । बृ० तृ० २३५ आ।

अण्णोयत्ता–ईषदवनता। व्य० द्वि० १२४ आ।

अण्हयंति–क्षरति (तं०)

अण्हय–आस्रव, आ–अभिविधिना स्नौति–श्रवति कर्म यस्मात् स आश्रव प्राणातिपातादि । प्रश्न० २।

अण्हयकरं–आश्रवकर। औप० ४२।

अण्हयकरिं–कर्माश्रवकरीं। आचा० ३८८।

अण्हयकरे–कर्माश्रवकारी। आचा० ४२५।

अण्हाणं–अस्नानम्। आव० १५४।

अण्हायगो–अस्नायक । आव० ८३१।

अतज्जाय–अतज्जातपारिस्थापनिकी, पारिस्थापनिक्या द्वितीयो भेद । आव० ६१९ ।

अतज्जायं–अतज्जानीयं, भिन्नजातीयम् । आव० ६२३ ।

अतडं–अतीर्थं, अन्यतीर्थं वा । बृ० द्वि० ३१ अ । अतित्थं । नि० चू० तृ० १७ अ ।

अतति–सततमवगच्छति । ठाणा० १० ।

अतन्त्रम्–शास्त्रलक्षणरहितम् । आव० १२० ।

अतरं–तरीतुमशक्यं, विषयगणं भवं वा । उत्त० २९२ ।

अतरंतं–ग्लानम् । बृ० प्र० २२९ आ । अतरन्त–अतिग्लान । ओघ० १८३ ।

अतरंत–ग्लाना । ठाणा० १३८ ।

अतरंते–अतरत्–असह । व्य० द्वि० ३७ अ ।

अतरंतो–अतरन्, अशक्नुवन् । आव० ८४७ । अशक्नुवन्–असमर्थ । दश० ८९ । अशक्नुवान् । आव० ६३७ । ग्लान । ओघ० ४५ । यदाऽऽकाशव्यवस्थिताभ्यां पादाभ्यां न शक्नोति स्थातुं तदा । ओघ० ८४ । गिलाणो । नि० चू० प्र० ४३ अ, ३० आ, ३६० अ । ग्लान । बृ० तृ० ५ आ, नि० चू० प्र० ८४ अ ।

अतरण–अतरण, अशक्त, ग्लान । ओघ० ६७, बृ० प्र० २३४ आ ।

अतरो–ग्लान । बृ० द्वि० २२४ अ । रत्नाकर । बृ० प्र० ३७ अ ।

अतसी–अयसी, धान्यविशेष । ठाणा० ४०६ । गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ । धान्यविशेष । नि० चू० प्र० १४४ आ ।

अतहणाणे–अतथाज्ञानम् । ठाणा० ४८१ ।

अतारं–अतारम्, तरितुमशक्यम् । भग० ८२ ।

अतारिमा–दुस्तरा । सूत्र० ८६ ।

अति–अतिशयवान । ठाणा० ४७३ ।

अतिंति–प्रविशन्ति । नि० चू० प्र० २०३ अ ।

अतिंतिणः–अतिन्तिण, अलाभेऽपि नेषद्यत्किञ्चनभाषी । दश० २३३ । अतिन्तिन, न सकृत्किञ्चिदुक्त सन्नसूयया भूयो भूयो वक्ता, प्रतिपूर्ण सूत्रादिना । दश० २५८ ।

अतिअत्तिय–आतियात्रिका, सार्थरक्षका । बृ० द्वि० १२५ अ ।

अतिउच्चाओ–अतिश्रान्त, प्राघूर्णकादि । ओघ० १८६ ।

अतिउव्वरिए–अत्युद्धरिते । ओघ० १३८ ।

अतिकाए–महोरगेन्द्र । ठाणा० ८५ । अतिकाय–महोरगभेदविशेष । प्रज्ञा० ७० ।

अतिक्कमा–अतिक्रम–अतिलङ्घनं, विनाश । आचा० १३५ । प्रतिश्रवणतो मर्यादाया उल्लंघनम् । व्य० प्र० ९० अ ।

अतिकीलावासो–अतिक्रीडावास, सुस्थितलवणाधिपस्य भौमेयविहारविशेष । जीवा० ३१५ ।

अतिक्खतुंडो–अतीक्ष्णतुण्डम्–अतीक्ष्णमुखम् । आव० ७६४ ।

अतिक्कान्ता–अतीता । आचा० १७८ ।

अतिखद्धं–प्रभूतम् । बृ० द्वि० १८७ अ ।

अतिखद्ध–गुरोरालोके भोक्तव्यम्, अतिप्रचूर भक्षयेत । ओघ० १८२ ।

अतिगए–अतिगत । आव० १७३ ।

अतिगओ–अतिगत । दश० ४१ ।

अतिगता–प्रविष्टा । बृ० द्वि० १८४ अ ।

अतिगमणं–प्रवेश । बृ० द्वि० १६३ आ । अतिगमनं, प्रवेशनम् । बृ० प्र० २७५ आ ।

अतिगुपिल–अतिगूढम् । आव० २९६ ।

अतिगुलिका–(अइगुलिया)–कुक्कुसा । बृ० तृ० १९५ अ ।

अतिघरं–सजतिपडिस्सतो । नि० चू० प्र० २३७ आ ।

अतिचारो–व्यतिक्रम स्खलनपर्याय । तत्त्वा० ७–१८ ।

अतिच्छिए–अतिक्रान्तायाम् । ओघ० १५२ ।

अतिजाति–पविसति । नि० चू० प्र० ३४ आ ।

अतिजाते–समृद्धतर । ठाणा० १८४ ।

अतिज्जाणं–अतियानम् । आव० ३६६ ।

अतिज्जाहि–अतियास्यति–प्रवेक्ष्यति । ठाणा० ४६३ ।

अतिणिओ–आनीत । आव० २०४ ।

अतिणीओ–अतिनीत, प्रापित । आव० ८०० ।

अतिणेउं–प्रवेश्य । बृ० तृ० ७४ आ ।

अतिण्णो–ग्लान । बृ० प्र० २८८ आ ।

अतितणिंत–आगच्छद्गच्छत् । नि० चू० प्र० १२० आ ।

अतिताणकहा–अनियानकथा–नगरादौ प्रवेशकथा । ठाणा० २१० ।

अतिताणगिहाति–अतियानगृहाणि–नगरादिप्रवेशे यानि गृहाणि । ठाणा० ८६ ।

अतितेया–अतितेजा, रात्रिनामविशेष । सूर्य० १४७ ।

अतित्थ – अतीर्थम्, तीर्थस्याभावोऽतीर्थम्, तीर्थस्याभावश्चानुत्पादोऽपान्तराले व्यवच्छेदो वा। प्रज्ञा० १९।

अतित्थसिद्धा–अतीर्थे–तीर्थान्तरे साधुव्यवच्छेदे जातिस्मरणादिना प्राप्तापवर्गमार्गा मरुदेवीवत् सिद्धा अतीर्थसिद्धा। ठाणा० ३३।

अतित्थाविते–प्रत्याख्यात, निषिद्ध। नि० चू० प्र० १८५ अ।

अतित्थिओ–अस्तमितो। नि० चू० प्र० ३१२ अ। समाप्तेत्यर्थ। नि० चू० तृ० १२६ अ।

अतिथिसंविभाग–न्यायागताना कल्पनीयानामन्नपानादीना द्रव्याणा देशकालश्रद्धासत्कारक्रमोपेत परया आत्मानुग्रहबुद्धया संयतेभ्यो दानम्। तत्त्वा० ७–१६।

अतिददाति–(अइए) प्रकरोति अतिगच्छति वेति। ठाणा० २९८।

अतिधाडिय–अतिधाडित –भ्रामित। प्रश्न० ५३।

अतिपरिणामकं–अपवादैकमति। बृ० प्र० १३० अ।

अतिपरिणामा–अतिपरिणामा, अतिव्याप्त्याऽपवाददृष्टयोऽतिपरिणामा। विशे० ९३१। अतिव्याप्त्या परिणामो यथोक्तस्वरूपो यस्य स। व्य० प्र० ७२ अ।

अतिपात–प्राणिन विध्वंस.। ठाणा० २१०।

अतिपातनम्–प्राणवता सह वियोजनम्। ठाणा० २६।

अतिपासं – अतिपार्श्व–ऐरवतावसर्पिणीतीर्थंकर। सम० १५३।

अतिपुरुष –किंपुरुषभेदविशेष। प्रज्ञा० ७०।

अतिप्पणया – अश्रुलालादिक्षरणकारणशोकानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अतिबलराया–अतिबलराजा। आव० ११६।

अतिमन्द्रः–गम्भीर। जं० प्र० ५२९।

अतिम(मु)त्तकुमारो–राजर्षिनाम। नि० चू० द्वि० २७ आ।

अतिमुक्तकः–षड्वर्षप्रव्रजित। भग० ५८६। अतिमुक्तक –नालवद्धपुष्पविशेष। प्रज्ञा० ३७।

अतिमुक्तकचन्द्र–(अइमुत्तचंदए) पुष्पविशेषदलम्। भग० १३१।

अतिमुत्तग–अतिमुक्तकलता–लताविशेष। जीवा० १८२।

अतिमुत्ते–अतिमुक्त, कुमारश्रमण। अन्त० ६। विजयराज, श्रीदेव्या, सुन। अन्त० २३।

अतियाण–अतियानं–नगरप्रवेश। ठाणा० १७३। प्रवेश। नि० चू० प्र० २७३ अ।

अतियातो–अतियात, गत। उत्त० ४८१।

अतियारे–अतिचार –अतिचरणं ग्रहणतो व्रतस्यातिक्रमणम्। व्य० प्र० ९० अ।

अतिराउले–स्वामिकुलम्। प्रज्ञा० २५३।

अतिरायितं–अताडितम्। ओघ० ११०

अतिरिच्छछिन्नं – अतिरश्चीनच्छिन्नं–तिरश्चीनमपाटित। आचा० ४०५।

अतिरित्तं – अतिरिक्तम्, कुक्षिपराहारप्रमाणातिक्रान्तम्। प्रश्न० १५४।

अतिरित्तसज्जासणिए–अतिरिक्ता–अतिप्रमाणा शय्या–वसतिरासनानि च पीठकादीनि यस्य सन्ति सोऽतिरिक्तशय्यासनिक.। सम० ३७।

अतिरित्ता–घंघशाला। नि० चू० प्र० १०६ आ।

अतिरूप–भूतभेदविशेष। प्रज्ञा० ७०।

अतिरेगं–अतिरेक, आधिक्यम्। भग० १८६। अतिरेकम्–अत्यर्थम्। ओघ० २२७।

अतिलोलुप –अतीव रसलम्पट। उत्त० ३४५।

अतिवट्टमाणे – अतिवर्तमान –सर्वबाह्यान सर्वाभ्यन्तर प्रतिगच्छन। सम० ९७।

अतिवट्टिय–अतिवर्त्तित –भ्रामित। प्रश्न० ५६।

अतिवतित्ताणं – अतिव्रज्य–अतिशयेन गत्वा। प्रज्ञा० ५१०।

अतिवयती–अतिव्रजति, बाहुल्येन गच्छति। जीवा० १२९।

अतिवासा–अतिवर्षा, अतिशयवर्षा वेगवद्वर्षणम्। भग० १९९।

अतिवाहयति–प्रेरयति, विनयति च। प्रश्न० ६४।

अतिविज्जे–अतिविद्यः, तत्त्वपरिच्छेत्री विद्या यस्य। आचा० १५९।

अतिविद्वान्–विदितागमसद्भाव सन। आचा० १९२।

अतिवेगो–अतिवेग –अतिक्रान्ताशेषवेग। प्रश्न० ५१।

अतिशुक्लो–शुक्लशुक्लो। ठाणा० ३७४।

अतिसेसे–शेषाण्यतिक्रान्त सातिशयम्। ठाणा० ३८४। अतिशेषा.–अतिशया। ठाणा० ३२९। अतिशेषे–अतिशये। उत्त० २८७।

अतिसंधेइ–अतिसन्दधाति । आव० ११० ।

अतिसओ–मन पर्यवावधिज्ञाने अतिशयवन्त्यध्ययनानि च । नि० चू० प्र० १६ अ ।

अतिसाहसिक–आत्मवत् प्रसाधितमभिलोक य प्रत्याचक्षीत स । आचा० ५२ ।

अतिसेसि–स्फीतानि । ओघ० ९६ । मन पर्यवाद्यतिशयवान् । नि० चू० प्र० १६ अ । अतिसयदव्वा उक्कोसा । नि० चू० प्र० २०० अ ।

अतिसेसी–पात्रभूत., प्रवचनाधार. । बृ० द्वि० २१ आ ।

अतिस्निग्धमधुरम्–वाण्यतिशय । सम० ६३ ।

अतिहिपूआ–अतिथिपूजा आहारादिदानेन । दश० २४० ।

अतिहिवणीमते–भोजनकालोपस्थायी प्राघूर्णकोऽतिथिस्तद्दानप्रशंसनेन तद्भक्तात् यो लिप्सति सोऽतिथिमाश्रित्य वनीपकोऽतिथि नीपक । ठाणा० ३४१ ।

अतिहिसंविभागो–अतिथिसंविभाग –साधुसंविभागः । आव० ८३७ ।

अतिही–अतिथि –भोजनार्थ भोजनकालोपस्थायी, आत्मार्थ निष्पादिताहारस्य गृहव्रतिन मुख्य साधुरेव । आव० ८३७ । नि स्पृहोऽभ्यागत । आचा० ११५ । भोजनकालोपस्थाय्यपूर्वो वा । आचा० ३२५ । आगन्तुकम् । आचा० ३१४, भग० ५२० । विशिष्टतिथ्यभावे । बृ० प्र० ९० अ ।

अतीओ–आगत । आव० १४५ ।

अतीय–अतीतम्–उत्तीर्णम् । भग० २९३ ।

अतीति–एति । उत्त० ३०२ ।

अतीमि–अटामि । आव० २२० ।

अतीरंगमा–अतीरङ्गमा, तीरं गच्छन्तीति तीरङ्गमा, न तीरङ्गमा अतीरङ्गमा । आचा० १२४ ।

अतुक्कोसे–आत्मन परेभ्य सकाशाद्गुणैरुत्कर्षणम्–उत्कृष्टताभिधानम् । भग० ५७२ ।

अतुरियं–अत्वरितम्, कायिकत्वरारहितम् । भग० १४० । स्तिमितम् । ओघ० १०८ ।

अतुरियगति–अत्वरितगति –मन्दगति । उत्त० ७११ ।

अतुरियभासी–अत्वरितभाषी । आचा० ३९२ ।

अतोया–शीतोदकरहिता संगत्य काञ्जिकेनाचामनकारिणी । बृ० द्वि० १८० अ ।

अत्त–आत्मा, सिद्धि । उत्त० १०४ । आप्त, अप्रतारक । दश० ७५ ।

अत्तए–आत्मज –पुत्र । भग० ४६० ।

अत्तगवेसए–आत्मगवेषक –आत्मानं गवेषयति–कथ मयाऽऽत्मा भवाब्धिस्तारणीय इत्यन्वेषयते । उत्त० १०४ । आत्मानं–चारित्रात्मान गवेषयति–मार्गयति । उत्त० १२० ।

अत्तगवेसी–आत्मगवेषी, आत्महितान्वेषणपर । दश० २३७ ।

अत्तचिंतओ–अभ्युद्यतजिनकल्पयथालन्दकल्पानामेकतरं विहारं प्रतिपत्स्य इत्यात्मचिन्तक, गणे वा तिष्ठन् न वहति तन्निमित्येषा साधूनाम् । व्य० प्र० २३२ आ ।

अत्तट्ठागुरुओ–आत्मार्थगुरु, आत्मार्थ एव जघन्यो गुरु –पापप्रधानो यस्य स । दश० १८७ ।

अत्तट्ठियं–स्वीकृतम् । आचा० ३२५ ।

अत्तट्ठेति–आत्मार्थयन्ति–परिभुञ्जते । बृ० द्वि० २७८ अ ।

अत्तट्ठो–अप्पणो अट्ठो भत्तादिउ । नि० चू० तृ० १३२ आ ।

अत्तणा–आत्मना कृतं । ठाणा० ४९२ ।

अत्तणिस्सेसकारए–आत्मनि शेषकारक, आत्मनो निःशेषमिति–शेषाभात्र प्रक्रमात् कर्मण करोति–विधत्त इत्यात्मनि शेषकारक । उत्त० ३०५ ।

अत्तणोउवन्नासं–आत्मन उपन्यास । दश० ५२ ।

अत्तते–आत्मज । ठाणा० ५१६ ।

अत्तत्ता–आत्मता –जीवास्तिता स्वकृतकर्मपरिणतिर्वा । आचा० २३८ ।

अत्तत्तासंवुड–आत्मान्मसवृत आत्मन्यात्मना सवृत –प्रतिसलीन । भग० १८४ ।

अत्तदोस–आत्मापराधम् । ठाणा० ४२४ ।

अत्तदोसोवसंहार–आत्मदोषोपसहार, योगसङ्ग्रहे एकत्रिंशतितमो योग । आव० ६६४ ।

अत्तपण्हहा–आत्मनि प्रश्न आत्मप्रश्नस्तं हन्त्यात्मप्रश्नहा । उत्त० ४३८ ।

अत्तभासिओ–अण्णस्स मतियलाभं णो भुजति । नि० चू० प्र० ३३४ अ ।

अत्तमाया–आत्मना आदाय । भग० २८६ ।

अत्त(त)रंतस्स–अशक्नुवत ग्लानादे. । ओघ० १२७ ।

अत्तलद्धिउ–यदात्मना लभते तदाहारयति । ओघ० १०० ।

अत्तवं-आत्मवान्, सचेतन । दश० २३६ ।
अत्तसंपग्गहिए-आत्मसम्प्रगृहीत, आत्मैव सम्यक् प्रकर्षेण गृहीतो येन । दश० २५६ ।
अत्तसमाहिए-आत्मसमाहित, आत्मना समाहित ज्ञानदर्शनचारित्रोपयोगेन सदोपयुक्त इत्यर्थ । आत्मा वा समाहितोऽस्येत्यात्मसमाहित । सदा शुभव्यापारवानित्यर्थ । आचा० १९१ ।
अत्तसरिसो-आत्मसदृश, कुलानुरूप । उत्त० ४० ।
अत्तहिय – आत्महित, मोक्ष । दश० १५० । मोक्खो । दश० चू० ६८ ।
अत्ता-आत्मा । आव० २९८ । मोक्ष, संयमो वा । सूत्र० ९० । आत्ता–गृहीता, स्वीकृता । ठाणा० ६३ । आ–अभिविधिना त्रायन्ते–दुःखात् संरक्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्रा आप्ता वा–एकान्तहिता । भग० ६५६ । आर्ता–क्षुत्तृड्भ्यां पीडिता, आप्ता – रागद्वेषरहिता, आत्ता – गीतार्था । बृ० द्वि० १४३ अ ।
अत्ताणओ-अत्राण । आव० २११ ।
अत्ताणा-यष्टिद्वितीया पान्था, कार्पटिका, सयता वा । बृ० द्वि० ८२ आ ।
अत्ताणो – अत्राण, अनर्थप्रतिघातवर्जित । प्रश्न० १९ । त्राणरहित; अनर्थप्रतिघातकाभावात् । प्रश्न० ११ । गवादिहारिणो । नि० चू० द्वि० ११ अ ।
अत्ताहिट्ठिय-आत्माधिष्ठित । ओघ० १५० ।
अत्ति(ति)मुत्तय-अतिमुक्तक, पुष्पप्रधानवनस्पतिविशेष । जं० प्र० ४६ ।
अत्तुक्कोसे-आत्मोत्कर्ष । सम० ७१ । आत्मगुणाभिमानः । ठाणा० २७५ ।
अत्तेय-आत्रेय ऋषिनाम । आव० ३७२ ।
अत्तो – आप्त, मोक्षमार्ग, प्रक्षीणदोष, सर्वज्ञ । सूत्र० १९५ । रागादिरहित । दश० १२८ ।
अत्तोवणीए – आत्मैवोपनीत – तथा निवेदितो–नियोजितो यस्मिन् । ठाणा० २५९ ।
अत्थं-अस्त्रम्, नाराचादि क्षेप्यायुधम् । प्रश्न० ११६ । अर्थ, विषय । आव० २८३ । अर्थ –ज्ञेयत्वात् सर्वमेव वस्तु, अभिधेय । उत्त० ३६८ । अभिधेय, जीवादितत्त्वरूपो वा । उत्त० ३८५ । अर्थ्यते इत्यर्थ –स्वर्गापवर्गादि । उत्त० ४४८ । व्याख्यानं । ठाणा० ५२ । सूत्रस्य व्याख्याने । ठाणा० १७० । विशे० ५९२ ।
अत्थंगओ-अत्थे पव्वए गतो, अचक्खुविसयपंथे वा गतो । दश० चू० १२३ ।
अत्थंतमयम्मि-अस्तमयति । उत्त० ४३५ ।
अत्थंतरं-अर्थान्तरम्, पृथग्भूतम् । आव० ६०१ ।
अत्थंतरभावे-अर्थान्तरभाव –भेद । आव० ४७६ ।
अत्थ – अर्थ, शब्दादिविषयभावेन परिणतद्रव्यसमूह । विशे० १६२१
अत्थ-(अत्थपुरिसे) अर्थपुरुष, अर्थार्जनपर । आव० २७७ । अर्थः, निरुपमसुखरूपमोक्ष । दश० १८९ । अर्थनम्, असम्प्राप्तकाममेद, तदभिप्रायमात्रम् । दश० १९४ । अस्त, अस्तपर्वत अदर्शन वा । दश० २३२ । आदेशः । बृ० प्र० २२ आ ।
अत्थअवगमो-अर्थावगम, अर्थपरिच्छेद । दश० १२५ ।
अत्थई-गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।
अत्थकंखिया-प्राप्तेऽप्यर्थेऽविच्छिन्नेच्छा । भग० ६७१ ।
अत्थकरो-अर्थकर, विद्यायर्थकरणशील, भावकरविशेष । आव० ४९९ ।
अत्थकहा – अर्थकथा, विद्या शिल्पमुपायोऽनिर्वेद सञ्चयश्च दक्षत्व साम दण्डो भेद उपप्रदानम् । दश० १०७ ।
अत्थक्के-अकाण्ड –अनवसर । दश० ९३ ।
अत्थगवेसणया-अर्थगवेषणया, अर्थगवेषणनिमित्तम् । सूर्य० २९२ ।
अत्थग्घं-अस्ताघ । ओघ० ३२ । अस्ताघम् । आव० ४१९ ।
अत्थजुत्ती-अर्थयुक्ति, हेयेतररूपा अर्थयोजना । दश० १६२ ।
अत्थजुत्तो-अर्थयुक्त, अर्थसार, अपुनरुक्तो, महावृत्त । जीवा० २५५ ।
अत्थदूसणं-अर्थदूषणव्यसनम् । अर्थोत्पत्तिहेतवो ये सामाद्युपायचतुष्टयप्रभृतय प्रकारास्तेषां दूषणम् । व्य० प्र० १५७ अ ।
अत्थधम्मगई-अर्थश्च धर्मश्चार्थधर्मौ यदि वाऽर्थ्यते–हितार्थिभिरभिलष्यते, गति –गत्यर्थानां ज्ञानार्थतया हिताहितलक्षणा स्वरूपपरिच्छित्ति । उत्त० ४७२ ।
अत्थनिउरंगे-सख्याविशेष । सूर्य० ९१ ।
अत्थनिउरे-सख्याविशेष । सूर्य० ९१ ।

अत्थनिकुरं-अर्थनिकुर, चतुरशीतिरर्थनिकुराङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अत्थनिकुरंगं – अर्थनिकुराङ्गम्', चतुरशीतिर्नलिनशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अत्थपज्जाया-अर्थपर्याया, ये तु तेषामेव वाचकशब्दानामभिधेयार्थस्यात्मभूता भेदा, यथा कनकस्य कटककेयूरादय, ते सर्वेऽप्यर्थपर्याया भण्यन्ते। विशे० २२८। ये तु तदेकदेशमभिदधति तेऽर्थैकदेशप्रतिपादका पर्याया अर्थपर्याया उच्यन्ते। विशे० २२७ ।

अत्थपयं-अर्थपदम्, युक्तिर्हेतुर्वा। सूत्र० १५३ ।

अत्थपलिमंथो-अर्थपरिमन्थ । विशे० ६२८ ।

अत्थपिवासिय – अप्राप्तार्थविषयसजाततृष्णा । भग० ६७१ ।

अत्थपुहुत्त-अर्थपृथक्त्व-श्रुताभिधेयोऽर्थ तस्मात् सूत्रं पृथक्, अर्थेन वा पृथु अर्थपृथु तद्भाव अर्थपृथुत्व। आव० ६१। अर्थात् पृथक्त्व कथञ्चिद्भेदो यस्य, विस्तीर्णमर्थपृथु। विशे० ४९२ ।

अत्थमणमुहुत्तं – अस्तमनमुहूर्त्तम्, अस्तोपलक्षितं मुहूर्तम्। ज० प्र० ४५९ ।

अत्थमंत-अर्थवताम्, प्रयोजनवताम्। भक्षणाद्यर्हाणाम्। जं० प्र० २४३ ।

अत्थमंतमेत्त – अस्तमयति मित्रे-सूर्ये, सायम्। जं० प्र० २४३ ।

अत्थरणं-आस्तरणम्, आस्तरण करोति। ओघ० ४१।

अत्थरय – आच्छादनम्। ज० प्र० ५५। आस्तरकेण, अस्तरजसा वा। भग० ५४२ ।

अत्थलोला-अर्थे लोला –अर्थलोला –लम्पटा –चौरादय । उत्त० ५९० ।

अत्थविगप्पणा-अर्थविकल्पना। आव० ४८४ ।

अत्थविणिच्छय-अर्थविनिश्चयं –अपायरक्षक कल्याणावह वा अर्थात्रितयभावम्। दश० २३३।

अत्थसंजुत्तं-सद्भावसंजुत्तं। दश० चू० ८९ ।

अत्थसंपयाणं-सावत्सरिकार्थदानम्। आचा० ४२२ ।

अत्थसत्थं-अर्थशास्त्रम्। आव० ४२२। अर्थोपायप्रतिपादनं शास्त्रम्। प्रश्न० ९७। नीतिशास्त्रादि। जं० प्र० २१९।

अत्थसिद्धे – अर्थसिद्ध, शास्त्रीयदशमदिवसनाम। सूर्य० १४७, ज० प्र० ४९०।

अत्थस्स-अस्तो मेरुर्यतस्तेनान्तरितो रविरस्त गत इति व्यपदिश्यते तस्य पर्वतराजस्य गिरिप्रधानस्य। सम० ६५।

अत्था-अर्था, द्रव्याणि। उत्त० ३८४। अर्थ्या, प्रार्थनीया वा। उत्त० ३८४। अर्यन्त – गम्यन्त इत्यर्था। ओघ० ५। शब्दादय। ठाणा० २५३, आचा० २०१। फलानि, वस्तूनि। ठाणा० ३३। अर्थ्यन्ते–अभिलष्यन्ते क्रियार्थिभिरर्यन्ते वा अधिगम्यन्ते। ठाणा० ३३५। निर्युक्तिभाष्यसग्रहणिवृत्तिचूर्णिपञ्जिकादिरूपा। सम० १११।

अत्थाणं-देशविशेष। भग० ६८०।

अत्थाणमंडविया-आस्थानमण्डपिका। आव० ८९।

अत्थाणि-आस्थानिका। उत्त० ११५।

अत्थाणिमंडवो-आस्थानमण्डप। नि० चू० प्र० २७४ आ।

अत्थाणियं-आस्थानम्। उत्त० १४६।

अत्थाणियमंडविया – आस्थानमण्डपिका। बृ० प्र० २७ आ।

अत्थाणी-आस्थानी। आव० ६७२। आस्थानिका। आव० १४५, २९८।

अत्थाणीवरगओ-आस्थानीवरगत। आव० २१६।

अत्थादाणं-अष्टाङ्गनिमित्तं प्रयोग। बृ० तृ० ८६ अ।

अत्थामा – अस्थामान, सामान्यत शक्तिविकला। जं० प्र० २३९। अस्थामा, सामान्यत शक्तिविकल। भग० ३२३ ।

अत्थायणयं-आस्थानिका। आव० ३४२।

अत्थायाणं-अर्थादानं–द्रव्योपादानकारणमष्टागनिमित्तं तद्दत्–प्रयुञ्जान.। ठाणा० १६४।

अत्थावत्ती-सामर्थ्यगम्या। बृ० द्वि० १२१ आ।

अत्थावत्तीदोसो-अर्थापत्तिदोष, यत्रार्थादनिष्टापत्ति, सूत्रदोषविशेष। आव० ३७४।

अत्थाहं-अस्ताघम्, अविद्यमानस्ताघम्, अगाधम्। भग० ८२। अस्ताध –निरस्ताधस्तलम्। भग० ८२। अप्रमाणम्। आव० ३७४।

अत्थि-येन येन यदा यदा प्रयोजनं तत्तत्तदा तदाऽस्ति–भवति जायते इति सुखमानन्दहेतुत्वादिति। ठाणा० ४८८। अस्ति, विद्यन्ते, सन्तीत्यर्थ, अथवाऽस्ति अय पक्षो यदुत।

भग० ३२। प्रदेशः। भग० १४९, जीवा० ६। अस्ति, निपात सर्वलिङ्गवचन। प्रज्ञा० ५६३। प्रदेश। आव० ६००। त्रिकालवचनो निपात। अभूत्, भवति, भविष्यति च। आव० ७६८। अस्तिद्वारम्, अस्त्यन्यश्चैतन्यरूप। दश० १२५। स्वामी। विशे० ६७२।

अत्थिकाए–अस्तिकाय प्रदेशराशि। भग० ३२४।

अत्थिकाय–अस्तिकाय, प्रदेशराशि, अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये काया प्रदेशराशयस्ते अस्तिकाया। भग० १४८। प्रदेशसङ्घात। जीवा० ६। धर्मास्तिकायादि। दश० १३४।

अत्थिकायउद्देसए–भगवतीद्वितीयशतकस्य दशमोद्देशकनाम। भग० ६०८।

अत्थिकायधम्म–अस्तिकायधर्म। दश० २१।

अत्थिकायधम्मे–अस्तय:-प्रदेश:स्तेषा कायो-राशिरस्तिकाय स एव धर्मो-गतिपर्याये जीवपुद्गलयोर्द्धारणात्। ठाणा० ५१५।

अत्थिक्क–आस्तिक्यम्-जीवस्यास्तित्वनित्यत्वकर्तृत्वभोक्तृत्वमोक्षतत्साधनश्रद्धानम्। आव० ५९१।

अत्थिनत्थि–अस्तिनास्तिनामपूर्व। ठाणा० १९९।

अत्थिय–अस्थिक-बहुबीजवृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३२। अस्तिकाय। भग० ८१। अत्थिकम्, अस्थिकवृक्षफलम्। दश० १७६।

अत्थिया–बहुबीजकवृक्ष। भग० ८०३।

अत्थी–अर्थज्ञाता। बृ० प्र० ११२ अ।

अत्थीनत्थिपवायं–यद्यथा लोके अस्ति नास्ति च तयत्र तथोच्यते चतुर्थपूर्वनाम। सम० २६।

अत्थुआ–आस्तृता। आव० १७३।

अत्थुरणं–पाउरण। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अत्थुव्वइ–(अत्थुरइ) आस्तीर्यते। ओघ० ८३।

अत्थे–अनेन ह्यन्तरित सूर्यादिरस्त इत्यभिधीयते। मेरुनाम। जं० प्र० ३७५।

अत्थेगइया–सन्त्येकके। प्रज्ञा० ५४५।

अत्थो–अर्थ, अभिधेय, प्रयोजनं वा। प्रश्न० ११५। कारणं, तात्त्विक पदार्थो वा। जीवा० ९८। अर्यते-गम्यत इति। आव० १०। पव्वओ, अचक्खुविसयपयत्थो वा। दश० चू० १२३। अर्थ-स सूत्रस्याभिप्राय। विशे० ५८८। अर्यत इति, विवृतं प्रबोधितं विकचकल्पम्। आव० ८६। अभिप्रेतपदार्थ। आव० ४१५। द्रव्यम्। आव० ६०७। अर्थ्यत इति। उत्त० ६८। वित्तादि। दश० ११४।

अत्थोग्गहणं–फलनिश्चयम्। भग० ५४१।

अत्थोग्गहे–अर्थावग्रह, अर्थस्यावग्रहणम्, अनिर्देश्यसामान्यरूपाद्यर्थग्रहणम्। व्यञ्जनावग्रहोत्तरकालमेकसामायिकमनिर्देश्यं सामान्यमात्रार्थग्रहणम्। प्रज्ञा० ३११। अर्थस्य-सामान्यनिर्देश्यस्वरूपस्य शब्दादे. अवेति-प्रथम व्यञ्जनावग्रहानन्तर ग्रहणं-परिच्छेदनमर्थावग्रह। सम० १२। भग० ३४४। व्यञ्जनावग्रहचरमसमयोपात्तशब्दाद्यर्थावग्रहणलक्षण। आव० १०। अर्यते-अधिगम्यतेऽर्थ्यते वा अन्विष्यत इत्यर्थ-सामान्यरूपादे. प्रथमपरिच्छेदनमर्थावग्रह। ठाणा० ५१।

अत्थोभं–अस्तोभकं, वैहिहकारादिपदच्छिद्रपूरणस्तोभकनिपातशून्यम्, सूत्रगुण। आव० ३७६।

अथंडिलं–सचित्तभूमी। नि० चू० प्र० ३८ आ।

अथ–अथशब्द प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चये ष्वित्यानन्तर्यार्थे। ठाणा० ४९५। वाक्योपन्यासार्थं परिप्रश्नार्थो वा। भग० १४। प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेषु। प्रज्ञा० २४७।

अथक्क–अप्रस्ताव। बृ० प्र० ५५ आ।

अथक्कागओ–अकाण्डागत। आव० ८००।

अथक्को–अविश्रान्त। आव० १०२।

अथालंदोग्गहो–यथालन्दिकावग्रह। नि० चू० प्र० २३९ अ।

अथाहं–जत्थ पुण बुड्डति नासिया त। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

अथिरो–अस्थिर., क्षणावस्थायी। सूत्र० ६।

अदंडे–अदण्ड, प्रशस्तयोगत्रयमहिंसामात्र वा। सम० ५।

अदंसणो–अन्ध। ठाणा० १६५।

अदक्खु–अदक्ष, अनिपुण। सूत्र० ७४। अदृष्ट, अर्वाग्दर्शन। सूत्र० ७४।

अदक्खुदंसणो–अचक्षुर्दर्शन अचक्षुर्दर्शनमस्यास्ती, केवलदर्शन, सर्वज्ञ। सूत्र० ७४।

अदक्खेयव्वं–अग्राह्यम्। ओघ० १६३।

अदट्ठुमेव–अदृष्ट्वैव। उत्त० २१३।

अदढो–विणावि गेलण्णएण जो दुब्बलो। नि० चू० प्र० १९८ अ।

अदण्णा–विपादीकृता। नि० चू० प्र० ३२१ अ।
अदत्तं–अदत्तम्, अदत्तद्रव्यग्रहणम्। प्रश्न० ४। अवितीर्णम्, अधर्मद्वारस्य तृतीयं नाम। प्रश्न० ४३।
अदन्न–आत्मरक्षणपरा। बृ० प्र० १९० आ।
अदसा–अदशा–दशिकारहिता क्षौमा। ओघ० २१७।
अदसी–अलसी। आव० ८५४।
अदिच्छाविज्जिहिइ–अदित्सिष्येथे, निषेत्स्येथे। दश० १०।
अदिट्ठ–अदृष्टम्, प्रत्यक्षापेक्षया अदृष्टम्। भग० १९७, २००।
अदिट्ठलाभिय – अदृष्टिलाभिक, योऽदृष्टपूर्वेण दीयमानं गृह्णाति स। प्रश्न० १०६।
अदिट्ठहडा–अदृष्टाहृता, अदृष्टोत्क्षेपमानीता, प्राभृतिका। आव० ५७६।
अदिट्ठि–अदृष्टे–तिरोहिते। ओघ० १६७।
अदिण्णे – अदत्तादानक्रिया, अदत्तादानाय यत्करणम्, क्रियाया. सप्तमो भेद। आव० ६४८।
अदिन्नादाणवत्तिए–अदत्तादानप्रत्यय। सम० २५।
अदिन्ने–अदत्तादानक्रिया–आत्माद्यर्थमदत्तग्रहणम्। ठाणा० ३१६।
अदिस्समाणे – अदृश्यमान, अनपदिश्यमान। आचा० १३१।
अदीणवं–अदीनवन्तम्, अदीन, दैन्यरहितम्। उत्त० २८२।
अदीणसत्तु–नमिनाथपूर्वभवनाम। सम० १५१।
अदीणसत्तू – अदीनशत्रु', हस्तिशीर्षनगरनृपति। विपा० ८९। ठाणा० ४०१, ४०२।
अदीणो–पसण्णमणो। नि० चू० प्र० १८९ अ। अदीन, अविक्लव। उत्त० १२०। अदीनाकारयुक्त। अनुत्त० ४। शोकाभाव। अन्त० २२।
अदु–अथ, 'अत' इत्यर्थे। सूत्र० ६१। अथवा। उत्त० २९५।
अदुअक्खरिय–जुगुप्सिता, अद्वयक्षरिका। नि० चू० तृ० १८ अ।
अदुआलिआ–मथिका, मन्थनकारिणी। दश० ६०।
अदुक्खणया–अदुःखनता, दुःखस्य करणं दुःखनं तदविद्यमानं यस्यासावदुःखन', तद्भावस्तत्ता अदुःखकरणमित्यर्थ। भग० ३०५।
अदुगुंछिअं–अजुगुप्सनीयम्, सामायिकाष्टमपर्याय। आव० ४७४।
अदुट्ठो–अद्विष्ट अदुष्टो वा दायके आहारे वा। प्रश्न० १०९।
अदुतं–अद्रुतं, अनुत्सुकम्। प्रश्न० ११२।
अदुत्तरं–अथोत्तरम्, अथापरम्। भग० १५५, ३०६। अथान्यत्। जीवा० १६६। अथापरं। औप० ३७।
अदुयं–अशीघ्रम्। भग० २९४।
अ(अ)दुयबधणं–अन्दुकबन्धनम्। सूत्र० ३२८।
अदुवं–अथवा। उत्त० ११०।
अदुव–अथवा। भग० १३०।
अदुवा–अथवा, पक्षान्तरोपन्यासद्वारेणाभ्युच्चयोपदर्शनार्थः। आचा० ४७।
अदूयालियं–उन्मिश्रितम्। उत्त० १४६।
अदूरं–प्रत्यासन्नम्। आव० २३२।
अदूरसामंते – अदूरसामन्तम्, नातिदूरे नातिनिकटे। सूर्य० ५।
अदेसकालप्पलावी–जहा भायणं पडिक्कमियं अट्ठकरणंपि से कयं लेविंतं, रूढं ततो पमाणतं भग्गं ताहे सो अदेसकालप्पलावी मए पुव्वं चेव णायं एयं भज्जिहित्ति। नि० चू० तृ० ८० आ। अदेशकालप्रलापी, अतीते कार्ये यो वक्ति–यदिदं तत्र देशे काले वाऽकरिष्यत तत. सुन्दरमभविष्यदिति। उत्त० ३४७।
अद्द- आर्द्रम्, सरसम्। प्रज्ञा० ९१। सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। उत्त० ६१६। आव० ६५८। गुच्छविशेष'। प्रज्ञा० ३२।
अद्दइज्जं–आर्द्रकीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। सूत्र० ३८५। सूत्रकृताङ्गाध्ययननामविशेष। सम० ४२।
अद्दए–आर्द्रकम्, अनन्तकायभेद। भग० ३००।
अद्दकुमारिज्जं–आर्द्रककुमारीयम् (महाध्ययनम्)। ठाणा० ३८७।
अद्दक्खु–अद्राक्षु, दृष्टवन्तः। भग० २१९।
अद्दण्णो–पीडित। आव० ७००। अधृतिमापन्न, कातर.। आव० ८००। अधृतिमुपगत। आव० ४१६। अधृतिमापन्न'। दश० ४८। अक्षणिक'। बृ० द्वि० ४६ अ। अधृतिमुपगत। आव० १९०।
अद्द(ट्ट)न–मल्लविशेषनाम। व्य० द्वि० ३५७ अ।
अद्दन्ना–आकुलीभूता'। बृ० प्र० २९० आ।
अद्दपुरं–आर्द्रपुर, आर्द्रकराजधानी। सूत्र० ३८५।

अद्दया–आर्द्रका, हरिद्रा। उत्त० २१८।
अद्दवदं–आर्द्रवद्रवम्, निगालितम्। आव० ८५४।
अद्दसुतो–आर्द्रसुतः, आर्द्रकराजकुमार। सूत्र० ३८५।
अद्दहिज्जति–आद्रहति। नि० चू० प्र० ३१७ अ।
अद्दहिया–आद्रहणम्। आव० ८५४।
अद्दा–आद्रानामनक्षत्रम्। ठाणा० ७७।
अद्दाए–आदर्शः। नि० चू० प्र० ३४७ अ।
अद्दाओ–आदर्शः। आव० २९८, ४१६।
अद्दागं–आर्द्रकं। ओघ० १७२। दर्पणः। बृ० प्र० १३६ आ। आदर्शः। ठाणा० २४३, सम० १२४। ओघ० १४८।
अद्दागो–आदर्श.। ठाणा० ५१२।
अद्दाणक्खत्ते–आर्द्रानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।
अद्दामलगमेत्तं–आर्द्रामलकमात्रं। आव० ८५७।
अद्दायं–आदर्श.। आव० ६५।
अद्दाय–आदर्श.। प्रज्ञा० २९३।
अद्दारिट्ठे–आर्द्रारिष्ट., कोमलकाक। जं० प्र० ३२।
अद्दिज्जमाणेहिं–आर्द्रैः–पुत्रकलत्राद्यनुषङ्गजनितस्नेहादार्द्री-क्रियमाणै.। आचा० २१२।
अद्दी–अर्दि., याच्ञा। प्रश्न० ९३।
अद्दीण–अद्रीणः, अक्षुभितः। प्रश्न० १०९।
अद्दीणमाणसे–अदीनमनसा। आचा० ४२४।
अद्दीणा–अदीना, कथं वयममुत्र भविष्याम इति वैक्लव्य-रहिता' परीषहोपसर्गादिसम्भवे वा न दैन्यभाज.। उत्त० २८२।
अद्धं–अर्द्धम्। सूत्र० १६।
अद्धंसं–उत्तरासङ्गः। बृ० तृ० २५४ अ। नि० चू० प्र० १९१ अ।
अद्ध– अद्धाकालः–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमु-द्रान्तर्वर्ती. समयादिलक्षणः। आव० २५७। कालो। नि० चू० प्र० ३३७ अ। अर्द्धम्, भागमात्रा। भग० २०८। तिर्यग्वलितम्। जं० प्र० ५२।
अद्धकविट्ठगसंठाणसंठिते– अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्, चन्द्रविमानस्वरूपम्। सूर्य० २६२।
अद्धकवित्थसंठाणसंठियं – अर्द्धकपित्थसस्थानसस्थितम्, उत्तानीकृतमर्द्धकपित्थं तस्येव यत्स्थानं तेन संस्थितम्। जीवा० ३७८।
अद्धकायसमाणा–आलोककव्यन्तरादिकायार्धप्रमाणा। जं० प्र० ५७।
अद्धखल्लया–पादार्धाच्छादकं चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धखल्ला–अद्धं जाव खल्लया जीए उवाणहा। नि० चू० प्र० १३६ आ।
अद्धखित्तं – अर्द्धक्षेत्रम्। यदहोरात्रप्रमितस्य क्षेत्रस्यार्द्धं चन्द्रेण सह योगमश्नुते तन्नक्षत्रम्। सूर्य० १७७। जं० प्र० ४७८।
अद्धचंदं–अर्द्धचन्द्रः, बाणविशेष। आव० ६९७।
अद्धचंदा–अर्द्धचन्द्राः, खण्डचन्द्रप्रतिबिम्बानि चित्ररूपाणि। जं० प्र० २०१।
अद्धचंदो – अर्द्धचन्द्रः, सोपानविशेष'। प्रश्न० ८। द्वारा-दिषु रत्नमयश्चिह्नविशेष'। प्रज्ञा० ९९, सूर्य० २६४। आव० ४२५, जीवा० १७५।
अद्धचक्कवाला–चक्रवालार्धरूपा। भग० ८६६। अर्धव-लयाकार.। ठाणा० ४०७।
अद्धजंघा–जङ्घार्धपिधायि चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धजंघमेत्तो–अद्धजङ्घा। नि० चू० द्वि० ७९ आ।
अद्धद्धामीसग – अद्धद्धमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेद.। दश० २०९।
अद्धद्धामीसए–अद्धद्धामिश्रकं, अद्धा–दिवसो रजनी वा तदेकदेशः प्रहरादि. अद्धद्धा तद्विषयं मिश्रकं–सत्यासत्यं। ठाणा० ४९१। अद्धाद्धा, दिवसस्य रात्रेर्वा एकदेश। प्रज्ञा० २५९। अद्धद्धा, दिवसरजन्येकदेश'। दश० २०९।
अद्धद्धामिस्सिया–अद्धाद्धामिश्रिता, दिवसस्य रात्रेर्वा एक-देशोऽद्धाद्धा सा मिश्रिता यया सा भाषा। प्रज्ञा० २५६।
अद्धनारायं–अर्द्धनाराचम्, यत्रैकपार्श्वे मर्कटबन्धो द्वितीये च पार्श्वे कीलिका तत्। जीवा० १५, ४२। प्रज्ञा० ४७२।
अद्धपत्थए–मानविशेष। भग० ३१३।
अद्धपलितंका – अर्द्धपर्यङ्का – ऊरावेकपादनिवेशनलक्षणा। ठाणा० २९९, ३०२।
अद्धपलियंकसंठिते–अर्द्धपल्यङ्कसंस्थितम्। सूर्य० १३०।
अद्धपलंका -एक जानुमुत्पाट्योपवेशनम्। बृ० तृ० २०० अ।
अद्धपेडा–गोचरचर्याभिग्रहविशेष। उत्त० ६०५। ठाणा० ३६६।
अद्धपेला–गोचरचर्याभिग्रहविशेष। नि० चू० तृ० १२ अ।

अद्धमंडलं–अर्द्धमण्डलम्। जं० प्र० ४७८।
अद्धमंडलसंठिती – अर्द्धमण्डलसंस्थितिः, अर्द्धमण्डलव्यवस्था। सूर्य० १६।
अद्धमागहविब्भमं–अर्द्धमागधविभ्रमम्, गृहविशेष॰। जीवा० २६९। जं० प्र० १०७।
अद्धमागहा – अर्द्धमागधी, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी भाषा। भग० २२१। मागधभाषालक्षणं किञ्चित्किञ्चिच्च प्राकृतभाषालक्षणं यस्यां सा, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी। भग० २२१। मगहद्धविसयभासानिबद्धं, अट्ठारसदेसीभासाणियतं। नि० चू० द्वि० ३६ अ।
अद्धमासियसु–अर्धमासिका। आचा० ३२७।
अद्धरत्तकालसमओ–अर्द्धरात्रकालसमयः। आव० १२१।
अद्धसंकासा–अर्द्धसङ्काशा, सर्वकामविरक्तताविषये देवलासुतराजस्य तापसावस्थायामुत्पन्ना पुत्री। आव० ७१४।
अद्धसम–अर्द्धसमम्, पद्यविशेषः। दश० ८८। एकतरसमम्। ठाणा० ३९७।
अद्‌धसेलसुत्थियं–अर्द्धशैलसुस्थितम्। जीवा० २६९।
अद्‌धहारा–अर्धहारा, नवसरिक.। जं० प्र० २४, १०५।
अद्‌धहारभद्दो–अर्धहारभद्र·, अर्द्धहारे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव·। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारमहाभद्दो–अर्द्धहारमहाभद्र, अर्द्धहारे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारमहावरो – अर्द्धहारमहावर·, अर्द्धहारे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरभद्दो – अर्द्धहारवरभद्र, अर्द्धहारवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरमहाभद्दो–अर्द्धहारवरमहाभद्र अर्द्धहारवरे द्वीवेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव·। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरमहावरो – अर्द्धहारवरमहावर·, अर्द्धहारवरे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव.। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरावभासभद्दो–अर्द्धहारवरावभासभद्र, अर्द्धहारावभासे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरावभासमहाभद्दो– अर्द्धहारवरावभासमहाभद्र, अर्द्धहारावभासे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव.। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरावभासमहावरो – अर्द्धहारवरावभासमहावर·, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा ३६९।
अद्‌धहारवरावभासवरो–अर्द्धहारवरावभासवर·, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९
अद्‌धहारवरावभासो – अर्द्धहारवरावभास·, द्वीपविशेष समुद्रविशेषश्च। जीवा० ३६९।
अद्‌धहारवरो–अर्द्धहारवरः, अर्द्धहारवरे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९। द्वीपविशेष·, समुद्रविशेषश्च जीवा० ३६८।
अद्‌धहारो–अर्द्धहार·, नवसरिक.। औप० ५५। जीवा० १८९। भूषणविधिविशेषः। जीवा० २६८। द्वीपविशेषः समुद्रविशेषश्च। जीवा० ३६८। प्रज्ञा० ३०७।
अद्‌धा–अध्वा, पन्था। आव० ६६२। समय·। विशे० ९६१। काल·, अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती समयादिलक्षणः। विशे० ८३७। कालम्। ठाणा० ४४। कालस्याख्या। प्रज्ञा० ९। अवधिलब्धिकालः। आव० ४३। अध्वा–मार्ग·। आव० ६१७। काल.। आव० ८४०। दिवसो रात्रिर्वा। प्रज्ञा० २५९। अद्धा, षट्षष्ट्यधिकरात्रिन्दिवशतत्रयपरिमाणा। सूर्य० ११। जड्डाए अद्धं जाव कोसो। नि० चू० प्र० १३६ आ।
अद्‌धाउए – अद्धा–काल तत्प्रधानमायु·–कर्मविशेषोऽद्धायुः, भवात्ययेऽपि कालान्तरानुगामी। ठाणा० ६६।
अद्‌धाए–कालस्य पौरुष्यादिकालमानमाश्रित्य इति। ठाणा० ४९८। काले अर्थादागामिन्याम्। उत्त० २८०।
अद्‌धाकालः–अद्धैव काल, कालशब्दो हि वर्णप्रमाणकालादिष्वपि वर्त्तते, ततोऽद्धाशब्देन विशिष्यत इति। ठाणा० २०१। चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्यद्धाकाल। दश० ९।
अद्‌धाकाले–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तवर्त्ती समयादि। भग० ५३३।
अद्‌धाढए–अर्द्धाढक·, मानविशेष। भग० ३१३।
अद्‌धाणं–पहो। नि० चू० प्र० ५१ आ। महदरण्य। वृ० द्वि० १७४ आ। अध्वा–पन्था·। वृ० द्वि० १२२ अ। महंता अडवी। नि० चू० प्र० ५० आ। छिन्नापातं महदरण्यम्। वृ० द्वि० २१ आ। उत्पत्तिप्रलयरूपम्। उत्त० २६८।

अद्धाण–अध्वनः । आव० ५३५ । अध्वा–विप्रकृष्टो मार्ग । बृ० प्र० २३८ आ ।

अद्धाणतेणो–पथे मुसतो । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

अद्धाणपडिवन्ने–अध्वप्रतिपन्न, मार्गप्रतिपन्न । भग० ११६ ।

अद्धाणपरिस्संतो–अद्धानपरिश्रान्त । ओघ० १०७ ।

अद्धाणपवण्णगो–अध्वप्रपन्नक. । आव० ५७८ ।

अद्धाणसीसए–यत परं समुदायेन गन्तव्य, सम्यग्मार्गावहनात्। बृ० तृ० ६१ आ ।

अद्धाणसुत्ते–अद्धाणविहिजयणाविदंसणसुत्तगं । नि० चू० द्वि० १४८ अ ।

अद्धामिस्सिया–अद्धामिश्रिता, अद्धा–काल. स चेह प्रस्तावाद्दिवसो रात्रिर्वा, स मिश्रितो यया सा भाषा । प्रज्ञा० २५६ ।

अद्धामीसए–कालविपयं सत्यामत्यम् । ठाणा० ४९० ।

अद्धामीसग–अद्धामिश्रा, सत्यामृषाभेद । दश० २०९ ।

अद्धासमय–कालसमय., अद्धाया निर्विभागो भागो वा। जीवा० ६ ।

अद्धिती–अधृति । आव० ३५३ ।

अद्धुट्ठाइं–अर्द्धचतुर्थानि । आव० ३९ ।

अद्धुट्ठाण–अभ्युत्थानाम्, अर्द्धाधिकतिसृणाम् । प्रश्न० ७३ ।

अद्धोवमिए–अद्धौपमिकम् – यत्कालप्रमाणमनतिशयिना ग्रहीतु न शक्यते तत् । ठाणा० ९० ।

अद्भुतम्–वाण्यतिशय । सम० ६३ ।

अधम्मजुत्ते–येन उक्तेन प्रतिपाद्यस्याधर्मबुद्धिरुपजन्यते तदधर्मयुक्तम् । ठाणा० २५३ ।

अधम्मपलज्जणो–अधर्मप्ररक्त, अधर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यत इति । सूत्र० ३२९ ।

अधम्मपलोई–अधर्मप्रलोकी, अधर्मानेव–परसम्बन्धिदोषानेव प्रलोकयति–प्रेक्षते इत्येवंशील । विपा० ४८ ।

अधम्मो – अधर्म., अचारित्ररूपत्वात । अब्रह्मण षोडश नाम। प्रश्न० ६६ । अधर्मास्तिकाय स्थित्युपष्टम्भगुण । ठाणा० ४० । अधर्म–श्रुतलक्षणविहीनत्वादनागमे अपौरुषेयादौ । ठाणा० ४८७। अधर्मास्तिकाय । सम० ६ । अविद्यमानसदाचार । उत्त० ४३४ ।

अधरं–आत्यन्तिक कारणम् । बृ० तृ० १९ अ ।

अधरफाणू–पार्ष्णिका । व्य० द्वि० २९९ अ ।

अधरिमं – अविद्यमानधारणीयद्रव्याम् ऋणमुत्कलनात् । भग० ५४४ ।

अधरो–अधर, अधस्तनौष्ठ । प्रश्न० १४० । अधीर । उत्त० १५३ ।

अधरोट्ठ–अधरोष्ठ, अधस्तनो दन्तच्छद. । जं० प्र० ११२। प्रश्न० ८१ ।

अधस्तनकाय–पादपाणिशिरोग्रीवमुच्यते । ठाणा० ३५७ ।

अधस्तारका–पिशाचभेदविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

अधारणिज्जं–अधारणीयं, धारयितुमशक्यम्, स्थातुं वाऽशक्यम् । विपा० ६२ । अविद्यमानाधमर्णम् । विपा० ६३। अप्रशस्तप्रदेशखञ्जनादिकलङ्काङ्कितत्वात् । आचा० ३९६ ।

अधिकरणं–अधिकं–अतिरिक्तं उरसूत्रं करणं, अवग अधमा जघन्या गति तामात्मानं प्राहयति। कषायभाव । नि० चू० प्र० २९४ अ । अधोकरणं, अधितिकरणं, अबुद्धिकरणम् । नि० चू० प्र० २१३ आ । कलहो । नि० चू० प्र० ३४४ आ, २३९ अ ।

अधिकरणनिर्वर्त्तिनी – खड्गादिनिर्वर्त्तिनी, अधिकरणिकीक्रियाया द्वितीयो भेद । आव० ६११ ।

अधिकरणप्रवर्त्तिनी–चक्रमह पशुबन्धादिप्रवर्त्तिनी क्रिया, अधिकरणिकीक्रियाया प्रथमो भेद. । आव० ६११ ।

अधिकरणसाला–अधिकरणशाला, लोहपरिकर्मगृहम् । भग० ६९७ ।

अधिकरणाणं–अधिकरणाना–कलहाना यन्त्रादीना वोत्पादयिता । सम० ३७ ।

अधिकरणिखोडी–अधिकरणिखोडी–यत्र काष्ठेऽधिकरणी निवेश्यते। भग० ६९७ ।

अधिकरणिसंठिते–अधिकरणीसंस्थितम् । ठाणा० ४३४ ।

अधिकरणीतो–चुल्ली । नि० चू० द्वि० १०१ अ ।

अधिकासिका–या सञ्ज्ञावेगेनापीडित मुखेनैव गन्तुं शक्नोति ता । ओघ० १९९ ।

अधिके–अर्गले । उत्त० ६६० ।

अधिक्खाउ–अधिकतर खाए सो । नि० चू० प्र० १५१ अ ।

अधिगमजं–दर्शनभेद । आव० ५२७ ।

अधिगरणं–अधिकरणं, अधिक्रियते–स्थाप्यते–नरकादिष्वात्माऽनेनेति, अनुष्ठानविशेष । प्रज्ञा० ४३५ ।

अधिगरणंसि–विरोधे । ठाणा० ४४१ ।

अधिगरणिया–आधिकरणिकी, अधिकरणेन निर्वृत्ता। प्रज्ञा०

अधिगारो–अधिकार.. नियोग.। प्रश्न० ६६। [४३५।

अधिघटिकया–कपिलदरिद्रदृष्टान्तविशेष।आचा० १६३।

अधिट्ठणं–सगिसेज्जवेढिए चेव उपवेसणं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

अधिट्ठाणं–अधिष्ठानम्। ओघ० १४८।

अधिट्ठिज्जा–अधितिष्ठेत्–योन्याकर्षणेन सगृह्णीयात्। ठाणा० ३१३।

अधिट्ठेति–परिभुञ्जति। नि० चू० प्र० २२५ आ।

अधिमरगा–अहिवत् अनपकृतेऽप्यपकारे मारका। नि० चू० द्वि० ११ अ।

अधियं–अधिकम्, वर्णादिभिरभ्यधिकं, सूत्रदोषविशेष। आव० ३७४।

अधियासितो–अध्यासितः, अधिवासित। आव० ३४३।

अधिशय–आश्रयत.। आचा० २५५।

अधिष्ठानम्–गुदास्थानम्। दश० ११८।

अधीकारो–प्रयोजनम्। बृ० द्वि० २२५ अ।

अधीकारवशः–प्रसङ्ग। आचा० २४१।

अधीता–अधीता, श्रुतनिबद्धा सती पठिता। प्रश्न० १०५।

अधीतान्वीक्षिकीकस्य–दुर्गृहीतहेतुदृष्टान्तलेशस्य। आचा० २२३।

अधुवं–अध्रुव–नावश्यमाविनम्। प्रश्न० ९६। प्रातिहारिकम्। नि० चू० द्वि० ११७ आ।

अधुववग्गणा–अध्रुववर्गणा, इतश्चोर्ध्वमित्थमेवैकोत्तरवृद्धिक्रमेण वर्द्धमाना ध्रुववर्गणाभ्य इतरा अनन्ता भवन्ति। विशे० ३३१।

अधुवे–न ध्रव, सूर्योदयवन्न प्रतिनियतकालेऽवश्यभावी। भग० ४६९। अध्रुव–स्वल्पकालानुज्ञापनात्। आचा० ३९६। नित्यो न। उत्त० २८९।

अधो–भूमौ। ओघ० १६२।

अधेणू–सुक्का वञ्झा वा। नि० चू० प्र० ३२७ अ।

अधोघट्टना–अधो भुव घट्टयति। ओघ०-१०९।

अधोणता–गजदंतवत् अवनता। नि० चू० द्वि० ४९ आ।

अधोदृष्टिता–दोषविशेष। उत्त० ४९०।

अधोभागा–भूमिभाग.। जं० प्र० ३२१।

अधोभावो–अधोभाव., तिरस्कारबुद्धि। आव० ६९९।

अधोनिवृतम्–अनाच्छादितममालगृहम्। ठाणा० १५७।

अधोवेदिका–जानुनोरधो हस्तयोर्निवेश। ठाणा० ३६२।

अध्यसनं–अजीर्णे भोजनम्। ठाणा० ४४७।

अध्यास्यन्ते–सह्यन्ते। प्रज्ञा० ८०।

अध्याहार–व्याख्याङ्गम्। आचा० ५५।

अध्येष्ठया–यदृच्छया। सम० ३७।

अध्वर–यज्ञ.। उत्त० ५२५।

अनंगप्रविष्टं–गणधरानन्तराद्याचार्यदृब्धम्। तत्त्वा० १-२०।

अनक्कभिन्नेहिं–अनस्तितै। भग० ३७२।

अनग्गओ–अनग्नक, द्रुमविशेषः। जीवा० २६९।

अनङ्गसेन–चंपावासिसुवर्णकार। बृ० तृ० १०८ आ।

अनतिचारम्–छेदोपस्थापनीयभेदविशेष। ठाणा० ३२३।

अनतिविलम्बितम्–वाण्यतिशयविशेष.। सम० ६३।

अनध्यवसायः–संशयो विपर्ययो वा। आचा० १५०।

अननुक्रमाद्–पश्चानुपूर्व्या। विशे० २८४।

अनन्तकम्–समयभाषया वस्त्रमिति। ठाणा० ३४६।

अनन्तगुणितम्–अनन्तगुणितं, अनन्तशो गुणितम्। विशे० २६८।

अनन्तरवल्ली–माश्रादय षट्। बृ० तृ० ४२ आ।

अनन्यत्वद्रव्यशुद्धि–आदेशतो द्रव्यशुद्धेर्भेद, यथा शुद्धदन्त। दश० २११।

अनपनीतम्–वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।

अनब्भुवगओ–अनभ्युपगत, श्रुतोपसम्पदानुपसम्पन्न.। आव० १००।

अनभिग्रहिकः–मिथ्यात्वविशेष। ठाणा० २७।

अनममाणे–अनममानान्, निर्घृणतया सावद्यानुष्ठायिन.। आचा० २५४।

अनर्गलितकपाटम्–उद्घाटकपाटम्। ओघ० १६६।

अनर्थकम्–अर्थशून्यम्। आव० ५१।

अनलं–अनलम्–अभिष्टकार्यासमर्थं हीनादित्वात्। आचा० ३९६। न अलो अनलः–अपच्चल। नि० चू० द्वि० २५ आ।

अनलगिरी–अनलगिरि, प्रद्योतस्य हस्ती, तृतीयं रत्नम्। आव० ६७३।

अनलसा–उत्साहवन्त। ओघ० १००।

अनवत्राप्यता–अविद्यमानमवत्राप्य–अवत्रपणं लज्जनं यस्य स., अवत्रापयितुं–लज्जयितुमर्ह, शक्यो वाऽवत्राप्यो लज्जनीयः न तथा तद्भाव। उत्त० ३९।

अनवगतानि–असङ्कल्पितान्यनालोचितानि। विशे० १४५।
अनवद्याङ्गी–महावीरभगवद्दुहिता। विशे० ९३५।
अनवयग्ग–अनवदग्रम्, अनन्तम्। भग० २४८।
अनवसर–अनागमः। आचा० १२२।
अनाकारा–सामान्याशग्रहणशक्तिः। भग० ७३।
अनाघात–(अणघायं), अमारिघोषणा। आचा० २६०।
अनाचारश्रुतम्–सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चममध्ययननाम। ठाणा० ३८७।
अनाचीर्णम्–अनारब्धम्। आचा० १४८।
अनायुक्ता–(अणाउत्ता)–लोपकृता। ओघ० १८६।
अनाद्यन्तं–आद्यन्तरहितम्। ठाणा० १२०।
अनानुगामिकः–अनानुगामिकः–शृङ्खलाप्रतिबद्धदीप इव यो गच्छन्तं पुरुषं नानुगच्छति। प्रज्ञा० ५३९।
अनाभवद्व्यवहार–अस्वामित्वव्यवहार। आव० ८२१।
अनाभोगिक–मिथ्यात्वविशेष। ठाणा० २७।
अनालीढं–(अणालीढं)–अनवबुद्ध। ओघ० २२७।
अनालोचितानि–असङ्कल्पितान्यनवगतानि। विशे० १४५।
अनाहो–अनाथ, नाथरहितः, योगक्षेमकारिनायकाभावात्। प्रश्न० ११। योगक्षेमकारिविरहित। प्रश्न० १९।
अनिंदं–अनिन्द्यम्, सामायिकसप्तमपर्यायः। आव० ४७४।
अनिन्द्रियं–मन.। बृ० प्र० ९आ।
अनिकामं–परिमितम्। बृ० द्वि० ४ अ।
अनिन्दित.–किन्नरभेदविशेष.। प्रज्ञा० ७०।
अनिउणमई–अनिपुणमति.। आव० ४९२।
अनिग्गहे–अनिग्रह.–न विद्यते इन्द्रियनिग्रह –इन्द्रियनियमात्मकोऽस्येति। उत्त० ३४४।
अनिज्जूहित्ता–अदत्त्वा। भग० ७०१।
अनिट्ठं–अनिष्टम्, इष्यन्ते स्मेतीष्टास्तन्निषेधादनिष्टा। भग० ७२।
अनिट्ठता–अनिष्टता, अवल्लभता। भग० २३।
अनिट्ठुभओ–अनिष्ठीवक, मुखश्लेष्मणोऽपरिष्ठापक। प्रश्न० १०७।
अनित्थंत्थं – अनित्थंस्थं, इदंप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थस्थं, न इत्थंस्थ अनित्थंस्थं–वदनादिशुषिरप्रतिपूरणेन पूर्वाकारान्यथाभावतोऽनियताकारमिति। प्रज्ञा० १०९।
अनित्यत्वम्–अतादवस्थ्यम्। जं० प्र० २६।
अनिद्देस–अनिर्देशदोष, यत्रोद्देश्यपदानामेकवाक्यभावो न क्रियते, एतादृश सूत्रदोषविशेष। आव० ३७४।
अनिभृता–निष्ठुरवक्रोक्त्यादिरूपा। बृ० प्र० २१३ अ।
अनिदोज्जं–अनिर्भय, अस्वस्थम्। व्य० द्वि० २४३ आ।
अनियट्टि–अनिवृत्ति–शुक्लध्यानचतुर्थभेदरूपम्। उत्त० ५८९। आ सम्यग्दर्शनलाभाद् न निवर्तते। विशे० ५३५।
अनियट्टी–ग्रहविशेष। ठाणा० ७९। जं० प्र० ५३५।
अनियओ–अनियत, अनियतवृत्ति। उत्त० २६९।
अनियतवृत्ति–अनियतविहाररूपा। उत्त० ३९। अनियतविहार। ठाणा० ४२३।
अनियाओ-अनियता। ओघ० ७३।
अनियाणे–अनिदान, न विद्यते निदानमस्येति निराकाङ्क्षोऽशेषकर्मक्षयार्थी संयमानुष्ठाने प्रवर्तेत। सूत्र० २६४।
अनिरक्खिय–क्षिप्त.। आव० ६८१।
अनिरुद्धे–अनिरुद्ध, अन्तकृद्दशानां चतुर्थवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० १४।
अनिरुद्धो–अनिरुद्ध, कृष्णवासुदेवापत्यनाम। प्रश्न० ७३।
अनिर्विष्टं–न दत्तफलम्। बृ० प्र० ५० आ।
अनिव्वुइ–अनिर्वृति, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा। आव० ४९९।
अनिल –अनिलनरेन्द्र यवराजर्षिपिता। बृ० प्र० १९० आ।
अनिलसुओ–अनिलसुत यवराजा। बृ० प्र० १९१ अ।
अनिलंछिएहिं–अवर्द्धितकै। भग० ३७२।
अनिवृत्तिकरण – सम्यक्त्वप्राप्तौ करणविशेष। ठाणा० ३१। अनिवृत्तिकरणं, न निवर्तनशीलम्। आव० ७५।
अनिवृत्तिवादर –दर्शनसप्तकलोभोपशमयोरन्तरम्। आव० ८२।
अनिव्वाणि–अनिर्वाणि –असुखम्। व्य० प्र० ६२ अ। खेद (गगि०)
अनिव्वुइकरो – अनिर्वृतिकर, अस्वास्थ्यनिबन्धनकायादिचेष्टाकर.। आव० ४९९।
अनिव्वुडं–अचित्तभोजी त्रिदण्डोद्वृत्तभोजी। दश० चू० ५१।
अनिश्रितवचनता–रागाद्यकलुषितवचनता। उत्त० ३९।
अनिष्पन्नातापना – (अणिप्फण्णायावणा)–आतापनाया भेद। औप० ४०।

अनिसाइ–अनिशादी । सम० २० ।
अनिसीहं–अनिशीथम्, निशीथाद्विपरीतम् । उत्त० २०४ । वद्धश्रुतम् । आव० ४६४ ।
अनिहुआ–त्रिदण्डिन । बृ० द्वि० २३५ आ । कन्दर्पबहुला मायिनश्च । बृ० तृ० १९५ आ ।
अनिहो–अनिह.–अमाय, न निहन्यत इति वा परीषहैरपीडित, अस्निह –स्नेहरूपबन्धनरहित । सूत्र० ४०० ।
अनीकाधिपतयः–दण्डनायकस्थानीया । तत्त्वा० ४–४ ।
अनीहडं–अनिर्गतम् । आचा० ३२५ ।
अनीहारिमे–अनिर्हारितम् । अटव्यादिकृतमनशनम् । भग० १२० । गिरिकन्दरादौ अनशनम् । ठाणा० ९४ । भग० ६२५ ।
अनु–पश्चात् । आव० २४२ । सातत्यम् । उत्त० ६२७ ।
अनुकूलं–अनुगुणं, अनुलोमं च । जीवा० ३ ।
अनुगमः–सूत्रस्य न्यासानुकूल. परिच्छेद । ठाणा० ४ । संहितादिव्याख्यानप्रकाररूप, उद्देशनिर्देशनिर्गमादिद्वारकलापात्मको वा । सम० ११५ । अनुगमनम्, अनुयात । उत्त० ६३१ ।
अनुगामि–यन्मोक्षाय अनुगच्छति । व्य० द्वि० ३९८ अ ।
अनुगामिकता–परम्परया शुभानुबन्धसुखम् । जीवा० २४२ ।
अनुगुणं–अनुकूलमनुलोमं च । जीवा० ३ ।
अनुग्गहे–अनुग्रहकृत्स्नं, यत् षण्णा मासानामारोपितं षड् दिवसा गतास्तदनन्तरमन्यत् षण्मासान् आपन्नस्ततो यत् अव्यूढं तत्समस्तं झोषितं पश्चात् यदन्यत् षाण्मासिकमापन्नं तद्वहति । व्य० प्र० ११८ आ ।
अनुज्येष्ठ–पश्चाद्वृत्त्यङ्क । विशे० ४४३ ।
अनुज्ञा–विधि । आव० ७१३ ।
अनुज्ञातभक्तादिभोजनम् – अदत्तादानविरमणचतुर्थभावना । प्रश्न० १२८ ।
अनुज्ञातसंस्तारकग्रहणम् – अदत्तादानविरमणद्वितीयभावना । प्रश्न० १२७ ।
अनुज्ञापनाय–अनुमत्यै । आव० ५४२ ।
अनुतटभेदः–वंशवत् तटभेद । ठाणा० ४७५ ।
अनुत्संकलितम्–अवितीर्णम् । आचा० ३६ ।
अनुदिशं–उपाध्यायप्रवर्त्तिनीलक्षणम् । व्य० द्वि० २०० अ । अनुदिक् । व्य० द्वि० १९६ आ । व्य० द्वि० २०४ आ ।
अनुद्घातकृत्स्न – कालगुरु निरन्तरं वा । व्य० प्र० ११८ आ ।
अनुद्धरिः–कुन्थुविशेष, त्रीन्द्रियजीवभेद. । उत्त० ६९५ । चलन्नेव कुन्थुः स विभाव्यते । ठाणा० ४३० ।
अनुनादि–वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अनुपथ–मार्गमध्य । आचा० २६५ ।
अनुपरतम्–उत्सन्नं, वाहुल्येन । आव० ५९० ।
अनुपरिहारकाः–पारिहारकवैयावृत्त्यकरा । ठाणा० ३२४ ।
अनुप्रवाचयति–(अनुपयाएइ), अनु–परिपाट्या प्रकर्षेण विशिष्टार्थावगमरूपेण वाचयति । जीवा० २५४ ।
अनुप्रास–अलङ्कारविशेष । जं० प्र० १४३ ।
अनुप्रेक्षा–मनसा ग्रन्थार्थयोरभ्यास । तत्त्वा० ९–२५ ।
अनुप्रेक्षितम्–ध्यातम् । ठाणा० १७३ ।
अनुभवसञ्ज्ञा–स्वकृतासातवेदनीयादिकर्मविपाकोदयसमुत्था । जीवा० १५ ।
अनुभूयते–लक्ष्यते । विशे० १७६ ।
अनुमतं–कामम् । आव० ५२७ ।
अनुमानं – साधनधर्ममात्रात् साध्यमात्रनिर्णयात्मकम् । ठाणा० ४९२ ।
अनुयोगद्वाराणि–व्याख्याङ्गानि । आचा० ३ ।
अनुलिखन्–अभिलङ्घयन् । जीवा० १७५ ।
अनुलेपनेन–सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन । सम० ११६ ।
अनुलोम–उत्सर्गः । ओघ० ६५ ।
अनुलोमवचनसहितत्वं–प्रतिरूपविनयविशेष । व्य० प्र० २२ अ ।
अनुल्बण–अनुद्भट । जीवा० २७५ ।
अनुपातनम्–उच्चारणम् । आव० ८३५ ।
अनृतम्–असत्यम् । ठाणा० ५०० ।
अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रम्–वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अनैकान्तिक –हेतुदोषविशेष. । ठाणा० ४९३ ।
अनुशयः–क्रोध । उत्त० ३७७ ।
अनुश्रेणि–ऋजुश्रेणि । उत्त० ५९७ ।
अनुष्ठानं–(अणुट्ठाण)–विहितम् । आव० ६१९ ।
अनुसारगतिं –अनुपातगति । सूर्य० १६ ।

अन्नं–अन्यत्। उत्त० १३७। मण्डकखण्डखाद्यादिसमस्तमपि भोजनम्। उत्त० ३६९।
अन्नंति–अनुयन्ति, आगच्छन्ति। ओघ० १२६।
अन्नंदाइं–असूया, अन्यामिदानीं वा। आव० ५०९।
अन्न–अन्यः। भग० ३१७। अन्न–भत्तं। दश० २१६।
अन्नइलाय–अन्नतिलाए, दोषान्नभोजी। प्रश्न० १०६।
अन्नइलायए–अन्नं विना ग्लानो भवति। भग० ७०५।
अन्नइलायचरए–अन्नग्लानको दोषान्नभुगिति, अथवा अन्नं विना ग्लायकः–समुत्पन्नवेदनादिकारण एव, अन्यस्मै वा ग्लायकाय भोजनार्थं चरतीति अन्नग्लानकचरकोऽन्न-ग्लायकचरकोऽन्यग्लायकचरको वा। ठाणा० २९८।
अन्नउत्थिए–अन्यतीर्थिक, चरकपरिव्राजकभिक्षुभौतादिकः। आव० ८११।
अन्नउत्थिता–अन्ययूथिकाः–अन्यतीर्थिका। ठाणा० १३५।
अन्नउत्थिय–अन्ययूथिक., अन्यतीर्थिक', चरकादिकः। जीवा० १४३।
अन्नकाले–अन्नकाल', सूत्रार्थपौरुष्युत्तरकालं भिक्षाकाल.। सूत्र० ३०१।
अन्नकिच्चकरो–अन्यतृप्तिकरः। आव० ७२०।
अन्नगिलाय–पर्युषितम्। आचा० ३१३।
अन्नत्थ–अन्यत्र, परिवर्जनार्थे। प्रज्ञा० २५३। व्य० प्र० १६४ आ।
अन्नधम्मिय–अन्यधार्मिक', मिथ्यादृष्टि.। ओघ० २४।
अन्नपर–अन्यपरं–अन्यरूपतया परमन्यत्। आचा० ४१५।
अन्नपाणं–अन्नपानम्, ओदनकाञ्जिकादि। उत्त० ३६३।
अन्नभयं–परचक्रभय। नि० चू० द्वि० २१ अ।
अन्नभावेणं–अन्यभाव –योऽसौ गन्ता सोऽन्यभाव', उन्निष्क्रमितुकामः। ओघ० २२।
अन्नमन्नं–अन्योऽन्यं–परस्पर। ठाणा० १६२।
अन्नमन्नओगाढाइं–एकक्षेत्राश्रितानि। भग० ७५८।
अन्नमन्नगढिया–अन्योऽन्यग्रथिता, परस्परगुम्फिता। भग० २१५।
अन्नमन्नगुरुयत्ता–अन्योऽन्यगुरुकता, अन्योऽन्येन ग्रन्थनाद्गुरुकता–विस्तीर्णता। भग० २१५।
अन्नमन्नगुरुयसंभारियत्ता–अन्योऽन्यगुरुकसम्भारिकता, अन्योऽन्येन गुरुकं यत्सम्भारिकं तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।
अन्नमन्नघडत्ताए–परस्परसमुदायता। भग० ७५८।
अन्नमन्नपुट्ठाइं–आगाढाश्लिषत.। भग० ७५८।
अन्नमन्नबद्धाइं–गाढाश्लिषत'। भग० ७५८।
अन्नमन्नभारित्ता–अन्योऽन्यभारिकता, अन्योऽन्यस्य यो भार स विद्यते यत्र तदन्योऽन्यभारिक तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।
अन्नयरंसत्थं–अन्यतरत् शस्त्रम्ः सर्वशस्त्रम्, एकधारादि-शस्त्रव्यवच्छेदेन सर्वतोधारशस्त्रकल्पम्। दश० २०१।
अन्नयर–अन्यतरम्, स्तोकम्। दश० १९८। प्रतिकूलम्। आचा० ३४२।
अन्नयरायम्मि–अन्यतरस्मिन्। उत्त० ५४३।
अन्न भण–अन्येनाक्रम्यमाण। ओघ० १६५।
अन्नलिंगे–अन्यलिङ्गम्, साधुलिङ्गम्। आव० १३४।
अन्नवत्थुवन्नास–अन्यवस्तूपन्यासः, उपन्यासस्य द्वितीयो भेद.। दश० ५५।
अन्नवालए–अन्यपाल.–अन्ययूथिक। भग० ३२३।
अन्नवेल–तत्रान्यस्या–भोजनकालापेक्षयाऽऽद्यावसानरूपाया वेलाया–समये चरतीति। ठाणा० २९८।
अन्नहाभावो–अन्यथाभावः। बृ० द्वि० २८९ अ। उन्निष्क्रमणाभिप्राय.। ओघ० ८१।
अन्नाइट्ठे–अन्याविष्ट.–अभिव्याप्त'। भग० ६८३।
अन्नाओ–अन्यस्मात्, अन्येन द्वारेण। उत्त० २१९।
अन्नाणं–अज्ञानम्, मिथ्याज्ञानम्। उत्त० १५१। मिथ्यात्वतिमिरोपप्लुतदृष्टेर्जीवस्य विपर्यय। विशे० ८७३। द्रव्य-पर्यायविषयबोधाभाव। ठाणा० १५४। लौकिकश्रुतम्। ठाणा० ४५१।
अन्नाणतावादा–अज्ञानमेव श्रेय इत्येवंप्रतिज्ञा.। ठाणा० २६८।
अन्नाणकिरिया–अज्ञानात् वा चेष्टा कर्म वा सा। ठाणा० १५३।
अन्नाणदोसे–अज्ञानदोष–अज्ञानात्–कुशास्त्रसंस्कारात् हिंसादिष्वधर्मस्वरूपेषु नरकादिकारणेषु–धर्मबुद्ध्याऽभ्युदयार्थं वा प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोष, अज्ञानमेव दोष। ठाणा० १९०।
अन्नाणियवाइ–कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तदेषामस्ति तेऽज्ञानिकास्ते च ते वादिनश्चेत्यज्ञानिकवादिनः। भग० ९४४।

अन्नाणी–अज्ञानी, मिथ्याज्ञानः। जीवा० ४३९। ज्ञान-निह्नववादी। सूत्र० २०८।

अन्नाणमूढा–जो सक्कादिमता अन्नाणा णाणवुद्धीए गेण्हति, ते जतिण हेउसएहिं दंसिय घडमाणमत्थंपि गिह्णति। नि० चू० द्वि० ४३ अ।

अन्नातचरते–अज्ञात.–अनुपदर्शितस्वाजन्यर्द्धिमत्प्रव्रजितादिभाव सन् चरति–भिक्षार्थमटतीत्यज्ञातचरक। ठाणा० २९८।

अन्नायउंछं – अज्ञातोञ्छम्, विशुद्धोपकरणग्रहणविषयम्। दश० २८०।

अन्नायएसी – अज्ञातैषी–अज्ञात –तपस्वितादिभिर्गुणैरनवगत एषयते–ग्रासादिक गवेषयति। उत्त० ४१४।

अन्नि–अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्निआपुत्तो–गङ्गाप्राप्तकेवल आचार्य। (सं०)

अन्निकापुत्रिक–आचार्यविशेषनाम। व्य० प्र० १९२ आ।

अन्नितो–अन्वित–युक्त। उत्त० ४४८।

अन्नियपुत्ता–अर्णिकापुत्रा, वैनयिक्यामाचार्या। आव० ४२९।

अन्नियपुत्तो–अन्निकापुत्र, आर्यिकालाभद्वारे आर्यिकाऽऽनीताहारभोक्ता आचार्यः। आव० ६३७।

अन्ने – नानादेशापेक्षया गौरवकुत्सादिगर्भमामन्त्रणवचनमिदम्। दश० २१६।

अन्नेसमाण–अन्वेषमाण, भगवदाज्ञामनुपालयन। दश० १८७।

अन्नेसिं–अन्वेषयेत्–गवेषयेत्। आचा० ७७।

अन्नो–अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्नोन्नं–अन्यदन्यद्... सूत्र० १४३।

अन्नोन्नकारणं–परस्परवैयावृत्यकरणम्। बृ० द्वि० २९२ अ।

अन्नोन्नघडत्ता – अन्योऽन्यघटता, परस्परसम्बद्धता। जीवा० ९३।

अन्यत्वम् – अनगारद्वयसम्बन्धिनो ये पुद्गलास्तेषां भेद। भग० ७४१।

अन्यत्वद्रव्यशुद्धि–अन्यद्रव्यशुद्धि, आदेशतो द्रव्यशुद्धेर्भेद, यथा शुद्धवासा। दश० २११।

अन्यद्रव्यनानाता–परमाणोर्यणुकादिभेदभिन्नता। आव० २८१।

अन्यपुष्टः (अण्णपुट्ठ)–कोकिल। उत्त० ६५३।

अन्योऽन्यक्रियासप्तैकक–सप्तमसप्तकम्। ठाणा० ३८७।

अन्योऽन्यप्रगृहीतम्–वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।

अन्योऽन्याविभागसम्बद्ध–क्षीरनीरादिकसम्बद्धम्। आव० ३२२।

अन्वीक्षिष्यामि–अन्वेषयिष्यामि। आचा० २८२।

अन्वेषयेत्–प्रार्थयेत्। आचा० २९०।

अन्यतीर्थिक –सरजस्कादय। आचा० ३२४। अन्यानि च तान्यर्हत्प्रणीततीर्थादन्यत्वेन तीर्थानि च–निजनिजाभिप्रायेण भवजलधेस्तरणं प्रति करणतया विकल्पितत्वेनान्यतीर्थानि तेषु भवा, ते च शाक्यसरजस्कादय। उत्त० २९९।

अपइट्ठाणे–अप्रतिष्ठान, सप्तम्या नरकावासविशेष। प्रज्ञा० ८३।

अपकर्षणं–ह्रास। ठाणा० २२२।

अपकसंती–परिहसन्ती नीयमाना वा। ठाणा० ३२८।

अपकिट्ठ–अपकृष्टम्। किञ्चिदूनम्। भग० २९२।

अपक्खग्गाही–अपक्षग्राही, न पक्ष शास्त्रबाधितं गृह्णाति इति। ठाणा० ४४१।

अपक्खो–कालपक्खो। नि० चू० द्वि० ३३ आ।

अपचयद्रव्यमन्द – कृशशरीरतया प्रवासं न कर्तुमीष्टे। बृ० प्र० ११३ अ।

अपचयभावमन्द –बुद्धेरभावेन हिताहितप्रवृत्ति–निवृत्ती न कर्तुमीश। बृ० प्र० ११३ अ।

अपच्चक्खाणकसाए–देशविरतिप्रतिबन्धको मोह। सम० ३१।

अपच्चक्खाणकिरिआ–सूत्रकृताङ्गे द्वितीयश्रुतस्कन्धाध्ययनविशेष। सम० ४२।

अपच्चक्खाणकिरिया–अप्रत्याख्यानक्रिया, विंशतिक्रियामध्ये पञ्चमीक्रिया। आव० ६१२। अविरतिस्तन्निमित्त. कर्मबन्ध। ठाणा० ४१। निवृत्त्यभावेन क्रिया–कर्मबन्धकारणम्, सम्यग्दृष्टेश्चतुर्थी क्रिया। प्रज्ञा० ३३४। प्रत्याख्यानक्रियाया अभाव, अप्रत्याख्यानजन्य. कर्मबन्धो वा। भग० १०१।

अपच्चक्खाणा–अप्रत्याख्यान। प्रज्ञा० ४६८। कषाया एव। आव० ७७। देशविरत्यावारकः। ठाणा० १९४।

अपच्चलो-अपचल., असमर्थ । आव० ५३७ । अयोग्यः । नि० चू० द्वि० २५ आ।

अपच्छिमं-अपश्चिमम् , चरमम्। आव० ५४४ । पश्चात्काल-भाविन्य. । सम० १२० ।

अपच्छिमा-अपश्चिमा । आव० ८३९ । पश्चिमैवामङ्गल-परिहारार्थमपश्चिमा । ठाणा० ५७ ।

अपज्जत्तं-अपर्याप्तम्-अशक्त । उत्त० ४०८ ।

अपज्जत्ता - अपर्याप्ता, पर्याप्तभाषाविपरीतो भाषाभेद । दश० २१० ।

अपज्जत्तिया-अपर्याप्तिका, या मिश्रतया उभयप्रतिषेधात्मक-तया वा न प्रतिनियतरूपतयाऽवधारयितुं शक्यते सा, भाषाया द्वितीयो भेद । प्रज्ञा० २५५ ।

अपज्जोसवण-अपत्ते अतीते वा जो पज्जोसवति । नि० चू० प्र० ३३६ अ ।

अपडिकम्म-शरीरप्रतिकर्मवर्जितम् । भग० ६२६ ।

अपडिण्णे-अप्रतिज्ञ॰, नास्य प्रतिज्ञा विद्यते । आचा० १३२ । अनिदानो, वसुदेववत् संयमानुष्ठान कुर्वन् निदान न करोति। आचा० १३३ । यदि वा स्याद्वादप्रधानत्वान्मौनीन्द्रागम-स्यैकपक्षावधारणं प्रतिज्ञा तद् रहित । आचा० १३३ । अनिदानः। आचा० ३०६ ।

अपडिबद्धया - अप्रतिबद्धता, स्वजनादिषु स्नेहाभाव । भग० ९७ ।

अपडिभाणी-अप्रतिभाषी। आचा० ३०६ ।

अपडिरूवा-अप्रतिरूपा । उत्त० ११३ ।

अपडिलेह-अल्पार्थे नञ्, ततोऽप्रत्युपेक्षित इति अल्पोप-करणत्वादप्रत्युपेक्ष. । उत्त० ५९० ।

अपडिवाती-अवधिज्ञानभेद । ठाणा० ३७० ।

अपढमसमयनियंठो - अप्रथमसमयनिर्ग्रन्थ , य. शेषेषु समयेषु वर्त्तमान॰ स॰। उत्त० २५७।

अपतिट्ठिए-अप्रतिष्ठित॰ - आक्रोशादिकारणनिरपेक्ष. केवलं क्रोधवेदनीयोदयाद् यो भवति स । ठाणा० १९३ ।

अपत्तं-अपात्रं-अभाजनम् । नि० चू० तृ० ८० अ ।

अपत्तपडिरुच्छण-अप्राप्तामपि वेलाम् प्रतिपालयति। ओघ० ४९ ।

अपत्ति-अप्रीति । आव० २०१ ।

अपत्तियं-अप्रीतिकम् । आव० २७३ । अपात्रिकाम्-अविद्य-मानाधाराम् । भग० ७०५ ।

अपत्तियंते-अप्रत्येति । बृ० द्वि० २२८ आ ।

अपत्थं-अपथ्यं-अहितम् । उत्त० २७६ ।

अपत्थिअपत्थिआ-अप्रार्थितप्रार्थकः । आव० १९२।

अपत्थियपत्थए-अप्रार्थितं प्रार्थयते य स॰ । भग० १७४।

अपदंसो-पित्तारुअं । नि० चू० प्र० ११७अ ।

अपदपतितं। जीवा० १९९ ।

अपद्दावयेत्-जीविताद्व्यपरोपयेत्। आचा० ४२८ ।

अपदलम्-अपशद द्रव्यं (दल) कारणभूतं मृत्तिकादि यस्या-सावपदलः, अवदलति वा दीर्यत इत्यवदल आमपक्वतया ऽसार इत्यर्थ. । ठाणा० २७९ ।

अपद्दावन्ति-प्राणान्मुञ्चन्ति । आचा० ५५।

अपद्दारं-कुत्सितद्वारम् । ठाणा० ४०२ ।

अपद्दारिका - (अवदारिआ)-स्थानविशेष॰ । बृ० द्वि० २७२ आ ।

अपध्यानम्-विस्रोतसिका। आव० ६०२ ।

अपनीत -विधूत प्रकम्पितो वा। आव० ५०७।

अपनीता-विनाशिता। ओघ० ४६ ।

अपभ्रंशः-तत्तद्देशेषु शुद्धं भाषितम्। ज० प्र० २५९।

अपमज्जियं-अप्रमार्जितम् , द्वितीयासमाधिस्थानम्। आव० ६५३ ।

अपमज्जियचारि-अप्रमार्जितचारी, असमाधिस्थाने द्वितीयो भेद । सम० ३७ ।

अपमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथारए-अप्रमार्जितदुष्प्र-मार्जितशय्यासंस्तारकः, शय्यादेश्चक्षुषा न प्रत्युपेक्षणं, शय्या-देरुद्भ्रान्तचेतसा प्रत्युपेक्षणं दुष्प्रत्युपेक्षणं यस्य स॰ । आव० ८३५ ।

अपमत्ते-अप्रमत्तः-निद्रादिप्रमादरहित । आचा० ३०७।

अपमानभीरु-भिक्षा भ्रमन्नपि न यस्य तस्यैव वेश्मनि प्रवेष्टुमिच्छति, यदि वा 'ओमाण' ति प्रवेश , स च स्वपक्ष-परपक्षयोस्तद्भीरुर्गृहिप्रतिबन्धेन मा मा प्रविशन्तमवलोक्यान्ये साधव. सौगतादयो वाऽत्र प्रवेक्ष्यन्तीति। उत्त० ५५२ ।

अपमित्यक-षष्ठ. शवलदोष॰ । प्रश्न० १४४ ।

अपयं-अपदम् , पद्यविधौ पद्ये विधातव्येऽन्यच्छन्दोऽभि-धानम्। सूत्रदोषविशेष । आव० ३७४ । न विद्यते पदम्-अवस्थाविशेषो यस्य स। आचा० २३१।

अपयाण–अपादानं–मर्यादया दानं (खण्डर्म)। आव० २७८।
अपया–लोमसीआदि। नि० चू० प्र० ३ आ।
अपर–संयम.। आचा० १६७।
अपरच्छं–अपराक्षम्, असमक्षं, अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तम नाम। प्रश्न० ४३।
अपरद्धो–अपराद्ध, व्याप्त.। आव० १०८।
अपरमं–दुक्खम्। दश० चू० ६२।
अपरमविद्धम्–वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।
अपराइआ–वप्रावतीविजये अपराजिता राजधानी। जं० प्र० ३५७।
अपराइए–प्रतिवासुदेवनाम। सम० १५४।
अपराइय–पद्मबलदेवस्य पूर्वभवनाम। सम० १५३।
अपराजिअ–अपराजित., अरजिनप्रथमभिक्षादाता। आव० १४७।
अपराजिआ–अपराजिता, राजधानीनाम। जं० प्र० ३५२। पौरस्त्यरुचकवास्तव्याऽष्टमी दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१। रात्रिनाम। ज० प्र० ४९१। चन्द्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० ५३२। पद्मबलदेवमाता। आव० १६२।
अपराजिए–ग्रहविशेष। ठाणा० ७९।
अपराजित–जगतीद्वारनामविशेष। सम० ८८।
अपराजिता–अपराजिता, अञ्जनपर्वते पुष्करणीविशेष। ठाणा० २३१। अनुत्तरोपपातिकविमानविशेष। प्रज्ञा० ६९।
अपराजिते–जगतीद्वारनामविशेष। ठाणा० २२५।
अपराजिय–कुन्थुजिनप्रथमभिक्षादाता। सम० १५१।
अपराजिया–अपराजिता–सैद्धान्तिकरात्रिनाम। सूर्य० १४७। अष्टमबलदेवमाता। सम० १५२। अङ्गारकमहाग्रहस्याग्रमहिषी। भग० ५०५, ठाणा० २०४। सुविधिनाथदीक्षाशिबिका। सम० १५१। विदेहेषु राजधानीविशेषनाम। ठाणा० ८०। राजधानीविशेष। ठाणा० ८०।
अपराधालोचना–आलोचनाभेद। व्य० प्र० ४८ आ।
अपरिआविआ–अपरितापिता, स्वत परतो वाऽनुपजातकायमन.परितापा। ज० प्र० १२६।
अपरिकम्म–अपरिकर्म–व्याघाते गिरिभित्तिपतनाभिघातादिरूपे सलेखनामविधायैव भक्तप्रत्याख्यानादि क्रियते तत्। उत्त० ६०३।
अपरिक्खिउ–अनालोच्य। नि० चू० प्र० ९८ आ।
अपरिखेदितं–वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।
अपरिगहियागमणे–अपरिगृहीतागमनम्, वेश्या अन्यसत्कगृहीतभाटी कुलाङ्गना अनाथा वा तस्या गमनं–मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।
अपरिग्गहो–अपरिग्रह, धर्मोपकरणवर्जपरिग्राह्यवस्तुधर्मोपकरणमूर्च्छावर्जित.। प्रश्न० १४२। न विद्यते धर्मोपकरणादृते शरीरोपभोगाय स्वल्पोऽपि परिग्रहो यस्य स। सूत्र० ४९। अगीतार्थ तदायत्ताश्च। व्य० प्र० २३३ अ।
अपरिणत–अमार्गस्थः। आव० ८५१।
अपरिणते–भोजनपरिणत्यभावः। ओघ० २३१।
अपरिणय–स्नेहप्राय.। ओघ० ८९। कालग्रहणभावोऽपगतोऽन्यचित्तो वा जातः। ओघ० २०३। अपरिणत –एषणादोषविशेष। आचा० ३४५। अविध्वस्त.। आचा० ३४८।
अपरिणामा–अपरिणामा., अपरिणतजिनवचनरहस्या। विशे० ९३१। अपरिणामिक.। व्य० प्र० ७२ अ।
अपरितंतजोगी–अपरितान्तयोगी, अविश्रान्तसमाधि.। अन्त० २३, अनुत्त० ४। अपरितान्ता.–अश्रान्ताः योगा–मनःप्रभृतय सदनुष्ठानेषु यस्य स.। प्रश्न० १०९।
अपरितंतो–वैयावृत्त्यादौ अनिर्वेदी। बृ० तृ० ९२ आ। अनिर्विण्णो। बृ० प्र० २२१ अ।
अपरितावित–अपरितापित., स्वत. परतो वाऽनुपजातकायमन परिताप.। जीवा० २८४।
अपरिपुण्णं–अपरिपूर्णम्, सद्गुणविरहात्तुच्छम्। सूत्र० ३२६।
अपरिभुत्तं–अपरिभुक्तम्। आचा० ३२५।
अपरिभुत्त–अपरिभुक्त; अनाक्रान्त.। ओघ० ५७।
अपरिमाण–अपरिमाण.–अनन्त.। आचा० २४१।
अपरिमितम्–अमितम्। आव० ५९५।
अपरिमियपरिग्गह–अपरिमितपरिग्रह। आव० ८२५।
अपरिमियमणंता–अपरिमितानन्ता.–अत्यन्तानन्ताः। प्रश्न० ९२।
अपरियाइत्ता–अपर्यादाय–समन्तादगृहीत्वा। ठाणा० २०। अपर्यादाय–अगृहीत्वा। भग० ६४३। जीवा० ३७५। ठाणा० ४६।
अपरियाणित्ता–अपरिज्ञाय। ठाणा० ४६।
अपरियावणया–शरीरपरितापानुत्पादनेन। भग० ३०५।
अपरिसाडिं–अनवयवोज्झनम्। भग० २९४।

अपरिसाडि-अपरिशाटि, परिशाटिविर्जितम् । प्रश्न० ११२ ।
अपरिसाडी-वसकपिमादी । नि०-चू० प्र० १६८ अ ।
अपरिसुद्धं-अपरिशुद्धम्, अयुक्तियुक्तम् । आव० ५७६ ।
अपरिस्साइ – न परिश्रवति-नालोचकदोषानुपश्रुत्यान्यस्मै प्रतिपादयति य एवंशील सोऽपरिश्रावीति । ठाणा० ४२४ ।
अपरिस्सावी-अपरिश्रावी-अवन्धको निरुद्धयोग । भग० ८९२ । अझरक. (आउ०)
अपरिहत्थो-अदक्ष । आव० ५६७ ।
अपरिहरित्ता – अपरिहृत्य – द्वित्रैर्मासैर्व्यवधानमकृत्वा । आचा० ३६६ ।
अपरिहारिया-अपरिहारिका-साधर्मिका । आचा० ३५२ ।
अपरीत्ता-साधारणशरीरा । ठाणा० १३२ ।
अपर्याप्ति-तत्परिणामयोग्यदलिकद्रव्यमात्मना नोपात्तं (सत्स्वपि तत्पुद्गलेषु स परिणामो रुध्यते)। तत्त्वा० ८-१२ ।
अपवरगो-अपवरक । जीवा० २६९ । अपवरकम्, अन्तर्गृहम् । ओघ० १५३ ।
अपवरिका-अपवरकम् । व्य० द्वि० २०७ आ ।
अपवर्त्तनम्-कर्मणा स्थित्यादेरध्यवसायविशेषेण हीनताकरणम् । भग० २५ । उपक्रमैराशुष्कस्य शीघ्र-पाक । तत्त्वा० २-५२ ।
अपवर्त्तना-हानिकरणमू । सूर्य० ११३ ।
अपवर्त्तयन्-तिरश्चीनं कुर्वन । आचा० ३४३ ।
अपवाद -करणं, विशेषवचनं च । ज० प्र० ५४१ । विभाग । नि० चू० तृ० १०५ आ ।
अपवादम्-प्रवचनरहस्यम् । बृ० प्र० १३१ अ ।
अपवादापवादरूपम्-शाक्यादीना प्रयोजने राज्ञो विज्ञापनम् । ठाणा० ३१२ ।
अपव्वावितो-न प्रव्रजित न मुण्डितानि कृतानि । व्य० द्वि० २८ आ ।-
अपसत्थविहायगति – अप्रशस्तविहायोगति – नामकर्मविशेष । प्रज्ञा० ४७४ ।
अपसिणा-अप्रश्ना -या पुनर्विद्या मन्त्रविधिना जप्यमाना अपृष्टा एव शुभाशुभं कथयन्ति एता । सम० १२४ ।
अपसू-अपशु.-द्विपदचतुष्पदादिरहित । आचा० ४०३ ।
अपहार-मत्स्य । ठाणा० ३०९ ।
अपहुप्पंते- अप्रभवति, अपूर्यमाणे । पिण्ड० ८८ ।
अपहृतान्योत्तरम्-वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अपाईणवाए-अप्राचीनवात., य प्रतीच्या दिश समागच्छति वात स । प्रज्ञा० ३० ।
अपाचीनैः-अशुभै । आचा० २५० ।
अपान्तरालम्-अवाधा । जीवा० ९४ ।
अपान्तरालसामान्यम्-वृक्षत्वगोत्वगजत्वादिकम् । विशे० ८९५ ।
अपायं-अपादम्, विशिष्टच्छन्दोरचनायोगात् पादवर्जितं गद्यगुण । दश० ८८ ।
अपाय-सम्यग्सम्यगिति गुणदोषविचारणाध्यवसायापनोद. । तत्त्वा० १-१५ ।
अपायतो-विश्लेषत । ठाणा० ४२८ ।
अपारंगमा-अपारङ्गमा, पारः-तट परकूल तद्गच्छन्तीति पारङ्गमा न पारङ्गमा. अपारङ्गमा । आचा० १२४ ।
अपावते-अपापकं शुभचिन्तारूप । ठाणा० ४०९ ।
अपावभाव-अपापभाव, शुद्धचित्त । दश० २३ ।
अपाश्रय -आधार । विशे० ४१५ ।
अपिः – सम्भावनानिवृत्त्यपेक्षासमुच्चयगर्हाशिष्यामर्षणभूषणप्रश्नेष्विति । ठाणा० ४९५ । बाढम् । जीवा० १९८ । विद्यमान । आव० ४५० । च । उत्त० १८२ । इति । ओघ० ३६ । यथाशब्दार्थ, समुच्चयार्थश्च । आचा० ६५ । पुन । आचा० २८२ । बाढार्थे । जं० प्र० ४६ । एवकारार्थे । आव० ५४९ । अभ्युपगमवादससूचक । आव० ५३१ । बाढम् । ज० प्र० ४१३ ।
अपिट्टणया-यष्ट्यादिताडनपरिहारेण । भग० ३०५ ।
अपियत्ता-अप्रियता, सर्वेषामेव द्वेष्यतया । भग० २३ ।
अपीओ-अपीत, न पीत । उत्त० ८७ ।
अपुज्जो-अपूज्य, अवन्दनीय । आव० ५१९ ।
अपुट्ठवागरणं-अपृष्टव्याकरणम्, अपृष्टे सति प्रतिपादनम् । भग० १५७ ।
अपुणरावत्तयं-अपुनरावर्त्तकम्, कर्मबीजाभावाद्भवावतार-रहितम् । भग० ७ ।
अपुणरावित्ति-अपुनरावर्तकम्-अविद्यमानपुनर्भवावतारम् । सम० ५ ।
अपुत्तो-अपुत्र, स्वजनबन्धुरहित, निर्मम इत्यर्थ. । आचा० ४०३ ।

अपुष्फिय–अपुष्पितं–तरिकारहितम्। ओघ० १२२। मच्छम्। बृ० प्र० ६८ अ।

अपुम–नपुंसकम्। ओघ० ९०।

अपुरिसंतरकडं – अपुरुषान्तरकृतं–तेनैव दात्रा कृतम्। आचा० ३२५।

अपुरिस–अपुरुष, नपुंसक.। ठाणा० ३७२।

अपुव्वो–अपूर्व, अननुभूतपूर्वोऽनुभूतपूर्वो वा। अनु० १३७।

अपुव्वं–अपूर्वम्, अपूर्वकरणम्। आव० ८५२।

अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्–आतुरप्रत्याख्यानादिकम्। आव० ४७९। अप्राप्तपूर्वं, स्थितिघात–रसाघाताद्यपूर्वार्थनिर्वर्तकम्। विशे० ५३५। अवृत्तपूर्वम्। आव० २३०, बृ० प्र० १९४अ।

अपुव्वकरणं–अपूर्वकरण–असदृशाध्यवसायविशेषम्। भग० ४३६। अप्राप्तपूर्वम्। आव० ७५। सम्यक्त्वप्राप्तौ करण-विशेष। ठाणा० ३१।

अपुहुत्ते–अपृथक्त्वं, अपृथग्भाव, चरणधर्मसङ्ख्याद्रव्यानु-योगाना प्रतिसूत्रमविभागेन वर्तनम्। आव० २८५। अपृ-थक्त्वानुयोग –एकस्मिन्नेव सूत्रे सर्व एव चरणादय प्ररूप्यन्ते। दश० ४।

अपूरेंतो–अपूरयन्, अकुर्वन्। आव० २७१। अकुर्वन्, अनाचरन्। आव० २६३।

अपूर्वभक्तिकम्–अपूर्वरचनाकम्। ठाणा० ४०१।

अपेक्षाकारणम् – दिग्देशकालाकाशपुरुषचक्रादि। ठाणा० ४९४।

अपेज्जं–अपेयम्। जीवा० ३७०। अपेयम्–सुरादिकम्। व्य० प्र० ८ अ।

अपोद्धारः–साक्षादुक्ति। आचा० ४९। निराम। आव० ३०९।

अपोरसीय–अपौरुषेयम्, अपुरुषप्रमाणम्। भग० २९०।

अपोरुसियं–अपौरुषेयम्, पुरुषप्रमाणरहितम्। भग० ८२।

अपोह–अपोह, पृथग्भाव। ओघ० १२। अपोहनं–निश्चय। आव० १८। विपक्षनिराम। भग० ४३३। अपोहनमपोहो–निश्चय। विशे० २२६।

अपोहए–यदादिष्ट गुरुभिरेवं निश्चिनोति। विशे० ३८३।

अपोहते–एवमेतत् यदादिष्टमाचार्येणेति पुनस्तमर्थमागृहीतं धारयति करोति च सम्यक्तदुक्तमनुष्ठानमिति। आव० २६।

अप्पं–अल्पम्, मूल्यत एरण्डकाष्ठादि। दश० १४७। अभाव, स्तोकं वा। आव० ५८६।

अप्पइट्ठाणे–अप्रतिष्ठान। सम० २। मोक्ष। आचा० २३१।

अप्पइट्ठिते – अप्रतिष्ठित –निरालम्बन एव केवलक्रोधवेद-नीयादुपजायते य क्रोधः। प्रज्ञा० २९०।

अप्पईकारं–अप्रतीकारम्, सूतिकर्मादिरहितम्। प्रश्न० २२।

अप्पउलिओसहिभक्खणया–अपक्वौषधभक्षणता। आव० ८२८।

अप्पए–शरीरे। आव० ५५५।

अप्पकम्मपच्चायाते – अल्पकर्मप्रत्यायात. –अल्पै –स्तोकै कर्मभि करणभूतै प्रत्यायात –प्रत्यागतो मानुषत्वमिति, अथवा एकत्र जनित्वा ततोऽल्पकर्मा सन् य प्रत्यायातः स तथा लघुकर्मतयोत्पन्न। ठाणा० १८०।

अप्पकिरियतराए –अल्पक्रियत्वम्– तथाविधकायिक्यादि-कष्टक्रियाऽपेक्षम्। भग० ७६९।

अप्पकुकुई – अल्पकौत्कुच, अल्पस्पन्दनः, अल्पं–असत् 'कुकुयं' कौत्कुचं–करचरणभ्रूभ्रमणाद्यसच्चेष्टात्मकमस्येति। उत्त० ५९।

अप्पक्खमं–आत्मक्षमा–आत्महिताम्। ओघ० १८९।

अप्पक्खरं–अल्पाक्षरम्, सूत्रगुण.। आव० ३७६।

अप्पग्घ–अल्पार्घम्, स्वल्पमूल्यम्। भग० १९९।

अप्पच्चओ–अप्रत्यय', प्रत्ययाभाव.। अधर्मद्वारस्य चतुर्वि-शतितम नाम। प्रश्न० २६। अप्रत्ययकारणत्वात्। अधर्म-द्वारस्य सप्तदशं नाम। प्रश्न० ४३।

अप्पच्चक्खाण–अप्रत्याख्यानम्, सर्वप्रत्याख्यान देशप्रत्या-ख्यानं च येषा उदये न लभ्यते। विशे० ५४४।

अप्पच्चक्खाय -अप्रत्याख्याय–अनिराकृत्य। उत्त० २६६।

अप्पच्छन्दमईओ–आत्मच्छन्दमति, आत्मच्छन्दा–स्वाभि-प्रायकार्यकारी। आव० १००।

अप्पजूहिए–सिद्धेऽप्योदनादिके। आचा० ३३५।

अप्पज्झं–आत्मवश, स्वस्थचित्तम्। बृ० द्वि० २१० अ।

अप्पज्झाणं–आत्मध्यानम्, अमुकोऽहं अमुककुले अमुग-सिस्से अमुगधम्मट्ठाणट्ठिइए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम्। प्रश्न० १२८।

अप्पझंझे–अल्पझञ्झ', अविद्यमानकलहविशेष। औप० ३९।

अप्पझंझा – अल्पझंझा – विगततथाविधविप्रकीर्णवचना । ठाणा० ४४२ ।

अप्पडिकुट्ठाइं–अप्रतिकुष्टे–अनिवारिते । ठाणा० ९३ ।

अप्पडिबद्धे–अप्रतिबद्ध –मनसि निरभिष्वंगता । उत्त० ५८७।

अप्पडिबुज्झमाणे –अप्रतिबुद्ध्यमान –शब्दान्तराण्यनवधारयन् अप्रत्युह्यमानो वा – अनपह्रियमाणमानसो । भग० ४८३ ।

अप्पडिरूवा–अप्रतिरूपा । आव० ६७५ ।

अप्पडिरूवे–अप्रतिरूप, अविद्यमान प्रतिरूपमतिप्रकर्षवत्त्वेनानन्यतुल्यमस्येति । उत्त० १८८ ।

अप्पडिलेहणा–अप्रत्युपेक्षणा, मूलत एव चक्षुषाऽनिरीक्षणा । आव० ५७६ ।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि–अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितोच्चारप्रश्रवणभूमि –पौषधेऽतिचार । आव० ८३५ ।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारए–अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितशय्यासंस्तारक –पौषधेऽतिचार । आव० ८३५ ।

अप्पडिलेहियदूसे–अप्रतिलेखितदूष्य । ठाणा० २३४ ।

अप्पडिलेहियपणयं–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चकम्, दूष्यपञ्चकस्य प्रथमो भेद, तूल्यु१पधानक२गण्डोपधाना३लिङ्गिनी४पोतमयमसूर५भेदभिन्नम् । आव० ६५२ ।

अप्पडिवाइ–अप्रतिपाति, अनुपरतस्वभावम् । आव० ६०८ ।

अप्पडिसुणणं–अप्रतिश्रवणम्, अप्रतिश्रोता । आव० ७२६ ।

अप्पडिसेवी–अप्रतिसेवी–न कुत्सित कर्म आचरति । ओघ० १६५ ।

अप्पडिहओ–अप्रतिहत, सौगन्धिकानगर्यधिपति. । विपा० ९५ ।

अप्पडिहट्टु–अणप्पगित्ता । नि० चू० प्र० १६९ अ ।

अप्पडिहयं–अप्रतिहत, अप्रतिस्खलितम् । जीवा० २५६ ।

अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे – अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, न प्रतिहत तपोविधानेन मरणकालादारात्क्षपित प्रत्याख्यातं च मरणकालेऽप्याश्रवनिरोधेन पापकर्म येन स । न प्रतिहत सम्यग्दर्शनप्रतिपत्तित. प्रत्याख्यात च सर्वविरत्यङ्गीकरणतः पापकर्म–ज्ञानावरणाद्यशुभं कर्म येन स । भग० ३६ ।

अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे – अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरे, यो ऽप्रतिहते कटकुड्यादिभिरस्खलितेऽविसवादके वा वरे–प्रधाने ज्ञानदर्शने–विशेषसामान्यबोधात्मके धारयति स । भग० ७ ।

अप्पडिहो–अप्रतिघ (भक्त०)

अप्पणं–अर्पणं, प्राधान्येन विवक्षणम् । विशे० १२७७, ७७१।

अप्पणच्चिय–आत्मीयम्, स्वकीयम् । भग० १३२ ।

अप्पणट्ठा–आत्मार्थम्, आत्मनिमित्तम् । दश० २४९ ।

अप्पणियं–आत्मीयं । आव० १८९ ।

अप्पणिया–आत्मीया । आव० २१२ ।

अप्पतिट्ठाणं–अप्रतिष्ठानम्, नरकविशेष । आव० ३४८ ।

अप्पतुमंतुमा – अल्पतुमन्तुमा – विगतक्रोधकृतमनोविकारविशेषा । ठाणा. ४४२ ।

अप्पतुमंतुमे–अल्पम्–अविद्यमानं त्वं त्वमिति स्वल्पापराधिन्यपि त्वमेव पुराऽपि कृतवान् त्वमेवं सदा करोषीत्यादि पुन पुन प्रलपनं यस्य स । उत्त० ५८९ ।

अप्पतेअ–अल्पतेज –तेजःशून्य । दश० २७६ ।

अप्पत्तियं–अप्रीतिकम् । उत्त० ९० । दश० चू० १२५ । पचामरिसकरणम् । नि० चू० प्र० ३१ अ । मनस पीडा कुर्यात् । आचा० ४०५ । क्रोध । सूत्र० ३४ । अप्रेम । भग० २९२ । मनस दुष्प्रणिधानम् । सूत्र० ३३१ ।

अप्पपरिकम्मं–तूननं, सन्धानं दशाछेदनं वा । बृ० द्वि० २०२ आ ।

अप्पपाणं–अल्पप्राणम्, अल्पा–अविद्यमाना प्राणा.–प्राणिनो यस्मिंस्तत, अवस्थितागन्तुकजन्तुविरहितम् । उत्त०६० ।

अप्पपुण्णेहिं–अपुण्यै –अनार्यै पापाचारै । आचा० ३०३।

अप्पभाए–अप्रभात । आव० ३०१ ।

अप्पभक्खी–अल्पलघुभक्षी–अल्पानि–स्तोकानि लघूनि निःसाराणि निष्पावादीनि भक्षयितु शीलमस्य । उत्त० ४२० ।

अप्पभु–अप्रभव –मृतकाद्य । ओघ० १६३ ।

अप्पभूतं–अल्पभूता–अल्पा । ठाणा० २९४ ।

अप्पमज्जणा–अप्रमार्जना, मूलत एव रजोहरणादिनाऽस्पर्शना । आव० ५७६ ।

अप्पमज्जियदुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमी – अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितोच्चारप्रश्रवणभूमि –पौषधेऽतिचार । आव० ८३५ ।

अप्पमत्तो–अप्रमत्त, गुरुपारतन्त्र्यापहारिप्रमादपरिहर्त्ता। उत्त० २२३ । अप्रमत्तसयतग्राम, भूतग्रामस्य सप्तम गुणस्थानम् । आव० ६५० । आत्महितेषु जाग्रन् । आचा० १७२ । प्रयत्नवान् । ओघ० २२१ ।

अप्पमाए–अप्रमाद, योगसङ्ग्रहे षड्विंशतितमो योग । आव० ६६४ । अकर्मकम् । सूत्र० १६९ ।

अप्पमाओ–अप्रमाद, उत्तराध्ययनेषु एकोनत्रिंशत्तममध्ययनम् । उत्त० ९ । सम० ६४ । उवओगपुव्वकरणक्रियालक्खणो । नि० चू० प्र० २९ अ ।

अप्पमाणभोती – अप्रमाणभोजी, द्वात्रिंशत्कवलाधिकाहारभोक्ता । प्रश्न० १२५ ।

अप्पमातो–अप्रमादः प्रमादवर्जनम्, अहिंसाया एकोनपञ्चाशत्तम नाम । प्रश्न० ९९ ।

अप्पयं–आत्मानम् । अल्पमेव वा । उत्त० ९० ।

अप्पयाणयं–अप्रयाणम् । आव० ३८५ ।

अप्परए – अल्परत, अल्प–अविद्यमान रतमिति क्रीडितं मोहनीयकर्मोदयजनितमस्येति, लवसप्तमादि, अल्परजा, प्रतनुवध्यमानकर्मा । उत्त० ६७ ।

अप्परिसाडियं–अपरिसाटिकम्, परिसाटविरहितम् । उत्त० ६१ ।

अप्परिहारिए– अपरिहारिक -पार्श्वस्थावमन्नकुशीलससक्तयथाच्छन्दरूप । आचा० ३२४ ।

अप्पलीयमाणा – अप्रलीयमाना –अनभिपक्ता । आचा० २४१ ।

अप्पलेवा–अल्पलेपा, निर्लेपा, चतुर्थी पिण्डैषणा । आव० ५७२ । अप्पलेवा–जस्स दिज्जमाणस्स णिप्पावचणगादिगस्स लेवो ण भवति सा । नि० चू० तृ० १२ अ ।

अप्पवणिज्जोदग–अपातव्यजला मेघा । भग० ३०६ ।

अप्पवुट्ठिकाए– अल्पवृष्टिकाय, अल्प –स्तोकोऽविद्यमानो वा वर्षण वृष्टि –अध पतन वृष्टिप्रधान कायो–जीवनिकायो व्योमनि पतदप्काय इत्यर्थ, वर्षणधर्म्मयुक्त वोदकं वृष्टि, तस्या कायो–राशिर्वृष्टिकाय अल्पश्चासौ वृष्टिकायश्चाल्पवृष्टिकाय । ठाणा० १४१ ।

अप्पसत्थाओ-अप्रशस्ता-आश्रयस्योऽनादेया । ठाणा० १७५ ।

अप्पसद्दा – अल्पशब्दा –विगतरात्रीमहाध्वनय । ठाणा० ४४२ ।

अप्पससरक्खं–अल्परजस्कम् । आचा० ३३७ ।

अप्पसागारियं–अल्पसागारिकम् । आव० १९५ । अल्पगृहस्थम् । उत्त० ९० । आव० ३५८ ।

अप्पसावज्जं – अल्पसावद्यम्, अपापं, स्तोकपापं वा । आव० ५८६ ।

अप्पसाहणो–अल्पसाधन, वलादिरहित । आव० ७१२ ।

अप्पहाणो–अप्रधान, लघु । उत्त० १४९ ।

अप्पहिट्ठे–अप्रहृष्टम्, अहसन् । दश० १६६ ।

अप्पा–आत्मा, अभिहितरूपस्तदाधाररूपो वा देह । उत्त० ५३ । शरीरम् । प्रज्ञा० ३०५ । अतति सन्ततं गच्छति शुद्धिसङ्क्लेशात्मकपरिणामान्तराणीति । उत्त० ५२ । नि० चू० प्र० १५ अ । आत्मा–स्वभाव । ठाणा० ६१ ।

अप्पाइय–आप्यायितः । आव० ७१६ ।

अप्पाउरण–अप्रावरण, अभिग्रहविशेष । आव० ८५४ ।

अप्पाणं – आत्मानम्, अतीतसावद्ययोगकारिणमश्लाघ्यम् । अत्राणम्–अतीतमावद्ययोगत्राणविरहितम् । अतनम्–अतीतं सावद्ययोगं सततभवनप्रवृत्त निवर्तयामि । आव० ४८६ ।

अप्पाणमेव–आत्मनैव । उत्त० ३१४ । आत्मानं–अतरात्मानम् । आचा० २८३ ।

अप्पायंक–अल्पातङ्क, रोगरहित । आव० ७९३ । अरोगी । आचा० ३९३ ।

अप्पाहंति–सन्दिशन्ति । बृ० तृ० ४४ आ ।

अप्पाहट्टु–आहृत्य, व्यवस्थाप्य, अपाहृत्य वा । सूत्र० २७४ ।

अप्पाहणया–सन्देशकस्तथैव दातव्य । ओघ० १०२ ।

अप्पाहारं–अप्पधारणा, सामर्थ्यम्, अप्पाहारता जत्थ तं । नि० चू० तृ० ८२ आ ।

अप्पाहार–अल्पाहार, ऊनोदरताया प्रथमो भेद । दश० २७ । ठाणा० १४९ ।

अप्पाहारे–अल्पाधार –तमेव पृष्ट्वा सूत्रार्थवाचना ददाति । बृ० तृ० १३३ आ । अल्पाहार, अष्टकवलाहार । औप० ३८ । भग० ९२१ । स्तोकाहार, साधु । भग० २९२ । स्तोकाशी, षष्ठाष्टमादिसंलेखनाक्रमायातं तप कुर्वन् यत्रापि पारयेत्तत्राप्यल्पमित्यर्थ । आचा० २९० ।

अप्पाहारो–जो आयरिओ सकियसुत्तत्थो तं चेव पुच्छिउं वायणं देति, तारिसं ति मोत्तुं ण गंतव्वं । नि० चू० तृ० ९३ आ ।

अप्पाहिंति–सन्दिशन्ति । बृ० द्वि० ११४ आ । सन्दिशतः । आव० ३०२ ।

अप्पाहिकरणे–अल्पाधिकरणं–निष्कलहं । ठाणा० ४१६ ।

अप्पाहितो–सन्दिष्टः । उत्त० २१९ ।

अप्पाहे–तद्गुरोस्तत्प्रवर्तिन्या वा एवं सन्दिशति–यथैतामात्मसकाशे कुरुत । ओघ० ४३ ।

अप्पाहेइ–सन्दिशति । दश० १०३ ।

अप्पाहेति–सदिसइ । नि० चू० प्र० २११ आ ।

अप्पाहेत्ता–सन्दिश्य । उत्त० १७३ । आव० ३१० ।

अप्पिच्छे–अल्पेच्छ, अल्पा–स्तोका, अल्पशब्दस्याभाववादित्वेनाविद्यमाना वा इच्छा–वाञ्छा वा यस्येति । उत्त० १२४ । न्यूनोदरतयाऽऽहारपरित्यागी । दश० २३१ ।

अप्पिणिच्चिया–आत्मीया । आव० २०२ ।

अप्पितणप्पिते–अर्पित–विशेषित, अनर्पित–अविशेषितम् । ठाणा० ४८१ ।

अप्पियं–अर्पितम्, आहितम् । भग० ८९ ।

अप्पियं–अप्रियम्, अनिष्टम् । भग० ७२ । अर्पितः, विशेषः । विशे० १३४६ ।

अप्पियणियं–अप्रीतिकम्, कलहः । उत्त० ३५५ ।

अप्पियत्ता–अप्रियता, अप्रेमहेतुता । भग० २५३ । प्रज्ञा० ५०४ ।

अप्पियवहा–अप्रियवधा –अप्रियं–दुःखकारणम् तत् घ्नन्ति । आचा० १२२ ।

अप्पुण्णकप्पिया–अपूर्णकल्पिका–अन्योन्यस्य मुखदु खोपसपदं प्रतिपद्यंते । व्य० द्वि० ३७८ आ ।

अप्पुत्थायी–अल्पोत्थायी, अल्पमुत्थातुं शीलमस्येति । प्रयोजनेऽपि न पुन पुनरुत्थानशील. । उत्त० ५८ ।

अप्पुस्सुए–अल्पौत्सुक्य । भग० १७४ । त्वरारहित । भग० १२३ । अविमनस्क । आचा० ३७९ ।

अप्पे–आप्य, अपा प्रभव ह्रद । भग० १४१ ।

अप्पो–अल्प, सर्वथाऽविद्यमान । जीवा० १२१ । नास्ति किञ्चिदित्यर्थं । ओघ १७७ । निषद्याद्वयोपेतं रजोहरण मुखवस्त्रिका चोलपट्टकाश्च । बृ० प्र० १५० आ ।

अप्पोदए–अल्पोदके–भौमान्तरिक्षोदकरहिते । आचा० २८५ ।

अप्पोलं–दृढवेष्टनाद् घनवेष्टनात् । ओघ० २१४ ।

अप्पोवही – अल्पोपधि, अनुल्वणयुक्तस्तोकोपधि. । दश० २८० ।

अप्पोसे – अल्पावश्याये – अधस्तनोपरितनावश्यायविप्रुड्वर्जिते । आचा० २८५ ।

अप्फंदणया – भाण्डोचितहस्तपादादिचेष्टाविकलता । व्य० प्र० २३६ अ ।

अप्फव्वितो–अइक्कते । नि० चू० प्र० १४७ आ ।

अप्फालिया–शिक्षिता –उपालब्धा, उक्ता । आव० ५५७ ।

अप्फालेइ – आस्फालयति, हस्तेनाऽऽताडयति–उत्तेजयति । औप० ६४ ।

अप्फिडिऊण–आस्फाल्य । आव० ३४४ ।

अप्फुण्णा–व्याप्ता । बृ० तृ० ७० आ ।

अप्फुण्णे–आपूर्ण –परिपूर्णशरीर. । उत्त० ४८३ ।

अप्फुण्णो–व्याप्त । आव० ३५४ ।

अप्फेया–वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

अप्फोआ–वनस्पतिविशेष । जं० प्र० ४६ ।

अप्फोडेइ–आस्फोटयति, करास्फोटं करोति । भग० १७५ ।

अप्फोया–वनस्पतिविशेष । जीवा० २०१ ।

अप्फोव–आस्तीर्णं, वृक्षगुच्छगुल्मलतासंछन्न । उत्त० ४३८ ।

अप्रकीर्णप्रसृतं–वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।

अप्रतिहत–(अप्पडिहय) –कटकुट्यपर्वतादिभिरस्खलिते, अविसवादके वा । सम० ४ ।

अप्रत्याख्यानम्–द्वितियकषायचतुष्कम् । आचा० ९१ ।

अप्रमार्जितचारित्वम् – द्वितीयमसमाधिस्थानम् । प्रश्न० १४४ ।

अप्रोषितः–सामानिक, सन्निहित । विशे० १०६५ ।

अप्सरा–दक्षिणपश्चिमरतिकरपर्वतस्य दक्षिणस्या भूतावतंसिकाराजधान्यधिष्ठात्री, शक्रदेवेन्द्रस्य द्वितीयाग्रमहिषी । जीवा० ३६५ । शक्रस्याग्रमहिषी । जं० प्र० १५९ ।

अफलवंतकी–अफलवान्, अप्राप्तिक । प्रश्न० ६४ ।

अफव्वंता–अलभमाना । नि० चू० प्र० १८३ आ ।

अफासुअ–अप्रासुकम्, सचित्तसन्मिश्रादि । दश० २३१ । सचित्तम् । आचा० ३२१ ।

अफासुए-अप्रासुकम्, न प्रगता असव:-असुमन्तो यस्मात्तदप्रासुकम्-सजीवमित्यर्थ:। भग० २२६।

अफुडिय-अस्फुटित-राजीरहित। आव० २३९।

अफुण्णे-आपूर्णम्। प्रज्ञा० ५९२।

अफुसं-अस्पृश्यम्, अवन्धनीयम्। भग० १०४।

अफुसमाणगतिपरिणामे-अस्पृशद्गतिपरिणाम, अस्पृशतो गतिपरिणाम। प्रज्ञा० २८९।

अफुसमाणगती-अस्पृशद्गति:, यत्परमाण्वादिकमन्येन परमाण्वादिना सह परस्परसम्बन्धमननुभूय गच्छति सा, विहायोगतेर्द्वितीयो भेद। प्रज्ञा० ३२७।

अबंधव-अबान्धव, स्वजनरहित:। पश्न० १९।

अबंधवो-अबान्धव:, बान्धवरहित:, स्वजनसम्पाद्यकार्याभावात् कर्मनिगडबद्ध। प्रश्न० ११।

अबंधिउं-पात्रकबन्धग्रन्थिमदत्त्वा। ओघ० १४४।

अबंभ-अब्रह्म, अकुशलं कर्म, मैथुनम्। प्रश्न० ६५। अकुशलानुष्ठानम्, अब्रह्मग: प्रथम नाम। प्रश्न० ६६। मैथुनम्। आव० ६५३। बस्त्यनियमलक्षणं। आव० ७६१।

अबंभ-अब्रह्मवर्जक, श्रावकस्य षष्ठी प्रतिमा। आव० ६४६।

अबंभचारिणो-अब्रह्मचारिण, मैथुनं आसेवितु शील धर्मो वा येषा ते। उत्त० ३५८।

अबद्धिआ-अबद्धिका:, अबद्धं सत्कर्म कंचुकवत्पार्श्वत स्पृष्टमात्रं जीवं समनुगच्छन्तीत्येवं वदन्ति। औप० १०६।

अबद्धिगा-अबद्धिका, स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपका। आव० ३११। अबद्धिक, बद्धं-जीवप्रदेशैरन्योऽन्याविभागेन सम्पृक्त न बद्ध-अबद्ध, अर्थात्कर्म, तदभ्युपगमविषयमेषामस्तीति। उत्त० १५२।

अबद्धिता-अबद्धिका-स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपका। ठाणा०४१०।

अबला-अबला, शारीरशक्तिविकला। जं० प्र० २३९।

अबले-अबल, शरीरशक्तिवर्जित। भग० ३२३।

अबहुस्सुए-अल्पश्रुताय-अवगाढस्तोकशास्त्राय। सूर्य० १९६।

अबहुस्सुतो-जेग आयारपकप्पो ण ज्झातितो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अबहोड-अबखोटक, बन्धविशेष। उत्त० ११३।

अबाध-अन्तरालम्। विशे० ३७६।

अबाधाए-अबाधया अपान्तराल। सूर्य० २६२।

अबाले-अष्टाधिकवर्ष। नि० चू० प्र० १७३ आ।

अबाहा-अबाधा, कर्मणो बन्धोदययोरन्तरम्। भग० २५५। अन्तरं, अन्तरालत्वाप्रतिघातरूपा। अव्यवधानेनान्तरम्। ज०प्र० ४३५। दूरवर्तित्वेनानाक्रमणमपान्तरालम्। ज० प्र० ६४। अन्तरं-व्यवधानम्। जं० प्र० ६५। अपान्तरालम्। जीवा० ९४, २०४। अन्तरालत्वाव्याघातरूपा। जीवा० ३०२। अन्तरालम्। ओघ० ९०। आव० ४६। विशे० ३७६। अन्तरं। जं० प्र० ४३५।

अबाहाए-अबाधया, व्यवधानेन कृत्वा। सम० २१। अबाधायां कृत्वा, अपान्तरालेषु मुक्त्वा। जीवा० २२२।

अबाहिरा-अबाह्य:, न बाह्य इति। आव० ४५।

अबितिज्जओ-अद्वितीय:, सहायो न भवति। प्रश्न० १२१।

अबुद्धा अबुद्धजागरियं-अबुद्धा:-केवलज्ञानाभावेन यथासम्भवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशास्ते चाबुद्धानां-छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका। भग० ५५४।

अबुहजण-अबुधजन, अविपश्चिज्जन-परिजनो यस्य स:, अकल्याणमित्रपरिजन। दश० ८६।

अबोट-अनाक्रमणीय। ओघ० ९२।

अबोहि-अबोधि, मिथ्यात्वकार्यम्। आव० ७६२। मिथ्यात्वसंहति। दश० २४४।

अबोहिअ-अबोधिकम्, मिथ्यात्वफलम्। दश० २०५।

अबोहिकलुसं-अबोधिकलुष:, मिथ्यादृष्टि। दश० १५८।

अब्बहुलकाण्डम्-रत्नप्रभाया तृतीयकाण्ड। सम० ८८।

अब्बुयं-द्वितीयसप्ताहगर्भावस्था (त०)

अब्भं-अभ्रम्, सामान्याकारेण प्रतीतम्। जीवा० २८३।

अब्भंगिपलुय-स्नेहाभ्यक्तशरीर। ओघ० ७४।

अब्भंगिओ-अभ्यङ्गित। आव० ११७।

अब्भंगेति-येवेग अब्भंगर्ग। नि० चू० प्र० ११६ आ।

अब्भंगो-योवेण। नि० चू० प्र० १८८ अ।

अब्भतरं-लोकेऽन्यैरनुगतम्। दश० चू० १४।

अब्भंतरकरणं-द्वयो: साम्भो गच्छमेढीभूतयोरभ्यन्तरे कुलादिकार्यनिमित्त परस्परमुल्लपतोस्तृतीयस्योपशुश्रूपो बहिःकरण। व्य० प्र० २३८ अ।

अब्भतरगो-अभ्यन्तरम्-अभ्यन्त मध्ये भवं। ठाणा० ५५।

अब्भंतरे पोग्गले-भवधारणीयेनौदारिकेण वा शरीरेण ये क्षेत्रप्रदेशा अवगाढास्तेष्वेव ये वर्तन्ते तेऽवसेया:, विभूषापक्षे तु निष्ठीवनादयोऽभ्यंतरपुद्गला। ठाणा० १०५।

अब्भक्खाणं–अभ्याख्यानम्, परमभि असता दोषाणामाख्यानम्, अधर्मद्वारस्य सप्तदशं नाम। प्रश्न० २६। असदभियोग। सूत्र० २६२। असद्दूषणाभिधानम्। प्रश्न० ४१। असद्दोषारोपणम्। प्रज्ञा० ४३८। असतभावुद्भावणं। नि० चू० तृ० २५ अ। असद्दोषाविष्करणम्। भग० ८०।

अब्भक्खाणे–अभ्याख्यानम्, आभिमुख्येनाख्यानं–दोषाविष्करणम्। भग० २३२।

अब्भडिओ–आस्फालित, आहत। आव० ४३१।

अब्भत्थं–अध्यात्मस्थम्, अभिप्रेतम्। उत्त० २६५। यद्यस्याभिमतं सुखम्। उत्त० २६५। अध्यात्ममात्मनि यद्वर्तते, मन। उत्त० २६५। अध्यात्मकरणम्, क्रियाया अष्टमो भेद। आव० ६४८।

अब्भत्थिए–अध्यात्मिक, आत्मविषय। भग० ११५।

अब्भत्थियं–अभ्यर्थितम्। आव० ३५९।

अब्भत्थे–अभ्यस्ते, अनवरतं दृष्टपूर्वे, विकल्पिते, भाषिते च विषये पुन क्वचित् कदाचिदवलोकिते। विशे० १७५।

अब्भपडलं–अभ्रपटलम्, मेघवृन्दम्। औप० ६६। प्रज्ञा० २७। मणिभेदः, पृथिवीभेद। आचा० २९। उत्त० ६८९।

अंब्भपडलो–अभ्रपटल। प्रज्ञा० २६६। जीवा० २३।

अब्भ(त)रया–अभ्यन्तरका–ये राजानमति प्रत्यासन्नीभूयावलगन्ति। व्य० द्वि० २८२ अ।

अब्भरहितो–आसन्नो। नि० चू० द्वि० १३ आ।

अब्भरुक्खो–अभ्रवृक्ष, अभ्रात्मको वृक्ष। भग० १९५। वृक्षाकारपरिणतमभ्रम्। जीवा० २८३।

अब्भरुह–अभ्यारुह वृक्षस्योपरिवृक्ष, वनस्पतिविशेष। भग० ८०२।

अब्भवालुए–अभ्रवालुका, मणिभेद, पृथिवीभेद। आचा० २९।

अब्भवालुया–अभ्रवालुका, अभ्रपटलमिश्रा वालुका। प्रज्ञा० २७। उत्त० ६८९। जीवा० २३।

अब्भसंथडा–अभ्रसंस्थितानि, मेघैराकाशाच्छादनानीत्यर्थ। ठाणा० २८७।

अब्भा–अभ्राणि। भग० १९५।

अब्भाइक्खइ–अभ्याख्याति–निराकरोति। आचा० ५२।

अब्भाइक्खिज्जा–अभ्याख्यानम्–असदभियोग। आचा० ४४। प्रकटमसद्दोषारोपणम्। ठाणा० २६।

अब्भावगासं–अङ्गणम्। नि० चू० प्र० १९२ अ।

अब्भावगासियं–आकाशम्। बृ० द्वि० १७९ अ।

अब्भासं–पच्चासण्णं। नि० चू० प्र० ६० अ। अभ्यास–हेवाक। ठाणा० २८५।

अब्भास–अदूरसामर्थ्ये, अच्छेअव्वम्। दश० ३१।

अब्भासकरणं–जो धम्मच्चुओ तं पुणो धम्मे ठवेंतेण। नि० चू० प्र० २३८ अ।

अब्भासगं–अभ्यासकम्। ओघ० १५९।

अब्भासवत्ति–अभ्यासवर्त्ती–गुरोरभ्यासे–समीपे वर्तते इति शील, गुरुपादपीठिकाप्रत्यासन्नवर्ती। व्य० प्र० २० आ।

अब्भासवत्तियं–प्रत्यासत्तिवर्तित्वम्, श्रुतार्थिना हि आचार्यादिसमीपे आसितव्यम्। ठाणा० ४०९। अभ्यासो–गौरव्यस्य समीपं तत्र वर्तितुं शीलमस्येत्यभ्यासवर्ती तद्भावोऽभ्यासवर्त्तित्वं, अभ्यासे वा प्रीतिक–प्रेम। भग० ९२५।

अब्भासवत्तिया–अभ्यासवृत्तिता, समीपवर्त्तित्वम्। औप० ४३।

अब्भासासन–अभ्यासासनं–उपचरणीयस्यान्तिकेऽवस्थानं। सम० ९५।

अब्भासिया–द्रविडादिदेशोद्भवा। बृ० द्वि० २११ आ।

अब्भासे–अभ्यास, अदूरासन्नम्। दश० ३१। आसन्ने। ओघ० ७८। समीपे। ओघ० १४०।

अब्भासो–अभ्यास, आसेवनालक्षण। आव० ५९१।

अब्भाहतो–अभ्याहत, मत्त। उत्त० ३००।

अब्भितरं–आभ्यन्तरम्, प्रायश्चित्तादि। प्रश्न० १५७।

अब्भितर–अभ्यन्तरावधिरुक्त। विशे० ३६९। योऽवधिः सर्वासु दिक्षु स्वद्योत्य क्षेत्र प्रकाशयति। प्रज्ञा० ५३६। आभ्यंतर – चित्तनिरोधप्राधान्येन कर्मक्षपणहेतुस्तप। सम० १२।

अब्भितरए–अभ्यतरम् आन्तरस्यैव शरीरस्य तापनात्, सम्यग्दृष्टिभिरेव तपस्तया प्रतीयमानत्वाच्च। औप० ३७।

अब्भितरओ तवो – लौकिकैरनभिलक्ष्यत्वात्तन्त्रान्तरीयैश्च भावतोऽनासेव्यमानत्वान्मोक्षप्राप्त्यन्तरंगत्वाच्चाभ्यन्तरतप। दश० ३२। ठाणा ३६५।

अब्भितरमलो–आभ्यन्तरमल, मूत्रपुरीपादि। आव० ७५८।

अब्भितरलावणग – आभ्यन्तरलावणिक, लवणसमुद्रे शिखाया अर्वाक्चारी चन्द्र। जीवा० ३१८।

अब्भिंतरसंवुका–सखनाभिखेत्तोवमाए आगिइएं अतो आढवति वाहिरओ सणियट्टइ। उत्त० ६०५।

अब्भिंतरिया–अभ्यन्तरिका, नगरीविशेष। आव० २००।

अब्भिंडिऊण–आस्फाल्य। उत्त० १४९।

अब्भुक्खेइ–अभ्युक्षति, अभिमुख सिञ्चति। जीवा० २५६। अभ्युक्षति, सिञ्चति, स्नपयति। ज० प्र० १९२।

अब्भुक्खेंति–अभ्युक्षन्ति सिञ्चन्ति। ज० प्र० २७५।

अब्भुग्गए–अभ्युद्गत', आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गत। सूर्य० २६३।

अब्भुग्गओ–अभ्युद्गत, आभिमुख्येन सर्वतो गत.। जीवा० १७५। अभ्रोद्गत'–यद्वा आकाशे उद्गता प्रवलतया सर्वतस्तिर्यक् प्रसृता। ज० प्र० २९७।

अब्भुग्गय–अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गत। प्रज्ञा० ९९। अभिमुखमुद्गत, अग्रिमभागे मनाक् उन्नत। जीवा० २०५। संजात। सम० १३९।

अब्भुग्गयमूसिय–अभ्युद्गतोच्छ्रित, अभ्युद्गतमभ्रोद्गतं वा यथाभवत्येवमुच्छ्रित, अथवा मकारस्यागमिकत्वादभ्युद्गतश्चासावुच्छ्रितश्चेत्यभ्युद्गतोच्छ्रित, अत्यर्थमुच्च इत्यर्थ। भग० १४५।

अब्भुग्गया–अभ्युद्गता, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता। जीवा० ३७९। अग्रिमभावे मनागुन्नता। ज० प्र० ५०। अभ्युद्गता, अतिरमणीयतया द्रष्टृणा प्रत्यभिमुखमुत्–प्रावल्येन स्थिता। जीवा० २२६।

अब्भुग्गयाओ–अभ्युद्गतान्यभ्रोद्गतानि वोच्चानि। भग० ६७२।

अब्भुग्गयुच्छितपभासियं–अभ्युद्गतोत्सृतप्रभासितं, अभ्युद्गता–आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता उत्सृता–प्रवलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या प्रभा तया सितम्। जीवा० ३७९।

अब्भुज्जयं–अब्भुज्जतमरणेण अब्भुज्जयविहारेण वा। नि० चू० तृ० ३५ अ।

अब्भुज्जया–अभ्युद्यता, सुविहिता। अनुत्त० ३।

अब्भुज्जियविहारो- जिणकप्पादि। नि० चू० प्र० २६३ आ।

अब्भुट्ठाणं–अभ्युत्थानम्, आगच्छति गच्छति च दृष्टे गुरावासनमोचनम्। उत्त० १७। ससम्भ्रममासनमोचनम्। उत्त० १२४। अभीलाभिमुख्येनोत्थानं-उद्यमनम्। उत्त०५३५। विनयार्हस्य दर्शनादेवासनत्यजन। ठाणा० ४०८। आसनत्याग। सम० ९५। गौरवार्हदर्शने विष्टरत्याग। भग० ६३७। जओ दीसइ तओ चेव कायव्वं। दश० ३०। आगतस्याभिमुखमुत्थानम्। दश० २४०।

अब्भुट्ठिज्ज–सिंहासनादभ्युत्तिष्ठेयुरिति। ठाणा० ११७।

अब्भुट्ठिओ–अब्भुट्ठिएत्ति सामाइयकडो पडिक्कंता व्रतारोपित। नि० चू० तृ० ८४ आ।

अब्भुट्ठितो–वैयावृत्त्यकरणोद्यतः। नि० चू० प्र० ३३४ अ।

अब्भुट्ठित्तए–अभ्युत्थातुम्–अभ्युपगन्तुम्। ठाणा० ५७।

अब्भुट्ठियं–अभ्युत्थितम्–अभ्युद्यतं। उत्त० ३०७। अभ्युत्थापन–वंदनकप्रतीच्छनकादिक। व्य० प्र० १७२ आ। अभ्युत्थित–उद्यत.। ओघ० १८०।

अब्भुट्ठेमि–अङ्गीकरोमि। भग० १२१।

अब्भुत्तरोमा–प्रदीप्तरोमा। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अब्भुदए–अद्भुतकान्, आश्चर्यरूपान्। उत्त० ३१७।

अब्भुदओ–उत्सवविशेष। बृ० द्वि० १९८० अ।

अब्भुन्नय–अभ्युन्नत', अभिमुखमुन्नत'। जीवा० २७५।

अब्भुवगमिया–आभ्युपगमिकी, या स्वयमभ्युपगम्य वेद्यते (वेदना)। भग० ४९७।

अब्भुवगमे–स्वेच्छया अभ्युपगम्य वादकथा क्रियते। बृ० प्र० ३१ आ।

अब्भुवगमो–अभ्युपगम', स्वयमङ्गीकार। प्रज्ञा० ५५७। भग० ६८३।

अब्भे–आभिन्द्यात्, आच्छिन्द्यात्। आचा० ३८।

अब्भोवगमिया – आभ्युपगमिकी–केशोल्लुञ्चनातापनादिभिः शरीरपीडा। प्रज्ञा० ५५७। शिरोलोचब्रह्मचर्यादिनामभ्युपगमे भवा (वेदना)। ठाणा० २४७।

अब्रह्म–मैथुनम्। आचा० ३३१।

अभओ–अभय। आव० ९५। अभयकुमारोऽग्रमकारी। अन्त० ९। व्यक्तिविशेष। आव० ३६८। उदाहरणदोषे अभयकुमार। दश० ५३। नामविशेष'। वृ० प्र० ४६ आ।

अभओ सव्वस्सवि – अभयं सर्वस्यापि प्राणिगणस्याभयम्। अहिंसाया द्विपञ्चाशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

अभक्तार्थः–खमण', क्षपण'। व्य० प्र० १८१ आ।

अभग्गं–अभग्नम्, अपीडितम्। आव० ७७२।

अभग्गजोगो–अभग्नयोग। आव० ७९३।

अभग्गसेण-अभग्नसेन', विजयस्य चौरसेनापतेः स्कन्दश्रीभार्याया पुत्रः । विपा०- ५७। विजयस्य चौरसेनापते' पुत्र । विपा० ६० । अभग्नसेन, विपाकश्रुताध्ययनम् । ठाणा० ५०७।

अभग्गो-अभग्न, अभग्नसेन', विजयाभिधचौरसेनापतिपुत्रः, अन्तकृद्दशासु तृतीयाध्ययनम्। विपा० ३५।

अभञ्जियं-अभग्नाम्-अमर्दितामविराधिताम्।आचा० ३२३।

अभडप्पवेसं-अभटप्रवेशम्, कौटुम्बिकगेहेषु राजवर्णवता भटानामविद्यमानप्रवेशम्। विपा० ६३ ।

अभत्तच्छंदो-अभक्तच्छन्द, भक्तारुचिरूपः। उत्त० ७८।

अभत्तट्ठं-अभक्तार्थम्, उपवासः। आव० ८५२ ।

अभत्तट्ठो-अभक्तार्थ, न भक्तार्थ', उपवासः। आव० ८५३ ।

अभय-अभय, श्रेणिकपुत्रनाम। सूत्र० १०३ । दानविशेष । प्रश्न० १३५ ।अभय', संयमः । आचा० ६२। कुमारविशेष । नि० चू० प्र० ७ आ, नि० चू० तृ० ३७ अ। वृक्षाधिष्ठायकव्यंतरदर्शी । व्य० प्र० १७ अ ।

अभयकरा-मल्लिजिनदीक्षाशिबिका । सम० १५१ ।

अभयकरो-अभयकर' । आव० ४९९ ।

अभयकुमारः-प्रद्योतस्यापकारकः । सूत्र० ३१३-। विशेषनाम।विशे० ६१२। औत्पातिकीबुद्धेर्दृष्टांत.।बृ० प्र० १८६ अ। आर्द्रकुमाराय प्रतिमाप्रेषक. । सूत्र० ३८५। प्रद्योतगणिकाभिर्धार्मिकवञ्चनया वञ्चित । सूत्र० ३२९। कालसौकरिकसुतसुलससखा। सूत्र० १७८ ।भवद्पूर्विकैहिकार्थसिद्धौ दृष्टान्त । जं० प्र० १९७। रोहिणीयस्य लौकिकसूक्ष्मपरिनिर्वापणः। व्य० प्र० २०९ आ ।

अभयकुमारो-दृष्टांतविशेष. । नि० चू० प्र० १९४ अ।

अभयदए - अभयदय., प्राणापहरणरसिकेऽप्युपसर्गकारिणि प्राणिनि यो न भयं दयते ददाति, अभया सर्वप्राणिभयपरिहारवती वा दया-अनुकम्पा यस्य स । भग० ७। अभयं-विशिष्टमात्मन. स्वास्थ्यं नि श्रेयसधर्म्मभूमिकानिबन्धनभूता परमा धृतिरितिभाव. तदभय ददति। जीवा० २५५।

अभयदयेणं-अभयदय, न भयं दयते प्राणापहरणरसिकोपसर्गकारिण्यपि प्राणिनि ददातीत्यभयदय.। सम० ४। अभया वा-सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया-घृणा यस्यासावभयदय'। सम० ४।

अभयसेण-अभयसेन', संवेगोदाहरणे वारत्रकपुरे राजा। आव० ७०९।

अभयसेणो-वारत्तपुरं नगर, तत्थ अभयसेणो राया। नि० चू० तृ० ५४ आ। वारत्रकपुरराजा। बृ० द्वि० २४९ आ।

अभयसेन-छर्दितदोषदृष्टान्ते राजा। पिंड० १६९।

अभयसेना-वापीनाम। जं० प्र० ३७०।

अभया-हरीतकी। आचा० १३०। नि० चू० द्वि० १४१ आ।

अभये-अभय', अनुत्तरोपपातिकदशानां प्रथमवर्गस्य दशमाध्ययनम्। अनुत्त० १।

अभवसिद्धिय-अभवसिद्धिकः, अभव्य'। जीवा० ४४९। ठाणा० ३०।

अभविय-अभव्य'-अयोग्य.। उत्त० ७१३।

अभाग-अभाग्य, अशोभनः। आव० ७०८।

अभावं - नञ कुत्सायामपि दर्शनादशोभनं भावं-सर्वतो निष्काशनलक्षणं पर्यायम्। उत्त० ४६।

अभाविआ-अगीतार्था । बृ० द्वि० १६६ आ।

अभाविओ-अभावित । आव० १०१। अभावित -अपरिणतजिनवचनस्तस्य निर्लेपनाभावे मा भूद् विपरिणाम'। बृ० प्र० २७२ अ।

अभाविते-असंसर्गप्राप्तं प्राप्तसंसर्गं वा। ठाणा० ४८१।

अभावितो-कृताभ्यास । नि० चू० तृ० १३१ आ।

अभावुक-नलस्तम्ब । ओघ २२३।

अभावो-असंभव.। दश० ३९। विनाश। बृ० द्वि० ७२ आ।

अभासो-स्वदेशभाषाया अज्ञ । बृ० द्वि० १९ आ।

अभि-पृथग्। बृ० द्वि० १९५ अ।

अभिई-अभिजित्, नक्षत्रविशेष। सूर्य० ११४। ठाणा० ७७।

अभिओग-अभियोग., आज्ञाप्रदानलक्षण'। दश० २४९। विकुर्वणा। भग० १९१। बलात्कार । उत्त० ३६५।

अभिओगकया-अभियोगकृता, या वशीकरणचूर्णमन्त्रयोः संयोजिता सा। ओघ० १९३।

अभिओगपावणं - अभियोगप्रापणं, हठाद्व्यापारवर्तनम्। प्रश्न० २२।

अभिओगिओ-आभियोगिक । आव० १२४।

अभिओगे-अभियोग', प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यमाणत्वम्। जीवा० २४३।

अभिओगो-अभियोग, पारवश्यम्। विपा० ५४। गर्व। आव० ७७२। वशीकरणचूर्णो मन्त्रश्च। ओघ० १९३।

अभिओग्गो-अभियोग्य, अभिमुख कर्मसु युज्यते व्यापार्यत इति वा, तस्य भाव कर्म्म वा। जीवा० २८०।

अभिकंख-अभिकाङ्क्ष्य-उद्दिश्य। आचा० २८१। पर्यालोच्य। आचा० ३९८।

अभिकंखमाणो-अभिकाङ्क्षन्, मायारहित। दश० १५२।

अभिकंता - अभिकान्ता-शय्यायास्तृतीयप्रकार। बृ० प्र० ९३ अ।

अभिक्कंतं-अभिकान्तम्, अभिक्रमणम्। प्रज्ञापकं, प्रत्यभिमुख क्रमणम्। दश० १४१।

अभिक्कमंति-अभिलसति। दश० चू० ६२।

अभिक्कममाणे-अभिकामन्-गच्छन्। आचा० २१७।

अभिक्खसेवा-पुणो पुणो गमनं। नि० चू० प्र० ३९ आ।

अभिक्खं-अभिक्ष्णं-अनवरतं। आव० ११९।

अभिक्खणं-अभिक्ष्णं, अनवरतम्। भग० २२, ४१। आचा० ३६५। सूत्र० ११५। उत्त० ३४३, २१४। आव० ४०७। अनुसमयम्। भग० ४३। पुन पुन। उत्त० ३४४, ४२८, ठाणा० ३०१।

अभिक्खणं अभिक्खण ओहारइत्ता - शबलदोष। सम० ३७।

अभिक्खणंऽभिक्खमोहारी-अभीक्ष्णमभीक्ष्णमवधारक, योऽभीक्ष्णमवधारिणीं भाषा भाषते, यथा दासस्त्वं चौरो वेति, यद्वा शङ्कित तन्निःशङ्कित भणति। एकादशममसमाधिस्थानम्। आव० ६५३, ६५४।

अभिगच्छंति-अभिगच्छन्ति, समीपमभिगच्छन्ति। भग० १३७।

अभिगता-अभिगता, अभिगतजीवाजीवा। आव० ३०४।

अभिगम-अभिगम, ज्ञानम्। उत्त० ५९२। बोधिलाभ। सम० १२०। मैथुनासेवना, गमनं च। आव० ८२५। अभिगम्य, विज्ञाय, आसेव्य। दश० २५८।

अभिगमकुसले-अभिगमकुशल, लोकप्राघूर्णकादिप्रतिपत्तिदक्ष। दश० २५५।

अभिगमणं - अभिगमनं, सर्वगाद्यान्मण्डलादभ्यन्तरप्रवेशनम्। जीवा० ३४५। सूर्य० २४३।

अभिगमरुई - अभिगमरुचि -यस्य श्रुतज्ञानमर्थतो दृष्टं स भवति। प्रज्ञा० ५६। अभिगमो-ज्ञानं ततो रुचिर्यस्य स, येन ह्याचारादिक श्रुतमर्थतोऽधिगत भवति स.। ठाणा० ५०४। अभिगमरुचि -अभिगमो-ज्ञान तेन रुचिर्यस्य स। उत्त० ५६३।

अभिगमसड्ढे-अभिगमश्राद्धक -यत्र कारणे आपन्ने प्रविश्यते। ओघ० १५६।

अभिगमसड्ढो-सम्मद्दिट्ठी-गिहीताणुव्वओ। नि० चू० प्र० १९९ आ।

अभिगम - अभिगम, विस्तरबोध। भग० १००। प्रतिपत्ति। भग० १३७।

अभिगमो- अधिगम, यथावस्थितपदार्थपरिच्छेद। आव० ८३८। साधूणमागयाणं जा विणयपडिवत्ती सा। दश० चू० १४१।

अभिगया-जीवाजीवादिपदार्थाभिगमोपेता श्राविकेत्यर्थ। बृ० तृ० १३९ आ।

अभिगहियट्ठ - अभिगृहीतार्थम्, प्रश्नितार्थस्याभिगमनात्। भग० १३५।

अभिगाहइ-सेवते। आचा० ११४। अभिगाहन्ते-सेवन्ते। आचा० १३३।

अभिगिज्झ-अभिगृह्य, आलोच्य। दश० २१६। अङ्गीकृत्य, तदभिमुखीभूय। ठाणा० ५६।

अभिग्गह-अभिग्रह, गुरुवियोगकरणाभिसन्धि। दश० २४१।

अभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया - अभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकीक्रियाया द्वितीयोभेद। आव० ६१२।

अभिग्गहिया-अभिगृहीता, प्रतिनियतार्थावधारणम्। प्रज्ञा० २५६। अभिग्रहिका-वस्त्राणि वा पात्राणि वा पूरणीयानि अपरेण वा येन प्रयोजनमिति प्रतिपन्नाभिग्रहा। बृ० प्र० ९९ आ।

अभिग्गहो-अभिग्रह -प्रत्याख्यानविशेष। आव० ८५२। कुमतपरिग्रह। ठाणा० ४९। नियम। भग० ६२।

अभिग्रहिक -मिथ्यात्वविशेष। ठाणा० २७।

अभिघट्टिज्जमाणस्स-अभिघट्ट्यमानस्य-वेगेन गच्छत। जं० प्र० ३७। जीवा १९३।

अभिघातो–उवलओ वा घत्तिजाति। नि० चू० प्र० १०५ आ।

अभिचंदे–अस्यामवसर्प्पिण्या चतुर्थकुलकरः। सम० १०३, १५०। अभिचन्द्रः, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० ३। अभिचन्द्र –मुहूर्त्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। कुलकरविशेषः। आव० १११। जं० प्र० १३२। अभिचन्द्र –अमुष्यामवसर्प्पिण्या चतुर्थकुलकरः। ठाणा० ३६८।

अभिचारकमन्त्रविद्यादि – अशिवपुररोधादौ तत्प्रशमनार्थं। ठाणा० १६४।

अभिचारुअं–चारकता। नि० चू० प्र० २७४ आ।

अभिचारुकं–वसीकरणं। नि० चू० प्र० १०१ आ।

अभिजाए–अभिजात, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। विनीतः। उत्त० १८८। कुलीन। जं० प्र० १८२।

अभिजाओ–शिष्टः। बृ० द्वि० २५५ आ।

अभिजाणइ–अभिजानाति, विवेचयति। आचा० २०३।

अभिजातं–वाण्यतिशयविशेष। सम० ६३।

अभिजाति–कुलीनता। उत्त० ३४७।

अभिजातिए – अभिजातिगः, अभिजातिः–कुलीनता ता गच्छति–उत्क्षिप्तभारनिर्वाहणादिनेति। उत्त० ३४७।

अभिजाते–अभिजात., शास्त्रीयैकादशदिवसनाम। सूर्य० १४७।

अभिजाय–अभिजातम्–कुलीनम्। भग० ४६९।

अभिजायइ – अभिजायते, उपभोग्यतयाऽऽभिमुख्येनोत्पद्यते। उत्त० १८७।

अभिजित्–नक्षत्रदेवविशेष। प्रश्न० ९५। उदायनपुत्र। ठाणा० ४३१।

अभिजुंजंति–अभियुञ्जते, योजयन्ति। प्रश्न० ३६।

अभिजुंजित्तए – अभियोक्तुम्, विद्यादिसामर्थ्यतस्तदनुप्रवेशेन व्यापारयितुम्। भग० १९१।

अभिजुंजिया–अभियुज्य, व्यापार्य, स्मारयित्वा। सूत्र० १३९। योजयित्वा, अभियोगं ग्राहयित्वा, व्यापारयित्वा। आचा० १२३। आश्लिष्य–वशीकृत्य। ठाणा० १०६। सम्बन्धमुपगत्य, प्रतिस्पर्द्धय। ठाणा० १७७।

अभिजोइंति – तिरस्कुर्वन्ति, निर्भर्त्सयन्ति। बृ० प्र० २८१ अ।

अभिजोयंति–वशीकुर्वन्ति। बृ० द्वि० २५५ अ।

अभिज्जं–अमेद्य। उत्त० २०७।

अभिज्जा – अभिध्यानमभिध्येत्यस्य। सम० ७१। लोभः, अभिध्यानं वा। प्रश्न० ९७।

अभिज्झा–अभिध्या–अदृढाभिनिवेश, चित्तलक्षणः। भग० ५७३। अभिध्या, अभिध्यानम्, अभिलाषः। प्रज्ञा० ५०४।

अभिज्झिअ–अभिध्यातम्, इष्टम्। दश० २७७।

अभिज्झियत्ता–अभिध्यितता, भिध्या–लोभः सा सञ्जाता यत्र सो भिध्यितो, न भिध्यितोऽभिध्यितस्तद्भावस्तत्ता। भग० २५३। अभिध्यितता, अभिध्यानमभिध्या–अभिलाषः, सा सञ्जाताऽस्मिन् तस्य भावः। प्रज्ञा० ५०४। अभिध्येयता–अहृद्यत्वं, अशुभत्वं। भग० २३।

अभिणए–अभिनय, चतुर्भिराङ्गिकवाचिकसात्विकाहार्यभेदैः समुदितैरसमुदितैर्वाऽभिनेतव्यवस्तुभावप्रकटनम्। जं० प्र० ४१४।

अभिणंदणो – अभिनन्दन, अभिनन्द्यते देवेन्द्रादिभिरिति, चतुर्थजिन, गर्भात्प्रभृतिरभीक्ष्णं शक्रोऽभिनन्दितवानिति। आव० ५०२।

अभिणंदिए–अभिनन्दित.–लोकोत्तरप्रथममासनाम। जं० प्र० ४९०।

अभिणदियाइओ–अभिनन्दितवान्। आव० ५०२।

अभिणंदे–अभिनन्द, लोकोत्तरप्रथममासनाम। सूर्य० १५३।

अभिणिक्खंतो–अभिनिष्क्रान्तः। आव० ११७।

अभिणिबोहे–अभिनिबोध., अर्थाभिमुखो नियतः प्रतिनियतस्वरूपो बोधो–बोधविशेषः, अभिबुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति। तदावरणकर्मक्षयोपशमः। प्रज्ञा० ५२६।

अभिणिवट्टमाणे – अभिनिवर्त्तमान, पृथग्भवन। सूत्र० ३५४।

अभिणिविट्ठं – अभिनिविष्टं, विशिष्टविशिष्टतराध्यवसायभावतोऽतितीव्रानुभावजनकतया व्यवस्थितम्। प्रज्ञा० ४०३।

अभिणिवेसे–अभिनिवेशः, चित्तावष्टम्भ। औप० १०६।

अभिणिव्वट्टित्ता–अभिनिर्वर्त्य, समाकृष्य। सूत्र० २७९।

अभिणाणं – अभिज्ञानं, चिह्नम्। उत्त० १४९। आव० ३४४।

अभिण्णाय–अभिज्ञातम्, अभिमतम्। भग० १९७।

अभितावयंति–अभितापयन्ति, अपनयन्ति । सूत्र० १३३ ।
अभितुर–अभि–आभिमुख्येन त्वरस्व-शीघ्रो भव । उत्त० ३४० ।
अभितोसइज्जा–अभितोषयति, येन वा तेन वा यापयति । दश० २५३ ।
अभिदुग्गा–अभिदुर्गा, आभिमुख्येन दुर्गा–दु खोत्पादिका । सूत्र० १२९ ।
अभिद्दवं–अभिद्रवन्ति । आचा० ४२९ ।
अभिद्दुय–अभिद्रुतः, सर्वात्मना व्याप्त. । जीवा० १३० ।
अभिधानं–वचनपर्याय । आव० २९ ।
अभिधारए–अभिधारयेत्–यायात् । दश० १८६ । किमेते उपसर्गा ममाचलितचेतस. कर्त्तुमलमिति चिन्तयेत् । उत्त० १०९ । अभिधारयेयु.–अन्तर्भावितेव । उत्त० १०९ ।
अभिधारणा – धारणा, विचारणा, सकल्पः । व्य० द्वि० ३७३ आ ।
अभिधारयामो–गर्हणाबुद्धयोद्‌घट्टयामः । सूत्र० ३९२ ।
अभिधारेमाणे–अभिसन्धारयतः–गच्छत । आचा० ३२९ ।
अभिधास्ये–कीर्त्तयिष्ये । आचा० ४ ।
अभिनंदिज्जा–अभिनन्देत्, अनुमन्येत । उत्त० १२० ।
अभिनयिका–नृत्यकलाभेद । सम० ८४ ।
अभिनव–विशिष्टवर्णादिगुणोपेत । जीवा० १२१ ।
अभिनवम्–नवम् । सूर्य० १८ ।
अभिनिक्खमणं–अभिनिष्क्रमण-दीक्षा । आचा० ४२२ ।
अभिनिक्खमति–अभिनिष्क्रामति–धर्माभिमुख्येन गृहस्थ-पर्यायान्निर्गच्छति । उत्त० ३०६ ।
अभिनिचरिका–आभिमुख्येन नियता चरिका सूत्रोपदेशेन वहिर्व्रजिकादिषु दुर्बलानामाप्यायनिमित्तं पूर्वाह्निकाले समुत्कृष्ट समुदान लब्धु गमनं । व्य० द्वि० ६९ अ ।
अभिनिदुवारं–अनेकद्वारम् । बृ० द्वि० १२ आ ।
अभिनिबोध-अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वान्नियतोऽसशयरूपत्वाद् वोध –संवेदनम् । ठाणा० ३४७ ।
अभिनिपयाए–अभिनिप्रजा–अभि–प्रत्येकं नियता–विविक्ता प्रजा चुल्ली । व्य० द्वि० ३३९ अ ।
अभिनिवर्त्तनम्–क्रिया । उत्त० ५८१ ।
अभिनिविट्टा–अभिनिर्वृत्ता । आव० २२७ ।
अभिनिविट्ठं–अभिनिविष्टम् । तीव्रानुभावतया निविष्टम् । भग० ९० ।
अभिनिविट्ठाइं–अभि–अभिविधिना निविष्टानि–सर्वाण्यपि जीवे लग्नानि । भग० ५६९ ।
अभिनिवुडच्चे–अभिनिर्वृत्तार्च–शरीरसंतापरहित । आचा० २८८ ।
अभिनिवेशिक –मिथ्यात्वविशेष । ठाणा० २७ ।
अभिनिवेसए–अभिनिवेशयेत्, कुर्यात । दश० २३२ ।
अभिनिवेसं–अभिनिवेश । आव० ३११ । आग्रह । भग० ४८९ ।
अभिनिव्वट्टित्ता–अभिनिर्वर्त्त्य, विधाय । भग० २२४ ।
अभिनिव्विगड–विष्वक् अपवरक. । व्य० द्वि० १९० आ ।
अभिनिव्वगडा–अभिनिर्व्याकृत-पृथग्विभिन्नद्वाराया वसतौ । व्य० प्र० ४० आ ।
अभिनिव्वगडाए–अभि–प्रत्येकं नियतो वगडः–परिक्षेपो यस्या सा अभिनिव्वगडा । व्य० द्वि० १८१ अ ।
अभिनिसिज्जा–अभिनिषद्या–रात्रिस्वाध्यायभूमि , अभिनैषेधिकी–सामान्यस्वाध्यायभूमि । व्य० प्र० १२७ अ ।
अभिनिसिट्ठो – अभिनिसृष्ट, अभिमुखं – बहिर्भागाभिमुख निसृष्ट । जीवा० ३६१, २०६ ।
अभिनिस्सवति–अभिनि श्रवति, जिघ्रतामभिमुखं निस्सरति । जीवा० १९२ ।
अभिन्नं–अव्यपगतजीवं । बृ० प्र० ३५ आ ।
अभिन्नाय–अभिधाय–ज्ञात्वा । आचा० ३०४ ।
अभिप्पाओ–अभिप्राय , बुद्धिः । आव० ४१४ ।
अभिप्पेय–अभिप्रेत , कामयन् । दश० १९५ । अभिप्रेतें–अभिरुचिते । उत्त० २५४ ।
अभिभवे–अभिभवकायोत्सर्ग – उपसर्गाभियोजने द्वितीय । आव० ७७१ । विशे० ६१२ ।
अभिभूत –आकुल. । आव० ५८९ । प्रारब्ध., अपराद्धो वा । प्रश्न० ६० ।
अभिभूय–तिरस्कृत्य । आचा० ३०८ । सर्वथा तत्सामर्थ्यमुपहत्य । उत्त० ८१ । पराजित्य । सूत्र० १४५ । अभिव्याप्य । सूत्र० २८५ ।
अभिमरए–अभिमरक । आव० ८१९ ।
अभिमरा–अभिमरा । उत्त० १६२ । आव० ३१६ ।
अभिमुखं–अभिमुख । व्य० प्र० ९९ अ ।

अभिमुखनामगोत्रः – (अभिमुहनामगोत्तं), नोआगमतो द्रव्यद्रुमस्य तृतीय. प्रकारः। दश० १७। अभिमुखे–संमुखे जघन्योत्कर्षाभ्यां समयान्तर्मुहूर्त्तानन्तरभावितया नामगोत्रे इन्द्रसम्बन्धिनी यस्य स तथा। ठाणा० १०३।

अभिमुखनामगोत्रा – ये पुनर्वादरापर्याप्ततेज कायिकायुर्नामगोत्राणि पूर्वभवमोचनानन्तरं साक्षाद्वेदयन्ते तेऽभिमुखनामगोत्राः। प्रज्ञा० ७६।

अभिमुह–पव्वज्जाभिमुहो, संपट्ठितो। नि० चू० प्र० १०४ अ।

अभिमुहो–अभिमुख, उद्युक्तः। दश० २४५। अभि–भगवन्तं प्रति मुखमस्य। सूर्य० ६।

अभियोग–आज्ञा। ठाणा० ५२१। ग्रहणप्रवण, अर्थवलाऽऽयातत्वेन तन्नान्तरीयकोद्भव। विशे० ५३। कार्मणं कुर्यात्। वृ० प्र० ९९ आ।

अभियोग–आभियोग्यः, अभियोगार्ह आदेशकारी देव.। प्रश्न० १२१।

अभियोगो–वशीकरण। व्य० द्वि० ३१५ आ।

अभियोजनम् – विद्यामन्त्रादिभि परेषां वशीकरणादि। प्रज्ञा० ४०६।

अभिरई–अभिरति, आभिमुख्येन रति। आव० ४५१।

अभिरामयंति–अभिरमयन्ति, आभिमुख्येन विनयादिषु युञ्जते। दश० २५६।

अभिरू–मध्यमग्रामस्य सप्तममूर्छनानाम। ठाणा० ३९३।

अभिरूइए–स्वादुभावमिवोपगतः। भग० ४६७।

अभिरूप–अभिमुखमतीवोक्तरूपं आकारो यस्य सः। सूर्य० २।

अभिरूवं–अभिरूपं, अभि–सर्वेषां द्रष्टृणां मन.प्रसादानुकूलतयाऽभिमुखं रूपं यस्य तत्, अत्यन्तकमनीयमिति। जीवा० १६१। प्रज्ञा० ८७।

अभिरूवा–अभिरूपाणि, कमनीयानि। सम० १३८। अभि–सर्वेषां द्रष्टॄणां मन.प्रसादानुकूलतया अभिमुख रूपं यस्यः सा, अत्यन्तकमनीया। जं० प्र० २१। अभिरूपा –कमनीया.। ठाणा० २३२।

अभिलंघमाण–अभिलङ्घयत्, अनुलिखत्। जं० प्र० २९७।

अभिलसंति–अभिलषन्ति। औप० २४।

अभिलसइ–अभिलषति,अभिलषणं-तल्लालसतया वाञ्छनम्। उत्त० ५८७।

अभिलावपुरिसे – अभिलापपुरुष. पुंल्लिङ्गाभिधानमात्रम्। आव० २७७। ठाणा० ११३।

अभिलाषः–तीव्रलोभोदयप्रभव आत्मपरिणामः। आव० ५८०।

अभिलोयणं–अभिलोकनम्, अभिलोक्यते यत्रस्थैस्तत्, उन्नतस्थानम्। प्रश्न० १३८।

अभिवंदओ–अभिवन्दकं, अभिवन्दिष्यत इति। आव० १६७।

अभिवंदिऊण–अभिवन्द्य, अभिमुख वन्दित्वा–प्रणम्य। प्रज्ञा० ३।

अभिवड्डिए–अभिवर्द्धितः, तृतीयः पञ्चमश्च युगे सवत्सरौ। सूर्य० १५४। ठाणा० ३४४।

अभिवड्डिए णं मासे–अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य चतुश्चत्वारिंशद्‌होरात्रद्विषष्टिभागाधिकत्र्यशीत्यधिकशतत्रयरूपस्य द्वादशो भाग। सम० ५६। अभिवर्द्धितमास, अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचन्द्रमासप्रमाणसवत्सर। वृ० प्र० १८६ आ।

अभिवड्डियवरिसं–जत्थ अधिकमासगो पडिति वरिसे तं। नि० चू० प्र० ३३९ अ।

अभिवड्डियसंवच्छरे–अभिवर्द्धितसवत्सर। सूर्य० १६९, १७१।

अभिभवंति–अभिभवन्ति–न्यक्कुर्वन्ति। ठाणा० १७७।

अभिवद्धी–अभिवृद्धि, उत्तराभाद्रपदाया देवता। जं० प्र० ४९९।

अभिवयणा–'अभी'त्यभिधायकानि वचनानि–शब्दा अभिवचनानि, पर्यायशब्दा। भग० ७७६।

अभिवादणं – अभिवादनम्, शिरोनमनचरणस्पर्शनादिपूर्वमभिवादये इत्यादि वचनम्। उत्त० १२४।

अभिवायण-अभिवादनं-नमोक्काराइकरणं। दश० चू० १६३।

अभिवाहारो – अभिव्याहार, आचार्यशिष्ययोर्वचनप्रतिवचनेऽभिव्याहरणम्। आव० ४७१।

अभिविधग्गहणं–पर्यापन्नपरिष्ठापितादेर्ग्रहणम्। वृ० द्वि० २४ अ।

अभिवुड्डित्ता–अभिवर्ध्य। सूर्य० १२।

अभिवुड्डेमाणे–अभिवर्द्धयन्। सूर्य० १२।

अभिव्यज्यते–अनन्तपरिणामस्य द्रव्यस्य तत्तत्सहकारिकारणसन्निधाने तत्तद्रूपम्। ठाणा० ४९०।

अभिशंसनम् – असदध्यारोपणं, अभ्याख्यानं च । आव० ८२१ ।

अभिसंधारिज्जा–अभिसन्धारयेत्, पर्यालोचयेत् । आचा० ३२९ ।

अभिसन्धि–आलोचनम् । प्रज्ञा० ५०० ।

अभिसंभूया–अभिसम्भूता, प्रादुर्भूता । आचा० ३७६ ।

अभिसमण्णागए–तद्भोगापेक्षया । भग० १५९ । गवेषयता लब्ध । भग० २२८ ।

अभिसमन्नागच्छामि – अभिसमागच्छामि, अभिविधिना साङ्गत्येन चावगच्छामि–सर्वैं परिच्छित्तिप्रकारैं परिच्छिनद्मि । भग० ७२५ ।

अभिसमन्नागयं – परिणमयितुमारब्धम् । भग० २२४ । उदयाभिमुखीभूतम् । भग० ९० । अभिसमन्वागतम्–उदयाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४०३ । विशेषत परिच्छिन्नम् । भग० २२३ ।

अभिसमन्नागया–अभिसमन्वागता', अभि'–आभिमुख्येन सम्यग्–इष्टानिष्टावधारणतयाऽन्विति–शब्दादिस्वरूपावगमात्पश्चादागता' ज्ञाता –परिच्छिन्ना यस्य । आचा० १५३ । भोग्यावस्था गता । ठाणा० २४५ ।

अभिसमन्नागयाइं–अभिविधिना सर्वाणीत्यर्थ समन्वागतानि–सम्प्राप्तानि । भग० ५६९ ।

अभिसमागच्छति–अभिसमागच्छति, साध्यसिद्धौ व्यापारणत सम्यक् प्राप्नोति । भग० २३९ ।

अभिसमागम – अभिसमागम, वस्तुपरिच्छेद । ठाणा० १७२ ।

अभिसमेच्चा – आभिमुख्येन सम्यगित्वा–ज्ञात्वा । आचा० ४४ ।

अभिसित्त–अभिषिक्त, दीक्षासस्कृत । दश० २४५ ।

अभिसेअ–अभिषेक, श्रियोऽभिषेक । आव० १७८ ।

अभिसेअसिला – अभिषेकशिला, अभिषेकाय–जिनजन्मस्नात्राय शिला । ज० प्र० ३७१ ।

अभिसेआ–पवत्तिणी । नि० चू० प्र० १३२ आ ।

अभिसेए–आचार्यपदस्थापनार्ह', सूत्रार्थतदुभयोपेत । बृ० द्वि० २८३ आ ।

अभिसेएण–अभिषेकेण,शुक्रशोणितनिषेकादिक्रमेणेति। आचा० २३९ ।

अभिसेओ–अभिषेक –सूत्रार्थतदुभयोपेत आचार्यपदस्थापनार्ह । व्य० प्र० १४१ आ । जीवा० २७६ ।

अभिसेक्कभंडे–अभिषेकभाण्डम्, अभिषेकोपस्करः । जीवा० २३६ ।

अभिसेग–अभिषेक, अभिषिक्त' । बृ० प्र० १७७ आ ।

अभिसेगपत्ता – अभिषेकप्राप्ता–प्रवर्त्तिनीपदयोग्या । बृ० द्वि० २२ आ ।

अभिसेगसिलाओ – अभिषेकशिला', तीर्थकराणामभिषेकार्था शिला । ठाणा० २२५ ।

अभिसेज्जं–अभिशय्या, अभिनिषद्या । व्य० प्र० १२८ अ ।

अभिसेज्जा–अभिशय्या, द्वितीयवसति । विशे० १३०९ ।

अभिसेय–अभिषेक –उपाध्याय । व्य० द्वि० १६५ अ ।

अभिसेयसभा–अभिषेकसभा । जीवा० २३६ ।

अभिसेयसभा–अभिषेकसभा, यस्या राज्याभिषेकेणाभिषिच्यते । ठाणा० ३५२ । अभिषेकभवन विमानभाविनी सभा । प्रश्न० १३५ ।

अभिहआ–अभिहता, अभिमुखेन हता, चरणेन घट्टिता, उत्क्षिप्य क्षिप्ता वा । आव० ५७३ ।

अभिहड – अभ्याहृतम्, स्वग्रामादे साधुनिमित्तमभिमुखमानीतम् । दश० ११६ । गृहस्थेनानीतं । आचा० ३२५ । निष्पन्नमेवान्यत समानीतम् । आचा० ३६१ । अभ्याहृतं–स्वग्रामादिभ्य आहृत्य यद्ददाति । ठाणा० ४६० । भग० ४६७ ।

अभिहणंति – अभिघ्नन्ति, अभिमुखमागच्छन्तो घ्नन्ति । प्रज्ञा० ५९२ ।

अभिहणह–आभिमुख्येन हथ । भग० ३८१ ।

अभिहणिज्ज – अभिहन्यात, पादेन ताडयेत् । आचा० ४२८ ।

अभीक्ष्णमवधारकत्वम्–शङ्कितस्याप्यर्थस्यावधारकत्वम् । प्रश्न० १४४ ।

अभीति–अभिचि, उदायननृपपुत्र । भग० ६१८ ।

अभीयी–अभिजित्, नक्षत्रविशेष । सूर्य० १२९ ।

अभीरू–सत्त्वसम्पन्न । ओघ० २०२ ।

अभु(ब्भु)ज्जियमरणं–परिण्णादि । नि० चू० प्र० २६३ आ ।

अभुत्त–अभुक्त, य कुमार एव प्रव्रजित । ओघ० ९१

अभूइभाव–अभूतिभाव, असम्पद्भाव । दश० २४३ ।

अभूएणं-अभूतेन, असद्भुतेन। सम० ५२।
अभूतोद्भावनम्-यथा सर्वगत आत्मा। ठाणा० २६।
अभूतिभावो-विणासभावो। दश० चू० १३१।
अभेज्ज-अभिध्या, रौद्रध्यानम्। प्रश्न० ४२।
अभेज्झलोभो – अभिध्यालोभः, रौद्रध्यानान्विता मूर्च्छा। प्रश्न० ४२।
अभेत्सुः-कणिकाकार कुर्युः। आचा० ३४३।
अभ्यंतरं तप-सवरनिर्जराद्वारा निर्वाणप्रापकं। तत्त्वा० ९-४६।
अभ्यन्तरशम्बूका – यस्यां क्षेत्रमध्यभागाच्छङ्खवद्वृत्तया परिभ्रमणभङ्गया भिक्षा गृह्णन् क्षेत्रबहिर्भागमागच्छति। बृ० प्र० २५७ अ।
अभ्यन्तरान्-अवगाहक्षेत्रस्थान्। ठाणा० २८४।
अभ्यन्तरानिर्वृति-बाह्यनिर्वृते खड्गधारासमानाया स्वच्छतरपुद्गलसमूहात्मिका। प्रज्ञा० २९४।
अभ्यस्तः-जित उचितो वा। आव० ५९४।
अभ्यस्तम्-कृतं, निर्वर्त्तितम्। आव० ५९३।
अभ्यागत-अतिथिः। उत्त० ३८१।
अभ्यासगुणे-(अब्भासगुणे), भोजनादिविषय। आचा० ८६।
अभ्यासराशि-गुणकार। सम० ९१।
अभ्युद्यतविहारेण-जिनकल्पादिना। बृ० प्र० २१० आ।
अमंडलिउवजीवो-अमण्डल्युपजीवकः-तत्र योऽमण्डल्युपजीवकः स साधुर्गुरुसगासं गत्वा तमेव गुरुं भणति-यथा हे आचार्या! सदिशत-ददत यूयमिदं भोजनं प्राघूर्णक-क्षपक-अतरन्तबालवृद्धशिक्षकेभ्य -साधुभ्य इति। ओघ० १७८।
अमंथरम्-अविलम्बितम्। ओघ० १८७।
अमओ-अमय, न किम्मयोऽपि। दश० १३३।
अमग्गो-अमार्ग, मिथ्यात्वादि। आव० ७६२।
अमच्च-अमात्य, राज्याधिष्ठायक। भग० ३१८। मन्त्रिव। दश० १०७।
अमच्चा-अमात्या, राज्याधिष्ठायका। भग० २६४।
अमच्चो-अमात्य। आव० ११६। राज्यचिन्तक। प्रश्न० ७९, ९६। राज्याधिष्ठायक। औप० १४। राजमन्त्री। बृ० तृ० ३३ अ। यो राज्ञोऽपि शिक्षा प्रयच्छति सो। व्य० प्र० १६९ आ। उत्त० ३८०।

अमच्छरी-अमत्सरी, परगुणग्राही। प्रश्न० ७४।
अमण-अवसानम्। विशे० १३०७।
अमणाम-अमनोऽमम्, न मनसा अन्त सगम्यन्ते, पुनः पुनः स्मरणगम्यम्। भग० ७२।
अमणामत्ता-अमनोऽम्यता, अमनोगम्यता। भग० २३। न मनसा अम्यते-गम्यते सस्मरणतोऽमनोऽम्यस्तद्भावस्तत्ता, प्राप्तुमवाञ्छिततत्वम्। भग० २५३। भोज्यतया मन आप्नुवन्तीति मनआपाः प्राकृतत्वाच्च पकारस्य मकारत्वे मणाम इति सूत्रे निर्देश, न मनआपा अमनआपा। प्रज्ञा० ५०४।
अमणुण्ण-अमनोज्ञम्, न मनसाः-अन्त संवेदनेन शुभतया ज्ञायन्ते। भग० ७२। अमनोज्ञ -रटनशील। ओघ० १५३। अमनोज्ञ-असविग्न। ओघ० १२०।
अमणुण्णसंपओगसंपउत्ते – अमनोज्ञसम्प्रयोगसम्प्रयुक्तः-अमनोज्ञ -अनिष्टो य शब्दादिस्तस्य यः सप्रयोगो-योगस्तेन सप्रयुक्तो य स। औप० ४३।
अमणुण्णा-असाम्भोगिका। बृ० द्वि० १८ आ।
अमणुन्नत्ता-अमनोज्ञता, न मनोज्ञा अमनोज्ञाः, विपाककाले दुःखजनकतया न मन प्रह्लादहेतु। प्रज्ञा० ५०४। न मनसा ज्ञायते सुन्दरता। भग० ३५३। कथयाऽप्यमनोरमतया। भग० २३।
अमणुन्ने – अमनोज्ञो-न कश्चिन् प्रतिभाति रटनशीलत्वात्त तश्चैकाकी हिण्डते। ओघ० १५०। सर्वेषामप्यनिष्ट। बृ० प्र० २६६ अ।
अमणो-अमनस्क, मनोरहित –सम्मूर्च्छज। ओघ० २२१।
अमत-अमृतम्-क्षीरोदधिजलम्। जीवा० २१०।
अमम-अमम, ममकाररहित। भग० २७६। द्वादशोऽर्हन्। ठाणा० ४३४। जातिवाचक शब्द। ज० प्र० १२८, २१३। भरते वर्षे मनुष्यभेदविशेष। ज० प्र० १२८।
अममायमाणे-अममीकुर्वन्-अस्वीकुर्वन्। आचा० १३२।
अममे-जिनविशेषनाम। सम० १५३। शतद्वारे द्वादशोऽर्हन्। अन्त० १६। अमम, पञ्चविंशतितमो मुहूर्त्त। ज० प्र० ४९१। मुहूर्तनामविशेष। सूर्य० १४६।
अमम्मणा-अनपखल्यमानना। औप० ७८।

अमयं-अमतं, अशोभन मतम्, नास्तिकादिदर्शनम्, अमृत वा, अमृतमिवामृतं, आत्मनि परमानन्दोत्पादकतया धनम्। उत्त० २०६। अमृतस्य-क्षीरोदधिजलस्य। जं० प्र० ५५।

अमयघोसो-चण्डवेगच्छिन्नो मुनि। (स०)

अमयमेहे – अमृतमेघ·–यथार्थनामा महामेघ। जं० प्र० १७४।

अमयरसरसोवमं-अमृतरसरसोपमम्, परमान्नम्। आव० १४४।

अमर-अमर·–देव। आव० ६०। मयूर, अमरो वा। प्रश्न० ८४।

अमरकङ्का-घातकीखंडपूर्वभरते पद्मनाभराजधानी। प्रश्न० ८७।

अमरवइ-अमरपति –इन्द्र। भग० १५८।

अमरसोवमं-आम्ररसोपमम्। नि० चू० प्र० ३४७ अ।

अमरिसं-अमर्ष, असहिष्णुता। दश० ३८।

अमरिसणा – अमसृणाः, प्रयोजनेष्वनलसा अमर्षणा वा, अपराधेष्वपि कृतक्षमा। सम० १५७। अमर्षणा, अपराधासहिष्णव अमसृणा वा कार्येष्वनलसा। प्रश्न० ७४।

अमरिसिओ-अमर्षित,। आव० ५६५। अमर्ष –मत्सरविशेष। आव० २४१।

अमरिसो-अमर्ष, अत्यन्ताभिनिवेश। उत्त० ६५६।

अमर्षध्मातः-मत्सरपूरित। आव० २४१।

अमला-शक्रदेवेन्द्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० १५९। भग० ५०५। दक्षिणपश्चिमरतिकरपर्वतस्य पूर्वस्या भूताराजधान्यधिष्ठात्री, शक्रदेवेन्द्रस्य प्रथमाऽग्रमहिषी। जीवा० ३६५।

अमलाते-शक्रस्याग्रमहिष्या राजधानीविशेष। ठाणा० २३१।

अमाइ-अमायी, य शाठ्येन शिष्यान्न वाहयेत् स। दश० ५।

अमाघाओ-अमाघात, अमारि, अहिंसायात्रिपञ्चाशत्तम नाम। प्रश्न० ९९।

अमात्यः-राजमन्त्री। आव० ५५। अमात्य। ठाणा० १५५।

अमायपुत्ते-अमातापुत्र –रौद्रे नगरविनाशे स्वस्वजीवितरक्षणाक्षणिकतया यत्र माता पुत्रं न स्मरति। बृ० प्र० ३०४ अ।

अमावासासंगुणं-अमावास्यासगुणम्, याममावास्या ज्ञातुमिच्छसि तत्सङ्ख्यया गुणितम्। सूर्य० ११३।

अमिअतित्तो – अमृततृप्त, आवाधारहितत्वात्। आव० ४४७।

अमिए-अमित, भवनपतीन्द्रविशेष.। जीवा० १७०।

अमिज्जं-(अमेयं), विक्रयप्रतिषेधादेवाविद्यमानमातव्या, अविद्यमानमाया वा। भग० ५४४।

अमितकौतुकाः-(कोउगामिगा), कौतुकान्मृगा इव मृगा अज्ञत्वात्प्राकृतत्वादमितकौतुका। उत्त० ५०१।

अमितगति-भवनपतीन्द्रविशेष·। ठाणा० २०५।

अमितवाहणे-उत्तरदिग्वर्ती वायुकुमारेन्द्र। ठाणा० ८४।

अमितवाहन-भवनपतीन्द्रविशेष.। ठाणा० २०५।

अमिनसेणे-भरतेऽतीतोत्सर्पिणीकुलकर। ठाणा० ५१८।

अमित्रक्रिया-यन्मातापितृस्वजनादीनामल्पेऽप्यपराधे तीव्रदण्डस्य दहनाङ्कनताडनादिकस्य करणम्। ठाणा० ३१६।

अमियं-अमृतम्, अमितम्, मृष्टा पथ्या वा, सार्थिका अपरिमितम्। आव० ५९५। अमितम्, अनेकभवोपात्तमनन्तम्। आव० ६१०। अमित –प्रमाणाभ्यधिक। ओघ० १४२। अमित·–दिक्कुमाराणामधिपति·। प्रज्ञा० ९४। (अमित), अष्टमो दक्षिणनिकायेन्द्र। भग० १५७।

अमियगती-वायुकुमारेन्द्रविशेष। ठाणा० ८४।

अमियणाणि-अमितज्ञानी, जिन.। सम० १५३।

अमियवाहण-अमितवाहन·, भवनपतीन्द्रविशेष। जीवा० १७१।

अमियवाहणे-अमितवाहन, दिक्कुमाराणामधिपति। प्रज्ञा० ९४। उत्तरनिकाये अष्टम इन्द्र। भग० १५७।

अमिल-अमिलम्, ऊर्णावस्त्रम्। दश० १९३।

अमिला-उरभ्रा·। ओघ० १३५। उन्निया। दश० चू० ९२। वस्त्राणि। नि० चू० प्र० १४४ आ। रोमेसु कया। नि० चू० प्र० २५५ अ। नमिजिनप्रवर्तिनीनाम। सम० १५२। अम्लान (अव्यादि)। ठाणा० ३४०।

अमिलाणि-–महाधनमूल्यानि वस्त्राणि। आचा० ३९३।

अमिलाया-अम्लाना (त०)।

अमिलियं-अमिलितम्। विशे० ४०६।

अमुगिभवं-अमुकदेशोद्भवम्। बृं० प्र० ९८ आ।

अमुच्छ-(अमूर्च्छा) उपधावसंरक्षणानुबन्ध। भग० ९७।

अमुणिओ-अमुनय, गृहस्थाः। आचा० १९२।

अमुणी-अमुनय, मिथ्यादृष्टय। आचा० १९२।

अमुत्ती – अमुक्ति', सलोभता, परिग्रहस्य पञ्चविंशतितमं नाम । प्रश्न० ९२ ।

अमुय–अस्मृतम् , मनोऽपेक्षया अस्मृतम् । भग० १९७।

अमुह–अमुख, निरुत्तरम् । व्य० द्वि० १६० अ।

अमुहा–अमुखा , निर्वाच' । भग० ३७६ ।

अमूढ–अमूढः, अविप्लुत । दश० २६६ ।

अमूढदिट्ठी–अमूढदृष्टिः, बालतपस्वितपोविद्यातिशयदर्शनैर्न मूढा स्वभावाचलिता दृष्टि:–सम्यग्दर्शनरूपा यस्यासावमूढदृष्टि । प्रज्ञा० ५६ । अचलितसम्यग्दृष्टिः । दश० १०२। ऋद्धिमत्कुतीर्थिकदर्शनेऽप्यनवगीतमेवास्मद्दर्शनमिति मोहविरहिता सा चासौ दृष्टिश्च–बुद्धिरूपा । उत्त० ५६७ ।

अमूढलक्खो – अमूढलक्ष , सर्वज्ञेयाविपरीतवेत्ता । आव० २३४ ।

अमूतरसा–वापीनाम । ज० प्र० ३७१ ।

अमेज्झं–अमेध्यम् । आव० २१३ ।

अमोसलि–न विद्यते मोसली यत्र तदमोसलि । ठाणा० ३६१ ।

अमोहं–अमोघम् , अन्तरिक्षम् । सूत्र० ३१८ । अवन्ध्यम् । दश० २३३ । जूवगो । नि० चू० तृ० ७०आ।

अमोहदंसणं–अमोघदर्शनम् , पुरिमताले उद्यानम् । विपा० ५५ ।

अमोहदंसि–अमोहदर्शी, योऽमोहं–यथावत्पश्यति । दश० २०७ ।

अमोहदंसी – अमोघदर्शी, पुरिमतालनगरेऽमोघदर्शनीद्याने यक्ष । विपा० ५५ ।

अमोहपहारी – अमोघप्रहारी, जितशत्रो राज्ञो रथिक । उत्त० २१४ ।

अमोहरहो–अमोघरथ., जितशत्रो राज्ञो रथिक । उत्त० २१३ ।

अमोहसत्थं–अमोघशस्त्रम् । आव० ४०७ ।

अमोहा – अमोघा, पूर्वदिग्भागअञ्जनपर्वतस्य दक्षिणस्या दिशि पुष्करिणीविशेष. । जीवा० ३६४ । ठाणा० २३० । अलिप्फला, जम्वा सुदर्शनाया द्वितीयं नाम । जीवा० २९९ । सफला । ज० प्र० ३२६ । अमोघा', आदित्योदयास्तमययोरादित्यकिरणविकारजनिता दण्डा' । भग० १९६ । सिद्धशिलानाम । (टी०) । सूर्यबिम्बस्याधःकदाचिदुपलभ्यमानशकटोर्द्धिसंस्थिता श्यामादिरेखा । जीवा० २८३ ।

अमोहे–अमोह , वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देव । भग० २०० । ग्रैवेयकविमानप्रस्तटनामविशेष । ठाणा० ४५३ ।

अमोहो–अमोघ । उत्त० ४०३ । अमोघ., आदित्यकिरणविकारजनित आदित्योदगमनास्तमयने आताम्र कृष्णश्यामो वा शकटोर्द्धिसंस्थितो दण्ड , यूपक । आव० ७३६ । अमोह , शाहजनीनगर्यां देवरमणोद्याने यक्ष. । विपा० ६५।

अम्मड–(अम्मड.), परिव्राजक । भग० ६५३ ।

अम्मधाई–धात्री । उत्त० ३३१।

अम्मया–अम्बा, पुरुषसिंहवासुदेवमाता । आव० १६२ । अम्बा । आव० ८१६ ।

अम्माहिती – पञ्चमवासुदेवमाता । सम० १५२ । व्य० प्र० १८० आ ।

अम्मि(भि)ओ–अभ्यागत. । आव० ५६० ।

अम्मो–अम्बा । आव० २७२ ।

अम्मोगइया–अहंपूर्विका । आव० २९३ ।

अम्मोगतिया–अभिमुख । आव० ३०० ।

अम्ल –(अविले), आश्रवणक्लेदनकृत् । ठाणा० २६ । अम्लम्–(अविलं), काञ्जिकम् । ठाणा० ४९२। रसविशेष । प्रज्ञा०४७३ ।

अम्लवेतस–अम्लरसपर्णिना । प्रज्ञा० १० ।

अम्हपहिं–अस्मदीयम् । आव० ८१३ ।

अम्हच्चयं–अस्मदीयम् , अस्मत्सम्बन्धि । दश० ११२ ।

अम्हच्चय–अस्माकीन । आव० २९५ ।

अम्हे–अस्माकम् । पउ० २८–४६ ।

अयं–अय, प्रत्यक्षगोचरीभूत ममारी । आचा० १६३ । इष्टफल, कर्म । जीवा० ३२ । लोहं । भग० ६९७ । इष्टफलम् । भग० ४ ।

अयंतिय–अयन्त्रित , अनियमित । उत्त० ४७८ ।

अयंते–(अडते), पुन कायिका व्युत्सृज्य वसतिं प्रविशन । ओघ० ८१ ।

अयंपिर–अजल्पनशीला, नोच्चैर्लसविलग्ना । दश० २३६ ।

अयंपुले – वरुणस्य पुत्रस्थानीयो देव । भग० १९९ । मत्स्यबन्धविशेष । विपा० ८१ । गोशालकश्रावक । भग० ६८० ।

अयंवुले–आजीवकोपासकविशेष । भग० ३७० ।

अय–अय॰, लोह॰ । प्रज्ञा० २७ । पृथिवीभेद । आचा० २९ ।

अयआकरो–लोहाकर॰, यत्र लोहं ध्मायते । ठाणा० ४१९ ।

अयकक्करभोई–अजकर्करभोजी, अज॰–छागस्तस्य कर्कर–यच्चनकवत्कक्ष्यमाणं कर्करायते तच्चेह प्रस्तावान्मेदोदन्तुरमतिपक्व वा मास तद्भोजी वा । उत्त० २७४ ।

अयकरए–अजकरक, ग्रहविशेष । ठाणा० ७८ । जं० प्र० ५३४ ।

अयकोट्ठंसि–लोहप्रतापनार्थे कुशूले । भग० ६९७ ।

अयकोट्ठसंठितो–अय.कोष्ठसस्थित, अय कोष्ठ, लोहमय कोष्ठस्तद्वत्सस्थिता । जीवा० १०५ ।

अयगरा–अजगरा, उर परिसर्पभेदविशेषा॰ । प्रज्ञा० ४५ ।

अयगरो–अजगर, उर परिसर्पविशेष । जीवा० ३९ ।

अयगोलो–वालो गिद्धम्मो वा । नि० चू० प्र० ६२ अ ।

अयणं–अयनं, त्रय ऋतव । जीवा० ३४४ । सूर्य० ९१ । अतन–सातत्यभवनप्रवृत्त । विशे० १३४३ ।

अयणाति–अयनानि–ऋतुत्रयमानानि । ठाणा० ८६ ।

अयणे–(अयनं), त्रय ऋतव । भग० ८८८ ।

अयतं–(अजय), अयतनया । ओघ० २१९ ।

अयथार्थम्–पलाशाभिधानवन । आव० ५१ ।

अयमाणे–आददान, प्रवर्त्तमान । सूर्य० १२ । आयान–आगच्छन् । सम० ९४ ।

अयमाणे (अयमीणं)–अददान । जं० प्र० ४८२ ।

अयराइं–अनराणि, सागरोपमाणि । विशे० १०७१ ।

अयरामरं–अजरामरम्, अविद्यमानौ जरमरौ यस्मिन तन । आव० ८१ ।

अयलं–अचल स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाव्यपोहात । जीवा० २५६ । अचल –स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्वभावात निश्चल,। भग० ७ ।

अयलपुरं–अचलपुर, नगरविशेष । उत्त० ९९ । पिंड० १८८ ।

अयलभाया–अचलभ्राता, नवमगणधर । आव० २४० ।

अयले–अचल, प्रथमबलदेव । आव० १५९, १७४ । सम० ८८ । अन्तकृद्दशाना प्रथमवर्गस्य षष्ठाध्ययनम । अन्त० १ ।

अयलो–अचल, उज्जयिन्या वणिग्दारक । उत्त० २१८ । स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्वभावात् । सम० ५ ।

अयवीही–अजवीथी, शुक्रमहाग्रहस्य सप्तमी वीथी । ठाणा० ४६८ ।

अयशःकीर्त्तिनाम–(अजसोकित्तिणाम), यदुदयवशात् मध्यस्थस्यापि जनस्याप्रशस्यो भवति तद् । प्रज्ञा० ४७५ ।

अयशोभयम्–अश्लाघाभयम् । आव० ६४६ ।

अयसि–अतसी, धान्यविशेष । दश० १९३ । भग० ८०२, ८०३ । भङ्गी, धान्यविशेष । भग० २७४ । अतसीपुष्पम् । उत्त० ४६० । कुसुंभिआ । ओघ० १४६ ।

अयसिकुसुमं–अतसीकुसुमम्,। प्रज्ञा० ३६० ।

अयसिवणं–अतसीवनम् । आव० १८६ ।

अयसिवणे–(अतसीवनम्) । भग० ३६ ।

अयसी–औषधिविशेष । प्रज्ञा० ३३ । धान्यविशेष॰ । उत्त० ६५३ ।

अया–द्विखुरविशेष । प्रज्ञा० ४५ ।

अयागरं–अयआकर, यस्मिन् निरन्तरं महामूषास्वयोदलं प्रक्षिप्याऽय उत्पाद्यते सः । जीवा० १२३ । लोहाकर–यत्र लोहं ध्मायते । भग० १९९ ।

अयि–अयि !, कोमलामन्त्रेण प्रयुज्यमान शब्द । दश० ४९ ।

अयोगी–न सन्ति योगा यस्य स, न योगीति वा यो–ऽभावयोगी, शैलेशीकरणव्यवस्थितः । ठाणा० ५० ।

अयोग्य–(अजोग्गो), अनल, अपच्चल । नि० चू० द्वि० २५ आ ।

अयोध्या–दशरथराजधानी । प्रश्न० ८७ । भरतसगरादिचक्रवर्त्तिना नगरी । प्रज्ञा० २०० । कोशला । जं० प्र० १३६ ।

अयोमुहा–अयोमुख, एकादशमान्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० ।

अव्यापारोपेक्षाः–मृतकस्वजनादिभिस्त सत्क्रियमाणमुपेक्षमाणास्तत्रोदासीना । ठाणा० ३५३ ।

अव्याहतपौर्वापर्यम्–वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।

अरंजर–अरञ्जरम्, उदकुम्भो, अलञ्जरम् । ठाणा० २८३, २९८ ।

अरइ–अरति, मोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेग । भग० ८० ।

अरइकम्मं–अरतिकर्म, यदुदयेन तेष्वेवारतिरुत्पद्यते तत् । ठाणा० ४६९ ।

अरइमोहणिज्जं-अरतिमोहनीयम्-यदुदयवशात् पुनर्बाह्याभ्यन्तरेषु वस्तुषु अप्रीतिं करोति तत्। प्रज्ञा० ४६९।
अरइयं-अरतितो जं ण पच्चति। नि० चू० प्र० १८९ अ।
अरई – अरतिः, इष्टाप्राप्तिविनाशोत्थो मानसो विकारः। आचा० १६८। वातादिजनितश्चित्तोद्वेगः। उत्त० ३३८।
अरए-अरजाः, ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। ठाणा० ७९।
अरक्खुरी-आरक्षुरीम्, संवेगोदाहरणे मित्रप्रभस्य प्रत्यन्तनगरम्। आव० ७१०।
अरगंतरं-अरकान्तरम्। आव० ३४४।
अरगाउत्तासिया-आरकोत्तासिता, अरकैरायुक्ता-अभिविधिनाऽन्विता अरकायुक्ता, 'सिय'त्ति स्यात्-भवेत्, अथवाऽऽरकाउत्तासिता-आस्फालिता यस्यां सा। भग० १५४।
अरघट्टघटीनिवहादिः। उत्त० ५९९।
अरजा-अरजपू। जं० प्र० ३५७।
अरणी-काष्ठविशेषः। प्रज्ञा० २९।
अरण्णं-अरण्यम्, काननम्। दश० १४७।
अरण्णवडिंसगं-विमानविशेषः। सम० ३९।
अरण्णानी-अरण्यम्। उत्त० ३८१।
अरति – अरतिः, मोहनीयोदयजश्चित्तविकार उद्वेगलक्षणः। ठाणा० २६।
अरते – अरजा, ब्रह्मलोके विमानप्रथमप्रस्तटनाम। ठाणा० ३६७।
अरय-अरजासि स्वाभाविकरजोरहितत्वात्। सम० १४०।
अरयं-अरतं, रतस्याभावरूप, अरजो-रजसोऽभावरूप। अरस-शृङ्गारादिरसाभावम्। उत्त० ४४८।
अरविंद-अरविन्द, प्रत्येकवनस्पतिविशेष। प्रज्ञा० ३७। जलरुहविशेषः। प्रज्ञा० ३३।
अरसं-अरसम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्, प्रश्न० १०६। प्रश्न० ६३। अविद्यमानाहार्यरसम्। हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमिति। प्रश्न० १६३। असपत्तरसम्। दश० चू० ८३। असम्प्राप्तरसम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्। दश० १८०।
अरसजीवी – अरसेन जीवितुं शीलमाजन्मापि यस्य स। ठाणा० २९६।
अरसमेहं-अरसमेघ, अमनोज्ञमेघ.। भग० ३०६।
अरसाहारे – अरसाहारः, अरस-हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमाहारयतीति, अरसो वाऽऽहारो यस्यासावरसाहार। ठाणा० २९८।
अरसाहिं-प्रहरणविशेषैः। उत्त० ४६०।
अरसिया-अर्शांसि। उत्त० १२१।
अरसेहि-अविद्यमानरसैः। भग० ४८४।
अरसो-अरसः, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृत। औप० ४०।
अरहंत-अर्हन्तः, अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपा पूजामर्हन्तीति। दश० ६२।
अरहंतघरं-अर्हद्गृहम्। आव० २९५।
अरहंता –अर्हन्, अमरवरविनिर्मिताशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हतीति। भग० ३। अरहोऽन्त –अविद्यमानं रह -एकान्तदेशोऽन्तो–मध्यं गिरिगुहादीना सर्ववेदितया येषां ते। भग० ३। अरथान्त -अविद्यमानो रथ –स्यन्दन. सकलपरिग्रहोपलक्षणभूत अन्त –विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषा ते। भग० ३। अरहन्तः–क्वचिदप्यासक्तिमगच्छन्त। भग० ३। अरहयन्–प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसम्पर्केऽपि वीतरागत्वादिकं स्वं स्वभावमत्यजन्। भग० ३। अर्हा –अर्हन्त। आव० ४०६। प्रज्ञा० ५५। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिपूजामर्हतीति तीर्थकर। आव० ४८। अर्हत्ता। ठाणा० ३३२।
अरहंतुवएसो-अर्हदुपदेश, आगम। आव० ४५१।
अरह–अर्हन, अष्टविधमहाप्रातिहार्यरूपपूजायोगात् ठाणा० ४६५। अर्ह –पूजार्ह। भग० ६७।
अरहट्टं-अरघटिक। (आउ०)।
अरहट्टो-अरघट्टः। ओघ० १५८।
अरहण्णए-मुनिविशेष। (मर०)।
अरहण्णओ-अर्हन्नक, ईर्यासमितौ यस्य देवतया पादच्छिन्न। आव० ६१६।
अरहण्णग – तगरायामुग्णाभिहत (मर०)। अर्हन्नक, सद्व्यवहारकाचार्य। व्य० प्र० २५६ आ।
अरहदत्ता – अर्हद्दत्ता, अप्रतिहतराजकुमारमहाचन्द्रभार्या। विपा० ९५।
अरहन्नओ-अर्हन्नक। आव० ३८८। उत्त० ९०।
अरहन्नग-अर्हन्नक, मुनिविशेष। बृ० द्वि० ४९ अ।
अरहमित्तो-अर्हन्मित्र, आत्मदोषोपसंहारविषये द्वारवत्यां श्रेष्ठिविशेष। आव० ७१४। अर्हन्मित्र। आव० ३८८।

अरहया–अर्हत्ता, तीर्थकरता। आव० २३५।

अरहस्सं – अतीवरहस्यभूतं छेदशास्त्रार्थतत्त्वम्। बृ० तृ० २६५ आ।

अरहसिज्जा–अर्हच्छय्या, अर्हद्भवनम्। व्य० प्र० २५ आ।

अरहा–देवादिकृतां पूजामर्हन्तीति अर्हन्त, अरहस· अथवा नास्ति रह·–प्रच्छन्नं किञ्चिदपि येषां प्रत्यक्षज्ञानित्वात्ते। ठाणा० १७४। जिन। सम० १५३। अर्हन्–पूजामर्हतीति। अरहा, नास्य रहस्यं विद्यत इति वा। उत्त० २५७।

अरहितं–समपादेनेक्षणं लेष्टुकारोहेण वा साधुसाध्व्यो परस्परं दृष्टिबन्धो वा। बृ० द्वि० १४ अ।

अरातिः–व्याधि। विशे० ७७९।

अरायाणि–अराजानि, यत्र राजा मृत। आचा० ३७८।

अरि–अरि, सामान्यत शत्रुः। ज० प्र० १२०।

अरिक्को–अरिक्त.। ओघ० १९९।

अरिट्ठ–अरिष्ठ, पिचुमन्द. वृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३१।

अरिट्ठनेमि–अरिष्टनेमि। आव० २७३, ५१५। दश० ३६, ९६। तीर्थंकरविशेष। बृ० प्र० ३० आ। अन्त० २, ५। समुद्रविजयसुत। उत्त० ४८९। समुद्रविजयस्य प्रथम पुत्र। उत्त० ४९६।

अरिट्ठयं–अरिष्टक, फलविशेष। प्रज्ञा० ३६०।

अरिट्ठा–मुद्गरगोत्रस्य नामविशेष। ठाणा० ३९०।

अरिट्ठे–धर्मजिनप्रथमशिष्य। सम० १५२।

अरिणो–अरय, इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गरूपा। आव० ८०३।

अरिदमन–अरिदमणो, अभयप्रदानप्राधान्ये वसन्तपुरे राजा। सूत्र० १५०।

अरिमर्दन–सवासदृष्टान्ते वसन्तपुरे राजा। पिंड० ४८।

अरिष्टनगरम्–राममातुलहिरण्यनाभराजधानी। प्रश्न० ८८।

अरिष्टपुरम्–रुधिरराजधानी। प्रश्न० ९०।

अरिस–अर्शांसि, रोगविशेष। विपा० ४०। नि० चू० प्र० १८९ अ। नि० चू० द्वि० ६२ आ। अर्श, गुदाङ्कुर। ज० प्र० १२५।

अरिहंत–अर्हन्त, अरुहन्त.–न रुहन्तीति। दश० ७९। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपा पूजामर्हन्तीति अर्हन्त – शान्तार। आव० ११९।

अरिहंतचेइय–अर्हच्चैत्यम्, तीर्थकरप्रतिमा। आव० ७८६।

अरिहंता–अरिहन्ता, कर्मारिविनाशक.। भग० ३। कर्मारि–हन्ता। भग० ३। अरिहन्तार·, इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गशम(नाश)का·। आव० ४०६। अरिहन्तार, रजोहन्तार·। आव० ४०६।

अरिहमित्तो–अर्हन्मित्र। उत्त० ९०।

अरिहा–अर्हाः। आव० ३८७।

अरिहो–अर्ह, अर्घ। प्रश्न० ७६।

अरी–अरि·, शत्रु। जीवा० २८०।

अरुअ–अरु, व्रणं। बृ० द्वि० ११ आ। अरु.–व्रणं। बृ० तृ० २०८ आ।

अरुगं–अरुक, व्रण·। बृ० द्वि० २५४ अ।

अरुज्झंते–अरुध्यमाणे–एतस्मिन् पात्रके। ओघ० १४५।

अरुण–अरुण, नन्दीश्वरसमुद्रानन्तरं द्वीप·, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। सप्तमहाकुण्डेषु प्रथमभेद। आचा० २३५।

अरुणुत्तरवडिंसगं–ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेष। सम० १४।

अरुणप्पभ–शीतलनाथदीक्षाशिबिका। सम० १५१।

अरुणप्पभो–अरुणप्रभ·, चतुर्थोऽनुवेलन्धरनागराज. तस्यैवावासपर्वतश्च। जीवा० ३१३। ठाणा० २२६।

अरुणमहावरो–अरुणमहावर., अरुणवरोदे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव.। जीवा० ३६७।

अरुणवर–अरुणवर, अरुणसमुद्रानन्तर द्वीप, तदनन्तर समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। द्वीपविशेष·। ठाणा० २१७।

अरुणवरभद्दो–अरुणवरभद्र, अरुणवरद्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव.। जीवा० ३६७।

अरुणवरमहाभद्दो–अरुणवरमहाभद्र, अरुणवरद्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासः–अरुणवरसमुद्रानन्तरं द्वीप. तदनन्तर समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७।

अरुणवरावभासभद्दो–अरुणवरावभासभद्र, अरुणवरावभासद्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासमहाभद्दो – अरुणवरावभासमहाभद्र·, अरुणवरावभासद्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव.। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासवरो – अरुणवरावभासवर, अरुणवरावभाससमुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६७।

अरुणवरावभासो – अरुणवरावभास॰, अरुणवरोदसमुद्रसत्को द्वीप । जीवा० ३६७।

अरुणवरो–अरुणवर , अरुणोदसमुद्रसत्को द्वीप.। जीवा० ३६७। अरुणवरोदे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।

अरुणवरोप – अरुणवरोद., अरुणवरद्वीपसत्क. समुद्र । जीवा० ३६७।

अरुणा–शिखरिपर्वतवासिदेवनाम। ठाणा० ८०।

अरुणाभं–ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेष । सम० १४।

अरुणाभे–अरुणाभ॰, राह्वप्रलापीमते कृष्णपुद्गलविशेष । सूर्य० २८७। सौधर्मकल्पे विमान.। भग० ५५१।

अरुणावभासो – अरुणावभास॰, अरुणावभासद्वीपसत्क समुद्र । जीवा० ३६७।

अरुणे–ग्रहविशेष.। ठाणा० ७९।

अरुणो–अरुण – लोकान्तिकदेवविशेष । आव० १३५। महाकुष्ठस्य प्रथमो भेद । प्रश्न० १६१। ग्रहविशेष॰। जं० प्र० ५३५। द्वीपविशेष., यो देवप्रभया पर्वतादिगतवज्ररत्नप्रभया चारुण इति। जीवा० ३६७। देव । जं० प्र० ३०५।

अरुणोए–अरुणोद , अरुणद्वीपसत्क समुद्र॰, सुभद्रसुमनोभद्रदेवाभरणद्युत्याऽरुणम्–आरक्तमुदक यस्यासौ। जीवा० ३६७।

अरुणोदए–अरुणोदक अन्धकार, तमस्कायस्य नामं। भग० २७०।

अरुणोद–समुद्रविशेष । ठाणा० २१७।

अरुणोपपात–सूत्रविशेष । बृ० प्र० ६२ आ।

अरुणोववाते–अरुणोपपात, इहारुणो नामदेवस्तत्समयनिबद्धो ग्रन्थस्तदुपपातहेतु , अध्ययननाम। ठाणा० ५१३।

अरुयं – अरुक्, अविद्यमानरोग । भग० ९। अरु – व्रण । सूत्र० ९२। अरुजं, शरीरमनसोरभावेनाधिव्याधिरहितम्। जीवा० २५६। अरुजम्–अविद्यमानरोग शरीरमनसोरभावात। सम० ५।

अरुयं–अरु । आव० ८२०।

अरुह–न रुहोऽरुह अपुनर्भावी। आचा० २३१।

अरुहंत–अरोहन , क्षीणकर्मबीजत्वादनुपजायमान । भग० ३। अरोहन , अनुपजायमान॰ क्षीणकर्मबीजत्वात। भग० ३।

अरुहय–अर्हता। विशे० ८६१।

अरूविणः–अमूर्ता । ठाणा० १९६।

अरूवी–अरूपि, अमूर्तम्। भग० १५०।

अरेण–आरत॰। आव० २८५।

अरो–अर , तीर्थकृच्चक्रवर्त्तिविशेष.। उत्त० ४४८। सप्तमचक्रवर्त्ती। आव० १५९। सम० १५२। सर्वोत्तमे कुले वृद्धिकरो जायतेऽत , अष्टादशो जिन॰, यस्मिन् गर्भगते माता स्वप्ने सर्वरत्नमयोऽतिसुन्दरोऽतिप्रमाणश्चारको दृष्टोऽत । आव० ५०५।

अरोगी–अरोगी–रोगविप्रमुक्त । दश० २०५।

अरोस–अरोष , चिलातदेशनिवासी म्लेच्छविशेष । प्रश्न० १४।

अर्कतूलम्–उत्त० ६७७। प्रज्ञा० १०।

अर्गलम्–अधिकम्। उत्त० ६६०।

अर्गलपाशका–अग्गलपासगाणि, यत्रार्गलाऽग्राणि निक्षिपन्ते। आचा० ३३७।

अर्गला–(अग्गल), उपकरणभेद.। आचा० ६०। परिघ । उत्त० ३११।

अर्घति–(अग्घइ), अर्हति। उत्त० ३१६।

अर्चा – (अच्चे) लेश्या, शरीर, क्रोधाद्यध्यवसायात्मिका ज्वाला। आचा० २८४।

अर्चि–(अच्ची), अच्छिन्नमूल । ठाणा० ३३६। अर्चि – मूलप्रतिबद्धा ज्वलनशिखा। उत्त० ६९४।

अर्चिषा–(अच्चीए), शरीरनिर्गततेजोज्वाला। ठाणा० ४२१।

अर्जितदुःखा–अर्जित–उपार्जित दु ख यैस्ते। उत्त० २६३।

अर्जुन–तृणविशेष । प्रज्ञा० ३०। उत्त० ६९२। जीवा० २६। जं० प्र० १३।

अर्जुनसुवर्णकम्–(अज्जुणसुवन्नग), अर्जुन–शुक्ल तच्च तत्सुवर्णकम्। उत्त० ६८५।

अर्जुनसुवर्णमयी–सर्वात्मना कनकमयी। जं० प्र० ३७३।

अर्त्तिः–(अट्ट), शारीरमानसी पीडा तत्र भवा। आचा० १३९।

अर्थ–अर्यते–गम्यते, परिच्छिद्यत इति। आव० १० आ। आव० ६०४। सिद्धशब्दपर्याय । ठाणा० २५।

अर्थम्–निमित्तम्। उत्त० ४७३।

अर्थकर–(अट्ठकर), मन्त्री, नैमित्तिक.। ठाणा० २४१।

अर्थजाता–(अट्ठजाय) अर्थ –कार्यमुत्पन्नाजनन स्वकीयपरिणेत्रादेर्जात यया सा, पतिचौरादिना संयमाच्च्याव्यमानेत्यर्थमन्ता वा। ठाणा० ३२९।

अर्थदण्डः-(अट्ठादंडे), दण्डयतेऽऽत्माऽन्यो वा प्राणी येन स दण्ड.। ठाणा० ३१६ ।
अर्थधर्माभ्यासानपेतम्-वाण्यतिशयविशेष । सम० ६३ ।
अर्थनिर्यापणा – अर्थस्य पूर्वापरसाङ्गत्येन गमनिकेत्यर्थ· । ठाणा० ४२३ । अर्थ –सूत्राभिधेय वस्तु तस्य निरिति–भृश यापना–निर्वाहणा पूर्वापरसाङ्गत्येन स्वय ज्ञानतोऽन्येषा च कथनतो निर्गमना । उत्त० ३९ ।
अर्थपदम् । भग० २०२।
अर्थपदानि–(अट्ठपदा) अर्थप्रधानानि पदानि। उत्त० ३४१ ।
अर्थशास्त्रं–धनुर्वेदादि । बृ० प्र० १३० आ ।
अर्थाख्या – पुनरभिनिवेशतोऽन्यथा प्ररूपणादिलक्षणया । सम० १३२ ।
अर्थात्-(अट्ठ), निमित्तात् । उत्त० ४९१ ।
अर्थाधिकारः-(अत्थाहिगारो), शास्त्रीयोपक्रमस्य पञ्चमभेद । आचा० ३ । ठाणा० ४। वक्तव्यताविशेष एव, स चैकत्वविशिष्टात्मादिपदार्थप्ररूपणलक्षण इति । ठाणा० ५। आव० ५६ । अध्ययनसमुदायार्थ· । आव० ५८ ।
अर्थान्तराभिधानम् – गामश्वमित्याद्यन्यार्थप्रतिपादनम् । आव० ५८८ ।
अर्थान्तरोक्ति–मृषावादविशेष । ठाणा० २९० ।
अर्द्धवितर्दी–विहुला। जं० प्र० १७० ।
अर्द्धचन्द्र–अद्धचद । सम० ३०, १३९ ।
अर्द्धतृतीया–अर्द्ध तृतीयं येषा ते। प्रज्ञा० ४७।
अर्द्धपेटा–यस्या तु साधु क्षेत्रं पेटावच्चतुरस्रं विभज्य मध्यवर्तीनि गृहाणि मुक्त्वा चतसृष्वपि दिक्षु समश्रेण्या भिक्षामटति सा पेटा, एवमेव, नवरमर्द्धपेटामदृशसस्थानयोर्दिग्द्वयमम्बद्धयोर्गृहश्रेण्योरत्र पर्यटति । बृ० प्र० २५७ अ ।
अर्द्धभारम्–पलमहस्रात्मकम्। ज० प्र० २५३ ।
अर्द्धमागधभाषा–भाषाविशेष । ज० प्र० १४।
अर्द्धासन्यासम्–उत्तरासगरूपम्। बृ० प्र० १२५ अ।
अर्धापक्रान्ति – (अड्ढापक्कतीए), एतदेवार्धापक्रान्त्या शिशिरे कुर्वन्ति, तत्रार्धस्यासमप्रविभागरूपस्यैकदेशस्य वैकादिपदात्मकस्यापक्रमणमवस्थानम् , शेषस्य तु द्व्यादिपदसङ्घातरूपस्यैकदेशस्योर्ध्वं गमन यस्या रचनाया सा समयपरिभाषया अर्धापक्रान्तिरुच्यते । विशे० ५१८ ।

अर्वाक्–अधः। आव० ८२७।
अर्हन्–सातिशयरूपसम्पत्समन्वित. । आचा० ४१२ ।
अलं–अलम् , अत्यर्थम्। दश० २३८ ।
अलंकार–अलंकार· । नि० चू० प्र० २७६ आ । अलङ्कारान् , वस्त्रादीन्। जं० प्र० १४५ । आव० १८२ ।
अलंकारियसभा–अलङ्कारसभा । जीवा० २३६ । अलङ्कारभवनविमानभाविनी सभा । प्रश्न० १३५ ।
अलंकारित–अलङ्कारिका, यस्यामलङ्क्रियते। ठाणा० २५२।
अलंकियं–अलङ्कृतम् , उपमादिभिरूपेतम् । सूत्रगुणविशेष । आव० ३७६ । अन्योऽन्यस्फुटशुभस्वरविशेषाणा करणात् । जं० प्र० ४० । मुकुटादिभिर्विभूषितम् । भग० ११९ । काव्यालङ्कारयुक्तम् । ठाणा० ३९७ । अन्यान्यस्वरविशेषाणा स्फुटशुभाना करणात्। ठाणा० ३९६ । अलंकृतं । जं० प्र० ४२० ।
अलंगारो–अलङ्कार , आभरणम् । जीवा० २४५ ।
अलंदं । नि० चू० द्वि० ९१ आ ।
अलंदकं–वंसीमूलम्। बृ० द्वि० १७९ अ ।
अलंबुसा–अलम्बुषा, उत्तररुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२ । उत्तररुचकवास्तव्या प्रथमा दिक्कुमारी महत्तरिका । जं० प्र० ३९१ ।
अलकम्–ललाटम्। जीवा० २७३ ।
अलकापुरी–अलकापुरी, लौकिकशास्त्रे धनदपुरी । जं० प्र० १८१ । वैश्रमणयक्षपुरी । अन्त० १ ।
अलका–सविषश्वा । (भक्त०)।
अलक्खं–अलक्षम् , गुप्तम् । आव० ४२१ ।
अलक्खणया – अलक्षणता–असमञ्जसा, अभिधायिता । विशे० २०५ ।
अलक्खे–अलक्ष्य , वाणारस्या राजा। अन्त० २५ । अन्तकृद्दशाना षष्ठमवर्गस्य षोडशाध्ययनम् । अन्त० १८ ।
अलत्त–अलक्तक । उत्त० ६५३ ।
अलत्तगपहो – जमेत्त अलत्तगेण पादो रज्जति तंमेत्तो कद्दमो जमि पहे सो अलत्तगपहो । नि० चू० ७९आ ।
अलत्तगा–रंगविशेष । नि० चू० प्र० १८८ अ ।
अलब्धमध्यमः–गम्भीर । उत्त० ५५४ ।
अलमंथु–समयभाषया समर्थोऽभिधीयते। ठाणा० २१६ ।
अलमत्थु–अलमस्तु, पर्याप्तं भवतु। भग० ६७। निषेधो भवतु, निषेधक । ठाणा० २१६ ।

अलल्ल-अलल्ला, व्यक्ता भाषा। दश० २३५।
अलवो-अलप, मौनव्रतिको निष्ठितयोग, गुडिकादियुक्तो वा। सूत्र० ३९३।
अलसंडविसयवासी-अलसण्डविषयवासिन॰, म्लेच्छविशेषा॰। जं० प्र० २२०।
अलस-अलस, अन्येन सह प्रभूतं पर्यटितुमसमर्थः। ओघ० १५०। गण्डूलकः। प्रश्न० २४।
अलसगे-हस्तपादादिस्तम्भ. श्वयथुर्वा। आवा० ३६२।
अलसा-अलसा॰, प्रयत्नरहिता। ओघ० २२२। द्वीन्द्रियजीवभेद.। उत्त० ६९५।
अलाउ-अलाबु, अलाबुतुम्बयोर्लम्बरवृत्तत्वकृतभेद.। जं० प्र० २४४। अलातं-उल्मुकम्। ओघ० १७।
अलाउय-अलाबुकं। आचा० ४००।
अलाते-अलातम्, उल्मुकम्। जीवा० २९, १०७। प्रज्ञा० २९। ओघ० १७। ठाणा० ३३६। दश० १६९।
अलातद्रव्यम् - वक्रतयाऽवभासमानमेकान्तवाद्यभ्युपगतं वा वस्तु। ठाणा० ४८२।
अलावुकं। ओघ० १४५।
अलाभ-अलाभ॰, याचितभिक्षाद्यलाभ., पञ्चदश परीषह। आव० ६५७। अभिलषितविषयाप्राप्तिः। उत्त० ८३।
अलायं-अलातम्, उल्मुकम्। उत्त० ८३। दश० २२८, १५४।
अलायचक्कं-अलातचक्रं, कालभेदेन दिक्षु भ्रमत्। विशे० ९७५।
अलाहि-अलम्। आव० ११६, ७०२। भग० ४७०। ओघ० १५९।
अलिंजरम्-कूप्यम्। दश० २६०।
अलिंद-कुण्डकम्। ओघ० १६६।
अलिंदट्ठिओ-अलिन्दकस्थित.। उत्त० ३५५।
अलिंदाति। नि० चू० प्र० १६२ अ।
अलिंदेण-अलिन्देन-कुण्डकेन। ओघ० १६७।
अलिंदो-दोषविशेष। बृ० द्वि० ६२ अ। नट इव। व्य० प्र० १६४ अ।
अलिए-अलीकम्, भूतनिह्नवरूपं, असत्यं वा। भग० २३२।
अलित्तय-अलित्रम्। आचा० ३३।
अलिय-अलीकं, मृषावाद॰। प्रश्न० ९५। मिथ्या, अधर्मद्वारस्य प्रथम नाम। प्रश्न० २६। सद्भूतार्थनिह्नवरूपम्। प्रश्न० १२१। अनृतं-अभूतोद्भावनं भूतनिह्नवश्च, सूत्रदोषविशेष। आव० ३७४। विशे० ४६४। शुभफलापेक्षया निष्फल। प्रश्न० २७।
अलियवयणे-अलीकवचनम्। ठाणा० ३७०।
अलिया-अलिका, पक्षिविशेष॰। अनुत्त० ४।
अलियाण-अलीकाज्ञ, अलीका आज्ञा-आगमो यस्य स। प्रश्न० ४०।
अलिसिंदा-चवलगारा। नि० चू० प्र० १४८ आ।
अलुद्धो-अलुब्ध.। आव० ८५९।
अलेप-म्रक्षणेन सर्पिषा-घृतेन वसया च निर्वृत्तो लेपोऽलेपो ज्ञातव्य। बृ० प्रं० ८२ आ।
अलेभडो-अस्थिर॰, अनाहार। आव० २१२।
अलोए-अलोक.-केवलाकाशरूप। औप० ७९।
अलोला-इंदियविसयणिग्गहकारी, एसणं ण पेल्लेति। नि० चू० प्र० ३३२ आ।
अलोलुओ-अप्पडिवद्धो। दश० चू० १४०।
अलोहे-अलोभ, योगसङ्ग्रहेऽष्टमो योग.। आव० ६६४। स्वल्पलोभ.। जं० प्र० १४८।
अलौकिकत्वम्-असाधारणम्। दश० १६७।
अल्पगृहभिक्षादः। आचा० ३३६।
अल्पझञ्झ-अविद्यमानवाक्कलह। उत्त० ५८९।
अल्पपरिकर्माणि-यानि क्वचिन्मनाक् तूर्णितानि। ओघ० १३२।
अल्पलेपा-चतुर्थी पिण्डैषणा। आचा० ३५७।
अल्पार्थके- ठाणा० ३३०।
अल्लइ-वृक्षविशेष। भग० ८०३।
अल्लइकुसुमं-अल्लकीकुसुमम्, लोके प्रतीतम्। प्रज्ञा० ३६१। जं० प्र० ३८।
अल्लगं-आर्द्रकम्, कन्दविशेष। आव० ८२८। आर्द्र आर्द्रकं च। आव० ८२८।
अल्लचम्मे। नि० चू० प्र० १९० अ।
अल्लपल्लो-अली, वृश्चिकपुच्छाकृति। विपा० ७१।
अल्लय-आर्द्र (स०)
अल्लिउं-अभिद्रोतुम्, आश्रयितुं वा। आव० ४३७।

अल्लिए–आश्रयेत्। (गणि०)
अल्लितो–अर्पित । आव० ४३४।
अल्लियंतुं–उपसर्प्तुम्। आव० ६५।
अल्लियंतो–आश्रयन्। आव० ४००।
अल्लियइ–आश्रयति। आव० ६९५।
अल्लियउ–अलगीत्। आव० १११।
अल्लियस्सह–आश्रयत। उत्त० ३९६।
अल्लियह – आलीयेताम्– आश्रयताम्। उत्त० ३९४। ओघ० १५९।
अल्लियावं–प्रवेशम्। आव० ३४१।
अल्लियावणबंधे–अल्लियावणं-द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिना-ऽऽलीनस्य यत्करणं तद्रूपो यो वन्ध स। भग० ३९५।
अल्लियावो–प्रवेश., आश्रयणम्। उत्त० १४५।
अल्लिविओ–अर्पित । आव० ४२१।
अल्लिवेई–अर्पयति, ददाति। आव० ५६०।
अल्लीणं–आलीनम्, सुश्लिष्टम्। जं० प्र० ५२९। आलीन – मस्तकभित्तौ किञ्चिल्लग्नौ न तु टप्परौ। जं० प्र० ११३। मनोवाक्कायगुप्तावाश्रितौ वा, यद्वा अलीनौ–पृथगवस्थानेन परस्परमश्लिष्टौ। उत्त० ४९९। गुरुजनमाश्रित। अनुशासनेऽपि न गुरुषु द्वेषमापद्यन्ते, अथवा आ–समन्तात्सर्वासु क्रियासु लीना–गुप्ता नोल्वणचेष्टाकारिण । जं० प्र० ११७। जीवा० २७८। गुरुमाश्रित । औप० ८८। इषल्लीन.। आव० १९७। आलीन । आव० ६३। आश्रित (आउ०)। आ–समन्तात् लीना आलीना। व्य० द्वि० ४४० आ।
अल्लेसेहिं–अश्लेषै । आव० ६३।
अवं–(अवाङ्), अधस्तात्। आचा० ६३।
अवंगाओ–अपाङ्गा, नयनप्रान्तम्। ज० प्र० ५२।
अवंगुअ–अप्रावृतम्। नि० चू० प्र० २०४ अ।
अवंगुदुवारे – अप्रावृतद्वार –कपाटादिभिरस्थगितगृहद्वार । औप० १००।
अवंगुय–अप्रावृतम्, न स्थगयति। वृ० द्वि० २५ आ, १६४ अ।
अवंगुतमि–उद्घाटिते। वृ० द्वि० २५० आ।
अवंगुयदुवारो–अप्रावृतद्वार, अप्रावृतं द्वारं येन स, उद्घाटितद्वार । सूत्र० ३३५।
अवंगो–अपाङ्ग, नयनोपान्तम्। जीवा० २०६।
अवंझ–अवन्ध्यं, एकादशपूर्वनाम। ठाणा० १९९।
अवंझपुव्वं–अवन्ध्यपूर्वं–यत्र सम्यग्ज्ञानादयोऽवंध्या–सफला वर्ण्यन्ते तत्, एकादशपूर्वनाम। सम० २६।
अवंतिवद्धण–अवन्तीवर्धन., अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतात्मजपालकसुतः। आव० ६९९।
अवंतिसुकुमार–प्राणिन आहारविमोचने दृष्टांत । आचा० २९१।
अवंतिसुकुमालो–अवन्तिसुकुमाल, योगसङ्ग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते उज्जयिन्या सुभद्रापुत्र । आव० ६७०। वशकुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभक्षितः (भक्त०)।
अवंतिसेण – अवन्तीषेण, अज्ञातोदाहरणे धारिणीपुत्र.। आव० ६९९।
अवंती – देशविशेष । बृ० तृ० २१८ अ। उत्त० ४९।
अवंतीजणवए – अवन्तीजनपद, देशविशेष. । आव० २८९। उत्त० ४९। नि० चू० प्र० ६४ आ।
अवंतीजणवय–देशविशेष । व्य० प्र० १४९ आ।
अवंतीसुकुमार–नामविशेष, उदाहरणविशेष.। बृ० द्वि० २२४ अ।
अवंतीसुकुमालो–वंशकुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभक्षित (भक्त०)
अवंतीसुत–शृगालीभक्षितो मुनिः। (सं०)
अवंतीसोमालो। नि० चू० प्र० १३७ आ।
अव–अपृथक्त्वम्। आव० २७८। अध। प्रज्ञा० ५२६। उत्त० ५५७। मर्यादया एतावत्क्षेत्र पश्यन। विशे० ५४।
अवइद्धो – अपविद्ध, तोमरादिना सम्यग्विद्ध । प्रश्न० ४९।
अवइन्नगो–अवकीर्णक । आव० ७१८।
अवउज्झिअ–अधोऽवनम्य। आचा० ३४४।
अवउज्झत्ति–परित्यज्यते। आव० ७६५।
अवउज्झियथोवमाहारो – उज्झितस्तोकाहार, उज्झितधर्मा स्तोक –स्वल्प आहारो यस्य स । आव० ५६८।
अवउडगं – अवकोटनम्, ग्रीवाया पश्चादभागनयनम्। विपा० ५३। अवकोटक, कृकाटिकाया अधोनयनम् । विपा० ४७।

अवप-अवकम्, अनन्तजीववनस्पतिभेद । आचा० ५९ । जलरुहविशेष । प्रज्ञा० ३१, ३३ । साधारणवादरवनस्पतिकायविशेष । जीवा० २६ । प्रज्ञा० ३४ । साधारणवनस्पतिविशेष । प्रज्ञा० ४० ।

अवपडए-तापिकाहस्तकान् । भग० ५४८ ।

अवओडयबंधणयं - अवमोटनतोऽवकोटनतो, वा पृष्ठदेशे बाहुशिरसा संयमनेन, बन्धनं यस्य स । अन्त० १९ ।

अवकंखइ - अवकाङ्क्षति, अपेक्षते, अनुकम्पते । भग० १०२ ।

अवकरिसो-अपकर्षः-अभाव । प्रश्न० ६२ ।

अवकारं-अपकरणम्, अङ्गारोपरिक्षेपः । प्रश्न० ४० ।

अवकिण्णतो-अवकीर्णक, करकण्डो प्रथमं नाम । उत्त० ३०१ ।

अवकिरति-उत्सृजति । आव० ७७१ ।

अवकिरियव्वं-अवकरणीयम्, विक्षेपणीयम्, त्याज्यम् । प्रश्न० ९६ ।

अवकुंडिय-अवगाढ-व्याप्त । (मर०)

अवकुज्जियं-उट्टाए तिरियहुत्तकरण । नि० चू० तृ० ५९ अ ।

अवकोडकबंधणं-अवकोटकवन्धनम्, बाहुशिरसा पृष्ठदेशबन्धनम् । प्रश्न० १४ ।

अवकोडयं-अवकोटकम्, कोटाया-ग्रीवाया अधोनयनम् । प्रश्न० ५६ ।

अवक्कंत-अपक्रान्त, सर्वशुभभावेभ्योऽपगत -भ्रष्ट, अपक्रान्त-अकमनीय । ठाणा० ३६६ । आव० ५०४ । अवक्रान्त -अवस्थित । उत्त० १५६ ।

अवक्कमइ-अपक्रामति, च्यवते । जीवा० ११० । गच्छति । जीवा० २४३, ३०६, ३२२, ४०० । अपक्रामति । आव० १९६ । अपक्राम्यति । उत्त० १५७ ।

अवक्कमिज्जा-अपक्रामेद-गच्छेत् । आचा० ३८५ ।

अवक्कमित्ता-अवक्रम्य, गत्वा । दश० १७८ ।

अवक्कमेज्ज - अपक्रामेत्, अपसर्पेत, उत्तमगुणस्थानकाद् हीनतरं गच्छेदित्यर्थः । भग० ६४ ।

अवक्कासे-अपकर्षणं, अवकर्षणं, अप्रकाशो वा । भग० ५७२ । अपकर्ष । सम० ७१ ।

अवक्कियं-असक्त । दश० चू० ११३ ।

अवक्कम्य-विनिर्गत्य । व्य० प्र० १४६ आ ।

अवक्खारणं-अपक्षारणम्, अपशब्दं क्षारायमाणं वचनं, अपक्षकरणम्-सानिध्याकरणम् । प्रश्न० ४१ ।

अवक्खित्तो-आक्षिप्त । उत्त० ११७ ।

अवगति-बुद्धि । उत्त० ३९२ ।

अवगम-सञ्ज्ञा । आचा० १२ ।

अवगाढ-अवस्थिताः । ठाणा० ५१४ ।

अवगाढगाढ - गाढावगाढम्, अतिगाढम्, प्राकृतत्वादेवं रूपम् । भग० ३७ ।

अवगाढा-आश्रिता । ठाणा० ५२७ ।

अवगाढाअवगाढं - अवगाढावगाढम्-अत्यन्तव्याप्तिदर्शनम् । भग० १५३ ।

अवगायति-परिभवति । आचा० १०६ ।

अवगासो-अवकाश, यद्यस्योत्पत्तिस्थानम् । सूत्र० ३५० । अवस्थानम् । विशे० ७७१ । गमनादिचेष्टास्थानम् । आव० ८३५ । अवस्थानमवतारो । ठाणा० २३७ । यहूना विवक्षितद्रव्याणामवस्थानयोग्य क्षेत्रम् । भग० ६०५ ।

अवगाहणा-आश्रयभाव । भग० ६०९ । अवस्थानरूपा । विशे० ८६२ ।

अवगीत-वाङ्मात्रेणापि केनचिदप्यननुवर्त्यमानः । आचा० १०६ ।

अवगीतम्-निन्दितम् । भग० ११ ।

अवगुणंति-अपावृण्वन्ति । भग० ६८३ ।

अवगूहितो-अवगूहित । आव० ३४४ ।

अवगुण्ठ्यते-लिप्यते । आचा० १४७ ।

अवग्गहो-अवग्रह, अव इति-प्रथमतो, ग्रहणं-परिच्छेदनम् । ठाणा० २८३ । अवष्टम्भ । ओघ० २११ । सामान्यार्थस्याशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणम् । आव० ९ ।

अवग्रह-ओगाह, अव्यक्त यथास्वमिन्द्रियैर्विषयाणामालोचनावधारणा । तत्त्वा० १-१५ ।

अवग्रहावधि-कारणे आपन्ने सयमार्थ यो गृह्यते । ओघ० २०८ ।

अवघाटनप्रायश्चित्तं-शेषप्रायश्चित्तानि शोधयति । व्य० प्र० ९३ आ ।

अवघाडो । नि० चू० प्र० १२६ अ ।

अवच-जघन्य । सूत्र० १९० ।

अवचए-अपचय, ह्रास, शरीरेभ्य पुद्गलाना विचटनम्। प्रज्ञा० ४३२। देशतोऽपगम। भग० ५४०।

अवचयो-अपचय-हीनत्वम्। सूर्य० १६।

अवचनम्-त्रिविधवचनप्रतिषेध। ठाणा० १४१।

अवचुल्लकम्। बृ० प्र० २९८ आ।

अवचूल-अवचूलम्। भग० ३१८।

अवच्चलेणसारक्खणा-अपत्यलयनसरक्षणा। आव० ४०५।

अवच्चे-अपत्ये। आव० १९९।

अवच्छेए-अवच्छेद, देश। ठाणा० २०५।

अवजाते-अपजात-अप-हीन, जातोऽपजात, पितु सकाशादीपद्धीनगुण। ठाणा० १८४।

अवज्जं-अवद्यम्, पापं। विशे० १३१७। आव० ३६४।

अवज्जपडिच्छन्नो-अवद्यप्रतिच्छन्न, पापप्रच्छादित। आव० ५३७।

अवज्जभीरू-अवद्यभीरु, साधु। ओघ० २२४।

अवज्जुत्तं-पृथग्भूतम्। आव० ७५८।

अवज्झा-अवध्या, गन्धिलविजयराजधानी। ज० प्र० ३५७।

अवज्झाओ। ठाणा० ८०।

अवज्झाणायरिए-अपध्यानाचरित, अप्रशस्तध्यानाचरित। आव० ८३०।

अवट्ठिए-अवस्थित, नित्य। भग० ७६०। एवमुभयरूपतया। ठाणा० ३३३। निश्चलत्वात्। ठाणा० ३३३। अवस्थितानि-शाश्वतानि। ठाणा० १४६। अवधे पञ्चमभेद। प्रज्ञा० ५४३। आव० २८।

अवट्ठिय-अवस्थित, स्थितम्। भग० ११९। अवर्द्धिष्णु। जीवा० २७२। अवस्थिता-स्वप्रमाणावस्थिता। जीवा० ९९। स्वप्रमाणेऽवस्थिता मानुषोत्तरपर्वताद्बहि समुद्रवत्। ज० प्र० २७।

अवट्ठिया कप्पा-अवस्थिता कल्पा-सामायिकमाधूनामवश्यंभ त्रिन। ठाणा० ३७४।

अवडिंसगभूयं-अवतसकभूतम्, शेखरकल्पम्, प्रधानमित्यर्थ। प्रश्न० १३७।

अवडेंसग-अवतसक, शेखरक। भग० ३२२।

अवड्डं-कृकाटिकाम्। भग० ६७९।

अवड्ढं-अपार्द्धम्, अर्धमात्रम्। सूर्य० ३०, १०४। अर्द्धध्रुवमात्रम्। ओघ० ८६।

अवड्ढक्खेत्ता-अपार्द्धक्षेत्रम्, अपार्द्ध-समक्षेत्रापेक्षया अर्द्धमेव क्षेत्रम्। ठाणा० ३६७।

अवड्ढखेत्तं-अपार्द्धक्षेत्रम्, अर्धमात्रक्षेत्रम्। सूर्य० १०४। पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्य नक्षत्र अभिजिर्वा, पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यानि भरणी आर्द्रा अश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा च। बृ० तृ० १४८ आ।

अवड्ढगोलावलिच्छाया-अपार्द्धगोलावलिच्छाया, गोलानामावलिर्गोलावलिस्तस्या छाया गोलावलिच्छाया अपार्द्धाया-अपार्द्धमात्राया गोलावलेश्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढचंदो-अपार्धचद्र-अर्धचंद्र। बृ० प्र० १०९ अ।

अवड्ढवाविसंठित-अपार्द्धवापीसस्थित। सूर्य० १३०।

अवड्ढा-अपार्द्धा। ठाणा० १४९।

अवड्ढो-अर्द्ध। नि० चू० प्र० १४२ आ।

अवड्ढोमोअरिआ-उपार्द्धावमोदरिका, द्वात्रिंशतोऽर्द्ध षोडश, एवं च द्वादशानामर्द्धसमीपवर्त्तित्वादुपार्द्धावमोदरिका द्वादशभिरिति। औप० ३८। भग० २९२।

अवणए-अपनय-पूजासत्कारादेरपनयनम्। ठाणा० ४१८।

अवणयं-एकान्ते स्थापनम्। बृ० द्वि० २६३ अ।

अवणिज्जंतु-अपनीयन्ताम्। आव० ४३६।

अवणितमूलो-अपनीतमूल, अपनीतमूलत्रिभाग, त्रिभागनिर्वाटितवाट, ऊर्ध्वभागादपि त्रिभागहीन इति। जीवा० ३५५।

अवणीओवणीयवयणं-अपनीतोपनीतवचनम्, यन्निन्दित्वा प्रशमति। प्रज्ञा० २६७।

अवणीयं-अपनीतम्, स्थानान्तरस्थापित निराकृतगुणं वा। औप० ३९।

अवणीयवयणं-अपनीतवचनम्, निन्दावचनम्। प्रज्ञा० २६७। गुणापनयनरूपम्। प्रश्न० ११८। निंदावचनम्। आचा० ३८७।

अवणीयोवणीयवयणं-अपनीतोपनीतवचनम्, यत्रैक गुणमपनीय गुणान्तरमुपनीयते। प्रश्न० ११८। अरूपवती स्त्री किन्तु सद्वृत्ता। आचा० ३८७।

अवणेति-महामर्गि प्रकाशयति। नि० चू० प्र० ११६ आ।

अवणेज्जा-अपनयेत्, परित्यजेत्। दश० १५६।

अवण्ण-अवर्णः, अवज्ञा वा, अनादरः, वर्णनाया अकरणम्। औप० १०५। अश्लाघात्मक.। उत्त० ७१०। निन्दा। आव० १०३।

अवण्हाणं-अपस्नानम्, तथाविधद्रव्यसंस्कृतजलेन स्नानम्। विपा० ४१।

अवतंसो-पुरुषव्याधिनामको रोग। बृ० तृ० २४९ अ।

अवतासण-बाहाहिं अवतासिता। नि० चू० प्र० ११३ अ।

अवत्त-अप्राप्तम्-अस्पृष्टम्। भग० १२७। अव्यक्त., अष्टानां वर्षाणामधो बालः। ओघ० १६२।

अवत्तदंसणे-अव्यक्तदर्शनः-अव्यक्तं-अस्पष्टं दर्शनं-अनुभवः। भग० ७०९।

अवत्तमय-अव्यक्तमता, संयतासंयताद्यवगमे संदिग्धबुद्धय। विशे० ९३३।

अवत्तव्वं-अवक्तव्यम्। प्रज्ञा० २३४। यच्चरमशब्देनाचरमशब्देन वा स्वस्वनिमित्तशून्यतया वक्तुमशक्यं तत्। प्रज्ञा० २३५। अनन्तगुणं। दश० २२१।

अवत्तव्वगसंचिता-अव्यक्तव्यकसंचिता-समये समये एकतयोत्पन्ना.। ठाणा० १०५।

अवत्ता-छगणमट्टियाए पाणिएण य। नि० चू० प्र० २३२ अ।

अवत्तिता-अव्यक्तिका., अव्यक्तं-अस्फुटं वस्तु अभ्युपगमतो विद्यते येषा ते। ठाणा० ४१०।

अवत्तो-सोलसवरिसारेण वयसा। नि० चू० प्र० २९० आ।

अवत्थयं-अपार्थकम्, पौर्वापर्यायोगादप्रतिसम्बद्धार्थं, चतुर्थसूत्रदोषः। आव० ३७४। असंबद्धार्थम्। विशे० ४६४। अनु० २६१।

अवदारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवदारियं-अवदारितम्, उद्घाटम्। आव० ६८७।

अवदाल-पादादिन्यासेऽधोगमनम्। भग० ५४०।

अवदालिओ-अवदारित.। आव० १७५।

अवदालियं-अवदालितम्, रविकरैर्विकाशितम्। औप० १७। रविकिरणैर्विकासितम्। जीवा० २७३। मज्ञानावदलनं-विकसितम्। प्रश्न० ८२।

अवदाली-अवदारयति-शकटं स्वस्वामिन विनाशयतीत्येवंशीलः। उत्त० ५४८।

अवदालेइ-अवदालयति, उत्पाटयति। प्रज्ञा० ६००।

अवदू-कृकाटिका। विपा० ७२।

अवद्दहणा-दम्भनम्। विपा० ४१।

अवद्दारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवड्ढगाढलगोलछाया-अपार्द्धगाढलगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलच्छाया-अपार्द्धगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलपुंजछाया-अपार्द्धगोलपुञ्जच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढचंद-अपकृष्टमर्द्धं चन्द्रस्यापार्द्धचन्द्र। ठाणा० ७१।

अवड्ढजवरासिसंठाणसंठिए-अपार्द्धयवराशिसंस्थानसंस्थित., अपगतमर्द्धं यस्य सः, स चासौ यवश्च राशिश्च अपार्द्धयवराशी तयोरिव यत्संस्थानं यस्य तेन संस्थित.। जीवा० ३४३।

अवड्ढपोरिसी-उपार्द्धपौरुषी, अपगतमर्द्धं यस्या सा अपार्द्धा सा चासौ पौरुषी। सूर्य० ९५।

अवद्धं-मिथ्यात्वकषायनोकषायलक्षणम्। आव०।

अवद्दाय-मृत्वा। जीवा० २६२।

अवधारियं-तात्पर्यग्रहणतो हृदये विश्रामितं। व्य० प्र० २५७ अ।

अवधिकेवली-केवलिद्वितीयभेद। नि० चू० द्वि० १३९ आ।

अवधिजिनः-विशिष्टावधिधर.। आव० ५०१।

अवधिज्ञानम्-ज्ञानस्य तृतीयभेद। ठाणा० ३३२।

अवधिज्ञानजिनाः-विशुद्धावधिज्ञाना। व्य० प्र० ८५ अ।

अवधीरयेत्-उपेक्षेत। उत्त० ११२।

अवधीरित-परिभूत। आचा० १०६।

अवधूतम्-अवज्ञातम्। ओघ० १५।

अवन्नं-अवर्णम्, निन्दा। आव० ६६२। अश्लाघामवज्ञा। ठाणा० ३६०।

अवन्ना-अवज्ञा, परिभव। ओघ० १८६।

अवपंगुरे-अपवृणुयात्, उद्घाटयेत। दश० १६७।

अवपात-पर्वतविशेषा., येषु वैमानिका देवा अवपतन्ति अवपत्य च मनुष्यक्षेत्रादावागच्छन्ति। प्रश्न० ९६।

अवपीलइ-अवपीडयति, जलेन प्लावयति। जीवा० ३२३।

अवबोह-अवबोध., मति.। आचा० १२।

अवभासियं-अपभासितं, दुष्टभाषण, विरूप भाषते। व्य० प्र० २० अ।

अवमंथित–अवाङ्मुखीकृत । बृ० प्र० ८० आ ।

अवमः–लघु पर्यायेण । ठाणा० २४२ ।

अवमण्णइ–अवमन्यते, अवज्ञाऽऽस्पदं मन्यते । भग० १६६ ।

अवमण्णह – उचितप्रतिपत्त्यकरणेन । भग० २१९ ।

अवमद्द–अवमर्द । जं० प्र० १०१ ।

अवमद्दं–अपमर्दम्, उपमर्दनम् । प्रश्न० ३७ ।

अवमप्रतिजागरणम्–गुणविशेष । आव० ५२४ ।

अवमा–हीना । आचा० ३३२ ।

अवमाणणं–अपमाननम्, विनयभ्रंश । प्रश्न० ९७ । अनभ्युत्थानादिकरणम् । भग० २२७ । मानहरणम् । प्रश्न० ४१ । अपमानम्, अपूजनम् । औप० ४६ ।

अवमाणो–अपमान, दैन्यम् । प्रश्न० १३८ ।

अवमानं–हस्तादि । ठाणा० १९८ ।

अवमारियं–अपस्मार –अपगत स्मार स्मरणं यस्मात् स अपस्मार, तस्मिन् मति तद् रोगिण सर्वविषया स्मृति नश्यति । आचा० २३३ ।

अवमोदर –अवमं-ऊनमुदरं–जठर यस्य स । ठाणा० १४८ ।

अवम्मो–अवाम्य । आव० १०१ ।

अवयक्काओ–अवपाकयास्तापिका । भग० ५४८ ।

अवयक्खंत–अपेक्षमाण. (भक्त०)। पृष्ठतोऽभिमुख निरूपनयन । ओघ० १२७ ।

अवयक्खमाणस्स–अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा । भग० ४९६ ।

अवयग्गं – अन्त, अन्तवाचको देशीवचनोऽयं शब्द । भग० ३५ । अवदग्रम्-पर्यन्तम् । ठाणा० ४४ ।

अवयणं–अवचनम् । आव० ३४३ ।

अवयव–अवयवा', प्रतिज्ञादय । दश० ७५ । अवयव – प्रमाणाङ्गलक्षण । दश० ७७ । अवयवा' तथाविधविचित्रपरिणामापेक्षया । ठाणा० ११ ।

अवयविद्रव्यता–तथाविधैकपरिणामिता । ठाणा० ११ ।

अवयवी – अवयवाना तथारूप सङ्घातपरिणामविशेष । जीवा० ६ ।

अवयाणं–तैलविशेष । बृ० द्वि० २२१ आ ।

अवयानी–अनुश्रोतोगामिनी । व्य० प्र० २५ आ ।

अवयारो–अवतारः, प्रस्ताव । व्य० द्वि० २५ आ ।

अवयासं–आलिङ्गनम् । ओघ० १६४ ।

अवयासणं–वृक्षादीनामालिङ्गापनम् । बृ० प्र० २१५ अ ।

अवयासिं–आलिङ्गनम् । बृ० तृ० २६ आ ।

अवयासिज्जमाणे – अपत्रास्यमान, अप्रयास्यमानो वा । औप० १०२ ।

अवयासित्ता–अवकाश्य । आव० ३५७ ।

अवयासेउं–निवारयितुं, निरोद्धुम् । आव० ४३८ ।

अवरं–अपरं, पश्चात्कालभावी । आचा० १६७ ।

अवरज्झियाउ – अपराद्धवान् । आव ८३५ ।

अवरकंका–अपरकङ्का, ज्ञातायां षोडशाध्ययनम् आव० ६५३ ।षष्ठाङ्गे षोडशं ज्ञातम् । उत्त० ६१४ । सम० ३६ ।

अवरगज्जभो–अपरगर्जभ' । आव० ३८७ ।

अवरज्झइ–अपराध्यति, अपराधमाप्नोति । दश० १९६ ।

अवरण्हसंखडी दिया गहियं रायो भुत्त, राईभोयणस्स बितियभङ्गो । नि० चू० द्वि० १५ अ ।

अवरओ–अवरत, जघन्यत । विशे० ५३० ।

अवरत्त – अपरात्र, अपकृष्टा रात्रि, पश्चिमस्तद्भागः । भग० १२७ । रत्तीए पच्छिमजामो । दश० चू० १६४ ।

अवरदक्खिणा–अपरदक्षिणा । आव० ६३० ।

अवरदारिता – अपरद्वारिकानि, अपरस्या दिशि गम्यन्ते येषु । ठाणा० ४१४ ।

अवरद्धं–अपराद्धम्, दष्टम् । उत्त० १४३ ।

अवरद्धिगा–लूता फोडिआ, तस्यां लूतास्फोटिकायामुत्थिताया दाहोपशमार्थमचेतनेन पृथिवीकायेन परिषेकः क्रियते । ओघ० १३० । सर्पदंशस्तस्मिन परिषेकादि क्रियते । ओघ० १३० ।

अवरभू–अवरभू, अधोभ । सूर्य० ४६ ।

अवररायं–अपररात्रं–रात्रे पाश्चात्य याम । आचा० २१० ।

अवरविदेहकूडे–अपरविदेहकूटम्, निषधे अष्टमकूट' । जं० प्र० ३०८ । अपरविदेहाधिपकूटम् । जं० प्र० ३७७ ।

अवरविदेहे-अपरविदेह', मेरोर्जम्बूद्वीपगत पश्चिमविदेह'। जं० प्र० ३१० । महाविदेहापरभाग.। ठाणा० ६८। निषधे कूटविशेष । ठाणा० ७२ । नीले कूटविशेष.। ठाणा० ७२ ।

अवरवीयावो-अपरवीजाप.। आव० ३८७ ।

अवरा-अपरा। आव० ६३० ।

अवराइअ-अपराजित, पद्मवलदेवपूर्वभवनाम । आव० १६३ ।

अवराइआ-अपराजिता, शङ्खविजये नगरी। जं० प्र० ३५७ ।

अवराओ। ठाणा० ८० ।

अवराजिआ-अपराजिता, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२ ।

अवराजिया-अपराजिता, उत्तरदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्योत्तरस्या पुष्करिणी। जीवा० ३६४ ।

अवराह-अपराध, गुरुविनयलङ्घनरूप । आव० ५४१।

अवराहखामणा-अपराधक्षामणा, वन्दनके षष्ठ स्थानम्। आव० ५४८ ।

अवरुंडिओ-आलिङ्गित । आव० २७४ ।

अवरुज्जय। आव० ६३८ ।

अवरुत्तरा-अपरोत्तरा। आव० ६३० ।

अवरुद्धो-अवरुद्ध, अन्तर्भूत । विशे० ११६७।

अवरेय-अवरेक, रिक्तता। उत्त० ३०'५ ।

अवरेण-अपरेग-जन्मादिना सार्द्धम्। आचा० १६७ ।

अवरो-अववादो । नि० चू० तृ० १४६ अ ।

अवरोप्परमसंवद्ध-परस्परमसम्वद्ध.। आव० ६३५ ।

अवण्णे – अवर्ण, अश्लाघा। असद्दोषोद्भट्टनम्। ठाणा० २७५। अयश, सर्वदिग्गामिन्यप्रसिद्धि । ठाणा० ४१८।

अवन्न-अवर्ण अप्रसिद्धमात्रम्। भग० ४८९। अश्लाघा। ओघ० १२१। अयश । ओघ० १२५।

अवलंवण – अवलंविजतित्ति अवलवगं, जो पुग वेतिना मत्तावलंवो वा। नि० चू० प्र० ११९ अ। वाह्वादिमात्रैकदेशग्रहणम्। वृ० तृ० २३० अ। अवतरतामुत्तरतामवलम्वनहेतुभूता' । जं० प्र० ४३। अवलम्बन, अवतरतामुत्तरता चालम्बने हेतुभूत । जीवा० १९८ ।अवलम्बनं देशे ग्रहणम्। ठाणा० ३२७।

अवलंवणवाहा-अवलम्बनवाहा, उभयोरुभयो पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्ति । जीवा० १९८ ।

अवलंवनीयम्-लम्बयितव्यं रज्ज्वादिनिवद्ध हस्तादिना धरणीयम्। भग० ४७ ।

अवलंवमाणे – अवलम्बयन् हस्तवस्त्राञ्चलादौ गृहीत्वा। ठाणा० ३५३ ।

अवलंवमाने – अवलम्बमान, पतन्तीं वाह्वादौ 'गृहीत्वा धारयन्। ठाणा० ३२७।

अवलगका-सेवका । भग० ४६४।

अवलगनं-सेवा। आचा० १३२ ।

अवलद्ध – अपलब्ध न्यक्कारपूर्वकतया। ठाणा० ४६६। ईषल्लब्ध, अलब्धो वा। प्रश्न० १३८ ।

अवलद्धि-अपलब्धि, अलाभोऽपरिपूर्णलाभो वा। भग० १०१ ।

अवलम्वए – अवलम्बेत-अवष्टम्भादिका क्रिया कुर्यात। आचा० २९३ ।

अवलियाति। ठाणा० ८६ ।

अवलितं-वस्त्र शरीर वा न वलितं कृत तत्। ठाणा० ३६१। यथाऽऽत्मनो वस्त्रस्य च वलितमिति मोटनं न भवति। उत्त० ५४१ ।

अवलियं-अवलितम्। ओघ० १०९ ।

अवलुएण। आचा० ३७८ ।

अवलहणिया – वामासु कर्दमफेडणी। नि० चू० प्र० १२४ अ ।

अवलेखकं-मायाया लक्षगम्। आचा० १७० ।

अवलोकनम्-गवाक्ष । वृ० प्र० २०७ अ।

अवल्लोवो – अपलोपः, वस्तुसद्भावप्रच्छादनम्। अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० २७।

अवलगन। आचा० १०६ ।

अवल्ल-गोणी। आव० ६६५।

अवल्लखेवा-सविलंवा क्षेपा । नि० चू० द्वि० ७८ अ।

अवल्लगं। ओघ० ३३। निर्यामिका (मर०)।

अववं – अववम्, चतुरशीतिरववाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५ ।

अववंगं-अववाङ्गम्, चतुरशीतिरडडशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। भग० ८८८।

अववंगाति। ठाणा० ८६।
अववरय-अपवरक., गृहान्तर्भागः। दश० ४२।
अववाइयं-आपवादिक यद्द्रव्यक्षेत्राद्यपेक्षम्। उप० मा० गा० ४००।
अववाओ – अपवाद, द्वितीयपदम्। नि० चू० द्वि० ९२ अ।
अववाडणं-अवपाटनम्, विदारणम्। भग० १२०।
अववाति। ठाणा० ८६।
अववाय-अपवाद, परदूषणाभिधानम्। प्रश्न० ११६।
अववायसुत्तं-तिण्हमन्नयरागस्स इत्यादि। बृ० प्र० २०१ आ। नि० चू० तृ० ११ अ।
अववायाववाओ-अववाए पुण अन्नो अववाओ। नि० चू० द्वि० ६५ आ।
अववायाववातियं। नि० चू० प्र० २२५ आ।
अवविहे-आजीविकोपासकविशेष। भग० ३६९।
अववे-कालविशेष। भग० २१०, २७५, ८८८। सूर्य० ९१।
अवश्रावणम्-आयामम्। ओघ० १३३।
अवष्टम्भम्-उपग्रह। ओघ० १५४। उत्त० ५५।
अवष्टब्धा-आक्रान्ता। आचा० २५८।
अवसण्णा-अवसन्ना। आव० ६७५। रागगूढप्राया.। ओघ० १५६।
अवसद्दो-अपशब्द। आव० ४०१।
अवसरो-अवसर, उपयोगकाल। सूत्र० ११। विभाग, पर्याय', देश, प्रस्ताव। विशे० ८३७।
अवसर्पणं। आचा० ३६४।
अवसाणं – अवसानम्। आव० ३८४। अन्त। प्रज्ञा० ३९७।
अवसाय-निश्चय.। प्रश्न० १०४।
अवसावणं-अवश्रावणम्, काञ्जिकम्। बृ० द्वि० १२९ आ।
अवसिओ-अवसित, जित। विशे० ९९४।
अवसिद्धंतो-अपसिद्धान्त। आव० ३२०।
अवसोहिय – अवशोध्य, अपमार्य, पृथक् कृत्य, परिहृत्य। उत्त० ३४०।
अवसेसं-अवशेषम्, उद्धरितम्। उत्त० ५९६। भिक्षाप्रक्रमात्पात्रनिर्योगोद्धरितम्, यद्वाऽपगत शेषमपशेषम्। उत्त० ५४४।
अवस्कन्दः-शिविर। आचा० १४०।
अवस्थानम्-सस्थिति। सूर्य० ७।
अवस्सं-अवश्यम्, नियोगत। आव० २६५।
अवस्सकरणिज्जं – अवश्यकरणीयम्, आवश्यकपर्याये द्वितीयनाम। विशे० ४१५।
अवह-अव्याप्रियमाण। बृ० द्वि० २७ आ।
अवहट्टण-त्याग। (मर०)
अवहट्टु – अपहृत्य, त्यक्त्वा। भग० १००। परिहृत्य। औप० २४। परित्यज्य। ओघ० ११४। आहृत्य-निष्कृष्य, त्यक्त्वा। आचा० ४००।
अवहट्टुअसंजमे-अपहृत्यासंयम.-अविधिनोच्चारादीना परिष्ठापनतो य स। सम० ३३।
अवहट्टुसंजमो – अपहृत्यसयम-प्राणिभि संसक्तं भक्तपानमथवाऽविशुद्धमुपकरणं पात्रादि यद्वाऽतिरिक्त भवेत् तत्परिष्ठापन विधिना। आव० ६५३।
अवहडे-अपहृतम्। भग० २७७।
अवहन्न-उदूखलम्। बृ० द्वि० ६० अ।
अवहारइ-अवधार्यते, प्रथमतया स्थाप्यते। सूर्य० ११३।
अवहारवं-अवधारणावान्। ठाणा० ४८४।
अवहाराइ-अपहृतवन्त-गृहीतवन्त। आचा० ३३७।
अवहारो – अपहार, अधर्मद्वारस्य दशमं नाम। प्रश्न० ४३। जलचरविशेष। प्रश्न० ६२। अवधार्य-ध्रुवराशि.। सूर्य० ११३। ज० प्र० ५०७।
अवहितचित्तः-एकाग्रमना। उत्त० ५९९।
अवहीयं – अपधीकम्, अपमदा-निन्द्या धीर्यस्मिंस्तत। अधर्मद्वारस्याष्टाविंशतितम नाम। प्रश्न० २६।
अवहीयए-अवधीयते, अवशब्दस्याव्ययत्वेनानेकार्थत्वादधोऽधोविस्तृत धीयते-परिच्छिद्यते रूपिवस्तु तेन ज्ञानेनेत्यवधि, अथवा अव-मर्यादया एतावत्क्षेत्र पश्यन्, एतावन्ति द्रव्याणि, एतावन्त काल पश्यतीत्यादिपरस्परनियमितक्षेत्रादिलक्षणया धीयते-परिच्छिद्यते। विशे० ५४।
अवहेडयं-अर्द्धशिरोरोगम्। उत्त० १४३।
अवहेडियं-अवहेठितम्, अवेत्यधो, हेठित-बाधित अधोनामितमिति। उत्त० ३६७।
अवाअ-अपाय, उदाहरणस्य प्रथमो भेद। दश० ३५।

अवाईण–अवाचीनम् , अधोमुखम् । औप० ७। अवातीनानि, न वातोपहतानि, न वातेन पातितानि। जं० प्र० २९ ।

अवाईणपत्ता–अवाचीनपत्रा , अधोमुखपर्णा , अधोमुखपलाशा वा। औप० ७। अवातीनपत्रा –अवातोपहतबर्हा.। औप० ९।

अवाउड – अप्रावृतम् , प्रावरणरहितम् । दश० ११९। अप्रावृता। ओघ० १६७। प्रावरणाभाव.। भग० १२५।

अवाउडय – अप्रावृतक', प्रावरणवर्जक । औप० ४०। न विद्यते प्रावरणकम् । ठाणा० २९९।

अवाउडिय–अप्रावृतिक, सकलां रात्रिं यावद् अप्रावरणाभिग्रहवान्। बृ० द्वि० २९२ अ।

अवाए–अवाय', अवधारणात्मको निर्णय । प्रज्ञा० ३१०। अपाय –अवग्रहज्ञानेन ईहितस्यार्थस्य निर्णयरूपो योऽध्यवसाय'। प्रज्ञा० ३१०।

अवाओ – अवाय –प्रक्रान्तार्थविनिश्चय । भग० ३४४। ईहार्थविशेषनिश्चय.। आव० ९।

अवाघाय – अव्याघात , प्रव्रज्यासूत्रार्थग्रहणादिकयाऽऽनुपूर्व्या विपक्तिमममायुष्कक्षयमनुभवतो यो भवति सोऽव्याघात । आचा० २६२।

अवाच्यप्रदेश.–गुह्यम्। प्रज्ञा० ४३०।

अवातदंसी–अपायदर्शी। ठाणा० ४८४।

अवातीणपत्तो–अवातीनपत्र', न वातोपहतं पत्रं, वातेनापातित पत्रम्। जीवा० १८७।

अवाते–अपाय'–अनर्थ'। ठाणा० २५३।

अवादाणे–अपादान –विश्लेषतो मर्यादया दीयते, खण्ड्यते, गृह्यते, अवधिमात्रम्। ठाणा० ४२८।

अवाय–अपाय , विवेक.। विशे० ८७३।

अवायदंसी–आणालोएतस्स पलिउंचतस्स पच्छित्तं अकरेंतस्स समारे ,जम्मणमरणादीदुल्लभबोहीयत्तं च परलोगावाए, दरिसेति इहलोगे च ओमासिवादी सो अवायदंसी। नि० चू० तृ० १२८ आ। सातिचारस्य पारलौकिकापायदर्शीति। ठाणा०,४८६। अपायान्–अनर्थान शिष्यचित्तभङ्गानिर्वाहादीन् दुर्भिक्षदौर्बल्यादिकृतान् पश्यतीत्येवंशील सम्यगनालोचनाया वा दुर्लभबोधिकत्वादीन अपायान शिष्यस्य दर्शयति। ठाणा० ४२४।

अवायाणुप्पेहा – अपायानुप्रेक्षा, आश्रवाणामपायानामनुप्रेक्षा। ठाणा० १८८।

अवालुयाखिल्ल–अवारितश्लेष्म। (तं०)

अवावारे–अव्यापार , इन्द्रियाव्यापार.। आव० ६५२।

अवाहाणं–देशविशेष । भग० ६८०।

अविंदंतो–अलभमान । आव० ५३५।

अविंधणं–आव्यधनम् , मन्त्रावेशनम्। प्रश्न० ३८।

अवि–अपि, अपिशब्द पद्यबन्धत्वेन पादपूरणार्थं एवाकारार्थो वा। जं० प्र० २४५। प्रकारवाची। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अविअ–अपिच, अभ्युच्चये। ओघ० ३६।

अविअत्तो–अव्यक्त', मुग्ध –सहजसद्विवेकविकलः। सूत्र० ३४।

अविइ–समन्ताद् वीचय इव वीचय । उत्त० २३१।

अविउट्टमाणो–पीड्यमान । सूत्र० ५१४।

अविउप्पकड–अविद्वत्प्रकृता, अव्युत्प्रकटा वा न विशेषत उत्–प्राबल्यनश्च प्रकटा । भग० ३२५। अपिशब्द सम्भावनार्थ उत्–प्राबल्येन च प्रकृता–प्रस्तुता प्रकटा वा उत्प्रकृतोत्प्रकट वा। भग० ७५३।

अविउस्सिया–अव्युत्सृज्य, अपरित्यज्य। सूत्र० ३९४।

अविओगिओ – अवियोगिक , वियोगासहिष्णु । आव० ४३६।

अविओगो – अवियोग , धनादेरत्यजनम् । परिग्रहस्य पञ्चविंशतितम नाम। प्रश्न० ९२।

अविओसित – अव्यवसितम् , अनुपशान्तम् । ठाणा० १६६।

अविकत्थण–अविकत्थन.–न बहुभाषी। दश० ५। अविकत्थनम्–हितमितभाषणम्। आचा० ७।

अविकप्पं–अविकल्प , निश्चय । आव० २६४।

अविकलकुल–अविकलकुला., ऋद्धिपरिपूर्णकुला । भग० ४६९।

अविकोविओ–जो वा भणिओ अज्जो! जइ भुजतो भुज्जो मे विहिमि तो ते छेदं मूलं वा दाहामो, एसो विकोविदो, एतंमि चेव विवरीता जो य पढमताए पच्छित्तं पडिवज्जति ते अकोविआ भण्णति। नि० चू० तृ० १२१ अ।

अविकडिय–अविकटित, अखण्डित। व्य० द्वि० ५३ आ।

अविक्कयेण–अविक्रयेण–भाटकेन। व्य० प्र० २३८ आ।
अविक्किअ – असंस्कृतम्, सुलभमीदृशमन्यत्रापि। दश० २२१।
अविक्कीवो–आसायमाणो। दश० चू० १२३।
अविकूलं–अपूतिकूलं। (मर०)
अविगणिया–अविमता। आव० ६९२।
अविगियवयणो–अविकृतवदन., नात्यन्तनिर्धाटितमुख.। ओघ० १८२।
अविगीत–अविप्रतिपन्नः। व्य० प्र० १९२ अ।
अविगुह–अवारित। (मर०)
अविग्गहगइसमावन्नग – अविग्रहगतिसमापन्न, ऋजुगतिक., स्थितो वा। भग० ८५। विग्रहगतिनिषेधादृजुगतिक अवस्थितश्च। भग० ८७७।
अविग्गहमणे–अविग्रहमना, अकलहचेता अव्युद्ग्रहमना वा, अविद्यमानासदभिनिवेश.। प्रश्न० १११।
अविघाटा–अप्रकट। व्य० द्वि० २०३ अ।
अविघुट्ठं–विक्रोशनमिव यन्न विस्वरम्। ठाणा० ३९६। विक्रोशनमिव यद्विस्वरं न भवति तत्। ज० प्र० ४०।
अविचिंतियं–अविचिन्तितम्, अविवक्षितम्। विशे० ७३।
अविच्चुति–धारणाभेद.। दश० १२५।
अविज्जा–अविद्या, न विद्या–मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका। उत्त० २६२।
अविज्जापुरिसा – अविद्यापुरुषा, अविद्या–मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका तत्प्रधाना पुरुषा अविद्यमाना वा विद्या–प्रभूतश्रुत येषा ते। उत्त० २६२।
अविज्ञोपचितम्–अविज्ञानमविज्ञा तयोपचित, अनाभोग कृतमिति। सूत्र० ११।
अविणए–अविनय। आव० ७९३।
अविणासी – अविनाशी, क्षणापेक्षयाऽपि न निरन्वयनाशधर्मा। दश० १२९।
अविणीअप्पा–अविनीतात्मा, भवान्तरेऽकृतविनय.। दश० २४९। विनयरहिता अनात्मज्ञा। दश० २४८।
अविणीओ – अविनीत., सूत्रार्थदातुर्वन्दनादिविनयरहित। ठाणा० १६५। अविनीता, ये बहुशोऽपि प्रतिनोद्यमाना प्रमाद्यन्ति, ते च छन्देऽवर्त्तमाना भण्यन्ते। बृ० प्र० २०९ अ।
अविण्णाय–अविज्ञातम्, अवध्यपेक्षया अज्ञातम्। भग० १९७, २००।
अवितथभाव –अर्थविनिश्चय.। दश० २३५।
अवितहं – अवितथम्, सत्यम्। आव० ७६१। भग० १२१।
अवितहमेयं–अवितथमेतत्–न कालान्तरेऽपि विगताभिमतप्रकारम्। भग० ४६७।
अविदलकडाओ–अद्विदलकृता, न द्विदलकृता अद्विदलकृता., अनूर्ध्वपाटिता। आचा० ३२३।
अविद्दवंतो–अविद्रवन्। उत्त० २७९।
अविद्धकन्नए–अविद्धकर्ण., अव्युत्पन्नम्। भग० ६७७।
अविद्धत्थ–अविध्वस्त., प्ररोहसमर्थ। दश० १४०।
अविद्यमानम्–मासलतयाऽनुपलक्ष्यमाणम्। जीवा० २७१।
अविधिभिन्न – उर्ध्वफालिरूपा पेश्य कृतं तदृजुकभिन्नं, यत्पुनस्तिर्यक्छृहत्कत्तलिकाकृतं तच्च कलिकाभिन्नमेते द्वे। बृ० प्र० १७५ अ।
अविधो–कुच्छितो। नि० चू० प्र० २७७ अ।
अविनेया – ग्रहणधारणविज्ञानेहापोहवियुक्ता. महामोहाभिभूता दुष्टावग्राहिताश्च। तत्त्वा० ७–६।
अविपक्कदोसा–कषायेन्द्रियनिग्रहेऽसमर्थां, अकोविदा वा। बृ० द्वि० १४१ अ।
अविपरीतदर्शनः–साम्प्रतेक्षी। सूत्र० ३९४।
अविपु(घु)ट्ठं–अविपु(घु)ष्टम्, न विस्वरं क्रोशतीव। जीवा० १९४।
अविप्पकड – अविप्रकटा, आनुकूल्येन प्रकृता–प्रकान्ता, अथवा न विशेषेण प्रकटा अविप्रकटा। भग० ३२५।
अविप्पणासो–अविप्रणाश, शाश्वत, सिद्धाना नमस्कारार्हत्वे हेतु। आव० ३८३।
अविप्पणं। नि० चू० द्वि० ३१ आ।
अविबंधणो – अविबन्धन, अविद्यमानमन्त्रादिनियन्त्रणः। उत्त० ४७९।
अविभागा–अविभागाः, अनुभागा। ठाणा० २२२।
अविभागपलिच्छेदो – अविभागपरिच्छेद, केवलिप्रज्ञाछेदेनाविभागम्। बृ० तृ० १५ आ।
अविमणे – अविमना, न शून्यचित्त., अदीनस्य द्वितीयं नाम। अन्त० २२।

अविमोत्ति-अविमुक्ती, गृद्धि । नि० चू० प्र० १५५ अ ।
अवियं-उच्छिष्टम् । बृ० प्र० २७१ आ ।
अवियत्तकुलं-जत्थ बहुणावि कालेण भिक्खा न लब्भइ । दश० चू० ७७ ।
अवियद्धो-अविदाध, अतृप्त । (महाप्र०)
अवियाई-इत्येवमादीनुद्दिश्य । आचा० ३५३ ।
अवियाउरी-अप्रसविनी । आव० २१२ ।
अवियाणओ - अविजानन्, हिताहितप्राप्तिपरिहारशून्यमना । आचा० ७० ।
अवियारं-अपराक्रममप्रभवति काले । (भक्त०)
अवियार-अविचारम्, चेष्टात्मकविचारविरहितमरणानशनतप. । उत्त० ६०२ । अविकारा-गीतादिविकाररहिता । बृ० प्र० ३१० आ ।
अवियोगज्झवसाणं - अवियोगाध्यवसानम्, अविप्रयोगदृढाध्यवसाय । आव० ५८५ ।
अविरइ-अविरति, इच्छाया अनिवृत्ति । भग० १०१ ।
अविरइय - अविरतिक । आव० २१८, ६२०, ६४०, ४०४, ५६० । दश० ८९ । गृहस्थी । ओघ० १९४ ।
अविरए - अविरत, प्राणातिपातादिविरतिरहित, विशेषेण वा तपसि रतो यो न भवति स । भग० ३६ ।
अविरओ-अविरत, न विरत, सावद्यव्यापारादनिवृत्तमना । प्रज्ञा० २६८ ।
अविरतओ-अविरत । आव० ३९६ ।
अविरतकायिकी-कायिकीक्रियाया प्रथमो भेद । मिथ्यादृष्टेरविरतसम्यग्दृष्टेश्च उत्क्षेपणादिलक्षणा क्रिया कर्मबन्धनिबन्धना । आव० ६११ ।
अविरति - अविरति, अब्रह्म । ठाणा० ३७२ । अप्रत्याख्यानमथवा अविरतिरूपो भाव, शस्त्रम् । ठाणा० ४९२ । अविरति । आव० ९३ ।
अविरतिया - अविरतिका, न विद्यते विरतिर्यस्या सा । ठाणा० ३७२ । अविरतिका । आव० ३९६ ।
अविरत्ताए-अविरक्तया विप्रियकरणे । भग० ५७९ ।
अविरत्तो-अविरक्त । औप० १३ ।
अविरय-अविरत, अनिवृत्त । प्रश्न० ३० । मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टिश्च । आव० ५८८ ।
अविरयसम्मदिट्ठी-अविरतसम्यग्दृष्टि, देशविरतिरहित. सम्यग्दृष्टि, भूतग्रामस्य चतुर्थं गुणस्थानम् । आव० ६५० ।
अविरलं-परस्परासन्नम् । प्रश्न० ८३ ।
अविरलपत्तो-अविरलपत्र । जीवा० १८७ ।
अविरहिए-अविरहितम्-चूकस्खलितन्यायादपि न विरहित, अथवा प्रदीर्घकालोपभोग्याहारस्य सकृद्ग्रहणेऽपि भोगोऽनुसमयं स्यादतो ग्रहणस्यापि सातत्यप्रतिपादनार्थम् । भग० २० ।
अविरहिय-अविरहित, अविमुक्त । आव० ५३२ ।
अविरहो-अविरहः, सातत्येनावस्थानम् । आचा० ६९ ।
अविराहणं-अविराधना । भग० ८९८ ।
अविराहियसंजम-अविराधितसंयम, प्रव्रज्याकालादारभ्याभग्नचारित्रपरिणाम., सञ्ज्वलनकषायसामर्थ्यात्प्रमत्तगुणस्थानकसामर्थ्याद्वा स्वल्पमायादिदोषसम्भवेऽप्यनाचरितचरणोपघात । भग० ५० ।
अविरिका-अविरक्ता, अविभक्तरिक्था । बृ० तृ० २४३ अ ।
अविरेकः-रोष । व्य० द्वि० १३७ अ ।
अविरुद्धो-अविरुद्ध, वैनयिक. । औप० ९० ।
अविलं - लोगपसिद्धं । दश० चू० ६ । गडुलमाकुल वा । सम० ५३ ।
अविलंबियं-अविलम्बितम्, नातिमन्थरम् । भग० २९४ । अमन्थरम् । ओघ० १८७ । अनतिमन्दम् । प्रश्न० ११२ ।
अविवज्जओ-अविपर्यय । विशे० ६४१ ।
अविशुद्धकोटि । आचा० २७१ ।
अविवन्न-अविपन्न., अप्राप्तविपत् मन्त्रादिभिरनियन्त्रित । उत्त० ४७९ ।
अविसेस-अविशेष, विशेषरहित. । भग० ९६१ । प्रज्ञा० ७४ ।
अविसंधि-प्रवाहेणाव्यवच्छिन्नम् । भग० ८७१ । अव्यवच्छिन्नम् । आव० ७६१ ।
अविसंवायण-अविसंवादनम्, पराविप्रतारणम् । उत्त० ५९१ ।
अविसंवायणाजोगे-अविसंवादनायोग । ठाणा० १९६ ।
अविसादी-अविषादी, चिन्तारहित, अदीनस्य पञ्चम नाम । अन्त २२ ।
अविसारओ-अविशारद । प्रज्ञा० ६० ।

अविसुद्धलेस्से – अविशुद्धलेश्य, कृष्णादिलेश्य । जीवा० १४२ । विभंगज्ञान । भग० २८४ ।

अविसुद्धो – पासत्थादी तेसिं मज्झातो जो आगतो विहाराभिमुहो तस्स जो पुव्वोवही सो अविसुद्धो । नि० चू० द्वि० ११३ अ ।

अविसेसियं–अविशेषितम्, विशेषरहितम् । जं० प्र० ८८ ।

अविसोहिकोडी–अविशोधिकोटि । दश० १६२ ।

अविहडं–बालक (देश्यामू) । बृ० प्र० ।

अविहम्ममाण – विविध परीषहोपसर्गैर्हन्यमानो विहन्यमान, न विहन्यमानोऽविहन्यमान, न निर्विण्ण सन् वैहानस गार्द्धपृष्ठमन्यद्वा बालमरण प्रतिपद्यत इति । आचा० २५९ ।

अविहाड–अप्रगल्भ । व्य० द्वि० ३७९ अ ।

अविहाव–अविभाव्य, अविभावनीयस्वरूप । प्रश्न० १९ ।

अविहि – अविधि । आव० ५२ । अयतना । बृ० द्वि० १५ अ ।

अविहिगहिअ – अविधिग्रहणम्, अशुद्धस्य–उद्गमादिदोषान्वितस्य यद् ग्रहण, अथवा गुडादेर्द्रव्यस्य मण्डकादिना प्रच्छाद्य यदेकत्र पात्रकदेशे स्थापन तत् । ओघ० १९२ ।

अविहिपरिट्ठावणिया – अविधिपरिष्ठापनिकी । आव० ६३८ ।

अविहेडए–अविहेठक, न क्वचिदुचितेऽनादरवान् । दश० २६६ ।

अवीइ–अवीचि, वीचि –विच्छेदस्तदभावात् । उत्त० २३१ ।

अवीरिए–अवीर्य, उत्थानादिक्रियाविकल । भग० ९५ । मानसशक्तिवर्जित । भग० ३२३ ।

अवीरिय–अवीर्य, सिद्ध । भग० ९५ ।

अवीसंभो – अविश्रम्भ, अविश्वास, प्राणवधस्य तृतीय पर्याय । प्रश्न० ५ ।

अवीहीपुच्छण–अविधिपृच्छा, वस्त्रपात्राद्युपकरणं विहारार्थमुद्ग्राह्य पृच्छन्ति । बृ० प्र० २४१ अ ।

अवुन्नं–अपुण्यम् । उत्त० २१० ।

अवृत्तपूर्वम् । आव० २३० ।

अवेइअ–अवेदित, मनसाऽप्यनालोचित । आव० ४१५ ।

अवोच्छिन्ना–अव्युच्छिन्ना यावदेकोऽपि तिष्ठति तावत् । आव० ७२७ ।

अव्युच्छेदम्–वाण्यतिशयविशेष, विवेक्षितार्थाना सम्यक्सिद्धिं यावदनवच्छिन्नवचनप्रमेयम् । मम० ६३ ।

अव्वइओ । दश० चू० २७ ।

अव्वए–अव्ययम्, व्ययरहितम् । भग० ११९ ।

अव्वओ–अव्यय, अव्ययशब्दवाच्य । जीवा० १८३ ।

अव्वते–अव्यय पर्यायापगमेऽप्यनन्तपर्यायतया । ठाणा० ३३३ । अवयवापेक्षया । ठाणा० ३३३ । व्ययाभाव । भग० ७६० ।

अवत्तं–अव्यक्त, अव्यक्तमतं, अस्फुटमतं, संयतायवगमे सन्दिग्धबुद्धि । आव० ३११ । अव्यक्तम् । औप० १०६ । शब्दोल्लेखरहितं, अनिर्देश्यम् । विशे० १५५ । अगीतार्थस्य गुरो सकाशे यदालोचनं तत् । ठाणा० ४८४ ।

अव्वत्तगसंचिया–अवक्तव्यसञ्चिता, द्वयादिसङ्ख्याव्यवहारत शीर्षप्रहेलिकाया परतोऽसङ्ख्यातव्यवहारतश्च सङ्ख्यातत्वेनासङ्ख्यातत्वेन च वक्तुं न शक्यतेऽसाववक्तव्य स चैककस्तेनावक्तव्येन–एककेन एकत्वोत्पादेन सञ्चिता । भग० ७९६ ।

अव्वत्तलिंगो – अव्यक्तलिङ्ग । आव० ३५२ । अप्रत्यक्षलिङ्ग । आव० ५६५ ।

अव्वत्तस्स–अव्यक्तस्य–अगीतार्थस्य सूत्रार्थापरिनिष्ठितस्य । आचा० १९६ ।

अव्वत्तो – जाव कक्खादिसु रोमसंभवो ण भवति, ताव अहवा जाव सोलसवरिसो ताव अव्वत्तो । नि० चू० तृ० ८२ अ । श्रुतेऽगीतार्थ, वयसि अर्वाक् षोडशभ्य । बृ० तृ० १३२ अ । अगीयट्ठो । नि० चू० प्र० १७३ आ ।

अव्वया – अव्यया । जीवा० ९९ । अव्ययशब्दवाच्या, मनागपि स्वरूपचलनस्य जातुचिदप्यसम्भवात् । ज० प्र० २७ । तदारम्भकप्रदेशापरिहाणे । ज० प्र० २५७ ।

अव्ववसितस्स–अव्यवसितस्य–अनिश्चयवतोऽपराक्रमवतो वा । ठाणा० १७६ ।

अव्वहिओ–अव्यथित, परेणानापादितदुःख । ज० प्र० १२६ । जीवा० ९९ । आचा० ४२४ । अदीनमना । दश० २३२ । अदीणो । दश० चू० १२३ ।

अव्वहे–अव्यथम्, देवादिकृतोपसर्गादिजनित भयं चलनं वा व्यथा तस्या अभावो अव्यथम् । ठाणा० १९२ ।

अव्वाणं–आस्यानं, उद्वान, उद्वानम् । ओघ० १७१ ।

अव्वाबाधं,०हं–अव्याबाधम्, केनापि विबाधयितुमशक्यत्वात्। जीवा० २५६। वन्दनके तृतीय स्थानम्। आव० ५४८। अव्याबाध, परेषा पीडाकारित्वाभावाद्विनष्टबाध। भग० ७। अव्याबाधम्–उपरतसकलपीड मौक्षम्। उत्त० ५७८।

अव्वाबाह–शुक्राभविमानवासी सप्तमो लोकान्तिकदेव। भग० २७१। ठाणा० ४३२। अव्याबाध सप्तमलोकान्तिकदेव। आव० १३५। अपीडाकारित्वम्। सम० ५।

अव्वायडा–अव्याकृता, अस्पष्टा अप्रकटार्था, असत्यामृषाभाषाभेद। दश० २१०।

अव्वावारपोसहे–अव्यापारपौषध'। आव० ८३५।

अव्वाहयं – अव्याहतम्, एकान्तिकमिहपरलोकाविरुद्धं फलान्तराबाधितं वा। आव० ४१५।

अव्वाहितो–अव्याहित', अनाहूत। जीवा० १६६।

अव्वितिगिट्ठ – अव्यतिकृष्टे, उद्घाटाया पौरुष्यामित्यर्थ। व्य० द्वि० २२७ आ।

अव्वुक्कंताई – अव्युत्क्रान्ता, अविध्वस्तपर्याया। आचा० ३४८।

अव्वुच्छित्तिनयट्ठया–अव्युच्छित्तिनयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २८६।

अव्वुच्छिन्ननयट्ठता–अव्यवच्छिन्ननयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २५८।

अव्वो–सबोधने, अहम्। व्य० द्वि० २०३ आ।

अव्वोगडं–अव्याकृतम्, गुरुभिर्विशेपतोऽनाख्यातम्। भग० १००। दायादादिभिरविभक्त अननुज्ञातं वा। बृ० तृ० ५० अ। अव्याकृतं नामदायिना सामान्यं न पुनस्तैर्विभक्त, यदिविकृतं न केनापि विकारमापादित, यद् भवेत् पूर्वराजेन सदिष्टं, वंशस्य परम्परया समागतम्। व्य० द्वि० २७९ आ। अविभक्तम्। व्य० द्वि० २७९ अ। अव्यक्तोऽपरिस्फुट। आचा० ३२०।

अव्वोगडा–अव्याकृता, अविसस्ता। आव० ७२७। कृतेऽपि भागे निर्देशहीना अशिका। बृ० द्वि० १९९ आ। अंतगम्भीरशब्दार्था, अव्यक्ताक्षरप्रयुक्ता वा असत्यामृषाद्वादशभेद। प्रज्ञा० २५६।

अव्वोच्छित्तिणए – अव्यवच्छित्तिनय, द्रव्यास्तिकनय। उत्त० १५।

अव्वोच्छित्तिणयट्ठया–अव्यवच्छित्तिनयार्थता, अव्यवच्छित्तिप्रधानो नयोऽव्यवच्छित्तिनयस्तस्यार्थो-द्रव्यमव्यवच्छित्तिनयार्थस्तद्भावस्तत्ता। भग० ३०२।

अव्वोच्छिन्न–अव्यवच्छिन्नम्, अखण्डितम्। आचा० ४०५। अव्यवच्छिन्ना', अनवरतम्। ओघ० १२६।

अव्वोच्छिन्ना–कृतेऽपि भागे मूलराशेरव्यवच्छेदो यावत्। बृ० द्वि० १९९ आ।

अव्वोच्छिन्नाओ–अव्यवच्छिन्ना, व्यवच्छिन्ना–जीवरहिता न व्यवच्छिन्ना अव्यवच्छिन्ना'। आचा० ३२३।

अव्वोयडा–अव्याकृता, गम्भीरशब्दार्था मन्मनाक्षरप्रयुक्ता वाऽनाविर्भावितार्था। भग० ५००।

अशरणानुप्रेक्षा – अशरणस्य–अत्राणस्यात्मनोऽनुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

अशुषिरे–अज्झुसिरे, तृणपर्णाद्यनाकीर्णे। उत्त० ५१८।

अशून्यान्तरा–न शून्यानि अन्तराणि यासा ता। आव० ३५।

अशोकपल्लवप्रविभक्ति – विंशतितमो नाट्यविधि.। जीवा० २४७।

अशोकलता–लताविशेष'। आचा० ३०।

अश्रयः–(अस), कोणा, कोऽस्य। ठाणा० ४३५। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिता शरीरावयवा पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम्, दक्षिणस्कन्धस्य जानुनश्चान्तरम्, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरमिति। ज० प्र० १५। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिता. शरीरावयवा। ठाणा० ३५७।

अश्रुतनिश्रितम्–यत्पुन पूर्वं तदपरिकर्मितमते क्षयोपशमपटीयस्त्वादौत्पत्तिक्यादिलक्षणमुपजायते तत्। आव० ९।

अश्वंदमः–वाहक.। उत्त० ६२।

अश्विनी–प्रथमं नक्षत्रम्.। दश० २३६।

अष्टभाग–अट्ठभागो–अष्टमो भाग। भग० ८३२।

अष्टमीपौषध –अट्ठमीपोसहो – अष्टम्या पौषध –उपवासादिकोऽष्टमीपौषध। आचा० ३२७।

अष्टमीपौषधिका – अट्ठमीपोसहिया–उत्सवा। आचा० ३२७।

अष्टापदम्–अट्ठावय, तीर्थविशेष। आचा० ४१८। आव० २८७। बृ० तृ० ५२ अ।

अष्टाष्टकिका–चतु षष्टि । व्य० द्वि० ३४७ आ ।
अष्ठीवती–जानुनी । प्रश्न० ८० ।
अष्ठीवान्–जानु । जीवा० २७० ।
असंकप्पिय–असकल्पित, असङ्कल्पितानि च तानि शब्दादिविषयभावेन परिणतद्रव्यरूपाणि । विशे० १४५ ।
असंकमणो–अशङ्कमना, न विद्यते शङ्का यस्य मनसस्तदशङ्कम्, अशङ्क मनो यस्य स । आचा० १२२ ।
असंकिया–अशङ्किता । आव० ५६१ ।
असंकिलिट्ठ–असङ्क्लिष्टम्, निर्दूषणम् । औप० ४९ । विशुद्ध्यमानपरिणामवान् । प्रश्न० ११० ।
असंक्षेपकालः । ठाणा० ३७८ ।
असंखडं–कलह', वैर वा । बृ० तृ० ४८ अ । बृ० प्र० ८६ अ । नि० चू० प्र० ३१ अ । कलह' । (गणि०) । ओघ ८० ।
असंखडबोलो–कलहबोल । आव० ६५४ ।
असंखडि । आव० ६३० ।
असंखडिओ–असङ्खडिक, कलहकारक । ओघ० १५१ ।
असंखयं–असस्कृतम् । दश० १०५ । उत्तराध्ययनेषु चतुर्थमध्ययनम् । उत्त० ९ । सम० ६४ ।
असंखया–असङ्खयका, मङ्खयाविरहिता । उत्त० ३१६ ।
असंखेज्जजीविया – असङ्ख्यातजीविका वृक्षविशेषा । भग० ३६४ । यथा निम्बाम्रादीना मूलकन्दस्कन्धत्वक्छाखाप्रवाला । ठाणा० १२२ ।
असंखेज्जवित्थडे–असङ्खयेयविस्तृत, असंङ्खयेयं विस्तृतं यस्य स । जीवा० १०६ ।
असंखेप्पद्धा – असङ्क्षेप्याद्धा, त्रिभागादिना प्रकारेण या सङ्क्षेप्तुं न शक्यते सा चासौ अद्धा च । प्रज्ञा० ४८९ ।
असङ्खयेयकः । अनु० २४० ।
असंगहरुई–असङ्ग्रहरुचि, गच्छोपग्रहकरस्य–पीठादिकस्योपकरणस्यैषणा दोषविमुक्तस्य लभ्यमानस्यात्मभरित्वेन न विद्यते सङ्ग्रहे रुचिर्यस्यासौ । प्रश्न० १२५ ।
असंगे – असङ्ग, वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देव । भग० २०० ।
असंघयणो – आदिल्लेहिं तिहिं सघयणेहिं वज्जितो । नि० चू० तृ० १३१ अ ।
असंघातिमो–एगंगिओ । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।
असंचइआ–असचयिता –ये मासिके द्वैमासिके त्रैमासिके चतुर्मासिके पञ्चमासिके षण्मासिके वा प्रायश्चित्ते वर्त्तन्ते ते । व्य० प्र० ९७ आ ।
असंचेअयओ–असचेतयत, अजानानस्य । ओघ० २२० ।
असंजअ–असयत, गृहस्थ । आचा० ३४२ । अप्रशस्ताध्यवसायवान् । विशे० १०२७ ।
असंजगविसओ – भगवया पडिसिद्धो । नि० चू० द्वि० १८ अ ।
असंजण–असगो, अगेही । नि० चू० प्र० ८१ अ ।
असंजमो–असयम, प्राणवधस्य चतुर्दशपर्यायः । प्रश्न० ५ । अधर्मद्वारस्य षष्ठं नाम । प्रश्न० ४३ ।
असंजय – असयत चरणपरिणामशून्य. । भग० ४९ । गृहस्थ । दश० २२२ । असयमवान् । प्रश्न० ३० ।
असंजलं – जम्बूद्वीपैरवते पञ्चदशतीर्थंकरनाम । सम० १५३ ।
असंजातकिणस्कन्धः । आचा० ८७ ।
असंजोगरया–असयोगरता –सयोग –सम्बन्ध पुत्रकलत्रमित्रादिजनितस्तत्र रता सयोगरतास्तद्विपर्ययेणैकत्वभावनाभाविता असयोगरता । आचा० १८० ।
असंजोगिमे – असयोगिम, सयोगिमाद्विपरीत आदित्यबिम्बादि । उत्त० २१२ ।
असज्झा–असन्ध्या, विगतसन्ध्या । ओघ० २०२ ।
असण्णी–असज्ञी–अविदितपूर्वमूदातम् । व्य० द्वि० ३७७ आ ।
असंतई–असन्तान', असत्ता वा । बृ० प्र० । असन्तति. (त्ता) परिणामविशेप । आव० ८४८ ।
असंतकं–असत्कम्, असदर्थाभिधानरूपत्वात, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चम नाम । प्रश्न० २६ ।
असंतगं–असत, असद्भुतार्थम् । अशान्तं–अनुपशमप्रधानम्, अशोभनं वा । प्रश्न० १२१ । असत्क–अविद्यमानार्थम्, असत्यमिति । प्रश्न० ३६ ।
असंतती–भायणवोच्छेदो अभाव इत्यर्थ । नि० चू० द्वि० ११६ आ ।
असंतय – अशान्तक, अनुपशान्त, असत्–अशोभनम् । प्रश्न० ४१ ।
असंतरणए–असस्तरणे । ओघ० १४३ ।
असंतासंते–मार्गितस्याप्यलाभ । बृ० द्वि० २७२ आ ।

असंते-असन्, नाभाववचन शब्दोऽयम्। आचा० ७४। अविद्यमान.। उत्त० ६१७।

असंतोसो-असन्तोष., परिग्रहस्य त्रिंशत्तम नाम। प्रश्न० ९३।

असंथडाइं – असस्तृतानि, बीजादिभिरव्याप्तानि। उत्त० ४८७।

असंथडो-छट्ठऽट्ठमादिणा तवेण किलंतो असथडो, गेलण्णेण वा दुब्बलशरीरो, दीहठाणेण वा पज्जंत अलभतो। नि० चू० प्र० ३१३ अ।

असंथरताणं-अणुघट्टंताणं। ओघ० ७८।

असंथरमाणा-असस्तरमाणा, अतृप्ता। ओघ० ७८।

असंथरे-असस्तरताम्। ओघ० १५४।

असंथुओ-इय वइरित्तो सणायगो अनायगो वा। नि० चू० द्वि० १२१ आ।

असंदिग्धम् – वाण्यतिशयविशेष', असशयकारिता। मम० ६३।

असंदिग्धवचनता-परिस्फुटवचनता। उत्त० ३९।

असंदिद्धं – असन्दिग्धा, स्पष्टाम्। दश० २१३। असन्दिग्धम्-सूत्रस्य द्वितीयगुण, सैन्धवशब्दवल्लवणघोटकांबनेकार्थसशयकारि न भवति। आव० ३७६। सन्देहवर्जितम्। भग० १२१।

असंदीणो – असन्दीन, सन्दीनादितर' जलप्लावनात् न क्षयमाप्नोति। उत्त० २१२। आदित्यचन्द्रमण्यादि। आचा० २४७। प्रचुरेन्धनतया विवक्षितकालावस्थायि। आचा० २४७। कपतापच्छेदनिर्घटितोऽसन्दीन। आचा० २४८। कुतर्कप्रधृष्यतयाऽसन्दीन् अक्षोभ्य, प्राणिना त्राणायाश्वासभूमि.। आचा० २४८।

असंधिए-असन्धिन, असयोजित'। उत्त० २१२।

असंधिया-पोरवज्जिता। नि० चू० प्र० १६१ अ।

असंनिहिसंचय-असन्निधिसञ्चय, न विद्यते सन्निधिरूप सञ्चयो यस्य स। जीवा० २०८।

असंपओगचिंता – कथञ्चिद्भावे सत्यसम्प्रयोगचिन्ता। आव० ५८५।

असंपओगाणुसरणं – सति वियोगे सम्प्रयोगानुस्मरणम्-चिन्तनम्। आव० ५८८।

असंपग्गहिया-असप्रग्रहिता-सप्रग्रहरहितता। व्य० द्वि० ३९१ अ।

असंपत्त-असम्प्राप्त। दश० १९४। असलग्नम्। जीवा० १८१। विशिष्टान् वर्णादीननुपगत। जीवा० २३।

असंप्रग्रह.-आत्मनो जात्याद्युत्सेकरूपग्राहवर्जनमिति भाव। ठाणा० ४२३।

असंप्रग्रहता-असम्प्रग्रह', समन्तात्प्रकर्षेण जात्यादिप्रकृष्टतालक्षणेन ग्रहणम्-आत्मनोऽवधारण सम्प्रग्रहस्तदभाव। जात्याद्यनुत्सिक्ततेति। उत्त० ३९।

असंफुरो-असवृत। बृ० तृ० ३ आ, बृ० द्वि० २२४ आ। सङ्कुचितपादो, ग्लान। बृ० द्वि० २२९ अ।

असंबद्धं-असम्बद्धम्, स्वशरीरात्पृथग्भूतम्। जीवा० १२०।

असंभंते-असम्भ्रान्तम्, असम्भ्रान्तज्ञान। भग० १४०।

असंभवंता-असम्भवन्त, ते गौरवत्रिकान्यतरदोषाज्ज्ञानादिके मोक्षमार्गे न सम्यग्भवन्त-नोपदेशे वर्तमाना'। आचा० २५०।

असंभासो-असम्भाष्य। आव० २२१।

असंभम-असम्भ्रम, न भयं कर्त्तव्यम्। ओघ० ५२।

असंमत्तं-असम्यक्त्वम्, द्वाविंशतितम परीषह। आव० ६५७।

असंलोए – असलोके, न विद्यते सलोको-दूरस्थितस्यापि स्वपक्षादेरालोको यस्मिंस्तत्। उत्त० ५१८। आचा० ३३५।

असंववहारिए – असाव्यवहारिक, अनादिकालादारभ्य निगोदावस्थामुपगता एवावतिष्ठन्ते ते व्यवहारपथातीतत्वात्। प्रज्ञा० ३८०।

असंविग्गा-पासत्थोसण्णो कुसीलो ससत्तो अहछंदो। नि० चू० तृ० ३३ अ।

असंविभागी-सविभजति-गुरुग्लानबालादिभ्य उचितमशनादि यच्छतीत्येवशील सविभागी, न तथा य आत्मपोषकत्वेनैव स। उत्त० ४३४। आचार्यग्लानादीनामेपणागुणविशुद्धिलब्ध सन्न विभजतेऽसौ। प्रश्न० १२५।

असंवुडणं। नि० चू० प्र० २१६ आ।

असंवुडबउसो – असवृतबकुश', यो मूलगुणादिष्वसवृतसन करोति, बकुशस्य चतुर्थो भेद। उत्त० २५६। भग० ८९०। प्रकटकारी। ठाणा० ३३७।

असंवुडे–असंवृत॰, प्रमत्त । भग॰ ३१५।
असंशुद्धम्–सङ्कीर्णम् । आव॰ ७६०।
असंसट्ठा–दायगो असंसट्ठेहिं हत्थमत्तेहिं देतित्ति । नि॰ चू॰ तृ॰ १२ अ । असंसट्ठा–अक्खरडिय । ठाणा॰ ३८६ ।
असंसारसमावण्णा–असंसारसमापन्ना, मुक्ता । प्रज्ञा॰ १८ ।
असंसारो–असंसार॰, संसारप्रतिपक्षभूतो मोक्ष । जीवा॰ ८ । न संसारोऽसंसार, मोक्ष । प्रज्ञा॰ १८ ।
असंहनन–असंघयण, आदिमाना त्रयाणां संहनननामन्यतमेनापि संहननेन विकल । व्य॰ प्र॰ ११४ अ ।
अस–अशनरूपाणि । व्य॰ द्वि॰ १२९ आ ।
असइं–असकृद्, अनेकधा । उत्त॰ ३१३ ।
असइ–अशति, अवाङ्मुखहस्ततलरूपा मुष्टि । जं॰ प्र॰ २८४ ।
असई–असती । ओघ॰ १४६ । संस्तरणाभावे । बृ॰ द्वि॰ १९३ आ ।
असईपोसणया–असतीपोषणता, असती पोषयति । आव॰ ८२९ ।
असक्कओ–असंस्कृत, स्वभावसम्पन्न । आव॰ ११४ ।
असक्कय–असंस्कृत, न विद्यते संस्कृतं–संस्कारो यस्य स । असत्कृत –अविद्यमानसत्कार । प्रश्न॰ ४१ ।
असक्कयमसक्कय–असंस्कृतासत्कृत, अविद्यमानसंस्कारसत्कार । न विद्यते संस्कृत–संस्कारो यस्य सोऽसंस्कृत॰, असत्कृतः–अविद्यमानसत्कारः । प्रश्न॰ ४१ ।
असगडतातो–ज्ञानासहन॰ । (मर॰)
असगडपिया–अशकटपिता, अशकटाया पिता । उत्त॰ १३० । नामविशेष । व्य॰ प्र॰ १८ अ । नि॰ चू॰ प्र॰ १५ अ ।
असगडा–अशकटा । उत्त॰ १२९, १३० । एतन्नाम्नी आभीरपुत्री । दश॰ १०५ ।
असगडाताए–अशकटापिता । व्य॰ प्र॰ १८ अ ।
असच्चसंधत्तणं – असत्यसन्धत्वम्, असत्य–अलीक सन्दधाति अच्छिन्न करोतीति, तद्भाव । द्वितीयाधर्मद्वारस्य षड्विंशतितमं नाम । प्रश्न॰ २६ ।
असच्चो–असत्य, सद्भ्योऽहित । प्रश्न॰ ३० ।
असज्झं(ब्भं)–ग्राम्यवचनं, कर्कशं, कटुक, निष्ठुरं, जकारादिक वा । नि॰ चू॰ तृ॰ ८० आ ।
असज्झाइयं – अस्वाध्यायिकम्, अशोभन आध्याय एव, रुधिरादि कारणे कार्योपचारात् । आव॰ ७३१ ।
असढ–शठभावरहित । ओघ॰ २२० ।
असढकारणो–'सढ' च्छादने, जो अप्पाणं मायाए ठाति–असढो होऊणं करण करेति । नि॰ चू॰ तृ॰ १४९ अ ।
असढत्तणं–अशठत्वम् । आव॰ ५२ ।
असण–अशनम्, घृतपूर्णादि । आव॰ ८११ । मण्डकौदनादि, आशु–शीघ्र क्षुधा–बुभुक्षा शमयतीति । आव॰ ८५० । बीजक । आव॰ १८६ । अश्यत इत्यशनम्, ओदनादि । दश॰ १४९ । अश्यते–भुज्यत इति अशेषाहाराभिधानम् । उत्त॰ ६०० ।
असणवण–अशनवनम्, बीजवनम् । आव॰ १८६ । वनविशेष । भग॰ ३६ ।
असणि–अशनि॰, वज्रम् । दश॰ १६४ । आकाशे पतन्नग्निमय कण । जीवा॰ २९ । प्रज्ञा॰ २९ । वइरोयणिंदस्स अग्गमहिसी । भग॰ ५०४ । ठाणा॰ २०४ ।
असणिमेहा–अशनिमेघा, करकादिनिपातवन्त, पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वज्रमेघा॰ । जं॰ प्र॰ १६८ । करकादिनिपातवन्त पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वा वज्रमेघा । भग॰ ३०६ ।
असणे–अशन, वृक्षविशेष । प्रज्ञा॰ ३१ । बीयक । उत्त॰ ६५३ ।
असण्णातय–असज्ञातीय । आव॰ ८४६ ।
असतिं–असकृत्, अनेकवारम् । जीवा॰ १२८ ।
असतिणिवेसणे । नि॰ चू॰ प्र॰ १६२ अ ।
असतिवाडगा । नि॰ चू॰ प्र॰ १६२ अ ।
असतिसाहीओ । नि॰ चू॰ प्र॰ १६२ अ ।
असत्थ–अशस्त्रम्, सप्तदशभेद संयमः । आचा॰ ५३ ।
असत्थस्स–अशस्त्रस्य, निरवद्यानुष्ठानरूपस्य संयमस्य । आचा॰ १५६ ।
असदध्यारोपणम्–आव॰ ८२१ ।
असद्–अविद्यमानम् । उत्त॰ ३४७ ।

असद्दहंतो-अश्रद्धानः, अश्रद्दधान । आव० १८९ ।
असद्दहणं-अश्रद्धानम् । आव० ५७३ ।
असद्भुतैः-साधोः कर्तुमयुक्तै. । आचा० २४२ ।
असनिरूपेण-ईतिरूपो हि पतङ्गादेरापात इति दश० १६४ ।
असनो-अशन, बीयकः । आचा० ४११ ।
असन्निआउए-असंज्ञ्यायु', असञ्ज्ञी सन् परभवयोग्य बद्धमांयु । भग० ५१ ।
असन्निभूए-असञ्ज्ञिभूत', असञ्ज्ञिभ्य उत्पन्न. । प्रज्ञा० ५५८ ।
असन्निभूय-असञ्ज्ञीभूता, असञ्ज्ञिनां या जायते सा । प्रज्ञा० ३३९ ।
असन्नी-असञ्ज्ञी, मिथ्यादृष्टिरमनस्को वा । प्रज्ञा० ३३९ । यथोक्तमनोविज्ञानविकल । प्रज्ञा० ५३३, ४०७ ।
असबलायारे-अशबलो यस्य सितासितवर्णोपेतबलीवर्द इव कर्बुर आचारो-विनयशिक्षाभाषागोचरादिक. । व्य० प्र० २३५ अ ।
असबलो-अशबल', एकान्तशुद्ध । उत्त० २५७ ।
असब्भं - असभ्यम्, अनुचितं जकारमकारादि । आव० ५८८ ।
असब्भावं-असद्भावम्, अविद्यमानाः सन्त -परमार्थसन्तो भावा-जीवादयोऽभिधेयभूता यस्मिन् तत् । उत्त० १५१ ।
असब्भावगिहंतरं-गृहस्य पार्श्वत पुरोहडेऽङ्गणे मध्ये वा । बृ० तृ० २३ आ ।
असब्भावठवणा - एक एवाक्ष' पिण्डकल्पनया बुद्ध्या कल्प्यते तत् । ओघ० १२९ । असद्भावस्थापना, असद्भावकल्पना । जीवा० १२२ ।
असब्भावपट्ठवणा-असद्भावप्रस्थापना । आव० १५१ ।
असब्भावभावणा-असद्भावभावना । उत्त० १६५, २२३ ।
असब्भावुब्भावणा - असद्भावोद्भावना । उत्त० १५७ । आव० ३१४ ।
असब्भावो-असद्भाव । आव० ३२० ।
असब्भूए - असद्भुतम्, अभूतोद्भावनरूपमशोभनरूपं वा । भग० २३२ ।
असब्भूय-असद्भुतम्, अनृतम् । आव० ५८८ ।
असभ्यम्-अश्लीलम् । आव० ८३४ । खरपरुषादि । उत्त० ३४७ ।
असमंजसं-अननुकूलम् । उत्त० २२६ ।
असमओ - असमय', असम्यगाचार, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चविंशतितम नाम । प्रश्न० २६ ।
असमणपाउग्गो-अश्रमणप्रायोग्य. । आव० ७७८ ।
असमणुन्न - असमनुज्ञ', आचाराङ्गेऽष्टमाध्ययनस्य प्रथमोद्देशक । आचा० २६० । असमनोज्ञा', असाम्भोगिकाः । ओघ० ५४ ।
असमर्था-अतिभारेण न शक्नुवन्ति फलानि धारयितुम् । आचा० ३९१ ।
असमाणो-असमान', न विद्यते समानोऽस्य गृहिष्वाश्रयामूर्च्छितत्वेनान्यतीर्थिकेषु वाऽनियतविहारादिनेति, असदृग. समानो वा साहङ्कारो न तथेति । उत्त० १०७ ।
असमारभमाणस्स - असमारभमाणस्य, सङ्घट्टादीनामविषयीकुर्वत । ठाणा० ३२४ ।
असमासदोसो-असमासदोष, समासव्यत्यय सूत्रदोषविशेष । आव० ३७४ ।
असमाहडा-असमाहृता, अनङ्गीकृता । सूत्र० ३१४ ।
असमाहडाए-अशुद्धया लेश्यया-उद्गमादिदोषदुष्टमिदमित्येवं चित्तविप्लुत्या । आचा० ३३२ ।
असमाहि-असमाधि, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा । आव० ४९९ । समाधि -समाधानं-ज्ञानादिषु चित्तैकाग्र्यं, न समाधि । उत्त० ६१४ । चित्तोद्वेगरूपम् । उत्त० ५५१ ।
असमाहिकरो-असमाधिकर, अस्वास्थ्यनिबन्धनकर । आव० ४९९ ।
असमाहिठाणा - असमाधिस्थानानि, न चित्तस्वास्थ्यस्याश्रया । प्रश्न० १४४ । सम० ३७ ।
असमिक्खियप्पलावी - बुद्धीए अणूहिय पुव्वावरं इहपरलोयगुणदोस वा जो सहसा भणइ । नि० चू० तृ० ८० आ । असमीक्षितप्रलापी, अपर्यालोचितानर्थकवादी । प्रश्न० ३६ ।
असमित्त-अश्वमित्र । विशे० ९३८ ।
असमीक्ष्य-अनालोच्य । उत्त० ३८७ ।
असमोहएणं-अनुपयुक्तेनात्मना । भग० २८९ ।
असमोहयावि-दण्डादुपरता असमुद्घाता वा । भग० ६६४ ।
असम्मोहे - असम्मोह, देवादिकृतमायाजनितस्य सूक्ष्म-

पदार्थविषयस्य च सम्मोहस्य मूढताया निषेधात्। ठाणा० १९२।

असरण–अशरण, शरणरहित, अर्थप्रापकाभावात्। प्रश्न० ११। अर्थकारकविरहित। प्रश्न० १९। गृहं नात्र शरणमस्तीत्यशरण' सयम। आचा० ३०३। शरणमनालम्बमानोऽदीनमनस्क'। आचा० ३०६।

असहीण–अमत। बृ० द्वि० १८७ अ। अस्वाधीन', परायत्त। आचा० १५२।

असहु–सुकुमारो राजपुत्रादिप्रव्रजित। ठाणा० १३८। अशक्तिष्ट। नि० चू० प्र० ३६० अ। असहिष्णु। ओघ० १४३। सुकुमारशरीरं। उप० मा० गा० ४०३। असमर्थ–राजपुत्रादि.। ओघ० १३८।

असहू–असमर्थ–क्षुत्पीडित। ओघ० ४४। राजादिदीक्षित'। बृ० द्वि० २२४ अ। रायाजुवराया सेट्ठि अमच्च पुरोहिया य एते असहू। नि० चू० प्र० १०१ अ। भिक्षावेला प्रतिपालयितुमशक्त। ओघ० ८६। असहिष्णु। आव० ८५८। असमर्थ। ओघ० १९५।

असांव्यवहारिक'–छेक। आव० ५२७।

असाए–असात, असातोदयकलित। जीवा० १३०।

असाढभूई–आसाढभूति, मायापिण्डोदाहरणे धर्मरुचिशिष्य। पिण्ड० १३७।

असाढए–तृणविशेष। प्रज्ञा० ३३।

असाढा–अषाढा, पूर्वोत्तराषाढानक्षत्रविशेष'। आव० १२०।

असाधू–असाधव, असयता। ठाणा० ३९९।

असामन्नं असामान्यम्, अनाचीर्णपूर्वम्। सूर्य० २३८।

असारजरढा–अकालवृद्धा। ओघ० २१८।

असारणा–अगवेषणा। बृ० प्र० १५३ अ।

असारवणा–अगवेषणा। नि० चू० द्वि० १३६ अ।

असारहिए–असारथिक, सारथिरहित। भग० ३२२।

असारिए–असागारिके। नि० चू० द्वि० ३१ आ।

असावज्जं–असावद्यम्, आयतनस्य प्रथम पर्याय.। ओघ० २२२।

असासए–अशाश्वतम्, प्रतिक्षणमावीचीमरणेन मरणम्। आचा० ६६। क्षणनश्वरत्वम्। भग० ४६९।

असासयं–अशाश्वतम्, प्रतिक्षण विशरारुत्वम्–अनित्यम्। प्रश्न० ९६।

असाहुया–असाधुता, द्रोहस्वभावता। उत्त० ११४।

असाहू–असाधु', अपगतभावसाधुत्व.। उत्त० ५८।

असि–असि', खड्ग.। जीवा० ११७। भग० १८२। प्रज्ञा० ९७। तलवार.। आव० ५८८, ४८७, ३६०। खड्गाभ्यासम्। प्रश्न० ९७। खड्ग.-करवालः। भग० १९१। शस्त्रविशेषः। आव० ३६०।

असिअं–असितम्, कृष्णमशुभं च ससारानुबन्धित्वात्। आव० ४३९।

असिअपत्तं–दात्रेण। भग० ६५०।

असिए–असित–अबद्ध–तैः सार्धं सगमकुर्वन् भिक्षु। आचा० ४३०।

असिकच्छप–अस्थिकच्छप', कच्छपविशेष.। सम० १३५।

असिक्खग–अशिक्षक, चिरप्रव्रजित। दशा० ३९।

असिखेडगं–असिखेटकम्, असिना सह फलकम्। प्रश्न० २१।

असिचम्मपायं–असिचर्मपात्रम्–स्फुरक, अथवा असि'–खड्गश्चर्मपात्र च–स्फुरक, खड्गकोशको वा। भग० १९१।

असिचम्मपायहत्थकिच्चगए–असिचर्मपात्रहस्तकृत्वाकृत, असिचर्मपात्र हस्ते यस्य स तथा कृत्यं–सङ्घादिप्रयोजनं गत–आश्रित कृत्यगतस्तत' कर्मधारय, अथवाऽसिचर्मपात्रं कृत्वा हस्ते कृत येनासौ असिचर्मपात्रहस्तकृत्वाकृत, प्राकृतत्वाच्चैव समास', अथवाऽसिचर्मपात्रस्य हस्तकृत्या–हस्तकरणं गत'–प्राप्तो यः स तथा। भग० १९१।

असिट्ठो–अशिष्ट, अप्रतिपादित। प्रश्न० १११। अशिष्ट'। आव० २९८।

असिणाइ–अन्ये श्रमणादयो येऽमुमप्रपिण्डमशितवन्त। आचा० ३३७।

असिणाणए–अस्नानतया। आचा० ३६४।

असिता–गृहवासविमुक्ता। आचा० २२२।

असिद्ध–न सिद्ध, हेतुदोषविशेष। ठाणा० ४९३। समारी। जीवा० ४३६।

असिपंजरं–असिपञ्जरम्, शक्तिपञ्जरम्। प्रश्न० ११५।

असिपत्त–असिपत्र, असीना पत्रम्। विपा० ७१। खड्गपत्रम्। जीवा० १०६। असि.–खड्ग स एव पत्रम्। ठाणा० २७३। असय.–खड्गास्तद्वच्छेदकतया पत्राणि–पर्णानि यस्मिंस्तत। उत्त० ४६०। प्रज्ञा० ८०। परमा-

धार्मिकेषु नवमः। उत्त० ६१४। नवम. परमाधार्मिक। आव० ६५०। सूत्र० १२४। सम० २९।

असिपुत्रिक। उत्त० ४५।

असिय–असित, कृष्ण। प्रज्ञा० ९१।

असियअं–दात्रम्। आव० २९५।

असियग–असियगम्, दात्रम्। आचा० ६१।

असिरयणं–असिरत्नम्, चक्रवर्त्तेरेकेन्द्रियपञ्चमरत्नम्। जं० प्र० २३८। ठाणा० ३९८।

असिलट्ठी–असियष्टिः, खड्गलता। विपा० ५६। असि–खड्ग स एव यष्टि–दण्डोऽसियष्टिः, अथवा असिश्च यष्टिश्च। जं० प्र० २६४।

असिलायं–विखरम्। बृ० तृ० २५ आ।

असिलिट्ठं–अश्लिष्टम्। आव० ९९।

असिलोगभते–अश्लोकभयम्, अकीर्त्तिभयम्। ठाणा० ३८९। अश्लाघाभयम्। आव० ४७२।

असिलोगो–अश्लाघा, अयशः। आव० ६४६।

असिव–अशिवम्, व्यन्तरकृतं व्यसनम्। आव० ६२६। उद्दाइयाए अभिद्रुत। नि० चू० प्र० ९७ अ। नि० चू० प्र० ७५ अ। व्यन्तरकृत उपद्रवः। बृ० प्र० २३१ अ। देवतादिजनितो ज्वराद्युपद्रव। ओघ० १३, १४।

असिवाइखेत्तं–अशिवादिक्षेत्रम्, अशिवादिप्रधानं क्षेत्रम्, आदिशब्दादूनोदरताराजद्विष्टादिपरिग्रह। दश० ३९।

असिवुवसमणी–अशिवोपशमनी कृष्णस्य चतुर्थी भेरी। आव० ९७।

असिवोवसमणी–अशिवोपशमनी, कृष्णस्य चतुर्थी भेरी, षण्मासान् सर्वे रोगोपशमनी। बृ० प्र० ५६ अ।

असी–असि, अस्युपलक्षित सेवकपुरुष। जीवा० २७९। हीरो। नि० चू० द्वि० १४१ अ। खड्ग, यमुपजीव्य जनः सुखवृत्तिको भवति, यद्वा साहचर्यलक्षणया असिशब्देन अत्र अस्युपलक्षिता पुरुषा गृह्यन्ते। जं० प्र० १२२।

असील–अशील, अविद्यमानशील, सर्वथा विनष्टचारित्रधर्मः। उत्त० ३४५। अशीला–दुःशीला.। ठाणा० ५५३।

असीलया–अशीलता चारित्रवर्जितत्वान्। अब्रह्मणः सप्त दश नाम। प्रश्न० ६६।

असुआ–असूया, अव्याजम्, ईर्ष्या। दश० २४३।

असुइ–अशुचि अश्रुतिर्वा। प्रश्न० ६३। स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जितत्वान् अशुचिः, शास्त्रवर्जितो वा अश्रुतिः। भग० ३०८। स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जिताः, अश्रुतय, शास्त्रवर्जिता। जं० प्र० १७०। विगन्धं शरीरमलादि। जीवा० २८२।

असुण्णंतरा–अशून्यान्तरा., एकोत्तरवृद्धया सर्वेदैवाशून्यान्यव्यवहितान्यन्तराणि यासा ता अशून्यान्तरा। विशे० ३३१।

असुति–अशुचीनि, अमेध्यानि मूत्रपुरीषाणि। ठाणा० ४७६।

असुद्ध–अशुद्धम्, आधाकर्मादि। ओघ० १७७।

असुन्नकाल–अशून्यकाल, नारकभवानुगससारावस्थानकालस्य द्वितीयभेद.। भग० ४७।

असुभ–अशुभकार्ये मृतकस्थापनादौ। व्य० प्र० १६९अ।

असुभजोग–अशुभयोग, अनुपयुक्ततया प्रत्युपेक्षादिकरणम्। भग० ३२।

असुभणाम–अशुभनाम, यदुदयवशात् नाभेरधस्तना पादादयोऽवयवा अशुभा भवन्ति तत्। प्रज्ञा० ४७४।

असुभत्ता–अशुभता, न शुभता। प्रज्ञा० ५०४। अमङ्गल्यता। भग० २५३।

असुभाणुप्पेहा–अशुभानुप्रेक्षा, अशुभत्वं संसारस्यानुप्रेक्षणं–अनुस्मरणम्। ठाणा० १८८।

असुभाते–असुखाय–दुःखाय। ठाणा० १४९। अशुभाय, अपुण्यबन्धाय असुखाय वा। ठाणा० २९२। पापाय, असुखाय वा–दुःखाय। ठाणा० ३५८।

असुयंगं–अश्रुताङ्गम्, नोश्रुताङ्गम्। उत्त० १४४।

असुय–अश्रुत परवचनद्वारेण। भग० २००, ११७।

असुर–रौद्रकर्मकारी। उत्त० २५६।

असुरकुमार–असुरकुमारा, देवविशेषा। भग० ११७। असुराश्च ते नवयौवनतया कुमारा इव कुमाराश्चेत्यसुरकुमारा। ठाणा० २८। भवनपतिभेदविशेष। प्रज्ञा० ६९।

असुरकुमारीओ–असुरकुमार्य, देवीविशेषा। भग० ११७।

असुरदारे–सिद्धायतनस्य द्वितीयं द्वारम्। ठाणा० २३०।

असुरसुरं–असुरसुरम्, अनुकरणशब्दोऽयम्। भग० २९४। सरडसरड अकरिंतो। ओघ० १८७। एवंभतशब्दरहितम्। प्रश्न० ११२।

असुरा–असुरा, न सुरा असुरा, भवनपतिव्यन्तरा। ठाणा० २२। भवनपतिविशेषा, भवनपतिव्यन्तरा वा।

ठाणा० १०४। असुरकुमार । भग० १३५। भवनपति-व्यन्तरलक्षण.। ठाणा० ४६६।

असुरो-असुर., आसुरभावान्वितत्वाद् यक्ष.। उत्त० ३६६। भवनवासी। बृ० द्वि० २६४ अ।

असुह-अशुभम्, अशुभस्वभावम्। भग० ७२। अशुभ - अतीवासातरूप'। जीवा० १०३।

असुहदुक्खभागी - असुखदु खभागी, दु खानुबन्धिदु ख-भागी। भग० ३०८।

असुहया-अशुभदा, असुखदा। आव० २३६।

असुहिय-असुखित., अविद्यमानसुहृद् वा। प्रश्न० ४१।

असूइअ-असूचितम्, व्यञ्जनादिरहितम्। दश० १८१।

असूचया-साक्षात्। ठाणा० ३०४।

असूयपुत्तो-असूयपुत्र । आव० २११।

असूया-अप्पणो दोस भासति ण परस्स। नि० चू० प्र० २७८ अ। आतगता। नि० चू० प्र० २७८ अ।

असूचा-स्फुटमेव परदोषोद्घट्टनम्। बृ० प्र० १२८ अ।

असेयं-मुख। नि० चू० प्र० ८८ आ।

असोंढो-अमज्जमाणो। नि० चू० द्वि० १४४ अ।

असोअ-अशोक, सुप्रभबलदेवपूर्वभवनाम। आव० १६३। अरुणद्वीपे महर्द्धिको देवविशेष । जीवा० ३६७। द्विसप्ततितमग्रह । जं० प्र० ५३५। वृक्षविशेष । जीवा० २२२। किन्नरव्यन्तराणा चैत्यवृक्ष'। ठाणा० ४४२। अशोकनामदेव । जं० प्र० ३२०। लताविशेष । प्रज्ञा० ३२। बिन्दुसारपुत्र.। बृ० प्र० ४७ अ। वृक्षविशेष । भग० ८०३। एकास्थिकवृक्षविशेष । प्रज्ञा० ३१। ठाणा० ७९। मल्लिनाथस्य चैत्यवृक्षः। सम० १५२। विजयपुरस्य नन्दनवनोद्याने यक्ष । विपा० ९५। बिंदुसारपुत्तो। नि० चू० प्र० २४३ अ।

असोगचंदो-अशोकचन्द्र', योगसङ्ग्रहेषु शिक्षाया दृष्टान्त.। आव० ६७९।

असोगदत्तो-अशोकदत्त, मायोदाहरणे स.केतपुरे समुद्रदत्तसागरदत्तपिता। आव० ३९४।

असोगललिए-चतुर्थबलदेवपूर्वभवनाम। सम० १५३।

असोगवण - अशोकवनम्। आव० १८६। पुष्करिण्या वनम्। ठाणा० २३०। वनखण्डनाम। जं० प्र० ३२०। भग० ३७।

असोगसिरी - पाडलिपुत्ते असोगसिरी राया। नि० चू० तृ० ४४ आ। बृ० द्वि० १५३ आ। अशोकश्रीः, बिन्दुसारपुत्र । विशे० ४०९।

असोगा-अशोका, नलिनविजयराजधानी। जं० प्र० ३५७। नागकुमारेन्द्रस्याग्रमहिषी। भग० ५०४। ठाणा० २०४।

असोच्चा-अश्रुत्वा। भग० ४२५। आगमानपेक्षम्। भग० ४५५।

असोणिअ-अशोणितम्, रक्तरहितम्। आव० ७६४।

असोत्थो-अश्वत्थ । आव० ४१७।

असोयणया-अशोचनता, दैन्यानुत्पादनेन। भग० ३५।

असोयलया-अशोकलता, लताविशेष.। भग० ३०६।

असोयवडेंसए। भग० १९४।

असोयाओ। ठाणा० ८०।

असोही-अशोधि, प्रतिसेवना, स्खलना। ओघ० २२५।

अस्तमयनप्रविभक्तिः-नवमनाट्यभेदः। जं० प्र० ४१६।

अस्तान्ते-अत्थतंमि, अस्तमयपर्यन्ते। उत्त० ४३५।

अस्ति-अत्थि, प्रदेशः। ठाणा० १५, ५१६।

अस्तिकायः- अत्थिकाय, धर्म्मादिपञ्चविधास्तिकायमाश्रित्य काय'। आव० ७६७।

अस्तिकायधर्म - अत्थिकायधम्म, अस्तिशब्देन प्रदेशा उच्यन्ते, तेषा कायो-राशिरस्तिकाय. स चासौ सञ्ज्ञया धर्मश्चेति, गत्युपष्टम्भलक्षण धर्मास्तिकाय । ठाणा० १५४। योऽस्तिकायाना धर्मादीना धर्मो-गत्युपष्टम्भादि.। उत्त०५६६।

अस्तिकायाः-अत्थिकाया, अस्तीत्यय त्रिकालवचनो निपात, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति चेति भावना, अतोऽस्ति च ते प्रदेशाना कायाश्च राशय इति, अस्तिशब्देन प्रदेशा. क्वचिदुच्यते, ततश्च तेषा वा काया अस्तिकाया । ठाणा० १९६। अस्तीना-प्रदेशाना सङ्घातात्मकत्वात् काय.। ठाणा० १५।

अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वम् - अत्थिनत्थिप्पवातपुव्वं, चतुर्थं पूर्वम्। ठाणा० ४८४। तत्र यद्वस्तु लोकेऽस्ति धर्मास्तिकायादि यच्च नास्ति खरशृङ्गादि तत् प्रवदति, सर्वं वस्तु स्वरूपेणास्ति पररूपेण नास्तीति प्रवदति। नदी १४१।

अस्थानस्थापनम् - अठाणठवणं - अयोग्यतास्थापनम्। ओघ० १३१।

अस्थिका-अट्ठिग, कपालिकापर्याय । व्य० प्र० २०६ अ।

अस्थितकल्पिकः-साधुभेदविशेष । भग० ४ ।

अस्थिमिंजा-अट्ठिमिंजा, अस्थिमध्यरस । ठाणा० १७० ।

अस्थिमिंजानुसारि-अट्ठिमिंजाणुसारी । ठाणा० ३७५ ।

अस्थिरम्-अथिर, जीर्णम् । आचा० ३९६ ।

अस्थिरणाम -(अथिरणाम), यदुदयवशाज्जिह्वादीनामवयवानामस्थिरता भवति तत् । प्रज्ञा० ४७४ ।

अस्निहः-(अणिह), स्निह्यते-श्लिष्यतेऽष्टप्रकारेण कर्म्मणेति स्निहः, न स्निहोऽस्निह , यदि वा स्निह्यतीति स्निहो रागवान् यो न तथा सोऽस्निहः, उपलक्षणार्थत्वाच्चास्य रागद्वेषरहित इत्यर्थ । आचा० १९१ । स्नेहरहित. । आचा० २१० । स्निह्यतीति स्निहो, न स्निहोऽस्निह – रागद्वेषरहितत्वात् अप्रतिबद्ध । आचा० २५८ ।

अस्पृशद्गति-समयप्रदेशान्तरमस्पृशती । आव० ४४१ ।

अस्फुटितम्-अफुडिआ, सर्वविराधनापरित्याग. । दश० १९६ ।

अस्संजए-असयतः-गृहस्थ , स च श्रावक प्रकृतिभद्रको वा । आचा० ३२९ । असंयता-असयमवन्तः, आरम्भपरिग्रहप्रसक्ता , अब्रह्मचारिण । ठाणा० ५२४ ।

अस्संजतो-गिहत्थो । नि० चू० प्र० ३० आ ।

अस्संजमो – असंयम, प्राणातिपातादिलक्षण । आव० ५१६ ।

अस्संपडियाए – न विद्यते स्वं-द्रव्यमस्य सोऽयमस्वो निर्ग्रन्थ इत्यर्थ , तत्प्रतिज्ञया । आचा० ३२५ ।

अस्सकण्णी – अश्वकर्णी, वनस्पतिविशेष. । आचा० ५७ । साधारणवनस्पतिकायिकभेद. । जीवा० २७ ।

अस्सकन्नि-साधारणबादरवनस्पतिकायविशेष । प्रज्ञा० ३४ ।

अस्सकन्नी-अनन्तकायभेद । भग० ३०० । भग० ८०४ । कन्दविशेष. । उत्त० ६९१ ।

अस्सतरो-अश्वतर , खरतर , एकखुरश्चतुष्पद. । जीवा० ३८ । एकखुरचतुष्पद. । प्रज्ञा० ४५ ।

अस्सपुरं-अश्वपुरम् , पुरपसिंहपुरम् । आव० १६२ ।

अस्सपुरा – अश्वपुरी, पक्ष्मविजयराजधानी । जं० प्र० ३५७ ।

अस्सरोनिवाए – आमरोनिपातः, चपुटिका । जीवा० ३९९ ।

अस्सलालापेलवं । आचा० ४२३ ।

अस्सलेसा-नक्षत्रविशेष । ठाणा० ७७ ।

अस्सवाणियओ-अश्ववणिक् । आव० २२० ।

अस्सवाहणिया-अश्ववाहनिका । उत्त० २७७ । आव० ५६ ।

अस्ससेणे-अश्वसेनः, सनत्कुमारपिता । आव० १६२ । पार्श्वपिता । आव० १६१ ।

अस्सादणसगोत्ते – आस्वादनसगोत्रम् , अश्विनीनक्षत्रगोत्रम् । सूर्य० १५० ।

अस्सामिणी-अस्वामिनी । आव० २२४ ।

अस्सायणे-आश्वायनम् , अश्विनीगोत्रम् । जं० प्र० ५०० ।

अस्सासणे – अष्टाशीतिमहाग्रहे चतुर्दशमहाग्रह. । ठाणा० ७८ ।

अस्सासो – आश्वासः, प्राणिनामेव आश्वासनम् , अहिंसाया पञ्चाशत्तमं नाम । प्रश्न० ९९ ।

अस्सिं-अयम् । ठाणा० १३८ ।

अस्सिंपडियाए-एतत्प्रतिज्ञया एतान् साधून प्रतिज्ञायउद्दिश्य । आचा० ३६१ ।

अस्सिंलोए-अय लोक , अयं मनुष्यलोक । जीवा० ३४४ ।

अस्सिणि-अश्विनी, नक्षत्रविशेष. । सूर्य० १३० । ठाणा० ७७ । मेतार्यजन्मनक्षत्रम् । आव० २५५ ।

अस्सीइ-अश्विनी, नक्षत्रविशेष. । ठाणा० ४६९ ।

अस्सेसा-अश्लेषा । सूर्य० १३० ।

अस्सो-अश्व, घोटक , एकखुरश्चतुष्पद । जीवा० ३८ । अश्व । जीवा० २८४ । प्रज्ञा० ४५ ।

अहं-अधं-अधस्तात् । आचा० ६३ । अध.-बुध्ने । ओघ० १६८ ।

अह-एष । नि० चू० प्र० ११८ अ । व्य० प्र० १०३ आ । अयं । नि० चू० द्वि० ९२ आ ।

अहक्खाओ-यथास्थित । (सू०)

अहक्खायं – अथाख्यातम् , अथशब्दो यथार्थे, आङ्-अभिविधौ, याथातथ्येनाभिविधिना वा यत् ख्यात-कथित अकषायं चारित्रम् । प्रज्ञा० ६८ । यथाख्यातम्-अकषायमित्यर्थ । विशे० ५४७ । यथाख्यातं-सूक्ष्मसम्परायानन्तर सर्वत्र साधुजीवलोके ख्यात-प्रसिद्ध, परमं सर्वविशुद्धं चारित्रम् । विशे० ५५५ । यथाख्यात-यथैवाख्यातम्-अकषायम् । आव० ७८ । यथैवाख्यातं-यथाख्यातं प्रसिद्ध सर्वस्मिन जीवलोके, अकषायचारित्रमिति । आव० ७९ ।

अथशब्दो यथार्थ, आख्यातं-अभिहितं अथाख्यातम्। ठाणा० ३२४।

अहक्खित्तो । नि० चू० प्र० १६४ अ।

अहगुरु-येन प्रव्राजितो यस्य वा पार्श्वे अधीत, रत्नाधिकतरक'। व्य० द्वि० ३९५ अ।

अहछंदो-यथाछन्द, यथैच्छयैवागमनिरपेक्षं प्रवर्त्तते य। आव० ५१८।

अहछंदिया-अथाछन्दिका, अव्यापारिता, स्वयं प्रवृत्ता। बृ० द्वि० २६१ अ।

अहण्णे-अधन्य। उत्त० ३२९।

अहतहं-यथातथ, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे त्रयोदशमध्ययनम्। आव० ६५१। सूत्रकृताङ्गस्य त्रयोदशमध्ययनम्। उत्त० ६१४।

अहतानि । भग० ५०६।

अहत्ता-अधस्ता, गुरुपरिणामता। प्रज्ञा० ५०४। भग० २३। जघन्यता। भग० २५३।

अहत्थे-यथास्थान्, यथावस्थितान् यथार्थान् वा-यथाप्रयोजनान् भावान् जीवादीन्, यथा द्रव्यान्, पर्यायान। ठाणा० ३५१।

अहप्पहाण-यथाप्रधान.। भग० ६७९, ६८३। यथाप्रधान, यो यत्र ग्रामादौ प्रधान। ओघ० ५९।

अहमं-अधमम्, जघन्यम्। आव० ५८५।

अहमंती-अहं अता इति अन्तो-जात्यादिप्रकर्षपर्यन्तोऽस्या स्तीत्यन्त. अहमेव जात्यादिभिरुत्तमतया पर्यन्तवर्त्ती। ठाणा० ४७३।

अहमिंदा-अहमिन्द्राणि, अहं अहं इत्येवमिन्द्रा। सम० ४३।

अहमो-अधम, मलाविलत्वाज्जुगुप्सित। सत्र० ८२।

अहम्म-अधर्म, असयम। दश० २७१। धर्मविपक्ष - पापम्। उत्त० २७४। धर्मप्रतिपक्ष। उत्त० २४८। अध र्म्म, अधर्मपोषक दान अधर्मकारणत्वात। ठाणा० ४९६। भारहरामायणादिपावसुत। नि० चू० द्वि० ४ आ। धर्मविपक्ष विषयासक्तिरूपम्। उत्त० २८५।

अहम्मक्खाई - अधर्माख्यायिन, न धर्ममाख्यान्तीत्येवं शीला, न धर्मात् ख्यातिर्येषा ते। भग० ५६०।

अहम्मखाई-अधर्माख्यायी, अधर्मभाषणशीले। अधर्मख्याति -अधार्मिकप्रसिद्धिको वा। विपा० ४८।

अहम्मजुत्तं-अधर्मयुक्तम्, पापसम्बद्धम्। दश० ५२।

अहम्मपलज्जणे-अधर्मप्ररञ्जन', अधर्मे हिंसादौ प्ररज्यते अनुरागवान् भवतीति। विपा० ४८।

अहम्माणी-अहंमानी, अहमेव विद्वान् इति मानोऽस्येति। आव० २४१।

अहम्माणुए-अधर्मानुग', अधर्मान्-पापलोकान् अनुगच्छतीति। विपा० ४८।

अहम्मिट्ठा-अधर्मीष्टा अधर्मिष्ठा वा-धर्म्म.-श्रुतरूप एवेष्टो-वल्लभ पूजितो वा येषा ते धर्मेष्टा', धर्मिणा वेष्टा धर्मीष्टाः अतिशयेन वा धर्म्मिणो धर्मिष्ठास्तन्निषेधादधर्मेष्टा. अधर्मीष्टा अधर्मिष्ठा वा। भग० ५६०।

अहम्मिट्ठे-अधर्मिष्ठ, अतिशयेनाधर्मो-धर्मरहित.। विपा० ४८। अधर्मेष्ट, अधर्मो-धर्मविपक्ष -पापमिति स इष्ट -अभिलषितोऽस्येति, यद्वा अधर्मगुणयोगादधर्म, अतिशयेनाधर्म। उत्त० २७४।

अहम्मियं-आधार्मिकं-अधार्मिकाणामिदम्। प्रश्न ११०।

अहय-अहतम्, मलमूषिकादिभिरनुपद्रूषित, प्रत्यग्रमिति। औप० ६६। अव्यवच्छिन्नम्। औप० ७४। अपरिमलितम्। जीवा० २५४। तंतुग्गतं। नि० चू० प्र० २५३ अ। आख्यानकप्रतिबद्धम्, अव्याहतं, नित्यं, नित्यानुबन्धि वा। जीवा० २१७। प्रज्ञा० ८९। जं० प्र० ६३। अव्याहतम्। भग० १५४। सूर्य० २६७। अपरिभुक्तम्। भग० २५४।

अहर-अधरम्, अध -नरकतिर्यक्। दश० २७२। नरक। आव० ५३२।

अहरगतिगमणं - अधरगतिगमनम्, अधोगतिगमनकारणम्। प्रज्ञा० ३६८।

अहराई-अहोरात्रिकी। आव० ६४८।

अहव-अथवा-अथार्थे। विशे० ११३०।

अहवण-अथवा। बृ० द्वि० १४ आ। विकल्पप्रदर्शने। नि० चू० प्र० २९० अ। विकल्पार्थो निपात.। बृ० द्वि० २४६ आ।

अहवा-अनन्तरम्। नि० चू० प्र० १८ आ। अथ निपात। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अहव्वणवेद-अथर्वणवेद, चतुर्णा वेदानां चतुर्थ वेद। भग० ११२।

अहसंथडं–निष्प्रकम्पं चम्पकपट्टादि। बृ० तृ० ३१ अ।

अहसिता–न सहेतुकमहेतुकं वा हसन्नेवास्ते। उत्त० ३४५।

अहसुद्धो–यथाशुद्ध, निर्दोषोपदेशदाता। बृ० तृ० ७१ आ।

अहस्सिरे–अहसनशील। उत्त० ३४५।

अहस्ससच्चे–अहास्यात्सत्य, हास्यपरित्यागात्सत्य, द्वितीयव्रतस्य प्रथमा भावना। आव० ६५८।

अहाअत्थं–यथार्थम्–निर्युक्त्यादिव्याख्यानानतिक्रमेणेत्यर्थ.। ठाणा० ३८८। अर्थस्य निर्युक्त्यादेरनतिक्रमेण। ठाणा० ५११।

अहाउअकाल–यथायुष्ककाल, देवाद्यायुष्कलक्षण। दश० ९।

अहाउनिव्वत्तिकाले–यथायुर्निर्वृत्तिकाल, यथा–येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्तिः–बन्धनं, तथा य काल –अवस्थितिरसौ। भग० ५३३।

अहाउयं–यथायुष्कम्, यथाबद्धमायुष्कम्। प्रश्न० १९। यथायुष्कम्। आव० ११५, २५८। यथायु.–आयुषोऽनतिक्रमेण। उत्त० १८८।

अहाकडं–यथाकृतम्, गृहस्थेन स्वार्थं निर्वर्त्तितम्। प्रश्न० १२७।

अहाकडा–आधाकृता, साधूनाधाय–सम्प्रधार्य कृता। बृ० प्र० ९२ अ।

अहाकप्पं–यथाकल्पम्, प्रतिमाकल्पानतिक्रमेण तत्कल्पवस्त्वनतिक्रमेण वा। भग० १२४। कल्पनीयानतिक्रमेण प्रतिमासमाचारानतिक्रमेण वा। ठाणा० ३८८।

अहाकम्मं–यथाकर्म, बद्धकर्मानतिक्रमेण। भग० ६५।

अहाकम्मिए। भग० ४६६।

अहागडा–प्राशुकानि, अल्पपरिकर्माणि। ओघ० ९२।

अहागडे–यथाकृतम्, आत्मार्थमभिनिर्वर्त्तितम्। दश० ७२।

अहाचरा–अधश्चरा – विलवासित्वात्सर्प्पादय। आचा० २९१।

अहाच्चयं–दृष्टिवादे सूत्रभेद.। मम० १२८।

अहाच्छंदे–यथाछन्दान्, स्वच्छन्दान्। ओघ० ५६।

अहाछंद–यथाछन्दा –यथा कथञ्चिन्नागमपरतन्त्रतया छन्द.–अभिप्रायो–बोध। भग० ५०२। यथा स्वाभिप्रेत तथा प्रज्ञापयन्। नि० चू० द्वि० २३ आ।

अहाजातो–अप्पोवधी। नि० चू० द्वि १३१ आ।

अहाजायं–रजोहरणमुखवस्त्रिकाचोलपट्टयुत. रचितकरपुटश्च। बृ० तृ० १० आ।

अहाडं–यथाकृतम्, परिकर्मशून्यं। बृ० द्वि० २०२ आ।

अहाणी–असीयण। नि० चू० प्र० ५ आ।

अहातच्चं–यथातत्त्वम्, तत्त्वानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४। सप्तसप्तमिकेत्यभिधानार्थानतिक्रमेणान्वर्थसत्यापनेनेत्यर्थ.। ठाणा० ३८८। शब्दार्थानतिक्रमेण। ठाणा० ५११।

अहातच्चे–यथातथ्यो यथातत्त्वो वा, यथा–येन प्रकारेण तथ्यं–सत्य तत्त्वं वा। भग० ७०९।

अहातच्चो–जहेव दिट्ठो तहेव जो भवति सो अहातच्चो भवति। नि० चू० द्वि० ८६ अ।

अहापज्जत्तं–यथापर्याप्तम्। भग० ११९।

अहापडिरूवं – यथाप्रतिरूपम्। आव० १९९। भग० ६६१।

अहापदं–यथापदम्। आव० ३५२।

अहापरिग्गहिए–यथाप्रतिगृहीतम्, यथाप्रतिपन्नम्। भग० ११६।

अहापरिन्नायं–यावन्मात्र क्षेत्रमनुजानीषे तावन्मात्रं कालं तावन्मात्रं च क्षेत्रमाश्रित्य वयं वसाम इतियावत्। आचा० ४०३।

अहापवत्तं–यथाप्रवृत्तम्। आव० ११५।

अहाबायरा–यथाबादरा., यथोचितबादरा आहारपुद्गला इत्यर्थ। भग० १८९। यथाबादराणि, स्थूलतरस्कन्धान्यसाराणि। भग० २५१।

अहाबायरे–यथाबादरम्, स्थूलप्रकारम्। भग० २५१। असारम्। भग० १५४।

अहाभद्दगो–यथाभद्रक.। आव० ७३९।

अहाभद्दे–यथाभद्र, शासनबहुमानवान्। बृ० प्र० ३ ३ अ।

अहाभद्दो–दाणरुयी। नि० चू० प्र० १९९ आ। दंसणविरहितो अरहंतेसु तस्सासणे साधू उभयभद्दसीलो। नि० चू० प्र० ३२५ अ।

अहाभावो – स्वपरिग्रहे धारणम्। बृ० द्वि० २४ आ। अधाप्रवृत्ति। नि० चू० प्र० २५१ आ। प्रतिस्वामितं–प्रतिगृहीतं न तु भुज्यते यत्पात्रादि। बृ० द्वि० २८६ आ।

अहामग्गं–यथामार्गम्, ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षायोपशमिकभावानतिक्रमेण वा वर्त्तमानम्। भग० १२४। मार्ग –क्षायोपशमिको भावस्तदनतिक्रमेण। ठाणा० ३८८।
अहारिणो–मनसोऽनिष्टा। आचा० २४२।
अहारियं–यथारीतम्, रीतं–रीति –स्वभाव, तस्यानतिक्रमेण वर्तते तत्, यथास्वभावमित्यर्थ। भग० २१२। यथाऽऽर्यम्। आचा० ३७९। यथाऋजु। आचा० ३८१।
अहालंद – मध्यममष्टपौरुषीमानम्। बृ० तृ० ३५ आ। पोरिसी। नि० चू० तृ० १८ अ। जघन्येन तरुणीदकार्द्रकरगोषकाल, उत्कृष्टत पूर्वकोटी। बृ० द्वि० ३२ आ। सजोगवर्जिते तृतीयभेद। नि० चू० प्र० २३९ अ। यावन्मात्रं कालं भवाननुजानाति। आचा० ४०३।
अहालहुस्सए–स्तोकप्रायश्चित्तदानम्। बृ० तृ० २०९ आ।
अहालहुस्सगाई–यथालघुस्वकानि, 'यथे'ति–यथोचितानि लघुस्वकानि–अमहास्वरूपाणि, महता हि तेषा नेतुं गोपयितुं वाऽशक्यत्वादिति यथालघुस्वकानि, अथालघूनि–महान्ति वरिष्ठानीति वृद्धा। भग०।
अहावच्चा–यथापत्यानि, पुत्रस्थानीया। भग० १९७।
अहासंथडं–णिप्पकपं पट्टं। नि० चू० प्र० १७० अ।
अहासंथडा–अचला। नि० चू० प्र० १६० आ।
अहासच्चं–यथासत्यम्, इद यन्मया कथित कथ्यमानं च तद्यथासत्यम्, याथातथ्यम्। आचा० १८३।
अहासन्निहिआ–यथासन्निहिता। आव० १७५।
अहासम्मं–यथासाम्यम्, समभावानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४।
अहासुत्तं – यथासूत्रम्, सूत्रानतिक्रमेण। ठाणा० ३८८। सामान्यसूत्रानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४।
अहासुहुमणियंठो – यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ, यथासूक्ष्म एतेषु सर्वेषु। उत्त० २५७।
अहासुयं–यथाश्रुत यथासूत्र वा। आचा० ३०१।
अहासुहुमकसायकुसील–कषायकुशीलस्य पञ्चमो भेद। भग० ८९०।
अहासुहुमपुलाए-पुलाकस्य पञ्चमो भेद। भग ८९०। यथासूक्ष्मपुलाक, पुलाकस्य पञ्चमो भेद। पञ्चस्वपि पुलाकेषु य स्तोक स्तोक विराधयति स। उत्त० २५६।
अहासुहुमबउस–बकुशस्य पञ्चमो भेदः। भग० ८९०। उत्त० २५६। यथासूक्ष्मबकुश, योऽक्ष्णोः पुष्पिकामपनयति, शरीराद्वा धूल्यादिकमपनयति। उत्त० २५६।
अहासुहुमे–यथासूक्ष्मान् सारान्। भग० १५५।
अहि–सर्प, पृथिव्याश्रितो जीवविशेष। आचा० ५५। सर्प। उत्त० ६९९। उर परिसर्पभेद। सम० १३५। परिसर्पविशेष। प्रज्ञा० ४५।
अहिंडेतओ–अहिण्डमान, असहिष्णोर्द्वितीयभेद। आव० ८५८।
अहिंसा–अनुकम्पा। प्रश्न० १०३। प्राणातिपातविरति। दश० २१।
अहिअ–अधिकम्, अहितम्, अपथ्यम्। ज० प्र० १६७।
अहिअगामिणिं – अहितगामिनीम्, उभयलोकविरुद्धाम्। दश० २३५।
अहिउत्थ–अभ्युषित। उत्त० १२०।
अहिकरणं–अधिकरणम्, गन्त्रीयन्त्रकादि। भग० १३५।
अहिकरणकरो – अधिकरणकर, योऽन्येषा कलहयति, द्वादशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।
अहिकरणोईरण–अधिकरणोदीरण, योऽन्येषां यन्त्रादीन्युदीरयति, त्रयोदशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।
अहिकिच्च–अधिकृत्य–आश्रित्य। भग० २८।
अहिक्खेव–अधिक्षेप, निन्दाविशेष। प्रश्न० ४१।
अहिगमरुइ–अधिगमरुचि, विशिष्टं परिज्ञानं तेन रुचिर्यस्यासौ। प्रज्ञा० ५८।
अहिगमास–अधिकमास। दश० २७०।
अहिगमो–अधिगम, विशिष्ट परिज्ञानम्। प्रज्ञा० ५०। ज्ञानम्। आव० ५३०। अभिगम –सेवा। सम० ५३।
अहिगरणं–अधिकरणम्, कलह। सूत्र० ६६। बृ० तृ० १५२ आ। कूटपाशरूपम्। भग० ९३। अधिक्रियते आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणं–अनुष्ठान बाह्य वा वस्तु चक्रमहादि। आव० ६११। कलह, यन्त्रादि वा। आव० ६५४। ज्योतिषादि। आव० ६६२। अनुष्ठानविशेष, बाह्य वा वस्तु चक्रखड्गादि। भग० १८१। अनुष्ठान बाह्य वा वस्तु। ठाणा० ४१। वास्तुदूपलशिलापुत्रकगोधूमयन्त्रकादि। आव० ८३१। रात्रि। ओघ० १८२।

अहिगरणकिरिया – अधिकरणक्रिया, दुर्गतौ ययाऽधिक्रियन्ते प्राणिन सा। प्रश्न० ३७।

अहिगरणि–अधिकरणि, सुवर्णकारोपकरणम्। जं० प्र० २२६।

अहिगरणिए–अधिकरणकर–कलहकरम्। आचा० ४२५।

अहिगरणिया–अधिकरणिकी–अधिक्रियते नरकादिष्वात्माऽनेनेति अधिकरणं–अनुष्ठानविशेष बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि, तत्र भवा तेन वा निर्वृत्ता, क्रियाभेदविशेष। भग० १८१। अधिक्रियत आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणम्–अनुष्ठानं वाह्य वा वस्तु चक्रमहादि, तेन निर्वृत्ता क्रिया। आव० ६११। सम० १०।

अहिगरणी–अधिकरणी, यत्र लोहकारा अयोघनेन लोहानि कुट्टयन्ति। भग० २५१।

अहिगरणे–अधिकरणसिद्धान्त। बृ० प्र० ३१ आ।

अहिगारनिउत्तो–अधिकारनियुक्त। आव० ७३८।

अहिगारो–अधिकार, प्रयोजनं, प्रस्ताव। आव० २७६। विशे० ८५९। ओघत प्रपञ्चप्रस्तावरूप। दश० २७८। आ–अध्ययनपरिसमाप्तेर्योऽनुवर्त्तते स-। दश० १३। नियोग। प्रश्न० ६६। प्रयोजनम्। दश० १३५। व्य० प्र० ४ अ। तृप्ति। उप० मा० गा० ३७१।

अहिगरिणता – अधिकरणिकी–खड्गादिनिर्वर्त्तनी। ठाणा० ३१७।

अहिछत्ता – अहिच्छत्रा – नगरीविशेष। उत्त० ३७९। पार्श्वनाथस्य धरणेन्द्रमहिमास्थानम्। आचा० ४१८। जङ्गलेषु जनपदेष्वार्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५५। सङ्गपरिहरणविषये पुरी। आव० ७२३।

अहिजुजिय–अभियुज्य, वशीकृत्य, आश्लिष्य वा। भग० १३२।

अहिज्ज–अधिल्य। उत्त० ३६२।

अहिज्जिउं–अध्येतुम्, पठितुम्, श्रोतु, भावयितुम्। दश० १३८।

अहिट्ठए–अधिष्ठाता, तप प्रभृतीना कर्त्ता। दश० २३८। अधितिष्ठति यथावत् करोति। दश० २५६।

अहिट्ठग–अधिष्ठाता, कर्त्ता। दश० २०६।

अहिट्ठाणं–अधिष्ठानम्, अपानप्रदेश। आव० ४१९।

अहिट्ठाणजुद्धं–अधिष्ठानयुद्धम्। आव० ९८।

अहिट्ठित्तए–अधिष्ठातुम्–परिभोक्तुम्। बृ० द्वि० २१८ अ।

अहिट्ठित्ता–अधिष्ठाय, आरोहण कृत्वा। दश० ६१।

अहिठाणि–अधिष्ठाने, अपानप्रदेशे। ओघ० ६९।

अहित–अनुचितविधायी। बृ० प्र० २१४ अ। अपथ्यम्। उत्त० २७६।

अहितुंडए–आहितुण्डिक, गारुडिक। दश० ३७।

अहिनंदइ – अभिनन्दति, बहु मन्यते। आव० ५९०।

अहिन्नायदंसणे–अभिज्ञातदर्शने–सम्यक्त्वभावनया भावित। आचा० ३०४।

अहिमडे–अहिमृत, मृताहिदेहः। जीवा० १०६।

अहिमन्त्र–मन्त्रसाधनोपायशास्त्राणि। सम० ४९।

अहिमर–अभिमर, अभिमुखमाकार्य मारयति म्रियते वेति। ओघ० १८। राजादिघातकः। विशे० ७४७। विशे० ९७१। अभिमुख परं मारयति यः स। प्रश्न० ४६।

अहिमरका–घातका। बृ० द्वि० ८२ आ।

अहिमार–अभिमार, वृक्षविशेष। उत्त० १४३।

अहिमासयम्मि–अधिकमासे। आव० ५५७।

अहियं–अधिक, अहितं वा अधिक, अपथ्यं वा। भग० ३०६। अर्गलम्। उत्त० ६२३। अर्गलं, शीघ्रतरम्। उत्त० ७। अतिशयेन। जीवा० २२९। जीवा० ३५५। अहितम्, अश्रेय। आचा० ३८।

अहियपिच्छणिज्जं–अधिकप्रेक्षणीयम्। आचा० ४२३।

अहियाते–अहिताय, अपथ्याय। ठाणा० १४९। अपायाय। ठाणा० २९२। अपथ्याय। ठाणा० ३५८।

अहियासएज्जा–अधिसहेत्, वर्त्तयेत, पालयेत। सूत्र० १६४।

अहियासणा–अभिसहना, उपसर्गसहनम्। आव० ६६०। अतिसहना। आव० ७९९।

अहियासेत्तए–अभ्यासितुम्। दश० ९३।

अहियासेमि – अभ्यासयामि–वेदनायामवस्थानं करोमि। ठाणा० २४७।

अहियोगो–अभियोग, बलात्कार। बृ० तृ० ७७ अ।

अहिराया–अधिराजा, मौल पृथिवीपति। बृ० तृ० ४ अ।

अहिरिक्कं–उत्त्रामनम्। व्य० प्र० १४९ अ।

अहिरीमाणा–अह्रीमनस–अलज्जाकारिण। आचा० २४३।

अहिर्बुध्न–उत्तरभाद्रपदादेवता। जं० प्र० ४९९।

अहिलाणं-मुखसयमनम्। भग० ४८०, जं० प्र० २६५। औप० ७१। मुखसयमनविशेष। जं० प्र० २३५।

अहिलिंति-समागच्छन्ति। बृ० द्वि० १०८ अ।

अहिलोडिया- गोपालिकाख्यो हिंसकजीव। बृ० तृ० १९० आ।

अहिल्लियाए-अहिल्लिका, मैथुने दृष्टान्त। प्रश्न० ८९।

अहिवई-अधिपति-आचाय। ओघ० ७४।

अहिवास-अधिवास-अवस्थान। भग० ४७०।

अहिवासिऊण-अधिवास्य। आव० २६१।

अहिसंका-अभिशङ्का, तथ्यनिर्णय। सूत्र० ३९३।

अहिसक्कणं-उस्सूरे आगच्छति। नि० चू० प्र० १४२ आ। अभिष्वष्कणं-तस्यैव विवक्षितकालस्य सवर्द्धनं, परत करणमित्यर्थ। बृ० प्र० २६८ आ।

अहिसरणेहिं-अग्गतो वा सरेति। नि० चू० द्वि० ४९ आ।

अहिसरिया-अभिसृता। आव० ३७२।

अहिसलागा-मुकुलि-अहिभेदविशेष। प्रज्ञा० ४६।

अहिसेया-अभिसेका, गणावच्छेदिनी। बृ० द्वि० २६३ अ।

अही-अहि, सर्प, उर परिसर्पविशेष। जीवा० ३९। प्रज्ञा० ४५। मुकुलि-अहिभेदविशेष। प्रज्ञा० ४६। सामान्यत. सर्प। जं० प्र० १२५।

अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं-अहीनप्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीर, प्रतिपूर्णानि स्वकीयस्वकीयप्रमाणत, प्रतिपुण्यानि वा-पवित्राणि पञ्चेन्द्रियाणि-करणानि यस्मिस्तत्तथा, अहीनमङ्गोपाङ्गप्रमाणत प्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रिय प्रतिपुण्यपञ्चेन्द्रियं वा शरीर। ठाणा० ४५८।

अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरं-अहीनानि-स्वरूपन पूर्णानि सङ्ख्यया, पुण्यानि वा-पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तत्तथा तदेवंविधं शरीर यस्य स। भग० ५४१।

अहीणो- अहीन, प्रकृष्ट, अधीनो वा स्वायत्त। प्रश्न० १३६।

अहीनग्गहणं-समग्रहणम्। व्य० प्र० ८६ आ।

अहीलणिज्जं- अहीलनीयम्. अवज्ञातुमनुचितम्। उत्त० ३६५।

अहुणुव्वासिय-अधुना यदुद्वमितम्। ओघ० ५७।

अहुणोत्तणो-अधुनातन। आव० ४२१।

अहुणोववन्ने-अधुनोपपन्न, अचिरोपपन्न। ठाणा० १८७।

अहुमरेंतो-उपद्रवन्। आव० २७३।

अहे-अध, आकाश। सूर्य० ४५। अथशब्दार्थे। बृ० द्वि० १७९ अ। आमन्त्रणार्थो निपात। भग० ४६०। अथ-आनन्तर्यार्थोऽयं शब्द। भग० ८३, ८६। गर्त्तायाम्। उत्त० २१३। भूमितले। प्रज्ञा० ८०। अध। ठाणा० १६२। अथेति परिप्रश्नार्थ। ठाणा० ४०६। अध.-अधस्तात् नीचै। भग० २६९। अथशब्दश्चेह पदत्रयेऽपि त्रयाणामप्याश्रयाणा प्रतिमाप्रतिपन्नस्य साधो कल्पनीयतया तुल्यताप्रतिपादनार्थ। ठाणा० १५७। यथार्थ.। ठाणा० ३२४। अथशब्दार्थे। बृ० द्वि० १७९ अ। आधाकर्म। बृ० प्र० ८३ अ।

अहेपन्नगद्धरूवो-अध पन्नगार्द्धरूपः, अधस्तनं यत्पन्नगस्यार्द्ध तस्येव रूपमाकारो यस्य स, अध पन्नगार्द्धवदतिसरलो दीर्घश्च। जीवा० २०६। अध-अधस्तनं यत्पन्नगस्यार्द्ध तस्येव रूपम्-आकारो यस्य स। जीवा० ३६१।

अहेऊहिं- अहेतुभि, क्रियावाद्यादिपरिकल्पितकुहेतुभि। उत्त० ४४९।

अहेवाए-अधोवात, योऽध उद्गच्छन् वाति वात स.। जीवा० २९।

अहेविगडे-अधोविकटे-अव-कुड्यादिरहिते छन्नेऽप्युपरि तदभावेऽपि च। आचा० ३०९।

अहेवियडं-पार्श्वतोऽपावृतं गृहम्। बृ० द्वि० १८१ अ।

अहेसणिज्जे- यथाऽसावुद्गमादिदोषरहित एषणीयो भवति तथाभूतो दुर्लभ। आचा० ३७६। यथाऽसौ मूलोत्तरगुणदोषरहितत्वेनैषणीयो भवति, तथाभूतो दुर्लभ इति। आचा० ३६८।

अहेसि-अभूवम्। आव० १४६। अभूत्। उत्त० ४९६।

अहो-अध, अर्वाक्। आव० ८२७। दीणभावे, विम्हए, आमंतणे य। दश० चू० ९६। उदगश्रोतोऽनुकूलम्। नि० चू० तृ० ६३ आ।

अहोकायं-अध काय पादलक्षण। आव० ५८७।

अहोतथा-अभूत्। उत्त० ४७५।

अहोधारं-अहतधारा वर्षा। आव० २९१।

अहोधिय- नियतक्षेत्रविषयोऽवधिस्तद्रूप ज्ञानदर्शनम्। ठाणा० ४७३।

अहोरत्ता-अहोरात्रा-त्रिंशन्मुहूर्त्तप्रमाणा। ठाणा० ८६।

अहोरत्ते-अहोरात्रम् । भग० ८८८ ।

अहोराइयाभिक्खुपडिमा – अहोरात्रप्रमाणा एकादश भिक्षुप्रतिमा । सम० २१ ।

अहोलोए-अधोलोक, तिर्यग्लोकस्याधस्ताल्लोक । प्रज्ञा० १४४ ।

अहोलोयतिरियलोए-अधोलोकतिर्यग्लोक, यदधोलोकस्योपरितनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वाधस्तनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरम्, एतद्द्वयमपि । प्रज्ञा० १४४ ।

अहोवाए-अधोवात, अध उद्गच्छन् यो वाति वात स । प्रज्ञा० ३० ।

अहोविहारो-आश्चर्यभूतो विहार । आचा० १०७ ।

अहोवेइया – अधोवेदिका, यत्र जान्वोरधो हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा । ओघ० ११० । जाणू हेट्ठाओ ह्वितेसु हत्थेसु पडिलेहेति । नि० चू० प्र० १८२ अ ।

अहोसिरा-अध शिरस, अधोमुखा । जं० प्र० १५४ ।



आ

आंगुल-व्याक्षिप्त । नि० चू० प्र० ३४७ अ ।

आंटरगमादि-वनस्पतिविशेष । नि० चू० द्वि० १५७ अ ।

आई-निपात । भग० ६७५ । विस्मयतश्चर्यन्ते । ठाणा० ५२३ । वाक्यालङ्कारे । भग० १७६ । वाक्यालङ्कारार्थे । प्रश्न० ११७ । अलङ्कारे । प्रश्न० १२६ । वाक्यालङ्कारे, अववारणे वा निपात । उपा० २७ । आदि –धर्मस्य प्रथमा प्रवृत्ति । जीवा० २५५ । गणितप्रक्रियाया आदि (अगाकसख्यान्यास) । सूत्र० ९ । यस्मात्परमस्ति न पूर्वम् । अनु० ५४ । स्वभेद । अनु० ३४ ।

आइंखिणिया-डोम्बी तस्या कुलदेवतं घटीकयक्षोनाम स प्रष्ट सन् करणे कथयति, सा च तेन शिष्ट-कथित सदन्यस्मै कथयति, घटीय मित्ति परिकहेइ । बृ० प्र० २१५ अ ।

आइअत्ती-सार्धचिन्तक । बृ० तृ० २४९ अ ।

आइक(ग)रे-आदिकर, आदौ–प्रथमत श्रुतधर्मम्–आचारादिग्रन्थात्मकं करोति–तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशील. । भग० ७ ।

आइक्खंति-आख्यान्ति, सामान्यत कथयन्ति । भग० ९८ । ईषद् भाषन्ते । ठाणा० १३६ । आचक्षते । आचा० १७८ ।

आइक्खगा-आख्यायका, शुभाशुभकथका । जं० प्र० १४२ । य शुभाशुभमाख्याति । प्रश्न० १४१ ।

आइक्खणं-सहितोच्चारणम् । बृ० तृ० २५ अ ।

आइक्खिए-मातंगविद्या यदुपदेशादतीतादि कथयन्ति डोम्ब्यो वधिरा इति लोकप्रतीता । ठाणा० ४५१ ।

आइगर-आदिकर, ऋषभनामा भगवान् । उत्त० ६२० ।

आइच्च – आदित्य, अर्चिमालिविमानवासी द्वितीयो लोकान्तिकदेव । भग० २७१ । आदित्यमासो येन कालेनादित्यो राशिं भुंक्ते । सम० ५६ । आदित्य । आव० १३५ । सूर्य० २९२ ।

आइच्चजसाई-आदित्ययश प्रभृति । नन्दी २४२ ।

आइच्चजसे-आदित्ययशा, भरतचक्रिपुत्र । ठाणा० ४३० ।

आइच्चपेढं-आदित्यपीठम् । आव० १४६ ।

आइच्चसंवच्छरे-आदित्यसवत्सर, युगभाविसंवत्सरविशेष । सूर्य० १६८ । 'पुढविदगाण' मित्यादिलक्षण सवत्सरविशेष । सूर्य० १७१ ।

आइज्ज-आदेय –रम्य । प्रश्न० ८३ ।

आइज्जा-आदेया, दर्शनपथमुपगता, उपादेया सुभगा च । जीवा० २७१ ।

आइट्ठं-विशिष्टम् । बृ० तृ० ६६ अ । आविष्टा–अधिष्ठिता । ठाणा० ३२८ ।

आइ(य)ड्ढि – आत्मर्द्धि, आत्मशक्ति, आत्मलब्धिर्वा । भग० १०७, ४९२ ।

आइणग-चर्ममयं वस्त्रम् । जं० प्र० ३६ । मृगकादिचर्मनिष्पन्नानि । आचा० ३९४ ।

आजिनकं-चर्ममयो वस्त्रविशेष । भग० ५४० ।

आइण्णं – आकीर्णम्, समन्तान्निक्षिप्तम् । भग० १५३ । सम्बाधन स्त्रीस्पर्शादिदोषा. । ओघ० ४८ । आचीर्णम् । नि० चू० द्वि० १५७ अ । भावितकुलम् । बृ० प्र० २७० अ ।

आइण्णंतो-प्रोतयन् । आव० ४२७ ।

आइण्णपोग्गलं-जं काकमाणादीहिं अणिवारियत्तिण्णकिण (मास) णिज्जति । नि० चू० तृ० ७२ अ ।

आइण्णा-आकुला । नि० चू० प्र० १८६ अ । माधूण कारणिज्जा । नि० चू० प्र० १८६ अ । सकुला । आचा० ३३१ ।

आइण्णे–षष्ठाङ्गे सप्तदश ज्ञातम्। उत्त० ६१४। सम० ३६।

आइण्णो–आकीर्ण, गुणैर्व्याप्त·। जीवा० २७०। जात्य। औप० ७१। खित्तमिव खलियं गुणेहिं जयविजयाईहिं आपूरिओ, अस्सो जातिरेव वा। दश० चू० १६५।

आइद्ध–आरब्ध। (मर०)। आदिग्ध, आलिङ्गित। प्रश्न० ४१। आविद्ध, प्रेरित·। आव० ६०२।

आइन्नं–आचीर्णम्, आसेवितम्। आचा० ५। आयरियपरंपरएण वालुकलाओ आदिण्ण णिम्मीसोवक्खड आसेवित त आइन्न। नि० चू० द्वि० १५७ आ। आत्मीयात्मीयाऽऽवासमर्यादानुलघनेन व्याप्ता। भग० ३७। कल्प्यम्। पिण्ड० १६५। आकीर्णम्–राजकुलसङ्कुल्यादि। दश० २८०।

आइन्नवर–जात्यप्रधान। भग० ३२२, ४८१।

आइन्नसंलिक्खं–स्त्र्यादिचित्राकीर्णं। आचा० ३८१।

आइन्ना–आकीर्णानि, गुणवन्ति। ज० प्र० २३२।

आइन्ने–आकीर्ण, आकीर्यते–व्याप्यते विनयादिभिर्गुणैरिति जात्यादिगुणोपेत। उत्त० ३४९। व्याप्त। उत्त० ३४८।

आइन्नो–आकीर्ण, सङ्कीर्ण, गुणव्याप्तो मनुष्यजन। औप० २। विनीत। उत्त० ४८। आचार्यगुणैराचारश्रुतसपदादिभिर्व्याप्त·–परिपूर्ण। उत्त० ५५०।

आइमउ–आदिमृदु, प्रथमत कोमलम्। अनु० १३१।

आइमूल–वृक्षादिमूलोत्पत्तावाद्यं कारणम्। आचा० ८७।

आइयणं–अदनं, भक्षणम्। आचा० ७२६। व्य० प्र० १८० अ। भोजनम्। बृ० द्वि० १२६ आ। समुद्देगनम्–भोजनम्। बृ० तृ० ४ आ। आपानम्। बृ० द्वि० ३४ अ। ठाणा० ३३१। भूय प्रत्यापिबति। बृ० तृ० १८५ आ।

आइयंति–आददति, गृह्णन्ति, बध्नन्तीत्यर्थ। ठाणा० ३२०।

आइयति–आदत्ते। उत्त० १९८।

आइलं–आविलम्–गडुलम्। जीवा० ३५०।

आइलचंदसहिय–उद्दिष्टचन्द्रसहित। सूर्य० २८०।

आइसुए–आदिश्रुत, सामायिकादिश्रुत। बृ० प्र० ३८ आ।

आइसुयं–पञ्चमङ्गलम्। बृ० तृ० २४९ आ।

आइस्सइ–आविश्यते–अधिष्ठीयते। भग० ७४९।

आई–आदि·, ससार, धर्मकारणाना वाऽऽदिभूत शरीरम्। सूत्र० १६२। सामीप्यम्, व्यवस्था, प्रकार, अवयवश्च। प्रश्न० ७। निवेश। औप० ५।

आईए–आतीत·, आ–समन्तादतीव इतो–गतोऽनाद्यनन्ते ससारे। आचा० २८५।

आईणं–आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० १९२।

आईणगं–आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० २१०। औप० ११। जं० प्र० ५५। ज० प्र० १०७। निरया० १।

आईय–आ समन्तादतीव इतो–गतोऽनाद्यनन्ते ससारे भ्रमणम्। आचा० २८६।

आईयट्ठ–आ–समन्तादतीव इता –ज्ञाता परिच्छिन्ना जीवादयोऽर्था येन सोऽयमातीतार्थ आदत्तार्थो वा, यदिवाऽतीता –सामस्त्येनातिकान्ता अर्था –प्रयोजनानि यस्य स तथा, उपरतव्यापार। आचा० २८६।

आउं–वैद्यकम्। आव० ६६०। भवस्थितिहेतव कर्म्मपुद्गला। आचा० १०२।

आउंटणं–आकुञ्चनम्, गात्रसङ्कोचलक्षणम्। आचा० ५७४।

आउंटणपसारणं–आकुञ्चनप्रसारणम्। आव० ८५३।

आउंटियं–सकोचितम्। भग० ६३१।

आउ–आयु, स्थिति। भग० २३६। उताहो। बृ० प्र० २५० अ। एति–उपक्रमहेतुभिरत्तपवर्त्यतया यथास्थित्यैवानुभवनीयता गच्छतीति। उत्त० ३३५। जीवित। ठाणा० १०८। आयु·, कर्म्मविशेष। ठाणा० २२०।

आउकाए–अप्काय, पूर्वसमुद्र, पश्चिमसमुद्रो वा। सूर्य० ४७।

आउक्खपणं–आयु·क्षयेण, आयु·पूर्णीकरणेन। आचा० ४२१।

आउखेम–आयुक्षेम–आयुष सम्यक पालनं। आचा० २९०। जीवित। आचा० २९१।

आउज्जं–आतोद्यम्, वादित्र, मृदंगादि। आव० ५२८। पटहभेरीवशवीणाझल्लर्यादीनि। आचा० ६१।

आउज्जंगं–आतोद्याङ्गम्, आतोद्यकारणम्। उत्त० १४३।

आउज्जिय–आयोगिक, उपयोगवान, ज्ञानी। भग० १४०।

आउज्झिया-आयोजिका, आ-मर्यादया केवलिदृष्टया योजन-शुभाना योगाना व्यापारणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्झियाकरणं-आयोजिकाकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जीकरणं-आवर्जीकरणम्, उदीरणावलिकाया कर्म-प्रक्षेपव्यापाररूपम्। औप० ११०। आवर्जितकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जो-आवर्ज, आत्मानं प्रति मोक्षस्याभिमुखीकरणं-आत्मनो मोक्षं प्रत्युपयोजनमिति, अथवा आवर्ज्यते-अभि-मुखीक्रियते मोक्षोऽनेनेति वा-शुभमनोवाक्कायव्यापारविशेष.। प्रज्ञा० ६०४।

आउट्ट-आकुट्टम्, आलजालम्। उत्त० १४६। आवर्जित। बृ० द्वि० ३४ आ।

आउट्टइ-आवर्त्तते, प्रवर्त्तते। भग० २८९।

आउट्टणं-आकम्पनम्। बृ० तृ० ८५ अ।

आउट्टणया-आवर्त्तना, आवर्त्तते-ईहातो निवृत्यापायभावं प्रत्यभिमुखो वर्त्तते येन बोधपरिणामेन स', तद्भाव', अपा-यपर्याय.। नन्दी १७६।

आवट्टति-निवर्त्तते। सूत्र० १९०। आवर्त्तते-निवर्त्तते तमा-लोचयतीत्यर्थ'। ठाणा० १३९। करोति। नि० चू० प्र० २५६ अ।

आउट्टा - आराधिता। बृ० द्वि० ११२ अ। आवर्जिता। ओघ० १५९।

आउट्टामो-प्रवर्त्तामहे। आचा० ३३१।

आउट्टावेज्ज-अभिमुखयेत्। आचा० ३६४।

आउट्टिआए-आकुव्या-उपेत्य। सम० ३९।

आउट्टिज्जमाणं -आकोट्यमानम्, सङ्कोच्यमानम्। सूत्र० २९८।

आउट्टि-उपेत्य। व्य० प्र० १६ आ।

आउट्टिय-ज्ञात्वा। आव० ७५८। उत्तमार्थकृत आहार। नि० चू० द्वि० ५७ आ।

आउट्टिया-आउट्टिया नाम आभोगो जानान इत्यर्थ। नि० चू० द्वि० ५९ आ। आवर्जिता। बृ० द्वि० १८६ आ।

आउट्टी-समाधानम्। बृ० तृ० १२३ आ।

आउट्टे - कर्त्तुमभिलषेत्। आचा० ४१७। निवर्त्तयेत्। आचा० १११। आवर्त्तयेत्-अनुकूलयेत। व्य० द्वि० २८२ आ। आवृत्त.-व्यवस्थित। आचा० २७९। सम-न्तात् व्यवस्थित'। आचा० २७९।

आउट्टेउं-आवर्ज्य। बृ० तृ० ३४ अ।

आउट्टो-व्यावृत्त.। उत्त० ३३२। आवर्जित। हृष्ट'। उत्त० ३३२। स्वस्थ। उत्त० ३५५। आव० २२०। उत्त० १०८। आवृत्त। आव० ५७८, २९४, ५३६ २८७। उत्त० ३२४। आवर्जित। आव० ४१२।

आउडिज्जमाण-'जुड' बन्धने, इतिवचनाद् 'आजोड्य-मानेभ्य' आसम्बध्यमानेभ्यो मुखहस्तदण्डादिना सह शङ्ख-पटहझल्लर्यादिभ्यो वाद्यविशेषेभ्य आकुट्यमानेभ्यो वा एभ्य एव ये जाता शब्दास्ते, आजोड्यमाना आकुट्यमाना एव वोच्यन्ते, अतस्तानाजोड्यमानानाकुट्यमानान् वा शब्दान् शृणोति, इह च प्राकृतत्वेन शब्दशब्दस्य नपुंसकनिर्देश., अथवा आकुट्यमानानि-परस्परेणाभिहन्यमानानि। भग० २१६।

आउडेइ-आजुडति, सम्बद्ध करोति, लिखति। जं० प्र० २५०। आकुट्टयति, ताडयति। जं० प्र० २२४। आकु-ट्टयति। भग० १७३।

आउत्त-आयुक्तम्, उपयोगपूर्वकम्। भग० १८४। सम्यक् प्रवचनमालिन्यादिरक्षणतया। प्रज्ञा० २६८। उपयुक्त। ठाणा० ४०९। प्रयत्नपरो मरणाराधनयुक्त। उपयुक्त। ओघ० २०२। उपयोगतत्परम्। ओघ० १७६। आयुक्त। व्य० द्वि० २६६ अ।

आउत्तगो-आवर्त्तक। उत्त० ३०४।

आउत्तियं-आयुक्तिकम्। उत्त० ११९।

आउत्तो-आयुक्त, व्यवस्थित। दश० २२६।

आउय-आयुष्कम्, जीवितम्। आव० ३४१। आयुष्क-काल, देवाद्यायुष्कलक्षण। आव० २५७।

आउयकम्मस्स गालणा-आयु कर्मणो गालन, प्राणवधस्य द्वादश पर्याय। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स णिट्ठवणं-आयु कर्मणो निष्ठापनम्, प्राण-वधस्य द्वादश पर्याय.। प्रश्न० ५।

आयुकम्मस्स भेय - आयु कर्मणो भेद', प्राणवधस्य द्वादश पर्याय। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स संवट्टगो-आयु कर्मण सवर्त्तक, प्राण-वधस्य द्वादश पर्याय। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्सुवद्दवो–आयु कर्मण उपद्रव, प्राणवधस्य द्वादश पर्याय। प्रश्न० ५।

आउयबंधद्धा–आयुर्बन्धाद्धा। प्रज्ञा० ४८९।

आउयसंवट्टए–आयु सवर्तक–आयुरुपक्रम.। ठाणा० ६७।

आउर–आतुर, शरीरसमुत्थेनागन्तुकेन वा व्रणेन ग्लान। दश० २७०। क्षुधा पिपासया वा पीडित। व्य० प्र० २३ आ। दृष्टान्त। नि० चू० प्र० २०२ आ। आतुर, क्वचिदपि स्वास्थ्यमलभमान सन् आकुल। जीवा० १२२। आतुर–दुस्थ'। भग० ७०५। ग्लाने सति प्रतिजागरणार्थं (प्रतिसेवा)। ठाणा० ४८४। अत्यन्ताकुलतनु,। उत्त० ८६। कामेच्छाऽन्धा'। आचा० २३८। प्रतिसेवनाभेदं'। भग० ९१९। आतुर,, चिकित्साया अविषयभूत'। विपा० ७६। चिकित्साया अविषयभूतो रोगी। बृ० प्र० २८१ आ। मर्त्तुकाम। उत्त० २७३।

आउरपच्चक्खाण – नोपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानभेद'। विशे० १३२०। प्रकीर्णकनाम। आव० ८०४। श्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९। अस्वास्थ्यमना। आचा० ७२। आतुर–चिकित्साक्रियाव्यपेत तस्य प्रत्याख्यानवर्णनम्'। नंदी २०६। अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९।

आउरसरणं–आरोग्गसाला। दश० चू० ५१।

आउरस्सरण–आतुरशरणम्, दोषातुराश्रयदानम्। दश० ११८। आतुरस्मरणम्, क्षुधाद्यातुराणा पूर्वोपभुक्तस्मरण चानाचरितम्। दश० ११७।

आउरीभूएहिं–आकुलीभूतै, आतुरीभूतै। बृ० प्र० ३९अ।

आउल–आकुलम्। व्यग्रम्। आव० ५८५। प्रचुरम्। भग० ९५। आकुल, स्कंध। विशे० ४२६। गड्डुल, आविल वा। सम० ५३।

आउलगमणं–आकुलगमन–एकत्र मिलिता गच्छन्ति। ओघ० १२६।

आउलमाउलं–आकुलाकुलम्, स्त्र्यादिपरिभोगविवाहयुद्धाग्निसर्पणनानाप्रकारम्। आव० ५७४।

आउला–आकुला, त्वरमाणा। बृ० द्वि० ६५ अ।

आउलाकुल–आकुलाकुल, अतिव्याकुल। प्रश्न० ५०।

आउली–तडवडावृक्ष। जीवा० १९१।

आउलो–आकुल, अभिभूत। आव० ५८९।

आउसं – आयु–जीवित तत्सयमप्रधानतया प्रशस्तं प्रभूत वा विद्यते यस्यासावायुष्ममास्तस्यामन्त्रणम्। ठाणा० ७।

आउसंत–आयुष्मान्, चिरजीवी। दश० १३७। आवसन् गुरुमूलमावसन् वा। दश० १३७।

आउसंतेणं–आजुषमाणेन, श्रवणविधिमर्यादया गुरून् सेवमानेन। उत्त० ८०। भगवतेत्यस्य विशेषणमायुष्मता–चिरजीवितवता। सम० २। श्रवणविधिमर्यादया गुरूनासेवमानेन। ठाणा० ९। आयुष्मदन्ते, आयुष्मता। नंदी २१२। आजुषमाणेन–प्रीतिप्रवणमनसा। सम० २। हे आयुष्मन्। सम० २। नंदी २१२। आमृशता–गुरुक्रमयुगल संस्पृशता। सम० २। गुरुमूलमावमता। दश० १३७। आवसता गुरुकुले। सम० २। आयुष्मन्, शिष्यामन्त्रणम्। उत्त० ८०।

आउसंवट्टणं आयुरुपक्रम। नि० चू० प्र० २७४ अ।

आउसणाहिं – आक्रोशना मृतोऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनै'। भग० ६८३।

आउसेइ–आक्रोशयति, शपति। भग० ६८३।

आउसो–आयुष्मन्, पुत्रादेरामन्त्रणम्'। भग० १३५।

आउस्स–आक्रोश, असभ्यवचनरूप। सूत्र० ९३।

आउस्सियकरणं – आवश्यककरणम्, आवर्जिकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउहं–आयुधम्, क्षेप्यं शस्त्रम्। प्रश्न० ४७। अक्षेप्यम्। विपा० ४६। खेटकादि। जीवा० २५९। क्षेप्यास्त्रम्। भग० १९४। शस्त्रम्, अथवाऽऽयुधं–अक्षेप्यशस्त्रं खड्गादि। भग० ३१८।

आउहसाला–आयुधशाला–शस्त्रागारम्। आव० १४८।

आऊ–आयु, एति–आगच्छति प्रतिबन्धकता स्वकृतकर्मबद्धनरकादिकुगतेर्निष्क्रमितुमनसो जन्तोरिति। अथवा आ–समन्तादेति–गच्छति भवाद् भवान्तरसङ्क्रान्तौ विपाकोदयमिति वा। प्रज्ञा० ४५४।

आए–अनन्तकाय–कुहणविशेष। प्रज्ञा० ३३। आत्मना। ठाणा १३९।

आएस–प्राघूर्णक। ओघ० ६७। निर्देश। नि० चू० प्र० १९ आ। प्राघूर्णक आयात.। ओघ० १०१। आज्ञा। नि० चू० प्र० २८५ आ। आदेश–कृत्रिमकृत-भ्रकुटीभङ्गादय। आचा० ९१। प्राघूर्णक। आचा०

१२९, ३५२। कर्मकरादि। आचा० ४१५। व्यापारनियोजना। आचा० ३१८। दृष्टान्त। आचा० २६२। आदिश्यते इत्यादेश आचार्यपारम्पर्यश्रुत्यायातो वृद्धवादो, यमैतिह्यमाचक्षते। आचा० २६२। वृद्धवाद। आचा० २६३। प्राघूर्णक.। ठाणा० १२८। उपचारो, व्यवहारः (देशे प्रधाने च)। ठाणा० २२३। एतद्भविष्यतीत्यादिनिर्णय। उप० मा० गा० ११५। आदेश, विशेष., आङिति मर्यादया विशेषरूपानतिक्रमात्मिकया दिश्यते-कथ्यत इति। उत्त० ३२। प्राघूर्णकसाधुः। आव० २६३। प्राघूर्णक। ओघ० १८३। आदेश.-प्रकार सामान्यविशेषरूपस्तत्र चादेशेन-ओघतो द्रव्यमात्रतया न तु तद्गतसर्वविशेषापेक्षयेतिभाव, अथवा आदेशेन-श्रुतपरिकर्म्मिततया। भग० ३५७। आदेश', कथनम्। उत्त० १४७। सखडिविषयो दृष्टान्त। बृ० द्वि० १३५ आ। उपचार। विशे० १३१५। प्राघूर्णक। नि० चू० प्र० १४ आ। पाहुण्णकं। नि० चू० प्र० २९३ आ। प्राघूर्णक। बृ० द्वि० १९५ अ। प्रायश्चितप्रकार। बृ० द्वि० ९८ आ। सूत्रमुच्यते। विशे० २३१। आदेशो नाम ज्ञातवस्तुप्रकार। स च द्विविध.-सामान्यप्रकारो विशेषप्रकारश्च। विशे० २३०। असत्यार्थादेश। प्रश्न० १७। विष्यन्तरम्। दश० १३। व्यपदेश। आचा० ७४। अभ्यर्हित प्राहुणकम्। उत्त० २७२। अधिकार। बृ० प्र० २७६ आ। प्रकार.। विशे० ९२२। अनुज्ञा। व्य० द्वि० ३४६ अ। उपचार', व्यवहार., स च बहुतरे प्रधाने वाऽऽदिश्यते। ठाणा० २२३। नयान्तरविकल्प। व्य० द्वि० ३५४ आ। आदिश्यते-आज्ञाप्यत इत्यादेश-कर्मकरादि.। आचा० ४१५।

आएसणं-आवेशनं, अयस्कारकुंभकारादिस्थानम्। औप० ६१।

आएसणाणि-आदेशनानि-लोहकारादिशाला.। आचा० ३६६।

आएसपर-आदेश-कर्म्मकरादि स चासौ परश्चादेशपर। आचा० ४१५।

आएसा-आदेश, प्रतिवचनमुत्पादव्ययध्रौव्यवाचकं पदत्रयम्। विशे० २९८।

आएसात्रि-आगमिष्या। सूत्र० ७६।

आएसियं-आदेशम्, विभागौद्देशिकतृतीयभेद। पिण्ड० ७९।

आओ-आय, प्राप्ति। विशे० ४५०। उताहो। बृ० द्वि० ७ अ। भाग। आव० ३४२। लाभ, उपादानं, हेतु। विशे० ५४३। ज्ञानादिनामायहेतुत्वादध्ययनम्। ठाणा० ६। भूमिस्फोटकविशेष। आचा० ५७।

आओग-आयोग, द्विगुणादिवृद्धया अर्थप्रदानम्। भग० १३५। द्विगुणादिवृद्धयर्थं प्रदानम्। जं० प्र० २३२। अर्थलाभ। औप० १२। अर्थोपाय यानपात्रोष्ट्रमण्डलिकादि। सूत्र० ४०७। परिकर। औप० ६३।

आओगपओगसंपउत्ताइं आयोगेन - द्विगुणादिलाभेन द्रव्यस्य प्रयोग-अधमर्णाना दानं तत्र सम्प्रयुक्तानि-व्यापृतानि तेन वा सम्प्रयुक्तानि-सङ्गतानि तानि। ठाणा० ४२२। आयोगो-द्विगुणादिवृद्धयाऽर्थप्रदानं, प्रयोगश्च-फलान्तर तौ सप्रयुक्तौ-व्यापारितौ यैस्ते। भग० १३५।

आओगपयोगसंपउत्ते -आयोगप्रयोगा'-द्रव्यार्जनोपायविशेषा सप्रयुक्ता-प्रवर्तिता येन। ठाणा० ४६३।

आओडावेइ-आखोटयति, प्रवेशयति। विपा० ७२।

आओसे-प्रदोषे। ओघ० ७६।

आओसेज्जा-आक्रोशयेत्। उपा० ४२।

आओहणं-आयोधनम्, (युद्धम्)। ठाणा० ४०२।

आकंदियं-आक्रन्दितम्, ध्वनि.विशेषकरणम्। प्रश्न० २०।

आकंपइत्ता-वैयावृत्त्यादिभि आकम्प्य-आवर्ज्य। ठाणा० ४८४। यदालोचनाऽऽचार्यं वैयावृत्यकरणादिनावर्ज्य यदालोचनम्। भग० ९१९।

आकट्टविकट्टिं-आकर्षवैकर्षिकाम्। भग० ६८५।

आकट्टिं-आकृष्टिं। भग० ६८३।

आकड्ढविकड्ढिं करेइ-आकट्टविकट्टिं करोति, आकर्षविकर्षिका करोति। भग० १६७।

आकरणम् - आगरण, आह्वानम्। ओघ० २०४।

आकाशम् आङिति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७२। सर्वभावावकाशनात्, आ-मर्यादया काशन्ते-दीप्यन्ते पदार्थसार्था यत्र तत्। आ-अभिविधिना काशन्ते-दीप्यन्ते पदार्था यत्र तत्। अनु० ७४। आङिति मर्यादया-स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेण प्रतिभासन्ते तस्मिन्पदार्था इति। उत्त० ६७२। बृ० प्र० ९१ अ।

आकाशगा - आकाशगा, भूतविशेषा। प्रज्ञा० ७०।

आकासाहि–आकर्षय । आचा० ३७८ ।
आकासिद्द–खाद्यविशेष । जं० प्र० ११८ ।
आकिण्णं–अतिकीर्णे । नि० चू० तृ० १३ अ ।
आकुट्टि–हिंसा । आचा० ३०५ ।
आकुट्टिय–उत्पेल्य । बृ० तृ० १२२ आ ।
आकुल–आकुल, व्याप्त° । जं० प्र० १८८ ।
आकूतम्–अभिप्रेतम् । विशे० ८८५ ।
आकुष्टिविकुष्टि । व्य० प्र० ९४ आ ।
आकेवलिआ–आकेवलिकाः, न केवलं अकेवलम्, तत्र भवा आकेवलिका –सद्वन्द्वा –सप्रतिपक्षा इतियावत् असम्पूर्णा वा । आचा० २४१ ।
आकोट्टिमं – आकुट्टिकं यथा रूप्यकोऽधस्तादपि उपर्यपि मुख कृत्वाऽऽकुट्यते । दश० ८६ ।
आकोडनं–आकोटनम्, कुट्टनेनाङ्गे प्रवेशनम् । प्रश्न० ५७ ।
आकोडेमाणे – आउडेमाणे, आकुट्यमानम्, आहन्यमानम् । भग० २५१ ।
आकोसायंतं–आकोशायमानम्, विकचीभवत् । जीवा० २७१ । जं० प्र० १११ ।
आक्षोधुका–क्षुधा रहिता । दश० १२७ ।
आख्यातिकम्–क्रियाप्रधानत्वात् धावतीति । अनु० ११३ ।
आख्यायिकास्थानानि – अक्खाइयठाणाणि, कथानकस्थानानि । आचा० ४१३ ।
आगंतागारं–गामपरिसट्ठाण, आगंतागार–वहिया वासो । नि० चू० प्र० १८३ अ । आगन्तुकानां कार्पटिकादीनामगारमागन्तागारम् । सूत्र० ३९३ । ग्रामादेर्बहिरागत्यागत्य पथिकादयस्तिष्ठन्ति । आचा० ३६५ ।
आगंतार–यत्रागारिण आगत्य तिष्ठन्ति तदागन्तुकागारम् । बृ० तृ० ४८ आ । प्रस्तायाता आगत्य वा यत्र तिष्ठन्ति तदागन्तारम्, तत्पुनर्ग्रामान्नगराद्वा बहि स्थान तत्र । आचा० ३०७ । आगन्तागारम् (धर्मशाला) । आचा० ३०६ । पत्तनाद्बहिर्गृहम् । आचा० ३४८ ।
आगंतु–आगन्तुक -पथिकादिरगारस्थजनो यत्रागत्य सन्तिष्ठते । बृ० द्वि० १७९ आ ।
आगंतुओ–आगन्तुक°, कण्टकादिप्रभव. । आव० ७६४ ।
आगंतुगो–आगामुक । आव० २७० । आगंतुएण सत्थातिणाकओ जो मो । नि० चू० प्र० १८८ आ ।
आगंतुय–आगन्तुकः । दश० १०८ ।
आगंतू–आगन्तुकः । उत्त० ११३ ।
आगंपिया–वशीकृता । नि० चू० द्वि० ९७ अ ।
आगइ–आगति°, प्रत्यावृत्त्या–प्रातिकूल्येनागमनम् । आव० २८१ । प्रज्ञापकप्रत्यासन्नस्थाने आगमनम् । ठाणा० १३३ ।
आगम – आगमनम्–आगम.–आ–अभिविधिना मर्यादया वा गम°-परिच्छेद इति । आव० २६ । आचार्यपारम्पर्येणागतः, आप्तवचनं वा । अनु० ३८ । आगम्यन्ते–परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेति, केवलमन.पर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूपः । ठाणा० ३१७ । सूत्रार्थोभयरूपः । आव० ५२४ । आगम्यन्ते–परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेन इति आगमः–आप्तवचनसम्पाद्यो विप्रकृष्टार्थप्रत्यय । ठाणा० २६२ । गुरुपारम्पर्येणागच्छतीति आगम°, आ–समन्ताद्गम्यन्ते–ज्ञायन्ते जीवादय पदार्था अनेनेति वा । अनु० २१९ । आप्तप्रणीतः । आचा० ४८ । (आगमसिद्ध°) । ठाणा० २५ । सूत्रम् । आव० ६०४ । श्रुतपर्याय । विशे० ४१६ । अध्ययनम् । आव० ३०० । आगम, प्राप्ति । दश० १६ । सङ्ग्रहम् । बृ० प्र० ३२ आ । अर्थपरिज्ञानम् । व्य० प्र० २५१ आ । आ–अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते – परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स । नंदी २४९ । आगच्छति गुरुपारम्पर्येणेत्यागम । भग० २२२ । आगम° । विशे० ४३२ ।
आगमकुसला–आगम°–श्रुतिस्मृत्यादिरूपस्तस्मिन् कुशलावागमकुशलौ । उत्त० ५२१ ।
आगमणं–प्रयोजनपरिसमाप्तौ पुनर्वसतिं गमनम् । आव० ५७३ । आकसण । नि० चू० तृ० ६३ आ ।
आगमणगिहं – सभाप्रपादेवकुलादिपथिकस्थानम् । बृ० द्वि० १७९ आ । आगमनगृह–सभाप्रपादि, पथिकादीनामागमनेनोपेत, तदर्थं वा गृहम् । ठाणा० १५७ ।
आगमतः–आगममाश्रित्य (ज्ञानापेक्षयेत्यर्थ) । अनु० १४ ।
आगममाणे – आगमयन्–आपादयन् । आचा० २७८ । २८३ । अवगमयन, बुध्यमान । आचा० २४५ ।
आगमववहारी–आगमववहारी,छव्विहे–केवलणाणी ओहीणाणी मणपज्जवणाणी चोद्दसपुव्वी अभिण्णदसपुव्वी णवपुव्वी य । नि० चू० तृ० १०० अ । आगमव्यवहारिण,

व्यवहारपञ्चके प्रथमभेदः। व्य० प्र० ५ अ। प्रत्यक्षज्ञानिन॰। व्य० प्र० ६३ अ।

आगमसत्थ–आगमशास्त्रम्, आ–अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते–परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स आगम॰, स चैवं व्युत्पत्त्या अवधिकेवलादिलक्षणोऽपि भवति ततस्तद्व्यवच्छेदार्थं विशेषणान्तरमाह–'शास्त्रे'ति शिष्यतेऽनेनेति शास्त्रमागमरूपं शास्त्रमागमशास्त्रम्। नंदी २४९।

आगमिपल्लगो–ज्ञात॰। आव० ३१७।

आगमिओ–आगमितः, ज्ञातः। आव० ४३७।

आगमियं–ज्ञातम्। आव० ११६। ओघ० १०५। ज्ञातः। आव० ३१६।

आगमियाणि–प्राप्तानि, अधीतानि। आव० ४३३।

आगमिस्सं–आगमिष्यम्, आगामि। आचा० १६७।

आगमिस्सभद्दत्ताए – आगमिष्यदिति – आगामिकालभावि भद्रं–कल्याणं यस्मिँस्तथा तस्य भावस्तत्ता तया, यदि वाऽऽगमिष्यतीत्यागमः–आगामी कालस्तस्मिन् शश्वद्भद्रतया–अनवरतकल्याणतयोपलक्षितम्। उत्त० ५८५।

आगमिस्सा–आगामिकाल। आव० ५३२।

आगमेति–जानाति। विपा० ७३।

आगमेयव्वं–आगमयितव्यम्–ज्ञातव्यम्। बृ० प्र० १९२ अ।

आगमेसा–आगमिष्यन्ती। आव० १७४।

आगमेसिभद्दा–आगमिष्यत् भद्रा–द्वितीयभवे अन्तकृतः। उपा० २९।

आगमेस्संति – आगमिष्यामि–गृहीष्यामि। व्य० द्वि० ४१८ आ।

आगमेस्सा–भविष्यत. (मर०)।

आगमेस्साणं–आयत्याम्। आव० ३५८। भविष्यताम्। (महाप्र०)।

आगमोगं–आगमौक, पथिकायगारिणां स्थानं, तेषां आगमने वा यद् गृहं तत्। बृ० द्वि० १७९ आ।

आगयं–आगतम्–स्वीकृतम्। आचा० १८१।

आगया–आगता॰–सिद्धा.। रागद्वेषाभावात् पुनरावृत्तिरहिता॰ सर्वज्ञाः। आचा० १६७।

आगयपण्हय – आयातप्रश्रवा पुत्रस्नेहादागतस्तनमुखस्तन्येत्यर्थः। भग० ४६०।

आगर – आकर, यत्र सन्निवेशे लवणाद्युत्पद्यते। ठाणा० ४४९। उत्पत्तिस्थानम्। (मर०)। अन्त० ७। पृथिव्याद्याकर.। आव० ६२२। लोहाद्युत्पत्तिभूमिः। ठाणा० २९४, ७८६। आकर॰, हिरण्याकरादि। प्रज्ञा० ४८। खानि। प्रश्न० ३८। ओघ० ९। रत्नादीनामुत्पत्तिभूमि। प्रश्न० १३४। उत्त० ६०५। हिरण्याकरादिक। जीवा० २७९। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। प्रश्न० १२७। अनु० १४२। आगत्य तस्मिन्कुर्वंतीत्याकरः। आचा० ५। हिरण्याकरादिः। जीवा० ४०। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। भग० ३६। भिल्लपल्ली भिल्लकोट्टं वा। नि० चू० तृ० ५२ अ। बृ० द्वि० २४६ अ। कुत्रिकापणादि॰। बृ० द्वि० २४२ अ। जत्थ घरट्टादिसमीवेसु बहुं जव भुसुट्टं सो। नि० चू० प्र० ६२ अ। रूप्यसुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानम्। नंदी २२८। सुवर्णादेरुत्पत्तिस्थानम्। ओघ० ९५। ताम्रादेरुत्पत्तिस्थानम्। आचा० ३२९। सुवर्णादिधातूनां खानि.। नि० चू० द्वि० ७० आ।

आगरमहेसु–आकरमहो–खानिमहोत्सवः। आचा० ३२८।

आगररूवं–आकररूपम्। भग० १९३।

आगरिस–आकर्ष –चारित्रस्य प्राप्ति.। भग० ९०५। आकर्ष॰–तथाविधेन प्रयत्नेन कर्मपुद्गलोपादानम्। प्रज्ञा० ७१८। आकर्षणम्, प्रथमतया मुक्तस्य वा ग्रहणम्। आव० ३६३। एकानेकभवेषु ग्रहणानि। आव० १०५। आकर्षणमाकर्ष॰–एकस्मिन्नानाभवेषु वा पुन॰ पुन॰ सामायिकस्य ग्रहणानि प्रतिपत्तये। अनु० २६०।

आगलणं–वैकल्पम्। व्य० प्र० १३२ आ।

आगलेंति–आकलयन्ति, जेष्याम इत्यध्यवस्यन्ति। भग० १७४।

आगलेइ–गृह्णाति। उप० मा० गा० ३१३।

आगल्लो–ग्लानः। बृ० तृ० १२२ आ।

आगसणं–आकृष्यत इति आगसण तं च दविणं। नि० चू० प्र० १७४ आ।

आगाढ–कर्कशम्। बृ० द्वि० ७३ आ। तीव्रः। आव० ५८८। अत्यर्थम्। व्य० प्र० २५२ अ।

आगाढजोग–आगाढयोग॰, गणियोग। ओघ० १८१।

आगाढपण्ण–आगाढप्रज्ञ; आगाढा–अवगाढा परमार्थ॰

पर्यवसिता तत्त्वनिष्ठा प्रज्ञा-बुद्धिर्यस्यासौ। सूत्र० २३७। शास्त्राणि। व्य० प्र० २२६ अ।

आगाढे-आगाढतरा जम्मि जोगे जतणा सो। नि० चू० प्र० १९७ अ।

आगामिपहं-आगामिपथ, आगामिनो-लब्धव्यस्य वस्तुनः पन्था। ठाणा० ९८।

आगार-गृहम्। अनु० २४४। आकारः-आक्रियतेऽनेनाभिप्रेत ज्ञायत इति, बाह्यचेष्टारूप। आव० २८१। प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादय। आव० ८४०। आकार -आक्रियत इत्याकार -प्रत्याख्यानापवादहेतुर्महत्तराद्याकार। भग० २९६। आकारा -प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादय। ठाणा० ४९८। शरीरगता भावविशेषा। व्य० प्र० ६४ आ। प्रतिनियतोऽर्थग्रहणरिणामः। प्रज्ञा० ५२६। तच्छायामात्रम्। प्रज्ञा० ३७१। प्रत्याख्यानापवादहेतुरनाभोगादिः। आव० ८४०। बाह्यचेष्टारूप। विशे० ८८५। आकृतयः, स्वरूपाणि। अनु० १३१। ठाणा० ३९५। दिगवलोकनादि। बृ० प्र० ४३ अ। आकृतिः। जीवा० २०७। प्रभा। जीवा० २६५। प्रतिवस्तु प्रतिनियतो ग्रहणपरिणाम.। जीवा० १८। मूर्त्ति। जीवा० २७३। विशेषांशग्रहणशक्ति। भग० ७३। स्थूलधीसवेद्य प्रस्थानादिभावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादि.। उत्त० ४४। सन्निवेशविशेष। सूर्य० २९३।

आगारधम्मं - आगारधर्म -द्वादशव्रतरूपो गृहस्थधर्म।

आगारभाव-आकारभाव, स्वरूपविशेष। जं० प्र० १८। जीवा० १७६। आकार एव भाव। आव० ३३८।

आगारभावपडोयारे-आकारभावप्रत्यवतारः,आकारस्य-आकृतेर्भावा -पर्याया, अथवा आकाराश्च भावाश्च आकारभावास्तेषा प्रत्यवतार -अवतरणमाविर्भाव.। भग० २७७।

आगारभावमायाए-आकारभाव एव आकारभावमात्र। आव० ३३८।

आगारभेए-आकारभेद। प्रज्ञा० ५३१।

आगाल-आगाल, आगालनमागाल -समप्रदेशावस्थानम्। आचा० ५।

आगास - आकाशम्, अनावृतस्थानम्। प्रश्न० १३८। आकाशम्, सर्वद्रव्यस्वभावानाकाशयति-आदीपयति तेषा स्वभावलाभेऽवस्थानदानादिति,आङ्-मर्यादाऽभिविधिवाची, तत्र मर्यादायामाकाशे भवन्तोऽपि भावा. स्वात्मन्येवाऽऽसते नाकाशता यान्तीत्येवं तेषामात्मसादकरणाद्, अभिविधौ तु सर्वभावव्यापनादाकाशमिति। ठाणा० ५५। 'आङ्' इति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेण प्रतिभासन्ते अस्मिन् व्यवस्थिता पदार्था इत्याकाशम्, यदा त्वभिविधावाङ् तदा 'आङ्' इति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशते इत्याकाशम्। प्रज्ञा० ९। आकाशम्-तृणादिरहितम्। बृ० प्र० ९१ अ। आ-मर्यादया अभिविधिना वा सर्वेऽर्थाः काशन्ते-स्व स्वभावं लभंते यत्र तदाकाशम्। भग० ७७६। आङिति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेणैव प्रतिभासन्ते तस्मिन्पदार्था इत्याकाशं, यदा त्वभिविधावाङ् तदा आङिति-सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७२।

आगासगामित्तं-आकाशगामित्वम्। ठाणा० ३३२।

आगासगयं-आकाशगतं-व्योमवर्ति आकाशकं वा-प्रकाशमित्यर्थ। सम० ६१।

आगासतल-आकाशतलम्। जीवा० २६९। कटाद्यच्छन्नकुट्टिमम्। जं० प्र० १०६। आव० ६९५, ६९९।

आगासथिग्गलं - आकाशथिग्गलं, शरदि मेघापान्तरालवर्त्याकाशखण्डम्। प्रज्ञा० ३६०। शरदि मेघमुक्तमाकाशखण्डम्। जं० प्र० ३२।

आगासफलिहं-आकाशस्फटिकम्, अतिस्वच्छस्फटिकविशेष। जीवा० २५३। जं० प्र० २७५। भग० १०।

आगासफलितोवमा-आकाशस्फटिकोपमा। प्रज्ञा० ३६४।

आगासफलोवगाइ-खाद्यविशेषः। जं० प्र० ११८।

आगासवासिणो - जातिजुंगितविशेषाः। नि० चू० द्वि० ४३ आ।

आगासाइवाई-आकाशादिवादिनः, अमूर्त्तानामपि पदार्थानां साधन(ने) समर्थवादिन। औप० २९। आकाशातिपातिन - आकाश-व्योमातिपतन्ति-अतिक्रामन्ति आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्टं वाऽतिशयेन पातयन्तीत्येवंशीलाः। औप० २९।

आगासिया - आकाशिता, आकाशं-अम्बरमिता-प्राप्ता, आकर्षिता वा-आकृष्टा, उत्पादितेति वा। औप० २२।

आघं-सूत्रकृताङ्गे प्रथमश्रुतस्कंधे दशमाध्ययननाम। सूत्र० १८६। आख्यातवान्। सूत्र० १८८।

आघंसणं-एतेहिं एक्कंसि आघंसण। नि० चू० द्वि० ११९ अ। नि० चू० प्र० १९० अ।

आघवइत्ता-धर्म्ममाख्याय, आख्याय सामान्यतो यथा कार्यो धर्म्म'। ठाणा० ११९। आख्यायक'-प्रज्ञापकः। ठाणा० २६७।

आघवउ-आख्यात', तस्मिन् क्षेत्रे प्रसिद्ध। आव० ५२४।

आघवणा-आख्याना। उपा० ४७।

आघविए-आख्यात, सामान्यविशेषपर्य्यायाभिव्याप्तिकथनेन। उत्त० ५९८।

आघविज्जंति-प्राकृतशैल्या आख्यायन्ते-सामान्यविशेषाभ्या कथ्यन्ते। सम० १०९। नंदी० २१२।

आघवियं-अर्घापितम्, अर्घ-पूजा तस्य आपः-प्राप्तिर्जाता यस्य तत्, अर्घ वा आपितं-प्रापितं यत्तत्। प्रश्न० ११३।

आघवेइ-आख्यापयति सामान्यविशेषरूपत'। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

आघवेज्ज-आग्राहयेच्छिष्यान् अर्घापयेद् वा-प्रतिपादनत. पूजा प्रापयेत्। भग० ४३६।

आघाअ,ओए-आघात। दश० २०१। मरणम्। सूत्र० १७८। तथाविधयतनयाऽन्यप्राणिनामात्मनश्च विधिवत् सलिखितशरीरतया यस्मिंस्तत्। उत्त० २४९।

आघातणं-आघातनम्, यत्र सङ्ग्रामे बहूनि मृतानि तत्। आव० ७४४।

आघातो-जावंतो भूतो अगणि मगासमल्लियंते ते सव्वे घातयतीति। दश० चू० ९८।

आघाटिग्रं-कथयित्वा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

आघायठाणं-आघातस्थानम्, वधस्थानम्। आव० ७४१।

आघायणं-आघातनम्, वध्यभूमिमण्डलम्। प्रश्न० ५९। जत्थ (सूयकादि) हतो त। नि० चू० तृ० ७२ अ।

आघायाय-आघातयन्, सलेखनादिभिरपक्रमकारणै समन्ताद्घातयन्-विनाशयन। उत्त० २५४।

आचरियं-आचरितम्, कल्प्यम्। दश० ११६।

आचारः-(आयार), चक्रवालसामाचारीरूप। वृ० प्र० २४९ आ। साध्वाचारप्रतिपादको ग्रन्थ। विशे० ६४८। शास्त्रविहितो व्यवहार। उत्त० ७११। व्यवहार। ठाणा० ६४। नेपथ्यारणादिको बाह्य क्रियाकलाप। उत्त० ४९९। पूर्वपुरुषाचरितो ज्ञानाद्यासेवनविधि., तत्प्रतिपादको ग्रन्थ.। नंदी २०९। चारित्रम्। उत्त० ५८३। आचरणमाचार-उचितक्रिया विनय इतियावत्। उत्त० ३४४।

आचारप्रणिधिः-(आयारपणिही), दशवैकालिकस्याष्टममध्ययनम्। दश० २२४।

आचारवस्तु-(आयारवत्थू), नवमपूर्वगततृतीयवस्तु। उत्त० २५८।

आचारसम्पत्-(आयारसपया), सयमध्रुवयोगयुक्ततादिचतुर्भेदभिन्ना सम्पत्। उत्त० ३९।

आचारिकम्-(आयरियं), निजनिजाचारभवमनुष्ठानम्। उत्त० २६६।

आचार्यपरिभाषित्वम्-(आयरियपरिभासित्तं), पञ्चमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।

आचालो-आचाल', आचाल्यतेऽनेनातिनिविड कर्मादीलाचाल.। आचा० ५।

आच्छिदणं-एक्कसि ईषद्वा छेदनम्। नि० चू० प्र० १८९ अ।

आजवंजवीभाव-पुन' पुनर्भ्रमणभाव। आचा० ७९। उत्त० ३३६।

आजवंजवे-अजवंजवी, पुनः पुनर्भ्रमणम्। आचा० १६१।

आजाइ-आजायन्ते तस्यामित्याजाति, आचारपर्याय.। आचा० ६। आजाति-मनुष्यजन्म गर्हिता जात्यैश्वर्यरूपादिरहिततया। ठाणा० ४१९। सम्मूर्च्छनगर्भोपपाततो जन्म। ठाणा० ५१२। च्युतस्योद्वृत्तस्य, वा कुमानुषत्वतिर्यक्त्वरूपा गर्हिता कुमानुषादित्वादेव। ठाणा० १३२।

आजाइसहस्स-आजातिसहस्रम्, अनेकेषु देवादिजन्मसु प्रतिजीवं क्रमप्रवृत्तेषु अधिकरणभूतेषु बहून्यायुष्कसहस्राणि त तत्स्वामिजीवानामाजातीना च बहुशतसहस्रसङ्ख्यत्वात्। भग० २१५।

आजिणभद्दो-आजिनभद्र', आजिने द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९

आजिणमहाभद्दो-आजिनमहाभद्र, आजिने द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।

आजिणयं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० २६९।

आजिणवरभद्दो-आजिनवरभद्र, आजिनवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव। जीवा० ३६९।

आजिणवरमहाभद्दो – आजिनवरमहाभद्र, आजिनवरे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव. । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरमहावरो-आजिनवरमहावर॰, आजिने समुद्रे आजिनवरे समुद्रे चापरार्द्धाधिपतिर्देव । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासभद्दो-आजिनवरावभासभद्र, आजिनवरावभासे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव॰ । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासमहाभद्दो-आजिनवरावभासमहाभद्र॰, आजिनवरावभासे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव । जीवा० ३६९।

आजिणवरावभासमहावरो-आजिनवरावभासमहावर, आजिनवरावभासे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देव । जीवा० ३६९।

आजिणवरावभासवरो-आजिनवरावभासवर, आजिनवरावभासे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासो – आजिनवरावभास, द्वीपविशेष, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरो-आजिनवरः, आजिने समुद्रे, आजिनवरे समुद्रे च पूर्वार्द्धाधिपतिर्देव । जीवा० ३६९ । द्वीपविशेष, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ ।

आजिणो – आजिन॰, द्वीपविशेष समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ ।

आजीव–आजीव, आजीविका । पिण्ड० १२१ । आजीविक । व्य० प्र० १६३ अ । भगवत्यष्टमशतकपंचमोद्देशक । भग० ३२८ ।

आजीवक-निह्नव । उप० मा० गा० ४५९ । (आजीवग) गोशालकमतानुसारी । दश० २२२ ।

आजीवगदिट्ठंतो – आजीवदृष्टान्त, आ-सकलजगदभिव्याप्त्या जीवाना यो दृष्टान्त -परिच्छेद स, सकलजीव दर्शनम् । जीवा० १३७।

आजीवगा–आजीविका पण्डरभिक्खूआ । नि० चू० द्वि० ९८ अ ।

आजीवगो–आजीवग, आ-समन्ताज्जीवन्त्यनेनेत्या जीव – अर्थनिचयस्त गच्छति-आश्रयत्यसौ, आजीवग –अर्थमद । सूत्र० २३७ ।

आजीववत्तिया – आजीववृत्तिता, जात्याद्याजीवनेनात्मपालना । दश० ११७ ।

आजीवणपिंडो-जातिमातिभाव उवजीवतित्ति आजीवणपिंडो । नि० चू० द्वि० ९७ आ ।

आजीवभयं-आजीविकाभयम्, निर्धन कथं दुर्भिक्षादावात्मान धारयिष्यामीति भयम् । आव० ६४६ । वृत्तिभयम् । प्रश्न० १४३ । दुर्जीविकाभयम् । आव० ४७२ ।

आजीवियसुत्तपरिवाडीए–आजीविकसूत्रपरिपाट्याम् गोशालकमतप्रतिवद्धसूत्रपद्धत्याम् । सम० ४२ ।

आजीविया – आजीविका॰, पाषण्डिविशेषा, नाग्न्यधारिणः गोशालकशिष्या, आजीवन्ति वा येऽविवेकिलोकतो लब्धिपूजाख्यात्यादिभिस्तपश्चरणादीनि ते आजीविकाऽस्तित्वेनाजीविका । भग० ५० । पाखण्डविशेषा., गोशालमतानुसारिणः, आजीवंति येऽविवेकतो लब्धिपूजाख्यात्यादिभिश्चरणादीनि । प्रज्ञा० ४०६ । औप० १०६ । आजीविका –गोशालकशिष्या । भग० ३६७ । ठाणा० २३२ । आजीविका. गोशालकप्रवर्तिता । सम० १३० ।

आजीवी–वेषविडम्बक. । उप० मा० गा० २९८ ।

आजोअणंतरं–आयोजनान्तरम्, योजनपरिमाणम् । आव० २३१ ।

आजोग–आयोग, व्यापारणम् । उत्त० ७१० । आव० ६९४ ।

आजोजिया–आयोजिका, आयोजयति जीवं संसारे इति, क्रियाविशेष. । प्रज्ञा० ४४५ ।

आडंबरो–आडम्बर, मातङ्गनामा यक्ष । आव० ७४३ । पटह । ठाणा० ३९५ । अनु० १२९ । यक्ष । व्य० द्वि० ।

आडहइ–आदधाति, नियुङ्क्ते । औप० ६४ ।

आडा–लोमपक्षिविशेष । प्रज्ञा० ४९ ।

आडासेतीय–आडासेतीक, पक्षिविशेष॰ । प्रश्न० ८ ।

आडुआलित्तं–मिश्रितं, विलोडितम् । आव० ३४२ ।

आडोव–आटोप॰, स्फारता । प्रश्न० ४८ । औप० ५३ ।

आडोवेइ–आटोपयेत्, वायुना पूरयेत् । भग० ८२ ।

आडोहिंतो–जल विलोडयन् । बृ० द्वि० ७२ आ ।

आढइ–गुच्छविशेष । प्रज्ञा० ३२ । आढकी, गुच्छविशेष । आचा० ५७ ।

आढए–आटक, मानविशेष । भग० ३१३ ।

आढगं–आढक, प्रस्थचतुष्टयनिष्पन्न॰ । अनु० १५१ । चतु - प्रस्थपरिमाणम् । आव० २३८ ।

आढगमो–आढकक, मानविशेष । उत्त० १४३ ।

आढणं–आदर । बृ० द्वि० ७६ आ ।

आढत्तं–आरब्धम्। भग० २८२।
आढत्ता–आरब्धा। आव० २३७।
आढत्तो–आरब्ध। आव० १०३, ४१३, २६२। दश० ९७।
आढयं–आढकः, सेतिकाप्रमाण। जं० प्र० २४४।
आढवेइ–आरभते। दश० ३८।
आढवेऊण–आरभ्य। आव० ३४१।
आढा–आदर। बृ० द्वि० ६७ आ।
आढाति–आद्रियते। दश० ५९। आव० ९२, ८१२।
आढायमाणे–आद्रियमान॰। आचा० २८४।
आणं–आज्ञां–योगेषु प्रवर्त्तनलक्षणाम्। ठाणा० ३३१। विधिविषयमादेशम्। ठाणा० ३८६।
आणंतरिए–आनन्तर्यम्–सातत्यमच्छेदनमविरहः। ठाणा० ३४६।
आणंद–आनन्दः, द्वितीयमासक्षपणे भिक्षादाता। आव० २००। उपासकदशागाद्यध्ययनम्, तन्नाम श्रावक.। उपा० १। गाथापति। आव० २१५। नालंदवाहिरिकाया गाथापतिः। भग० ६६२। आनन्द॰, षष्ठो बलदेवविशेष॰। आव० १५९। श्रुतेन सामायिकाप्तौ दृष्टातः। आव० ३४७। षोडश मूहूर्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। धरणेन्द्ररथानीकाधिपति॰। ठाणा० ३०२। षष्ठो बलदेवः। सम० १५४। शीतलजिनाद्यगणभृत्। सम० १५२। भगवान् महावीरशिष्य। भग० ६६८। अवधिनिर्णयविषये श्रमणोपासक॰। सूत्र० ९। प्रथमश्रावकनाम। आव० २१५।
आणंदकूडे–आनन्दनाम्नो देवस्य कूटमानन्दकूटम्। जं० प्र० ३१३।
आणंदपुरं – आनन्दपुरम्, इहलोकगुणविषये कच्छदेशे नगरम्। आव० ८२४। द्रव्यमूढोदाहरणे पुर। नि० चू० द्वि० ४२ अ। स्थलपत्तनविशेष। नि० चू० प्र० २२९अ। (मार्गोपसपदि) नगरविशेष। नि० चू० प्र० २४१ अ। नगरविशेष। नि० चू० द्वि० ७१ अ। क्षेत्रविपर्यासे नगरविशेष॰। नि० चू० द्वि० ८ अ।
आणंदपुरे मूलचैत्यगृहे सर्वजनसमक्ष दिवसत॰ कल्पकर्षण भवति। नि० चू० प्र० ३५५ अ।
आणंदरक्खिए – आनन्दरक्षित, पार्श्वापत्यस्थविरनाम। भग० १३८।
आणंदा–आनन्दा, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। दक्षिणदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्यापरस्या पुष्करिणी। जीवा० ३६४। अजनकपर्वते पुष्करिणी। ठाणा० २३०। पौरस्त्यरुचकवास्तव्या तृतीया दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१।
आणंदिए–आनन्दित॰, तुष्ट॰, हृष्ट, ईषन्मुखसौम्यतादिभावै समृद्धिमुपगतः। भग० ११९, ३१७।
आणंदियं–आनन्दितम्, स्फीतीभूतम्। जीवा० २४३।
आण–आज्ञा, श्रुतपर्याय। विशे० ४२३।
आणइंति–आनयन्ति। बृ० द्वि० १०९ अ।
आणक्खिऊण–परीक्ष्य। आव० २९१।
आणक्खिस्सामि – अन्वीक्षिष्यामि – अन्वेषयिस्यामि। आचा० २८२।
आणक्खेउं–परीक्ष्य। ओघ० ३३। अनुमीय। बृ० तृ० १६४ आ।
आणक्खेऊण–ज्ञात्वा, निश्चित्य। नि० चू० प्र० ६ आ।
आणतं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिक विमानम्। सम० ३७।
आणत्तं–अन्यत्वम्–अनगारद्वयसम्बधिनो ये पुद्गलास्तेषां भेदः। भग० ७४१।
आणत्तिअं – आज्ञप्तिकाम्, आज्ञा प्रत्यर्पयत। ज० प्र० १६२।
आणत्तो–आज्ञप्तः। आव० ४१९।
आणपाण–आणप्राण॰। सूर्य० २९२।
आणपाणकालो–आनपानकाल॰, उच्छ्वसनि श्वासौ समुदितावेक। जीवा० ३४४।
आणपाणलद्धी – अतर्मुहूर्तेन चतुर्दशपूर्वपरावर्तनशक्तिः। ओघ० १७८।
आणमंति – आनन्ति। भग० १९। उच्छ्वसन्ति, अन्तःस्फुरन्तीमुच्छ्वासक्रिया कुर्वन्ति, आनमन्ति उच्छ्वमन्ति। प्रज्ञा० २१९। 'णमु प्रह्वत्वे' इत्येतस्यानेकार्थत्वेन श्वसनार्थत्वात्, आनन्ति इत्यनेनाध्यात्मक्रिया। भग० १९।
आणमणिया–आज्ञापनी, विंशतिक्रियामध्ये द्वादशी क्रिया। आव०६१२। कार्ये परस्य प्रवर्त्तनं यथेदं कुर्विति भाषा। प्रज्ञा० २५६।
आणय–आनत, नवमदेवलोकनाम। प्रज्ञा० ६९।

आणरुई – आज्ञारुचि, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तस्या रुचि–अभिलाषो यस्य स आज्ञारुचि। जिनाज्ञैव मे तत्त्व न शेष युक्तिजातमिति योऽभिमन्यते स आज्ञारुचि। प्रज्ञा० ५६।

आणरुती–आज्ञारुचि -आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचिर्यस्य स तथा, यो हि प्रतनुरागद्वेषमिथ्याज्ञानतयाऽऽचार्यादीनामाज्ञयैव कुग्रहाभावाज्जीवादि तथेति रोचते स.। ठाणा० ५०३।

आणवणप्पओगे–आनयनप्रयोग। आव० ८३४। इह विशिष्टावधिके भूदेशाभिग्रहे परत स्वयंगमनायोगाद्यदन्य सचितादिद्रव्यानयने प्रयुज्यते सन्देशकप्रदानादिना त्वयेदमानेयम् इत्यानयनप्रयोग (देशावकाशिके अतिचार)। उपा० १०।

आणवणिया–अज्ञापनिका, जीवाजीवानानाययत। ठाणा० ३१७। आज्ञापनस्य–आदेशनस्येयमाज्ञापनमेव वेत्याज्ञापनी सैवाज्ञापनिका, तज्ज कर्म्मबन्ध, आदेशनमेव वेति, आनायन वा आनायनी। ठाणा० ४३।

आणवणी–आज्ञापनी, असत्यामृषाभाषाभेद। दश० २१०। कार्ये परस्य प्रवर्तनी। भग० ५००।

आणवेस्सामि–आनाययिष्यामि। आव० ४१०।

आणा–आज्ञा, मौनीन्द्रवचनम्। आचा० ४४। तीर्थकरगणधरोपदेश। दश० २६५। ज्ञानाद्यासेवारूपजिनोपदेश। भग० ५४। कर्तव्यमेवेदमित्याद्यादेश। भग० १६७। दुवालसग गणिपिडग। नि० चू० तृ० ४ अ। उपदेश। सूत्र० १८३। अर्थ। आव० ६०४। आज्ञाप्यत–आज्ञा – हिताहितप्राप्तिपरिहाररूपतया सर्वज्ञोपदेश:। आचा० ११३। आज्ञया सूत्राज्ञया अभिनिवेशतोऽन्यथापाठादिलक्षणया अतीतकाले अनंता जीवाश्चतुरन्त ससारकान्तारं-नारकतिर्यग्नरामरविविधवृक्षजालदुस्तर भवाटवीगहनमित्यर्थ, अनुपरावृत्तवन्तो जमालिवत् अर्थाज्ञया पुनराभिनिवेशतोऽन्यथाप्ररूपणादिलक्षणया गोष्ठामाहिलवत् उभयाज्ञया पुन. पंचविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वदिशादेरन्यथाकरणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिंगधार्यनेकश्रमणवत् सूत्रार्थोभयैर्विराध्येत्यर्थ, अथवा द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षमागमोक्तानुष्ठानमेवाज्ञा तया तदकरणेनेत्यर्थ। सम० १३३। हे साधो! भवतेदं विधेयमित्येवरूपामादिष्टि। ठाणा० ३०१। गूढार्थपदैरगीतार्थस्य पुरतो देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनाय गीतार्थो यदतिचारनिवेदनं करोति सा। ठाणा० ३०१। यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातिचारालोचनं इतरस्यापि तथैव शुद्धिदानं सा। भग० ३८४। ठाणा० ३१८। आदेश। भग० १२२। जीवा० २४३। 'सर्वज्ञवचनात्मिका। प्रज्ञा० ५८। आङिति स्वस्वभावावस्थानात्मिकया मर्यादयाऽभिव्याप्त्या वा ज्ञायन्तेऽर्था अनयेति, भगवदभिहितागमरूपा। उत्त० ४४। आगम। सूत्र० ४०५। आव० ८६२। उत्त० ४४९। अनुज्ञा। पिण्ड० १६९। गुरुनियोगात्मिका। उत्त० ५७२। यथोक्ताज्ञापरिपालना। नंदी २४८। द्वादशागं सूत्रार्थोभयभेदेन त्रिविधं, द्वादशागमेव चाज्ञा, आज्ञाप्यते जन्तुगणो हितप्रवृत्तौ यया साऽऽज्ञेति, अथवा पंचविधाचारपरिपालनशीलस्य परोपकारकरणैकतत्परस्य गुरोर्हितोपदेशवचनमाज्ञा। नंदी २४८। श्रुतस्य पर्याय। विशे० ४१६।

आणाइणो–आज्ञादय, आज्ञाभङ्गादय। पिण्ड० ६९।

आणाइयं – आज्ञातिगं–आज्ञा–जिनादेशमतिगच्छति–अतिक्रामति यत्तत्, अधर्मद्वारस्य पाठान्तरेणाष्टाविंशतितम नाम। प्रश्न० २७।

आणाईसरसेणावच्चं–आज्ञेश्वरसेनापत्यम्, आज्ञाप्रधानस्य सतो यत् सेनापत्यम्। भग० १५४। स्वस्वसैन्यं प्रत्यद्भुतमाज्ञाप्राधान्यम्। प्रज्ञा० ८९।

आणाकंखी–आज्ञाकाक्षी, आगमानुसारप्रवृतिक'। आचा० २१०।

आणानिद्देसयरे – आज्ञानिर्देशकर, आज्ञा–'सौम्य! इदं कुरु इदं च मा कार्षी' इति गुरुवचनं तस्या निर्देश, इदमित्थमेव करोमीति निश्चयाभिधानं, तत्कर। उत्त० ४४। भगवदभिहितागमरूपया उत्सर्गापवादाभ्या प्रतिपादनमाज्ञानिर्देश इदमित्थं विधेयमिदमित्थ वेत्येवमात्मक तत्करणशीलस्तदनुलोमानुष्ठानो वा। उत्त० ४४। आज्ञानिर्देशतर'-आज्ञानिर्देशेन वा तरति भवाम्भोधिमिति। उत्त० ४४।

आणानिद्देसे–आज्ञानिर्देश, आज्ञा–भगवदभिहितागमरूपा तस्या निर्देश –उत्सर्गापवादाभ्या प्रतिपादनम्। उत्त० ४८।

आणापाण – आनप्राण, उच्छ्वासनि श्वासकाल। भग० २११।

आणापाणू–आनप्राणा – उश्वासनि श्वासकालः सख्यातावलिकाप्रमाणा । ठाणा० ८५ ।

आणाफलं – आज्ञाफलम्–जनेन यथोदितवचनप्रतिपत्तिरूपा फल प्रयोजनं अस्य । उत्त० ५८० ।

आणामं–(अननम्–श्वसनम्) । भग० १०९ ।

आणामियं–आनामितम्, ईषन्नामितम् । प्रश्न० ८२ । आरोपितम् । जीवा० २७३ ।

आणाय–आज्ञाय, स्वरूपाभिव्याप्त्याऽवगम्य । उत्त० १०४ । आनायम्, जालम् । उत्त० ४०७ । प्रश्न० २२ ।

आणारुइ–आज्ञारुचिः, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचिर्यस्य स· । उत्त० ५६३ । आज्ञा–सूत्रव्याख्यानं निर्युक्त्यादिश्रद्धानम् । औप० ४४ । निर्युक्त्यादि तत्र तया वा रुचि । ठाणा० १९० । भग० ९२६ ।

आणाविजए – आज्ञाविचयम्, आज्ञागुणानुचिन्तनम् । औप० ४४ । प्रवचनपर्यालोचनविषयमाज्ञालोचनविषय धर्मध्यानम् । ठाणा० १९० । आणाविजय–आज्ञा–जिनप्रवचनं तस्या विचयो–निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयम् । भग० ९२६ । आज्ञा वा विजीयते अधिगमद्वारेण परिचिता क्रियते यस्मिन्निति । ठाणा० १९० । आ–अभिविधिना ज्ञायन्तेऽर्था यया साऽऽज्ञा–प्रवचन सा विचीयते–निर्णीयते पर्यालोच्यते वा अस्मिन्तत् । ठाणा० १९० ।

आणावियं–आनायितम् । आव० ४२२ ।

आणासापमाणे–अनाशयमान·, आशाविषयमकुर्वाणोऽनास्वादयन वाऽभुञ्जानोऽतर्कयन्नस्पृहयन्नप्रार्थयमानोऽनभिलपन् । उत्त० ५८८ ।

आणितिल्लयं–आनीत· । आव० ५५८ ।

आणिमलो–अनलगिरिगजस्य विष्ठा । नि० चू० प्र० ३४९ अ ।

आणुकंपिए–अनुकम्पित, कृपावान् । भग० १६९ ।

आणुग–अनूप –नद्यादिपानीयबहूल । बृ० प्र० १७५ आ ।

आणुगामिए–देशान्तरगतमपि ज्ञानिन यदनुगच्छति लोचनवदिति तदेवानुगामिकम् । ठाणा० ३७० । धूमादिहेतुरनुगामि ततो जातमानुगामिकम्–अनुमानं तद्रूपो व्यवसाय । ठाणा० १५१ ।

आणुगामियं–आनुगामिकम् । औप० ५८ । आनुगामुक – अनुगमनशील । आव० २८ ।

आणुगामियत्ताए–आनुगामिकत्वाय, शुभानुबन्धायेत्यर्थ । भग० ४५९ । भवपरम्परानुबन्धसुखाय । भग० ११५ ।

आणुपुव्वी–आनुपूर्वी, शिष्यप्रशिष्यपरम्परात्मिका । उत्त० ८ । कमेण मरणकाल पत्तस्स आणुपुव्वी । नि० चू० द्वि० ५३ अ । वृषभनासिकान्यस्तरज्जूसस्थानीया, यया कर्म्मपुद्गलसहत्या विशिष्टं स्थानं प्राप्यतेऽसौ, यया वोर्ध्वोत्तमाङ्गाधश्चरणादिरूपो नियमत शरीरविशेषो भवति सा । आव० ८४ । यथाऽऽसन्नम् । भग० २१ । मूलादिपरिपाटी । जीवा० १८७ । आव० ८०३ । क्रमेण यथाऽऽसन्नम् । जं० प्र० ४६१ । शास्त्रीयोपक्रमायसेद । ठाणा० ४ । आव० ५६ । यदुदयादन्तरालगतौ जीवो याति तदानुपूर्वीनाम । सम० ६७ । उत्त० ६४१ । आनुपूर्वी–यथासन्नम् । जीवा० २० ।

आणुपुव्विगढिया–आनुपूर्व्या–परिपाट्या ग्रथिता–गुम्फिता इति आनुपूर्वीग्रथिता । भग० २१४ ।

आणुपुव्वो–आनुपूर्व, क्रमेण नीचैर्नीचैस्तरभावरूप. । जीवा० १९८ ।

आणू–उस्सासो । दश० चू० ५४ ।

आतंतमे – आत्मतमः–आत्मानं तमयति–खेदयति इति आत्मतम.–आचार्यादि । आत्मनि तम –अज्ञानं क्रोधो वा यस्य स आत्मतमा. । ठाणा० २१४ ।

आत–(आय)–अप्पा । नि० चू० प्र० ३२ अ ।

आतवेतावच्चकरे – आत्मवैयावृत्यकर, अलसो विसम्भोगिको वा । ठाणा० २४१ । आत्मवैयावृत्त्यकर·–यस्मात् स तपसा पूर्वसचितकर्ममलं शोधयन्नात्मन एवोपकारे वर्तते तत. स । व्य० प्र० १४८ आ ।

आतसरीरसंवेगणी – आत्मशरीरसवेगनी – यदेतदस्मदीय शरीरमेतदशुचि अशुचिकारणजातमशुचिद्वारविनिर्गतमिति न प्रतिबन्धस्थानमित्यादिकथनरूपा । ठाणा० २१२ ।

आतानवितानं–(आयाणवियाण), तन्तुपु वेमादिक्रिया । विशे० ८६९ ।

आतावणा–आतापना । प्रश्न० १०७ ।

आतावते – आतापयति–आतापना शीतातपादिसहनरूपा करोति इति आतापक । ठाणा० २९९ ।

आतियं–आचितम्, रचितम् । प्रश्न० ४७ ।

आतियणो–अदने–भक्षणे । व्य० प्र० १८० अ ।

तियाणे–भुंजणवेलाए ठाति। नि० चू० तृ० ३८ आ।
तुरीभूः। नंदी १५४।
तूलुगा–साधारणबादरवनस्पतिकायविशेष॰। प्रज्ञा० ३४।
तो–आयः। उत्त०१४७। आहोस्वित। उत्त० ३२३।
तो(उ)ज्जं–आतोद्यम्, वाद्यम्। प्रश्न० ८। पटहादि.।
णा० ६३।
त्तएणं–आदत्तेन–गृहीतेन, आत्मीयेन वा। अनु० २२।
त्ततरः–दृढतर, अयमनयोरतिशयेनात्तो–गृहीतो यत्नेना-
यवसित इत्यर्थ। आचा० २९४।
त्तप्रज्ञाहा–(अत्तपण्णहा), आत्तां–सिद्धान्तादिश्रवणतो
हीतामाप्ता वा–इहपरलोकयोः सद्बोधरूपतया हिता
ज्ञाम्–आत्मनोऽन्येषा वा बुद्धिं कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति
म। उत्त० ४३५।
त्मछन्दाः – आत्मनैव उपधेरानयनाय छन्दोऽभिप्रायो
येते येषां ते आत्मछन्दस॰। व्य० द्वि० २१ आ।
त्मरक्षा–शिरोरक्षस्थानीया। तत्त्वा० ४–४।
त्मरक्षी – विषयाभिलाषविगमान्निर्निदान. सन् आत्मानं
क्षत्यपायेभ्य. – कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशील.। उत्त०
२५।
त्मवादी–अस्त्यात्मा स्वतो नित्य इति वादी। आव०
१६।
त्मसमीपे–आत्मोत्सङ्गे। ओघ० ११८।
त्मसंवेदनीय–आत्मना क्रियत इति। आव० ४०५।
त्मागम–अत्तागम, गुरूपदेशमन्तरेणात्मन एव आगम.।
नु० २१९।
त्माधिष्ठितयोगी – अत्ताहिट्ठियजोगी, आत्माधिष्ठितेन-
लब्धेन भक्तादिना युज्यत इति, अत्तलद्धिओ। ओघ०
१५१।
त्मार्थ–अत्तट्ठे, अर्थ्यमानतया स्वर्गादि, यद्वा आत्मैवार्थ.।
उत्त० २८४। विशोधनम्। व्य० प्र० ११५ अ।
त्मार्थिकम्–अत्तट्ठिय, आत्मनोऽर्थ., आत्मार्थस्तस्मिन्
भवम्। उत्त० ३६०।
दंसग–आदर्शक –दर्पण.। उत्त० ६५०।
दंसगहत्थिआ–आदर्शहस्ता। आव० १२२।
दंसिआइ–खाद्यविशेष। जं० प्र० ११८।
दण्ण–खिन्न। आव० ९४, ३५५।

आददति–विदधति। प्रश्न० १०७।
आदर्शकगृहं–भरतकेवलज्ञानस्थानम्। प्रज्ञा० २०।
आदर्शसमानः–(अद्दागसमाण), आदर्शसमानो, यो हि साधुभि
प्रज्ञाप्यमानानुत्सर्गापवादादीनागमिकान् भावान् यथावत्प्र-
तिपद्यते सन्निहितार्थानादर्शकवत् स आदर्शसमानः।
ठाणा० २४३।
आदाण – आदानम्, आदीयते–स्वीक्रियतेऽष्टप्रकार कर्म
येन तत्, कषायाः, परिग्रहः, सावद्यानुष्ठानं वा।
सूत्र० २६४। (वहिद्धादाणं)–वहिर्द्धा–मैथुनम् आदानं च–
परिग्रह, परिग्राह्यं वा वस्तु धर्मोपकरणाद् बहि.। ठाणा०
२०२। मोक्षार्थिनाऽऽदीयते–गृह्यत इति, संयमः। सूत्र०
२२९। कारणम्। नि० चू० प्र० ११६ अ। प्रभव,
प्रसूति। नि० चू० प्र० ११६ अ। ग्रहणम्। आव० ८२२।
आदीयत इति, धनम्। आव० ६४६। नि० चू० प्र०
३१७ अ। आदानः, अश्व। सूर्य० २०९।
आदाणणिक्खेवणासमिती–आदाननिक्षेपणासमिति॰, जं
वत्थपायसथारगफलगपीढगकारणट्ठा गहनिक्खेवकरण पडि-
लेहिय पमज्जिय सा। नि० चू० प्र० १७ अ।
आदाणनिक्खिवणअणाभोगकिरिया–आदाननिक्षेपा-
नाभोगक्रिया, रजोहरणेनाप्रमार्ज्य पात्रचीवरादीनामादानं
निक्षेपं वा करोति सा। आव० ६१४।
आदाणभयं–आदानभयम्, धनस्य चौरादिभ्यो यद्भयम्।
आव० ६४६। धनहरणभयं। आव० ४७२। आदानं–
धनं–तदर्थं चौरादिभ्यो यद्भयम्। ठाणा० ३८९। द्रव्य-
माश्रित्य भयम्। प्रश्न० १४३।
आदाणभरियंसि–आद्रहणभृते। उपा० ३४।
आदाणिज्जं–आदानीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चदशाध्ययनम्।
सूत्र० २५२।
आदाणियं–आदानीयम्, आदीयते–गृह्यते उपादीयत इति,
पदमर्थो वा। सूत्र० ९।
आदाननिक्षेपणासमितिः–रजोहरणपात्रचीवरादीना पीठ-
फलकादीना चावश्यकार्ये निरीक्ष्य प्रमृज्य चादाननिक्षेपौ।
तत्त्वा० ९५।
आदाणीय–आदानीय, उपादेय। सम० ८१। ठाणा०
३६९। परमार्थतो भावादानीयं ज्ञानदर्शनचारित्ररूपं तत्।
आचा० १४०।

आर्दितियमरण-यानि हि नरकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं। भग० ६२४।

आदि-आदि, कारणम्। प्रश्न० ४।

आदिए-आददीत, गृह्णीयात। उत्त० ५१७।

आदिकरः-आइगर, आदौ प्राथम्येन श्रुतधर्ममाचारादिग्रन्थात्मक करोति - तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशील आदिकर। सम० ३। प्रथमतया प्रवर्त्तनशीलः। व्य० द्वि० ३८५ अ।

आदिगरमंडलगं-आदिकरमण्डलम्। आव० १४६।

आदिच्चो-आदित्य.। जीवा० ३२१। सूर्यसवत्सरः। सूर्य० १२।

आदिट्ठ-आदिष्ट', विशेषित'। भग० ४७.।

आदिट्ठा-गृहीता। नि० चू० प्र० २०७ आ।

आदित्यमासः-त्रिंशदहोरात्राणि रात्रिन्दिवस्य चार्द्धं, दक्षिणायनस्योत्तरायणस्य वा षष्ठभागमान'। बृ० प्र० १८६ आ।

आदित्ययशा-भरतपुत्रनाम। व्य० द्वि० १२९ आ।

आदिमा भावा - आवश्यकादय. सूत्रकृताङ्गं यावद् ये आगमग्रन्थास्तेपु ये पदार्था अभिधेयास्ते। बृ० प्र० १२८ आ।

आदित्यरथः-वालिसुग्रीवपिता विद्याधर। प्रश्न० ८९।

आदियणं - गहणं। नि० चू० प्र० १३४ अ। पिवंतस्स। नि० चू० तृ० ६५ आ।

आदियणआ-आदानम्, ग्रहणम्। आव० ६१४।

आदियणा-आदानम्, परधनस्य ग्रहण, तृतीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदशं नाम। प्रश्न० ४३।

आदिश्यते। जीवा० १४०।

आदीअदिट्ठभावे - आदौ-आवश्यकादिशास्त्रेपु वर्त्तमाना अदृष्टा भावा येन स। बृ० प्र० १२६ आ।

आदेज्ज-आदेया, दर्शनपथमुपागता सती पुन पुनराकाङ्क्षणीया। ज० प्र० १११। आदेय, रम्य। प्रश्न० ८३।

आदेज्जनाम-आदेयनाम, यदुदयवशात् यच्चेष्टते भाषते वा तत्सर्व लोक प्रमाणीकरोति दर्शनसमनन्तरमेव च जनोऽभ्युत्थानादि समाचरति तत्। प्रज्ञा० ४७५।

आदेयवचनता-सकलजनग्राह्यवाक्यता। उत्त० ३९।

आदेशकषाय-कैतवकृतभ्रुकुटिभंगुराकार। आव० ३९०।

आदेशतः। नंदी ७०।

आदेशिकं-श्रमणानुद्दिश्यादेशम्। बृ० प्र० ८३ अ।

आदेसं-उद्दिट्ठं। नि० चू० प्र० २३० आ। विशेषं प्रतिनियतव्यक्त्यात्मकम्। उत्त० ६७३।

आदेसतिगं-आदेशत्रिकम्, मतत्रिकम्। पिण्ड० १०।

आदेसदव्वसुद्धी - आदेशद्रव्यशुद्धि', द्रव्यशुद्धिभेद। दश० २११।

आदेसफलं-आदेशफलम्। आव० ३४३।

आदेसा-पाहुणा। नि० चू० प्र० १११ अ। प्राघूर्णका.। बृ० प्र० ८५ आ।

आदेसे - आदेशः, आदिश्यते यस्मिन्नागते सम्भ्रमेण परिजनस्तदासनदानादिव्यापारे स, प्राघूर्णकः। सूत्र० ३००।

आदेसो-आदेश., प्रकार। जीवा० ५३। सुत्ताएसो। नि० चू० प्र० ७१ अ। अनुज्ञा। व्य० द्वि० ३४६ अ। नयान्तरविकल्प.। व्य० द्वि० ३५४ आ।

आद्यशब्द - तर्कणादोषादिप्रतिपादनः। नि० चू० प्र० २२५ अ।

आद्रहणम्-उच्छलदुष्णजलम्। दश० १७४। पिण्ड० ३५।

आधरिसितो-आधर्षितः। आव० ३७१।

आधत्त-आधत्तम्, ग्रहणके मुक्तम्। बृ० द्वि० १२० अ।

आधरिसेहिति-आधर्षिष्यति। आव० १७४।

आधाकम्मिए-आधाय-आश्रित्य साधून् कर्म्म-सचेतनस्याचेतनीकरणलक्षणा अचेतनस्य वा पाकलक्षणा क्रिया यत्र भक्तादौ तदाधाकर्म्म तदेवाधाकर्म्मिकम्। ठाणा० ४६०।

आधायणं-जत्थ वा महा सगामे मता। नि० चू० तृ० ७३ अ।

आधिः-मनःपीडा। भग० ४।

आधिदैविकम्-देवादिसत्कं दु खम्। उत्त० २६६।

आधिभौतिकम्-अन्यभूतसत्कं दु खम्। उत्त० २६६।

आधूय - भ्रमयित्वा, जलेन सदाहत्याहत्य। जं० प्र० २३०।

आधूयारुहकम्-हरितभेद। आचा० ५७।

आध्यात्मिकम्-अज्झत्थिय, आत्मसत्कं दु खम्। उत्त० २६६। आत्मनि क्रियमाणम्। आचा० ४१६।

आनगारिकम् - अनगारेपु-भावभिक्षुपु भवमानगारिकमनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

आनन्द-श्रुतसामायिकलाभे दृष्टान्त'। आव० ३४७।

आनन्दपुरम्–स्थलपत्तने नगरविशेष । बृ० प्र० १८१ आ । जितारिराज्ञ राजधानी। बृ० तृ० १०७ आ । नगरविशेष । व्य० प्र० १४६ अ, ४ आ । व्य० द्वि० २६६ अ ।

आनन्दविजयः–आचार्यनामविशेष. । जं० प्र० ५४५ ।

आनन्दविमलः–आचार्यनामविशेष । जं० प्र० ५४३ ।

आनुगामिकः–आ–समन्तादनुगच्छतीत्येवंशीलमानुगामिक., अनुगम' प्रयोजनं यस्य सः । प्रज्ञा० ५३९ । अनुगच्छति साध्याभावे न भवति यो धूमादिहेतु. सोऽनुगामी ततो जातमानुगामिकं, अनुमानं, तद्रूपो व्यवसाय । ठाणा १५१ ।

आनुपूर्वी–यथासन्नम् । प्रज्ञा० ५०३ । कूर्परलाङ्गलगोमूत्रिकाकारेण यथाक्रम द्वित्रिचतु समयप्रमाणेन विग्रहेण भवान्तरोत्पत्तिस्थानं गच्छतो जीवस्यानुश्रेणिनियता गमनपरिपाटी। प्रज्ञा० ४७३ । अन्तर्गतौ गत्यन्तरमानुपूर्व्या प्रापणसामर्थ्यं, शरीराङ्गोपाङ्गानां विनिवेशक्रमनियामकं वा कर्म । तत्त्वा० ८-१२ ।

अनुक्रमः–अनुपरिपाटी । अनु० ५१ ।

आपणवीही–आपणवीथि , रथ्याविशेष । जं० प्र० ४१३ । आपणवीथि' । भग० ४७६ ।

आपन्नपरिहारः–मासिक वा द्विमासिकं वा यावत् षण्मासिक वा प्रायश्चित्तं । व्य० प्र० ४५ आ ।

आपाकः-भाण्डपचनस्थानम् । ठाणा० ४१९

आपागपत्तं – आपाकप्राप्तम् , ईषत् पाकाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४५९ ।

आपाण्डु–आ–ईषच्छुभ्रत्वभाज', पाण्डु । उत्त० ६८९ ।

आपीडः-शेखरक । जीवा० २७२ । आमेलक –शेखरक.। जीवा० २०७, ३६१ ।

आपुच्छणा – आप्रच्छनमापृच्छा, विहारभूमिगमनादिप्रयोजनेषु गुरो कार्या , समाचार्या षष्ठभेद. । आव० २५९। आपृच्छना । ओघ० १५१ । भग० ९२० । स्वकार्यप्रवृत्तावापृच्छनम् । बृ० प्र०-२२२ अ । विहारभूमिगमनादिषु प्रयोजनेषु गुरो पृच्छा । ठाणा० ४९९ ।

आपूपिकः। नंदी १६५ ।

आपूरितं – आपूर्यमाणम् , परिसस्थिते पवने भूयो जलेन ध्रियमाणम् । जीवा० ३०८ ।

आपूरियं – आपूरितम् , व्याप्तं, भृतं, वासितम् । विशे० १५० ।

आप्त–अत्त, ज्ञानदर्शनचारित्राणि येनाप्तानि स, रागद्वेषप्रहीण , इष्टा शोध्यै शैधि विषये ये आप्ता । व्य० द्वि० ३८९ आ ।

आप्तप्रज्ञाहा – सिद्धान्तादिश्रवणतो गृहीतामाप्तां वा इहपरलोकयो सद्बोधरूपतया हिता–प्रज्ञाम्–आत्मनोऽन्येषा वा बुद्धिं कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति य. स. । उत्त० ४३५ ।

आप्नोति–आत्मवशता नयति । प्रज्ञा० ३६२ ।

आप्रच्छना–भदन्त ! करोमीदमित्येवं गुरो. प्रच्छनमाप्रच्छना । अनु० १०३ । सम० १५८ ।

आप्फोडिऊण–आस्फोट्य । आव० १६८ ।

आबद्धसेओ–आवद्धस्वेद । आव० ५१५ ।

आबद्धो–आबद्ध , आरब्ध' । आव० ५१५ ।

आबाहा–आवाधा, ईषद्बाधा । भग० २१८ । ज० प्र० १२४ । जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका आवाधा । ठाणा० ४८८ ।

आबाहाए–अन्तरे कृत्वेति शेष. । सम० १६ ।

आभंकरं – सनत्कुमारकल्पे त्रिसागरस्थितिकं विमानं । सम० ८ ।

आभंकरपभंकरं–आभंकरवत् । सम० ८ ।

आभंकरे–आभङ्कर', सप्ततितमग्रहनाम । ठाणा० ७९ । अष्टषष्टितमग्रहनाम । जं० प्र० ५३५ ।

आभट्ठो–आभाषित., सलप्तः । आव० २४१ ।

आभरण–आभरणानि, मुकुटादीनि । जं० प्र० १४५ ।

आभरणचङ्केरी–देवछन्दके पूजोपकरणम् । जीवा० २३४ ।

आभरणपिया । नि० चू० तृ० ९ अ ।

आभरणवासा – आभरणवर्षा, आभूषणवर्षणम् । भग० १९९ ।

आभरणविचित्ताणि–आभरणविचित्राणि, गिरिविडकादिविभूषितानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

आभरणविधी–हारऽद्धहारादिया आभरणविधी । नि० चू० प्र० २७६ आ । उपभोगविधिविशेष. । उपा० ३ ।

आभरणवुट्ठी–आभरणवृष्टि । भग० १९९ ।

आभरणाणि – आभरणानि, अङ्गपरिधेयानि । ज० प्र० २२१ । आभरणप्रधानानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

आभवंतितो–आभवन्तिक –व्यवहार.। व्य० द्वि० ३८१ आ।
आभवति–स्वं भवति। आव० ८२१।
आभव्वं–आभाव्यं, शैक्ष' शैक्षिका वा। बृ० द्वि० ७० आ।
आभा–आभा, आकारः। प्रज्ञा० ८०। छायावर्ण। सम० १४०। प्रतिभासः। जीवा० ३११। वर्णस्वरूपम्। जीवा० १०३।
आभागी–भोक्ता। आव० ८१५।
आभासइ–आभासयति, समन्ततः सर्वासु दिक्षु अवभासयति। जीवा० ३१२।
आभासिआ–म्लेच्छविशेष। प्रज्ञा० ५५।
आभासिता–लवणान्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२५।
आभासितो–आभाषिकः, अन्तरद्वीपविशेषः। जीवा० १४४।
आभासियं–अभाषिकम्–विवक्षितभाषामजानानः। आव० ६१४।
आभासिय–आभाषिक., म्लेच्छविशेष। प्रश्न० १४।
आभासियदीवे–अन्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२५।
आभिओग–आ – समन्तादाभिमुख्येन युज्यन्ते–प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यन्ते इति आभियोग्या –शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषा'। जं० प्र० ७५। आभियोग्यम्–कर्मकरभाव। दश० २४८। अभियोग्यभावना–कुत्सितभावना। उत्त० ७०७। अभियोगभावनाजनित। ठाणा० २७४।
आभिओगसेढीओ – आभियोग्या'–शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषास्तेषामावासभूते श्रेण्यौ। जं० प्र० ७५।
आभिओगिए–आभियोगिक' अभियोगे–प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यमाणत्वे नियुक्ता.। जीवा० २४३।
आभिओगिय–आभियोगिकः, वशीकरणाय मन्त्राभिसंस्कृतम्। आव० ६४२।
आभिओग्ग–आभियोग्यम्, वशीकरणादि द्रव्यतो द्रव्यसंयोगजनितं, भावतो विद्यामन्त्रादिजनितम्, वलात्कारो वा। प्रश्न० ३८। आभियोग –कार्मणम्। बृ० तृ० १२२ आ।
आभिग्गहिओ–आभिग्रहिक', अभिग्रहेण निर्वृत्त, कायोत्सर्ग.। आव० ७८३।
आभिचारुका–विद्याविशेष। बृ० तृ० २०२ आ।
आभिट्टं–आपतितम्। पउ० ४–४२।
आभिडणं–आवटणम्। ओघ० २०४।

आभिणिवोहिय–आभिनिवोधिकम्, अभिमुखो–योग्यदेशावस्थितवस्त्वपेक्षया नियत'–स्वस्वविषयपरिच्छेदकतयाऽवबोध.–अवगमोऽभिनिवोध', स एवाभिनिवोधिकम्। उत्त० ५५७। विशे० २२६। अर्थाभिमुखो नियत –प्रतिनियतस्वरूपो वोधो–वोधविशेष', अभिवुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति। प्रज्ञा० ५२६। आभिनिवोधिकम्–मतिज्ञानम्। आव० १८। आभिमुख्येन निश्चितत्वेनावबुध्यते–सवेदयते आत्मा तदिति, आभिनिवोध', अवग्रहादिज्ञानं, अथवा आत्मा तेन प्रस्तुतज्ञानेन तदावरणक्षयोपशमेन वा करणभूतेन घटादि वस्त्वभिनिवुध्यते, तस्माद् वा प्रकृतज्ञानात् क्षयोपशमाद्वाऽभिनिवुध्यते, तस्मिन् वाऽधिकृतज्ञाने, क्षयोपशमे वा सत्यभिनिवुध्यतेऽवगच्छतीत्यभिनिवोधो ज्ञानम्, क्षयोपशमो वा, सो वा 'अभिणिवुज्झए'त्ति, अथवाऽभिनिवुध्यते वस्त्वभिगच्छतीत्यभिनिवोधः, स एवाभिनिवोधिकम्। विशे० ५३। अभीत्याभिमुख्ये नीति नैयत्ये, ततश्चाभिमुखो–वस्तुयोग्यदेशावस्थानापेक्षी नियत–इन्द्रियाण्याश्रित्य स्वस्वविषयापेक्षी वोधः, अभिनिवुध्यते आत्मना स'। अभिनिवुध्यते वस्त्वसौ इत्यभिनिवोध. स एवाभिनिवोधिकम्। अनु० २।

आभिणिवोहियनाण–अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वात् नियतोऽसशयरूपत्वाद्बोध –संवेदनमभिनिवोध. स एव स्वार्थिके कप्रत्ययोपादानादाभिनिवोधिक ज्ञातिर्ज्ञायते वाऽनेनेति ज्ञानम् आभिनिवोधिक च तज्ज्ञानं चेति आभिनिवोधिकज्ञानम्, इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो वोध इति। भग० ३४३। इन्द्रियपञ्चकमनोनिमित्तो वोध.। अनु० २। अर्थाभिमुखो नियतो वोध, अभिनिवोधे भवं तेन वा निर्वृत्तं तन्मयं तत्प्रयोजनं वा, अथवा अभिनिवुध्यते तत्, अथवा अभिनिवुध्यते ऽनेनास्माद्वा अस्मिन वा तत् तदावरणकर्मक्षयोपशम इति भावार्थः। आव० ७। अभिनिवोधिकम्, आत्मैव वाऽभिनिवोधोपयोगपरिणामानन्यत्वाद् अभिनिवुध्यत इति वा। आव० ७।

आभियोगिक – अभियोगभावनाभावितत्वेनाभियोगिकदेवेषूत्पन्ना अभियोगवर्तिन'। भग० १९०।

आभियोगिय – आभियोगिक, अभियोजनं–विद्यामन्त्रादिभि. परेषा वशीकरणादि सेवा ते। प्रज्ञा० ४०६।

आभियोगी–अभिओगा– किङ्करस्थानीयदेवविशेषास्तेषामियमाभियोगी। बृ० प्र० २१२ आ। आभियोग्या –आभिमुख्येन युज्यन्ते–प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यन्त इत्याभियोग्या, किङ्करस्थानीयदेवविशेषाः। बृ० प्र० २१२ आ।

आभिसेक्कं–आभिषेक्यम्, अभिषेकयोग्य, राजपरिधेयम्। जं० प्र० २१६।

आभीरविसओ–आभीरविषय, देशनाम। आव० ४१२। नि० चू० द्वि० १०२ आ।

आभोइत्ता–आभोगयित्वा, ज्ञात्वा। दश० १७९।

आभोईतो–आभोगित। उत्त० १३३।

आभोएउं–आभोगयित्वा; उपयोगपूर्वकेनावधिना विज्ञाय। आव० १२८।

आभोएति–आभोगयति। आव० १३४।

आभोग – आभोग, जानता योऽतिचारः कृतः। आव० ५६४। अभिसन्धिः। भग० २०। आलोचनमभिसन्धि। प्रज्ञा० ५००। उपकरणम्। ओघ० ३३। उपयोग। बृ० द्वि० २११ आ। ठाणा० ५०५। आभोगनमाभोग, उपयोगविशेष। आव० ६१९, ६२६। विस्तार। विपा० ३९।

आभोगण–आभोगनम्, अर्थावग्रहसमनन्तरमेव सद्भूतार्थविषयाभिमुखमालोचनम्। १७६।

आभोगणिव्वत्तिए–यदा परस्यापराधं सम्यगवबुद्ध्य कोपवारणं च व्यवहारतः पुष्टमवलम्ब्य नान्यथाऽस्य शिक्षोपजायते इति आभोग्य कोपं विधत्ते तदा स कोप आभोगनिर्वर्त्तित। प्रज्ञा० २९१। आभोगेन निर्वर्त्तित–उत्पादित आभोगनिर्वर्त्तित आहारयामीतीच्छापूर्वं निर्मापित। प्रज्ञा० ५००।

आभोगबउस–आभोगबकुश, य आभोगेन जानन् करोति स, बकुशस्य प्रथमो भेद। उत्त० २५६। आभोग –साधूनामकृत्यमेतच्छरीरोपकरणविभूषणमित्येवं ज्ञानं तत्प्रधानो बकुश आभोगबकुश। भग० ८९०। शरीरोपकरणभूषयोः सञ्चिन्त्यकारी। ठाणा० ३३७।

आभोगिणी–य परिजपिता सती मानस परिच्छेदमुत्पादयति सा। बृ० तृ० ३३ अ। जा विज्जा जविता माणस परिच्छेदमुप्पादयति सा। नि० चू० प्र० १७७ अ।

आमं–आमम्। दश० १७६। अपरिणतम्। पिण्ड० ६५। अविशोधिकोटि। बृ० प्र० २०१ अ, ५१ अ। आम णाम जं अपोलियं अग्गिणा ण पक्कंति, अण्णेण वा केणइ पगारेण न पक्कं–णिज्जीवं। नि० चू० द्वि० १५७ अ। असत्थपरिणयं। दश० चू० ५१। अनुमतार्थद्योतकमव्ययम्। बृ० द्वि० १६६ अ। सचित्तं। दश० चू० ८६। अपक्करसम्। प्रश्न० ६०। अनुमतौ सम्मतमेतदस्माक सर्वमितिभावः। व्य० प्र० ७१ अ। अपक्कं। व्य० द्वि० १०६ आ। जओ तेहिं उग्गमादिदोसेहिं घेप्पमाणेहिं चारित्तं अविपक्कं अपज्जत्तं आम भवति तेण ते आमं भण्णति, शब्दमात्रोच्चारणम् सरडीभूत जो वरिससतायुपुरिसो वरिससत अतरे मरंतो आमो भण्णति। नि० चू० द्वि० १२६ अ। अपक्वम्। आव० १३०। स्वीकारेऽव्ययम्। आव० ६४। आव० १९४। आव० ४०८। अशस्त्रोपहतम्। आचा० ३४८। दश० २२९। अजीर्णम्। दश० २७०। आमाम्–असिद्धां, सचेतनाम्, अपरिणतं, अपक्काम्। दश० १८५। अपरिशुद्धम्। आचा० १३१।

आमंडे–आमलकम्, परिणामिकयां सप्तदशमोदाहरणम्। नदी १६५। आम्लकम्–आमलकम्। आव० ४३६।

आमंतणी–आमन्त्रणी, असत्यामृपाभाषाया. प्रथमो भेद। दश० २१०। हे देवदत्त! इत्यादिरूपा भाषा। प्रज्ञा० २५६। हे देवदत्त! इत्यादिका, असत्यामृषाभाषा। भग० ५००।

आमंतयामो–आमन्त्र्यावहे, पृच्छाव। उत्त० ३९८।

आमंतिओ–आमन्त्रित, सम्भाषितः, पृष्टो वा। उत्त० ३९२।

आमंतेयव्वो–आपुच्छियव्वो। नि० चू० तृ० ९७ आ।

आमगं–अपक्वम्। भग० ६८४।

आमगंधि–आमगन्धय., विश्रा। सम० १३६।

आमज्जति – अक्खिपत्तरोमे सठवेति। नि० चू० प्र० ११० अ। हत्थेण आमज्जति। नि० चू० प्र० १८७ आ।

आमज्जमाणे–आमर्जयन्, सकृद्धस्तादिना शोधयन्। आचा० २४२।

आमज्जिज्ज–सकृदामृज्यात्। आचा० ३३७।

आमट्ठ–विपर्यासीकृतम्, परामट्ठं। ओघ० १९२। आमृष्टम्, तेज प्रकर्षारोपणाय मन शिलादिना समन्तात्परामृष्टम्। उत्त० ५२७।

आमडागं-आमपत्रम्, अरणिकतन्दुलीयकादि तच्चार्द्रप- 'द्यमपर्कं वा। आचा० ३४८।

आममहुरे-आममधुरम्, ईषन्मधुरम्। ठाणा० १९६।

आमरणदोसो-आमरणदोषः, महदापद्गतोऽपि स्वतो म- हदापद्गतेऽपि च परे आमरणादसञ्जातानुताप., अपि त्व- समाप्तानुतापानुशयपर इति। आव० ५९०।

आमरणंतदोसे-आमरणान्तदोषः-आमरणान्तमसजातानु- तापस्य हिंसादिपु प्रवृत्तिः सैव दोष.। ठाणा० १९०।

आमर्षौषधिः-ऋद्धिविशेषः। प्रज्ञा० ४२४।

आमलए-आमलकम्। आव० ८३१। आमरकः, साम- स्त्येन मारिः। ठाणा० ५०८। फलविशेषः। पिण्ड० २२। दश० १००।

आमलकप्प-आमलकल्पा, नगरीविशेष.। आव० ३१४, ३१५, ७०७। उत्त० १५९। विशे० ९५०।

आमलग-आमलक, वहुवीजो वृक्षविशेष.। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३।

आमलगा-आमलकानि। अनु० १९२।

आमलपाणगं-फलविशेषप्रक्षालनजलं। आचा० ३४७।

आमाघाओ-असाघातः, (अमारीपटहः)। आव० ४०१।

आमिस - आमिषः-मांसः। उत्त० ६३४। आमिषाद्- गृद्धिहेतोरभिलषितविषयादेः। उत्त० ४०९।

आमिसभोगगिद्ध - आमिषभोगगृद्ध., आमिषस्य-मासा- देर्भोग.-अभ्यवहारस्तत्र गृद्धः। उत्त० ६३४।

आमिसावत्ते-मासाद्यर्थं परिभ्रमणम्। ठाणा० २८८।

आमुसंत - आमृशन्, स्पृशन्। दश० १३७। आचा० ११। आमृशन्, भगवत्पादारविन्दं भक्तितः करतलयुगा- दिना स्पृशन्। ठाणा० ९। उत्त० ८०।

आमुसिज्जा - आमर्षणम्, सकृदीषद्वा स्पर्शनम्। दश० १५३।

आमे-आम., अविशोधिकोट्याख्यदोष.। सूत्र० १४५।

आमेड-आमेलः, आपीड., शेखरकः। जीवा० १७२।

आमेडणा-आम्रेडना, विपर्यस्तीकरणम्। प्रश्न० ५६।

आमेल-आपीड., शेखरकः। प्रज्ञा० ९६। भग० ४५९। पुष्पशेखरक। औप० ५१।

आमेलओ-आमेलक', आपीडः, शेखरक। जीवा० ३६१। आमोटक-पुष्पोन्मिश्रो वालवन्धविशेष'। उत्त० १४३।

आमेलग-आमेलकः, आपीडकः, शेखर"। जीवा० २७५। आपीड', शेखरकः। जं० प्र० ५२। जीवा० २०७।

आमेलय-आमेलक', चूडा। औप० ६३।

आमेलिय-आपीडिका, चूडा। भग० ३१८।

आमो-असत्योवहतो। नि० चू० प्र० १९६ अ।

आमोअ - आमोद, मानसे उत्सव.। आव० ७२१। आमोकः-कचवरपुञ्जः। आचा० ४११।

आमोक्ख-आमोक्षः, आमुच्यन्तेऽस्मिन्निलामोक्षणं वाऽऽ- मोक्ष.। आचा० ६।

आमोडणं-हत्थेहि आमोडणं। नि० चू० प्र० २४५ अ।

आमोडेति-सीमन्तयति। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

आमोद-गन्धः। उत्त० ३६९।

आमोयगो-आमोदकः। जीवा० २६८।

आमोसगा-आमोषकाः, चौराः। ठाणा० ३१५।

आमोसलि-आमर्शवत्तिर्यगूर्ध्वमधो वा कुड्यादिपरामर्शव- द्यथा न भवति। उत्त० ५४१।

आमोसहि - आमर्षौषधिः, तत्रामर्षणमामर्ष.-संस्पर्शनमि- त्यर्थ., स एवौषधिर्यस्यासावामर्षौषधि, करादिसंस्पर्शमा- त्रादेव व्याध्यपनयनसमर्थो लब्धिलब्धिमतोरभेदोपचारा- त्साधुरेवामर्षौषधिः। विशे० ३७९। आचा० १७८। आमर्षौषधि। ठाणा० ३३२। आमर्शणमामर्शः-संस्पर्श- नमित्यर्थ, स एवौषधिः। आव० ४७। आमर्षणमामर्षः- हस्तादिसंस्पर्शः। औप० २८।

आमोसे-आमर्षणम् आमर्ष'-अप्रमृज्य करेण स्पर्शनम्। आव० ५७४। आमोषाः-आ-समन्तान्मुष्णन्ति-स्तैन्यं कुर्वन्तीति। उत्त० ३१२।

आम्नाय-गुणनं, घोषविशुद्धं परिवर्त्तनं रूपादानं। तत्त्वा० ९-२५।

आम्रसालवनम् - आमलकल्यानगर्या वनम्। विशे० ९५०।

आम्लखलिकायाम्। विशे० ६०६।

आम्लम्-चतुर्थरसम्। आव० ८५४। अंविला। उत्त० ६७७।

आयं-तोमलिविसए सीयतलाए आयाण खुरेसु सेवालतरिया लग्गंति, तत्थ वत्था कीरंति। नि० चू० प्र० २५४ आ। कर्माश्रवलक्षणम्। सूत्र० १८९। इष्टफलम्। भग० ४।

आयंकं-आतङ्कः, आशुघाती रोग । आव० ७५९ । सद्यो-घाती रोगः । दश० २७३ । कृच्छ्रजीवन दु ख । आचा० ७५ । आशुघाती शूलादि. । जं० प्र० १२५ । भग० ४७१ । सद्योघातिव्याधि. । भग० १२२ । नरकादिदु खम् । आचा० १६० । कृच्छ्रजीवितकारी, सद्योघाती-त्यर्थ. शूलादि । ठाणा० ११९ । शूलविशूचिकादि' सद्योघाती. । ठाणा० १५० । व्याधि' । भग० ६९० । आङिति सर्वात्मप्रदेशाभिव्याप्त्या तंकयन्ति – कृच्छ्रजीवितमात्मानं कुर्वन्ति इत्यातंका –सद्योघातिनो रोगविशेषा । उत्त० ३३८ । आतङ्कः, सद्योघातिन । औप० ९६ । आव० ५८५ । ज्वरादि । पिण्ड० १७७ । आचा० २९७ । कृच्छ्रजीवितकारी ज्वरादि' । भग० ७०२ । आतङ्क., आशुकारी व्याधिविशेष' । दश० चू. १४ । रोग' । उत्त० ४८६ । ज्वरादि । आव० ८४८ । ओघ० १९० । कष्टजीवितकारी । विपा० ४० । आशुजीवितापहारी शूलादिक । सूत्र० २९२ । आचा० २०५, ३३०, ३६२ ।

आयंकसंपओग – आतङ्कसम्प्रयोग , आतङ्क –रोग तस्य योग । औप० ४३ ।

आयगुल–पुरुषात्मसम्बन्धि आत्माङ्गुलम् । अनु० १५६ । अङ्गुलस्य प्रथमभेद । प्रज्ञा० २९९ ।

आयंचणं – गोमुत्त । नि० चू० तृ० १२७ अ । व्य० प्र० १०४ आ ।

आयंचामि–लिंपामि, आसिंचामि । उपा० ३२ ।

आयंतकरे – आत्मनोऽन्तम्– अवसान भवस्य करोतीति आत्मान्तकर , धर्म्मदेशनानासेवक प्रत्येकबुद्धादि । ठाणा० २१३ ।

आयंति–आगच्छन्ति, उत्पद्यन्ते । आव० १७९ ।

आयंतियमरणे–यानि नारकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय मरिष्यतीति । सम० ३३ ।

आयंती आयान्ती । आव० २०७ ।

आयते–आचान्त', नवानामपि श्रोतसां शुद्धोदकप्रक्षालनेन गृहीताचमन । जीवा० २४३ । कृतपानः । भग० १६४ ।

आयंदमे – आत्मदम , आत्मानं दमयति–शमवन्तं करोति शिक्षयति वेति । ठाणा० २१४ ।

आयंबिलं–आयाम्लम् , ओदनकुल्माषादि । औप० ४० । आचाम्लम् । आव० ८५२ । शुद्धौदनादि । अनुत्त० ३ । सकूरा । आव० ८५५ । पानकम् । ओघ० १३३ ।

आयंबिलपाउग्गं–आचाम्लप्रायोग्यम् , (कूरविहाणाणि) । आव० ८५५ ।

आयंबिलवड्ढमाणं–आचाम्लवर्द्धमानम् , तपोविशेष । अन्त० ३२ ।

आयंबिलिए–आचाम्लिक' । ठाणा० २९८ ।

आयंभरे – आत्मानं बिभर्त्ति-पुष्णातीत्यात्मम्भरि । ठाणा० २४८ ।

आयंस–आदर्श., वृषभादिग्रीवाभरणम् । अनु० ४७ । दर्पणः । जं० प्र० ३९२ । आदर्श. । जं० प्र० ५१० ।

आयंसघरं–आदर्शगृहम् । आव० १७० ।

आयंसघरगं – आदर्शगृहकम् , आदर्शमयमिव गृहकम् । जीवा० २०० । जं० प्र० ४५ ।

आयंसमुहदीवे–आदर्शमुखद्वीपः, अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

आयंसमुहा – आदर्शमुखनामा नवमोऽन्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० । जीवा० १४४ ।

आयंसलिवी–ब्राह्मीलिपिपञ्चदशभेद. । प्रज्ञा० ५६ ।

आय–आय , श्रुतनाम । दश० १६ । लाभ । अनु० १५४ । आत्मा–शरीरम् । उत्त० ४१५ । जीवश्चित्तं वा । उत्त० ५०४ । अतति–सततं गच्छति तानि तान्यध्यवसायस्थानान्तराणीनि आत्मा–मन. । उत्त० ३१४ ।

आयइ–आयति.–अनागतं, उत्तरकालम् । आव० ५०९ ।

आयकाय–अनंतकायविशेषः । भग० ८०४ ।

आयक्खाहि–आख्याहि, कथय, निवेदय । भग० ११२ ।

आयगय–आत्मनि गत. आत्मगत., आत्मज्ञ इति । सूत्र० १२४ ।

आयगवेसए–आत्मगवेषक , आत्मान–कर्मविगमाच्छुद्धस्वरूप गवेषयति–अन्वेषयते यः स । आयगवेषक.–आय – सम्यग्दर्शनादिलाभस्तं गवेषयतीति । आयतगवेषक –सूत्रत्वादायतो वा–मोक्षस्तं गवेषयतीति वा । उत्त० ४१५ ।

आयगुत्ते – आत्मा- शरीरं तेन गुप्त. आत्मगुप्त –न यतस्तत करणचरणादिविक्षेपकृत्, गुप्तो–रक्षितोऽसयमस्थानेभ्य आत्मा येन स । उत्त० ४१५ ।

आयजोगे-आत्मयोगी, आत्मनो योग-कुशलमनःप्रवृत्तिरूप आत्मयोग, स यस्यास्ति स तथा, धर्मध्यानावस्थित. । सूत्र० ३४२ ।

आयट्ठं - आत्मनोऽर्थ आत्मार्थ., स च ज्ञानदर्शनचारित्रात्मक, आत्मने हितं-प्रयोजनमात्मार्थं, चारित्रानुष्ठानमेव, आयतः-अपर्यवसानान्मोक्ष स एवार्थ.। आयत्त -मोक्ष., अर्थः-प्रयोजनं यस्य । आचा० ११० । आत्महितं । आचा० १०९ । ज्ञानादिरूपं स्वकार्यम् । बृ० द्वि० ७१ अ ।

आयट्ठी-आत्मार्थी, यो ह्यन्यमपायेभ्यो रक्षति सः, आत्मवान । सूत्र० ३४२ ।

आयणाणं-आत्मज्ञानम्, वादादिव्यापारकाले किममुं प्रतिवादिनं जेतुं मम शक्तिरस्ति न वा ? इत्यालोचनम् । उत्त० ३९ ।

आयणीली-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

आयण्णं-आकीर्णम्, स्थानविशेष । ओघ० १५४ ।

आयतंगुली-एगापएसिणी । नि० चू० प्र० २०८ अ ।

आयतगुत्ते-आत्मगुप्त-सततोपयुक्त । आचा० २७२ ।

आयतजोग - आयतयोगः-सुप्रणिहितं मनोवाक्कायात्मकम् । आचा० ३१४ । ज्ञानचतुष्टयेन सम्यग्योगप्रणिधानं । आचा० ३१४ ।

आयतणं-आयतनम्, गुणानामाश्रयं, अहिंसाया सप्तचत्वारिंशत्तमं नाम । प्रश्न० ९९ । आविष्करणं कथनं, निर्णयनं वा । सूत्र० १८१ । स्थानम् । ओघ० २२२ । नि० चू० प्र० १९२ आ । देवकुलम् । नि० चू० द्वि० ६९ आ । दोषाणां स्थानं । आचा० ३२९ । ज्ञानादित्रयम् । आचा० २०७ ।

आयतणा-आयतनानि-बन्धहेतवः । ठाणा० ४५१ ।

आयतणाइं-आयतनादीनि, दोषरहितस्थानानि, वसतिगतानि, संस्तारकगतानि च । आचा० ३७२ । देवकुलपार्श्वापवरका । आचा० ३६६ । कर्मोपादानानि । आचा० ४०७ । उपभोगास्पदभूतानि । आचा० १२७ । कर्मोपादानस्थानानि । आचा० ३५६ । दोषस्थानानि । आचा० ३८६ ।

आयतरो-तववलिओ । नि० चू० तृ० १२३ अ ।

आयतसंठाण-आयतसंस्थानम् । प्रज्ञा० ११ ।

आयता-दीर्घा । जीवा० १६४ ।

आयती-सन्तति । बृ० द्वि० २१३ अ ।

आयतीहितं-आगामिकालहितं, आत्मना हितं वा । दश० चू० १५७ ।

आयते-आयत, संस्थानपञ्चमभेद । प्रज्ञा० २४२ । भग० ८५८ ।

आयतो-आयत, मोक्ष. । सूत्र० १७३ । मोक्खो । दश० चू० ८८ ।

आयत्तं-आयत्तम्, सम्मिश्रम् । पिण्ड० ८१ । आधिनीकृतम् । आव० ३६६ ।

आयत्ताए-आत्मत्वाय-आत्मीयकर्मानुभवाय । आचा० २३३ ।

आयपइट्ठिते-आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मना वा परत्राक्रोशादिना प्रतिष्ठितो-जनित आत्मप्रतिष्ठितः । ठाणा० ९२ । आत्मापराधेनैहिकामुष्मिकापायदर्शनादात्मविषयः । ठाणा० १९३ ।

आयपतिट्ठिए- आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मन्येव प्रतिष्ठितः । प्रज्ञा० २९० ।

आयपवायं-आत्मप्रवादं, सप्तमपूर्वम् । ठाणा० १९९ ।

आयप्पवाय-आत्मप्रवादः, यत्रात्मन. संसारिमुक्ताद्यनेकभेदभिन्नस्य प्रवदनम् । दश० १२ । आत्मानं-जीवमनेकधा नयमतभेदेन यत्प्रवदति तत् । नंदी २४१ ।

आयप्पवायपुव्वं - आत्मप्रवादनाम सप्तमपूर्वम् । सम० २६ । विशे० ९४६ ।

आयभाव-आत्मभावः, स्वस्वरूपः । अनु० २२६ । जीवसम्बन्ध. । अनु० २२० । उत्थानशयनगमनभोजनादिरूप आत्मपरिणामविशेषः । भग० १४९ । अनादिभवाभ्यस्तो मिथ्यात्वादिक, विषयगृध्नुता वा । सूत्र० २४० ।

आयभाववंकणया - आत्मभाववंकनता, आत्मभावस्याप्रशस्तस्य वङ्कनता-वक्रीकरण प्रशस्तत्वोपदर्शनता । ठाणा० ४२ ।

आयभाववंचणा - आत्मभाववञ्चनता, मायाप्रत्ययिक्रियाया प्रथमो भेद. । आव० ६१२ ।

आयभाववत्तव्वया-आत्मभाववक्तव्यता, अहंमानिता । भग० १३९ ।

आयमणं-आचमनम्, निर्लेपनादि । ओघ० १३७, १९०, १६२ । आशातनायाः दशमभेद. । आव० ७२५ । गच्छ-

पादिकरणम्। उत्त० ३७०। निर्लेपनम्। वृ० तृ० २०४ आ। णिल्लेवण। नि० चू० प्र० २२० आ। पुरीषोत्सर्गानन्तरं शौचकरणम्। पिण्ड० ११। आचमनम्। ठाणा० ३३९।

आयमाणे–आददान·, प्रवर्त्तमान। सूर्य० १२।

आयमेज्जा–निर्लेपनं चापाने एवमेव कुर्यात्। ओघ० १२५।

आयय–आयतम्, प्रसारितम्, दीर्घम्। भग० २३०। आयतः – मोक्ष, आयतम्–अत्यन्तम्। दश० २५८। आकृष्ट, दीर्घश्च। भग० ९३, ३३३। मोक्ष.। व्य० द्वि० १९७ अ। आत्मा। आचा० १२२। मोक्ष. सयमो वा। उत्त० ५८७। सयत। आचा० ३१४। प्रयत्नवान्। भग० ९३। दीर्घ· सर्वकालभवनात् मोक्षः। सूत्र० ७५।

आययकण्णायत्तं–आयतकर्णायतम्, प्रयत्नवत्कर्णं यावदाकृष्टम्। भग० ९३।

आययचक्खू – आयतचक्षु – दीर्घमैहिकामुष्मिकापायदर्शि चक्षुः–ज्ञान यस्य स। आचा० १३६।

आययट्ठिए–आयतार्थिकः, मोक्षार्थी। दश० २५६।

आययट्ठिया–आयतार्थिका, आयतो–मोक्ष सयमो वा स एवार्थ प्रयोजन विद्यते येषामिति। उत्त० ५८७। आयत – मोक्षस्तत्र स्थिता आयतस्थिता उद्यतविहारिण सविग्ना इत्यर्थ। व्य० द्वि० १९७ अ।

आययट्ठी–आयतार्थी, मोक्षार्थी। दश० १८७।

आययणं–आयतनम्। आव० २११। आदानम्। अन्त० २४। गमनम्, गृहम्। जीवा० २७९। स्थानम्। जं० प्र० ७७। दश० १९८। आङ्–अभिविधौ समस्तपापारम्भेभ्य आत्मा आयत्यते–आनियम्यते यस्मिन् कुशलानुष्ठाने वा यत्नवान् क्रियत इत्यायतनं–ज्ञानादित्रयम्। आचा० २०६। उत्पत्तिस्थानम्। उत्त० ६२३।

आययतरे–आयततर·, आयमनयोरतिशयेनायत आयततर। आचा० २९४। यत्नेनाध्यवसित। आचा० २९३।

आयरंति–आचरन्ति, आसेवन्ते। दश० १९८।

आयरंतो–आचरन्, व्यवहरन्, कुर्वन् वा। उत्त० ६४।

आयरक्खा–आत्मरक्षा, स्वाम्यात्मरक्षा। भग० १९४। अगरक्षा राज्ञाम्। ठाणा० ११७।

आयरक्खिए–आत्मरक्षितः, आत्मा रक्षितो दुर्गतिहेतोरपध्यानादेरनेनेति। उत्त० ९९। आयरक्षित –आयो वा–ज्ञानादिलाभो रक्षितोऽनेनेति। उत्त० ९९। आत्मा रक्षितो दुर्गतिपतनात् त्रातोऽनेनेति, रक्षिता आयाः–सम्यग्दर्शनादिलाभा येनेति। उत्त० ४१४।

आयरणं–आचरणम्, अनुष्ठानम्। उत्त० ५३३।

आयरणया–आदरणं, अभ्युपगमं आचरणम् वा। भग० ५७३।

आयरणा–आचरणा, विधिः, मर्यादा, सीमा च। आव० ६३९। ततियभङ्गविकप्पो। नि० चू० प्र० १९८ अ। चर्या। बृ० तृ० १२९ आ।

आयरिअ–आचार्य, शिल्पोपदेशदाता। भग० ३१७। औप० ६२। अनुयोगाचार्यः। उत्त० १७। व्य० प्र० १३७ अ। अनुयोगधरः। आचा० ३५३। सपरसिद्धंतपरूवगो। नि० चू० प्र० १६ अ। आयरिए–आचार्य.–प्रतिबोधकप्रव्राजकादि अनुयोगाचार्यो वा। ठाणा० १४३, २४४।

आयरियं–आचरितम्, आसेवितं। आव० २६३। आर्य्यं – आराद् यात पापकर्म्मभ्य इति। भग० ९०। आचरणमाचरितं तत्तत्क्रियाकलाप। उत्त० २६६। आरायातं सर्वकुर्युक्तिभ्य इत्यार्यं–तत्त्वं तत्। उत्त० २६६। आर्यम्–आर्याणां कर्त्तव्यं आचार्यं वा, मुमुक्षुणा यदाचरणीयं ज्ञानदर्शनचारित्रम्। सूत्र० १८४। पापकर्मभ्य आरायातमित्यार्यम्। ठाणा० ११९।

आयरिय–आचार्य·। प्रज्ञा० ३२७। शिल्पी। जं० प्र० २१२। आङ्मित्यमिव्याप्त्या मर्यादया वा स्वयं पञ्चविधाचारं चरत्याचरयति वा परान्, आचर्यते वा, मुक्त्यर्थिभिरासेव्यत इति। उत्त० ३७। आ–मर्यादया–तद्विषयविनयरूपया चर्यते–सेव्यते, जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरिति, आचार·–ज्ञानाचारादि, आ–मर्यादया वा चारो-विहार आचारः तत्र यः स्वयंकरणात्प्रभाषणात्प्रदर्शनाच्च साधु स, आ–ईषत्–अपरिपूर्णा· हेरिका ये ते चारा·–आचारा -चारकल्पा·, युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणा विनेया शिष्यास्तेषु यो यथावच्छास्त्रार्थोपदेशकतया। भग० ३।

आयरियउवज्झाए – आचार्योपाध्याय, आचार्येण महोपाध्याय·। भग० २३२। आचार्येवोपाध्याय। नि० चू० प्र० १९६ आ।

आयरियजणवय-देशविशेष। नि० चू० प्र० ३४८ आ।

आयरियते – आचार्यकम्–तद्ग्रन्थव्याख्यातृत्वम्। व्य० प्र० १६६ अ।

आयरियव्वं–पटियव्व। नि० चू० प्र० ५ आ।

आयवणाम–आतपनाम-यदुदयात् जन्तुशरीराणि स्वरूपेणानुष्णान्यपि उष्णप्रकाशलक्षणमातप कुर्वन्ति तदातपनाम, तद्विपाकश्च भानुमण्डलगतेषु पृथिवीकायिकेष्वेव न वह्नौ, प्रवचनेऽपि निषेधात्, तत्रोष्णत्वमुष्णस्पर्शनामोदयात्, उत्कटलोहितवर्णनामोदयाच्च प्रकाशकत्वम्। प्रज्ञा० ४७३।

आयरिया–आचार्या –प्राणाचार्या वैद्या । उत्त० ४७५। व्य० प्र० १७१ अ।

आयरिसो–आदर्श.। आचा० ५।

आयरेणं–आदरेण, प्रयत्नेन। जं० प्र० १९२।

आयरो – आदरः, आद्रियते आदरणं वा, परिग्रहस्याष्टमं नाम। प्रश्न० ९२। सम्भ्रम । बृ० तृ० ११ अ।

आर्य–अज्ज, पितामह.। व्य० प्र० १७१ अ। अजुगुप्सीकारी। व्य० प्र० १४ अ।

आयल्लयं–गृहम्। पउ० ३३–६६। पराधीनताम्। पउ० २४–१५।

आयवं–आतपवान्, चतुर्विंशतितममुहूर्त्तनामविशेष.। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। रविबिम्बजनित उष्णप्रकाश.। उत्त० ५६१। आतप, आ–समन्तात्तपति सन्तापयति जगदिति। उत्त० ३८। घर्म। उत्त० १२१।

आयवतत्तए–आतपतप्तं पय । भग० ६८०।

आयवत्ताइं–आतपत्राणि, छत्राणि। जं० प्र० ८१।

आयवाइ–विश्वकारणात्मवादिन । आव० ८१६।

आयवाई–आरमवादिन, क्रियावादिविशेष । सम० ११०। 'पुरुष एवेद ग्नि' मित्यादि प्रतिपत्तुरिति। ठाणा० २६८।

आयवाभा – आतपाभा, सूर्यस्य ज्योतिषेन्द्रस्य द्वितीया अग्रमहिषी। जीवा० ३८५। सूर्यस्य पत्नीनाम। भग० ५०५।

आयवी – आत्मवित्, आत्मानं श्वभ्रादिपतनरक्षणद्वारेण वेत्तीति। आचा० १५४।

आयवीरियं–वीर्यस्य पञ्चमभेद । नि० चू० प्र० १९ अ।

आयसंचेयणिज्जा – आत्मना सचेत्यन्ते–क्रियन्त इति आत्मसचेतनीया (घट्टन–पतन–स्तभन–श्लेषजन्या उपसर्गा)। ठाणा० २८०।

आयसंचेयतो–आत्मसचेतनीयः–आत्मनैवात्मनो दु खोत्पादनम्। व्य० प्र० १९६ अ।

आयसा–आत्मना। सूत्र० १०६।

आयसी–लोहमयी, दर्भमयी च। प्रश्न० १३।

आयसंवेणिज्जा–आत्मसवेदनीया–आत्मना क्रियन्ते ये, उपसर्गा । आव० ४०५।

आयसरीरसंवेयणी–आत्मशरीरसवेजनी, संवेजनीकथाया प्रथमोभेदः। दश० ११२।

आयसरीराणवकंखिया–स्वशरीरक्षतिकारिणी क्रिया । ठाणा० ४३।

आयसेण – आत्मसेन', जंबूद्वीपैरवते अस्यामवसर्पिण्या चतुर्थतीर्थकृत। सम० १५९।

आया – आत्मा, जीवः। आचा० १६। आत्मा। भग० १२२। आत्मा, रूपं। नंदी २१२। द्वादशशते आत्मभेदनिरूपणार्थो दशमोद्देशक.। भग० ५५२। अतति–सततमवगच्छति 'अत सातत्यगमन' इति वचनादतो धातोर्गत्यर्थत्वाद्गत्यर्थानां च ज्ञानार्थत्वादनवरतं जानातीति निपातनादात्मा–जीव. उपयोगलक्षणत्वादस्य सिद्धसमार्यव-स्थाद्वयेऽप्युपयोगभावेन सततावबोधभावात्, अतति–सततं गच्छति स्वकीयान् ज्ञानादिपर्यायानित्यात्मा, ससार्यपेक्षया नानागतिषु सततगमनात् मुक्तापेक्षया च भूततद्भावत्वादात्मेति। ठाणा० १०।

आयाए–आत्मविराधनादोष.। ओघ० ७९।

आयाणं–आदानम्, ईप्सितार्थग्रहणम्। औप० १८। अर्गलास्थान वा। औप० १८। दुष्प्रणिहितमिन्द्रियं। आचा० ३०४। कर्मादानम्। आचा० ३३७। आदीयते–स्वीक्रियते प्राप्यते वा मोक्षो येन तत्, ज्ञानदर्शनचारित्रत्रयम्। सूत्र० ५२। डगलगा। नि० चू० प्र० २२० आ। गहण, जेण मग्गेण गतूण दगमट्टियहरियादीणि घेप्पंति त दगमट्टिय। दश० चू० ७८। कुचादिग्रहणम्, सम्प्राप्तकामस्यकादशो मेद । दश० १९४। आदान –आदीयतेऽनेनेत्यादानो–मार्ग । दश० १६८। इन्द्रियम्, करणम्। भग० २८६। आदीयते–द्वारस्थगनार्थं गृह्यत इत्यादान । जं० प्र० १११। आदीयते– गृह्यते आत्मप्रदेशै सह श्लिष्यतेऽष्टप्रकारं कर्म्म येन तदादानम्, हिंसाद्याश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा। आचा० १७०। संयमानुष्ठानं। आचा० १२८। कर्म्मोपादानं। आचा० २४३, ३३०। आदीयते–सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियते। आचा० १९३। आदि । व्य०प्र० २१८

आ। हिंसायाश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा तत्स्थितेर्निमित्तत्वात्कषाया वा। आचा० १७१। आदीयत इति, धनधान्यादि। उत्त० २६५। आदीयत इति आदि – प्रथमम्। उत्त० ५७०। आदीयन्ते–गृह्यन्ते शब्दादयोऽर्था एभिरिति आदानानि–इन्द्रियाणि। बृ० प्र० २११ आ। आदीयते-सद्विवेकैर्गृह्यत इति, चारित्रधर्मे। उत्त० ३३८। आदीयते गृह्यतेऽर्थ अनेनेत्यादानम्–इन्द्रियम्। भग० २२४। आदान, आदेयो रम्य। प्रश्न० ८१। आदीयते–स्वीक्रियते आत्महितमनेनेति–सयम। उत्त० २२५। सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपम्। सूत्र० ४०५।

आयाणपपण – आदीयते–प्रथममेव गृह्यत इत्यादानं तच्च तत्पदं चादानपदं तेन आदानपदेन। आचा० १९६।

आयाणपय – आदानपदम्, शास्त्रस्याध्ययनोद्देशकादेश्चादिपदम्। अनु० १४१।

आयाणपरिसाडे–आधानपरिसाटम्, गर्भाधानपरिसाटरूपमूलकर्मतृतीयभेदः। पिण्ड० १४२।

आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई – आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति, भाण्डमात्रे आदाननिक्षेपविषया समिति – सुन्दरचेष्टा। आव० ६१६। आदाने–ग्रहणे भाण्डमात्राया - वस्त्राद्युपकरणरूपपरिच्छदस्य, उपकरणस्य वा, भाण्डस्य– वस्त्रादेर्मृन्मयभाजनस्य वा मात्रस्य च–पात्रविशेषस्य निक्षेपणायां–विमोचने ये समिता –सुप्रत्युपेक्षितादिक्रमेण सम्यक् प्रवृत्तास्ते। औप० ३५।

आयाणरक्खी – आदानरक्षी, आदीयते–स्वीक्रियते आत्महितमनेनेत्यादान –सयमस्तद्रक्षी। उत्त० २२५।

आयाणसो–आदानश.–आदेरारभ्य। सूत्र० ४२४।

आयाणसोय – आदानस्रोत, आदीयते – सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियत इति आदानम्–कर्म्म ससारबीजभूतं तस्य स्रोतासि–इन्द्रियविषया मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगा वा। आचा० १९२।

आयाणसोयगढिए – संसारबीजभूतेन्द्रियविषय मिथ्यात्वादिगृद्ध –अभ्युपपन्न। आचा० १९३।

आयाणिज्जं–आदानीयम्–श्रुतं। आचा० १२२। कर्म। आचा० २४२। आदातव्यं भोगाङ्गं, आदानीयं–कर्म आचा० १२२। ग्राह्य, आदेयवचनश्च। आचा० १९१।

आयाणी–क्वचिद्देशविशेषेऽजा सूक्ष्मरोमवत्यो भवन्ति, तत्पक्ष्मनिष्पन्नानि आजकानि भवन्ति। आचा० ३९४।

आयाणीय–आदानीयम्, ग्राह्यम्। आचा० ३८।

आयाती–आयाति, गर्भान्निर्गम। ठाणा० ६७।

आयापरिणामो – आज्ञया परिणाम। व्य० द्वि० ४५० अ।

आयाम – अवशायनम्। आव० ५४। दैर्घ्यम्। अनु० १८०, १७१। भग० ११९। ठाणा० ६९। आव० १८४। अवश्रावणम्। ओघ० १३३। पिण्ड० १७। आचाम·। ठाणा० ३३९। अवसामणं। नि० चू० प्र० ४७ आ। आचाम्लम्। उत्त० ७०६। उच्चत्वम्। भग० २६९।

आयामगं–आयामकम्, अवश्रावणम्। उत्त० ४१९।

आयामणया–आकर्षणम्। भग० ९३।

आयामते–आयामकम्–अवश्रावणम्। ठाणा० १४७।

आयामविक्खंभो – आयामविष्कम्भ। आव० १५०।

आयामुसिणोदगं–अवश्रावणमुष्णोदकं च। ठाणा० ३३९।

आयामे–आयाम, दैर्घ्यम्। प्रज्ञा० ४२७।

आयामेति–ददाति। भग० ६६३।

आयामेत्ता–आयामेन समाकृष्य। सूत्र० ३०९। आयम्य, आकृष्य। भग० ९३।

आयामेत्था–भोजितवान्। भग० ६६२।

आयाय–आदाय, स्वीकृत्य, चरित्वा। उत्त० १२८। अवगम्य। आचा० ३३९। गृहीत्वा मयैतदर्थं यतितव्यमिति निश्चित्य बुद्धया सम्प्रधार्येतियावत्। उत्त० २६८। बुद्धया गृहीत्वाऽभ्युपगम्य। उत्त० २५३। गृहीत्वा, अवगम्य। आचा० ३३५। बुद्धया गृहीत्वा। उत्त० १०४।

आयार–स्वरूपम्। जं० प्र० १८। मूलगुणादि। दश० २५६। लोचास्नानादि। दश० ११०। आङ्–मर्यादाया चरणं चार –मर्यादया कालनियमादिलक्षणया चार आचार इति। आव० ४४८। चतुर्थनिर्युक्ति। आव० ६१। श्रुतज्ञानादिविषयमनुष्ठानं कालाध्ययनादि। भग० १२२। व्यवहार.। ठाणा० ६४। चारित्रम्। उत्त० ५८३। ज्ञानाचारादि। उत्त० ५८३।

आयारअक्खेवणी–आचाराक्षेपणी, आचारो–लोचास्नानादिस्तत्प्रकाशनेन आक्षेपणी। ठाणा० २१०।

आयारकहा। नि० चू० द्वि० ६५ अ।

आयारकुसल-ज्ञानाद्याचारेण कर्मकुशानां लावकः। व्य० प्र० २३४। आचारे ज्ञातव्ये-प्रयोक्तव्ये वा दक्ष, अभ्युत्थानासनप्रदानाद्युपहितान्तगुणानामाकरो वा। व्य० प्र० २३६।

आयारक्खी-आत्मरक्षी, आत्मानं रक्षत्यपायेभ्य' कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशील'। उत्त० २२५।

आयारगोअर - आचारगोचर, क्रियाकलाप। दश० १९१। आचार. - मोक्षार्थमनुष्ठानविशेषस्तस्य गोचर। आचा० २६६।

आयारग्ग-चूलिका। आचा० ७।

आयारतेणे-आचारस्तेन, विशिष्टाचारवत्तुल्यरूपः इति। दश० १९०।

आयारदंसणं-आचारदर्शनम्, प्रत्युपेक्षणादिक्रियादर्शनम्। आव० ४४८।

आयारदोसो-आचारदोप। आव० ६५४।

आयारपकप्प-आचारप्रकल्प, आयरणं आयारो सो य पञ्चविहो-णाणदंसणचरित्ततववीरियायारो य, तस्स पकरिसेणं कप्पणा-सप्तभेदप्ररूपणेत्यर्थ.। नि० चू० प्र० ४ आ। आचार-प्रथमाङ्गं तस्य प्रकल्प.-अध्ययनविशेषो निशीथमित्यपराभिधानं, आचारस्य वा-साध्वाचारस्य ज्ञानादिविषयस्य प्रकल्पो व्यवस्थापनमित्याचारप्रकल्प। सम० ४८। उत्त० ६१६। (निशीथ) आचार एव। आव० ६६०। प्रत्याख्यानपूर्वस्य विंशतितमं प्राभृतं। आचा० ३१९, ३२०। निशीथाध्ययनम्। ठाणा० ३३५।

आयारपभासणं-कालनियमाद्याचारव्याख्यानम्। आव० ४४८।

आयारफल-आचारफलम्, मुक्तिलक्षणम्। उत्त० ५८३।

आयारभंडप-आचारभाण्डम्। अनुत० १।

आयारभंडग-आचारभाण्डक-पात्रकम्। ओघ० १५१।

आयारभाव-विशिष्टाचार। दश० १९०।

आयारमंतरे-आचारान्तरे। आव० ७९३।

आयारवं-पंचविहं आयारं जो मुणइ आयरइ वा सम्मं सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। ज्ञानादिपञ्चप्रकाराचारवान्। ठाणा० ४२४, ४८४।

आयारवंतं-आकारवत्, सुन्दराकार, आकारचित्रं वा। औप० २।

आयारसमाही-आचारसमाधि', चतुर्थं विनयसमाधिस्थानम्। दश० ३५५।

आयारे-आचार.। नि० चू० तृ० १४८ आ। ज्ञानादिविषयाऽऽसेवा। ठाणा० ३२५। आचार्याणां नमस्कारार्हत्वे तृतीयहेतु, तानाचारवत आचाराख्यापकांश्च प्राप्य प्राणिन आचारपरिज्ञानानुष्ठानाय प्रभवन्ति। आव० ३८३।

आयारो-आचार., साधुसामाचारी। प्रश्न० १२५। आचार्यते आसेव्यत इत्याचार.। आचा० ५। आचार। व्य० द्वि० ३९१ अ।

आयावए-आतापनाकारी। प्रश्न० १०७।

आयावगा-असुरकुमारविशेष'। भग० ६२०।

आयावणा-आतापनास्थानम्। आव० ३९१।

आयावादी-आत्मवादी। आचा० २२।

आयावतं-सकृदीपद्वा तापनमातापनम्। दश० १६३।

आयाविंतो-आतापयन्। आव० ३७१।

आयास-पीडा। ओघ० १५७। लोहमयम्। भग० ३१९। मन प्रभृतीना खेद., परिग्रहस्य चतुर्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

आयासकर-आदेशितः आदेश', आदेशत इति आदेश.। व्य० द्वि० ३३६ आ।

आयाहिणंपयाहिणं - आदक्षिणप्रदक्षिण, आदक्षिणात्-दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिण.-परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव। सूर्य० ६। आव० १२४। जं० प्र० १७। भग० ११४।

आयाहिण-आदाहिणा, आदक्षिणाप्रदक्षिणा। आव० २३२।

आयुःकर्मानुभूतिः - स्थितिर्जीवनमिति। प्रज्ञा० १६९।

आयुःक्षेमस्य-जीवितस्य। आचा० २९१। आयुष क्षेम - सम्यक्पालनं तस्य। आचा० २९०।

आयुर्वेदः-वेदकशास्त्रम्। विपा० ७५।

आयो-लाभ'। भग० ९। गमनं, वेदनम्। ठाणा० ३४८।

आयोगठाणं - आयोगस्थानम्, मेलनस्थानम्। आव० ८२३।

आयोग्गहो-आयपमाणं खेत्तं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

आयोधनस्थानम्-अट्टालकम्। उत्त० ३११।

आरं–आर', ससार' । बृ० प्र० ५१ अ, २०१ अ । इहभव', गृहस्थत्वम्, संसारो वा । सूत्र० ५६ । इहलोकाख्य मनुष्यलोकं वा । सूत्र० १५२ ।

आरंभ – आरम्भ., जीवोपघातः, उपद्रवणं, सामान्येन वाऽऽश्रवद्वारप्रवृत्ति । भग० ३१ । श्रावकस्याष्टमी प्रतिमा । आव० ६४६ । आरभ्य । आव० ६८८ । सावद्यानुष्ठानम् । आचा० ७८ ।–जीवोपघात. । भग० ७३५ । पृथिव्याद्युपमर्दनं । ठाणा० १०८ । सावद्यक्रियानुष्ठानम् । आचा० १५६ । आरम्भणमारम्भ., शरीरधारणायान्नपानाद्यन्वेषणा । आचा० २९० ।–प्राणिवध । तत्त्वा० ६–९ । द्रव्योत्पादनव्यापाराः । उत्त० ४५६ । पृथिव्याद्युपमर्दनम् । प्रज्ञा० ३३५ । जीव, -कृष्यादिव्यापारः, जीवानामुपद्रवणं वा । प्रश्न० ६ । नि० चू० प्र० ३३ आ । व्यापारः । प्रश्न० ६३ । हलदन्तालखनन । आव० ८१८ ।

आरंभइ–आरभते–पृथिव्यादीनुपद्रवयति । भग० १८३ ।

आरंभओ – आरम्भज, आरम्भात्–हलदन्तालखननाज्जायते स । आव० ८१८ ।

आरंभकहा–आरंभकथा, छागतित्तिरमहिषारण्यकादिका हता अत्रेति प्रशंसनं द्वेषणं वा । भक्तकथायास्तृतीयभेद । आव० ५८१ । तित्तिराद्युपयोगकथा । ठाणा० २०९ ।

आरंभपरिण्णाए–आरम्भ –पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षण. परिज्ञात –तथैव प्रत्याख्यातो येनासावारम्भप्रतिज्ञात, श्रमणोपासकाष्टमी प्रतिमा । सम० १९ ।

आरंभसमारंभो–आरंभसमारंभः, आरंभा–जीवास्तेषां समारंभ.–उपमर्दः, अथवा आरंभ.–कृष्यादिव्यापारस्तेन समारंभो जीवोपमर्द, अथवा आरंभो–जीवानामुपद्रवणं तेन सह समारंभ, परितापनमिति वा, प्राणवधस्यैकादशपर्याय । प्रश्न० ५ ।

आरंभिया– आरंभिकी, आरभ –पृथिव्याद्युपमर्दनं स प्रयोजनं–कारणं यस्या सा, सम्यग्दृष्टे. प्रथमक्रिया । प्रज्ञा० ३३४ । विंशतिक्रियामध्ये प्रथमा । आव० ६१२ । आरम्भणमारम्भ तत्र भवा आरम्भिकी । ठाणा० ४१ ।

आरक्खि–आरक्षक चौरग्राहक । बृ० द्वि० १०७ अ । आरक्षिक' । ओघ० ८९ ।

आरक्खिगो–दंडवासिगो । नि० चू० तृ० ३० आ ।

आरक्खितो–कोट्टवालो । नि० चू० प्र० २६२ अ ।

आरक्खिय – आरक्षकः । उत्त० १६५ । दण्डनायकः । दश० १६६ । आव० ६३३ । ओघ० १०६ । आरक्षिकाणामप्युपरि स्थायिनो हिंडिका आरक्षिका', पुररक्षिकाः । व्य० प्र० १३५ अ ।

आरक्खियपुरिसो–आरक्षकपुरुषः । आव० ३५१ ।

आरगय – आराद्गतम्–आराद्भागस्थितमिन्द्रियगोचरमागतमित्यर्थ' । भग० २१७ ।

आरघट्टिकम् । उत्त० ३८२ ।

आरटन्ती–रुदन्ती । नंदी १५४ ।

आरणं–संशब्दनम् । ओघ० ८१ ।

आरणा – आरणा, कल्पोपगैकादशवैमानिकभेद । प्रज्ञा० ६९ ।

आरण्ण–आरण्य', तापसादिः । अनु० २४४ ।

आरण्णगतणं–श्यामाकादितृणम् । बृ० द्वि० २२० अ ।

आरण्णिय–आरण्यकः, अरण्ये भवः, तीर्थिकविशेष. । सूत्र० ४२२ ।

आरण्यकम्–लौकिकश्रुतम् । आव० ४६५ ।

आरत.–अत्र इतो वा । उत्त० ५४० ।

आरत्तं–आरक्तम्, ईषद्रक्तम् । आचा० १२१ ।

आरद्धो–आरब्ध' । विशे० ९८१ ।

आरनालं–कञ्जियं (देसीभासाए) । नि० चू० प्र० ४७ अ ।

आरनिबद्धा–आरकनिबद्धा, गन्त्री । पिण्ड० १०२ ।

आरन्निय–अरण्ये वसतीति आरण्यकः । सूत्र० ३१५ ।

आरबके – आरबदेशोद्भवान्, म्लेच्छविशेषान् । जं० प्र० २२० ।

आरबदेशजा–आरब्यः । जं० प्र० १९१ ।

आरबी–आरबदेशवासिनी स्त्री । भग० ४६० ।

आरबो–आरब, चिलातदेशवासी म्लेच्छ' । प्रश्न० १४ ।

आरभंती–आरभमाणा, षट्कायान् विनाशयन्ती । पिण्ड० १५७ ।

आरभटभसोलः–त्रिंशत्तमो नाट्यविधि' । जीवा० २४७ ।

आरभड – आरभटम्, नृत्यविशेष. । जं० प्र० ४१२ । नि० चू० तृ० १ अ । जहाभिहितविधाणतो विवरीयं, अहवा तुरियं अण्णंमि वा दरपडिलेहिते अण्णं आढवेति । नि० चू० प्र० १८१ आ । वितथकरणरूपा, त्वरित सर्वमारभमाणस्य, अर्द्धप्रत्युपेक्षित एवैकत्र यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं सा । ठाणा०

३६१। विपर्गीना प्रत्युपेक्षणा, आकुल यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं तद्वा। ओघ० १०९। मोत्साह सुभग तेषामिदम्। ज० प्र० ८१७। अष्टाविंशतितमो नाट्यविधि। जीवा० २४७। ज० प्र० १४७।

आरयं–आरतं, उपरतम्। सूत्र० १०५। अभिविधिना आसक्त। प्रश्न० १३८।

आरसिउं–आरस्य, रुदित्वा। आव० ५८४।

आरसियं–आरसितम्, शब्दित। आव० २२७।

आरा–आरा, प्रवणदण्डान्तर्वर्त्तिनी लोहशलाका। प्रश्न० २२। तुट्ठोवाणहसिव्वणट्ठा। नि० चू० द्वि० १८ अ।

आराडी–आराटी, आरसनम्। आव० ६७७।

आरादण्डः–प्रतोद। दश० २५०।

आराम–तत्र रमणीयतातिशयेन स्त्रीपुरुषमिथुनानि यत्र आरमन्ति स विविधपुष्पजात्युपशोभित आराम। अनु० २४। विविधपुष्पजात्युपशोभितः। ठाणा० ३१२। रति.। आचा० २२९। आराम.–आरमन्ति यस्मिन्माधवीलतादिके दम्पत्यादीनि स आराम। भग० २३८। आरामा–दम्पत्यादीनि येष्वारमन्ति ते। अनु० १४९। वाटिका। प्रश्न० ८। आरमन्ति–यस्मिन् माधवीलतागृहादौ दम्पत्यादीनि क्रीडन्तीति। औप० ३। पुष्पप्रधानवनम्। औप० ४१। दम्पत्योर्नगरासन्नरतिस्थानम्। ज० प्र० ३८८। आगत्य रमन्तेऽत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्य इति स। जीवा० २५८। दम्पतिरमणस्थानभूतमाधवीलतादिगृहयुक्त। प्रश्न १२७। दम्पतिरतिस्थानलतागृहोपेतवनविशेष। प्रश्न० ७३। माधवीलतागुपेतो दम्पतिरमणाश्रयो वनविशेष। प्रश्न० १२६।

आरामाइ–विविधवृक्षलतोपशोभिता. कदल्यादिप्रच्छन्नगृहेषु स्त्रीसहिताना पुमा रमणस्थानभूता। ठाणा० ८६।

आरामागार–आराममध्यवर्तिगृहम्। औप० ६१। उद्यानगृहम्। आचा० ३६५। आचा० ३०६।

आरामिओ–आरामिक.। आव० ३९०।

आराहइत्ता–आराध्य, उत्सूत्रप्ररूपणादिपरिहारेणाराधयित्वा। उत्त० ५७२। यथावदुत्सर्गापवादकुशलतया यावज्जीवं तदर्थनिवनेन। उत्त० ५७२।

आराहए–आराधयति, प्रगुणीकरोति। दश० २२४। आराधक.–निरतिचारपालनात्। उत्त० ५७८।

आराहओ–आराधक, अविराधक। ओघ० ११२।

आराहगा–आराधकाः–आराधयन्ति–अविकलतया निष्पादयन्ति सम्यग्दर्शनादीनि इत्याराधका। उत्त० २३३। आवर्जका। उत्त० ३६१।

आराहण–आराधनम्, अखण्डकालकरणम्। भग० २९७।

आराहणा–आराधना, सम्यगासेवना। उत्त० ५८६। अनुष्ठानम्। उत्त० ५९१। ज्ञानाद्याराधनात्मिका। उत्त० ५८२। आवर्जनार्थम्। उत्त० ५९१। अखण्डकालस्य करणम्। आव० ८४०। चरमकाले निर्यापणारूपा। दश० २६२। मोक्षमार्गाखण्डना। आव० ५६२। आवश्यकस्य पर्याय। विशे० ४१५। अष्टमशते दशमोद्देशक। भग० ३२८। अखण्डकालकरणम्। उपा० १२। मोक्षाराधनाहेतुत्वात्। अनु० ३१। निरतिचारज्ञानाद्यासेवा। ठाणा० ९८।

आराहणामरणंते–आराधनामरणान्ते, मरणकाले आराधना, योगसङ्ग्रहे द्वात्रिंशत्तमो योग। आव० ६६४।

आराहणी–आराधनी, आराध्यते–परलोकापीडया यथावदभिधीयते वस्त्वनया, द्रव्यभावभाषाभेद। दश० २०८।

आराहा–आरोहन्ति ते आराहा। नि० चू० प्र० २७७ अ।

आराहिय–आराधितम्, एभिरेव प्रकारै सम्पूर्णैर्निष्ठा नीता। ठाणा० ३८८। सफलीकृत। उत्त० २९८।

आराहियचरणया–आराधितचरणता, चरणप्रतिपत्तिसमयादारभ्य मरणान्तं यावन्निरतिचारतया तस्य पालना। भग० ६९५।

आराहेइ–आराधयति, साधयति। उत्त० ५८२।

आरिए–आर्या, आराद् याताः सर्वहेयधर्म्मेभ्य इत्यार्या–समाराणेवत.वर्त्तिन क्षीणघातिकर्म्मांशा. समागेदरविवरवर्त्तिभावादि तीर्थकृत। आचा० ११६। ऋद्धिप्राप्ता अर्हदादय, क्षेत्रजात्याद्यार्या। सम० १३५। आर्य–चारित्रार्ह। आचा० १३१।

आरिओ–आर्य, आराद् यात सर्वहेयधर्मेभ्य इति। सूत्र० ३३। आराद्यात. सर्वहेयधर्मेभ्य इति, मोक्षमार्ग सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मक। सूत्र० १७२।

आरियदंसी–आर्य–प्रगुणं न्यायोपपन्न पश्यति तच्छीलश्चेति आर्यदर्शी–पृथक्प्रेक्षकदयामागनादिसकल्परहित.। आचा० १३१।

आरियपदेसिए-आर्यप्रदेशित -तीर्थकरप्रणित.। आचा० २४७।

आरियपन्ने - आर्यप्रज्ञ -श्रुतविशेषितशेमुषीक.। आचा० १३१।

आरिया-आर्या, आराद्धेयधर्मेभ्यो याता -प्राप्ता उपादेय-धर्मैरिति। प्रज्ञा० ५५।

आरुग्ग-आरोग्यं-सिद्धत्वम्। आव० ५०७।

आरुग्गबोहिलाभो-आरोग्यबोधिलाभ., आरोगस्य भाव आरोग्यं-सिद्धत्वं, तदर्थं बोधिलाभ -प्रेत्य जिनधर्मप्राप्ति। आरोग्याय बोधिलाभ। आव० ५०८।

आरुभिता-छायाया नवमभेद। सूर्य० ९५।

आरुहयं-आर्हतम्। आव० ४६५।

आरुहेत्। आचा० ३७९।

आरुह्यते-अध्यास्यते। उत्त० ५१०।

आरूढ-आरुढ., अध्यासित। उत्त० ३४९।

आरूढे पाउयाहिं-आरुढ पादुकयो -काष्ठमयोपानहो, एषणाया नवमदायकदोष॰। पिण्ड० १५७।

आरुवणा-आरोपणा, यत्रैकस्मिन्प्रायश्चित्तेऽन्यदप्यारोप्यते। प्रश्न० १४५। आचारप्रकल्पस्याष्टाविंशतितमो भेद। आव० ६६०। पर्यनुयोग। विशे० ११५२। पच्छित्तं। नि० चू० प्र० २३९ आ।

आरे-पंकप्रभापक्रान्तमहानरका। ठाणा० ३६५।

आरेण-आरत, प्रत्यूषसि। ओघ० १४८। आरात्। सूत्र० ४२३। समारभ्य। विशे० ९२८।

आरोगसाला-अणाहसाला। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

आरोग्गं-आरोग्य, रोगाभाव। आव० ३६१। नीरोगता। आव० ३४१।

आरोग्गा-अरोगा -जराद्विवर्जिता। ठाणा० २४७।

आरोवणा - आरोपणा, आरोपणमेकापराधप्रायश्चित्ते पुन पुन आसेवनेन विजातीयप्रायश्चित्ताध्यारोपणम्। ठाणा० २००। प्ररूपणाया प्रथमभेद। आव० ३८२। परस्परा-वधारणम्। आव० ३८३। प्रायश्चित्तम्। बृ० प्र० ८५ आ। चडावना (मायाप्रत्ययमधिकप्रायश्चित्तम्)। ठाणा० ३२५। चडावणा, अहवा जं दव्वादि पुरिस विभागेण दाण सा आरोवणा। नि० चू० तृ० ८५ अ। आचाराङ्गस्याष्टविंशति-तममध्ययनम्। उत्त० ६१७।

आरोवणाकसिणं-आरोपणाकृत्स्नं, षाण्मासिक ततः परस्य भगवतो वर्द्धमानस्वामिनस्तीर्थं आरोपणस्याभावात्। व्य० प्र० ११८ आ।

आरोवणापायच्छित्तं-प्रायश्चित्तभेदः। व्य० प्र० ११ अ।

आरोहकः। उत्त० ४८।

आरोहणा - आरोपणा-प्रायच्छित्तविशेष। व्य० प्र० १२४ आ।

आरोहपरिणाहयुक्तता-आरोहो-दैर्घ्यं परिणाहो-विस्तर-स्ताभ्या तुल्याभ्या युक्तता, शरीरसम्पत्प्रथमभेद। उत्त० ३९।

आरोहा-महामात्रा। विपा० ४६।

आरोहो-उस्सेहो। नि० चू० प्र० २६६ आ। नातिदैर्घ्यं नाति-ह्रस्वता शरीरोच्छ्रयो वा। बृ० प्र० ३०१ आ।

आर्जिका-अज्जिए, आर्यिका, मातुः पितुर्वा माता। दश० २१६।

आर्जवम्-भावदोषवर्जनम्। तत्त्वा० ९-६।

आर्त्ताः-दुखिन रागद्वेषोदयेन। आचा० १८३।

आर्द्रकः-आर्द्रकनगराधिपति॰। सूत्र० ३६। विशिष्टतप-श्चरणफलवान्। सूत्र० २९९। सचित्तं तरुशरीरम्। आव० ८२८।

आर्द्रकुमारः-प्रतिमादर्शने दृष्टान्त.। बृ० प्र० १८५ अ। सदाचारप्रयत्नवज्ज्ञात। सूत्र० ३८५।

आर्यः-आरात्-सर्वहेयधर्म्मेभ्योऽर्वाग् यात। नंदी ४९।

आर्यकम्-हरितम्। दश० १८५।

आर्यकृष्ण-अज्जकण्हे, आचार्यनाम। विशे० १०२०।

आर्यखपुट-विद्याबले दृष्टान्त॰। बृ० तृ० १५६ अ। विद्या-सिद्ध, सिद्धमन्त्र॰। दश० १०३।

आर्यगङ्गः-आचार्यनाम। विशे० ९२७।

आर्यमंगु-आचार्यनाम। बृ० प्र० २४ अ।

आर्यरक्षित-अज्जरक्खिय, आचार्यनाम। विशे० ९२९, ९३०, १००२।

आर्यवचनम् - अज्जवयणं, आर्याणां-तीर्थकृता वचनम्-आगम। उत्त० ५२६।

आर्यवज्रः-कर्णाभ्या श्रुते दृष्टान्त। बृ० प्र० ६३ अ।

आर्यवैरः-अज्जवेर, आचार्यनाम। विशे० ९२९।

आर्यश्यामः-आचार्यविशेष। प्रज्ञा० ३०६।

आर्यसमुद्रः-आचार्यविशेषः। बृ० प्र० २४ अ।
आर्यसुहस्ती-आचार्यविशेष। बृ० प्र० २४ आ।
आर्या-अज्जा, प्रशान्तरूपा। अनु० २६। भिक्षुणी। ओघ० २०८।
आर्याषाढा-आचार्यनाम। विशे० ९५२।
आर्यासूत्रम्-अज्जासुत्तं, सूत्रभेद। बृ० प्र० २०१ आ।
आर्यिका-आर्जिका, मातु पितुर्वा माता। दश० २१६।
आर्यैः-तीर्थकृद्धिः। आचा० २७४। सकलहेयधर्मेभ्यो दूरं यातैस्तीर्थकरादिभिराचार्यैर्वा। उत्त० २९३।
आलंकारिअभंडं-आलङ्कारिकभाण्डम्, आभरणभृतभाजनम्। जं० प्र० २५५।
आलंकारियं-आलङ्कारिकम्, अलङ्कारयोग्यं भाण्डम्। जीवा० २३६।
आलंच-आलञ्च, द्रव्यस्य बहुत्वेतरादिभिर्लोके प्रतीतभेद.। प्रश्न० ५६।
आलंब-आलम्बः, प्रलम्बः। भग० १७५।
आलंबण-आलम्बनम्, प्रपततां साधारणस्थानम्। आव० ५३४। प्रवृत्तिनिमित्तं शुभमध्यवसानम्। आव० ५८६। ग्लानादि। उत्त० ५८७। रज्ज्वादिवदापद्गर्तादिनिस्तारकत्वादालम्बनम्। भग० ७३८, ७३९। आश्रयणीयं गच्छकुटुंबकादि। ठाणा० १५४।
आलंबणवाहा-अवलम्बनवाहा, द्वयो पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तय। जं० प्र० २९२।
आलइअ-आलगितम्, आविद्धम्। आव० १८९। यथास्थानं स्थापितम्। जं० प्र० १६०। प्रज्ञा० १०१।
आलइयमालमउड-आगालितमालमुकुटम्, आगलितमालं मुकुटं यस्य स.। भग० १७४। आलगितमालमुकुटः। आचा० ४२३।
आलए-आलय, आश्रय। जीवा० २७९। उत्त० ४५४। जं० प्र० १८। वसति, सुप्रमार्जिता स्त्रीपशुपण्डकविवर्जिता वा। आव० ५२९।
आलग्गो-अधृतिमापन्न, कातर.। आव० ८००।
आलपाल-प्रलाप.। आव० ६६९।
आलभिआ-आलंभिका नगरीविशेष, वीरस्य सप्तमवर्षारात्रस्थानम्। आव० २०९, २२१।
आलभिया-आलंभिका, नगरीविशेषः। भग० ५५०। नगरीविशेष.। भग० ६७५।
आलय-आवास। ओघ० १५६। आश्रय। जीवा० १७६। जं० प्र० १२१।
आलयविन्नाणं-आलयविज्ञानं-ज्ञानसंततिः। सूत्र० २६।
आलयगुणेहिं-आलयगुणै, वहिश्चेष्टाभिः प्रतिलेखनादिभिरुपशमगुणेन च। बृ० प्र० ६२ अ।
आलवंते-आलपन्, अत्यर्थं लपन्। अनु० १४२। आलपति, आङिति ईषल्लपति-वदति। उत्त० ५५।
आलविज्ज-ईषत्सकृद्वा लपनमालपनम्। दश० २१६।
आलवित्तए-आलपनम्, सकृत्सम्भाषणम्। आव० ८११। आलपितुं-सकृत्सम्भाषितुम्। उपा० १३।
आलस्स-आलस्यम्, अनुद्यमस्वरूपम्। उत्त० १५१। अनुत्साहात्मा। उत्त० ३४५।
आला-विद्युत्कुमारीमहत्तरिका। ठाणा० ३६१।
आलापति-आलगयति। आव० १००।
आलानम्-हस्तिवन्धनस्तम्भम्। नंदी० १५३।
आलाव-आलापः, सकृज्जल्पः। भग० २२३। आलाप आङ ईषदर्थत्वादीषल्लपनम्। ठाणा० ४०७।
आलावगो-आलापक। आव० २६०।
आलावणवंधे-आलापनवंधः-आलाप्यते-आलीनं क्रियत एभिरित्यालापनानि रज्ज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनाम्। भग० ३९५, ३९८।
आलावो-वहुमाणणेहभरितो सरभस णमोक्खमासमणाणंतितो गुरुआलावो भण्णति। नि० चू० प्र० २३७ आ।
आलि-वनस्पतिविशेषः। जीवा० २००।
आलिंग-आलिङ्ग, यो वादकेन मुरज आलिङ्ग्य वाद्यते। जं० प्र० १०१। मुरजो वाद्यविशेष। जं० प्र० ३१। मृन्मयो मुरज। जीवा० १०५।
आलिंगकसंठित-आलिङ्गसंस्थित, आवलिकावाह्यस्य चतुर्दशं सस्थानम्। जीवा० १०४।
आलिंगण-आलिङ्गनम्, ईषत्स्पर्शनम्, सम्प्राप्तकामस्य दशमो भेदः। दश० १९४। स्पृशनम्। नि० चू० प्र० २५६ आ।

आलिंगणवट्टि–आलिङ्गनवर्ती, शरीरप्रमाणमुपधानेन वर्त्तते यत्। जं० प्र० २८५। जीवा० २३२। सूर्य० २९३।

आलिंगणि – आलिङ्गिनी, अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके चतुर्थो भेद। आव० ६५२।

आलिंगपुक्खरे – आलिङ्गपुष्करम्, मुरजमुखम्। भग० १४५।

आलिंगणी–पुरुषप्रमाण पार्श्वमुपधानं। बृ० द्वि० २२० अ। जाणुकोप्परादिसु जा दिज्जति सा। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

आलिंगिता – पुरिसेणित्थीस्तनादिषु स्पृष्टा। नि० चू० प्र० ११३ अ।

आलिंगो–आलिङ्गय। जीवा० २६६। आलिङ्ग, मुरजो वाद्यविशेष। जीवा० १८९।

आलिंपइ–सकृत् लिंपइ। नि० चू० द्वि० ७६ आ।

आलि–वनस्पतिविशेष। जं० प्र० ४५। जीवा० २००। खल। विशे० ६११। औषधविशेष। प्रज्ञा० ३३

आलिखिज्जति–आलिख्यते। आव० ८५७।

आलिघरं –आलिगृहकम्, वनस्पतिविशेषस्तन्मयं गृहकम्। जीवा० २००।

आलिट्ठमणालिट्ठं–आलिष्टानाश्लिष्टम्, कृतिकर्मणि चतुर्भङ्गभिन्न सप्तविंशतितमो दोष। आव० ५४४।

आलित्त–अभिविधिना ज्वलित। भग० १२१। आदीप्त। अन्त० १७। आलित्र, नौवाहनोपकरण। आचा० ३७८।

आलिद्धा – आदिग्धा, शिलाया शिलापुत्रके वा लग्ना। भग० ७६६।

आलिन्दकम्–अलिंदग, कुण्डुल्कम्। अनु० १५१।

आलिसंदग–चपलका। जं० प्र० १२४। चवलकप्रकारा, चवलका। भग० २७४। धान्यविशेष। भग० ८०२।

आलिसिंदया–चवलया। ठाणा० ३४४।

आलिहइ–आलिखति, विन्यसति। जं० प्र० १९२।

आलिहमाण–आलिखन्, ईषत् सकृद्वाऽऽकर्षन्। भग० ३६५।

आलिहाविज्जा–ईषत्सकृद्वाऽऽलेखनम्। दश० १५२।

आलिहित्ता – आलिख्य, आकारकरणेन कृत्वा अन्तवर्णकादिभरणेन पूर्णानि कृत्वा। जं० प्र० १९२।

आलीढं–आलीढम्, आक्रान्तम्। आव० ७०४। दक्षिणपादमग्रतो भूतं कृत्वा वामपाद पश्चात्कृत्यापसारयति, अन्तर द्वयोरपि पादयो. पञ्च पादा, लोकप्रवाहे प्रथम स्थानम्। आव० ४६५। यत्र दक्षिण पादमग्रत कृत्वा वामपादं पृष्ठत सारयति, अन्तरं द्वयोरपि पादयो पञ्च पदानि तत्स्थानम्। उत्त० २०५। दक्षिणमूरुमग्रतो मुख कृत्वा वाममूरु पश्चात्मुखमपसारयति, अन्तरा च द्वयोरपि पादयो पञ्च पदा ततो वामहस्तेन धनुर्गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन प्रत्यञ्चामाकर्षति तत। व्य० प्र० ४६ आ। योधसस्थानं। आचा० ८९। योधस्थानम्। ठाणा० ३। वामूरुअ अग्गओ काउ दाहिणपिट्ठतो वामहत्थेण धणू घेत्तूणं दाहिणे एयं गच्छइ। नि० चू० तृ० ९० अ।

आलीणाणि–ईसिं लीणाणि। दश० चू० १२५।

आलीणे–आलीन। जीवा० २७३। गुरुसमाश्रित, संलीनो वा। भग० ८१।

आलीवग–आदीपिक, गृहादिप्रदीपनककारी। प्रश्न० ४६।

आलीवणं–व्याकुललोकाना मोषणार्थं ग्रामादिप्रदीपनकम्। विपा० ३९।

आलीवण। नि० चू० द्वि० १७० अ।

आलुंचनं–आलुञ्चनं, ग्रहणम्। आव० ५६२।

आलुंपे – आलुम्प, निर्लाञ्छनगलकर्त्तनचौर्यादिक्रियाकारी। आचा० १०२।

आलुए–आलुक –अनन्तकायभेद। भग० ३००। कन्दविशेष। उत्त० ६९१। आलुकम् – साधारणवनस्पतिकायिकभेद.। जीवा० २७। आलुका–कुण्डिका। अनुत्त० ५५।

आलुयं–आलुकम्, कन्दविशेष। अनुत्त० ६। त्रयोविंशतितमशतकाद्योद्देशक। भग० ८०४। आर्द्रकम्। भग० ८०४।

आलेखः–विचित्रम्। जीवा० १९९।

आलेवणं–आलेपनम्। आव० ६२३। आचा० ३२।

आलेहो–आलेख, चित्रम्। जं० प्र० ३२।

आलो–आल, अशक्यक्रियम्। आव० ९४।

आलोअ–अवलोक, निर्यूहकादिरूप। दश० १६६। वहि – प्रस्थानभाविनि शकुनानुकूल्यालोकेन। जं० प्र० २६३। गौरप्रकाशम्। प्रज्ञा० ५००।

आ(अव)लोअचलं–आ(अव)लोकचलम्, अवलोकनमालोकस्तरिमेश्चलं, दर्शनलालसम्। आव० ७८४।

आलोअणं–आलोकनम्, निरूपणम्। ओघ० ५२। अण्णेगिं आख्यानं। नि० चू० प्र० ३३४ अ। आलोक्यन्ते दिशोऽ

स्मिन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१। आलोचनम्-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १३७। प्रायच्छित्तभेद। ठाणा० २००।

आलोअणा-आलोचना, आभिमुख्येन गुरोरात्मदोषप्रकाशनम्। आव० ४६९।

आलोअभायणं-आलोकभाजनम्, मक्षिकाद्यपोहाय प्रकाशप्रधानं भाजनम्। दश० १८०।

आलोइज्ज-आलोचयेत्-प्रकाशयेत्। उत्त० ५४४।

आलोइज्जा-आलोकयेत्-पश्येत्-ब्रुयात्। आचा० ३२८। अवलोकयेत्। आचा० ३९६।

आलोइता-आलोकिता, ईषद्द्रष्टा। उत्त० ४२५। समन्ताद्द्रष्टा। उत्त० ४२५।

आलोइत्तए-आलोचयितुम्, गुरवेऽपराधान्निवेदयितुमिति। ठाणा० ५६।

आलोइयं-आलोकितं-प्रत्युपेक्षितं। आचा० ४२८।

आलोइयपडिक्कंते-आलोचितप्रतिक्रान्तः, आलोचितं गुरूणां यदतिचारजातं तत्प्रतिक्रान्तम्-अकरणविषयीकृत येनाथवाऽऽलोचितश्चासावालोचनादानात्प्रतिक्रान्तश्च मिथ्यादुष्कृतदानादालोचितप्रतिक्रान्त। भग० १२८।

आलोए-आलोक, दर्शनम्। भग० ३१८। दर्शनं, दृश्यमानता। जीवा० ३९१। आलोचयेत्-दत्तावधानो भवेत्। आचा० ३४२। चक्षुर्दर्शनपथे। ओघ० १८३।

आलोएइ-आलोचयति। आव० ७२५।

आलोएज्जा-आलोचनं-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १३७।

आलोएत्तो-आलोयणा। व्य० प्र० १०८ अ।

आलोको-आलोक्यत इति आलोक-स्थानदिगादिनिरूपणम्। ओघ० १८१। अतिरिक्तप्रदीपशिखादिदर्शनम्। उत्त० ६३१। सावकाशं मुक्त्वाऽभ्यन्तरे स्वपन्ति। ओघ० १०७। आलोक्यन्ते दिशोऽस्मिन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१।

आलोग-आलोकम्, सौरप्रकाशम्। ज० प्र० २२९। चोपलपादी। दश० चू० ७६। समो भूभागः। ओघ० १९३। आलोकनमालोको यावद्दृष्टिप्रसर। ओघ० २३।

आलोचनम्-प्रकटनं प्रकाशनमाख्यानं प्रादुष्करणम्। तत्त्वा० ९-२२।

आलोचयति-गणयति प्रेक्षते च। आव० ५३६।

आलोचयेत्। व्य० द्वि० ७१ अ।

आलोयं-आलोकम्। ओघ० ८४। दृष्टिपथम्। औप० ६९। स्थानदिक्प्रकाशादिसप्तधाऽऽलोकम्। बृ० तृ० १४० आ। प्रकाश। आव० ६४२। आलोकस्थानं-गवाक्षादिक। आचा० ३४१।

आलोयणं-आलोचनम्, यथागृहीतभक्तपाननिवेदनम्। प्रश्न० १११। आलोचना, प्रयोजनतो हस्तशताद्बहिर्गमनागमनादौ गुरोर्विकटना, मिथ्यादुष्कृत च। आव० ७६४। एकादशी गुर्वाशातना। आव० ७२५। गुरोः पुरतो वचसा प्रकटीकरणम्। व्य० प्र० १४ अ। ठाणा० २००। अलवण। व्य० द्वि० ३३५ अ। सकृत् अनेकश प्रलोकनम्। नि० चू० प्र० २२२ अ।

आलोयणा-आलोचना, आङिति-सकलदोषाभिव्याप्त्या लोचना-आत्मदोषाणां गुरुपुरत प्रकाशना। उत्त० ५७९। आलोचना। ओघ० २२५। योगसङ्ग्रहे प्रथमो योग। आव० ६६३। परस्स पागड करेइ। नि० चू० तृ० ८५ अ। व्य० प्र० १०७ आ।

आलोयणाणुलोमं-आलोचनानुलोम्यम्, पूर्वं लघवः आलोच्यन्ते पश्चाद् गुरव। आव० ७८१।

आलोयणारिहं-आलोचना-निवेदना तल्लक्षणा शुद्धिं यदर्हत्यतिचारजातं तदालोचनार्हम्। भग० ९२०।

आलोयभायणं-आलोकभाजनम्, प्रकाशमुखे भाजने, अथवा आलोके-प्रकाशे नान्धकारे पिपीलिकावालादीनामनुपलम्भात्, तथा भाजने-पात्रे, पात्र विना जलादिसम्पतितसत्त्वादर्शनादिति। प्रश्न० ११२।

आलोविअ-अलोपिक। दश० ४४।

आलोवेइ-आलोचयति। आव० ७१०।

आवंति-आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्य पञ्चममध्ययनम्। प्रश्न० १४५। आचाराङ्गस्य पञ्चममध्ययनम्। उत्त० ६१६। आचारांगे प्रथमश्रुतस्कधस्य पंचमाध्ययनम्। सम० ४४। आचा० १९६। यावन्त। आचा० १८५। आचारप्रकल्पस्य पञ्चमो भेद। आव० ६६०।

आवंती-लोकसारापराभिध, आचारांगपंचमाध्ययनम्। ठाणा० ४४४।

आवइ-आगच्छत्यापतति। उत्त० २८०।

आवईसु दढधम्मया-आपत्सु दृढधर्मता, योगसङ्ग्रहे तृतीयो योग। आव० ६६४।

आवकधाते–यावत्कथा–यावज्जीवम्। ठाणा० २३६।

आवकहियं–यावत्कथिकम्, प्रव्रज्याप्रतिपत्तिकालादारभ्या-प्राणोपरमात् तच्च भरतैरावतभाविमध्यद्वाविंशतितीर्थकरतीर्थान्तरगताना विदेहतीर्थान्तरगतानां च साधूनामवसेयम्। प्रज्ञा० ६३। सकृद्गृहीतं यावज्जीवमपि भावनीयम्। आव० ८३९। यावज्जीविक व्रतादिलक्षणम्। आव० ५६३। यावज्जीविक महाव्रतभक्तपरिज्ञादिरूपम्। ठाणा० ३८०। ये कल्पसमाप्त्यनन्तरमव्यवधानेन जिनकल्पं प्रतिपत्स्यन्ते ते यावत्कथिका। प्रज्ञा० ६८।

आवज्जणं–आवर्जनम्। ओघ० १६९।

आवज्जय–आवर्जक, आराधक। उत्त० ३६१।

आवज्जीकरणं–आवर्जीकरणम्, आवर्जित–अभिमुखीकृतः मोक्षगमनं प्रत्यभिमुखीकृतस्य करणं–क्रिया शुभयोगव्यापारः। प्रज्ञा० ६०४। आवर्जीकरणम्–अन्तर्मौहूर्त्तिकं उदीरणावलिकाया कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपम्। ठाणा० ४४२।

आवट्ट–आवर्त्त शङ्खसत्क। उत्त० ६०५। ससार.। आचा० ६२।

आवट्टजोणी–आवर्त्तयोनि, आवर्त्तोपलक्षिता योनि। उत्त० १८३।

आवट्टणं–आवर्त्तनम्, परिभ्रमणम्। सूर्य० २७६।

आवट्टती–आवर्त्यते, पीड्यते–दु खभागभवति। सूत्र० १९०।

आवट्टितो–आवृत्त। आव० ९५।

आवट्टो–आवर्त्त, आवर्त्तयति–प्राणिनं भ्रामयतीति। सूत्र० ८६। उत्त० १८३। जीवा० २४३।

आवड–आवर्त्त–मणीनां लक्षण। जीवा० १८९।

आवडइ–आपतति, भवति। ओघ० ९०।

आवडण–अभिघात, आपतनं वा। बृ० द्वि० ७७ आ। प्रस्फोटनम्। ओघ० १२२। आभिडण। ओघ० २०४। पक्खलण। नि० चू० प्र० ४९ अ। आपतनं–द्वाराद्दौ शिरसो घट्टनम्। बृ० प्र० २९५ अ।

आवडणपडणादी–आपतनपतनादय। ओघ० ९०।

आवडणा–उसुआदिसु पक्खलणा। नि० चू० तृ० २१ अ।

आवडिऊण–आपत्य। आव० १९६।

आवडिए–अवक्रोटितानि, अधस्तादामोटितानि। उत्त० ३६७।

आवडिओ–आपतितः। आव० ५७८। आस्फालित। आव० १९६। आपतितम्। उत्त० १७०। आव० ३२०।

आवडिया–आपतितौ, प्राप्तौ। उत्त० ५३०।

आवण–आपण., हट्ट। भग० २३८, १३६। प्रश्न० ८। वीथिः। दश० १७६। जं० प्र० १०७। अनु० १५९। आपण, पण्यस्थानम्। प्रश्न० १२७।

आवणवीहि–आपणवीथिः, हट्टमार्गे, रथ्याविशेष। जीवा० २४६।

आवणाइ–आयतनानि, आपतनानि वा उपभोगार्थमागमनानि। जं० प्र० १२१।

आवण्ण–आपन्नपरिहारिका। बृ० तृ० २० अ।

आवण्णपरिहारो–आपन्नपरिहारिक, जो मासियं वा जाव छम्मासिय वा पायच्छित्तं आवण्णो तेण सो सपच्छित्ती असुद्धो अ विसुद्धचरणेहिं साहूहिं परिहरिज्जति इह तेण अहिकारो। नि० चू० तृ० ८९ आ।

आवण्णसत्ता–आपन्नसत्त्वा, गर्भवती। उत्त० ५३।

आवती–प्रतिसेवनापंचमभेद.। भग० ९१९। आपत्–द्रव्यत प्रासुकद्रव्यं दुर्लभ क्षेत्रतोऽध्वप्रतिपन्नता कालतो दुर्भिक्षं भावतो ग्लानत्व। ठाणा० ४८४।

आवतीगंगा–गंगामहागंगासादीनगंगामृत्युगंगालोहितगंगात सप्तगुणा आवतीगंगा। भग० ६७४।

आवत्त–आवर्त्त, आवर्त्तनम्, प्रादक्षिण्येन परिभ्रमणम्। जं० प्र० १८७। षोडशसागरस्थितिक महाशुक्रविमानम्। सम० ३२। आवर्तक, पयसा भ्रम.। जं० प्र० १११। चिकुरसस्थानविशेष। जं० प्र० १८३। मणीना लक्षणानि। ज० प्र० ३१। महाविदेहे विजयनाम। ज० प्र० ३४६। अप्राप्तम्–अस्पृष्टम्, आवर्त्त आवृत्तिरावर्त्तन–परिभ्रमणम्। भग० १२८। आवर्त्तिका। जीवा० २४४।

आवत्तकूडे–आवर्तकूटम्, नलिनकूटे तृतीयकूटनाम। जं० प्र० ३४६।

आवत्तगा–एकखुरविशेषचतुष्पद। प्रज्ञा० ४५।

आवत्तणपेढिया–आवर्तनपीठिका, यन्त्रेन्द्रकीलिका। जीवा० २०४। यन्त्रेन्द्रकीलको निवेशित। जीवा० ३५९। यन्त्रेन्द्रकीलो भवति। जं० प्र० ४८। अप्रद्वारम्। नि० चू० तृ० १९अ। आवर्तनम्–मक्तीभवनम्। व्य० प्र० २०३ आ।

आवत्ता–आवर्ता, ग्रामविशेष । आव० २०६ । आवर्त्तवहुलजला नदी । वृ० तृ० १६२ आ । धातकीखडे तन्नाम महाविदेहगतो विजय । ठाणा० ८० ।

आवत्ते–आवर्त्त , विजयस्य नाम । जं० प्र० ३४६ । घोषव्यन्तरेन्द्रलोकपाल । ठाणा० १९८ ।

आवत्तो–आवर्त्त , एकखुरविशेष । प्रश्न० ७ । एकखुरश्चतुष्पद । जीवा० ३८ । नाट्यविशेष , भ्रमद्भ्रमरिकादानैर्नर्त्तनम् । जं० प्र० ४१४ । जीवा० २४६ ।

आवपनम्–लोहमयं शकटोपकरणम् । पिण्ड० २२ ।

आववहुले–अब्बहुलम् , जलवहुल, रत्नप्रभापृथ्व्यास्तृतीयकाण्ड' । जीवा० ८९ ।

आवयं–आवर्त्त , अहोकायमित्यादि सूत्रगर्भो गुरुचरणन्यस्तहस्तशिर स्थापनारूप , सूत्राभिधानगर्भ कायचेष्टाविशेष' । आव० ५४२ ।

आवयइ–अतिपतति । आचा० २६५ ।

आवरणं–आवरणम् , स्फुरकादि । प्रश्न० १३ । आव्रियते आकाशमनेनेति, भवनप्रासादनगरादि तल्लक्षणशास्त्रम् । ठाणा० ४५१ । सन्नाह । प्रश्न० ४९ । कवचादि । उत्त० १४३ । आव० ३४६ । कपाट । वृ० द्वि० १११ अ । कवच । भग० ९४ । आवरणे–प्रच्छादनपटे । जं० प्र० २३६ । फलकादि । आचा० ६० । स्फुरककण्टकादि । भग० ३१८ । आङो मर्यादेपदर्थवचनत्वात् ईषन्मर्यादया वाऽऽवृणवन्तीत्यावरणा , ततश्च सर्वविरतिनिषेधार्थ एवायं वर्तते न देशविरतिनिषेधे खल्वावरणशब्द । आव० ७८ । खेटकं सन्नाहं वा । जं० प्र० ३५९ । सन्नाह । ठाणा० ४५० ।

आवरणप्रविभक्तिः–अष्टमनाट्यभेद । जं० प्र० ४१६ ।

आवरिसणं–पाणिएण उप्फोसण । नि० चू० प्र० १७२ आ ।

आवरेत्ता–आवृत्य–अवष्टभ्य । भग० ५७६ ।

आवर्जनम्–आराधना । उत्त० ५९१ । आवर्षण गन्धोदकादिना । अनु० २६ ।

आवर्तना–आउट्टणा, आवर्जन, निवेदनम् । वृ० प्र० ४७ आ ।

आवलगनादिकाः–क्रियाविशेषा' । आचा० १२४ ।

आवलणं–आवलनम् , मोटन, अथवा गलकस्य वलादावलनं मारण चेति । प्रश्न० २२ ।

आवलियपविट्ठो – आवलिकापविष्ट , श्रेणिव्यवस्थित । जीवा० १०५ ।

आवलिया – आवलिका– असख्यातसमयमाना । ठाणा० ८५ । आवलिका, श्रेणि. । जीवा० १०५ । असख्येयसमयसघातोपलक्षित काल' । आव० ३१ । परंपरा । आव० ८५८ । असङ्ख्यातसमयात्मिका । भग० २११ । वश , प्रवाह । जं० प्र० १६६ । तत्र या विच्छिन्ना एकाते भवति मण्डली सा आवलिका । व्य० द्वि० २१ अ । असङ्ख्येयसमयसमुदायिका । सूर्य० २९२ । वंश , प्रवाह । जं० प्र० २५८ ।

आवलियाठावगो–आवलिकास्थापक आचार्यपारम्पर्यम् । आव० ३०७ ।

आवलियापविट्ठ–आवलिकाप्रविष्टम् , यत्पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु श्रेण्या व्यवस्थितम् । जीवा० ३९७ ।

आवलियावाहिरं – आवलिकावाह्यम् , यत्पुनरावलिकाऽऽविष्टानां प्राङ्गणप्रदेशे कुसुमप्रकर इव यतस्ततो विप्रकीर्णम् । जीवा० ३९७ ।

आवली–हार । वृ० प्र० ४८ अ । पुद्गलाना दीर्घरूपा श्रेणि । सूर्य० १३० । आवली, पङ्क्ति । ओघ० ८२ ।

आवल्लिक–आवल्लिक । विशे० १३५५ ।

आवल्लो–वलीवर्द । आव० ६६५ । उत्त० १९२ ।

आवसंत–आवसन् , विवसन् । आचा० ११ । आश्रिति–गुरुदर्शितमर्यादया वासना । उत्त० ८० । ठाणा० ९ । मया गुरुकुले आमृशन् । सम० २ । आवसन्–सेवमान । आचा० २१३ ।

आवसह – आवसथ , आश्रय । उत्त० ६२६ । दश० २४५ । शेषभवनप्रकार । उत्त० ३८५ । आवसथ , परिव्राजकस्थानम् । प्रश्न० १२६ । औप० ६१ । परिव्राजकाश्रय । प्रश्न० ८ । उटजाकार गृहम् । सूत्र० ३१५ ।

आवसहिय–आवसथिक , तीर्थिकविशेष । सूत्र० ४२२ ।

आवसिया–आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्ययोगैर्निष्पन्ना । आव० २५९ ।

आवस्सए–आवश्यकम् , अवश्यकर्त्तव्यं सयमव्यापारनिष्पन्नम् । आव० ११९ । कायिकादिव्युत्सर्गम् । ओघ० १४७ ।

आवस्सग–आवश्यकम् , समन्तादात्मवश्यकारकम् । अनु० ११ । अवश्य कर्तव्यं आवश्यक–कायिकाव्युत्सर्गरूपम् । ओघ० १४९ । कायिकोच्चारादि । ओघ० ८७ । प्रतिक्रमणम् ।

ओघ० ९३, ५८। सामायिकादि षडध्ययनकलाप । अनु० ७। आवश्यकम्, श्रमणादिभिरवश्यं क्रियत इति, ज्ञानादिगुणा मोक्षो वा आ–समन्ताद् वश्य क्रियतेऽनेन इति, आ-समन्ताद्वश्या इन्द्रियकषायादिभावशत्रवो येषा ते तथा, तैरेव क्रियते यत् तत् । अनु० ३१। आवासक वा समग्रगुणग्रामावासक वा। अनु० ३१। दोषत्यागलक्षणमवनतादिकम्। आव० ५४५। गुणानां आ–समन्ताद्वश्यमात्मान करोति। अनु० १०। श्रमणादिभिरहोरात्रमध्येऽवश्यंकरणात्। विशे० ४१५। नियमत करणीयम्। आव० ५९४। अवश्यं कर्त्तव्यम्, सामायिकादिरूपम्, आ–समन्ताज्ज्ञानादिगुणै शून्यं जीवं वासयति, तैर्युक्तं करोतीत्यावासकं–सामायिकादिरूपम्। विशे० २। भद्रम्। आव० ४२६। मूलगुणोत्तरगुणानुष्ठानलक्षणः। आव० २६७। आवर्त्तादिकम्। आव० ५११। कायिकाव्युत्सर्गलक्षणम्। ओघ० १५२। सामायिकादिषड्विधम् । ठाणा० ५१ । अवश्यं कर्तव्यमावश्यकं, अथवा गुणानामावश्यमात्मानं करोतीत्यावश्यकं, यथा अन्त करोतीत्यन्तक, अथवा 'वस निवासे' इति गुणशून्यमात्मानमावासयति गुणैरित्यावासकम्। आव० ५१।

आवस्सय – अपाश्रय.–आधार । विशे० ४१५। सञ्ज्ञा कायिकीलक्षणम्। वृ० द्वि० २६१ अ।

आवस्सयाइं – आवश्यकानि, शरीरचिंतादेवातर्चनादीनि। व्य० प्र० १६९ आ।

आवस्सिआ–आवश्यकी, क्वचिद्बहिर्गमनकार्ये समुत्पन्नेऽवश्यंगन्तव्यमितिभणनम्। वृ० प्र० २२२ अ । ज्ञानाद्यालम्बनेनोपाश्रयाद् बहिरवश्यंगमने समुपस्थितेऽवश्यं–कर्त्तव्यमिदमतो गच्छाम्यहमित्येव गुरुं प्रति निवेदना । अनु० १०३ ।

आवस्सिता–चतुर्थी सामाचारी। ठाणा० ४९९।

आवस्सिया–आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्यैश्चरणकरणयोगैर्निर्वृत्ता । आव० ५४७। वृ० द्वि० २२४ अ।

आवहो–दारकपक्षिणामावह । व्य० द्वि० ३४२ आ।

आवाए–आपात, अन्यतोऽन्यत आगमनात्मक॰। उत्त० ८६ ।

आवाओ–आपाक. । विशे० ८७३। आपाकोतीर्गा–मृतना। विशे० ६३०।

आवागसीसाओ–आपाकशिरस । नंदी० १७७।

आवागो–आपाकः, भ्राष्ट्रं । आव० १०१।

आवाडा–आपाता इति नाम्ना किराता । जं० प्र० २३२।

आवातभद्दते – प्रथममीलके दर्शनालापादिना भद्रकारी। ठाणा० १९७।

आवाय–आपातः, तत्प्रथमतया ससर्ग । भग० ३२६। आभिमुख्येन समवाय । आव० ३२६। अभ्यागम.। ओघ० ११९।

आवारि–लघ्वापणम्, आस्पदम्। आव० ६७५।

आवावकहा–आवापकथा, ईयद्द्रव्या शाकघृतादिश्चात्रोपयुक्ता इत्यादि प्रशसनं द्वेषणं वा, भक्तकथाया. प्रथमभेद॰। आव० ५८१। शाकघृतादीन्येतावन्ति तस्या रसवत्यामुपयुज्यन्त इत्येवंरूपा कथा आवापकथा। ठाणा० २०९।

आवास – आवास॰, देववासस्थानम्। जं० प्र० ३९७। आवश्यकम्–प्रतिक्रमणम्। आव० ७८४। ओघ० २००। प्रज्ञा० ६०६। निवास । जीवा० १८०।

आवासग–आवासकम्, समन्ताद्वासयति गुणैरिति। अनु० ११। गुणशून्यमात्मानमावासयति गुणैरिति, गुणसान्निध्यमात्मन करोतीति भावार्थ । आव० ५१। प्राभातिकवैकालिकप्रतिक्रमणलक्षणे। व्य० द्वि० १८२ अ।

आवासिय–आवासित॰, स्थित॰। दश० १०७।

आवासेंति–आवासयन्ति, वसन्ति। आव० ६५४।

आवाहं–सरीरवज्जा पीडा । नि० चू० प्र० ३३५ अ।

आवाह–आवाह, विवाहात्पूर्वं ताम्बूलदानोत्सव.। जं० प्र० १२३। जीवा० २८१।

आवाहणं–आवाहनम्, गमनम्। प्रश्न० २०।

आवाहिओ–आहूत । आव० ३६९, ३९३।

आवाहो–आवाह, अभिनवपरिणतस्य वधूवरस्यानयनम्। प्रश्न० १३९। सुहं दिवस। नि० चू० द्वि० ९२ आ। वध्वा वरगृहानयनम्। वृ० तृ० ४३ आ। आहूयन्ते स्वजनास्ताम्बूलदानाय यत्र स । जीवा० २८१।

आविंध–परिधेहि। आव० ९९।

आवि–आवि, जनसमक्षं प्रकाशदेश इतियावत्। उत्त० ५४।

आविइ–अनुसमयम्–प्रतिक्षणम्। भग० ६२५।

आविइत्ता–अवनस्य दद्यात्। व्य० द्वि०

आविप–आपिव। उत्त० ३३९।

आविद्धं-परिहितम् । ज० प्र० १९०, २७८ । आलगितम् । प्रज्ञा० १०१ । व्याप्तम् । उत्त० ५४८ । समन्तात्ताडित । उत्त० ४९५ । शिरस्यारोपणेन आविद्ध । भग० १९३ ।

आविद्धामो-परिदध्म । आव० ६५ ।

आविर्भावः-प्रकाश, प्रकटत्वम् । विशे० १०६२ ।

आविलं-आविलम्, सकालुष्यमाकुल वा । प्रश्न० ५३ । अविमलमस्वच्छ प्रकृत्या । जीवा० ३०३ ।

आविष्टलिंगं । नंदी १ ।

आविसामि-आविशामि, निषेवे । विशे० १२४७ ।

आवी-गंगागामी नदीविशेष । ठाणा० ४७७ ।

आवीईमरणे-आ-समन्ताद्वीचय इव वीचय -आयुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिंस्तदावीचि, अथवा वीचिः-विच्छेदस्तदभावादवीचि, दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्तदेवंभूतं मरणमावीचिमरणं-प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणम् । सम० ३३ ।

आवीचिमरणं-आवीचिमरण, सप्तदशमरणभेदे प्रथम । उत्त० २३० ।

आवीचियमरणं - आ-समन्ताद्वीचय -प्रतिसमयमनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिक, अथवाऽविद्यमाना वीचि - विच्छेदो यत्र तदवीचिक अवीचिकमेवावीचिक तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणम् । भग० ६२४ ।

आवीलए-आङ् ईषदर्थे, ईषत्पीडयेद्-अविकृष्टेन तपसा शरीरकमापीडयेत्, एतच्च प्रथमप्रव्रज्याऽवसरे । आचा० १९२ ।

आवीलाविज्जा-आपीडनम्, सकृदीषद्वा पीडनम् । दश० १५३ ।

आवेउं-आपातुम्, भोक्तुम् । दश० ९६ ।

आवेढिओ-एगदुतिदिसिट्ठितेसु, अहवा एगपंतीए समता ठिएसु, आङ् मर्यादयाऽऽवेष्टित । नि० चू० तृ० ४६ आ ।

आवेढियं-आवेष्टितम्, सकृदावेष्टितम् । ठाणा० ५०२ ।

आवेढियपरिवेढिए - आवेष्टितपरिवेष्टित ; गाढतरं सवेष्टित । प्रज्ञा० ३०६ ।

आवेयणं - आवेदयति, निवेदयति कालमित्यर्थ । ओघ० २०४ ।

आवेलिज्ज-आपीडयेत्, गाढमवगाहयेत् । उत्त० ४७५ ।

आवेसणं - लोगसमवायट्ठाण । नि० चू० द्वि० ६९ आ । आ-समन्ताद्विशन्ति यत्र नदावेशनम् -शून्यगृहम् । आचा० ३०७ ।

आशातनम्-आ-समन्तात् शातयति मुक्तिमार्गाद् भ्रशयति । अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम् । विशे० २८३ ।

आशाम्बराः-दिगम्बरा । प्रज्ञा० २०।

आश्यानः । ओघ० ३२ ।

आश्रयं गच्छामि-भक्ति करोमीत्यर्थ । आव० ५७१ ।

आश्रित्य-प्रतीत्य । जीवा० ५६ । उत्त० ६०२ ।

आसं-अश्वम्, मन । प्रज्ञा० ६०० । आशा-भोगाकाक्षा । आचा० १२७ ।

आसंकलनम्-चयनम् । ठाणा० १७९ ।

आसंतर - अश्वतरः, वेगसर, अजात्या, घोटकः । दश० १९४ ।

आसंदओ-आसन्दकः । आव० ५५८ ।

आसंदग-कट्ठमओ । बृ० द्वि० २११अ । कट्ठमओ अज्झूसिरो । नि० चू० प्र० २०८ अ । पल्यङ्क । आव० ३५८ ।

आसंदयं-आस्यन्दकम् । आव० ६९३ ।

आसंदी - मञ्चिका । पिण्ड० १०९ । उपवेशनयोग्या मञ्चिका । सूत्र० ११८ । दश० २०४ । उपवेशनार्हमासनम् । दश० ११७ । आसनविशेष । सूत्र० १८२ । मञ्चक । सूत्र० २७८ ।

आसंसइयं-असशयित, नि सशयं मन सश्रित वा । सूत्र० ३१० ।

आसंसपओगो-निदानकरण । नि० चू० प्र० ३५ अ ।

आसंसा-आशसा-अप्राप्तप्रापणाभिलाष । आचा० ११५ ।

आस-अश्व, वाल्हीकादिदेशोत्पन्न, जात्य । दश० १९४ । क्षेप । आव० ३६४ ।

आसइ-आस्ते । आव० ३९६ ।

आसइत्त-आसितुम्, उपवेष्टुम् । दश० २०४ ।

आसए - आश्रयतीति आश्रय -धूमवलकादि । अनु० २१४ ।

आसकण्णो-अश्वकर्ण, सप्तदशान्तरद्वीप । जीवा० १४४ ।

आसकन्नदीवे-अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

आसकन्ना-अश्वकर्ण, सप्तदशान्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० ।

आसकरणं-आससिक्खावर्ण । नि० चू० द्वि० ७१ अ ।

आसकिसोरो-अश्वकिशोर । आव० ३७०, २६१ ।

आसक्खंधसंठिते–अश्वस्कन्धसंस्थितम्, अश्विनीनक्षत्रसंस्थान। सूर्य० १३०।

आसखंधसंठिओ–अश्वस्कन्धसस्थित, उभयोरपि पार्श्वयोः पञ्चनवतियोजनसहस्रपर्यन्तेऽश्वस्कन्धस्येवोन्नततया षोडशयोजनसहस्रप्रमाणोच्चैस्त्वयो शिखायाभावात्। जीवा० ३२५।

आसगं–आस्यकम्, मुखम्। जीवा० ११९। आस्यके, पिठरादिमुखे। ठाणा० १४८।

आसग्गीव–अश्वग्रीव, त्रिपृष्ठवासुदेवशत्रु। आव० १५९। महामाण्डलिकराजा आव० १७४।

आसचडगर–अश्वसमूह। आव० ३७०।

आसज्ज–आसाद्य–अगीकृत्य। आचा० १५९।

आसण–आसनं, सिंहासनादि। प्रश्न० १६१। आधारलक्षणानि धर्मास्तिकायादीना लोकाकाशादीनि, स्वस्वरूपाणि वा। आव० ५९९। पीठफलकादिकम्। आव० ६५४। स्थानम्। उत्त० १०९। पीठकादि। आव० ७९५। दश० २८१। अपवादगृहीतं पीठकादि। दश० २३१। दश० २२८। वसत्यादि। सूत्र० ६६। कट्ठपीठगादि। दश० चू० १२६। विष्टरम्। प्रश्न० १३८। प्रश्न० ८। सिंहासनादि। जीवा० ४०६। आसन्दकादिविष्टरं, आस्यते–स्थीयतेऽस्मिन्निति वाऽऽसनं–शय्या। आचा० १३४। उपवेशनम्। उत्त० ६०९। अवस्थानम्। उत्त० ६२६। आसनं गोदोहिकोत्कुटुकासनवीरासनादिक। आचा० ३१२। पादपीठपुञ्छनादि। उत्त० ४२३। सिंहासनादि। उत्त० २६२। पीठकादि। सम० ३८। शक्रादीना सिंहासनम्। ठाणा० ११७। आसन्दकादि। दश० २१८। आचा० ६०। भग० २३८। आसग–आसनप्रदान, गुर्वादीना समागताना पीठकाद्युपनयनम्। व्य० प्र० २३५ आ।

आसणअणुप्पदाणं–आसनानुप्रदानम्, स्थानात्स्थानं सञ्चारणम्। दश० ३०।

आसणअभिग्गहो–आसनाभिग्रह, तिष्ठत एवासनानयनपूर्वकमुपविशतोऽत्रेतिभणनमिति। सम० ९५। ठाणा० ४०८।

आसणगाणि पंताणि–पाषाणकरशर्करालोष्टाद्युपचितानि काष्ठानि च दुर्घटितानि। आचा० ३१०।

आसणत्थ–आसनस्थ, निषद्यागतम्। आव० ५४१।

आसणदाणं – आसनदानम्, पीठकाद्युपनयनम्। दश० २४१। पीठादिदानम्। उत्त० ६०९।

आसणमणुप्पयाणं–आसनानुप्रदानम्, आसनस्य स्थानान्तरसञ्चारणम्। ठाणा० ४०८। सम० ९५।

आसणाणुप्पयाणं – आसनानुप्रदान, गौरव्यमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसचारणम्। भग० ६३७।

आसणाभिग्गह–आसनाभिग्रह.–तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेतिभणनम्। भग० ६३७। यत्र यत्रोपवेष्टुमिच्छति तत्र तत्रासननयनम्। औप० ४२। तिष्ठत एवादरेणासनानयनपूर्वकमुपविशताऽत्रेतिभणनम्। दश० ३०।

आसणेय–आश्वासन। ज० प्र० ५३४।

आसतरगा–वेसरा। नि० चू० प्र० १४४ आ।

आसत्त–आसक्त, भूमौ लग्नः। जं० प्र० ७६। आ–अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्त., भूमौ लग्न। प्रज्ञा० ८६। जीवा० १६०। जीवा० २२७। भूमौ सम्बद्ध। औप० ५।

आसत्तमल्लदामा–आसक्तमाल्यदामा। आव० १८४।

आसत्ती–आसक्ति, धनादावासङ्ग, परिग्रहस्यैकोनत्रिंशत्तम नाम। प्रश्न० ९३।

आसत्थ–पीप्पलक। भग० ८०३। असुरकुमारचैत्यवृक्ष। ठाणा० ४८७। मनागाश्वासित। ओघ० ५२। अनंतजिनचैत्यवृक्षविशेषः। सम० १५२। आश्वस्त। आव० ३९०।

आसन्दकम्–आसनम्। दश० २१८। आचा० १३४।

आसन्नं–समुखीनम्। निर० ८।

आसपुराओ–धातकीखडे विदेहविशेषस्य राजधानी। ठाणा० ८०।

आसम–आश्रम, तापसादिस्थानम्। भग० ३६। अनु० १४२। सूत्र० ३०९। तीर्थस्थानम्। आचा० ३२९। ठाणा० २९४। ठाणा० ८६। तापसावसथोपलक्षित आश्रय। आचा० २८५। प्रथमतस्तापसादिभिरावासितः पश्चादपरोऽपि लोक तत्र गत्वा वसति। वृ० प्र० १८१ आ। तापसावसथादि, आ–समन्तात् श्राम्यन्ति–तपः कुर्वन्त्यस्मिन्निति। उत्त० ६०५। व्रतग्रहणादिरूप। दश० २७९। आश्रम, तापसादिनिवास। प्रश्न० ५२। तापसावसथोपलक्षित आश्रय। प्रज्ञा० ४८। जीवा० ४०। जीवा० २७९। तापसाद्यावास। औप० ७४।

आसमडे–अश्वमृतः, मृताश्वदेह। जीवा० १०६।

आसमपय–आश्रमपदम्, पार्श्वनाथदीक्षास्थानम्। आव० १३७। आ–समन्तात् श्राम्यन्ति–तप कुर्वन्त्यस्मिन्निला·

श्रम –तापसावसथादिस्तदुपलक्षितं पदं–स्थानम् ।' उत्त० ६०५ ।

आसममारो–मारीविशेषः । भग० १९७ ।

आसमरूवं–आश्रमरूपम् । भग० १९३ ।

आसमित्त – अश्वमित्रः, कौण्डिन्यशिष्यः । विशे० ९६० । आव० ३१६ । उत्त० १६३ । चतुर्थनिह्नवनाम । ठाणा० ४१० । यस्मात्सामुच्छेदा उत्पन्ना । आव० ३११ ।

आसमुहदीवे–अतरद्वीपभेद । ठाणा० २२६ ।

आसमुहा–अश्वमुखनामा त्रयोदशान्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० । जीवा० १४४ ।

आसय–आशय', निदानम् । आव० ६१० ।

आसयइ – आस्वादते–अभिलषति, आश्रयति वा । सम० ५५ ।

आसरयणे–अश्वरत्नम् । ठाणा० ३९८ ।

आसरह–अश्ववहनीयो रथ । भग० ३२२ । अश्वरथ –नियुक्तोभयपार्श्वतुरङ्गमो रथ इत्यर्थ । जं० प्र० १९८ ।

आसल – आसलं, आस्वाद्यम् । जीवा० ३३१ । जीवा० ३७० । आस्वादनीय. । जीवा० ३५१ ।

आसव–आसव', मद्यम् । उत्त० ६१९ । पत्रादिवासकद्रव्यभेदादनेकप्रकार. । जीवा० २६५ । पुष्पप्रसवमद्यम् । उत्त० ६५४ । आश्रवाः–उपादानहेतवो हिंसादयः । उत्त० ५९२ । चन्द्रहासादिकम् । जीवा० १९८ । चन्द्रहासादिपरमासवम् । जं० प्र० ४२ । नि० चू० प्र० ३५ अ । आश्रव –सूक्ष्मरन्ध्रम् । भग० ८३ । आश्रवन्ति–प्रविशन्ति कर्म्माण्यात्मनीत्याश्रव.–कर्म्मबन्धहेतुरितिभाव , स चेन्द्रियकषायाव्रतक्रियायोगरूप. । ठाणा० १८ । आश्रवं । प्रज्ञा० ५६ ।

आसवा – आसवाः–कर्मबन्धस्थानानि । आचा० १८१ । पापोपादानस्थानानि । आचा० ४१३ । बन्धका । आचा० १८२ । पत्रादिविशेषेण व्यतिरिक्त आसव । प्रज्ञा० ३६४ । आश्रव –आ–समन्तात् शृणोति–गुरुवचनमाकर्णयतीति । उत्त० ४९ । कर्मबन्धहेतुर्मिथ्यात्वादि । आव० ५९८ । आश्रव.–इन्द्रियजयादिरूप' परमार्थपेशलः कायवाङ्मनोव्यापार । दश० २७९ । जलप्रवेशस्थानम् । व्य० प्र० १६७ आ । पापोपादानहेतुरारम्भादि । जीवा० १२८ । शुभाशुभकर्मादानहेतु । ठाणा० ४४६ ।

आसवओ–आश्रावक., बन्धक. । विशे० १०९३ ।

आसवदारं–आश्रवद्वारम् , कर्मबन्धद्वारम् । आव० ८५१ । आश्रवण–जीवतडागे कर्म्मजलस्य सगलनमाश्रव'–कर्म्मनिबन्धनमित्यर्थ., तस्य द्वाराणीव द्वाराणि–उपाया आश्रवद्वाराणीति । ठाणा० ३१६ ।

आसवपीतो–पीतासवः । उत्त० २६३ ।

आसववुच्छेओ – आश्रवव्यवच्छेद.– कर्मबन्धद्वारस्थगनेन सवरणेनेत्यर्थ' । आव० ८५१ ।

आसवार–अश्ववार., अश्वारूढपुरुषः । भग० ४८१ ।

आससणाय वसणं–आशसनाय–विनाशाय व्यसनम्, तृतीयाधर्मद्वारस्य षड्विंशतितमं नाम । प्रश्न० ४३ ।

आससप्पओगे–आशंसा–इच्छा तस्याः प्रयोगो–व्यापारण करणं आशंसैव वा प्रयोगो–व्यापारः आशंसाप्रयोग । ठाणा० ५१५ ।

आससा–आशंसा । विशे० १००८ । आव० ३२२ । अप्राप्तप्रार्थनम् । ठाणा० १४५ ।

आससाए–आशंसया, यद्यत्यन्तप्रवर्षणं भावि तदा स्थलेषु फलावाप्तिरथान्यथा तदा निम्नेष्वित्येवमभिलाषात्मिकया । उत्त० ३६१ ।

आससेण–अश्वसेन , पार्श्वजिनपिता । सम० १५२ । पचमचक्रिपिता । सम० १५१ ।

आसा–अश्वा । आव० २६१ । आशा–इच्छाविशेष. । प्रश्न० ६४ । औप० ४७ ।

आसाइज्जा–आशातयेत्–हीलयेत्, बाधयेत् । आचा० २५७ ।

आसाएज्जा–आस्वादयेत्–परिभुञ्जीत । आचा० ३९८ ।

आसाएमाणे–आस्वादयन्, ईषत्स्वादयन् । भग० १६३ । आसादयेत्–सस्पृशेत् । आचा० ३८० ।

आसाढ–आषाढ , निह्नवनाम । विशे० ९३४ । यस्माद्व्यक्ता उत्पन्ना । आव० ३११ । तृतीयो निह्नव । ठाणा० ४१० ।

आसाढग–तृणभेद । भग० ८०२ ।

आसाढबहुलं–आषाढबहुल, आषाढकृष्णपक्षम् । आव०

आसाढभूई – आषाढभूति –देशभाषानेपथ्यादिविपर्ययकरणे दृष्टांत । सूत्र० ३२९ । दर्शनपरीषहभग्न' । (मर०) । व्य० प्र० १९६ अ ।

आसाढायरिया-चेल्लयसुरेण थिरीकया आयरिया । व्य० प्र० १९ अ ।

आसायए-आशातयति, कदर्थयति । दश० २४४ ।

आसायण-आशातकपाराञ्चिकः । ठाणा० १६३ ।

आसायणसील-आशातनाशील॰, शातयति-विनाशयतीत्याशातना तस्या शीलं-तत्करणस्वभावात्मकमस्येत्याशातनाशील । उत्त० ५७९ ।

आसायणा-आशातना, लघुतापादनरूपा अथवा स्वसम्यग्दर्शनाद्यभावापह्नासरूपा । दश० २४४ । ज्ञानाद्यायस्य शातना । आव० ५४७ । आशातना । प्रश्न० १४६ । आ-सामस्त्येन शात्यन्ते-अपध्वस्यन्ते यकाभिस्ता आशातना-रत्नाधिकविषयाविनयरूपा पुरतोगमनादिका॰ । ठाणा० ५११ । आय -सम्यग्दर्शनाद्यवाप्तिलक्षणस्तस्य शातनाः-खण्डनं निरुक्तादाशातना॰ । सम० ५९ ।

आसायणिज्जं - आस्वादनीयम्, सामान्येन स्वादनीयम् । जीवा० २७८ ।

आसालए-आशालक॰, अवष्टम्भसमन्वित आसनविशेष । दश० २०४ ।

आसालओ-ससावगम (सावष्टंभं) आसण । दश० चू० ९९ ।

आसालिए-आसालिक., उर-परिसर्पभेद. । सम० १३५ ।

आसालिय-आसालिक॰, उर परिसर्पविशेष । प्रश्न० ८ । जीवा० ३९ । उर परिसर्पभेदविशेष. । प्रज्ञा० ४५ ।

आसास-आश्वास॰, आश्वसन्त्यस्मिन्नित्याश्वास । आचा० ५ । आश्वासयति अत्यन्तमाकुलितानपि जनान् स्वस्थीकरोतीति । उत्त० २१२ ।

आसासग-अश्वस्यास्यं-मुखं, तत्र गत॰ फेन सोऽश्वास्यगत. । प्रज्ञा० ९५ । आसासक -बीयकाभिधानो वृक्ष । राज० ९ ।

आसासणय-आशसनम्, मम पुत्रस्य शिष्यस्य वा इदमिदं च भूयादित्यादिरूपा आशी । भग० ५७३ ।

आसासदीव - आश्वासद्वीपः, आकुलितजनस्वस्थकारको द्वीपविशेष । उत्त० २१२ । आश्वासनमाश्वास, आश्वासाय द्वीप आश्वासद्वीप॰ । आचा० २४७ । आश्वास्यतेऽस्मिन्नित्याश्वास, आश्वासश्चासौ द्वीपश्चाश्वासद्वीप॰ । आव० २४७ ।

आसासय-आशासक॰, वृक्षविशेष । औप० ११ ।

आसासा-आश्वासा -विश्रामा॰ । ठाणा० २३६ ।

आसासि-आश्वासय, स्वस्थीकुरु । उत्त० १२७ ।

आसासिआ-आश्वासिता । आव० २२२ ।

आसाहीणएहिं-दुद्दतेहिं । दश० चू० ११६ ।

आसिआवणं-स्तैन्यम् । बृ० तृ० ८६ आ ।

आसिज्ज-तिष्ठ । (मर०) ।

आसित्ता-आस्वाद्य-भुक्त्वा । आचा० ३३० ।

आसित्तो-आसिक्त, सबीज. । बृ० तृ० ९७ आ । जस्स पुण अवच्चं उप्पज्जति सो । नि० चू० द्वि० ३१ अ ।

आसियं-आसिक्त, आसेचनं, ईषदुदकच्छटक. । प्रश्न० १२७ । उदकच्छटम् । जीवा० २४६ । निर्द्धाटनं, निष्काशनम् । बृ० द्वि० ६१ आ ।

आसियावणं-हरणं । नि० चू० प्र० २६७ अ । अपहरणम् । बृ० प्र० ३०९ आ । हरति । नि० चू० द्वि० १३ आ ।

आसिले - आसिल॰, महर्षिविशेष. । सूत्र० ९५ ।

आसिवावितो-प्रव्राजित. । नि० चू० प्र० २८६ अ ।

आसी-आश्यो-दंष्ट्रा॰ । प्रज्ञा० ४७ । विशे० ३८० । आव० ४८ । आसी -दंष्ट्रा । आव० ५६६ ।

आसीणे-आसीन, आश्रित । आचा० २९३ ।

आसीयावणा-निष्कषायितुमासादनम् । व्य० द्वि० ३६१ अ ।

आसीविस-आशीविष. शङ्खविजये वृक्षस्कार । जं० प्र० ३५७ । नाग । प्रश्न० १०७ । आश्यो-दंष्ट्रास्तासु विषं येषा ते । ठाणा० २६५ । जीवा० ३९ । सीतोदादक्षिणतः वक्षस्कार । ठाणा० ३२६ । उर परिसर्पविशेष॰ । जीवा० ३९ । विशे० ३८० । उत्त० ३१८ । आशीविष -भुजङ्ग. । आव० ५६७ ।

आसु-आशु, शीघ्रम् । उत्त० ६३८ । जं० प्र० २०२ ।

आसुकारिणः-दुष्टा॰ । नि० चू० प्र० ७५ आ ।

आसुकोहो-तक्खणमेव कोहो । दश० चू० १२५ ।

आसुक्कारो-आशु-शीघ्र सजीवस्य निर्जीवीकरणम्, अहिविषाद्यशूचिकादि । बृ० तृ० १४७ अ । शीघ्रकार॰, अहिविषविशूचिकादिक. । आव० ६२९ ।

आसुपन्ने-आशुप्रज्ञ., शीघ्रमुचितकर्त्तव्येषु यतितव्यमिति प्रज्ञा-बुद्धिरस्येति । उत्त० २१७ । सततोपयुक्त । आचा० २६८ ।

आसुर - असुरभावनाजनित आसुर., भवनपतिविशेषस्यायमासुर. । ठाणा० २७४ । कोहो । दश० चू० १२२ ।

आसुरत्तं–आसुरत्वम्, क्रोधभावम्। दश० २३१।

आसुरत्तभावणा–आसुरत्वभावना। उत्त० ७०७।

आसुरत्तो–क्रुद्ध। आव० ३८९।

आसुरिनामा–कपिलशिष्य'। आव० १७१।

आसुरिपत्तं। नि० चू० द्वि० ६० अ।

आसुरियं–असुरभावम्। प्रश्न० १२१। अविद्यमानसुर्याम्। उत्त० २७६। असुराणामियमासुरीया। उत्त० २७६।

आसुरी – असुरा–भवनपतिदेवविशेषास्तेषामिय आसुरी। बृ० प्र० २१२ आ।

आसुरुत्ते–आशुरुप्तः, आशु–शीघ्रं रुप्त –कोपोदयादिमूढ. स्फुरितकोपलिङ्गो वा। भग० ३२२। आशु–शीघ्रं रुप्त'–क्रोधेन विमोहितो य स.। आसुरोक्त'–आसुरं वा–असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वादुक्त–भणितं यस्य स.। विपा० ५३। आसुरुत्त –शीघ्र कोपविमूढबुद्धि', स्फुरितकोपचिह्नो वा। भग० १६७। क्रुद्ध'। आव० ६५, १५२, ७११। आशु–शीघ्रं रुष्ट –क्रोधेन विमोहितो य स आशुरुष्ट', आसुर वा–असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वात् उक्तं–भणित यस्य स आसुरोक्तः। निर० ८।

आसुरे काए –असुराणामयमासुरस्तम्– असुरसम्बधिनं, चीयत इति कायस्तं, निकायमित्यर्थ। उत्त० १८२। असुरसम्बन्धिनि काये असुरनिकाये इत्यर्थ। उत्त० २९६।

आसूणि–आशूनिः, श्लाघा। सूत्र० १८०। येन घृतपानादिना आहारविशेषेण रसायनक्रियया वा अशन' सन्, आ–समन्ताच्छूनीभवति–बलवानुपजायते तत्। सूत्र० १८०।

आसूणियं–आशूनितम्, ईषत्स्थूलीकृतम्। प्रश्न० ४९।

आसूय–आसूयम्, औपयाचितकम्। पिण्ड० १२०।

आसेवणसिक्खा – आसेवनशिक्षा, प्रत्युपेक्षणादिक्रियोपदेश.। विशे० ९१ उत्त० ५४५। शिक्षाद्वितीयभेद.। नंदी २१०। सामाचारीशिक्षणम्। बृ० प्र० ६४ अ। प्रत्युपेक्षणादिक्रियारूपोऽभ्यास। आव० ८३३।

आसेवियं–स्तोकं आस्वादितं, अनास्वादितं वा। आचा० ३२५।

आसो–जात्या आशुगमनशील. अश्व'। जीवा० २८२। मनः। प्रज्ञा० ८८। य एकस्मिन् द्वित्रादीनर्थान् वक्ति यथा अश्नातीत्यश्व', आशु धावति न च श्राम्यति। बृ० प्र० ३४ अ। चतुष्पदविशेष। प्रज्ञा० ४५।

आसोकंता–मध्यमग्रामपंचमी मूर्च्छना। ठाणा० ३९३।

आसोट्ठे–अश्वत्थ'। आचा० ३४८।

आसोठे–अश्वत्थ, बहुबीजवृक्षविशेष'। प्रज्ञा० ३२।

आसोत्थमंथु। आचा० ३४८।

आस्तिक्यम्–सम्यक्त्वस्य पञ्चमलक्षणम्। आव० ५९१।

आस्थानमण्डपः – उपस्थानगृहम्। भग० २००। नंदी ६१।

आस्फोटनम्–सकृदीषद्वा स्फोटनम्। दश० १५३।

आस्या–यत्रास्यते यथासुखेन स्वाध्यायपूर्वकम्। ओघ० ६९।

आस्रपः–मूल। जं० प्र० ४९९।

आहंसु–आहु', उक्तवन्त। भग० ९८। आख्यातवान्। प्रश्न० २६।

आहच्च – आहत्य, कदाचित्। भग० ३०५, २२। उत्त० १८८, ४८। प्रज्ञा० ३३३। बृ० तृ० ११४ आ। कादाचित्कम्। आव० ५३०। सहसा। नि० चू० द्वि० १२० अ। कदाचित् सान्तरमित्यर्थः। भग० ४१। उपेत्य स्वत एव, अत्यर्थं कदाचिद्वा। आचा० ५५। ढौकित्वा। आचा० २७२। उपेत्य। आचा० ३६२। सहसा। आचा० ३२२, ३५५। कदाचित् अमन्यगत्या। व्य० प्र० ८ आ। आहत्या–आहननं प्रहार'। भग० ६७३।

आहच्च गथा–आहृतग्रन्था–व्ययीकृतद्रव्या। आचा० २७२।

आहट्टु–आहृत्य, उपेत्य। सूत्र० ३००। गृहीत्वा। आचा० २८२, ३४५।

आहट्टो–आडम्बर' (उपाधि.)। आव० ३४१।

आहडं – आहृतम्, स्वग्रामादे साध्वर्थमानीतम्। प्रश्न० १५४। साध्वयोग्यमशनादि। दश० २०३।

आहणइ–आहन्ति, समीकरोति। आव० ३८५।

आहत्तहिए–सूत्रकृतांगे त्रयोदशाध्ययनम्। सम० ४२।

आहम्मिए जोगे–वशीकरणादीनि। आव० ६६२।

आहयंति–कथयन्ति। नि० चू० प्र० २७७ अ।

आहय – आहतं, लक्षणया लिखितम्। जं० प्र० २०३। आख्यानकप्रतिबद्धं यन्नाट्यं तेन युक्तं तद्गीतम्। ठाणा० ४२१। आहतं, आख्यानकप्रतिबद्धम्। सूर्य० २६७। जीवा० १६२। आव० २९८। आख्यानकप्रतिबद्धं, आस्फालितं वा। औप० ७४।

आहया–आख्यानकप्रतिबद्धानि। राज० १६।

आहरणं–आ–अभिविधिना ह्रियते–प्रतीतौ नीयते अप्रतीतोऽर्थोऽनेनेति। ठाणा० २५४। साध्यसाधनान्वयव्यतिरेकप्रदर्शनं दृष्टान्तो वा। आव० ६२।

आहरणतद्देसे–आहरणतद्देश', आहरणार्थस्य देशस्तद्देश स चासावुपचारादाहरणं चेति प्राकृतत्वादाहरणशब्दस्य पूर्वनिपाते आहरणतद्देश इति यत्र दृष्टान्तार्थदेशेनैव दार्ष्टान्तिकार्थस्योपनयनम् क्रियते तत्। ठाणा० २५४।

आहरणतद्दोसे–आहारणतद्दोष, आहारणस्य सम्बन्धी साक्षात्प्रसङ्गसम्पन्नो वा दोषस्तद्दोषः सा चासौ धर्म्मे धर्म्मिण' उपचारादाहरणं चेति आहारणस्य दोषो यस्मिंस्तथा यत्साध्यविकलत्वादिदोषदुष्टं तद्दोषाहरणं। ठाणा० २५४।

आहरणा–घोरयति घोरण करोति। ओघ० ५८। ज्ञातविशेष। ठाणा० २५३। उदाहरणम्। दश० ३५।

आहरे–आहारयेत्–व्यवस्थापयेत्। आचा० २९२।

आहव्वणी–आथर्वणी, आथर्वणाभिधाना मयोऽनर्थकारिणी विद्या। सूत्र० ३१९।

आहा–आधा। भग० १०२। साधूना मनस्याधानम् साधून्नाश्रित्य। प्रश्न० १२७। आधानम्, साधूनिर्मित्तं चेतमः प्रणिधानम्। पिण्ड० ३५। अधस्तात्। नि० चू० प्र० २९४ आ। आधीयतेऽस्यामिति। पिण्ड० ३६।

आहाकम्म–आधाकर्म्म, आधाय–निमित्तत्वेनाश्रित्य पूर्वोक्तमष्टप्रकारमपि कर्म बध्यते, शब्दस्पर्शरसरूपगन्धादिक। कर्मनिमित्तभूता मनोज्ञेतरशब्दादय एवाधाकर्म्म। आचा० ९८। आधानं आधाकरण तदुपलक्षितं कर्म। यथाकर्म वा तत्तद्गत्यनुरूपचेष्टित वा। उत्त० १८२। साधुप्रणिधानेन यत्सचेतनमचेतनं क्रियते अचेतनं वा पच्यते चीयते वा गृहादिकं व्यूयते वा वस्त्रादिकं तदाधाकर्म। भग० १०२। प्रथम उद्गमदोष। आधानं आधा तया आधया कर्म-पाकादिक्रिया, आधाय–साधु चेतसि प्रणिधाय यत् क्रियते भक्तादि तत्। पिण्ड० ३४। चतुर्थशवलदोष। प्रश्न० १४४। सम० ३९।

आहाकम्मियं–आधाकर्म, दोषविशेष। आचा० ३२९।

आहाकम्मेहिं–आधाकर्मभि, आधान-माधाकरणं आत्मनेतिगम्यते, तदुपलक्षितानि कर्माण्याधाकर्माणि, तैः–स्वकृतकर्मभि'। उत्त० २४७।

आहाण–आधानम्, विधानम्। विशे० ८४७।

आहार–आहार', भोजनम्, जीवनम्। प्रश्न० १०६। मनसा तथाविध पुद्गलोपादानरूपः। भग० ८६। त्रयोदशशतके पंचमोद्देशक'। भग० ५९६। अष्टाविंशतितममाहारप्रतिपादकत्वादाहार। प्रज्ञा० ६।

आहारए–आहारकम्, चतुर्दशपूर्वविदा कार्योत्पत्तौ योगबलेनाह्रियत इति। प्रज्ञा० २६८। तथाविधकार्योत्पत्तौ चतुर्दशपूर्वविदा योगबलेनाह्रियत इति। ठाणा० २९५। चतुर्दशपूर्वविदा तीर्थकरस्फातिदर्शनादिकतथाविधप्रयोजनोत्पत्तौ सत्या विशिष्टलब्धिवशादाह्रियते–निर्वर्त्यते इति। जीवा० १४। प्रज्ञा० ४०९। तथाविधप्रयोजने चतुर्दशपूर्वविदा यदाह्रियते–गृह्यते तत्। आह्रियन्ते–गृह्यन्ते केवलिन समीपे सूक्ष्मजीवादयः पदार्था अनेनेति वा। अनु० १९६। आहारयति–आहारं गृह्णातीति। नंदी ९०।

आहारएसणा–आहारैषणा। दश० १८।

आहारगं–आहारकम्, तृतीयं शरीरम्। प्रज्ञा० ४६९।

आहारगंगोवंगणाम–आहारकाङ्गोपाङ्गनाम, उपाङ्गनाम। प्रज्ञा० ४७०।

आहारगत्तं–आहारकत्वं, आहारकशरीरकरणलब्धि'। ठाणा० ३३२।

आहारगबंधण–आहारकबन्धनम्, बन्धननाम। प्रज्ञा० ४७०।

आहारगमो–आहारगम', प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमाहारपदोक्तसूत्रपद्धतिः। भग० १०९।

आहारगसंघायणाम–आहारकसङ्घातमाम, यदुदयवशादाहारकशरीररचनाऽनुकारिसङ्घातरूपा जायते तदाहारकसङ्घातनाम। प्रज्ञा० ४७०।

आहारगसमुग्घात–आहारकसमुद्घात', आहारके प्रारभ्यमाणे समुद्घातः। जीवा० १७।

आहारट्ठ–आहारार्थ., आहारप्रयोजनमाहारार्थित्वम्। भग० २०। आहारलक्षणं प्रयोजनं, आहाराभिलापो वा। प्रज्ञा० ५००।

आहारट्ठि–आहारार्थी, आहारमर्थयते–प्रार्थयते इत्येवंशील', अर्थो वा–प्रयोजनमस्यास्तीत्यर्थी, आहारेण–भोजनेन अर्थी आहारार्थी, आहारस्य–भोजनस्य याऽर्थी आहारार्थी। भग० २०।

आहारपच्चक्खाण–आहारप्रत्याख्यानम्, अनेषणीयभक्तपाननिराकरणरूपम्। उत्त० ५८८।

आहारपदे–प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमपदम्। प्रज्ञा० २५। नंदी १०५।

आहारपयाइं–आहारपदानि, आहारग्रहणविषयकानि पदानि। जं० प्र० ४६१।

आहारपरिण्णा–आहारपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गे द्वितीयश्रुतस्कंधे तृतीयाध्ययनम्। आव० ६५८। ठाणा० ३८७। उत्त० ६१६।

आहारपर्याप्तिः–यया शक्त्या करणभूतया भुक्तमाहारं खलरसरूपतया करोति सा। बृ० प्र० १८४ आ। शरीरेन्द्रियवाङ्मनप्राणापानयोग्यदलिकद्रव्याहरणक्रियापरिसमाप्ति। तत्त्वा० ८–१२।

आहारपोसहे – आहारपौषधः, आहारनिमित्तं पौषधः, आहारनिमित्तं धर्मपूरण पर्वेति भावना। आव० ८३५।

आहारसण्णा–आहारसञ्ज्ञा, आहाराभिलाष –क्षुद्वेदनीयोदयप्रभव आत्मपरिणाम। आव० ५८०।

आहारसन्ना–आहारसञ्ज्ञा, क्षुद्वेदनीयोदयाद् या कवलाद्याहारार्थं तथाविधपुद्गलोपादानक्रिया सा। प्रज्ञा० २२२। क्षुद्वेदनीयोदयात्कावलिकाद्याहारार्थं पुद्गलोपादानक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनया तद्वानित्याहारसञ्ज्ञा। भग० ३१४। आहाराभिलाषः–क्षुद्वेदनीयप्रभवः खलु आत्मपरिणामविशेष। जीवा० १५।

आहारवं–आलोइज्जमाणं जो समेदं सव्वं अवधारति सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। अलोचितापराधाना अवधारणावान्। भग० ९२०।

आहाराइणियाए – रत्नै –ज्ञानादिभिर्व्यवहरतीति रात्निक –वृहत्पर्यायो यो यो रात्निको यथारात्निकं तद्भावस्तत्ता, तया यथारात्निकतया–यथाज्येष्ठ। ठाणा० ३०१।

आहारुद्देस – आहारोद्देश, प्रज्ञापनाष्टाविंशतितमपदस्योद्देशक। भग० २०।

आहारेंति–विशेषाहारापेक्षया सामान्याहारस्याविशिष्टशरीरबन्धनसमय एव कृतत्वात्। भग० ७६३।

आहारे–आहार, चरमाचरमपदगतसूत्रम्। प्रज्ञा० २४६। आहारप्रतिपादकं प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६। आधारः। भग० ७३८। फलपत्रकिशलयमूलकन्दत्वगादिनिर्वर्त्य। आचा० ६०।

आहारेत्ताइतो–आहृतवान्। आव० ३०८।

आहारे भोयणा–आहाराभोगता। प्रज्ञा० ५४३।

आहारो–आहारः, कूरादि एक्कं चेव खुधं णासेति पाणे तक्कखीरुदगमज्जादि एगंगिया तिसं णासेति, आहारकिच्चं च करेंति खाइमे एगंगिया फलमंसादि आहारकिच्चं च करेंति, साइमेऽवि मधुफाणियं तंबोलादिया एगंगिया खुहं णासेति। नि० चू० द्वि० ५० आ। मुक्खत्तो जं किंचिवि भुंजति सो सव्वो आहारो। नि० चू० द्वि० ५१ अ। आधार आधेयस्यैव सर्वकार्येषु लोकानामुपकारित्वात। भग० ७३९।

आहारोवचया–आहारोपचया., आहारेणोपचयो येषां ते। आचा० २७५।

आहार्यः–अभिनयचतुर्थभेदः। जं० प्र० ४१४। काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मा दिघटितप्रजननैर्योषिदवाच्यप्रदेशासेवनमित्यर्थ.। आव० ८२५। आहार्यं अन्धकाररहितत्वं। सम० १४०।

आहालंदिया–कल्पविशेष। नि० चू० प्र० ३३८ आ।

आहावंति–आगच्छन्ति। बृ० द्वि० २१३ अ।

आहावणा–आभावना, उद्देश। पिण्ड० ११६।

आहाविज्ज–आधावेत्। आव० ६३३।

आहासिया–आभासिकनामद्वितीयान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०।

आहिंडइल्ल। ओघ० ९६।

आहिंडओ–आहिण्डक, दूरदेशविहारकर्ता। आव० ५३६।

आहिंडगा–विहरंता। नि० चू० प्र० ३१४ अ।

आहिंडा–सततं परिभ्रमणशीला। बृ० तृ० १८४ आ।

आहिंडिओ – आहिण्डक, आहेटकं। आव० ४३२। अगीतार्थ, चक्रस्तूपादिदर्शनप्रवृत्त। ओघ० ६०।

आहिंडितो–आहिण्डिक। उत्त० १०८।

आहिंधइ–परिदधाति। आव० ३६०।

आहिअग्गि–आहिताग्नि, अग्निं गृहीत्वा स्वगृहे स्थापनात्। आव० १६९। ब्राह्मण। दश० २५२। कृतावस्थादिब्राह्मण। दश० २४५। प्रतिपादितोऽनुष्ठितो वा। सूत्र० १७८।

आहिए–आहित, जनितः। सूत्र० ६९। प्रथित, प्रसिद्धिं गत.। सूत्र० ६९।

आहिज्जइ–आधीयते, व्यवस्थाप्यते, आख्यायते वा। सूत्र० ३३७। सम्बध्यते। सूत्र० ३०६। आख्यायते। सम० ११३।

आहितविशेषम्–आहितविशेषत्वं–वचनान्तरापेक्षया ढौकितविशेषता। एकत्रिंशत्तमवाणीगुण। सम० ६३।

आहितुण्डिग–आहितुण्डिक, गारुडिक। दश० ३७।

आहितो–आख्यातः, कथित। सूत्र० ११।

आहित्थं। जीवा० १९४।

आहियं–आहितम् ढौकितम्। सूत्र० ७१। आत्मनि व्यवस्थितं, आ–समन्तात् हितं वा। सूत्र० ६८। गृहीतम्। आव० ३७०।

आहियग्गी–बंभणो। दश० चू० १३२।

आहियडमरं–आहितडमरम्, शत्रुकृतविड्वरोऽधिकविड्वरो वा। औप० १२।

आहिया–आख्याता। ठाणा० ३९७।

आहियोग – आभियोगदेवेत्पन्ना आदेशवर्तिन। भग० १९८।

आहिव्वण–आहित्यम्, अहितत्वं–शत्रुभावम्। प्रश्न० ३८।

आही–आधि, मन पीडा। प्रश्न० २५।

आहुइ–आहुति, अग्नौ घृतादिद्रव्यप्रक्षेपरूपा। दश० २४५।

आहुणिए–आधुनिक। सूर्य० २९४। अष्टाशीतौ ग्रहेषु पचमग्रहनाम। ठाणा० ७८। जं० प्र० ५३४।

आहुणिज्ज–आहवनीयं–सम्प्रदानभूतम्। औप० ५।

आहुणिय–आधूय। आव० १२१।

आहुस्स–आहोतुः, दातु। औप० ५।

आहूए–सहूत। आचा० ४२१।

आहूतो–उत्पन्नः। आव० ३४३। लग्न, उत्पन्न। उत्त० १४८।

आहूय – आहूतम्–आह्वानमामन्त्रणं नित्य मद्गृहे पोषमात्रमन्नं ग्राह्य इत्येवंरूपम्, कर्मकराद्याकारण वा साध्वर्थं स्थानान्तरादन्नाद्यानयनाय यत्र स, स्पर्धा वा। भग० २९३। भग० २९४।

आहेडगो–मिगव्व। नि० चू० द्वि० १३६ आ।

आहेणं–जमन्नगिहातो आणिज्जति त अहवा जं वहुगिहातो वरगिह णिज्जति त। नि० चू० द्वि० २२ अ। यद्विवाहोत्तरकाले वधूप्रवेशे वरगृहे भोजन क्रियते। आचा० ३३४।

आहेति–आधाय, कृत्वा। उत्त० २४७।

आहेवच्चं – आधिपत्यम्, अधिपतिकर्म। भग० १५४। अधिपते. कर्म, रक्षा। जं० प्र० ६३। जीवा० २१७, १६२।

आहेवणं–आक्षेपम्, पुरक्षोभादिकरणम्। प्रश्न० ३८।

आहोपुरुषिका–आत्मशक्त्याविष्करणम्। सूत्र० ३४५।

आहोहिओ–आधोऽवधिक, परमावधेरधस्ताद् योऽवधिस्तेन यो व्यवहरति स. परिमितक्षेत्रविषयावधिक। भग० ६७।

आहोहिय–नियतक्षेत्रविषयावधय। सम० ९६।

आहोही–यत्प्रकारोऽवधिरस्येति यथावधि परमावधेर्वाऽधोवर्त्यवधिर्यस्य सोऽधोऽवधि। ठाणा० ६१।

आह्निका–पिशाचे चतुर्थभेद। प्रज्ञा० ७०।

आह्रियते–निर्वर्त्यते। जीवा० १४।

इ

इंखिणिका–कर्णमूले घण्टिका चालयन्ति। आव० १३०।

इंखिणी – विज्जाभिमंतिया घंटिया कण्णमूले चालिज्जति, तत्थ देवता कहेति कहेंतस्स पसिणापसिण सभवति स एव इंखिणी भण्णति। नि० चू० द्वि० ८५ अ। निन्दा। सूत्र० ६१।

इंगला–इङ्गना, सञ्ज्ञा। नदी १५।

इंगाल–अङ्गार, दग्धेन्धनो विगतधूमज्वाल। आचा० ४९। चारित्रेन्धनमङ्गारमिव य करोति भोजनविषयरागाग्नि सोऽङ्गार.। भग० २९१। अङ्गाराणामयमाङ्गार। दश० १६४। ज्वालारहितोऽग्नि। दश० १५४, २२८। महाग्रहविशेष। भग० ५०५। निर्ज्वलितेन्धनम्। भग० २१३। विगतधूम। प्रज्ञा० २९। निर्धूमाग्नि। जीवा० १०७। विगतधूमज्वालो जाज्वल्यमान खदिरादिः। जीवा० २८। अङ्गार। आव० ४२२, ३१३। रागो। नि० चू० तृ० ४९ अ। ज्वालारहितो वह्नि, अग्नेस्तृतीयभेद। पिण्ड० १५२।

इंगालए – अङ्गारक, अष्टाशीतितममहाग्रहविशेष। सूर्य० २९४। महाग्रहविशेष। जं० प्र० ५३४। ठाणा० ७८।

इंगालकड्ढिणि–ईषद्वक्राग्रा लोहमययष्टिः। भग० ६९७।

इंगालकम्म – अङ्गारकर्म्म, अङ्गारकरणविक्रयक्रिया। आव० ८२९।

इंगालदाहओ–अङ्गारदाहक.। आव० १५१।

इंगालब्भूया–अङ्गारराशिना भूता। भग० १३६।

इंगालवडेंसए – अङ्गारावतंसकं, ज्योतिषविमानविशेष। भग० ५०५।

इंगालसोल्लियं–अङ्गारैरिव पक्कम्। भग० ५१९। औप० ९१। निर० २६।

इंगाला–अणिंधणाणि ज्वाला। नि० चू० प्र० ५२ आ।

इंगिअ–इङ्गितम्, अन्यथा प्रवृत्तिलक्षणम्, निष्ठीवनादिलक्षणम्। दश० २५२। नयनादिचेष्टया। ज० प्र० २२३।

इंगिणि–इङ्गिनी, अनशनविशेष। आव० ६७०।

इंगिणिमरणे–इङ्गिनीमरणम्, प्रतिनियतदेश एव चेष्टयतेऽस्यामनशनक्रियायाम्, सप्तदशमरणे षोडशः। समा० ३३। इङ्गिते प्रदेशे मरणं इङ्गितमरणम्। आचा० २६२। "इंगियदेसमि सय चउव्विहाहारचायनिप्फन्न। उव्वत्तणाइजुत्त नऽण्णेण उ इगिणीमरणं"। ठाणा० ९६। यावत्कथिकानशनद्वितीयभेद। ठाणा० ३६४।

इंगिणी–इङ्गिनीमरणम्, मरणस्य षोडशो भेद। उत्त० २३०। इङ्गिनी, इङ्ग्यते–प्रतिनियतप्रदेश एव चेष्टते अस्यामनशनक्रियायामिति। उत्त० २३५। सम० ३५। विशे० १०।

इंगितं–सूक्ष्मबुद्धिगम्यचेष्टा। ठाणा० ४। सूक्ष्मचेष्टाविशेष। बृ० प्र० ४३ अ।

इंगिनीमरणं– उक्तन्यायत. प्रतिपद्य शुद्धस्थण्डिलस्थाता एकाक्येव कृतचतुर्विधाहारप्रत्याख्यानस्ततस्थंडिलस्यान्तश्छायात उष्णमुष्णाच्च छाया स्वयं संक्रामति। उत्त० ६०२। नियतप्रदेशस्थायित्वेऽशनादित्याग। आव० ५६३।

इंगियं–इङ्गितम्, ज्ञानविशेष। आव० ७२४। नयनादिचेष्टाविशेष। निर० ८। ज्ञाता० ४१। निपुणमतिगम्यं प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचकमीषद्भ्रूशिर:कम्पादि। उत्त० ४४। अंगभंगादि। उत्त० ६२६।

इंगियपत्थिय–चेष्टितप्रार्थित। (मर०)।

इंगियमरणं–इंगितमरणम्, इंगिते प्रदेशे मरणम्। दश० २७।

इंगियागारकुसलो–इगिताकारकुशल। आव० ५६।

इंगियागारसंपन्ने–इंगिताकारसम्पन्न, इंगित–निपुणमतिगम्यं प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचकं, आकार–स्थूलधीसवेद्य प्रस्थानादि भावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादि, द्वन्द्वे इंगिताकारौ, तौ अर्थाद्गुरुगतौ सम्यक् प्रकर्षेण जानातीति। उत्त० ४४। इंगिताकारसम्पन्न – इंगिताकाराभ्या गुरुगतभावपरिज्ञानमेवोक्त तेन सम्पन्न –युक्त। उत्त० ४४।

इंग्यते–प्रतिनियतदेश एव चेष्टयते। सम० ३५।

इंतं–आयान्तम्। उत्त० ३२५, १३९।

इंती–एति–आगच्छन्ति। ओघ० ७८।

इंतो–आयान्, आगच्छन्। दश० ३७। आव० ८०१। बृ० तृ० १७९ अ।

इंदं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंद–इन्द्र, सप्तमदिनस्य सैद्धान्तिक नाम। सूर्य० १४७। ऐन्द्री–पूर्वदिक्सैद्धान्तिकनाम। ठाणा० १३३।

इंदकाइया–त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२। त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२।

इंदकील–इन्द्रकील, गोपुरे कीलविशेष। जीवा० ३५९, २०४। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। जं० प्र० ४८। गोपुरावयवविशेष। औप० ३। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। भग० १७५। पुरमध्यस्थम्। नंदी १५०।

इंदकुंभ–कुम्भानामिन्द्र–विजयदेवाभिषेककलशाः। जं० प्र० ५०।

इंदकुंभसमाणो – इन्द्रकुम्भसमान, महाकुम्भप्रमाणकुम्भसदृशः। जीवा० ३६०।

इंदकुमारिया–इन्द्रकुमारिका। आव० ४३४।

इंदकेऊ–इन्द्रकेतु, लोकमहनीयो ध्वजविशेष। उत्त० ३०३।

इंदकेतू–इन्द्रकेतु, रश्मिनियन्त्रिते वेन्द्रयष्टि। प्रश्न० १३४।

इंदखीलो–इन्द्रकील। आव० ४१७।

इंदगाइ–त्रीन्द्रियजीवविशेष। उत्त० ६९५।

इंदगाह–इन्द्रग्रह, उन्मत्तताहेतु.। भग० १९८।

इंदगोवए–इन्द्रगोपक, प्रावृट्प्रथमसमयभावी कीटविशेष। प्रज्ञा० ३६१।

इंदगोवया–इन्द्रगोपक, त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२। त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

इंदगोवसमाइय–त्रीन्द्रियजीवभेद.। उत्त० ६९५।

इंदगोवेइ–इन्द्रगोपक, प्रावृट्कालभावी कीटविशेष.। ज० प्र० ३४। आचा० ३०६।

इंदग्गाहो–इन्द्रग्रह। जीवा० २८।

इंदग्गी–इन्द्राग्नि, ग्रहविशेष। ठाणा० ७९। ज० प्र० ५३५।

इंदजसा–इन्द्रयशा, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदजालिओ-इन्द्रजालिक -भूतिलाभिध.। आव०।२१९।

इंदज्झओ-इन्द्रध्वज, शेषध्वजापेक्षयाऽतिमहत्त्वादिन्द्रश्चासौ ध्वजश्च इन्द्रध्वज इति विग्रह, इन्द्रत्वसूचको ध्वज इति वा। सम० ६१।

इंदट्ठाणे-इन्द्रस्थानम्, यत्रेन्द्रयष्टिरुद्र्ध्वीक्रियते। अन्त० २३।

इंदणागो-इन्द्रनाग, येन बालतपसा सामायिक लब्धम्। आव० ३५३। वसन्तपुरे दारको स एकपिण्डिको जात। आव० ३५२।

इंददत्त-इन्द्रदत्त, अभिनन्दनजिनप्रथमभिक्षादाता। आव० १४७। सम० १५१। इन्द्रपुरनगरनृपति। विपा० २२। व्य० द्वि० १५१ अ। व्य० द्वि० १७० आ। तितिक्षोदाहरणे इन्द्रपुरनगरनरेश। आव० ७०२। मथुराक्षाद्ध पादच्छेदक। (मर०)। वासुपूज्यपूर्वभव। सम० १५१। इन्द्रपुरे राजा। आव० ३४३। मथुराया पुरोहितविशेष। उत्त० १२५। श्रावस्त्या कपिलशिक्षको ब्राह्मण। उत्त० २८६, २८७। इन्द्रपुरनृपति। उत्त० १४८।

इंदधणु-इन्द्रधनु। जीवा० २८३। विविधवर्णमभ्रमण्डले जायमान तेजोमण्डलम्। भग० १९५।

इंदनीले-इन्द्रनील, रत्नविशेष। प्रज्ञा० २७। पृथिवीभेद। आचा० २९। मणिभेद। उत्त० ६८९।

इंदपयपव्वतो-गजाग्रपदपर्वतापरनामा पर्वत, षड्दिग्क्षेत्रावग्रहस्थानम्। नि० चू० प्र० ३८१ अ।

इंदपाउया-इन्द्रपादुका, इन्द्रकुमारी। आव० ४३७।

इंदपुरं-इन्द्रपुरम्, नगरविशेष। उत्त० ३८०। इन्द्रदत्तराजधानी। उत्त० १४८। तितिक्षोदाहरणे नगरविशेष। आव० ७०२। नगरविशेष। विपा० ५४, ९५। इन्द्रदत्तराजधानी। विपा० ८८। नगरविशेष। आव० ३४३। व्य० द्वि० १५१ अ, १७० आ।

इंदभूई-इन्द्रभूति, प्रथमगणधर। आव० २४०। श्रीवीरप्रथमगणधर। सम० १५२।

इंदभूती-इन्द्रभूति इति मातृपितृकृतनामधेय, महावीरस्वामिन प्रथमशिष्य। भग० ११। महावीरस्वामिनो ज्येष्ठ शिष्य। भग० १३९। श्रीमहावीरप्रथमगणधर। सूत्र० ४०७। रयिप्रश्ननिर्णये चम्पानगर्या पुण्यभद्रचैत्ये महावीरस्वामिनो गौतमगोत्रो ज्येष्ठ शिष्य। भग० २०६।

इंदमह-इन्द्रमह, इन्द्रोत्सवः। उत्त० ३११। अश्वयुक्पौर्णमासी। ठाणा० २१४। लौकिकमहोत्सव.। आव० ३५८। उत्सवविशेष। आव० ६९२। आचा० ३२८। यदश्वयुक्पूर्णिमाया भवति कार्त्तिके वा। आव० ७३६। इन्द्रोत्सव। आव० ३५८। इन्द्रस्य-शक्रस्य मह -प्रतिनियतदिवसभावी उत्सव। जीवा० २८१।

इंदमुद्धाभिसित्ते-इन्द्रमूर्द्धाभिषिक्त, सप्तमदिनस्य सैद्धान्तिकनाम। जं० प्र० ४९०।

इंदसम्मो-इन्द्रशर्मा, गृहपतिविशेष। आव० १९४। प्रलिचरक। आव० १९०।

इंदसिरी-इन्द्रश्री, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदसेणा-रक्तवतीसगमिका नदी। ठाणा० ४७९।

इंदा-ऐन्द्री, पूर्वदिक्। आव० २१५। भग० ४९३। नागकुमारेन्द्रस्य पञ्चमाग्रमहिषी। भग० ५०४। पञ्चमविद्युत्कुमारी महत्तरिका। ठाणा० ३६१। रक्तवतीसगमिका नदी। ठाणा० ४७७।

इंदासणि-इन्द्राशनि, इन्द्रवज्रम्। उत्त० ४७५।

इंदियं-इन्द्रिय, प्रज्ञापनाया पञ्चदश पदम्। प्रज्ञा० ६। इन्दनादिन्द्र -जीव, सर्वविषयोपलब्धिभोगलक्षणपरमैश्वर्ययोगात्तस्य लिङ्गं तेन दृष्टं सृष्टं जुष्टं दत्तमिति वा, श्रोत्रादि। ठाणा० ३३४। औदारिकादित्वार्थपरिच्छेदकत्वलक्षणधर्म्मद्वयोपेतम्। ठाणा० ३५६। इन्द्रलिंगदृष्टदिष्टादिरूपम्। तत्त्वा० २-१५।

इंदियउद्देसए-प्रज्ञापनाया पंचदशपदस्य प्रथमोद्देशक। भग० ४४०, ७७७, १३१। प्रज्ञा० ५४५।

इंदियकरणं-इन्द्रियकरणम्, इन्द्रियाणा--चक्षुरादीना करण अवस्थान्तरापादनम्। उत्त० १९८।

इंदियत्थ-औदारिकादित्वार्थपरिच्छेदकत्वलक्षणधर्मद्वयोपेतमिन्द्रियं, अर्थ -विषयो जीवादि। ठाणा० ३५६।

इंदियत्थविकोवणयाते-इन्द्रियार्थविक्रोपनं-कामविकार.। ठाणा० ४४७।

इंदियत्था-इन्द्रियार्था इन्द्रियैरर्यन्ते-अधिगम्यन्त इति इन्द्रियार्था.-शब्दादय। ठाणा० २५३। इन्द्रियाणामर्था -तद्विषया--शब्दादय। ठाणा० ३३५।

इंदियनिग्गहो – इन्द्रियनिग्रह, इन्द्रियाणां – श्रोतादीना निग्रह –इष्टेतरेषु शब्दादिषु रागद्वेषाकरणं, पञ्चैतेऽनगारगुणा। आव० ६६०।

इंदियपच्चक्खे – इन्द्रियं–श्रोत्रादि तन्निमित्तं–सहकारिकारणं यस्योत्पित्सोस्तदलिंगिक शब्दरूपरसगन्धस्पर्शविषयज्ञान-मिन्द्रियप्रत्यक्षम्। अनु० २११।

इंदियपज्जत्ति–इन्द्रियपर्याप्ति –यया धातुरूपतया परिणमिता-दाहारादिन्द्रियप्रायोग्यद्रव्याण्युपादायैकद्वित्र्यादीन्द्रियरूपतया परिणमय्य स्पर्शादिविषयपरिज्ञानसमर्थो भवति सा। बृ० प्र० १८४ आ।

इंदियपडिपुण्णो–नोविगलिंदियो। नि० चू० प्र० २६६ आ।

इंदियबलं–इन्द्रियबलम्, चक्षुरादीन्द्रियाणां बल–स्वस्वविषयग्रहणपाटवम्। जीवा० २६८।

इंदियमुंडा–न जितेन्द्रिया.। नि० चू० द्वि० ३७ अ।

इंदियलद्धी–इन्द्रियलब्धि, पञ्चेन्द्रियप्राप्तिः। उत्त० १४५। इन्द्रियाणाम्–स्पर्शादीनां मतिज्ञानावरणक्षयोपशमसम्भूताना-मेकेन्द्रियादिजातिनामकर्मोदयनियमितक्रमाणा पर्याप्तकनाम कर्मादिसामर्थ्यसिद्धाना द्रव्यभावरूपाणा लब्धिरात्मनीती-न्द्रियलब्धि। भग० ३५०।

इंदियलाघवं – इद्रियलाघवं, इद्रियाणि तस्य वशे वर्त्तते। व्य० द्वि० १०२ आ।

इंदियाइं–इन्द्रियाणि–नयननासिकादीनि। उत्त० ४२५।

इंदियाईणं–इन्द्रियादीनाम्, पृथ्व्याद्येकेन्द्रियाणाम्। विशे० २६०।

इंदियाणि–इन्द्रियाणि–नयननाशावंशादीनि। सम० १६।

इंदीवरे–हरितविशेष। प्रज्ञा० ३३।

इंदुत्तरवडिंसगं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिक विमानम्। सम० ३७।

इंदुवसु–इन्दुवसु, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदे–इन्द्र। ठाणा० २९२। मल्लिनाथप्रथमशिष्य। सम० १५२।

इंदो–इन्द्र, अधिपतिः। प्रज्ञा० १०५। इन्दनाद्–इन्द्र – आत्मा। प्रज्ञा० २८५। जीवा० १६। इन्दनात्–इन्द्र, सर्वोपलब्धिभोगपरमैश्वर्यसम्बन्धाज्जीव। आव० ३९८। जीव –सर्वविषयोपलब्धिभोगलक्षणपरमैश्वर्ययोगात्। ठाणा० ३३४। परमैश्वर्ययोगात्प्रभुर्महान्। ठाणा० १९८। भवन-वास्याद्यधिपा। तत्त्वा० ४–४।

इंदोकंतं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंधणपलिआमं – जहा कोद्दवपलालेणं अवगादि फलाणि वेढेत्ता पाविज्जंति आदिग्गहणेण सालिपलालेण वितत्थ जे ण पक्का फला ते इंधणपलियामं भण्णति। नि० चू० द्वि० १५२ आ।

इंधणपलियामं–इंधनपर्यायामं–कोद्रवपलालादिना वेष्टयित्वा पाच्यानि फलानि। बृ० प्र० १४२ आ।

इंधणसाला–जत्थ तणाकरिसभारा अच्छति। नि० चू० तृ० २१ आ। तृणकरीषकचवरस्थानम्। बृ० द्वि० १७५ अ।

इइकट्टु–इतिकृत्वा, निश्चित्य। ज० प्र० ३८६। इतिकृत्वा–यस्मात् कारणात्। अनु० १६।

इइकम्मं–इतिकर्म्म, इति–सासारिक दुःख कर्म–अष्टप्रकार-कर्मकृतम्। आचा० १४५।

इइहास–इतिहास –पुराणम्। औप० ९३। भग० ११२। निर० २३।

इक–देशीवचनम्। विशे० १३१४।

इक्कडं–कठिनं तृणविशेष। बृ० तृ० ५२ आ। ढंढणसदृशं तृणविशेषम्। प्रश्न० १२८। तृणविशेषः। भग० ८०२।

इक्कडदासो–इक्कडदास। उत्त० २८६।

इक्कडा–लाडदेसे वणस्सतिमेओ। नि० चू० प्र० १३४ आ। वनस्पतिविशेषा। सूत्र० ३०७।

इक्कमिक्क–एकैकम्–परस्परम्। उत्त० ३८२।

इक्काई–राष्ट्रकूटविशेष। विपा० ३९।

इक्कारसालंकारं – एकादशालङ्कारा., स्वरप्राभृतकथिताल-कारा। जं० प्र० ३९।

इक्खाग–इक्ष्वाकु, कुलविशेष.। आव० १७९।

इक्खागकुलो–इक्ष्वाकुकुल, कुलविशेष। नि० चू० प्र० २९० अ। आव० १०९।

इक्खागभूमि–इक्ष्वाकुभूमिः, ऋषभजन्मभूमि। आव० १६०।

इक्खागा–इक्ष्वाकव, नाभेयवशजा। भग० ४८१। औप० ५८। कुलार्यभेदविशेष। प्रज्ञा० ५६। प्रथमप्रजापतिवशजा। ठाणा० ३५८। ऋषभस्वामिवशिका। आचा० ३२७।

इक्खु–इक्षु । भग० ३०६ । दश० १८३ ।

इक्खुगारा–इषुकारा, धातकीखण्डपुष्करवरद्वीपार्द्धयो भेदकारिणो दक्षिणोत्तरायताः पर्वतविशेषा । प्रश्न० ९५ ।

इक्खुवाडिया–इक्ष्वादीना मूलवर्ग (वंशवर्गवत्)। भग० ८०२ ।

इक्खुवाडि–पर्वगविशेषा । प्रज्ञा० ३३ ।

इक्षु–पर्वगविशेष । प्रज्ञा० ३० ।

इक्षुरसा–वापीनाम, पंडकवन आग्नेयप्रासादवापिका । जं० प्र० ३७१ ।

इक्षुवरः–घृतोदसमुद्रानन्तर द्वीप, तदनन्तर समुद्रोऽपि । प्रज्ञा० ३०७ ।

इगं–इकम्, देशीपदम् । आव० ४७४ ।

इच्छं–इच्छामि । आव० २६५ ।

इच्छया–बलाभियोगमन्तरेण । ठाणा० ५०० ।

इच्छसि–मृगयसे । आचा० १६८ ।

इच्छा–इच्छा, बलाभियोग । ठाणा० । ४९९ । इच्छा–प्रार्थना कामोऽभिलाष काक्षा गार्ध्य मूर्च्छा । तत्त्वा० ७–१२ । एकादशीरात्रिनाम । ज० प्र० ४९१ । सूर्य० १४७ । धनाद्यविषयाभिलाष । ठाणा० २९१ । चेत प्रवृत्तिरभिप्राय । आचा० १७५ । अभिलाषमात्रम् । प्रश्न० ९७ । अप्राप्तार्थाभिलाषरूपा । प्रश्न० ९२ । वन्दनके प्रथम स्थानम् । आव० ५४८ ।

इच्छाकामा–इच्छाकामा, एषणमिच्छा सैव चित्ताभिलाषरूपत्वात्कामा इति । दश० ८५ । मोहनीयभेदहास्यरत्युद्भवा । आचा० १३५ ।

इच्छाकार–इद मदीय कार्यमिच्छया कुरुत न बलाभियोगेनेत्येवमिच्छया करणम् । बृ० प्र० २२२ अ । आज्ञाबलाभियोगरहितो व्यापार । अनु० १०३ । दशविधसामाचार्या प्रथमभेद । भग० ९२० । बलाभियोगमन्तरेण करण इच्छाकार –इच्छाक्रिया । आव० २५८ ।

इच्छाणुलोमा–यथा कश्चित्किचित्कार्यमारभमाण कञ्चन पृच्छति, स प्राह–करोतु भवान् ममाप्येतदभिप्रेतमित्येवरूपा भाषा । प्रज्ञा० २५६ । प्रतिपादयितुर्या इच्छा तदनुलोमा–तदनुकूला । भग० ५०० । असत्यामृषाभाषाभेद । दश० २१० ।

इच्छाणुलोमियं–इच्छा–चेत प्रवृत्तिरभिप्रायस्तस्यानुलोमम्–अनुकूल तत्र भवमैच्छानुलोमिकम् । ठाणा० १७५ ।

इच्छापरिमाणं–इच्छाया परिमाणम् । आव० ८२५ ।

इच्छापुन्निमा–इच्छापूर्णिमा । सूर्य० ११५ ।

इच्छामणं–इच्छामन, कायपरिचारेच्छाप्रधानं मन । प्रज्ञा० ५४९ ।

इच्छामुच्छा–इच्छामूर्च्छा, इच्छा–परधन प्रत्यभिलाष मूर्च्छा–तत्रैव गाढाभिष्वङ्गरूपेति, तृतीयाधर्मद्वारस्य सप्तविंशतितम नाम । प्रश्न० ४३ ।

इच्छालोभ–इच्छारूपो लोभ इच्छालोभ –चक्रवर्तीन्द्रत्वाद्यभिलाषादिको निदानविशेष । आचा० २९५ । महालोभ । बृ० तृ० २४६ अ । ठाणा० ३७४ ।

इच्छियं–इष्टम्–ईप्सितम् । भग० १२१ इच्छितं–इष्टं–अनुमतम् । उत्त० ५०३ । इच्छाविषयीकृतम् । जीवा० २७९ ।

इच्छियपडिच्छियं–इष्टप्रतीप्सितम्, युगपदिच्छाप्रतीप्साविषयं वा । भग० १२१ । इच्छाया अवग्रहो नाम इच्छितप्रतीच्छितेन इच्छा सजाताऽस्येति इच्छित, प्रतीच्छा सजाताऽस्येति प्रतीच्छितं, इच्छितं च तत् प्रतीच्छित च इच्छितप्रतीच्छितम् । व्य० द्वि० ९३ अ ।

इच्छियपडिच्छियववहारो–इच्छितप्रतीच्छितव्यवहार, ईप्सितप्रतीप्सितव्यवहार । आव० १०० ।

इज्जंजलि–इज्याञ्जलि, यागविषयो जलाञ्जलि । अनु० २९ । मातुर्नमस्कारविधौ तदुक्त क्रियमाण करकुड्मलमीलनलक्षणोऽञ्जलि । अनु० २९ । पूजायामञ्जलि । अनु० २९ ।

इज्जंत–एज्जंत–आयान्तमागच्छन्तम् । उत्त० ३५८ ।

इज्ज–इज्या, पूजा । उत्त० ५३१ । यजनम् । उत्त० ३५८ । यजन–याग । अनु० २९ । माता । अनु० २९ । पूजा–गायत्र्यादिपाठपूर्वक विप्राणा सन्ध्याऽर्चनम् । अनु० २९ ।

इज्जिसिया–इज्यैषिका, इज्या–पूजामिच्छन्त्येषयन्ति वा ये त एव । भग० ४८२ ।

इट्टग–सेवकिका, मानोत्पत्तिकारणम् । पिण्ड० १३३ ।

इट्टाल–इष्टिकाखण्ड । दश० १७५ । नि० चू० तृ० ७४ आ ।

इट्टं–इष्टम् । आव० २४० । वाञ्छ –पूजित । भग० ५६० ।

इट्टगा–(क्षणविशेष) इट्टगा सुत्ताउला (सेवतिका) । नि० चू० द्वि० १०० आ ।

इड्डर–गन्त्रीढक्कनकम् । भग० ३१३ । गन्त्र्या सम्बन्धि । ओघ० १६६, १६७ ।

इड्डरग–इड्डरकं–महत् पिटकम् । राज० १४१ ।

इड्डरिकादिः–पर्युषितकलनीकृता अम्लरसा भवन्ति, आरनालस्थिताम्रफलादिर्वा । ठाणा० २२० ।

इड्ढि–ऋद्धि –आमर्षौषध्यादि । दश० १०३ । भवनपरिवारादिका । ज० प्र० ६२ । उत्त० ३५० । आव० १७८ । ठाणा० १३२ ।

इड्ढिपत्ता–ऋद्धिप्राप्ता आर्या । प्रज्ञा० ५५ । ऋद्धिप्राप्ता–आर्यप्रथमभेद., अर्हदादय । सम० १३५ ।

इड्ढिमं–इस्सरो । नि० चू० द्वि० १६६ आ ।

इड्ढिमत–ऋद्धिमत.–विस्मयनीयवर्णादिसम्पत्तिमत । उत्त० ४७३ ।

इड्ढिसिय–रुढिगम्या । भग० ४८१ ।

इड्ढी–ऋद्धि । प्रज्ञा० ४२४ । इस्सरियं । नि० चू० प्र० १३ आ । आत्मशक्तिरूपा । प्रज्ञा० ४६७ । भवनपरिवारादिका । जीवा० २१७ । विभवैश्वर्य । जीवा० २८० । विमानपरिवारादिका । सूर्य० २५८ । ठाणा० ११६ । औषधिविशेष । उत्त० ४८० । कनकादिसमुदाय । उत्त० २८४ । आमर्षौषध्यादि. । आचा० १७८ । विमानवस्त्रभूषणादि । उपा० २६ । दीनानाथदानादिका विभूति । उत्त० ४६५ । श्रावकोपकरणादिसम्पदामर्षौषध्यादिरूपा । उत्त० ६६८ ।

इड्ढीगारवं – ऋद्धिगौरवम् , ऋद्धया–नरेन्द्रादिपूज्याचार्यादित्वाभिलाषलक्षणया गौरव – ऋद्धिप्राप्त्याभिमानाप्राप्तिसम्प्रार्थनाद्वारेणात्मनोऽशुभभावगौरवम् । आव० ५७९ । ऋद्धया–नरेन्द्रादिपूजालक्षणया आचार्यत्वादिलक्षणया वा अभिमानादिद्वारेण गौरवम् , ऋद्धिप्राप्त्यभिमानाप्राप्तप्रार्थनाद्वारेणात्मनोऽशुभभावो भावगौरवम् । ठाणा० १७३ ।

इणं–अयम् , अनन्तरोक्तत्वेन प्रत्यक्ष । भग० ३४ ।

इणमो–इदं, वक्ष्यमाणतया प्रत्यक्षामन्नम् । प्रश्न० २ । नम । पउ० ६–६३ ।

इणामेव–एवमेव । प्रज्ञा० ६०० ।

इण्हि–इदानीम् । आव० २७३ ।

इतः–स्थित. । २६९ ।

इतर – सामान्यसाधुभ्यो विशिष्टतर । आचा० २४३ । शय्यातर । व्य० द्वि० २७६ अ । अन्तप्रान्त. कुल । आचा० २४३ ।

इता–ज्ञाता । आचा० २८६ ।

इति–इति –प्रवृत्ति. । ठाणा० ३४३ । उपदर्शने । सूर्य० २८६ । प्रज्ञा० २५५ । परिसमाप्तौ एवमर्थे वा । उत्त० ६७ । उपप्रदर्शनार्थे । विशे० १५३ । एवंप्रकारार्थः । ठाणा० ५०३ । पूर्वप्रक्रान्तपरामर्शक । आचा० १४५ । इतिसद्दो वा अर्थे । नि० चू० द्वि० १३७ आ । आमंतणे परिसमत्तीए उवप्पदरिसणे वा । दश० चू० ६३ । हेतौ । आचा । १०० । उपप्रदर्शने । उत्त० ५७० । दश० ७६ । आद्यर्थे । उत्त० ५६१ । प्रत्येकं पर्यायस्वरूपनिर्देशार्थे । उत्त० ८ । आद्यर्थे । आव० २८ । प्रख्यातगुणानुवादनार्थे । भग० ६७ । एवंप्रकारा । ठाणा० ३५४ ।

इतिकत्तव्वं–इतिकर्त्तव्यं । आव० २१३ । इतिकर्त्तव्यता–आदर्शनिक्षेपे सपूर्णकर्तव्यतार्थे । आचा० ५ ।

इत्तरं–इत्वरम्–अल्पकालीनम् । विशे० २४ । स्वल्प । नि० चू० प्र० १८९ अ । परिमितकालम् । दश० २६ । चतुर्थादि षण्मासान्तमिदं तीर्थमाश्रित्य । ठाणा० ३६४ । पादपोपगमनापेक्षया नियतदेशप्रचाराभ्युपगमादिङ्गितमरणम् । आचा० २८५ ।

इत्तरकं–इत्वरकम् , स्वल्पकालं, नियतकालावधिकं । उत्त० ६०० ।

इत्तरकालिकं–प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितव्रतस्य इत्वरकालिकम् । ठाणा० ३२३ । अल्पकालिकम् । भग० ९०९ ।

इत्तरा–इत्वरा, ये कल्पसमाप्त्यनन्तरं तमेव कल्प गच्छ वा समुपयास्यन्ति ते इत्वरा । प्रज्ञा० ६८ । स्वल्पकालभाविनी । अनु० १३ । प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूय. स्थविरकल्पं प्रतिपद्यन्ते ते । बृ० प्र० २२७ आ ।

इत्तरिए – अल्पकालीनं । भग० ९२१ । नि० चू० प्र० २३९ अ ।

इत्तरियं–इत्वरम्–स्वल्पकालभावीनि आव० ८३८ । उत्तरगुणप्रत्याख्यानम् । आव० ८०४ । अल्पकालिकं दैवसिकादि प्रतिक्रमणमेव । आव० ५६३ ।

इत्तरियं दिसं–इत्वर दिशम्–आचार्यलक्षणाम् । व्य० द्वि० २०० अ ।

इत्तरिय – इत्वरं, भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितमहाव्रतस्य शैक्षकस्य विज्ञेयम्। प्रज्ञा० ६३। अयनशीलम्–स्वल्पकालभावी। उत्त० ३३५। इत्वरा.–प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूय. स्थविरकल्पं प्रतिपद्यन्ते ते। बृ० प्र० २२७ आ।

इत्तरियतवो – इत्वरतप स्वल्पकालं अनशनरूपं तप·। उत्त० ६००।

इत्तरियपरिग्गहियागमणे–तत्रेत्वरकालपरिगृहीता कालशब्दलोपादित् इत्वरपरिगृहीतागमनम्, भाटीप्रदानेन कियन्तमपि कालं दिवसमासादिकं स्ववशीकृताया गमनं–मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।

इत्तिरिउग्गहो – रुक्खातिहेट्ठठिताण वीसमणट्ठा इत्तरिओ उग्गहो भवति। नि० चू० प्र० २३९ आ।

इत्तिरियं–इत्वर, स्वल्पकालिकं दैवसिकरात्रिकादि। ठाणा० ३८०। नि० चू० प्र० ३५४ आ।

इत्थंथं – इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं। प्रज्ञा० १०९। नारकादिव्यपदेशबीज वर्णसस्थानादि तत्। दश० २५८।

इत्थत्तं–अनेन प्रकारेणेत्थं तद्भाव इत्थत्वं, मनुष्यादित्वम्। भग० १११।

इत्थत्थं–इत्यर्थम्, एनमर्थम्–अनेकशस्तिर्यङ्नरनाकिनारकगतिगमनलक्षणम्। भग० १११।

इत्थिकहा–स्त्रीकथा–स्त्रीणां स्त्रीषु वा कथा, विकथायाश्चतुर्थभेद। ठाणा० २०९। दश० ११४।

इत्थिपोसए–स्त्रीयं पोषयतीति स्त्रीपोषक·, अनुष्ठानविशेष। सूत्र० १११।

इत्थिरयणे– स्त्रीरत्नम्, चक्रवर्त्त. पञ्चमं पञ्चेन्द्रियरत्नम्। ठाणा० ३९८।

इत्थिलिंग – स्त्रीलिङ्गम्, स्त्रीत्वस्योपलक्षणमित्यर्थ। प्रज्ञा० २०।

इत्थिवऊ – स्त्रीवाक्, स्त्रीलिङ्गप्रतिपादिका भाषा। प्रज्ञा० २४९।

इत्थिवेए – स्त्रीवेद, स्त्रिया पुमांस प्रत्यभिलाष। प्रज्ञा० ४६८।

इत्थिवेदो – अतो अणुसमय डाहो अणुवमतो वि घट्टिज्जमाण दिप्पंतो फुंफुअग्गिसमाणो इत्थिवेदो। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

इत्थिवेय–स्त्रीवेद, स्त्रिया पुंस्यभिलाष.। जीवा० १८।

इत्थिसंसग्गी–अक्खाडगउल्लावादि। दश० चू० १२७।

इत्थिसंसत्तो–स्त्रीससक्त –स्त्रीसम्बन्ध.। प्रश्न० १३८।

इत्थिसागारिए–स्त्रीजन। नि० चू० तृ० १० अ।

इत्थिसागारियं। नि० चू० द्वि० ३४ अ।

इत्थी–स्त्री, पुरुषोत्तमवासुदेवनिदानकारणम्। आव० १६३।

इत्थीउ–स्त्रिय, अष्टम परीषह। आव० ६५६।

इत्थीणपुंसिया – इत्थिवेदो वि से नपुंसकवेदमपि वेदेति। नि० चू० द्वि० २५ आ।

इत्थीनामगोत्तं–स्त्रीनामगोत्रम्। आव० १२०।

इत्थीपण्हाइ–स्त्री उपलक्षणमेतत् पुरुषो वा प्रस्तौति प्रस्यंदते मिथुनकर्म्म समारभते इत्यर्थ। व्य० द्वि० १९५ आ।

इत्थीपरिण्णा–स्त्रीपरीज्ञाध्ययनम्, सूत्रकृताङ्गे प्रथमश्रुतस्कन्धे चतुर्थमध्ययनम्। सम० ३१।

इत्थीपसुविवज्जिअं–स्त्रीपशुविवर्जितमित्येकग्रहणे तज्जातीयग्रहणात् स्त्रीपशुपण्डकविवर्जित क्रियायालोकनादिरहितम्। दश० २३७।

इत्थीरूवं – अणाभरणा इत्थीरूवं भण्णति। नि० चू० प्र० ७७ अ।

इत्थीविग्गह–स्त्रीविग्रह, स्त्रीशरीरम्। दश० २३७।

इत्थीविपरियासो–स्त्रिया विपर्यास स्त्रीविपर्यास –अब्रह्मासेवनम्। आव० ५७५।

इत्थीवेदे–स्त्रीवेद, स्त्रियं यथावस्थितस्वभावतस्तत्सवन्यविपाकतश्च वेदयति–ज्ञापयतीति, वैशिकादिकं स्त्रीस्वभावाविर्भावकं शास्त्रमिति। सूत्र० ११२।

इदुर–सम्बाडिदवनकादि तदिदूरम्। अनु० १५१।

इद्धं–चित्त। नि० चू० प्र० ३६ अ।

इन्द्रकूपः–उंडतम कूपविशेष। आव० ८२७।

इन्द्रजालम्–कुहकम्। दश० २५४।

इन्द्रनीलः – रत्नविशेष। जीवा० २३। आव० १८१, २५९। प्रज्ञा० ९१।

इन्द्रियगोचरा–विषया.। आव० ५८४।

इन्द्रियदुष्प्रणिहितकायिका–आयेन्द्रियैः –श्रोत्रादिभिर्दुष्प्रणिहितस्य इष्टानिष्टविषयप्राप्तौ मनाक्संविग्नेर्निर्वेदद्वारेणापवर्गमार्गं प्रति दुर्व्यवस्थितस्य क्रिया। आव० ६११।

इन्द्रियार्थावग्रहः–स्पर्शनादीन्द्रियाणा ये स्पर्शाद्यो अर्था तेषा अवग्रह –सामान्यमात्रज्ञानं । नंदी १७४ ।

इन्धनं–गोमयो भण्यते। ओघ० १२९।

इब्भ–इभमर्हतीति इभ्य । बृ० प्र० १९९ अ। यद्द्रव्य-निचयान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते । इभो–हस्ती तत्प्रमाण द्रव्यमर्हतीति निरुक्तादिभ्य । ज० प्र० १२२ । हस्तिप्रमा-णद्रविणराशिपति । औप० २७। अर्थवान्। ठाणा० ४६३ । यद्द्रव्यनिचयान्तरितो महेभो न दृश्यते। औप० ५८। इभमर्हन्तीतीभ्या. – यद्द्रव्यस्तूपान्तरित उच्छ्रितकदलिका-दण्डो हस्ती न दृश्यते ते। ठाणा० ३५८। महाधना । भग० ४६३। धनवान्। प्रज्ञा० ३३०। इभो–हस्ती तत्प्रमाणं द्रव्यमर्हतीतीभ्य । यत्सत्कपुञ्जीकृतहिरण्यरत्नादि-द्रव्येणान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते सोऽविकतरद्रव्यो वा इभ्य इत्यर्थ । जीवा० २८०। अनु० २३। यावतो द्रव्यस्योत्करेणान्तरितो हस्ती न दृश्यते तावद् द्रव्यपतय । प्रश्न० ९६ ।

इब्भजाति–मातिपक्खविसुद्धा इब्भजाइ । नि० चू० प्र० २९० अ। विशिष्टा जातय । ठाणा० ३५८।

इमंपि–इदमपि, इतिपूर्वकोऽपिशब्द । आचा० ६५।

इमेसु–इमेषु । आचा० ३२६।

इय–इत ,आर्षत्वात अस्य। प्रज्ञा० ११२। आगत ।(मर०)।

इयण्हि–इत इदानीम्। ठाणा० १४३ ।

इयपट्ठा–इतिप्रष्ठा –प्रधाना , वाग्मिन.। उपा० ४६।

इयरं–इतर, रजोहरणनिषद्या औपग्रहिक कार्पासिक और्णिक वा चीरं, सार्यो वा। ओघ० २३। इतरशब्देन रजोहर-णनिषद्योच्यते । ओघ० २३ ।

इयरेयर–इतरेतर , इतरेतरसयोग । उत्त० २३ ।

इरिआवहं–ईरणमीर्या, पथि ईर्या ईर्यापथं–गमनागमनम्। ओघ० ३७।

इरिआवहिए–ऐर्यापथिक , केवलयोगप्रत्यय कर्मबन्ध , क्रियास्थाने त्रयोदश क्रियास्थानम्। सम० २५।

इरितासमिती–जीवसरक्खणजुगमेत्ततरदिट्ठिस्स अप्पमादिणो सजमोवकरणुप्पायणणिमित्त जा गमणकिरिया सा। नि० चू० प्र० १६ आ।

इरिमंदिर–लक्ष्मीमन्दिरम् , लक्ष्म्यालयं, प्रभूतलक्ष्मीकम्। दश० ५८।

इरिया–ईरणमीर्या–गतिपरिणाम । उत्त० ५१४। वर्तनी। उप० मा० गा० ३६०। ईर्या–आचारप्रकल्पस्य द्वादशो भेद । आव० ६६०। ईर्या–गमनम् । भग० ३२३। ईर-णमीर्या–गमनमित्यर्थ । आचा० ३७४। ईर्या–आचारप्रक-ल्पस्य द्वितियश्रुतस्कन्धस्य तृतीयमध्ययनम्। प्रश्न० १४६। ईर्या–गमनं, ईर्याकार्यं कर्म । आव० २६५। ईर्या–गमनम्। भग० १०६।

इरियाइ–ईर्यादि, सयमविषया विराधना। ओघ० ८०।

इरियामि–ईरे–गच्छामि गोचरचर्यादिष्विति। उत्त० ४४५।

इरियावह–ईर्या–गमनं, तत्प्रधान पन्था ईर्यापथ । आव० ५७६।

इरियावहकिरिया–ईर्यापथक्रिया, या उपशान्तमोहादा-रभ्य सयोगिकेवलिनं यावदिति। सूत्र० ३०४।

इरियावहियं–ऐर्यापथिकी, ईर्या–गमनं तद्विषय पन्था–मार्गस्तत्र भवा, केवलकाययोगप्रत्यय कर्मबन्ध इत्यर्थ । भग० १०६। ईरणमीर्या–गतिस्तस्या पन्था यदाश्रिता सा भवति तस्मिन् भवमध्यात्मादित्वाट्ठकि ऐर्यापथिक, पथिस्थर्ट्ठि छच्चैर्यापथिकम्। उत्त० ५९५।

इरियावहिया–ईर्यापथक्रिया, क्रियायास्त्रयोदशो भेद । आव० ६४८। ईर्यापथिकी–विंशतिक्रियामध्ये विंशति-तमा। आव० ६१२। ऐर्यापथिकी–गमनप्रधान पन्थाः ईर्यापथस्तत्र भवा। आव० ५७३। ईर्यापथिकी–चङ्क्रमण-क्रिया। बृ० तृ० २७ अ।

इरियासमिइ–ईर्यासमिति –निरवद्यप्रवृत्तिरूपा । प्रश्न० १४३। ईर्यासमिति –आवश्यकायैव सयमार्थं सर्वतो युग-मात्रनिरीक्षणायुक्तस्य शनैर्न्यस्तपदा गति । तत्त्वा० ९-५।

इरियासमिए–ईरण-गमनमीर्या तस्या समितो–दत्तावधान पुरतो युगमात्रभूभागन्यस्तदृष्टिगामीत्यर्थ । आचा० ४२८।

इला–हिमवते चतुर्थकूट । ठाणा० ७१। धरणेन्द्रस्य महि-षीनाम। भग० ५०४।

इलाइपुत्त–ससवेग । (मर०)।

इलादेवया–इलादेवता, इलावर्द्धननगरदेवता। आव० ३५९ ।

इलादेवी–पश्चिमरुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। पुष्पचूलाया पञ्चममध्ययनम्। निर० ३७। पाश्चात्यरुचक-वास्तव्या प्रथमादिक्कुमारीमहत्तरिका। ज० प्र० ३९१।

इलादेवीकूडे– इलादेवीकूटं, क्षुल्लहिमवत्कूट. । जं० प्र० २९६ । इलादेवीदिक्कुमारीकूटम् । जं० प्र० ३८१ ।

इलापुत्तो– इलापुत्र, इलावर्द्धननगरसार्थवाहीपुत्र । आव० ३५९ । तीर्थकराचार्यव्यतिरिक्तेभ्य श्रुत्वा प्रतिबुद्ध । सूत्र० १७२ ।

इलावद्धणं–इलावर्द्धन, नगरविशेष । आव० ३५९ ।

इलिआगई–इलिकागति, गत्यंतरगतिविशेष । विशे० २४४ । भग० ८४ । ठाणा० ८९ । आव० ३६३ ।

इलिएण । नि० चू० प्र० १६ अ ।

इलिका– धान्यकीट । भग० ८४ । धान्यजन्तुविशेष । आव० ३६३ ।

इलू–धान्यविशेष । नि० चू० तृ० १४९ अ ।

इष्टकापाकः–यत्रेष्टका पच्यन्ते तत् । जीवा० १२४ ।

इसत्थं–प्राकृतशैल्या इपुशास्त्रं–नागबाणादिदिव्यास्त्रादिसूचक शास्त्रम् । जं० प्र० १३८ ।

इसत्थे । नि० चू० प्र० २६७आ ।

इसि–ऋषय –गणधरव्यतिरिक्ता शेषा जिनशिष्या । मुनय यतयो वा । सम० १५९ । त्रिकालदर्शनिन । राज० ४६ ।

इसिगणिया – ऋषिगणितदेशवास्तव्या देवानन्दादासी । भग० ४६० ।

इसिच्चेव–वाणवंतरपणपन्निदा । ठाणा० ८५ ।

इसिज्झयं-ऋषिध्वज–मुनिचिह्न रजोहरणादि । उत्त० ४७८ ।

इसितडागं – ऋषितडाक, तोसलिनगरे सर । बृ० द्वि० २५७ अ ।

इसितलागं । बृ० द्वि० १३६ अ ।

इसिदासे–ऋषिदास, अनुत्तरोपपातिकदशाना तृतीयवर्गस्य तृतीयमध्ययनम् । अनुत्त० २ ।

इसिदिण्णं-ऋषिदिन्नम्, ऐरवते पंचमजिननाम । सम० १५३ ।

इसिपब्भारा–सिद्धशिलानाम । सम० २२ ।

इसिभद्द–आलभिकाया श्रमणोपासकविशेष । भग० ५५० ।

इसिभासिआ–ऋषिभाषिता । आव० ६१ ।

इसिभासिय । बृ० ३५ अ ।

इसिभासियाइं- ऋषिभाषितानि, उत्तराध्ययनादीनि । विशे० ९३१ । आव० ३०९ । ऋषिभाषितं–उत्तराध्ययनादि । सूत्र० ३८६ ।

इसिया–मुञ्जागर्भभूता शलाका । सूत्र० २७९ ।

इसिवज्झा–ऋषिवध्या–ऋषिहत्या । उत्त० ४४० ।

इसिवाइंदा–वाणमन्तरविशेष । ठाणा० ८५ ।

इसिवाइय–ऋषिवादिक, वाणमन्तरविशेष । प्रज्ञा० ९५ । व्यन्तरनिकायानामुपरिवर्त्तिनो वाणव्यन्तरजातिविशेषा । प्रश्न० ६९ ।

इसिवालए–वाणव्यंतरऋषिपालेन्द्र । ठाणा० ८५ ।

इसिवाले – ऋषिपाल, उत्तरऋषिवादिकव्यन्तराणामिन्द्र । प्रज्ञा० ९८ ।

इसिवालो – तोसलिवासिना क्रीत उज्जयिनीकुत्रिकापणाधिप. सुर । बृ० द्वि० २६७ आ । पंचमवासुदेवपूर्वभवनाम । सम० १५३ ।

इसिवुड्ढी–ऋषिवृद्धि, ब्रह्मदत्तस्याष्टाग्रमहिषीणा मध्ये सप्तमी राज्ञीनाम । उत्त० ३७९ ।

इसी–ऋषि, विशिष्टतपश्चरणोपेतो महर्षि । सूत्र० २९८ । दक्षिणऋषिवादिकव्यन्तराणामिन्द्र । प्रज्ञा० ९८ । पश्यतीति अतिशयज्ञानी । औप० ७८ । सुविहित । ओघ० २२२ ।

इसु–इषु, शर । दश० १८ । इषु –ज्याविष्कम्भयोर्वर्गविशेषमूल विष्कंभाच्छोध्यं शेषार्धम् । तत्त्वा० ३–११ ।

इसुसत्थं–इषुशास्त्रम्, बाणकला । आव० ३९२ ।

इस्सरियं-ऐश्वर्य–प्रभुत्व, द्रव्यादिसमृद्धिर्वा । उत्त० ४७४ ।

इस्सरे–भूतेन्द्रविशेष । ठाणा० ८५ ।

इस्सा – ईर्ष्या । आव० ४१० । परगुणासहनम् । उत्त० ६५६ ।

इहत्थे–इहार्थ ईहास्थो वा । ठाणा० २४८ ।

इहरा–इतरथा, अन्यथा । पिण्ड० १८१ । अन्यथा । आव० २६० ।

इहलोगइया–मणुस्सा । नि० चू० द्वि० ७१ आ ।

इहलोकभते – इहलोकभयं–मनुष्यादिकस्य सजातीयादन्यस्मान्मनुष्यादेरेव सकाशाद्यद्भयम् । ठाणा० ३८९ । यत्सजातीयाद् भयम् । सम० १३ । इहलोके भय स्वभावाद् यत् प्राप्यते । आव० ४७२ । स्वजातीयात् मनुष्यादेर्मनुष्यादिकस्यैव भयम् । प्रश्न० १४३ ।

इहलोगसंवेगणी–संवेगनीकथाया प्रथमभेद, इहलोक – मनुष्यजन्म, तत्स्वरूपकथनेन संवेगनी । ठाणा० २१० ।

इहलोगासंसप्पओगे – इहलोकाससाप्रयोग', इहलोक.– मनुष्यलोकस्तस्मिन्नाशसा–अभिलापप्रयोग'। आव० ८३९।

इहलोगो–इहलोक', मनुष्यलोक। आव० ८४०।

इहलोयभयं – इहलोकभयं–मनुष्यादिसजातीयादन्यस्मान्मनुष्यादेरेव भयम्। आव० ६४५।

इहलोयसंवेयणी–इहलोकसवेजनी, सवेजनीकथायास्तृतीयो भेद। दश० ११२।

इहेहे–वि'साभिधानं सम्भ्रमख्यापनार्थं, यदि वा इहेति लोके इहेत्यस्मिन् मृत्यौ। उत्त० ४०९।

ई

ईइ–ईति, गङ्करिकादिरुपा। जीवा० १८८।। जं० प्र० २९।

ईति – दुरितविशेष। भग० ८। धान्याद्युपद्रवकारिशलभमूषकादिः। जं० प्र० ६६।

ईती–ईति –धान्याद्युपद्रवकारी प्रचुरमूषकादिप्राणिगण। सम० ६२।

ईप्सितप्रतीप्सित–व्यवहारविशेष। विशे० ६२४।

ईरियट्ठा–ईर्याविशुद्धयर्थम्। ठाणा० ३६०।

ईरिया–गमन। ठाणा० ३४३। ईरणमीर्या–गतिपरिणाम.। उत्त० ५२४।

ईरियावहिया–ऐर्यापथिकीक्रिया, योगमात्रज कर्मबन्ध'। आव० ६१२। ईर्या–गमनं तत्प्रधान पन्था–मार्ग ईर्यापथस्तत्र भवमैर्यापथिकं– केवलयोगप्रत्ययं कर्म्म। भग० ३८५। आव० ६४८, ६४९।

ईरियावहियाकिरिया – ईर्यापथिकक्रिया–यदुपशान्तमोहादेरेकविधकर्म्मबन्धनमिति। ठाणा० ३१६।

ईरियासमिइ– ईर्यासमिति, ईर्याया समिति, ईर्याविषये एकीभावेन चेष्टनम्। आव० ६१५। रथशकटयानवाहनाक्रान्तेषु मार्गेषु सूर्यरश्मिप्रतापितेषु प्रासुकविविक्तेषु पथिषु युगमात्रदृष्टिना भूत्वा गमनागमनं कर्त्तव्यम्। आव० ६१५।

ईर्याप्रत्ययं–ईरणमीर्या–गमन तेन जनितम्। सूत्र० १२।

ईर्याप्रथप्राप्ताः–योगसयमप्राप्ता। तत्त्वा० ९–४८।

ईर्याविशुद्धि–ईर्या–गमनं तस्या विशुद्धिर्युगमात्रनिहितदृष्टित्वम्। ठाणा० ३६०।

ईलिकागतिः–गतिविशेष'। प्रज्ञा० १५१। नंदी० १५३।

ईली–करवालविशेष। प्रश्न। ४८।

ईश्वरकारणिकः–क्रियावादिद्वितीयविकल्प। सम० ११०।

ईश्वरकारणिनः–क्रियावादिद्वितीयविकल्प। ठाणा० २६८।

ईश्वरपुत्रः–इभ्याना पुत्र ईश्वरपुत्र। नंदी २५८।

ईश्वरवादिनः। आव० ८१६।

ईषत्कुटिला–कुण्डलीभूता। जं० प्र० ११३।

ईषा–गात्रविशेष। जं० प्र० ५५। राज० ९३।

ईसक्खो–ईशाख्य, ईशनमैश्वर्यमात्मन' ख्याति अन्तर्भूतण्यर्थतया ख्यापयति–प्रथयति य स'। जीवा० २१७।

ईसत्थ–इषुशास्त्रम्, धनुर्वेद'। आव० १२९। प्रश्न० ९७। धणुवेदादि–धनुर्वेदादि। नि० चू० तृ० २० आ।

ईसत्थसत्थरहच्चरियाकुसलो – इष्वस्त्रशस्त्ररथचर्याकुशल। उत्त० २१८।

ईसर – ईश्वर, भोगिकादि अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा। जं० प्र० १२२। लवणे उत्तरपातालकलश.। ठाणा० ४८०, २२६। प्रभुरमात्यादि। अन्त० १६। स्फातिमान्। जीवा० ३६५। युवराजादिः भोगिको वा। प्रश्न० ९६। भोगिकादि, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा। जीवा० २८०। वृ० तृ० २५५ आ। युवराज, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्त। औप० ५८। प्रज्ञा० ३३०, ३२७। महेश्वर'। प्रश्न० ३३। प्रधान, प्रभु, स्वामी। आव० ५०२। भूतवादिकव्यन्तरेन्द्र। प्रज्ञा० ९८। 'ईश ऐश्वर्ये' ऐश्वर्येण युक्त ईश्वर, सो य गामभोतियादि। नि० चू० प्र० २७० अ। गृहस्वामी। आचा० ४०३, ३७०। द्रव्यपति। उत्त० ३५३। युवराजो माण्डलिकोऽमात्यो वा, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्त ईश्वर। ठाणा० ४६३। युवराज सामान्यमण्डलिकोऽमात्यश्च। अनु० २३। युवराज। भग० ३१८। युवराजादय्। भग० ४६३। औप० १४। युवराजा। राज० १२१।

ईसरस्स–पातालकलश'। सम० ८७।

ईसरा–ईश्वरा, युवराजा, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्ता। जं० प्र० १९०।

ईसरिए–ऐश्वर्य, मदस्य षष्ठ स्थानम्। आव० ६४६।

ईसरी–ईश्वरी, सोपारके श्राविकाविशेष। आव० ३०४।

ईसा – ईशा, पिशाचकुमारेन्द्रस्याभ्यन्तरिका पर्षत्। जीवा० १७१। ईश्वरी–लोकपालाग्रमहिषीणा आद्या पर्षद्। ठाणा०

१२७। ईर्ष्या–प्रतिपक्षाभ्युदयोपलम्भजनितो मत्सरविशेष। आव० ६११।

ईसाण–ईशान –ईशानावतंसकाभिधविमानोपलक्षित द्वितीयकल्प। अनु० ९२।

ईसाणवडिंसए–ईशानावतंसक, ईशानकल्पमध्येऽवतंसक। जीवा० ३९१।

ईसाणवडेंसए–ईशानकल्पेन्द्रविमानं। भग० २०३।

ईसाणा–ईशानदेवलोकनिवासिन ईशाना, द्वितीयो देवलोक। प्रज्ञा० ६९। पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। ठाणा० १३३।

ईसाणी–पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। भग० ४९३। ऐशानी ईशानकोण, पूर्वोत्तरमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

ईसाणे–द्वितीयकल्पेन्द्र.। ठाणा० ८५। अहोरात्रस्यैकादशमुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। एकादशमुहूर्तनाम। जं० प्र० ४९१। देवलोकविशेष'। आव० ११५।

ईसिं–ईषत्, मनाक्। जीवा० १८१।

ईसिं ओट्ठवलंबिणी–ईषदोष्टावलम्बिनी, ईषत्–मनाक् तत. परम्परमास्वादतया झटित्येवाग्रतो गच्छति ओष्टेऽवलम्बते–लगतीत्येवशीला। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिं ओणयकाओ–ईषदवनतकाय। आव० २१६।

इसिं तंवच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, ईषत्–मनाक् ताम्रे अक्षिणी क्रियेते अनयेति। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिंपब्भारगओ – ईषत्प्राग्भारगत – ईषदवनतकाय। आव० २१६।

ईसिं वोच्छेदकडुई – ईषद्व्युच्छेदकटुका, ईषत्–मनाक् पानव्यवच्छेदे सति तत ऊर्ध्वं कटुका एलादिद्रव्यसम्पर्कत उपलक्ष्यमाणतिक्तवीर्येति। प्रज्ञा० ३६४। जीवा ३५१।

ईसि–ईषत्, मनाक्। प्रज्ञा० ९१। आव० ८५७। ईषत्प्राग्भारानाम। प्रज्ञा० १०७। सिद्धशिलानाम। रत्नप्रभाद्यपेक्षया ह्रस्वत्वाद् ईषत्। ठाणा० ४४०। सम० २२।

ईसिगि–मरस्सछल्ली–त्वक्। नि० चू० तृ० ६३ आ।

ईसिपंचहस्सक्खरुच्चारणद्धा–अयोगिकालमान। उत्त० ५७७। ईषदिति–स्वल्प प्रयत्नापेक्षया पञ्चानां ह्रस्वाक्षराणां अइउऋऌइत्येवंरूपाणामुच्चरणमुच्चारो भणनं तस्याद्धा–कालो यावता न उच्चार्यन्त। उत्त० ५९६।

ईसिपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, ईषद्भाराक्रान्तपुरुषवन्नता अन्तेष्विति। अनु० ९२। सिद्धशिलानाम, प्राग्भारस्य ह्रस्वत्वादीषत्प्राग्भारा। ठाणा० ४४०। सम० २२। सिद्धशिला आव० ६००।

ईसी ओट्ठावलंबिणी–ईषदोष्टावलम्बिनी, ईषद् ओष्ठमवलम्बते–तत परमतिप्रकृष्टास्वादगुणरसोपेतत्वात् झटिति परत प्रयाति। जीवा० ३५१।

ईसी तंवच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, किंचिन्नेत्ररक्तताकरणी। जीवा० ३५१।

ईसीपब्भारगए–ईषत्प्राग्भारगत'। आव० ६४८।

ईसीपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, सिद्धभूमि। आव० ४४२। अष्टमभूमि, अन्त्याभूमि। आव० ६००। पञ्चचत्वारिंशद् योजनलक्षायामविष्कम्भप्रमाणा शुद्धस्फटिकसंकाशा सिद्धशिला। प्रज्ञा० २२८। ईषद्–अल्पो रत्नप्रभाद्यपेक्षया प्राग्भार उच्छ्रयादिलक्षणो यस्या सा। ठाणा० २५१। सिद्धशिला प्रज्ञा० १०७। ईषत्–अल्पो योजनाष्टकबाहल्यपञ्चचत्वारिंशल्लक्षविष्कम्भात् प्राग्भार पुद्गलनिचयो यस्या सा ठाणा० १२५।

ईसेणिआ–ईसिनिका। जं० प्र० १९१।

ईहइ–ईहते–पर्यालोचयति। आव० २६।

ईहते–पूर्वापराविरोधेन पर्यालोचयति। नंदी २५०।

ईहा – अन्वयधर्मघटनप्रवृत्तश्चापायाभिमुख एव बोध विशे० १७०। सदर्थविशेषालोचन। भग० ३४४। सदर्थाभिमुखा ज्ञानचेष्टा। भग० ६३३। 'ईहचेष्टायाम्' ईहनमीहा सतामन्वयिना व्यतिरेकिणा चाऽर्थानां पर्यालोचना। विशे० २२६। वितर्क। सम० ११५। अवग्रहादुत्तरकालमवायात्पूर्वं सद्भूतार्थविशेषोपादानाभिमुखोऽसद्भूतार्थविशेषपरित्यागाभिमुख –प्रायोऽत्र मधुरत्वादय. शङ्खादिशब्दधर्मा दृश्यन्ते न खरकर्कशनिष्ठुरतादय शार्ङ्गादिशब्दधर्मा इत्येवंरूपो मतिविशेष। नंदी १६८। ईहनमीहा–सदर्थपर्यायलोचनम्। नंदी १८९। ईहनमीहा–सतामर्थानामन्वयिना व्यतिरेकिणा च पर्यालोचना। आव० १८। तदवगृहीतार्थविशेषालोचनम्। आव० ९। ईहनमीहा–सद्भूतार्थपर्यालोचनरूपा चेष्टा। प्रज्ञा० ३१०। नंदी १६८। किमिदमित्यवगृहीतान्यथेत्येव सदर्थालोचनाभिमुखा मति चेष्टा। औप० ९९। सदर्थपर्यालोचनात्मिका। दश० १२६। अवगृहीतार्थस्यैकदेशाच्छेषानुगमनं। निश्चयविशेषजिज्ञासा। तत्त्वा-

१ – १५। अवग्रहार्थगतासद्भूतसद्भूतविशेषालोचनम्। राज० १३०।

ईहामिग–ईहामृग.-वृक। भग० ४७८। जं० प्र० ४३। जीवा० १९९। नाट्यविधिविशेष। जीवा० २४६। जं० प्र० ४१५। आटव्य पशु। आचा० ४२३।

ईहामिय–ईहामृगा–वृका। राज० २८।

उ

उंछं–उञ्छ–भक्तं। ओघ० १५४। अन्यान्यवेश्मत स्वल्प स्वल्पमामीलनात्। उत्त० ६६७। जुगुप्सनीयं, गर्ह्यम्। सूत्र० १०८। भैक्ष्यम्। सूत्र० ७४। अल्पाल्पम्। प्रश्न० १११। छादनाद्युत्तरगुणदोषरहित.। आचा० ३६८। अज्ञातपिण्डोञ्छसूचकत्वादिति साधोरुपमानम्। दश० १८। एषणीय.। आचा० ३७६। उञ्छ्यते–अल्पाल्पतया गृह्यत इति, भक्तपानादि। ठाणा० २१३।

उंछवित्ती–उञ्छवृत्ती–कणयाचनवृत्ति। आव० ७०५। व्य० द्वि० ३५९ अ।

उंछविही–कणयाचनवृत्ति। आव० ७०५।

उंजणं–अवमं(स)तुअण। दश० चू० ६९।

उंजण–उञ्जनम्। उत्सेचनम्। दश० २२८, १५४।

उंजायणा–वासिष्ठगोत्रस्य नामविशेष। ठाणा० ३९०।

उंजेज्जा–उत्सिञ्चेत्। दश० १५४।

उंडअ–उण्डक, पिण्डक। ओघ० २९।

उंडगं–उन्दकम्, स्थण्डिलम्। दश० १५६।

उंडत्तं–उद्वेध। ठाणा० ५२५।

उंडया–ग्रन्थय.। नि० चू० प्र० २४५ आ।

उंडिं–मुद्राम्। व्य० द्वि० १६७ आ।

उंडिका–मुद्रा। बृ० प्र० ३३ अ।

उंडुअं–उन्दुकम्–स्थानम्। दश० १७०। बृ० प्र० २०२ अ।

उंडेरगा। नि० चू० द्वि० १२५ आ।

उंडेरय–वटकाः। आव० ६८०।

उंदर-उन्दुर.। प्रश्न० ८।

उंदु–उन्दु–मुखम्। अनु० २९।

उंदुर – उन्दुर –मूषक। ओघ० १२६। आव० ६४१। उत्त० १०९। नि० चू० द्वि० २२ अ।

उंदुरुक्कं–मुखेन वृषभादिशब्दकरणम्। अनु० २९।

उंदोइयाए–अडोलिया, यवनृपतिदुहिता। बृ० प्र० १९१ अ।

उंबर–उदुम्बर., बहुबिजकवृक्षविशेष। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३। चतुर्थभवनवासिदेवस्य वृक्ष। ठाणा० ४८७। उम्बर। व्य० द्वि० ३६२ अ। गिहेलुको। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उंबरदत्त–उदुम्बरदत्त, दुःखविपाके सप्तममध्ययनम्। विपा० ७८। पाटलखण्डनगरे सागरदत्तसार्थवाहसुत। विपा० ७४। जक्षविशेष। विपा० ७४।

उंबरमंथुं–चूर्णविशेष। आचा० ३४८।

उंबरवच्चं–उंबरस्स फला जत्थ गिरिउडे उच्चविज्जंति तं उंबरवच्च भण्णति। नि० चू० प्र० १९२ आ।

उंबरिय–वृक्षविशेष। भग० ८०३।

उंबरो–उदुम्बरदत्त, सार्थवाहसुत, दुःखविपाकाना सप्तममध्ययनम्। विपा० ३५।

उ–उपयोगकरणे। आव० ४४९।

उअत्तं–उत्तीर्णम्। नि० चू० प्र० ३४५ आ।

उअरदंते–उदरदान्त –येन वा तेन वा वृत्तिशील। दश० २३३।

उआहणित्ता–उपाहृत्य, समीपमानीय। दश० ५९।

उइंति–उद्यन्ति, उदयं यान्ति। उत्त० ४८६।

उइओदए–उदितोदय, सिद्धौ कायोत्सर्गफलमिति दृष्टान्ते राजा। आव० ८००।

उइज्जंति–उदीर्यन्ते, उद्रेकाऽवस्थां नीयन्ते। आव० ५६८।

उइण्णा–अवतीर्णा। उत्त० ३००।

उइन्न–उदीर्ण –विपाकापन्न। आचा० १५१।

उईरयं–उदीरक–प्रवर्त्तकम्। प्रश्न० ८६।

उईरयइ–उदीरयति–अन्यान् वातान् जलमपि चोत्–प्राबल्येन प्रेरयति। जीवा० ३०७।

उउ–उत। नि० चू० प्र० ३४८ अ। ऋतु। भग० ५४३। ऋतु–रक्तरूप, शास्त्रप्रसिद्धो वा। रक्तप्रवृत्तिलक्षण। ठाणा० ३१३।

उउबद्ध–ऋतुबद्ध उच्यते शीतकाल उष्णकालश्च। ओघ० ११८। ऋतुबद्ध। आव० १८९। शीतोष्णकालयो। ओघ० २०५। शीतोष्णकालो मिलितौ चैव भण्यते। ओघ० १३१।

उउबद्धपीढफलगं– य पक्षस्याभ्यन्तरे पीठफलकादीना बन्धनानि मुक्त्वा प्रत्युपेक्षणा न करोति यो वा नित्या-

वस्तृतसंस्तारकः सोऽवद्धपीठफलकः तम्। व्य० प्र० १६४ अ। जो य पक्खस्स पीढफलिगादियाण बंधे मोतु पडिलेहणं ण करेति सो सजओ उउवद्धपीढफलगो अधवा णिच्चत्थणिय-संथारगा णिच्चुत्थरियसंथारगो य उउवद्धपीढफलगो भण्णति। नि० चू० द्वि० ९१ अ।

उउवद्धोग्गहो–ऋतुवद्धावग्रह। नि० चू० प्र० २३९ अ।

उउपरियट्ट–ऋतुपरिवर्त्त–ऋत्वन्तरम्। आचा० ३२७।

उउय–ऋतुज–कालोचित। प्रश्न० १६२।

उउसंधी–ऋतुसन्धि–ऋतो पर्यवसानम्। आचा० ३२७।

उऊ–ऋतु, मासद्वयमान। भग० २११। ऋतु। आचा० ३२७।

उऊसंवच्छरे–ऋतवो–लोकप्रसिद्धा वसन्तादय तद्व्यव-हारहेतु संवत्सर ऋतुसंवत्सर, तृतीयप्रमाणसंवत्सर। जं० प्र० ४८७।

उएट्टे–शिल्पे चतुर्थभेद। अनु० १४९।

उक्कट्टणं–गाढतरम्। नि० चू० प्र० ११५ अ।

उक्कंचण–ऊर्ध्वं कंचनमुत्कचनं–हीनगुणस्य गुणोत्कर्षप्रति-पादनम्। उत्कोचा। राज० ११५।

उक्कंचणदीव–ऊर्ध्वदण्डव्रत। भग० ५४८।

उक्कंचणया–उत्कञ्चनता–मुग्धवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविद-ग्धचित्तरक्षार्थं क्षणमव्यापारतयाऽवस्थानम्। औप० ८१। मुग्धवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविदग्धचित्तरक्षणार्थं क्षणमव्या-पारतया अवस्थानम्। राज० ७९।

उक्कंतो–उत्क्रान्त, आयु क्षयेण मृत। उत्त० ४६०। उत्कृत–त्वगपनयनेन छिन्न। उत्त० ४६०।

उक्कंबिओ–वंशादिकम्बाभिरवबद्ध। आचा० ३६१।

उक्क–उल्का। व्य० द्वि० २४१ अ। गगनाग्नि। दश० १५४।

उक्कइयकरणं–सिव्वण, तुण्णण। नि० चू० प्र० १२४ अ।

उक्कच्छिय–आर्यिकाणा त्रयोदशमेऽोपधौ एकादशी। ओघ० ३०९।

उक्कच्छिया–कच्छाए समीव उवकच्छ, न छादयंतीति। नि० चू० प्र० १८० अ।

उक्कज्जिय–उड्डायत। नि० चू० तृ० ७९ अ।

उक्कडं–उत्कटं–उपेतम्। जं० प्र० २०५। दुष्कृतम्। आव० ७८२। प्रचुर। आव० ७७८।

उक्कडुअ–उत्कटुकानि, यथास्थानमनिविष्टानि। जं० प्र० १७०।

उक्कडुआसणिए–उत्कुट्टुकासन–पीठादौ पुतालगनेनोपवेशन-रूपमभिग्रहतो यस्यास्ति स। ठाणा० २९८।

उक्कड्डग–अपकर्षक, यो गेहाद्ग्रहणं निष्काशयति, चौरान् वा आकार्य परगृहाणि मोषयति, चौरपृष्टवहो वा। प्रश्न० ४७।

उक्कड्डियं–उत्कर्षितम्–उत्पाटितम्। पिण्ड० ११६।

उक्कत्थणं–उत्कत्थनं–त्वचोऽपनयनम्। प्रश्न० २४।

उक्कम–उत्क्रम, पश्चानुपूर्वीभवनम्। विशे० १६। उत्क्रम। विशे० १७४।

उक्कमणअणाभोगकिरिया–उत्क्रमणानाभोगक्रिया, लङ्घ-नप्लवनधावनासमीक्ष्यगमनागमनादिक्रिया। आव० ६१४।

उक्करं–उत्कर–क्षेत्रगवादि प्रति अविद्यमानराजदेयद्रव्यम्। विपा० ६३।

उक्करियाभेदे–उत्करिकाभेद–द्रव्यस्य पञ्चमभेद। प्रज्ञा० २६७।

उक्करिसियखग्गो–आकृष्टखड्ग.। आव० ५५४।

उक्कलंविज्जिउं–उल्लम्बयितुम्। आव० २२०।

उक्कलंवेइ–अवलम्बयति। आव० ४२६। उद्बध्नाति। नि० चू० द्वि० ५२ आ।

उक्कलंवेति–उद्बंधेति। नि० चू० प्र० ११८ अ।

उक्कल–उत्कल–ऊर्ध्वं वर्म कलाया यत्तत्। प्रश्न० २७। उत्कल–प्रदेशविशेष, नैमित्तिकविशेष। आचा० ३५९। नैमित्तिक। आचा० ३५९। त्रीन्द्रियजीवभेद। उत्त० ६९५।

उक्कलति–उत्कलति–उच्छलति। उत्त० १२४।

उक्कला–उत्कटा, उत्कला वा। ठाणा० ३४३।

उक्कलिया–उत्कलिका–लघुतर समुदाय। औप० ५७। भग० ४६३। त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२। उत्साह। सूर्य० २९६। लघुतर समुदाय। भग० ११५।

उक्कलियाअंडं–वक्खोडलियाअंडग। दश० चू० १२१।

उक्कलियावाउ–उत्कलिकावात, वादरवायुकायभेद। आचा० ७४।

उक्कलियावाए–उत्कलिकाभि प्रचुरतराभि सम्मिश्रितो यो वात उत्कलिकावात। प्रज्ञा० ३०। जीवा० २१।

उक्कलियावाया–उत्कलिकावात, उत्कलिकाभिर्यो वाति स । भग० १९६ । ये स्थित्वा स्थित्वा पुनर्वान्ति । उत्त० ६९४ ।

उक्कस–उत्कर्ष –औद्धत्यम् । दश० १८९ ।

उक्कसणं–उदगतेण प्रेरण । नि० चू० तृ० ६३ आ ।

उक्कसाई–उत्कषायी–प्रबलकषायी । उत्त० ४२० ।

उक्कसाहिज्जा । आचा० ३७८ ।

उक्कसिस्सामि–लघु सदपरशकललगनत उत्कर्षयिष्यामि । आचा० २४४ ।

उक्कसे–उत्कर्षेत्–उत्क्रामयेत् । आचा० २९३ ।

उक्कस्स–उत्कर्षन्तीत्युत्कर्षा –उत्कर्षवन्त, उत्कृष्टसङ्ख्या', परमानन्ता' । ठाणा० ३५ ।

उक्का–उल्का–चुडुली । जीवा० २९ । ये मूलाग्नितो विच्युत्य विच्युत्याग्निकणा प्रसर्पन्ति ते । जीवा० १२४ । महद्रेखा प्रकाशकारिणी, रेखारहितो विस्फुलिङ्ग प्रभाकरो वा । आव० ७५२ । दीपिका । नंदी ८४ । चुडुली । आव० ५६६ । निपतन् रेखायुक्तो ज्योतिष्पिण्ड । ओघ० २०५ । स्वदेहवर्णा रेखा कुर्वन्ती या पतति सा रेखाविरहिता वा उद्द्योत कुर्वन्ती पतति सा । आव० ७३५ । गगनाग्निज्वाला । जं० प्र० ५२ । चुडुली । प्रज्ञा० २९ । पगासविरहितो य, महंतरेहा पहा । नि० चू० तृ० ७५ आ । सदेहवण्ण रेहं करेंती जा पडइ सा उक्का, रेहविरहिता वा उज्जोतं करेंती पडती सा वि उक्का । नि० चू० तृ० ७० अ । अग्निपिण्डा । ठाणा० ४२० । आकाशजा । ठाणा० ४७६ ।

उक्कापडणं–उल्कापातनम्, उल्कापात । आव० ७३५ ।

उक्कापाए–उल्कापात –व्योम्नि समूर्च्छितज्वलननिपतनरूप' । जीवा० २८३ ।

उक्कापाय–उल्कापात, सरेख मोद्द्योतो वा तारकस्येव पात । भग० १९६ ।

उक्कामयंति–उत्क्रामयन्ति–अपनयति । दश० ८६ ।

उक्कामुहदीवे–अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

उक्कामुहा–उल्कामुखनामैकविंशतितमोऽन्तरद्वीप । प्रज्ञा० ५० । अन्तरद्वीपविशेष । जीवा० १४४ ।

उक्कारियभेय–उत्कारिकाभेद, एरण्डबीजानामिव यो भेद । भग० २२४ ।

उक्कालिए–उत्कालिकं–कालवेलावर्जं पठ्यते तदूर्ध्वं कालिकादित्युत्कालिक–दशकालिकादि । ठाणा० ५२ । कालवेलावर्जं पठ्यते तत् । नंदी २०४ ।

उक्कावाते–उल्का–आकाशजा तस्या' पात उल्कापात । ठाणा० ४७६ । व्योमसम्मूर्च्छितज्वलनपतनरूप. प्रसिद्ध एव । अनु० १२१ ।

उक्कासे–उत्कर्षणं, उत्काशनं वा । भग० ५७२ ।

उक्कट्टणा–सूत्रार्थकथनम् । बृ० तृ० २५ अ । उत्कीर्तना–सशब्दना । आव० ५६ ।

उक्किट्ठ–उत्कृष्ट'–उत्कृष्टिनाद, आनन्दमहाध्वनि. । प्रश्न० ४९ । प्रधाना कर्षणनिषेधाद्वा । भग० ५४४ । उत्कृष्टि'–आनन्दध्वनि । जं० प्र० २०० । उत्कृष्टि.–आनन्दमहाध्वनि । भग० ११५ । उत्कृष्ट –उत्कर्षवती । भग० १६७ । उत्कृष्टम्–कालिङ्गालाबुत्रपुषफलादीना शस्त्रकृतानि श्लक्ष्णखण्डानि चिञ्चिणिकादिपत्रसमुदायो वा उदूखलकण्डित. । दश० १७० । दोद्धियकालिंगादीणि उक्खले छुब्भंति । दश० चू० १७९ ।

उक्किट्ठकलयलो–उत्कृष्टकलकल । आव० १७३ ।

उक्किट्ठरस–उत्कृष्टरस –प्रचुररसोपेत । पिण्ड० १४९ ।

उक्किट्ठि–उत्कृष्टि –आनन्दमहाध्वनि. । औप० ५९ । राज० १२२ ।

उक्किट्ठिसीहनादो–उत्कृष्टिसिंहनाद । आव० ३४५ ।

उक्किट्ठी–उत्कृष्टि । आव० ४१३ । उत्कर्षवशः । सूर्य० २८१ ।

उक्किण्णं–उत्कीर्णं–भुवमुत्कीर्य पालीरूपम् । सम० १३७ ।

उक्किण्णंतरा–उत्कीर्णान्तरा, उत्कीर्णमन्तरं यासा खातपरिखाना ता । जीवा० १५९ ।

उक्किण्ण–उत्कीर्ण –गुण्डित । प्रश्न० ५९ । उत्कीर्णमिवोत्कीर्णं, अतीवव्यक्तम् । जं० प्र० ७६ । आकीर्ण । प्रश्न० २५ । प्रज्ञा० ५६१ । ओघ० ५४ ।

उक्कित्तण–उत्कीर्त्तनम्, सामान्येन सशब्दनम् । आव० ६०४ । सशब्दनम् । विशे० ४४२ ।

उक्कित्तणा–उत्कीर्त्तना, प्राबल्येन–परया भक्त्या सशब्दना । आव० ४९२ ।

उक्कित्तिया–उत्कीर्तिना–कथिता । सूर्य० २९६ ।

उक्किन्नं–अतीवव्यक्तम् । प्रज्ञा० ८५ ।

उक्किन्नंतर–उत्कीर्णमन्तर यासां खातपरिखाणा ता उत्कीर्णानन्तरा । प्रज्ञा० ८५ ।

उक्किन्न–उत्कीर्ण–शिलादिषु नामकादि । दश० ८६ ।

उक्किरणगाइं–फलखायकककर्पर्दकादिविकिरणानि । बृ० द्वि० १५५ अ ।

उक्किरिज्जमाण–क्षुरिकादिभिः कोष्ठादिपुटाना कोष्ठादिद्रव्याणां वा उत्कीर्यमाण । जीवा० १९२ । उत्कीर्यमाण–क्षुरिकादिभि कोष्ठादिपुटाना कोष्ठादिद्रव्याणा वा उल्लिख्यमान । ज० प्र० ३६ ।

उक्किलंतो–उत्कलन् । आव० २०७ ।

उक्कीरमाण–उत्किरन्–वेधनकेन मध्याद्विकिरन् । अनु० २२३ ।

उक्कुंचणं–उत्कुञ्चनं, ऊर्ध्वं शूलाद्यारोपणार्थं कुञ्चनम् । सूत्र० ३२९ ।

उक्कुज्जिय–ऊर्ध्वकायमुन्नम्य । आचा० ३४४ ।

उक्कुट्टं । आचा० ३४२ ।

उक्कुट्टहत्थो – उक्कुट्ठ–सचित्तवणस्सतिपत्तकुरुफलाणि वा उक्खले छुब्भंति, तेहिं हत्थो लित्तो एम । नि० चू० प्र० ३८ अ ।

उक्कुट्ठि–उत्कृष्टि –हर्षविशेषप्रेरित । आव० २३१ ।

उक्कुट्ठिकलयलो–उत्कृष्टिकलकल । आव० १७५ ।

उक्कुट्ठिसीहणायं–उत्कृष्टिसिंहनादः, हर्षविशेषप्रेरितो ध्वनिविशेषः । आव० २३१ ।

उक्कुट्ठी–पुत्कारकरण । नि० चू० तृ० ६१ आ ।

उक्कुट्ठो–सचित्तवणस्सतिपत्तंकुरुफलाणि वा उक्खले छुब्भंति । नि० चू० प्र० ३८ अ ।

उक्कुड–उत्कुटुकासन । आव० ६४८ । ठाणा० २९९ ।

उक्कुडुअ–उत्कुटुकम् , यथास्थानमनिविष्टम् । भग० ३०८ । ओघ० १०७ । मुक्तासन । उत्त० ५५ । आधारे पुतालगनरूपम् । भग० १२५ । आचा० ४२८ ।

उक्कुडुगासण–उत्कुटुकासनम् , कायक्लेशभेद । दश० २८ ।

उक्कुडुती – उत्कुटुका–आसनालग्नपुत पादाभ्यामवस्थित उत्कुटुकस्तस्य या सा । ठाणा० ३०२ ।

उक्कुडुयभाणवत्थे–उत्कुटुकः सन् भाजनवस्त्राणि–गोच्छकादीनि प्रत्युपेक्षयेत् ,यतो वस्त्रप्रत्युपेक्षणा उत्कुटुकेनैव कर्त्तव्या । ओघ० ११७ ।

उक्कुडुयासणिए – कायक्लेशभेदः । भग० ९२१ । कायक्लेशद्वितीयभेदः । ठाणा० २९७ ।

उक्कुद्दइ–उत्कूर्दते–ऊर्ध्वं गच्छति । उत्त० ५५१ ।

उक्कुरुडिका–तृणभस्मगोमयाङ्गारादिमीलक । उत्त० ३५९ ।

उक्कुरुडिया–उत्कुरुटकः । आव० १९४ ।

उक्कूइय–उत्कूजित–कृताव्यक्तमहाध्वनि । प्रश्न० २० ।

उक्कूजियं – उत्कूजित – अव्यक्तमहाध्वनिकरणम् । प्रश्न० १६० ।

उक्कूलं–उत्कूलयति–सन्मार्गादपध्वंसयति कूलाद्वा–न्यायः सरित्प्रवाहतटादूर्ध्वं यत्तत् उत्कूलम् । द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदश नाम । प्रश्न० २६ ।

उक्केरो–उत्केरः–समूहः । ओघ० ११७, ११६, २१३ । स्थिरत्वादिवर्धनरूप उत्कोच –उद्वर्त्तना । विशे० १००६ ।

उक्कोचा–उत्कोचा–उत्कोटा, लञ्चा । औप० २ ।

उक्कोड-लचा । नि० चू० द्वि० ४५ अ ।

उक्कोडा–उत्कोटा–उत्कोचा–लञ्चा । विपा० ३९ । उत्कोचा, लञ्चा । औप० २ ।

उक्कोडालंच–उत्कोटालंचयो –द्रव्यस्य बहुत्वेतरादिभिर्लोके प्रतीतभेदयो । प्रश्न० ५६ ।

उक्कोडिय – उत्कोटा–लञ्चा तया चरन्ति उत्कोटिकाः । राज० २ ।

उक्कोस–उत्कृष्टत –अतिशयेन । ओघ० २२७ । उत्कर्षतीति उत्कर्ष , उत्कृष्ट । सूर्य० १३ । जात्यादिभिर्मदस्थानैर्लघुप्रकृतिं पुरुषमुत्कर्षयतीति उत्कर्षक –मानः । सूत्र० ६९ । उत्क्रोश –कुरर । प्रश्न० ८ । उत्कृष्टम्–कमनीयम् । दश० २११ ।

उक्कोसए–उत्कर्ष एव उत्कर्षका उत्कृष्ट । सूर्य० ११ । उत्कर्षिका उत्कृष्टा । सूर्य० १४ ।

उक्कोसए कुंभे–उत्कृष्टक कुम्भ –आढकशतनिष्पन्न । अनु० १५१ ।

उक्कोसकसिणं–शतसहस्रमूल्य । नि० चू० प्र० १३९ आ ।

उक्कोसगमयपत्तो–उत्कर्षेण मद प्राप्तः, उत्कर्षमदप्राप्त । जीवा० ३५१ ।

उक्कोसतिसामासा–जेट्ठो आसाढो य । नि० चू० प्र० १२३ आ ।

उक्कोसतिसामासे–उत्कृष्टतृण्मास –उत्कृष्टा तृड्मासयो – ज्येष्ठापाढयोर्यस्मिन् काले स । ओघ० २१० ।

उक्कोससंथरणं–उत्कृष्ट संस्तरणं–भिक्षार्थमवतीर्णास्तत पर्याप्त हिंडित्वा यावत् तृतीयपौरुष्या आदौ स्वाध्यायप्रस्थापनवेला तावत् सन्निवर्त्तते एतद्, अथवा तृतीयपौरुष्या आदौ स्वाध्यायप्रस्थापनवेलावान सन्निवर्त्तते एतद्। व्य० द्वि० १६३ आ।

उक्कोसा – उत्कर्ष.–प्रकर्ष तद्योगादुत्कर्षा उत्कर्षतीति वा उत्कर्षा–उत्कृष्टा। ठाणा० १३९।

उक्कोसेणं। अनु० १६३।

उक्खं–उक्ष–सम्बन्धो–विषयविषयीभावलक्षण । नदी ७१। सम्बन्धन–अन्यजनकभावलक्षणम्। ठाणा० ५०।

उक्खंदं–उत्कन्दम्। आव० १७५। अवस्कन्द । आव० ३००।

उक्खंधो–अवस्कन्द, छलेन परवलमर्दनम्। प्रश्न० ३८।

उक्खंपिर–उत्कण्ठित। (म०)।

उक्खड्डुमड्डा – देशीपदं, पुन पुन शब्दार्थे। व्य० प्र० ६५ आ।

उक्खणिहिति–उत्खनी । आव० २२६।

उक्खलं–स्थानविशेष.। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उक्खलि–उखा–स्थाली। पिण्ड० ८४।

उक्खिओ–सेवित । मर०।

उक्खित्त–उत्क्षिप्त, गेयविशेष.। जं० प्र० ४१२। उत्पाटितम्। विपा० ४७। भाजनगतम्। ओघ० ८८।

उक्खित्तचरए–उत्क्षिप्त–स्वप्रयोजनाय पाकभाजनादुद्धृतं तदर्थमभिग्रहविशेषाच्चरति–तद्गवेषणाय गच्छतीति उत्क्षिप्तचरक । ठाणा० २९८।

उक्खित्तचरगा–पिण्डैषणाभेदविशेष ।नि० चू०तृ० १२ अ।

उक्खित्तचरगो–उत्क्षिप्तचरक –उत्क्षिप्त–पाकपिठरादुद्धृतमेव चरति–गवेषयति य स । प्रश्न० १०६।

उक्खित्तणा – ज्ञाताया प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३। षष्ठाङ्गे प्रथम ज्ञातम्। उत्त० ६१४।

उक्खित्तणाए–षष्ठाङ्गे प्रथमज्ञात । सम० ३६। ज्ञाताया प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३।

उक्खित्तणिक्खित्तचरगा – पिण्डैषणाभेदविशेष । नि० चू० तृ० १२ अ।

उक्खित्तपुव्वा – उत्क्षिप्तपूर्वा –तेषामादौ दर्शिता यथाऽस्या वसत यूयमिति। आचा० ३६९।

उक्खित्तय–उत्क्षिप्तं–प्रथमत समारभ्यमाणम्। जीवा० २४७।

उक्खित्तविवेगो–उत्क्षिप्तविवेक । आव० ८५४।

उक्खित्ता–उत्क्षिता –सिक्ता.। जं० प्र० २२१।

उक्खित्तायं–उत्क्षिप्तक–प्रथमत समारभ्यमाणम्। जीवा० १९४।

उक्खित्तो–उत्क्षिप्त –कृत स्थापित.। आव० ४३३।

उक्खिविया–उत्क्षिप्ता। आव० ३७०।

उक्खु–वनस्पतिविशेष । भग० ८०२।

उक्खुलनियत्था – उखुलनिवसिना, विपर्यस्तवस्त्रा। बृ० द्वि० २५५ अ।

उक्खेव–उत्क्षेप –हस्तोत्पाटनम्। व्य० प्र० २३२ आ।

उक्खेवओ–उत्क्षेप –प्रारम्भवाक्यम्। निरय० २३।

उक्खेवग–उत्क्षेपक –वशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यदण्डमध्यभाग । भग० ४६८। शिष्याणामुत्क्षेपक । व्य० प्र० २३२ आ।

उक्खेवण–उत्क्षेपक –वशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यो दण्डमध्यभाग । ज्ञाता० ४८।

उक्खेवो – उत्क्षेप –प्रस्तावना। विपा० ५५। क्षेपणम्। ओघ० ११०।

उक्खो–परिधानवस्त्रैकदेश । बृ० प्र० १७७ अ। परिभाण, वत्थस्स अब्भितरचूलाए उवरि कण्णो णाभिहिज्ज उक्खा भण्णति। नि० चू० द्वि० १५४ अ।

उखंदचोरभएणं। नि० चू० प्र० २६० अ।

उखल–उदूखला। प्रश्न० ८।

उखलियं–पुटियाकार। नि० चू० द्वि० १ आ।

उखली–उदूखली। आव० ८५५।

उखा–स्थाली। भग० ३२६।

उखुत्तो–णिसण्णो। नि० चू० प्र० ७७ अ।

उगहणंतगो–योनिद्वाररक्षार्थक वस्त्रम्। ओघ० २०९।

उग्गं–उग्रम्–अप्रधृष्यम्। सूर्य० ४। भग० १२। ज्ञाता० ९।

उग्ग–उग्र –क्षत्रियपुरुषेण शूद्रस्त्रिया जात । आचा० ८। आदिदेवावस्थापिताऽऽरक्षकवंशजात । भग० ११५। आरक्षक । आव० १९८। आदिदेवेन य आरक्षकत्वेन नियुक्तस्तद्वंशजाः। औप० २६ । शुभाध्यवसायप्रबल ।

आव० ८०२। आरक्षिकाः। आचा० ३२७। आदिराजेनाऽऽरक्षकत्वेन ये व्यवस्थापितास्तद्वंश्य। ठाणा० ३५८। भगवतो नाभेयस्य राज्यकाले ये आरक्षका आसन्। ठाणा० ११४। आरक्षकादय। उत्त० ४१८। आदिदेवेनारक्षकत्वे नियुक्तास्तद्वंश्याः। भग० ४८१।

उग्गकुलं-उग्रकुलम्। आव० १७९।

उग्गच्छ-उद्गत्य-क्रमेण तत्रोद्गमनं कृत्वा। भग० २०७।

उग्गतवा-उग्रतपा.-अप्रधृष्यानशनादिवान्। सूर्य० ४। अष्टमादि। ठाणा० २३३। उग्रं-उत्कटं दारुण वा कर्मशत्रून् प्रति तप -अनशनादि। उत्त० ३६५।

उग्गतवित्ती-उग्गते आदिच्चे वित्ती जस्स सो, आदिच्च मुत्तीए जस्स वित्ती सो उग्गतवित्ती। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गतेय-उग्रतेजा -तीव्रप्रभाव, तीव्रविष। प्रश्न० १०७।

उग्गपुत्तो-उग्रपुत्र., क्षत्रियविशेषजातीय। सूत्र० २३६।

उग्गम-उद्गम -षोडशविध आधाकर्मादिदोष। प्रश्न० १५५। आधाकर्मादिदोषविशेष। आव० ५७६। उद्गमनमुद्गम -पिण्डादे प्रभव.। ठाणा० १५९।

उग्गमइ-आगच्छति। आव० ४२२।

उग्गमकोडी-उद्गमकोटि -उद्गमदोषरूपा। पिण्ड० १९७।

उग्गमितं-उद्गमितम्। आव० ८५९।

उग्गमोवघाते-उद्गमोपघात -उद्गमदोषैराधाकर्मादिभिः षोडशप्रकारैर्भक्तपानोपकरणालयानामशुद्धता। ठाणा० ३२०।

उग्गय-उद्गत -निष्कासित। औप० ६८। ऊर्ध्वं गता उद्गता -व्यवस्थिता। ज्ञाता० १४। व्यूता। ज्ञाता० २३। उद्गता-सस्थिता। ज० प्र० ७१। निविष्टा। भग० ४७८। उपरिवर्त्तिनी। जं० प्र० २९२।

उग्गयमुत्ती-सूर्योद्गमात् पर प्रतिश्रयावग्रहाद् बहि प्रचारवच्छरीरत्वात्। बृ० तृ० १०९ अ। मूर्ति -शरीर, तं जस्स प्रतिश्रयावग्रहात् उदिते आइच्चे वृत्तिनिमित्त प्रचार करोति सो। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गयवित्ती-उग्गय इति वा उदओत्ति, वर्त्तनं वृत्तिः उग्गयए सूरिए जस्स वित्ती सो। नि० चू० प्र० ३०९ आ।

उग्गवई-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। जं० प्र० ४९१।

उग्गवती-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। सूर्य० १४८।

उग्गविसं-दुर्जरविषम्। भग० ६७२।

उग्गविसा-उग्रं विषं येषा ते उग्रविषा। प्रज्ञा० ४६। उर परिसर्पविशेष। जीवा० ३९।

उग्गसेण-उग्रसेन, द्वारिकायां राजा। आव० ९४। नृपविशेष। बृ० प्र० ३० अ। मथुरानृपति, कसपिता। उत्त० ४९०। राजमुख्य। अन्त० २।

उग्गहं-योनिद्वारं तद्वस्त्रमपि। बृ० द्वि० २५१ आ।

उग्गह-अवग्रह। ओघ० १५२। धर्मलाभदानम्। दश० १६७। अव-ईषत् सामान्य गृह्णातीति। विशे० १६०। आश्रय। विपा० ३३। जोणिदुवारस्स सामइकी संज्ञा उग्गह इति। नि० चू० प्र० १७९ आ। उपग्रहम्-अवष्टम्भम्। ओघ० १५४। पतद्ग्रहम्। ओघ० १७५। प्रथमपरिच्छेदनं अशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यरूपादेरवग्रहणम्। ठाणा० ५१। अवगृह्यते-स्वामिना स्वीक्रियते यः सोऽवग्रह। भग० ७००। सामान्यार्थस्य-अशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपादे अव इति प्रथमतो ग्रहणं-परिच्छेदनमवग्रह.। भग० ३४४। अवग्रह-अव्यक्तरूप परिच्छेद। प्रज्ञा० ३११। अवधारणम्। सुन्दरा एत इत्यवधारणम्। उत्त० १४५। अवग्रह-परिग्रह। सूत्र० १७९। अविवक्षिताशेषस्य सामान्यरूपस्यानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणमवग्रह। राज० १३०। पडिग्गहो। नि० चू० द्वि० ११६ अ। अवग्रह -आभवनव्यवहार। व्य० द्वि० ९३ अ। अवग्रहणमवग्रह -अनिर्देश्यसामान्यमात्ररूपार्थग्रहणम्। नंदी १६८। आवास। निरय० २। अवग्रहण-सम्बध्यमानस्य शब्दादिरूपस्यार्थस्याव्यक्तरूप परिच्छेद। नंदी १६८।

उग्गहजायणे-अवग्रहयाचा-वसतिस्वाम्यनुज्ञा। आव० ६५८।

उग्गहणंतयं-योनिद्वाररक्षार्थक वस्त्रम्। बृ० द्वि० २५१ आ।

उग्गहणमेधावी-अवग्रहमेधावी, सूत्रार्थग्रहणपटुप्रज्ञावान्। बृ० प्र० १२५ आ।

उग्गहपडिमा-अवगृह्यत इत्यवग्रहो-वसतिस्तत्प्रतिमा-अभिग्रहा अवग्रहप्रतिमा। ठाणा० ३८७। आचाराङ्गस्य षोडशमध्ययनम्। उत्त० ६१७। आचा० ४०२। सम० ४४। आचारप्रकल्पे द्वितीयश्रुतस्कन्धस्य सप्तममध्ययनम्। प्रश्न० १४५। आचारप्रकल्पस्य षोडशो भेद। आव० ६६०।

उग्गहिआ-अवगृहीता-पञ्चमी पिण्डैषणा। आव० ५७२।

उग्गहिए–अवगृहीत–परिवेषणार्थमुत्पाटित। ठाणा० ४६५।

उग्गहियं – अवगृहीतम्। आव० २८८। वद्ध। भग० ४५९। अवगृह्णाति–आदत्ते हस्तेन दायस्तद्। ठाणा० १४८। अवगृहीता–भोजनकाले शरावादिषूपहृतमेव भोजनजातं यत्ततो गृह्णत.। ठाणा० ३८६। यद् अवगृह्णाति यच्च संहरति यच्च आस्यके प्रक्षिपति। व्य० द्वि० ३५४ अ। परिवेषणार्थमुत्पाटितम्। औप० ३७। अवग्रहोऽस्यास्तीति अवग्रहिक–वसतिपीठफलकादिक। औपग्रहिकं–दण्डकादिकमुपधिजातम्। औप० ३७।

उग्गहियए–अवगृहीतक –वद्ध। राज० ४४।

उग्गहिया–ज परिवेसगेण परिवेसणाए परस्स कडुच्छुतादिणा उग्गहियं आणियति वुत्त भवति, तेण य तं पडिसिद्ध तं तहुक्खित चेव साधुस्स देति एसा उवग्गहिया। नि० चू० तृ० १२ अ।

उग्गा–आरक्षिका। बृ० द्वि० १५१ आ। कुलार्यप्रथमभेद। प्रज्ञा० ५६। खाद्यविशेषः। जं० प्र० ११८। आदिदेवावस्थापिता। राजं० १२१। प्रभुणा आरक्षकत्वेन नियुक्तास्ते उग्रा। जं० प्र० १४५।

उग्गाढो–प्रगुण। बृ० प्र० २९७ अ।

उग्गारो–उद्गिरण उग्गालो। नि० चू० प्र० ३१५ अ।

उग्गालिदासो–दासविशेष। नि० चू० द्वि० ४० अ।

उग्गाले–उद्गालयेत्–श्लेश्मनिष्ठीवनं कुर्यात्। ओघ० १८६।

उग्गालो–उद्गिरणं उग्गालो। नि० चू० प्र० ३१५ अ।

उग्गाहिऊणं–उद्ग्राह्य। आव० ३९९।

उग्गाहिएणं–उद्ग्राहितेन–पात्रबन्धबद्धेन पात्रकेण। ओघ० १२२।

उग्गाहितं–उद्ग्राहितम्–गृहीतम्। आव० ६१८। उत्क्षिप्तं, उपकरणम्। ओघ० ७२।

उग्गाहिमं–अवगाहिम, पक्वान्नं खण्डखाद्यादि। प्रश्न० १६३।

उग्गाहिय–उद्ग्राहितं–गृहीत पात्रकम्। ओघ० १४९।

उग्गाहे–उद्ग्राहयति–सद्वृत्तितेनास्ते। ओघ० १८४।

उग्गाहेउं–उद्ग्राह्य–सयन्त्रयित्वा। ओघ० ७४।

उग्गाहेऊण–उद्ग्राह्य। उत्त० १००।

उग्गिरिऊणं–उद्गीर्य। आव० २०८।

उग्गुंडिया–उद्धूलितम्। भग० ३०८।

उग्गोवणा–उद्गोपनम्–विवक्षितस्य पदार्थस्य जनप्रकाशचिकीर्षा। पिण्ड० २९।

उग्गोवेति–उप्पाएति। नि० चू० प्र० २३४ अ।

उग्घडयं–अनुवर्त्तनम्, अनुकरणम्। आव० ५१५।

उग्घाइए–उद्घाइए–उद्घातित, विनाशितं विनाशयिष्यमाणत्वेनोपचारात्। ठाणा० ५०२।

उग्घाइम–उद्घातिमम्–उद्घातो–भागपातस्तेन निर्वृत्तम्, लघु। ठाणा० १६३।

उग्घाड–उद्घाटं–अदत्तार्गलमीषत्स्थगितं वा। आव० ५७५।

उग्घाडकवाडउग्घाडणा–उद्घाटकपाटोद्घाटना, उद्घाटम्–अदत्तार्गलमीषत्स्थगितं वा कपाट तस्योद्घाटन–सुतरा प्रेरणम् तदेव। श्वानवत्सदारकसघट्टना। आव० ५७५।

उग्घाडणकवाड–उद्घाटकपाटं–अनर्गलितकपाट। ओघ० १६६।

उग्घाडाए पोरिसिए–उद्घाटपौरुष्याम्। आव० ८३८।

उग्घाडितो–उद्घाटित। आव० ३१७, ३१८।

उग्घाडिया–उद्घाटिता। आव० २९२।

उग्घात – उद्घात –भागपात। ठाणा० १६३, ३२५। लघूकरणलक्षण। ठाणा० ३११।

उग्घातिते–उद्घात –भागपातो यत्रास्ति तदुद्घातिक, लघ्विसर्थ। ठाणा० ३२५।

उग्घाय – आचाराङ्गस्य षड्विंशतितममध्ययनम्। उत्त० ६१७। आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेद। आव० ६६०।

उग्घायाइ–लघूनि। बृ० प्र० १४५ अ।

उग्घोसणाट्ठाणीया–उद्घोषणास्थानीया। आव० ३८५।

उग्रतेजाः–आधाकर्मण एव अभोज्यतायां पदाति। पिण्ड० ७१।

उग्रसेनः–भोगराजा, राजीमत्या पिता। दश० ९७।

उग्रसेनतनयः–नभ सेनकुमार। विशे० ६१०।

उघरिसा। नि० चू० प्र० १०५ आ।

उघोसेहि। नि० चू० प्र० ३४४ आ।

उचितः–जित, अभ्यस्तो वा। आव० ५९८।

उचूलयालगं–अध शिरस उपरि पादस्य कूपजले वोलणाकर्षणम्। विपा० ७२।

उच्चं–उच्च –पूज्य। भग० १६८।

उच्चंतए-उच्चन्तक -दन्तराग'। प्रज्ञा० ३६०। उच्चतगो-दन्तराग । ज० प्र० ३३।

उच्चंते-उच्चतगो-दन्तराग । राज० ३२।

उच्चंपिय-सघातित । (त०)।

उच्चछंदो- उच्चच्छन्द -उच्चो-महानात्मोत्कर्षणप्रवणश्छन्द'-अभिप्रायो यस्य स । प्रश्न० ३१।

उच्चता-उच्चतया-निदेजत्वेन । अप्रातिहारिकतया । बृ० द्वि० २१९ अ ।

उच्चतायभयगो-तुमे मम एच्चिर कालं कम्म कायव्वं जं ज अहं भणामि, एत्तिय तेग धण दाहामित्ति। नि० चू० द्वि० ४४।

उच्चत्तं-उच्चत्वं। ज० प्र० २०। अनु० १७१। उच्चत्वं-उत्सेध । ज० प्र० ३२१। उच्छ्रय । ठाणा० ६९। ऊर्ध्व-स्थितस्यैकमपर तिर्यक्स्थितस्यान्यत् गुणोन्नतिरूपम् । ठाणा० ३६ ।

उच्चत्तछाया-उच्चत्वछाया, छायाया षष्ठो भेद । सूर्य० ९५।

उच्चत्तभयते - उच्चता भृतक -मूल्यकालनियम कृत्वा यो नियत यथावसर कर्म्म कार्यते स। ठाणा० २०३।

उच्चत्तविसाणो - उच्चविषाण उच्चश्रृङ्ग । उत्त० ३०३। उत्तमविषाण । आव० ७१९।

उच्चत्ता-मुधिकता । पिण्ड० १००।

उच्चयबंधे-उच्चय -ऊर्द्ध्वं चयनं-राशीकरण तद्रूपो बन्ध उच्चयबन्ध । भग० ३९५।

उच्चरेति। नि० चू० प्र० २०२ आ।

उच्चलिओ-उच्चलित । आव० ३८५। आव० ३१७।

उच्चा-ऊर्द्ध्वं चिता, उपरिस्थितत्वेन वा। उत्त० ११०।

उच्चाओ-उच्चातो-श्रान्त । ओघ० १७७। नि० चू० प्र० १८८ अ ।

उच्चागोए -उच्चैर्गोत्र-यदुदयवशादुत्तमजातिकुलबलतपोरूपैश्वर्यश्रुतसत्कारा भ्युत्थानासनप्रदानाञ्जलिप्रग्रहादिसम्भवस्तत्। प्रज्ञा० ४७५। मानसत्कारार्ह । आचा० ११६ ।

उच्चागोत्ते -उच्चैर्गोत्र -उच्चै -लक्ष्म्यादिक्षयेऽपि पूज्यतया गोत्र-कुलमस्येति। उत्त० १८८।

उच्चारे - उच्चार -विष्ठा । भग० ८७। सज्ञा। बृ० प्र० ३०६ अ। सण्णा। नि० चू० प्र० १८३ आ। पुरीष । आव० ५६४, ६१६, ७८१। उत्त० ५१७। सम० ११। ज० प्र० १४८। ठाणा० ३४३। शरीराद्‌त्‌-प्राबल्येन च्यवते-अपयाति चरतीति वा उच्चारः-विष्ठा। आचा० ४०९। पुरीषपरिष्ठापनम्। उत्त० ३५७। गृहस्थै सह पुरीषव्युत्सर्गं कुर्वन्ति, श्लेष्मण परिष्ठापनमङ्गणे कुर्वन्ति वा। ओघ० ५६।

उच्चारभूमी - उच्चारभूमि -पुरीषभूमि । आव० ७८४। उच्चारप्रश्रवणविधिसप्तैकक, सप्तसप्तक्या तृतीयस्य भेद। ठाणा० ३८७।

उच्चालइय-ऊर्ध्वमुत्क्षिप्य भूमौ। आचा० ३११। उच्चालयितारम्-अपनेतारम् । आचा० १६९।

उच्चालियंमि-उच्चालिते-उत्पाटिते। ओघ० २२०।

उच्चावइत्ता-उच्चैं कृत्वा। उत्पाट्य। प्रज्ञा० ३५७।

उच्चावए-उच्चावच -उत्तमाधम । जीवा० ३७४।

उच्चावतं-उच्चावचम्-असमञ्जस। ठाणा० २४७।

उच्चावयं-उच्चावच-उच्च नाम मैव कुर्वन्तु, अवचं नाम कुर्वन्तु। आचा० ३६३। शोभनाशोभनम्। जीवा० १६६। उच्चावचम् । दश० १६६। अनुकूलंप्रतिकूलम्, असमञ्जस वा। भग० १०१।

उच्चावया-अनुकूलप्रतिकूला, असमञ्जसा। अन्त० १८। उच्चावचा -गुरुलघवो नानारूपा वा। सूत्र० २०५। ऊर्द्ध्वं चिता उच्चा, शीतातपनिवारकत्वादिगुणै शय्यान्तरोपरिस्थितत्वेन वा उच्चा, तद्विपरीतास्त्ववचा', अनयोर्द्वन्द्वे उच्चावचा, नानाप्रकारा वा। उत्त० ११०। शोभनाशोभनभेदेन नानाप्रकारा'। दश० १८४। असमञ्जसा। भग० ६८३। ज्ञाता० २००।

उच्चावयाई-उच्चावचानि-विकृष्टाविकृष्टतया नानाविधानि उच्चव्रतानि वा शेषव्रतापेक्षया महाव्रतानि। उत्त० ३६३।

उच्चिअ-उच्चित, उच्चिताकरण, पादस्योत्पाटनम् । ज० प्र० २६५।

उच्चिक्खित्तं-उच्चोत्क्षिप्तम् । पिण्ड० ११०।

उच्चिट्ठ-कासारादिभक्षणेनोच्छिष्टे । बृ० प्र० २१५ अ।

उच्चिट्ठए-उच्छिष्टम्-भ्रष्टम् । दश० १०४।

उच्चिणिउ-उच्चेतु-गृहीतुम्। आव० ८१९।

उच्चियपउमं-उच्चितपद्म । आव० १७०।

उच्चुणेउं-अवचूर्ण्य, गुण्डयित्वा। ओघ० १४३।

उच्चूलं-अवचूल-अधोमुखकूर्चक । औप० ६३।

उच्चेंती–उच्चिन्वती–अवचयं कुर्वती। दश० ४१।
उच्चैःश्रवा–सुरवरेन्द्रवाहनं हय । जं० प्र० २३५।
उच्चोदए–उच्चोदय, ब्रह्मदत्तस्य प्रधान प्रथम प्रासाद। उत्त० ३८५।
उच्चोलपर्हि–उच्चुलुकं, छंग्रभि. चुलुकै । आव० ६७८।
उच्छंग–उत्सङ्ग-पृष्ठदेश । जं० प्र० २६५। पृष्ठदेश । औप० ७१। भग० ४८०।
उच्छण्णं–उच्छिन्नम्, क्षीणम्। आव० ६७०, ६७१।
उच्छदयति–चोलं करोति। ओघ० १५३।
उच्छन्नं–अपशब्द–विरूपं छन्नं–स्वदोषाणा परगुणाना वाऽऽवरणमपच्छन्नं। उत्थत्व, न्यूनत्वं वा, द्वितीयाधर्मद्वारस्य चतुर्दशं नाम। प्रश्न० २६।
उच्छन्ननाणी – उच्छन्नज्ञानी–यावत्शक्तिप्रच्छादितज्ञानी। प्रज्ञा० ४६१।
उच्छयं–उच्छ्रयं–व्याप्तम्। आव० १८४।
उच्छलंत–उच्छलन्त–उद्वलन्तः। प्रश्न० ६२।
उच्छ(त्थ)ल–उत्–उन्नतानि स्थलानि–धूल्युच्छ्रयरूपाण्युच्छ(त्थ)लानि। भग० ३०७।
उच्छलिओ–उच्छलित–निर्गत । आव० ४०२।
उच्छवो–उत्सव–शक्रोत्सवादिः। प्रश्न० १५५। इन्द्रोत्सवादि। प्रश्न० १४०।
उच्छहया–उत्सहन्–अर्थोद्यमवान्। दश० २५३।
उच्छा–तुच्छा, रिक्ता। (गणि०)।
उच्छाइओ–उत्सादित। आव० ३९८।
उच्छाएइ–आच्छादयति। आव० ६२४।
उच्छाडणं। नि० चू० प्र० १२१ अ।
उच्छायणयाए–उच्छादनतायै, सचेतनाचेतनतद्गतवस्तूच्छादनाय। भग० ६८४।
उच्छाह–उत्साह–वीर्यं। सम० ११८।
उच्छिंपक–अवच्छिम्पक–चौरविशेष । प्रश्न० ४७।
उच्छिंपणं – उत्क्षेपण–जलमध्यान्मत्स्यादीनामाकर्षणम्। प्रश्न० २२।
उच्छिणण। नि० चू० द्वि० १०४ अ।
उच्छिन्नगोत्तागारं–उच्छिन्नगोत्रागारम्, उच्छिन्न गोत्रागारं–तत्स्वामिगोत्रगृह यस्य तत। भग० २००।
उच्छिन्नसामिय–उच्छिन्नस्वामिकम्, नि सत्ताकीभूतस्वामिकम्। भग० २००।
उच्छिन्नसेउय–उच्छिन्नसेतुकम् त्यक्तमर्यादम्। भग० २००।
उच्छिन्ना–निर्नष्टसत्ताका । ठाणा० २९४।
उच्छु–इक्षु । दश० २२६। आव० ८५४।
उच्छुक्किओ–जुगुप्सित । बृ० द्वि० २५५आ।
उच्छुखण्ड–इक्षुखण्ड । दश० ११६।
उच्छुगंडिय–इक्षुगण्डियं–सपर्वेक्षुशकलम्। आचा० ३५४।
उच्छुघर–इक्षुगृहम्। व्य० द्वि० ३१९ अ। आव० ३०१। नि० चू० द्वि० १०९ अ। विशे० १००७।
उच्छुजंतं–इक्षुयन्त्रम्। आव० ८२९।
उच्छुड्डो–उन्मम । विशे० ५१५।
उच्छुढं–विक्षिप्तम्। ओघ० १५०। परित्यक्त। बृ० द्वि० १३३ आ। रोगाघ्रातं। बृ० तृ० २३ आ।
उच्छुभ–आधिक्येन क्षिप, प्रवेशयेत्यर्थ । प्रश्न० २०।
उच्छुभह–किञ्चिदिक्षिपतेत्यर्थ । भग० ६८५।
उच्छुमेरगं–अपनीतत्वगिक्षुगण्डिका। आचा० ३४८।
उच्छुहइ–अवष्टभ्नाति, विध्यतीत्यर्थ । ज्ञाता० ६८।
उच्छूढं–उज्झित सस्कारपरित्यागात्। सूर्य० ५। उज्झितम्। भग० १२। राज० ५७। विपा० ३४। औप० ८४। जं० प्र० १६।
उच्छूढ–नि सृत । सूर्य० ९२। अवक्षिप्त–अर्गलास्थानान्निष्कासित । जीवा० २७२। स्वस्थानादवक्षिप्तो–निष्काशित । जं० प्र० १११। प्रश्न० ८१।
उच्छूढसरीरे–उच्छूढशरीर–उज्झितमिवोज्झितं तत्संस्कारत्यागात् शरीर येन स । भग० १२।
उच्छूढाइं–लुटितानि। बृ० प्र० ५७ अ।
उच्छूनं। ओघ० २१६।
उच्छूनावस्था–विनष्टावस्था। जीवा० १०७।
उच्छूरं–अकालम्। ओघ० १४८।
उच्छूरिया–सुप्रावृत्ता। बृ० द्वि० ३५६ आ।
उच्छेवा–उच्छेवा नाम यत्र पतितुमारब्धं तत्रान्यस्योपष्टम्भस्थापनम्। व्य० द्वि० ७ अ।
उच्छोडेइ–उच्छोटयति। आव० ३९९।
उच्छोभवंदणयं–इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए

निसीहियाए तिविहेणं एयं उच्छोभवंदणयं । नि० चू० द्वि० ९३ अ ।

उच्छोभो–आल', कलङ्क । आव० ४०१ ।

उच्छोलणं – एक्कसिं धोवणं उच्छोलण । नि० चू० द्वि० ११८ आ । तेल्लादिणा फासुगअफासुएण देसे उच्छोलण । नि० चू० द्वि० ८९ अ । उच्छोलनं–अयतनया शीतोदकादिना हस्तपादादिप्रक्षालनम् । सूत्र० १८१ ।

उच्छोलणा–उच्छोलना–पुरीषमुत्सृज्य प्रभुतेन पयसा क्षालनम् । ओघ० ५५ । ओघ० १२० । एक्कसि उच्छोलणा । नि० चू० प्र० १८८ अ ।

उच्छोलणापहोअ– उत्सोलनया – उदकायतनया प्रकर्षेण धावति–पादादिशुद्धिं करोति य स उत्सोलनाप्रधावी । दश० १६० ।

उच्छोलिंति–प्रक्षालयन्ति । गणि० ।

उच्छोलेइ–अग्रतो मुखा चपेटा ददाति । भग० १७५ ।

उच्छोलेज्ज–ईषद् उच्छोलनं विदध्यात् । आचा० ३६३ । सकृदुदकेन प्रक्षालनं कुर्यात् । आचा० ३४२ ।

उच्छोलेति–सकृदुदकेन प्रक्षालनम् । नि० चू० प्र० ११६ आ ।

उजु–ऋजु'–मायारहित सयमवान वा । दश० २६२ ।

उजुगं–दृष्टिवादे सूत्रभेद । सम० १२८ ।

उजुमइ–ऋजुमति , ऋज्वी–प्रायो घटादिसामान्यमात्रग्राहिणी मति । विशे० ३८० ।

उजुवालिआ–ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम् । आव० १३९ ।

उज्ज–आर्षत्वादुद्द्योतगतीति उद्द्योत । उत्त० ३८ ।

उज्जमंतो–मूलुत्तरगुणेसु विसुद्धो विचित्तो । नि० चू० द्वि० २५ अ ।

उज्जम–उद्यम –यथाशक्ति अनुष्ठानम् । आचा० १५० । अनालस्यम् । औप० ४८ ।

उज्जममाणो–उद्यच्छन्–उद्यम कुर्वन् । आव० ५३४ ।

उज्जयनी–नगरीविशेष । नंदी १४५ ।

उज्जयन्त–पर्वतविशेष । जं० प्र० १६८ । क्रीडापर्वतविशेष । भग० ३०६ । रैवतकम् । उत्त० ४९२ । अट्टनमलवास्तव्यनगरम् । व्य० द्वि० ३५७ अ ।

उज्जयिनी–चण्डप्रद्योतराजधानी । प्रश्न० ९० । नगरीविशेष । आचा० २४८ । बृ० तृ० २१८ आ । विशे० ४९६ । कुणालस्य पितृदत्ता नगरी । विशे० ४०९ ।

उज्जयिनीराजपुत्र–उज्जयिन्या. राजपुत्र । आचा० २४८ ।

उज्जरा–प्रवाहा । आव० ६२० ।

उज्जल–उज्ज्वल'–विपक्षलेशेनाप्यकलङ्कित । भग० ४८४, २३१ । निर्म्मल । जीवा० २२७ । ज्ञाता० २२१ । बहिःश्वेतवर्ण । ज० प्र० ५२८ । उज्जवलम्–सुखलेशवर्जितम् । प्रश्न० १५६ । शुद्धम् । जीवा० १८८ ।

उज्जला–उज्ज्वला । आव० १९२ । विपक्षलेशेनाप्यकलङ्किता । प्रश्न० १७ । उत्–प्राबल्येन मलिनशरीरा अलब्धसुखास्वादाश्च । बृ० द्वि० ४० अ ।

उज्जा–ऊर्जा–बलम् । व्य० प्र० १४४ आ ।

उज्जाण–जत्थ लोगो उज्जाणियाए वच्चति । जं वा ईसि णगरस्स उवकंठ ठिय तं । नि० चू० प्र० २६५ अ । पुष्पादिमद्वृक्षसकुलादौ उत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । प्रश्न० १२७ । ऊर्द्ध्वं यानमस्मिन्निति उद्यानम्–उदकम् । आव० ७९७ । पुष्पादिमद्वृक्षसकुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम् । जीवा० २५८ । आव० १९७ । ऊर्ध्वं यानमुद्यानं–मार्गस्योन्नतो भाग , उट्टङ्क इत्यर्थ । सूत्र० ८८ । पुष्पादिमद्वृक्षसकुलबहुजनभोग्यवनविशेष । प्रश्न० ७३ । पुष्पादिमद्वृक्षसकुलमुत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । प्रश्न० १२७ । औप० ३ । क्रीडार्थागतजनाना प्रयोजनाभावेनोर्ध्वावलम्बितयानवाहनाद्याश्रयभूतं तरुखण्डम् । ज० प्र० ३८८ । पुष्पफलोपेतादिमहावृक्षसमुदायरूपम् । औप० ४१ । जनक्रीडास्थानम् । दश० २१८ । पुष्पादिमद्वृक्षसकुल, उत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । भग० २३८ । पुष्पादिमयवृक्षसकुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम् । राज० ११२ । ऊर्ध्वं विलम्बितानि प्रयोजनाभावात् यानानि यत्र तदुद्यान–नगरात्प्रत्यासन्नवर्ती यानवाहनक्रीडागृहाद्याश्रयस्तरुखण्ड । राज० २३ । चम्पकवनाद्युपशोभितमिति । ठाणा० ३१२ । औद्यानिकया निर्गतो जनो यत्र भुंक्ते । व्य० द्वि० ३६२ अ । वस्त्राभरणादिभिरलङ्कृतविग्रहा सन्निहिताशनाद्याहारसदनोत्सवादिषु क्रीडार्थं लोका उद्यान्ति यत्र तच्चम्पकादितरुखण्डमण्डितम् । अनु० २४ । पत्रपुष्पफलच्छायोपगतवृक्षोपशोभित, विविधवेषोन्नतमानश्च बहुजनो यत्र भोजनार्थं यातीति । सम० ११७ । पुष्पफलादिसमृद्धानेकवृक्षसकुलानि उत्सवादौ बहु-

जनपरिभोग्यानि। अनु० १५९। पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तम्। भग० ४८३। आराम क्रीडावन वा। उत्त० ४५१।

उज्जाणगिहाणि–उद्यानगृहाणि। ठाणा० ८६।

उज्जाणानि–उद्यानानि–पत्रपुष्पफलच्छायोपगादिवृक्षोपशोभितानि बहुजनस्य विविधवेषस्योन्नतमानस्य भोजनार्थं यानं–गमनं येषु। ठाणा० ८६।

उज्जाणियलेणाइ–उद्यानगतजनानामुपकारिकगृहाणि नगरप्रदेशगृहाणि वा। भग० ६१७।

उज्जाणिया–उद्यानिका। आव० ६७९।

उज्जाणियागओ–उद्यानिकागत। आव० ४०२।

उज्जाणियागमणं–उज्जानिकागमनं। आव० ४५३।

उज्जाणेत्ति–प्रतिलोमगामिनीत्यर्थ। नि० चू० प्र० ४४ आ।

उज्जालंतं–उज्ज्वालनम्–व्यजनादिभिर्वृद्ध्यापादनम्। दश० १५४।

उज्जालओ–प्रज्वालक.। नि० चू० प्र० ५० अ।

उज्जालेह–उज्ज्वालयत, दीपयत। ज० प्र० १६२।

उज्जितगिरि–उजयन्तगिरि, पर्वतविशेष। आचा० ४१८। नंदी ६०।

उज्जिओ–बलवान। बृ० द्वि० १९५ अ।

उज्जितं–ऊर्जितम्। आव० ३०४।

उज्जीवाविया–उज्जीविता। आव० ५५९।

उज्जीवितेवाशीर्वाद। नंदी १६०।

उज्जु–सम सजमो वा। दश० चू० ५२। ऋजो –ज्ञानदर्शनचारित्राख्यस्य मोक्षमार्गस्यानुष्ठानादकुटिल·, यथावस्थितपदार्थस्वरूपपरिच्छेदाद्वा, सर्वोपाधिशुद्धोऽवक्र। आचा० १५४। ऋजु –अकुटिल। आचा० ४२। अवक्र, अविपरीतस्वभाव·। ठाणा० १८३। अवक्र। उत्त० ५९०। गृहाभिमुख। ओघ० १५६। वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद् वस्त्वखिल, वक्रविपर्ययादभिमुख· वा। आव० २८४। अतीतानागतपरकीयपरिहरणमाञ्जल वस्तु। अनु० १८।

उज्जुअ–ऋजुकम्–मायारहित। पिण्ड० १४७। अभिमुख। दश० १८४।

उज्जुआयता – ऋजुश्चासावायता चेति ऋज्वायता यया जीवादय ऊर्ध्वलोकादेरधोलोकादौ ऋजुतया यान्ति। भग० ८६६। ऋज्वी–सरला सा चासावायता च–दीर्घा ऋज्वायता। ठाणा० ४०७।

उज्जुकडे–ऋजुकृत –ऋजु·–सयमस्तत्प्रधानं ऋजु वा–मायात्यागत कृतम्–अनुष्ठानं यस्य स। उत्त० ४१४।

उज्जुग–ऋजुम्। आव० ३८४। दक्षिणहस्त·। ओघ० १७५।

उज्जुजड्डु–ऋजवश्च प्राञ्जलतया जडाश्च तत एव दुष्प्रतिपाद्यतया- ऋजुजडाः। उत्त० ५०२।

उज्जुतभिन्नं–यत् चिर्भटादिक विदार्य ऊर्ध्वफालिरूपाः पेश्य कृत तद् ऋजुकभिन्नम्। बृ० प्र० १७५ अ।

उज्जुते – ऋजुक –अवक्र·, उद्यतो वा-अनलसः। प्रश्न० १५७।

उज्जुत्तो–उद्युक्त। ओघ० १६०।

उज्जुदंसी – ऋजुदर्शी–ऋजुर्मोक्ष प्रति ऋजुत्वात्सयमस्तं पश्यत्युपादेयतयेति ऋजुदर्शी–सयमप्रतिबद्ध। दश० ११८।

उज्जुपन्न–ऋजुप्रज्ञ। ठाणा० २०२।

उज्जुभूयं–ऋजुभूतं–प्रगुणीभूतम्। उत्त० १८५।

उज्जुमइ–ऋजुमति –मार्गप्रवृत्तबुद्धि। दश० १६०।

उज्जुमई – ऋज्वी–सामान्यग्राहिणी मतिरस्य स। नंदी १०९, १०८। ऋज्वी–सामान्यतो मनोमात्रग्राहिणी मति – मन पर्यायज्ञानं येषा ते। औप० २८।

उज्जुया–ऋजुका–न वक्रा। जीवा० २७१।

उज्जुवालिया–ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम्। आव० २२७।

उज्जुसंधिसंखेडयं–उज्जुसधिसखेडयाओ वा मगटमग्गं पवदेति। नि० चू० द्वि० ८६ अ।

उज्जुसुअ–ऋजु–अतीताऽनागतपरिहारेण परकीयपरिहारेण वाऽकुटिल वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्र। विशे० ३१। ऋजुसूत्र – ऋजु – वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद वस्त्वखिल तत्सूत्रयति–गमयतीति। ऋजुश्रुत·–ऋजु–वक्रविपर्ययादभिमुख श्रुत–ज्ञानमस्येति। आव० २८४। ऋजु–अवक्र श्रुतमस्य सोऽयमृजुश्रुत, ऋजु–अवक्र वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्र। विशे० ९०७। ठाणा० ३९२।

उज्जुसुते – ऋजु–वक्रविपर्ययादभिमुखं श्रुतं–ज्ञानं यस्यासौ ऋजुश्रुत, ऋजु वा–वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वस्तु सूत्रयति–गमयति इति ऋजुसूत्र। ठाणा० ३९०। ऋजु–वक्रविपर्ययादभिमुखं श्रुतं–ज्ञानं यस्य स। ठाणा० ३९२। ऋजु–अवक्रमभिमुख श्रुतं–श्रुतज्ञानं यस्येति। ठाणा० १५२।

ऋजु –अवक्रं श्रुतमस्येति। अनु० २६५। स्वकीयं संप्राप्तं च वस्तु नान्यदित्यभ्युपगमपर, ऋजु वा–अतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वर्त्तमानं वस्तु सूत्रयति–गमयतीति ऋजुसूत्र। ठाणा० १५२।

उज्जुसुयं–ऋजुसूत्रं–नयगतो भेद। प्रज्ञा० ३२७। ऋजु–अतीतानागतपरिहारेण प्राञ्जल वस्तु सूत्रयति–अभ्युपगच्छतीति ऋजुसूत्र.। अनु० १८।

उज्जुसेढीपत्ते – ऋजुश्रेणिप्राप्त–ऋजु –अवक्रा श्रेणि –आकाशप्रदेशपक्तिस्ता प्राप्त.। अनुश्रेणिगत। उत्त० ५९७।

उज्जुहित्ता–प्रेर्य। उत्त० ५५१।

उज्जू–ऋजु.–यति, यतिरेव परमार्थत ऋजु.। आचा० १५६।

उज्जूहिगा–गावीओ उज्जूहिताओ अडविहुत्तीओ उज्जुहिज्जंति अहवा गोसखडि उज्जूहिगा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

उज्जेंत–रैवतक। बृ० द्वि० १०६अ। उजयन्त–पर्वतविशेष। आव० ८२७। परदारगमने पर्वतविशेष। आव० ८२३।

उज्जेणय–उर्जायनीक। आव० ६३६।

उज्जेणा–उपयोजना–सघट्टना। बृ० द्वि० १४६ अ।

उज्जेणि–उज्जयिनी, गुरुनिग्रहविषये पुरी। आव० ८१३। सर्वकामविरक्तताविषये नगरी। आव० ७१४। अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतराजधानी। आव० ६९९। मालवदेशे नगरी। दश० ५७। शिल्पसिद्धदृष्टान्ते पुरी। आव० ४१०। कायदण्डोदाहरणे नगरीविशेष। आव० ५७७। भद्रगुप्तस्थविरनिर्यामणास्थानम्। आव० ३०२।

उज्जेणिगाओ–औज्जयिन्य। आव० ६४।

उज्जेणिया–उद्यानिका। आव० २१०।

उज्जेणी–उज्जयिनी, लवालवोदाहरणे नगरी। आव० ७२१। गुणविषये पुरी। आव० ८१९। विनयदृष्टान्ते पुरी। आव० ७०८। शिल्पकर्मविषये नगरी। आव० ४०९। स्थिरीकरणोदाहरणे नगरी। दश० १०३। योगसग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते नगरी। आव० ६६८। जितशत्रुराजधानी। उत्त० २१३, १९२। औत्पात्तिकीदृष्टान्ते नगरी। आव० ४१५। भद्रगुप्ताचार्यस्थानम्। आव० २९२। नगरीविशेष। बृ० प्र० १९१ अ, १९० आ। योगसग्रहे शिक्षादृष्टान्ते नगरी। आव० ६७२। प्रथमे आलोचनायोगे नगरी। आव० ६६४। योगसग्रहे आपत्सु दृढधर्मत्वदृष्टान्ते नगरीविशेष। आव० ६६७। हस्तिमित्रगाथापतिस्थानम्। उत्त० ८५। देवदत्तागणिकावसननगरी। उत्त० २१८। उज्जयिनी–नगरीविशेषः। उत्त० ९९, २९४, १२७, ८७। प्रद्योतनराजधानी। उत्त० ९६। चेटीदेवतोक्त भग्नसाधुस्थानम्। बृ० प्र० १७१ आ। बृ० प्र० ३९ अ। नगरीविशेष। नि० चू० प्र० २८३ अ। नि० चू० द्वि० ५७ आ। बृ० प्र० १९१ अ। बृ० द्वि० २६७ अ। कालकाचार्यविहारभूमिः। नि० चू० प्र० ३३९ आ। बृ० प्र० ४७ अ। बृ० तृ० १४९ अ।

उज्जेणीनयरी–अवन्तीजनपदे नगरी। उत्त० ४९।

उज्जेणीसावगसुतो – उज्जयनीश्रावकपुत्र –उज्जयिन्या श्रावकसुत। उत्त० २९४।

उज्जोअ–उद्द्योत –प्रभासमूह। जीवा० २६७। अनुष्णप्रकाश। जं० प्र० ४३३। दीप्यमानता। जीवा० ३९९। उद्योत–चान्द्रप्रकाशम्। जं० प्र० २२९।

उज्जोइंति–उद्द्योतयन्ति। भग० ३२७।

उज्जोएइ–उद्द्योतयति–भृशं प्रकाशयति। भग० ७८।

उज्जोएमाण–उद्योतयन्। औप० ५०।

उज्जोओ–उद्योत –रत्नादिप्रकाश। उत्त० ५६१।

उज्जोयगरे – उद्योतकर. – केवलालोकेन तत्पूर्वकप्रवचनदीपेन वा सर्वलोकप्रकाशकरणशील। आव० ४९४।

उज्जोयणामे–यदुदयाज्जन्तुशरीराण्यनुष्णप्रकाशकरूपमुद्योतं कुर्वन्ति यथा यतिदेवोत्तरवैक्रियचन्द्रनक्षत्रतारविमानरत्नौषधयस्तदुद्योतनाम। प्रज्ञा० ४७४।

उज्जोवणं–गाविण पसरणं। नि० चू० प्र० १०७ अ।

उज्जोवेंति–उद्योतयन्ति। सूर्य० ६३। उद्द्योतयन्त –भृश प्रकाशयत। जं० प्र० ४६१।

उज्जोवेमाणा–उद्योतयमान स्थूलवस्तुप्रदर्शनत.। ठाणा० ४२१।

उज्झंतगं–उज्झितक, त्याज्यम्। आव० ६६८।

उज्झंता–क्षपयन्त.। अनु० १३१।

उज्झंसिओ–तिरस्कृत। आव० २०४।

उज्झकुखणिया – पवनप्रेरिता उदककणिका। बृ० द्वि० २९ आ।

उज्झखणी–दगवातो-सीतभरो सा य उज्झखणी भण्णति। नि० चू० प्र० २३२ आ।

उज्झणं–बहिर्नयन। विशे० १०७९।

उज्झनं–परिशाट। आव० ५७६।

उज्झमज्जी–उद्घाटनम्। आव० ६६५।

उज्झयारेमि–उपकरोमि। बृ० प्र० ४६ आ।

उज्झर–अवझर.–पर्वततटादुदकस्याध पतनम्। भग० २३८। प्रवाह। (तं०)। उज्झरः–प्रवाह। नंदी ४७। गिरितटादुदकस्याध पतनानि। ज० प्र० ६६। गिरिष्वम्भसा प्रस्रवा। प्रज्ञा० ७२। निर्ज्झरः। ज्ञाता० २६।

उज्झररवो–निर्झरशब्द। ज्ञाता० १६१।

उज्झा–उज्झा–उपयोगपुरस्सर ध्यानकर्त्तार। विशे० १२२९। अयोध्या, सगरराजधानी। आव० १६१। अजितनाथजन्मभूमि। आव० १६०। उ इत्येतदक्षर उपयोगकरणे वर्तते, ज्झ इति चेदं ध्यानस्य भवति निर्देशे, ततश्च प्राकृतशैल्या उज्झा, उपयोगपुरस्सर ध्यानकर्तार इत्यर्थ। आव० ४४९। अनन्तनाथजन्मभूमि। आव० १६०।

उज्झाइओ–विरूप.। बृ० द्वि० २४१ अ।

उज्झाइगं–जुगुप्सा। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झाइतं–विरूपं। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झातो–उपाध्याय। उत्त० १४९।

उज्झाहि–उज्झी। आव० २१७।

उज्झिआ–उज्झिता–सद्विवेकशून्या। सूत्र० ९२।

उज्झिणिका–पारिष्ठापनिका। बृ० तृ० १२३अ। बृ० द्वि० २४२ आ।

उज्झितं–छर्द्दितं, त्यागम्। पिण्ड० १६९।

उज्झितक–विजयसार्थवाहपुत्र। ठाणा० ५०७। दु खविपाकाना द्वितयमध्ययनम्। ठाणा० ५०७।

उज्झित्तए–उज्झितु–सर्वस्या देशविरतेस्त्यागेन। ज्ञाता० १३४।

उज्झिय–उज्झित –उज्झितधर्मा, सप्तमी पिण्डैषणा। आव० ५७२। उज्झितधर्मा। आव० ५६८।

उज्झियए–उज्झितक –सुभद्राविजयमित्रसार्थवाहयो सुत। विपा० ४६। सार्थवाहपुत्र, अन्तकृद्दशासु दु.खविपाकाना द्वितीयमध्ययनम्। विपा० ३५।

उज्झियतो–उज्झित –त्यक्त। आव० ८२३।

उज्झियधम्मा–चतुर्थी वस्त्रैषणा। आचा० २७७। यत्परित्यागार्हं भोजनजातमन्ये च द्विपदादयो नावकाङ्क्षन्ति तदर्द्धत्यक्त वा गृह्णत इति, सप्तमी पिण्डैषणा। ठाणा० ३८७। आव० ५६८, ५७२।

उज्झियधम्मिय–उज्झितधर्मिकं–उज्झितं–परित्याग स एव धर्म –पर्यायो यस्यास्ति तत्। अन्त० ३। उज्झितधर्मिका–सप्तमी पिण्डैषणा। आचा० ३५७। जं असणादिगं गिही उज्झिउकामो साहू य उवट्ठितो तं तस्स देति ण य तं कोइ अण्णो दुपदादि अभिलसति एसा उज्जियधम्मिया। नि० चू० तृ० १२ अ। नि० चू० द्वि० १६३ आ।

उज्झियधम्मे–उज्झितमेव धर्म.–स्वभावो यस्य तद् उज्झितधर्मं–परित्यागार्हम्। बृ० प्र० ९७आ।

उट्ट–उष्ट्र। प्रज्ञा० २५२। उष्ट्रः–द्विखुरचतुष्पदविशेष। प्रज्ञा० ४५। जीवा० ३८। म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

उट्टण–आवर्त्तनम्–भक्तीभवनम्। व्य० प्र० २०३ आ।

उट्टवामा–उष्ट्री। आव० ४१८।

उट्टिए–उष्ट्राणामिदम् औष्ट्रिकम्। अनु० ३५। उष्ट्रिका–बृहन्मृन्मयभाण्डम्। उपा० ४।

उट्टिते–उष्ट्रलोममयम्। ठाणा० ३३८।

उट्टितो–उव्वसिओ। नि० चू० प्र० १७८ आ।

उट्टियं–उट्टरोमेसु उट्टियं। नि० चू० प्र० १२६ अ।

उट्टिया – उष्ट्रिका–महामृण्मयो भाजनविशेष। औप० १०६। मृण्मयो महाभाजनविशेष। उपा० २१। सुरातैलादिभाजनविशेष। उपा० ४०। उवरिहुत्तिकरण। नि० चू० तृ० ५९ अ, ६१ अ।

उट्टियासमणा – उष्ट्रिका–महामृण्मयो भाजनविशेषस्तत्र प्रविष्टा ये श्राम्यन्ति–तपस्यन्तीति उष्ट्रिकाश्रमणा। औप० १०६।

उट्ठं–ओष्ठ–कर्णम्। ओघ० ११९।

उट्ठंभिया–अवष्टभ्य–आक्रम्य। आचा० ३१२।

उट्ठण–उत्थित। बृ० द्वि० ७९ अ।

उट्ठवेसि–उद्धरसि। ज्ञता० ६९।

उट्ठा–उत्था–कायस्योर्ध्वभवनम्। औप० ८३। ऊर्ध्वं वर्त्तनम्। सूर्य० ६। भग० १४। उष्ट्री। दश० १९३।

उट्ठा(ट्टा)–उष्ट्रा –जलचरविशेषा। सूत्र० १६०।

उट्ठाए–उत्थाय–उद्यानविहारं प्रतिपद्य सर्वालङ्कारं परित्यज्य पञ्चमुष्टिकं लोचं विधायैकेन देवदूष्येणेन्द्रक्षिप्तेन युक्तः कृतसामायिकप्रतिज्ञ आविर्भूतमनःपर्यायिज्ञानोऽष्टप्रकारकर्म्मक्षयार्थं तीर्थप्रवर्त्तनार्थं चोत्थाय। आचा० ३०१। उत्थानं उत्था–ऊर्ध्वं वर्त्तन। राज० ५८।

उट्ठाण–उत्थानम्–उद्वसनम्। नंदी २०७। प्रथममुद्गमनम्। उत्त० ३५१। जन्म। भग० ६६१। चेष्टाविशेषः। ठाणा०। २३। उत्थानम्। पिण्ड० ७१। ऊर्ध्वीभवनम्। भग० ३११। सूर्य० २८६। श्रवणाय गुरुं प्रत्यभिमुखगमनम्। सूर्य० २९६। देहचेष्टाविशेष। प्रज्ञा० ४६३। ऊर्ध्वं भवनम्। जं० प्र० १३०। उत्पत्तिः। ज्ञाता० १८९।

उट्ठाणपरियाणियं–परियानं–विविधव्यतिकरपरिगमनं तदेव पारियानिक–चरितं उत्थानात्–जन्मन आरभ्य पारियानिकं उत्थानपारियानिकम्। भग० ६६०।

उट्ठाणपरियावणियं–उत्थानपर्यापनिकम्। आव० ६५।

उट्ठाणसुए–उत्थानश्रुतं–उद्वसनं तद्धेतु श्रुतमुत्थानश्रुतम्। नंदी २०७।

उट्ठाय–उत्थाय–अभ्युपगम्य। आचा० ३८। सर्वं सावद्य कर्म्म न मया कर्तव्यमित्येवं प्रतिज्ञामन्दरमारुह्य। आदाय–गृहीत्वा। आचा० १४०।

उट्ठावणा–उच्चेव ठावणा उत–प्राबल्येन वा ट्ठावणा उट्ठावणा। नि० चू० द्वि० ४७ अ।

उट्ठावणागहणं – उपस्थापनायां हस्तिदन्तोन्नताकारहस्ताभ्यां यद् रजोहरणादिग्रहण। बृ० द्वि० २८६ अ।

उट्ठिअ–उद्युक्त। ओघ० २२०। उत्थित –उद्वसितः। ओघ० ८९। उद्यत। ओघ० २२०।

उट्ठिए–उत्थित –ज्ञानदर्शनचारित्रोद्योगवान्। आचा० १७६। उत्–प्राबल्येन स्थित उत्थित। आचा० २५८।

उट्ठिय–उत्थित –संयमोद्योगवान। आचा० २२४। रूअ। नि० चू० प्र० २२८ आ। ईश्वरीभूतम्। पिण्ड० १२३।

उट्ठी–अष्ट्रा। आव० ६२८।

उट्ठुभह–अवष्ठीव्यत–निष्ठीव्यत। भग० ६८५।

उट्ठेह–उत्थाय–विद्युद्वय। भग० १२२।

उट्ठेमि–आयामि–आगच्छामि। आव० ६८५।

उडंकरिसी–ऋषिविशेष। बृ० प्र० २८६ आ।

उडए–उटज –तापसाश्रमगृहम्। निरय० २६।

उडओ–ओटज –तापसाश्रम। उत्त० १३४।

उडव–उटज –तापसाश्रमं। जीवा० १०५। कोट्टिंवो। नि० चू० द्वि० ७७ आ। पर्णकुटी। आव० १८९।

उडवसंठिया–उटजसंस्थिताः–तापसाश्रमसंस्थिता। आवलिकाबाह्यस्य दशमं संस्थानम्। जीवा० १०४।

उडंकरिसि–ऋषिविशेष। नि० चू० द्वि० ६८ आ।

उडुंडुग–उड्डंक –जनहास्य। नि० चू० तृ० ५० अ।

उडु–ऋतु। नि० चू० प्र० २३९ अ। उडुप–तरणकाष्ठ–तुम्बकादि। पिण्ड० १०२।

उडुकः–तप्र.। विशे० ३५३।

उडुकल्लाणिआ–ऋतुकल्याणिका, ऋतुषु षट्स्वपि कल्याणिका – ऋतुविपरीतस्पर्शत्वेन सुखस्पर्शा अथवाऽमृतकन्यात्वेन सदा कल्याणकारिण्य। जं० प्र० २६३।

उडुपं–नौ। आचा० ४१।

उडुबद्धियं–ऋतुबद्धम्–शीतोष्णकालयोर्मासकल्पम्। आचा० ३६५।

उडुवई–उडुपति –उडूना–नक्षत्राणा पति –प्रभु स। उत्त० ३५१।

उडुविमानं–सौधर्मे प्रथम प्रस्तट। ठाणा० २५१।

उडू – कालविशेष। भग० ८८८। ऋतवः–द्विमासमाना.। ठाणा० ८६। नक्षत्र। उत्त० ३५१।

उडूसंवच्छरे–ऋतुसवत्सर, कर्मसवत्सर, सवनसवत्सरश्च। सूर्य० १६८। यस्मिन् सवत्सरे त्रीणि शतानि षष्ठ्यधिकानि परिपूर्णान्यहोरात्राणां भवति एष ऋतुसवत्सर, ऋतवो लोकप्रसिद्धा वसन्तादय तत्प्रधानसवत्सर ऋतुसवत्सर। सूर्य० १६९।

उडुं–कुडयं। बृ० द्वि० ६१ आ।

उडुंचकादि–उद्घट्टकादि। ओघ० ८९।

उडुंचगा–उद्घका –याचका। बृ० प्र० ८६ आ।

उडुंचय – उड्डुंका –उद्घेटकास्तान कुर्वन्ति, आलापकान कर्णाघाटकेन पठित्वा तथैवोच्चरन्ति इत्यर्थ.। बृ० द्वि० ६० आ।

उडुंचये–कुट्टियाओ। नि० चू० प्र० १३१ अ।

उडुंडग–ऊर्ध्वीकृतदण्ड। औप० ९०।

उडुंति–व्यवस्थापयन्ति। आव० ५१९।

उड्डंवालग – कोट्टपालक । आव० २०४ । आरक्षक । आव० २०४ ।

उड्डग–पलालं । नि० चू० द्वि० ६१ अ ।

उड्डुच्छे–उद्घोपिते । नि० चू० द्वि० १३२ अ ।

उड्डणकं–प्रपच । नि० चू० तृ० २६ आ ।

उड्डु(ड्डे)ति । नि० चू० प्र० २३२ आ ।

उड्डमरं–उत्थाणं । नि० चू० प्र० १९४ आ ।

उड्डमादी–खितिखाणतो उड्डमादी । नि० चू० द्वि० ४४ आ ।

उड्डहणं–व्यङ्गनयोर्द्वयोरनवस्थाप्य । बृ० प्र० ३०८ अ ।

उड्डाह – उपघात । ओघ० ८९ । प्रवचनहीला । ओघ० ४८ । खिसा । पिण्ड० १०९ । अपवाद । आव० ८०० । उपघात । ओघ० १४९ । आव० १९५ ।

उड्डाहितो–निर्भर्त्सित । उत्त० १३९ ।

उड्डिओ–अवतारित । आव० ३९६ ।

उड्डियाओ–अवतारिता । दश० ५७ ।

उड्डुयं–उद्गारितम् । आव० ७७९ ।

उड्डुयरो–यः समुद्दिशन् सञ्ज्ञा वा व्युत्सृजन् चपलतया हस्तादीन्यपि लेपयति । बृ० प्र० २७२ अ ।

उड्डुयालेउं–मथितुम्–मन्थन कर्तुम् । दश० ६० ।

उड्डुति–छड्डेति । नि० चू० प्र० २९० अ ।

उड्डुह–धरय । नि० चू० प्र० २३७ अ ।

उड्ड–वमनं । नि० चू० प्र० ३१५ आ । नि० चू० ५८ अ । बृ० प्र० ७५ अ । णदीए समुद्दे वा वेलापाणियस्स प्रतिकूल उड्ड । नि० चू० तृ० ६३ आ ।

उड्डउंच्चत्त–ऊर्ध्वस्थितस्यैकमपरं, तिर्यक्स्थितस्यान्यत्, गुणोन्नतिरूप, तत्रेतरापोहेनोर्ध्वस्थितस्य यदुच्चत्व तदूर्ध्वोच्चत्वम् । ठाणा० ३६ ।

उड्डंकप्पेसु–ऊर्ध्व कल्पेषु–ऊर्ध्व कल्पोपरिवर्त्तिषु ग्रैवेयकादिविमानकेषु कल्पेषु–सौधर्मादिषु, ऊर्ध्वं वा उपरिकल्पयन्ते विशिष्टपुण्यभाजामवस्थितिविषयतयेति सौधर्मादयो ग्रैवेयकादयश्च सर्वेऽपि कल्पा एव तेषु । उत्त० १८६ ।

उड्डंजाणू–शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याभावाच्च उत्कटुकासन सन्नुपदिश्यते ऊर्ध्वं जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानु. । ज्ञाता० ९ ।

उड्ड–ऊर्ध्वं–कर्णक । ओघ० १६८ । सर्वोपरिस्थितम् । उत्त० २६८ । अनाच्छादितममालगृहम् । ठाणा० १५७ । ऊर्ध्वं । नंदी १५४ ।

उड्डकवाडे–ऊर्ध्वमपि लोकान्तं स्पृष्टे ते अधोऽपि च लोकान्तं स्पृष्टे ते ऊर्ध्वकपाटे । प्रज्ञा० ७५ ।

उड्डकाएहिं–ऊर्ध्वकाये –द्रोणैः काकैर्वैक्रियैः । सूत्र० १३७ ।

उड्डगो । ठाणा० १५८ ।

उड्डघट्टणा–ऊर्ध्वघट्टना–मुसलीद्वितीयभेद. । ऊर्ध्वं कुट्टिकादिपटलानि घट्टयति । ओघ० १०९ ।

उड्डचरा–ऊर्ध्वचरा–गृध्रादय. । आचा० २९१ ।

उड्डठाण – ऊर्ध्वस्थानम्–कायोत्सर्गादि । उत्त० ६९९ । कायोत्सर्ग., ऊर्ध्वतया स्थानम्–अवस्थानं पुरुषस्य ऊर्ध्वस्थानम् । ठाणा० ३ ।

उड्डत्ता–मुख्यता । भग० २५४ । ऊर्ध्वता–लघुपरिणामता । प्रज्ञा० ५०४ । भग० २३ ।

उड्डमंतो – उद्वमन्–अधस्तनमध्यमत्रिभागगतवातसंक्षोभवशाज्जलमूर्ध्वमुत्क्षिपन् । जीवा० ३०८ ।

उड्डरेणु – ऊर्ध्वरेणु –ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मोपलभ्यो रेणुः । भग० २७७ ।

उड्डरेणू–ऊर्ध्वरेणुः–स्वतः परतो वा ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मा रेणु. । अनु० १६३ ।

उड्डलोए–तिर्यग्लोकस्योपरिष्टादूर्ध्वलोक । प्रज्ञा० १४४ ।

उड्डलोयतिरियलोए–ऊर्ध्वलोकस्य यदधस्तनमाकाशप्रदेशप्रतर यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वोपरितनमाकाशप्रदेशप्रतरमेष ऊर्ध्वलोकतिर्यग्लोक । प्रज्ञा० १४४ ।

उड्डलोयपयरं–ऊर्ध्वलोकप्रतरं–तिर्यग्लोकस्य चोपरि यदेकप्रादेशिकमाकाशप्रतरं तत् । प्रज्ञा० १४४ ।

उड्डवाए – ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववात । जीवा० २९ । ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वात. स ऊर्ध्ववात । प्रज्ञा० ३० ।

उड्डवियडं–मालरहितं छायरहितं परं पार्श्वत कुड्ययुक्तं तदूर्ध्वविवृतं भवति । बृ० द्वि० १८१ अ ।

उड्डवेइया–ऊर्ध्ववेदिका, यत्र जान्वोरुपरि हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा । ओघ० ११० ।

उड्डस्सासो–ऊर्ध्वश्वास. । आव० ६२९ ।

उड्डा–ऊर्ध्वं–वमनम् । बृ० प्र० ७५ अ ।

उड्डाई–ऊर्ध्वादि–छर्दनादिदोष । ओघ० १३६ ।

उड्ढिया–ऊर्ध्वीकृता। आव० २२३।

उड्ढोववन्नगा–ऊर्ध्वलोकस्तत्रोपपन्नकाः–उत्पन्ना ऊर्ध्वोपपन्नकाः। ठाणा० ५७। सौधर्मादिभ्यो द्वादशभ्यः कल्पेभ्य ऊर्ध्वमुपपन्नाः ऊर्ध्वोपपन्ना। जीवा० ३४६।

उणादि–उण्प्रभृतिप्रत्ययान्तं पदम्। प्रश्न० ११७।

उणुयत्ता–स्थिता। आव० २७२।

उण्डी–पिण्डी। ज्ञाता० ९१।

उण्णए–उच्छिन्न नतं–पूर्वप्रवृत्तं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छिन्नो वा नयो–नीतिरभिमानादेवोन्नयो नयाभाव इत्यर्थ। भग० ५७२।

उण्णणं। नि० चू० प्र० १२४ अ।

उण्णमणी–उन्नामिनी–विद्याविशेष। दश० ४१।

उण्णय–उन्नत–प्रधानजातिक। आव० २४०।

उण्णयविसालकुलवंसा–उन्नता प्रधानजातित्वात् विशाला–पितामहपितृव्याद्यनेकसमाकुला कुलान्येव वंशा–अन्वया येषा ते उन्नतविशालकुलवंशा। आव० २४०।

उण्णया–उन्नतानि–गुणवन्ति, उच्चानि। औप० ३।

उण्णयासणं–उन्नतासनं–उच्चासनम्। जीवा० २००।

उण्णागं–उर्णाकं, ग्रामविशेष। आव० २११।

उण्णिए–अविलोममयम्। ठाणा० ३३८। ऊर्णाया इदम् और्णिकम्। अनु० ३५।

उण्णियं–ऊरणो रोमेसु उण्णियं। नि० चू० प्र० १२६ अ।

उण्णेज्जं–उपनेयम्। दश० ८६।

उण्हं–उष्णं, उष्णरूप। सूर्य० १७२। उषति–दहति जन्तुमिति उष्णम्। उत्त० ३८। चतुर्थ परीषह। आव० ६५६। उष्णः–घर्म। ठाणा० ३४५।

उण्हकालो–उष्णकाल–ग्रीष्मः। ओघ० २१२।

उण्हयं–उष्णम्। आव० ८५८।

उण्हवणं–उष्णापनम्–उष्णीकरणम्। पिण्ड० ८२।

उण्हा–उष्णा। आव० ३८९।

उण्होदए–उष्णोदक-स्वभावत एव क्वचिन्निर्झराद्यावुष्णपरिणामम्। जीवा० २५।

उण्होदय–उष्णोदक। आव० ८५५।

उण्होला–घृतेलिका। आव० २१७।

उत्–प्राबल्येन, अपुनर्भवरूपतया वा। प्रज्ञा० ११२। प्राबल्ये। प्रज्ञा० ५५९।

उत्कम्पनदीपाः–ऊर्ध्वदण्डवन्तः। ज्ञाता० ४४।

उत्करिकाभेदः–समुत्कीर्यमाणप्रस्थकस्येवेति। ठाणा० ४७५।

उत्कर्षण। ठाणा० २१२। आचा० २७७।

उत्कुट्टित–चिंचनकादि। व्य० प्र० २८ अ।

उत्कुरुटिकादि–आसनविशेष। ओघ० ४१। तुषराश्यादि। ओघ० ४१।

उत्क्षिप्तचरका–उत्क्षिप्तं–पाकपिठरात् पूर्वमेव दायकेनोद्धृत्त तये चरन्ति–गवेषयन्ति ते। बृ० प्र० २५७ आ।

उत्क्षिप्यते। ओघ० २१५।

उत्तइया–उत्तेजिता–अधिकं दीपिता। दश० ११५।

उत्तणं–उत्तृणम्–उद्गततृणम्। प्रश्न० १४।

उत्तणा–दीर्घत्रि(तृ)णा। नि० चू० प्र० ३३६ अ।

उत्तणाणि–उत्तृणानि–ऊर्ध्वीभूतानि तृणानि दीर्घाणीतियावत् तानि यत्र मार्गे भवन्ति। बृ० द्वि० ७९ आ।

उत्तत्तकणगवन्ना–उत्तप्तकनकवर्णा–ईषद्रक्तवर्णा। प्रज्ञा० ९५।

उत्तम–उत्तमो गिरिषु सर्वतोऽप्यधिकसमुन्नतत्वात्, मेरोश्चतुर्दश नाम। जं० प्र० ३७५। गिरीणामुत्तम इति उत्तम। मन्दरस्य चतुर्दश नाम। सूर्य० ७८। मिथ्यात्वमोहनीयज्ञानावरणचारित्रमोहादित्रिविधतमस उन्मुक्ता इति उत्तमा। आव० ५०८। उपरिवर्ति। देवलोकाद्यपेक्षया प्रधानम्। उत्त० ३१९। ऊर्ध्वं तमस–अज्ञानाद्यत्तत्था, अज्ञानरहित इत्यर्थ। ज्ञाता० ७६।

उत्तमकट्ठ–उत्तमकाष्ठा–प्रकृष्टावस्था। जं० प्र० ९८। उत्तमकाष्ठा–परमकाष्ठा, उत्तमावस्था परमकष्टो वा। भग० ३०५।

उत्तमकट्ठपत्त–उत्तमकाष्ठाप्राप्त–परमप्रकर्षप्राप्त। सूर्य० ११।

उत्तमकट्ठपत्ता–परमकाष्ठाप्राप्ता, उत्तमावस्थाया गता, परमकष्टप्राप्ता वा। भग० ३०५।

उत्तमट्ठ–अनशनाय। (आउ०)। उत्तमार्थ–अनशनम्। ओघ० १४। उत्तम–प्रधानोऽर्थ–प्रयोजन स उत्तमार्थ–मोक्ष। उत्त० ३५३। पर्यन्तसमयाराधनारूप। उत्त० ४७९। मोक्ष। उत्त० ५२३।

उत्तमट्ठकालंमि–उत्तमार्थकाले–अनशनकाले। ओघ० २२७

उत्तमट्ठगवेसए–उत्तमार्थगवेषक–उत्तम–प्रधानोऽर्थ–प्रयो-

जन उत्तमार्थः, स च मोक्ष एव तं गवेषयति–अन्वेषयतीति। उत्त० ३५३।

उत्तमट्ठपत्ता– उत्तमार्थप्राप्ता, उत्तमान् तत्कालापेक्षयोत्कृष्टानर्थान्–आयुष्यकादीन् प्राप्ता उत्तमार्थप्राप्ता, उत्तमकाष्ठां प्राप्ता वा–प्रकृष्टावस्था गता। भग० २७७।

उत्तमसाहवेहिं–उत्तमसाधुभि। पउ० १–१०।

उत्तमा–उत्तमा–प्रधाना, ऊर्ध्वं वा तमस इति उत्तमस.। आव० ५०७। पूर्णभद्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। भग० ५०४। ठाणा० २०४। प्रथमरात्रिनाम। सूर्य० १४७। जं० प्र० ४९१।

उत्तमार्घम्–परार्घं, महार्घं वा। दश० २२१।

उत्तमुत्तम–उत्तमोत्तम्–अतिशयप्रधानम्। उत्त० ३१९।

उत्तमेणं–ऊर्ध्वं तमस –अज्ञानाद्यत्तन् तथा तेन ज्ञानयुक्तेन। उत्तमपुरुषासेवितत्वाद्वोत्तमेन। भग० १२५।

उत्तयंतं–उत्तुयमानं–ऊर्ध्वं व्यध्यमानम्। विपा० ७४।

उत्तरं–वासकप्पकवली। नि० चू० प्र० ३५३ आ।

उत्तरंगं–उत्तराङ्ग। जीवा० ३५९। उत्तरङ्ग–द्वारस्योपरि तिर्यग्व्यवस्थितं काष्ठम्। जीवा० २०४। जं० प्र० ४८।

उत्तर–उत्तरत–उत्तरदिग्वर्त्ती सर्वेभ्यो भरतादिवर्षेभ्य इति, मेरुनाम। जं० प्र० ३७६। ऐरावते द्वाविंशतितमतीर्थंकरः। समः० १५४। अग्रवर्त्ती। विग्रादिशक्त्यभावेऽनुलङ्घनीय। जं० प्र० ४६२। भवधारणीयशरीरापेक्षया कार्योत्पत्तिकालापेक्षया चोत्तरकालभावि। जं० प्र० ४०२। कार्यम्। सूत्र० २८५।

उत्तरअंतरदीवा– उत्तरस्या दिशि येऽन्तरद्वीपा। भग० ४९२।

उत्तरउत्तरा–उत्तरोत्तरविमानवासिन, उत्तरो वा उपरितनस्थानवर्त्ती, उत्तर–प्रधानो येषु ते उत्तरोत्तरा। उत्त० १८७।

उत्तरकंचुइज्ज–उत्तरकञ्चुक–तनुत्राणविशेष.। विपा० ४६।

उत्तरकंचुइय–उत्तरकञ्चुक–तनुत्राणविशेष। विपा० ४७।

उत्तरकरणं– मूलत स्वहेतुभ्य उत्पन्नस्य पुनरुत्तरकाल विशेषाधानात्मकं करणम्। उत्त० १९४। औदारिकवैक्रियाहारेषु तैजसकार्मणयोस्तदसम्भवादङ्गोपाङ्गनामैवोत्तरकरणमिति। उत्त० १०७।

उत्तरकिरियं–उत्तरक्रियम्–उत्तरा–उत्तरशरीराश्रया क्रिया–गतिलक्षणा यत्र गमने तदुत्तरक्रियम्। भग० २१२।

उत्तरकुरा–उत्तरपूर्वरतिकरपर्वतस्य पश्चिमायामीशानदेवेन्द्रस्य रामाराख्या राजधानी। जीवा० ३६५। ठाणा० २३१। नेमनाथशिबिकानाम। सम० १५१। उत्तरकुरु। आव० ११६। मेरोर्जम्बूद्वीपगत उत्तरत उत्तरकुरुनामा विदेह.। जं० प्र० ३१०।

उत्तरकुरु–कुरुविशेष। जीवा० २६६। वापीनाम। जं० प्र० ३७०। नेमनाथस्य शिबिका। उत्त० ४९२। साकेतनगरे उद्यानम्। विपा० ९५। आव० ११५। क्षेत्रविशेष.। ठाणा० ६८। अकर्मभूमिविशेष। प्रज्ञा० ५०।

उत्तरकुरुकूडे–उत्तरकुरुदेवकूटं। जं० प्र० ३३७।

उत्तरकुरुदहे–उत्तरकुरौ महाद्रह। ठाणा० ३२६। उत्तरकुरुहद द्रहविशेष। जं० प्र० ३३०।

उत्तरकुरुवत्तव्वया-उत्तरकुरुवक्तव्यता। भग० २७६।

उत्तरकुरुवाए–उत्तरकुरुषु। पउ० ३१–८।

उत्तरकुरुकुड– उत्तरकुरुकूटं–गन्धमादनपर्वते चतुर्थकूट। जं० प्र० ३१३।

उत्तरकूलग–गङ्गाया उत्तरकूल एव वास्तव्यम्। भग० ५१९। औप० ९०।

उत्तरकूला– उत्तरकूलगा–गङ्गोत्तरकूलवास्तव्यास्तापसा। निरय० २५।

उत्तरखत्तियकुंडपुर–नगरविशेष। आचा० ४२१।

उत्तरगंधारा–उत्तरगान्धारा–गान्धारस्वरस्य पञ्चमी मूर्छना। जीवा० १९३। गान्धारग्रामस्य पञ्चमी मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तरगज्जभो–उत्तरगर्जभ.–वातविशेषः। आव० ३८७।

उत्तरगुण–उत्तरगुण, पौरुषीपुरिमार्धैकाशनकोपवासादितपोरूप। विशे० १०१६।

उत्तरगुणनिर्मितः– पुष्पप्रायोग्याकारवन्ति द्रव्याणि। आव० २७७।

उत्तरगुणनिर्वर्त्तितः– यस्तु काष्ठचित्रकर्मादिष्वालिखित स। बृ० प० १४३ अ।

उत्तरगुणपच्चक्खाण– उत्तरगुणप्रत्याख्यानम्। आव० ८५९।

उत्तरगुणलद्धि – उत्तरगुणा –पिण्डविशुद्धयादयस्तेषु चेह प्रक्रमात्तपो गृह्यते ततश्च उत्तरगुणलब्धि–तपोलब्धिम्। भग० ७९५।

उत्तरगुणा–दशविधप्रत्याख्यानरूपा। भग० ८९४। नि० चू० द्वि० १६६ अ। मूलगुणापेक्षया स्वाध्यायादीन्। उत्त० ५३६।

उत्तरगुणे–उत्तरगुणविषय–क्रीतकृतादि। आव० ३२५।

उत्तरचूलियं–उत्तरचूडम्, यद् वन्दनं कृत्वा पश्चान्महता शब्देन मस्तकेन वन्द इति भणति, कृतिकर्मणि एकोनत्रिंशत्तमो गुण। आव० ५४४।

उत्तरज्झ–उत्तराध्य –उत्तराध्ययनम्। तृतीया निर्युक्तिः। आव० ६१।

उत्तरज्झयणा–उत्तराध्ययनानि। आव० ७५९।

उत्तरज्झयणाई – उत्तराध्ययनानि–सर्वाण्यपि चाध्ययनानि प्रधानान्येव तथाऽप्यमून्येव रूढयोत्तराध्ययनशब्दवाच्यत्वेन प्रसिद्धानि। नंदी २०६।

उत्तरज्झाए–उत्तराध्याया –उत्तरा –प्रधाना अधीयन्त इत्यध्याया –अध्ययनानि तत उत्तराश्च ते अध्यायाश्च। उत्त० ७१२।

उत्तरड्ढभरहकूड – उत्तरार्द्धभरतनाम्नो देवस्य निवासभूत कूट उत्तरार्धभरतकूटम्। जं० प्र० ७७।

उत्तरणं–निरंतर। नि० चू० द्वि० ७७ अ। एक्काए चेव अप्पो य गच्छा मे उत्तरण। नि० चू० द्वि० ७७ आ। तुंबोडुपादिभिः नौवर्जितैर्यद् उत्तीर्यते तद् उत्तरणम्। बृ० तृ० १६१ अ। जत्थ तरंतो जल संघट्टेति त सव्व उत्तरण भन्नति। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

उत्तरद्दारिता–उत्तरद्वारिका। ठाणा० ४२४।

उत्तरद्धे–उत्तरार्द्धे–उत्तरभागे। जं० प्र० ४८२।

उत्तरपओगकरणं–उत्तरप्रयोगकरणं, जीवप्रयोगकरणद्वितीयभेद। आव० ८५८।

उत्तरपट्टो–उत्तरपट्टक। ओघ० २११। उत्तरपट्ट। ओघ० ८३।

उत्तरपदव्याहतं–गत्यागतिलक्षणे द्वितीयो भेद। आव० ५८१।

उत्तरपरिकर्मक्रियते–उद्घ्रियते। आव० ७६५।

उत्तरपासो–उत्तरपार्श्व। जीवा० २०८, ३५९।

उत्तरपुरच्छिमिल्लाओ–उत्तरपूर्वेण, उत्तरपूर्वस्यां दिशि। जीवा० १४४।

उत्तरपुरच्छिमे–औत्तरपौरस्त्य, उत्तरपूर्वारूपो दिग्विभागः-ईशानकोण। सूर्य० २।

उत्तरपुरत्थिमेल्लं–उत्तरपूर्वे, ईशाने कोणे इत्यर्थ। सूर्य० २१।

उत्तरपुव्वा–ईशानकोण। आव० ६३०।

उत्तरफग्गुणी–उत्तरफाल्गुनी, हस्तोत्तरा। आव० २५५।

उत्तरबलिस्सहगणे–गणविशेष। ठाणा। ४५१।

उत्तरभद्दपदाः–प्रोष्ठपदाः। सूर्य० ११४।

उत्तरमंदा –उत्तरमन्दाभिधा गान्धारस्वरान्तर्गता सप्तमी मूर्च्छना। जं० प्र० ३८। मध्यमग्रामस्य प्रथमा मूर्छना। ठाणा० ३९३। गान्धारस्वरस्य सप्तमी मूर्छना। जीवा० १९३।

उत्तरमहुर–वणिग्विशेष। नि० चू० प्र० २१० अ।

उत्तरवाए–उत्तरवाद–उत्कृष्टवाद। आचा० २४३।

उत्तरवेउव्विते–उत्तरवैक्रियम्। प्रज्ञा० २९८।

उत्तरवेउव्वियं–उत्तरवैकुर्विकम्, उत्तरमुत्तरकालभविनस्वभविनस्वभाविकमित्यर्थ, वैकुर्विक विकुर्वणे तेन निर्वृत्तं वैकुर्विकम्। विशिष्टवस्तु विशिष्टाभरणसुश्लिष्टतत्परिधानसमीचीनकुङ्कुमाद्युपलेपनजनितमतिमनोहारिरामणीयकम्। व्यं० प्र० १९५ आ। उत्तरवैक्रियम्–पूर्ववैक्रियाऽपेक्षयोत्तरकालभाविं वैक्रियम्। भग० ७२।

उत्तरवेउव्विया–उत्तरवैक्रिया, तद्ग्रहणोत्तरकाल कार्यमाश्रित्य या क्रियते सा। अनु० १६३।

उत्तरसत्तासुओ–उत्तरसत्त्वासुक, उत्तरपौरस्त्यवातभेद। आव० ३८६।

उत्तरसाढा – उत्तराषाढा,–अकम्पितजन्मनक्षत्रम्। आव० २५५।

उत्तरसाला – अत्थानिगादिमडवो हयगयाण वा साला उत्तरसाला। नि० चू० प्र० २६९ अ।

उत्तरा–उत्तरमथुरा। आव० ६८८। उत्तरवाचाला। आव० १९५। उत्तराभाद्रपदा–उत्तराफाल्गुनी "उत्तराषाढा"। सूर्य० १३०। उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरभद्रपदा। जं० प्र० ५०२। उत्तरमथुरा। आव० ३५६। बोटिकनिव-

भूतेर्भगिनी। आव० ३२४। गित्रभूतेभगिनी। विशे० १०२२। मध्यमग्रामस्य तृतीया मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तराधर्यम्। भग० २६८।

उत्तरापथे-देशविशेष। नि० चू० तृ० ४४ अ।

उत्तरावक्कमणं-उत्तरस्या दिश्यपक्रमणं-अवतरण यस्मात्तद् उत्तरापक्रमणम्-उत्तराभिमुख पूर्वं तु पूर्वाभिमुखमासीदिति। भग० ४७७। उत्तरस्या दिश्यपक्रमण-अवतरण यस्मात्तदुत्तरापक्रमण-उत्तराभिमुखम्। ज्ञाता० ५६।

उत्तरावह-उत्तरापथ, उत्तरदिग्विभाग। आव० ९९। नि० चू० प्र० ९६ आ। उत्तरदिग्गता देशा। विशे० ६२४। उत्तरदिक्सम्बन्धी देश। आव० ८३०, २९५। बृ० द्वि० २२७ अ। नि० चू० प्र० १६ अ।

उत्तरासंग-उत्तरासङ्गः, वक्षसि तिर्यग्विस्तारितवस्त्रविशेष। जं० प्र० १८७। उत्तरीयस्य देहे न्यासविशेष। भग० १३८।

उत्तासणगं-उत्त्रासनकं-भयङ्करम्। ज्ञाता० १३३।

उत्तरासमा-मध्यमग्रामस्य चतुर्थी मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तरासाढा-उत्तराषाढाना-उत्तराषाढापर्यन्तानां नक्षत्राणाम्। सूर्य० ११४।

उत्तरासाढाणक्खत्ते-उत्तराषाढानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।

उत्तरित्तए-उत्तरीतु-लङ्घयितुम्। ठाणा० ३०९।

उत्तरिज्ज-उत्तरीयम्-उत्तरासङ्गः। जं० प्र० १८९। भग० ३१९। वसनविशेष। भग० ४६८। उपरिकायाच्छादनम्। ज्ञाता० २७।

उत्तरिज्जयं-उत्तरीयक-उपरितनवसनम्। उपा० ५०।

उत्तरीकरणं-उत्तरकरणं पुनः संस्कारद्वारेणोपरिकरणमुच्यते, उत्तरं च तत् करणं च इत्युत्तरकरणं, अनुत्तरमुत्तरं क्रियत इत्युत्तरीकरणम्। आव० ७७९।

उत्तरीयं-प्रावरण प्रच्छदपटीत्यर्थः। उत्तरीयं पुनर्यत् तदुपरि प्रस्तीर्यते। बृ० प्र० ९८ अ।

उत्तरोट्ठरोमा-दाढियाओ। नि० चू० प्र० १९० अ।

उत्तरो-उत्तरग्रहणात् सजतसम्मदिट्ठिग्गहणं। नि० चू० प्र० ६३ अ।

उत्ताणग-उत्तान। आव० ६४८। उत्तानका-ऊर्ध्वमुखशायिन। जं० प्र० २३९।

उत्ताणतो-उत्तानक। उत्त० २४४।

उत्ताणयं-उत्तानक-उत्तानीकृतम्। प्रज्ञा० १०७। उत्तानकम्-ऊर्ध्वमुखम्। उत्त० ६८५। भग० १२५।

उत्ताणसेज्जए। निरय० ३४।

उत्ताणा-उत्ताना। ठाणा० २९९।

उत्तानं-स्पष्टम्। प्रज्ञा० ५९९। प्रतलम्। ठाणा० २७८। स्वच्छतयोपलभ्यमध्यस्वरूपत्वम्। ठाणा० २७८।

उत्तानीकृतं। सूर्य० ३६।

उत्तारंती-अवतारयन्ती। आव० ६७६।

उत्तारो-उत्तार-अधस्तादवतरणम्। जीवा० २६९। जलमध्याद्बहिर्विनिर्गमनम्। जीवा० १९७।

उत्तालं-उत्-प्राबल्यार्थे इत्यतितालमस्थानताल वा। ठाणा० ३९६। अनु० १३२। उत्-प्राबल्येन अतितालं अस्थानतालं वा। जं० प्र० ४०। जीवा० १९४।

उत्तालिज्जंताणं-आलपनम्। राज० ४६।

उत्तासणओ-उद्वेगजनक। ठाणा० ४६१।

उत्तासणयं-उत्त्रासनिका-स्मरणेनाप्युद्वेगजनिका। भग० १७५।

उत्तासिया-उत्तासिता-आस्फालिता। भग० १५४।

उत्तिंग-उत्तिङ्ग-पिपीलिकासन्तानक। आचा० २८५। तृणाग्र। आचा० ३२२। रन्ध्रम्। आचा० ३७९। उदगं हत्थादिणा पिहेति। नि० चू० तृ० ६३ आ। किटिकानगरम्। दश० १७५। सर्पच्छत्रादिः। दश० २२९। गर्दभाकृतिजीवविशेष, कीटिकानगरं वा। आव० ५७३। कीलियावासो। नि० चू० प्र० २५५ आ। कीडियणगरगो उत्तिंगो, फरुगदृभो वा। नि० चू० द्वि० ८३ अ। कीटिकानगरम्। बृ० तृ० १६६ आ। छिद्रं। नि० चू० तृ० ६३ आ। कीडियानगरयं। दश० चू० ८०।

उत्तिंगसुहुम-उत्तिङ्गसूक्ष्मं-कीटिकानगरम्। दश० २३०।

उत्तिण्णो-उत्तीर्ण-अवतीर्णं। ओघ० २०।

उत्तिन्न-अवतीर्णे। दश० १९५।

उत्तिमं-उत्तमम्-श्रेष्ठम्। आव० ४८७।

उत्तिमट्ठो-उत्तमार्थ-अनशनम्। बृ० द्वि० १०० अ। उत्तमार्थ-कालधर्म। आव० ६२६। भक्तप्रत्याख्यानम्। आव० ५६३।

उत्ती-उक्ति, शब्दकरणम्। आव० ४६४।

उत्तुअणा-उत्तेजना। बृ० द्वि० ७२ आ।

उत्तुइउ-(देशी०) गर्व्वै। व्य० प्र० २१० आ।
उत्तुइया-उत्तेजिता। बृ० तृ० २७ आ।
उत्तुडियाइ-राज्यादि। आव० ५५५।
उत्तुपियं-उत्तुपितं-स्नेहितम्। प्रश्न०। ५९।
उत्तेड-बिन्दु। पिण्ड० १०।
उत्तेत्ता-अपवर्त्त्य। आव० ६२४।
उत्थरंत-आस्तृण्वन्-आच्छादयन्। प्रश्न० ४७।
उत्थरमाणो-अभिभवन्। आव० ५६७।
उत्थल - उन्नतानि-स्थलानि धूलपुञ्जच्छ्रयरूपाणि। जं० प्र० १६८।
उत्थल्लं। ओघ० १९२।
उत्था-उत्थानं-मूलोत्पत्तिम्। उत्त० ४७५।
उत्थाण-अतिसार। व्य० द्वि० २७४ अ।
उत्थिए-यूथं-सङ्घान्तरं, तीर्थान्तरमित्यर्थं। उपा० १३।
उत्थितवादः-उत्थितस्तद्वाद। आचा० २०३।
उत्थिय-उत्थिय -यूथिक। भग० ३२४।
उत्थुभण-अवस्तोभनम्, अनिष्टोपशान्तये निष्ठीवनेन थुथुकरणम्। बृ० प्र० २१५ अ।
उत्पला-हस्तिनागपुरे भीमस्य भार्या। ठाणा० ५०७।
उत्पलिनीकन्द-पद्मनीकन्द। प्रज्ञा० ३७।
उत्पातनिपातप्रसक्तसंकुचितप्रसारितरेकरचितभ्रान्तसम्भ्रान्तः- एकत्रिंशत्तमो नाट्यविधि। जीवा० २४७।
उत्पादपूर्व-प्रथमपूर्वनाम। उत्त० ३४२।
उत्पादसभा-उत्पादभवनविमानमादिनी सभा। प्रश्न० १३५।
उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलं-स्वविषये श्रोतॄणां जनितमविच्छिन्न कौतुक येन तत्तथा। षड्विंशतितमो वचनातिशय.। सम० ६३।
उत्प्रासनं। उत्त० ४३४।
उत्प्रासयेत्-आचा० १२९।
उत्प्रासवचनं। नि० चू० प्र० १०८ आ।
उत्प्रास्यमान-उन्नतमाना-गर्वाध्मातो महता चारित्रमोहेन मुह्यति ससारमोहेन वोह्यत इति। आचा० २१६।
उत्प्लुत-भीत। ज्ञाता० १६१।
उत्प्लुत्य-बुद्धया गत्वा। सूर्य० ४७।
उत्सकलय-अनुजानीहि। ओघ० ६८।
उत्सर्गसमितिः-स्थण्डिले स्थावरजङ्गमजन्तुवर्जिते निरीक्ष्य प्रमृज्य च मूत्रपुरीषादीनामुत्सर्गः। तत्त्वा० ९-५।
उत्सर्गसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।
उत्सर्गापवादसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।
उत्सर्पण-क्रियाविशेष। आचा० ३६४।
उत्सादितं। उत्त० ६५।
उत्साहः-सूत्रार्थपरावर्तनायामभियोग.। बृ० प्र० ११३ आ।
उत्सिक्तं-काञ्जिकस्य सौवीरिणीतो यद् निष्काशनं तत्। बृ० प्र० २७५ अ।
उत्सिक्ता। उत्त० ३१९।
उत्सूर वेलातिक्रम। पिण्ड० ७१। विशे० ६३७।
उत्सृजति-मुञ्चति, निसृजति। विशे० २०९।
उत्सृ(च्छृ)तम्-प्रासादादि। आव० ८२६।
उत्सृष्टम्-उत्सर्जनम्-त्याग। आचा० ३६३।
उत्सेधबहुलं-उत्सेधाख्यो नाभेरधस्तनो देहभागो गृह्यते, तत सह आदिना-नाभेरधस्तनभागेन यथोक्तप्रमाणलक्षणेन वर्तत इति सादि, उत्सेधबहुलमिति भाव। जीवा० ४२।
उदंक-उदङ्को-येनोदकमुदच्यते। ज० प्र० १०१। जीवा० २६६।
उदंचनम्-अरघट्टघटीनिर्वहादिभिरुत्सेचनम्। उत्त० ५९९। पिण्ड० १५३।
उदंत-सरीरवट्टमाणी, वत्ता। नि० चू० तृ० १३३ अ। उदन्त -वृत्तान्त। आव० ६९२।
उदंतवाहगो-उदन्तवाहक, वृत्तान्तवाहक। आव० ५३६।
उदंतवाहतो-उदन्तवाहक -दूत। उत्त० १०८।
उदइए-उदय.-कर्म्मणां विपाक. स एवौदयिक-क्रियामात्रं, उदयेन निष्पन्न औदयिक। भग० ६४९, ७२२। औदयिक -ज्ञानावरणादीनामष्टानां प्रकृतीनामात्मीयात्मीयस्वरूपेण विपाकतोऽनुभवनमुदय स एव, यथोक्तेन वोदयेन निष्पन्न.। अनु० ११४।
उदई-उदय-अनुक्रमोदितस्यैवेति। भग० ५१२। अनुक्रमगतानामुदय। भग० ९७३।
उदउल्ल-उदकार्द्र, यद् बिन्दुसहितं भाजनादि गलद्बिन्दुरिति। ओघ० १७०। स्पष्टोपलभ्यमानजलससर्गं, अप्का-

यस्त्रिक्षिनचतुर्थभेद. । पिण्ड० १८९ । उदकेनार्द्र । अनु० १६० । गलद्‌बिन्दु । आचा० ३४६, ३७९ ।

उदउल्लादि–उदकार्द्रादि । आव० ५२ ।

उदए–पर्वगवनस्पतिविशेष । प्रज्ञा० ३३ । उदय. । ओघ० ११३ । उदक –अन्ययूथिकः । भग० ३२३ । पेढालपुत्रो निर्ग्रन्थ । सूत्र० ४०९ । षष्ठ आजीविकोपासकः । भग० ३६९ । जलरुहवनस्पतिविशेष । प्रज्ञा० ३१, ३३ । जम्बूद्वीपभरते आगामिसप्तमतीर्थंकर । सम० १५३ । तृतीयतीर्थकृत्पूर्वभवनाम । सम० १५४ । उदय –जीवगतो लेश्यादिपरिणाम , फलप्रदानाभिमुख्यलक्षणं कर्म । उत्त० ३५ । उदय.–विपाकवेदनानुभवरूप । पिण्ड० ४१ । उदक । प्रश्न० २२ । निर्ग्रन्थविशेष । सूत्र० ४०७ ।

उदचरा–उदकचरा.–उदके चरन्तीति उदकचरा –पूतरकच्छेदनकलोड्डणकत्रसा मत्स्यकच्छपादय. । आचा० २३८ ।

उदकं–जलरुहविशेष । जीवा० २६ । जलरुहभेद । आचा० ५७ ।

उदकगृहम्–उदकभवनम् । आचा० ३४१, २३८ ।

उदकप्रतिष्ठापनमात्रक–उपकरणधावनोदकप्रक्षेपस्थानम् । आचा० ३६१ ।

उदकरजः–उदकरेणुसमूह । औप० ४७ । जीवा० १९१ ।

उदकार्द्र–बिन्दुसहित । बृ० प्र० २८२ आ ।

उदग–उदक । सूत्र० ३०७ । अणतवणप्फई । दश० चू० १२० । नि० चू० द्वि० ७९ अ । उदकम्–अनन्तवनस्पतिविशेषः । दश० २२१ । नगरपरिखाजलम् । ज्ञाता० १० । जलाश्रयमात्रम् । भग० ९२ । जनपदसलत्वे पयः, उदकादिपर्याय. । दश० २०८ । पूत्युदकोपमानत खल्वन्नपानमुपभोक्तव्यम् । साधोरुपमानम् । दश० १९ । गिरापानीयम् । दश० १५३ ।

उदगगब्भे–उदकगर्भ –कालान्तरेण जलप्रवर्षणहेतु । भग० १३३ ।

उदगजोणिया–उदकस्य योनय.–परिणामकारणभूता उदकयोनय त एवोदकयोनिका–उदकजननस्वभावा । ठाणा० १४२ ।

उदगणाए–षष्ठाङ्गे द्वादश ज्ञातम् । उत्त० ६१४ । उदक–नगरपरिखाजलं तदेव ज्ञातं–उदाहरण उदकज्ञातम् । ज्ञाता० १० । सम० ३६ । ज्ञाताया द्वादशमध्ययनम् । आव० ६५३ ।

उदगतीरं–उदगागारातो जत्थ णिज्जति उदग त उदगतीरं, दूरंपि णजति उदग तम्हा ण होइ तं उदगतीरं, तो जत्तियं णदीपूरेण अक्कमति तं उदगतीरं, अहवा जहिं ठिएहिं जल दीसति अहवा णदीए तडीए उदगतीरं, अहवा जहिं ठितो जलट्ठिएण सिंचति सिंधुगंगादिणा तं जलतीरं, अहवा जावतियं विविओ फुसति अहवा जावतितं जलेण फुडं तं उदगतीरं । नि० चू० तृ० १६ आ ।

उदगत्ताभा–गौतमगोत्रोत्तरभेदः । ठाणा० ३९० ।

उदगदोणी–उदगदोणी वा–अरहट्टस्स भवति जीए उवरिं घडीओ पाणिय पाडेंनि । अहवा घरंगणए कट्ठमयी अप्पोदएसु देसेसु कीरइ तत्थ मणुस्सा ण्हावेंति । दश० चू० ११० । जलभाजनं यत्र तप्तं लोहं शीतलीकरणाय क्षिप्यते । भग० ६९७ । उदकद्रोणि –अरहट्टजलधारिका । दश० २१८ आ ।

उदगपउरो–उदकप्रचुर.–देशविशेष सिन्धुविषयवत् । बृ० तृ० १३८ आ ।

उदगपडणं–उदकपतनम् । आव० २७३ ।

उदगबिंदु–उदकबिन्दु । अनु० १६१ ।

उदगभाविया–जा उदके छूढपुव्वा सा । नि० चू० प्र० ४६ अ ।

उदगभासो – उदकभास. –शिवकभुजगेन्द्रस्यावासपर्वत । जीवा० ३११ ।

उदगमच्छ–उदकमत्स्य –इन्द्रधनु खण्डम् । भग० १९६ । इन्द्रधनुष. खण्डम् । जीवा० २८३ । इन्द्रधनु.खण्डानि । अनु० १२१ ।

उदगमाला – उदकमाला – समपानीयोपरिभृता माला । जीवा० ३२४ । उदकशिखा, वेलेत्यर्थ । ठाणा० ४८० ।

उदगवलणी । नि० चू० प्र० २४ अ ।

उदगवारगसमाणं–उदकवारकसमान–लघुपानीयघटसमानम् । जीवा० १२२ ।

उदगावत्त–उदकावर्त्तोदकबिन्दोर्मध्ये अवगाह्य निष्ठेदित्यर्थ. । अनु० १६१ ।

उदग्ग–उदग्र –उन्नतपर्यवमानेन उत्तरोत्तर वृद्धिमान् । भग० १२७ । उच्च, समुच्छ्रितशिर इत्यर्थ , प्रधान , वहि । जीवा०

३४३। उदग्र.–उच्च। ज्ञाता० ६६। उदग्रः–तीव्र.। ज्ञाता० ७६।

उदद्दे–रत्नप्रभायां अपक्रान्तमहानरक। ठाणा० ३६५।

उदृतण–उदयण–उदयगामि, प्रवर्द्धमानं। ठाणा० ३४२।

उदृत्त–तुदत्रम् भूमिस्फोटनशस्त्रविशेषः। आव० ८२९।

उदात्त.–उन्नतभाववान्। भग० १२५।

उदधि–जलनिचयः। ठाणा० १७७।

उदधिघनं। जीवा० १९१।

उदपानं–कूप.। बृ० प्र० १८३ अ।

उदप्पील – उदकोत्पीलः–तडागादिषु जलसमूहः। भग० १९९।

उदब्भेया–उदकोद्भेदः–गिरितटादिभ्यो जलोद्भवः। भग० १९९।

उदय–उदीरणावलिकागततत्पुद्गलोद्भूतसामर्थ्यता। आव० ७७। आयामः। भग० १८७। पताका। भग० १८७। पेढालपुत्र। पार्श्वजिनशिष्य। ठाणा० ४५७। भाविया। नि० चू० प्र० २६४ आ।

उदयट्ठी–उदयार्थी, लाभार्थी। सूत्र० ३९४।

उदयण–उदयन.–वीणावत्सराजः। उत्त० १४२।

उदयणकुमारं–उदयनकुमारं, मृगावतीपुत्र। आव० ६७।

उदयणमाया– उदयनमाता, भावप्रतिक्रमणदृष्टान्ते मृगावती आर्या। आव० ४८५।

उदयनिप्पन्ने–औदयिकभावस्य द्वितीयभेद। भग० ७२२।

उदयपहो–उदकपथ, लोकानां जलानयनमार्ग। आव० ६४०।

उदयभासे–वेलन्धरनागराजस्यावास। ठाणा० २२६।

उदयवद्दलं–उदकवर्द्दल भाविरेणुसन्तापोपशान्तये। आव० २३०।

उदयसत्तित्वं–समुदय, समुदायो वा। प्रश्न० ६३।

उदयास्तान्तरं–तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४४२। प्रकाशक्षेत्रं, तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४५५।

उदरं। आचा० ३८।

उदरपोप्पयं–उदरामर्शनम्। आव० ६६।

उदरवलिमंसं – उदरवलिमांसं, उदरोपरि या वलयाकारा मांसरेखा तस्या मांसं। आव० ६७८।

उदरि–वातपित्तादिसमुत्थमष्टधोदरं तदस्यास्तीत्युदरी। आचा० २३५। उदरी–जलोदरी। प्रश्न० १६१।

उदवाहा–उदकवाहाः–अपकृष्टान्यल्पान्युदकवहनानि। भग० १९९।

उदसि–उदस्वित्। नि० चू० प्र० ६ अ।

उदहिकुमारा – उदधिकुमारा –वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्त्तिनो देवाः। भग० १९९। भुवनपतिदेवविशेष.। प्रज्ञा० ६९।

उदहिकुमारीओ – उदधिकुमार्य – वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्त्तिन्यो देव्य। भग० १९९।

उदहिनामाणं – उदधिनाम्नाम्–आर्यसमुद्राणाम्। आचा० २६२।

उदहीसरिसनामाणं – उदधि –समुद्रस्तेन सदृक्–सदृश नाम–अभिधानमेषामुदधिसदृग्नामानि–सागरोपमाणि। उत्त० ६४७।

उदाइ–उदायी–कूणिकराज्ञो हस्ती। भग० ३१७। नृपविशेषः। आव० ६८७। भग० ६७३, ६७५।

उदाइज्जा। भग० १८३।

उदाइमारक–साधुवेषधारकः। नि० चू० प्र० २९३ आ।

उदाइमारय – श्रमणवेषधारको विनयरत्नमुनि.। नि० चू० तृ० २३ आ।

उदाइयाए–असिवं उदाइयाए अभिद्दुत। नि० चू० प्र० ९७ अ।

उदात्त–उदात्तत्वं–उच्चैर्वृत्तिता। द्वितीयो वचनातिशय। सम० ६३।

उदायण – वीतभयराजा। भग० ६१८। नि० चू० द्वि० १४५ अ। शतानीकराजपुत्र.। विपा० ६८। भग० ५५६। अन्तिमराजर्षि। ठाणा० ४३०। उदायनः–विगतिद्वारे वीतभयनगराधिपति। आव० ५३७। आव० २९८। सौवीरराजवृषभो राजा। उत्त० ४४८। प्रद्योतराज्ये गान्धर्वविद्याप्रधान। आव० ६७३। विदर्भकनगराधिपति.। प्रश्न० ८९। अन्तिमराजर्षि.। बृ० प्र० १६६ अ।

उदायितकुमारो – उदायिकुमार–पद्मावतीपुत्र.। आव० ६८३।

उदायिनृपः – यः कृत्रिमसाधुभिर्मारितः। सूत्र० २५०। आव० ५२९। सूत्र० ३६५। आचा० ९।

उदायिनृपमारक – श्रमणवेषधारको मुनि. । बृ० प्र० २०४ अ । विशे० १२५५ । ठाणा० १८५ ।

उदायिमारगो – उदायिमारक –श्रमणवेषधारको मुनि । नि० चू० द्वि० ३९ अ, ४१ अ ।

उदायी–कूणिकराजस्य हस्तिराज. । भग० ५२० । कोणिकपुत्र । ठाणा० ४५६ ।

उदार–उदारं–उद्भटम् । ज० प्र० २०३ । उदारत्व–अभिधेयार्थस्यातुच्छत्व गुम्फगुणविशेषो वा । द्वाविंशतितमो वचनातिशय । सम० ६३ । शोभनं । ठाणा० २३३ । प्रधानम् । प्रज्ञा० २६९ । ठाणा० २९५ । तीर्थकरगणधरशरीरापेक्षया शेषशरीरेभ्य. प्रधानं, सातिरेकयोजनसहस्रसानत्वाच्छेषशरीरेभ्यो महाप्रमाणं वा । अनु० १९६ । औदार्यवान् । भग० १२५ ।

उदाला–उदारा –महान्तः । उत्त० ४१९ ।

उदाहड–भणिया । नि० चू० तृ० ४९ आ ।

उदाहरण–चरितकल्पितभेदम् । आव० ५९७ । कथनम् । उत्त० ३२२ । उदाहरणम्–साध्यसाधनान्वयव्यतिरेकप्रदर्शनमुदाहरणं, दृष्टान्त । दश० ३३ ।

उदाहरे–उदाहरेत्–उदाहृतवान् । उत्त० २४१ ।

उदाहु – उताहो निपातो विकल्पार्थ । भग० १७ । भग० २३७ । उक्तवान् । आचा० १२८ । आहोश्वित् । उपा० ३८ ।

उदिए–उदित –उदयं प्राप्त , स्थित इत्यर्थ. । जं० प्र० ५२८ ।

उदिओदए–उदितोदय , कायोत्सर्गदृष्टान्ते राजा । आव० ७९९ । पारिणामिकीबुद्धौ पुरिमतालपुरे राजा । आव० ४३० । उदितोदित –पुरिमतालनगराधिपतिः । विपा० ५८ । श्रीकान्तापति. । नंदी १६६ ।

उदिक्खंते–प्रतीक्ष्यमाण. । बृ० तृ० ११६ आ ।

उदिण्णं–उदीर्णम्–पीडितम् । आव० ८६३ । विपाकोदयमागतम् । प्रज्ञा० ४०३ ।

उदिन्न–उदीर्णम्–स्वत उदीरणाकरणेन वोदितम् । भग० ९० ।

उदिन्नमोह–उदीर्णमोह.–उत्कटवेदमोहनीय । भग० २२३ ।

उदीणपाईणं–उदगेव उदीचीनं प्रागेव प्राचीन उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च तत्प्राच्या प्रत्यासन्नत्वाद् उदीचीनप्राचीनम्–दिगन्तर क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिगित्यर्थ. । भग० २०७ । उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च प्राच्या प्रत्यासन्नत्वादिति । जं० प्र० ४८० ।

उदीणवाए–यः उदीच्या दिशः समागच्छति वात स उदीचीनवात । जीवा० २९१ य. उदीच्या दिश समागच्छति वात स उदीचीनवात । प्रज्ञा० ३० ।

उदीर–उदीरिंसु ३ उदयप्राप्ते दलिके अनुदितांस्तान् आकृष्य करणेन वेदितवन्त ३ । ठाणा० २८९ । उदीरितवन्त.–अध्यवसायवशेनानुदीर्णोदयप्रवेशनत । ठाणा० १७९ ।

उदीरइ–उदीरयति–प्राबल्येन प्रेरयति, पदार्थान्तरं प्रतिपादयति वा । भग० १८३ ।

उदीरण – अनुदयप्राप्तस्य करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपणमिति । ठाणा० १०१, १९५ । उदीरणम्–अनुदितस्य करणविशेषादुदयप्रवेशनम् । भग० ५३ । उदीरणाकरणवशात. कर्मपुद्गलानामनुदयप्राप्तानामुदयावलिकाया प्रवेशनम् । प्रज्ञा० २९२ । करणेनाकृष्य दलिकस्योदये दानम् । ठाणा० ४१७ ।

उदीरणा–अप्राप्तसमये उदयप्रापणं सैव उदीरणा । जं० प्र० १६८ । अप्राप्तकालफलाना कर्मणामुदये प्रवेशनम् । ठाणा० २२१ ।

उदीरणाभवियं–उदीरणाभविकम्–तत्र भविष्यतीति भवा सैव भविका, उदीरणा भविका यस्येति, उदीरणायां वा भव्यं–योग्यमुदीरणाभव्यमिति । भग० ५८ ।

उदीरए–उदीरणम्–स्थिरस्य सत प्रेरणम् । भग० १८ । उदीरणा–उदीरणा नाम अनुदयप्राप्त चिरेणाऽऽगामिना कालेन यद्वेदयितव्य कर्मदलिकं तस्य विशिष्टाध्यवसायलक्षणेन करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपण । भग० १५ ।

उदीरिय–उत्–प्राबल्येनेरित–प्रेरितं उदीरितं । जीवा० १९२ ।

उदीरिया – उदीरिता –स्वभावतोऽनुदितान् पुद्गलानुदयप्राप्ते कर्मदलिके करणविशेषेण प्रक्षिप्य यान् वेद्यते । भग० २४ । उदीरिता–उदयमुपनीता, वेदिता । भग० १८५ ।

उदीरेंतं–उदीरयन्तं–वस्त्वन्तर प्रेरयन्तम् । ठाणा० ३८५ ।

उदीरेइ–उदीरयति–भणति, प्रवर्त्तयति । ठाणा० १९७ ।

उदुम्बर–द्वितीयं महाकुष्ठम् । प्रश्न० १५१ । महाकुष्ठविशेष । आचा० २३५ । कर्मविपाकस्याष्टममध्ययनम् । ठाणा० ५०८ । साधारणवृक्षविशेष । आव० ८२८ ।

उदुम्बरदत्त–सागरदत्तसार्थवाहसुत । ठाणा० ५०८ ।

उदुरुसेज्जा–रुष्येत्। नि० चू० द्वि० ४९ आ।
उदुसुहं–ऋतुसुख, ऋतुशुभ वा–कालोचितम्। प्रश्न० १४१।
उदू, उड्डू–द्विमासप्रमाणकालविशेष- ऋतु। ठाणा० ३६९।
उदूखल–काष्ठनिमित्तं खण्डनोपयोगि शस्त्रम्। भग० २१३। आचा० ३४४।
उदूरूढो–पडिनियत्तो। नि० चू० प्र० १८४ अ।
उद्दो–उद –म्लेच्छविशेष। चिलातदेशनिवासी। प्रश्न० १४।
उद्गमनप्रविभक्ति–चन्द्रसूर्ययोरुद्गमनं–उदयनं तत्प्रविभक्ती–रचना तदभिनयगर्भं यथा उदये सूर्यचन्द्रयोर्मण्डलमरुणं प्राच्या चारुण प्रकाशस्तथा यत्राभिनीयते तदुद्गमनप्रविभक्ति। षष्ठो नाट्यविधि। ज० प्र० ४१६।
उद्गीर्ण–वान्तम्। उत्त० ३३९।
उद्ग्राहितं–मेलितम्। नंदी १५९।
उद्घाटितः–प्रकाशित, प्रकटित। ठाणा० ४१२।
उद्घाटितज्ञः–प्रथमो विनेय। प्रज्ञा० ४२५।
उद्वेट्टका–उद्धचका। बृ० द्वि० ६० आ।
उद्दंडगा–ऊर्द्ध्वीकृतदण्डा. ये सञ्चरन्ति। भग० ५१९।
उद्दंडपुर–नगरनाम। भग० ६७५।
उद्दंडा–ऊर्ध्वीकृतदण्डा ये संचरन्ति। निरय० २५।
उद्दंडुको–जनोपहास। बृ० द्वि० २४२ अ।
उद्दंस–त्रीन्द्रियजीवभेद। उत्त० ६९५।
उद्दंसगा–त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।
उद्दंसे–उद्दंश.। आव० २१७।
उदए मारणंतिए–उदये मारणान्तिके वेदनोदये मारणान्तिकेऽपि न क्षोभ कार्यं। योगसंग्रहे एकोनत्रिंशत्तमो योग। आव० ६६४।
उद्दद्दरं–सुभिक्ख। नि० चू० प्र० ८९ अ। सुभिक्षं। नि० चू० प्र० ३१५ अ। ऊद्र्ध्वंदरं ते दरा ऊद्र्ध्वं यत्र पूर्यन्ते तदूद्र्ध्वंदरम्। बृ० द्वि० १०० अ। दुविधा दरा–वणदरा य पोट्टदरा य, ते ऊद्ध पूरेंति जत्थ त उद्ददरं–सुभिक्ख। नि० चू० प्र० २२६ अ।
उद्दवणं–उत्थानं–नाश। बृ० द्वि० ७९ अ।
उद्दवण – अपद्रावणम्–अतिपातविवर्जिता–पीडा। पिण्ड० ३७।
उद्दवणकर – मारणान्तिकवेदनाकारि धनहरणाद्युपद्रवकारि वा। औप० ४२।
उद्दवणया–कूपाशधारणता। भग० ९३। विज्जाए सप्पो अन्यत्र नीयते। नि० चू० प्र० ३३५ अ।
उद्दवणा–उपद्रवणमपद्रवण वा। प्राणवधस्य नवम पर्याय। प्रश्न० ५।
उद्दवातितगणे–गणविशेषः। ठाणा० ४५१।
उद्दविया–अवद्राविता – उत्त्रासिताः। आव० ५७४। मारिता। भग० ७६६।
उद्दवेंति – अपद्रावयन्ति–जीविताद् व्यपरोपयन्ति। प्रज्ञा० ५९३।
उद्दवेउं–अपद्राव्य। उत्त० २०७।
उद्दवेह–विनाशयत। उपा० ४९।
उद्दवेहिइ – अपद्रावयिष्यति–उपद्रवान् करिष्यति। भग० ६९१।
उद्दाइंता–शोभमाना। ज्ञाता० २७।
उद्दाइ–उद्दाति–रचयति। भग० ९३। उद्याति–जलस्योपरि वर्त्तते। भग० १८४। अपद्रवति–म्रियते। भग० १११।
उद्दाइआ–उपद्राविका, उपद्रवकारिणी। ओघ० १७। उपद्रोत्री। ओघ० १५।
उद्दाइत्ता–अपहृत्य–मृत्वा। भग० १११। अपद्राय–मृत्वा। ठाणा० ४७१। अवद्राय–मृत्वा। जीवा० २६२। ज० प्र० ४२५।
उद्दाणं–उदाणं, वैधव्यम्। आव० ४३७।
उद्दाणगं–मृतकम्। आव० ७००।
उद्दाणभत्तारा–अपद्राणभर्तृका, भर्त्तारेण परिठविता। नि० चू० प्र० १०९ आ।
उद्दाणि – उद्राः–सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि उद्राणि। आचा० ३९४।
उद्दाम – उद्दामः – चरणनिपातजीवोपमर्दनिरपेक्षत्वाद् द्रुतचारी। अनु० २६।
उद्दामिया–उद्दामिता–अपनीतबन्धना, प्रलम्बिता। विपा० ४६।
उद्दायंति–अपद्रान्ति–प्राणैर्विमुच्यन्ते। आचा० २१७।
उद्दायणं–वीतभयणगरे राया। नि० चू० प्र० ३४६ आ।
उद्दाल – अवदाल, विदलन, पादादिन्यासे अधोगमनम्। विदलनम्। जीवा० २३२। राज० ९३।
उद्दालक–एकोरुकद्वीपे वृक्षविशेषः। जीवा० १४५।

उद्दाला–उद्दालाः, द्रुमविशेष.। ज० प्र० ९८।

उद्दालिओ–उद्दालित –बलादुद्गृहीतः। आव० ७१७। अपहृत । उत्त० ३०१।

उद्दावणया–उत्त्रासनम्। भग० १८४।

उद्दावो – उद्दावः–स्थानान्तरेष्वद्याप्यसङ्क्रामितः। जीवा० ३५५।

उद्दाह–प्रकृष्टो दाहः। ठाणा० ५०८।

उद्दिक्खाहि–प्रतीक्षस्व। नि० चू० प्र० ३२२ अ।

उद्दिट्ठ–यावदर्थिका पाखण्डिनः श्रमणान्-साधून् उद्दिश्य दुर्भिक्षापगमादौ यद्भिक्षावितरण तदौद्देशिकमुद्दिष्टम्। प्रश्न० १५३। उद्दिष्टम्–स्वार्थमेव निष्पन्नमशनादिकं भिक्षाचराणां दानाय यत् पृथक्कल्पितं तत्। पिण्ड० ७७। उद्दिट्ठउरूवेण ओभासंति। नि० चू० द्वि० १६३ अ। भासति। नि० चू० द्वि० १६३ आ। वस्त्रैषणायाः प्रथमो भेद.। आचा० २७७। उद्दिष्टा–अमावास्या। भग० १३५।

उद्दिट्ठआदेसं–समणा निग्गंथ सक्क तावसा गेरुय आजीव एतेसु उद्दिट्ठआदेसं भण्णति। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठभत्तं–उद्दिष्टभक्तं–दानाय परिकल्पितं यद्भक्तपानादिकं तत्। सूत्र० ३९९।

उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए – उद्दिट्ठं–तमेव श्रावकमुद्दिश्य कृतं भक्तं–ओदनादि उद्दिष्टभक्तं तत्परिज्ञातं येनासावुद्दिष्टभक्तपरिज्ञात, श्रमणोपासकस्य दशमी प्रतिमा। सम० १९।

उद्दिट्ठवज्जए–उद्दिष्टवर्जक', श्रावकस्य दशमी प्रतिज्ञा। आव० ६४६।

उद्दिट्ठसमादेसं–णिग्गंथा–साहू। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठा–उद्दिष्टा–यस्याः स्थापनायाः उत्कृष्टा आरोपणा ज्ञातुमिष्टा सा ईप्सिता। व्य० प्र० ७५ आ। अमावास्या। जीवा० ३०५। ठाणा० २३७। राज० १२३। उपदिष्टा। औप० १००। विपा० ९३। कथिताः। उत्त० २२९।

उद्दिट्ठाओ–उद्दिष्टाः–सामान्यतोऽभिहिताः। ठाणा० ३०८।

उद्दिट्ठो–उद्दिष्टः–प्रतिपादितः। सूत्र० १७६।

उद्दित्ता–प्रज्वालितः। बृ० द्वि० ६१ आ।

उद्दिट्ठं। बृ० प्र० ८३ अ।

उद्दिसति–उवसंपज्जते इत्यर्थः। नि० चू० प्र० २९१ आ।

उद्दिसियवत्थं–गुरुसमक्षं उद्दिट्ठं–प्रतिज्ञातं वस्त्रं उद्दिष्टवस्त्रम्। बृ० प्र० ९७ आ।

उद्दिस्स–उद्दिश्य, उद्दिशति। आचा० ३२५।

उद्दिस्सपविभत्तगती–उद्दिश्यप्रविभक्तगतिः–प्रविभक्तं प्रतिनियतमाचार्यादिकमुद्दिश्य यत्तत्पार्श्वे गच्छति सा। विहायोगतेस्त्रयोदशो भेद'। प्रज्ञा० ३२७।

उद्दिस्सामि–वाचयामि। विशे० १२९५।

उद्दूढं–मुषितम्, (देशी०)। बृ० द्वि० १०५ अ। नि० चू० प्र० २२७ अ।

उद्दूढसेसं–जं लुंटागेहिं अप्पणट्ठा वारिंहिं णिणीतं तं भोत्तुं सेसं छड्डियं। नि० चू० द्वि० २० आ।

उद्देस–उद्देशः–अध्ययनैकदेशभूतम्। दश० ७। उद्देशनं उद्देश –वस्तुन सामान्याभिधान। विशे० ६३९। वाचनासूत्रप्रदानम्। व्य० प्र० २६ अ। उद्दिश्यते इति उपदेश', सदसत्कर्तव्यादेशः। नारकादिव्यपदेशः उच्चावचगोत्रादिव्यपदेशो वा। आचा० १२४। गुरुवचनविशेषः। अनु० ४। यावदर्थिकादिप्रणिधानम्। पिण्ड० ३५। उद्देशनमुद्देश –सामान्याभिधानरूप। अनु० २५७। उद्देशक.–द्वीपसमुद्रोद्देशकावयवविशेषः। भग० ७६९। अध्ययनार्थदेशाभिधायी अध्ययनविभाग.। भग० ५। सामान्याभिधानमध्ययनम्। आव० १०४। गुरो सामान्याभिधायि वचनम्। उत्त० ७३। उद्देसो अभिनवस्स। नि० चू० प्र० २२३आ। वाचयामीति गुरुप्रतिज्ञारूप. उद्देशः। विशे० १२९६। अविसेसिओ उद्देसो। नि० चू० द्वि० १०८ अ। क्षेत्रकालविभाग। बृ० द्वि० २६९ अ।

उद्देसग–उद्देशक'–त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२।

उद्देसणंतेवासी–उद्देशनान्तेवासी। ठाणा० २४०।

उद्देसणकाला–उद्देशनकाला.–उद्देशावसरा' श्रुतोपचाररूपा.। सम० ४६।

उद्देसणायरिय –उद्देशनाचार्य, आचार्यविशेष.। दश० ३१।

उद्देसणायरिए–उद्देशनम्–अज्ञादे' पठनेऽधिकारित्वकरणं तत्र तेन वाऽऽचार्य –गुरुः उद्देशनाचार्य.। ठाणा० २४०।

उद्देसिअ – उद्दिश्य कृतम् औद्देशिकम्–उद्दिष्टकृतकर्मादिभेदम्। दश० १७४।

उद्देसिअचरिमतिग–उद्देशचरमत्रितयम्, औद्देशिकस्य पाखण्डश्रमणनिर्ग्रन्थविषयम्। दश० १६२।

उद्देसियं–उद्दिस्स कज्जइ तं उद्देसियं, साधुनिमित्त आरंभो। दश० चू० ५०। इह यावन्त. केचन भिक्षाचराः समागच्छन्ति तावंत सर्वान् उद्दिश्य यत् क्रियते तत्। बृ० प्र० ८३ अ। औद्देशिकं–विभागौद्देशिकप्रथमो भेद। इह यत् उद्दिष्टं कृतं कर्म वा यावन्त केऽपि भिक्षाचराः समागमिष्यन्ति पाखण्डिनो गृहस्था वा तेभ्य सर्वेभ्योऽपि दातव्यमिति सङ्कल्पित भवति तदा तत्। पिण्ड० ७९। शबलस्य षष्ठो भेद.। सम० ३९। औद्देशिकं–याव-दर्थिकादिप्रणिधानेन निर्वृत्त, द्वितीय उद्गमदोष.। पिण्ड० ३४। औद्देशिकं–अर्थिन पाखण्डिनः श्रमणान्निर्ग्रन्थान् वोद्दिश्य दुर्भिक्षात्ययादौ यद्भक्त वितीर्यते तत्। ठाणा० ४६६। साध्वकल्प्यमशनादि। दश० २०३। उद्दिष्टं–प्राक् सङ्कल्पितम्। आचा० ३९५।

उद्देसुद्देसं–उद्देश–अध्ययनविषय तस्य उद्देश. उद्देशो-द्देश आव० १०६।

उद्देहगणे–गणविशेषः। ठाणा० ४५१।

उद्देहलिका–भूमिस्फोटकविशेष। आचा० ५७।

उद्देहिका–काष्ठनिश्रितो जीवविशेषः। आचा० ५५।

उद्देहिगा–उद्देहिकाकृतवल्मीकमृत्तिका। पिण्ड० २०।

उद्देहिया–उद्देहिका, जन्तुविशेष। ओघ० १२६। त्रीन्द्रियजीवविशेष। उत्त० ६९५। त्रीन्द्रियजन्तुविशेष। जीवा० ३२। प्रज्ञा० ४२।

उद्दोहक–उद्दोहक–घातक। उद्दहको वा–अटव्यादिदाहकः। प्रश्न० ४६।

उद्धंसणं–निर्भर्त्सनम्। बृ० तृ० ९० अ।

उद्धंसणा – उद्धसना, उद्धुलना–आक्रोश। ओघ० ४५। प्रवचनविषया हीला। बृ० द्वि० १८० आ। दुष्कुलीनेत्यादि कुलाद्यभिमानपातनार्थ.। ज्ञाता० २००।

उद्धंसणाओ–अवहेलना। आव० ६५।

उद्धंसणाहिं–दुष्कुलीनेत्यादिभि कुलाद्यभिमानपातनार्थैर्वचनै। भग० ६८३।

उद्धंसणो–वध.। ओघ० २१५।

उद्धंसिया–खरंटियाणि। नि० चू० प्र० २१२ आ। उद्धर्षिता–खरंटिता। बृ० द्वि० २१७ अ। ओभासिया। नि० चू० प्र० १९५ अ।

उद्ध–ऊर्ध्व। जं० प्र० ४६२। नंदी। १५४।

उद्धघणभवण –ऊर्ध्वघनभवनानि–उच्चाविरलगेहानि। जं० प्र० १४४।

उद्धट्टा–उवउट्टा–घ्राता। नि० चू० प्र० १५२ अ।

उद्धट्टु–उद्धृत्य। आचा० ३७७।

उद्धट्ठाणं–कायोत्सर्गम्। नि० चू० प्र० ११३ आ।

उद्धड–उद्धृता, स्थालादौ स्वयोगेन भोजनजातमुद्धृतम्। तृतीया पिण्डैषणा। आव० ५७२। जत्थ उवक्खडियं भायणे ताओ उद्धरिय छप्पगादिसु एस उद्धडा। नि० चू० तृ० १२ अ।

उद्धतरेणुयं–उद्धतरेणुकं–ऊर्ध्वगतरजस्कम्। ज० प्र० १४५।

उद्धत्त–औद्धत्यम्–अहङ्कारः। उत्त० ५२६।

उद्धत्तमणहारिणो–औद्धत्यं–अहङ्कारस्तत्प्रधानं मन औद्धत्यमनस्तद्धरणशीला. औद्धत्यमनोहारिण – अत्यन्तशान्तचित्तवृत्तय, यतय इत्यर्थ। उत्त० ५२६।

उद्धपुरीया – ऊर्ध्वपुरीतत–उर्ध्वगतान्त्राः। प्रश्न० ५६।

उद्धपूरित – ऊर्ध्वपूरित –श्वासपूरितोर्द्ध्वकाय ऊर्ध्वो वा स्थितो धूल्या पूरित.। प्रश्न० ५६।

उद्धमंताणं–यथायोगमुद्ध्मायमानादिषु। राज० ४६।

उद्धमुइंगागार – ऊर्ध्वमृदङ्गाकार – मल्लकसम्पुटाकार.। भग० २४९।

उद्धम्ममाणं–उत्पाठ्यमानम्। प्रश्न० ५०। उत्पाद्यमानम्। प्रश्न० ६२।

उद्धरंति–उत्पाटयन्ति। ओघ० २२७।

उद्धरणं–उद्ध्रियते–उत्तरपरिकर्म क्रियते। आव० ७६४।

उद्धरुट्ठो–तीव्ररोष रोषकाले। आव० ६३२।

उद्धरेणू – स्वत परतो वा ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मा जालप्रविष्टसूर्यप्रभाभिव्यङ्ग्यो रेणुरूर्ध्वरेणु। जं० प्र० ९४।

उद्धलोगवत्थव्वा –ऊर्ध्वलोकवासित्वं–समभूतलात् पञ्चशतयोजनोच्चनन्दनवनगतपञ्चशतिकाष्टकूटनिवासित्वम्। जं० प्र० ३८८।

उद्धसियरोमकूवो–उद्धृषितरोमकूप.। आव० ५१३।

उद्धाइओ–उद्धावित। आव० २०६, १९२। अवधावित। आव० ५१३।

उद्धाइया–उद्धाविता.। उत्त० १००। वेगेन प्रसृता । उत्त० ३६४।

उद्धाईया–उद्धाविता सन्नह्यगता । उत्त० १७९।

उद्धायमाणो–उत्तिष्ठन्। प्रश्न० ६२। उद्धावमाणः–प्रवर्द्धमान । ज्ञाता० ७०।

उद्धारपलिओवमे – तत्र वक्ष्यमाणस्वरुपवालाग्राणां तत्खण्डाना वा तदुद्वारेण द्वीपसमुद्राणा वा प्रतिसमयमुद्धरणं–अपोद्धरणमपहरणमुद्धार तद्विषय तत्प्रधानं वा पल्योपममुद्धारपल्योपमम्। अनु० १८०।

उद्धावणं–कार्यस्य निष्पादनम्। व्य० प्र० १७२ अ।

उद्धिअ–उद्धृत -देगाग्निर्वामित । ज० प्र० २७७।

उद्धिय–उद्धृता–निष्काशनम्। ठाणा० ४६३।

उद्धी-उद्धि । ज० प्र० ४५४। 'मेलित्तु पण्हियाओ चलणे वित्थारिऊण बाहिरओ। ठाउस्सग्गं एसो बाहिरउद्धी मुणेयव्वो ॥ अगुट्ठे मेलविउ वित्थारिय पण्हियाओ बाहिं तु। ठाउस्सग्ग एसो भणिओ अब्भिंतरुद्धित्ति॥' आव० ७९८।

उद्धीमुहकलंबुआपुप्फसंठिता – ऊर्ध्वमुखकलम्बुकपुष्पसंस्थिता–ऊर्ध्वमुखस्य कलम्बुकापुष्पस्येव–नालिकापुष्पस्येव संस्थितं–संस्थानं यस्या सा। सूर्य० ६७।

उद्धुअ –'इतस्ततो विप्रसृत.। ज० प्र० ५१। जीवा० १६०, २०६।

उद्धुताए–उद्धुतया–दर्प्पातिशयेन। भग० ५२७।

उद्धुम्ममाणं–उत्पाद्यमानम्। औप० ४७।

उद्धुय–उद्धुतः–उद्भूत । औप० ५। इतस्ततो विप्रसृत । सूर्य० २९३। उद्भूत । भग० ५४०। उद्भूता–वायुना। ज्ञाता० ८०।

उद्धुयाए – उद्धूतया – वस्त्रादीनामुद्धूतत्वेन, उद्धतया वा सदर्प्पया.। भग० १६७।

उद्धुव्वमाणं–उत्पाद्यमानम्। औप० ४७।

उद्धुसियं–रोमाञ्चितम्। उद्धुषितम्। नि० चू० प्र० ३१५ आ।

उद्धूय–उद्धूत.। आव० ५२०।

उद्धूलिता–सरक्खा। नि० चू० प्र० ३२४ आ।

उद्भिज्जत्वं–सम्मूर्च्छजत्वम्। ठाणा० ११४।

उद्भ्रामक–उद्यतविहारी। व्य० प्र० १६८ अ।

उद्भ्रामकभिक्षाचर्या – बहिर्ग्रामेषु भिक्षार्थं पर्यटनम्। बृ० प्र० २०६ आ।

उद्यतकं–उच्छिन्नम्। प्रश्न० १५४। पामिच्चं, भिक्षादोष। आचा० ३२९।

उद्यतविहारेण मासकल्पादिना। उत्त० ५८७।

उद्यानि–प्रतिश्रोतोगामिनी सा। व्य० प्र० २५ आ।

उद्युक्तः–परायण । आव० ५८७।

उद्राः–सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि। आचा० ३९४।

उद्राणि–सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि। आचा० ३९४।

उद्वर्त्तनं–निष्क्रमणम्। आचा० ६९। स्थित्यादेर्वृद्धिकरणस्वरूपम्। भग० २५।

उद्वर्त्तनकरणं–करणविशेष। भग० २४, ९०।

उद्वर्त्य–निष्क्रम्य। आव० १७७।

उद्वसं–शून्यम्। उत्त० १०९।

उद्वसितगृहं–शून्यागारम्। उत्त० ६६५।

उद्वालयन्–आलोडयन्। दश० १८।

उन्न–और्णिक । ठाणा० ३३८।

उन्नए–उन्नत । सम० ७१।

उन्नतमणे–उन्नतमणा.–प्रकुल्ला औदार्यादियुक्तमना । ठाणा० १८३।

उन्नतरूवे–संस्थानावयवादिसौन्दर्याद् उन्नतरूप । ठाणा० १८३।

उन्नतावत्ते–उन्नत–उच्छ्रित. स चासावावर्त्तश्चेति उन्नतावर्त्त । ठाणा० २८८।

उन्नय–उन्नतं–अङ्गुलिपर्वाणि। ओघ० १७१। गुणवन्ति, उच्चानि च। ज्ञाता० ३।

उन्नयनं–शृङ्गारविशेषं । जं० प्र० ११६।

उन्नयमाणे–उन्नतमान, उन्नतो मानोऽस्येत्युन्नतमान, उन्नत वाऽऽत्मान मन्यत इति। आचा० २१५।

उन्नाडीओ। नि० चू० प्र० ११२ अ।

उन्नात–महाविदेहे नगरविशेषः। निरय० ४२।

उन्नामओ–ऊर्गामय । आव० ४१८।

उन्नामिज्जंते–उन्नाम्यते ऊर्ध्वमुत्क्षिप्यते। जीवा० ३०७।

उन्नामिज्जइ(ए)-उन्नामित -उत्क्षिप्त, प्रसिद्धिं गत, इति-यावत्। अनु० १४३।
उन्निद्रीकृतं-बोधितम्। जीवा० २७१।
उन्निय-औणिकम्। ठाणा० ३३०।
उन्मग्नजला-नदीविशेष । ठाणा० ७१।
उन्माथितः। आव० १५६।
उपकारिका - राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीना पीठिका। जीवा० २२२।
उपकार्योपकारि..। - राज्ञामुपकार्योपकारिका। ज० प्र० ३२१। जीवा० २२२।
उपगतश्लाघं - उपगतश्लाघत्वं-उक्तगुणयोगात्प्राप्तश्लाघता। चतुर्विंशतितमो वचनातिशय । सम० ६३।
उपगूहनं-परिष्वजनम्। नि० चू० प्र० २५६ आ।
उपघसरं-निर्द्धमनम्। ओघ० १६२।
उपचयद्रव्यमन्दः-य परिस्थूरतरशरीरतया गमनादिव्यापारं कर्तुं न शक्नोति। बृ० प्र० ११३ अ।
उपचयभावमन्दः-यो बुद्धेरपचयेन यतस्ततः कार्यं कर्तुं नोत्सहते। बृ० प्र० ११३ अ।
उपचारोपेतं-उपचारोपेतत्व-अग्राम्यता। तृतीयो वचनातिशय । सम० ६३।
उपचियमंसो-बल्यिसरीरो। नि० चू० प्र० २६६ आ।
उपदर्शना - जम्बूद्वीपनीलवर्षधरपर्वते नवमकूट । ठाणा० ७२।
उपदिष्टा - महाकल्याणकसम्बन्धितया पुण्यतिथित्वेन प्रख्याता, तथा पौर्णमासीषु च तिसृष्वपि चतुर्मासकतिथिष्वित्यर्थ। सूत्र० ४०८।
उपदेशः-श्रुतस्य पर्याय । विशे० ४१६।
उपधानकं-द्रव्योपधानम्। आव० ६६८। बिव्बोयणा। बिव्वोयणा, तपनीयमय्यो गण्डोपधानका । जीवा० २३१।
उपनीतरागं-उपनीतरागत्व-मालकोशादिग्रामरागयुक्तता। सप्तमो वचनातिशय । सम० ६२।
उपपत्ति। भग० १५।
उपबृंहयन्-अनुमोदयन्। ज्ञाता० १८।
उपभोगपरिभोगः - अशनादिवाहनान्ताना बहुसावद्याना वर्जनमल्पसावद्यानामपि परिमाणम्। तत्त्वा० ७-१६।
उपमानं - दृष्टान्त । ओघ० १७। श्रुतातिदेशवाक्यस्य समानार्थोपलम्भने सञ्ज्ञासञ्ज्ञिसम्बन्धज्ञानमुपमानम्। ठाणा० २६२।
उपयुक्तद्रव्यसम्यक् - यदुपयुक्तं-अभ्यवहृत द्रव्यं मनःसमाधानाय प्रभवति तत्। आचा० १७६।
उपरतकायिकी - अप्रमत्तसंयतस्योपरतस्य सावद्ययोगेभ्यो निवृत्तस्य क्रिया। कायिकीक्रियायास्तृतीयो भेद । आव० ६११।
उपरितनक्षुल्लकप्रतराः-तत्र तिर्यग्लोकमध्यवर्तिनः सर्वलघुरज्जुप्रमाणात् क्षुल्लकप्रतरादारभ्य यावदधो नव योजनशतानि तावदस्या रत्नप्रभायां पृथिव्या ये प्रतरा. ते उपरितनक्षुल्लकप्रतरा । नंदी ११०।
उपरिमाण-उपरितना। आव० ६८७।
उपर्यविस्रम्भः। आचा० १०६।
उपलिंपंति - घटकमुखस्य तत्पिधानकस्य च गोमयादिना रन्ध्र भञ्जन्ति। ज्ञाता० ११९।
उपवस्तुं-उपवासान् कर्त्तुम्। पिण्ड० १६७।
उपवेंतो-उपागच्छन्, आगच्छन्। आव० ४३४।
उपशमनिष्पन्नः-उपशान्तक्रोध इत्यादि उदयाभावफलरूप आत्मपरिणाम इति भावना। ठाणा० ३७८।
उपशान्ता-प्रदेशतोऽप्यवेद्यमाना कषाया । ठाणा० ५।
उपश्रा-द्वेष.। व्य० प्र० ७ अ।
उपसंप-उपसम्पत्-उपसम्पत्ति -प्राप्तिः। भग० ९०४।
उपसंपदालोचना-आलोचनाया द्वितीयो भेद.। व्य० प्र० ४८ आ।
उपसङ्घात-अनिष्टरूपस्तूपसङ्घात । नंदी १७१।
उपस्थं-उपस्थितम्। व्य० द्वि० २२२ आ।
उपस्थापनं-पुनर्दीक्षण पुनश्चरण पुनर्व्रतारोपणम्। तत्त्वा० ९-२२।
उपस्थापयितुं-उत्स्थापनाकरणत.। व्य० द्वि० २१५ अ।
उपस्पृशति-वस्त्राणि प्रक्षालयति। आव० ४३४।
उपहितं-भोजनस्थाने ढौकित भक्तमिति भाव.। ठाणा० १४८।
उपादानकारणं-मृदादि। ठाणा० ४९।
उपाधि.-उपाधानमुपाधि -सन्निधि.। भग० ४।
उपाया-व्याख्याङ्गानि। आचा० ८२।

उपायोपेयभावलक्षणः–वचनरूपापन्नं प्रकरणमुपायः तत्परिज्ञानं चोपेयम्। प्रज्ञा० २।

उपार्द्धभाग–पोषचतुर्थभाग। आचा० ३२६।

उपालंभ–उपालम्भ विनेयस्याविहितविधायिनः। ज्ञाता० ७७।

उपालक–निर्व्यूह, गवाक्ष। व्य० प्र० १३३ अ।

उपैति–करोति। आचा० २१७।

उपोद्घातनिर्युक्तिः–निर्युक्तिभेद। ठाणा० ६।

उप्पइयं–उत्पत्तिकं–उद्भूतम्। उत्त० ११९।

उप्पज्जंते–उत्पद्यन्ते, एतत्प्रभावात् स्फातिमद्भवन्ति। जं० प्र० २५८।

उप्पज्जमाणकालं–उत्पद्यमानकालं–आद्यसमयादारभ्योत्पत्त्यन्तसमय यावदुत्पद्यमानत्वस्येष्टत्वाद् वर्तमानभविष्यत्कालविषयं द्रव्यम्। भग० १८।

उप्पडा–त्रीन्द्रियविशेष। प्रज्ञा० ४२।

उप्पण–उत्पन्न–विधिना प्राप्तम्। दश० १८१।

उप्पण्णमिस्सिया–उत्पन्नमिश्रिता–उत्पन्ना मिश्रिता अनुत्पन्नैः सह सङ्ख्या पूरणार्थं यत्र सा। सत्यामृषाभाषाया प्रथमो भेदः। प्रज्ञा० २५६।

उप्पत्ति–उत्पत्ति–निदानम्। व्य० प्र० ९१ अ।

उप्पत्तिअं–पर्वतिथिमन्तरेणाकस्मिकं भोज्यम्। बृ० द्वि० १९२ अ।

उप्पत्तिआ–उत्पत्तिरेव न शास्त्राभ्यासकर्मपरिशीलनादिकं प्रयोजनं–कारण यस्याः सा औत्पत्तिकी। नंदी १४४।

उप्पत्तिकसाय–द्रव्यादेर्लाभात् कषायप्रभवः तदेव कषायनिमित्तत्वात् उत्पत्तिकषाय। आव० ३९०। शरीरोपधिक्षेत्रवास्तुस्थाण्वादयो यदाश्रित्य तेषामुत्पत्ति। आचा० ९१।

उप्पत्तिया–औत्पत्तिकी–उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्या सा, बुद्धिविशेष। आव० ४१४। उत्पत्तिकी–अदृष्टाश्रुताननुभूतविषयाकस्माद्भवनशीला। राज० ११६।

उप्पत्ती–उत्पत्तिकर स्वकल्पनाशिल्पनिर्मित शतरूपकादि। आव० ४९९। आरम्भमात्रम्। ठाणा० २८५। सामान्यतो या च विशेषत। ठाणा० ४४९।

उप्पन्न–उत्पन्नविषया–सत्यामृषाभाषाभेद। दश० २०९।

उप्पन्नमीसते–उत्पन्नविषयं मिश्रं–सत्यामृषा उत्पन्नमिश्रं तदेवोत्पन्नमिश्रकम्। ठाणा० ४८९।

उप्पयंते–भूतलादुत्पतत। ज्ञाता० ४६।

उप्पयनिवयं–उत्पात–आकाशे उल्ललनं निपात–तस्मादवपतनं उत्पातपूर्वो निपातो यस्मिन् तदुत्पातनिपातम्। दिव्यनाट्यविधि। जं० प्र० ४१२।

उप्पराउ–उपरित–उपरिष्टात्। दश० ३८।

उप्परामुहो–उपरिमुख। आव० १८१।

उप्पराहुत्तो–उपरिभूत। आव० ५०२।

उप्पलं–उत्पल–नीलोत्पलादि। आचा० ३४८। चतुरशीतिरुत्पलाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। गर्दभकम्। राज० ८। जीवा० १७७। उत्पलकुष्ठ, नीलोत्पलं वा। जीवा० २७७। उत्पल। प्रज्ञा० ३७। जलरुहविशेष। प्रज्ञा० २३। कालविशेष। भग० २७५। उत्पलं–चतुरशीत्या लक्षैरुत्पलाङ्गैः। अनु० १००। उत्पलार्थ एकादशशते प्रथम उद्देशक। भग० ५११। कालविशेष। भग० ८८८। भग० २१०। कालविशेष। सूर्य० ९१। नीलोत्पलमुत्पलकुष्ठ वा। सम० ६१। औप० १६। आरणकल्पे विमानविशेष। सम० ३८। उत्पलकुष्टं–गन्धद्रव्यविशेष। ज्ञाता० १२९। उत्पलं–नीलोत्पलादि। दश० १८५। उत्पलं–कुष्ठम्। जं० प्र० ११७।

उप्पलंग–उत्पलाङ्ग–चतुरशीतिर्हुहुकशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। कालविशेष। ठाणा० ८६। उत्पलाङ्ग, कालविशेष। सूर्य० ९१। भग० ८८८। उत्पलाङ्ग चतुरशीत्या लक्षैर्हुहुकै। अनु० १००।

उप्पलगुम्मा–उत्पलगुल्मा, पुष्करिणीनाम। जं० प्र० ३२५, ३६०।

उप्पलनालं–उत्पलनालं–उत्पलं–नीलोत्पलादि नालं–तस्यैवाधार। आचा० ३४८।

उप्पलपउमोपसोभिता–उत्पलपद्मोपशोभिता। आव० ८१९।

उप्पलवेंटिया–उत्पलवृन्तानि नियमविशेषात् भोज्यतया भैक्षत्वेन येषा सन्ति ते उत्पलवृन्तिकाः। औप० १०६।

उप्पलयं–उत्पलक–गर्दभकम्। जीवा० १८२।

उप्पलहत्थगा–उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषा। जं० प्र० ४४। उत्पलाख्यजलजकुसुमसङ्घातविशेषा। राज० ८।

उप्पलहत्थय–उत्पलहस्तक–उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेष। जीवा० १९९।

उप्पला–पिशाचेन्द्रकालस्य तृतीयाग्रमहिषी । ठाणा० २०४। पुष्करिणीविशेषः । जं० प्र० ३६० ।

उप्पलाइं–गर्द्दभकानि ईषन्नीलानि वा । जं० प्र० २६ ।

उप्पलावए–उत्प्लावयति । दश० २०५।

उप्पलुज्जला–उत्पलोज्ज्वला, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३३५, ३६० ।

उप्पलुद्देसए – उत्पलोद्देशक –एकादशशते प्रथम । भग० ५६६ ।

उप्पह–उत्पथ –उन्मार्ग । उत्त० ५४८ । परसमय । ठाणा० २४१ ।

उप्पा–उत्पाद । ठाणा० १९ ।

उप्पाइओ–उत्पात. । आव० ७९८ ।

उप्पाइत्ता–उत्पादयितुं–सम्पादनाय, अथवाऽनुत्पन्नानां भोगानामुत्पादयिता–उत्पादक. । ठाणा० २६४ । सम्पादनशील । ठाणा० ३८६ ।

उप्पाइया – उत्पाता –अनिष्टसूचका रुधिरवृष्ट्यादयस्तद्धेतुका येऽनर्थास्ते औत्पातिका । सम० ६२ ।

उप्पाए – उत्पातं–सहजरुधिरवृष्ट्यादिलक्षणोत्पातफलनिरूपकं निमित्तशास्त्रम् । सम० ४९ । उत्पाद । आव० ६६२ ।

उप्पाएति – उत् – प्राबल्येन प्लावयति । नि० चू० प्र० २५२ आ ।

उप्पाएमाणे–व्युत्पादयन् । उत्त० १५७ ।

उप्पाओ – उत्पाद –उत्पत्तिहेतुभूत. क्रियालक्षण । विशे० २४१ ।

उप्पाते–उत्पाद –सहजरुधिरवृष्ट्यादि । ठाणा० ४२७ ।

उप्पाय–उत्पातपूर्व–प्रथमपूर्वनाम । ठाणा० ४८४ । उत्पात – प्रकृतिविकारो रक्तवृष्ट्यादि । प्रश्न० १०९ । उल्कापातदिग्दाहादिकम् । अनु० २१६ । उत्पाद –यतो नानुत्पन्नं वस्तु लक्ष्यते अतोऽयमपि वस्तुलक्षणम् । आव० २८२ । उत्पातं–सहजरुधिरवृष्ट्यादिकम् । आव० ६६० । उत्पातं–वपि हसितादि । सूत्र० ३१८ । प्रथमपूर्वम् । नदी ५२ । ठाणा० १९९ ।

उप्पायग–उत्पादक –ये भूमिं भित्त्वा समुत्तिष्ठन्ति ते । व्य० द्वि० २८८ आ ।

उप्पायण – उत्पादना – सम्पादन, गृहस्थात्पिण्डादेरुपार्जनमित्यर्थ । ठाणा० १५९ ।

उप्पायणा–उत्पादना–धात्र्यादिका षोडशविधा । प्रश्न० १५५ । धात्र्यादिलक्षणदोषविशेषः । आव० ५७६ ।

उप्पायणोवघाते– उत्पादनया–उत्पादनादोषैः, उपघात – अशुद्धता उत्पादनोपघातः । ठाणा० ३२० ।

उप्पायपव्वए–उत्पातपर्वत । सम० ३३ । तिर्यग्लोकगमनाय यत्रागत्योत्पतति स । भग० १४४ ।

उप्पायपव्वयगा–उत्पातपर्वताः–यत्रागत्य बहवः सूर्याभविमानवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति । राज० ७९ ।

उप्पायपव्वया–यत्रागत्य बहवो व्यन्तरदेवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्त वैक्रियशरीरमारचयन्ति । जं० प्र० ४४ । जीवा० १९९ ।

उप्पायपुव्वं–उत्पादपूर्वम्, तत्थ सव्वदव्वाणं पज्जवाण य उप्पायमगीकाउ पण्णवणा कया । नंदी २४१ । यत्रोत्पादमाश्रित्य द्रव्यपर्यायाणा प्ररूपणा कृता तद् । सम० २६ ।

उप्पाया–त्रीन्द्रियविशेष । प्रज्ञा० ४२ ।

उप्पाल–प्रहरणकोशविशेष । जीवा० २३२ । प्रहरणकोश – प्रहरणस्थानम् । राज० ९३ । मत्तवारणम् । जीवा० २७९ ।

उप्पालसंठिओ–उत्पालसस्थित –मत्तवारणसस्थित । जीवा० २७९ ।

उप्पासितो–उत्प्रासित –असूयित । आव० १०१ ।

उप्पासिया–हसिता । नि० चू० प्र० ६९ अ ।

उप्पिं–उपरि । भग० ८२ । ठाणा० ४३२ ।

उप्पिंजल–उप्पिञ्जल–आकुलकम् । राज० ५२ ।

उप्पिच्छ–श्वासयुक्तम् । जं० प्र० ४० । श्वासयुक्त, त्वरितम् । ठाणा० ३९६ । अनु० १३२ । आकुलं रोषभृतं वोच्यते । श्वासयुक्त वा । जीवा० १९४ । भीतौ । ज्ञाता० १६१ ।

उप्पिट्टणयं–उत्पिट्टनक–कुट्टनोत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पिट्टणा–उत्–प्राबल्येन पिट्टना उत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पित्थं–श्वासयुक्तम् ।

उप्पिवंत–उत्पिवन्त –आसादयन्त । प्रश्न० ६३ ।

उप्पियंतं–मुहुर्मुहु. श्वसन्तम् । व्य० द्वि० ५३ आ ।

उप्पियणं–मुहु श्वसनम् । व्य० द्वि० ५३ अ ।

उप्पिलणा–उत्पीडनं–प्राणादीनां प्लावनम् । व्य० द्वि० १० अ ।

उप्पील–उत्पील –समूहः । प्रश्न० ५० ।

उप्पीलइ–उत्पीडयति–प्राबल्येन बाधते । जीवा० ३२६ ।

उप्पीलिय–उत्पीडिता प्रत्यश्चारोपणेन, बाहौ बद्धा । भग० १९३ । गाढीकृता । राज० ११८ । भग० ३१७ । ज्ञाता० २२१ । जीवा० २५९ । उत्पीडित –गाढं बद्धः । प्रश्न० ४७ । उत्पीडिता–गुणसारणेन कृतावपीडा, बाहौ बद्धा वा । भग० ३१८ । कृतप्रत्यश्चारोपणा । विपा० ४७ । आरोपितप्रत्यश्चा । औप० ७१ । आक्रान्ता गुणेन । ज्ञाता० ८५ ।

उप्पीसेज्जा । भग० ७६६ ।

उप्पुया–उत्प्लुता –उत्सुका । प्रश्न० ५२ ।

उप्पूर – उत्पूर–प्राचुर्यम् । प्रश्न० ४३ । जलप्लवः । प्रश्न० ७६ ।

उप्पेक्खेज्ज–उपेक्ष्यते । आव० ६४० ।

उप्फंदति–उत्स्पन्दते–प्रविशति । उत्त० ३५५ ।

उप्फंसणं । ओघ० १९५ ।

उप्फणिंसु–साश्चर्यं वाताय दत्तवन्तः । आचा० ३४३ ।

उप्फसणा–अप्कायस्पर्शनं यत्सहचरित लवणोत्तारणम् । बृ० द्वि० ६१ आ ।

उप्फालग–उत्प्रासकम् । उत्त० ६५६ ।

उप्फिडइ–मण्डूकवत्प्लवते । उत्त० ५५१ ।

उप्फुल्लं–विगसिएहिं इत्थीसारीर रयणादि वा ण निज्झाइयव्व । दश० चू० ७७ । उत्फुल्ल–विकसितलोचनम् । दश० १६८ । निष्पुष्प । नि० चू० प्र० २०१ अ ।

उप्फेणओफेणीयं–सकोपोष्मवचनं यथा भवति । विपा० ८३ ।

उप्फेस – मुकुटम् । औप० २५ । शिरोवेष्टनम् । आचा० ३८० । प्रज्ञा० ८७ ।

उप्फेसि–शिरोवेष्टन, शेखरक इत्यर्थ । ठाणा० ३०४ ।

उप्फोसं–उत्सर्पणेन छटनम् । बृ० प्र० २८५ अ ।

उप्फोसणं–क्रियाविशेषः । नि० चू० द्वि० १६६ अ ।

उप्फोसणा–जलच्छटा । नि० चू० द्वि० ६३ अ ।

उप्फोसेज्जं–रुप्येत् । नि० चू० प्र० १८६ आ ।

उफुल्लो–निष्पुष्प । ओघ० ९७ ।

उबद्धो–अवबद्ध । आव० २९९ ।

उब्बद्धओ–उद्‌बद्धः । आव० ४५२ ।

उब्बुडा–उद्याता । आव० ६७७ ।

उब्बुड्ड–अन्तःप्रवेशितम् । अनुत्त० ७ ।

उब्बुड्डनिबुड्डयं–उन्मग्ननिमग्नलम् । प्रश्न० ६३ ।

उब्भं–तव । उत्त० १४७ ।

उब्भंडो–असवृतपरिधानादि । बृ० तृ० २२५ अ ।

उब्भज्जिय–उद्भिय । उत्त० १९२ ।

उब्भट्ठ–अभ्यर्थितम् । पिण्ड० ९० ।

उब्भड–उद्भटं–विकरालम् । जं० प्र० १७० । अनुत्त० ७ । भग० ३०८ । स्पष्टम् । भग० ३०८ ।

उब्भमा–उत्–प्राबल्येन भ्रमयन्ति उद्भ्रमाः–भिक्षाचराः । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भमे–उद्भ्रमेत्–यायात् । आचा० २९१ ।

उब्भव–उद्भव –सम्भवः । ज्ञाता० ५० । सम्भूतिः । भग० ४७० ।

उब्भवणं–निव्वावणं । नि० चू० प्र० ५२ आ ।

उब्भवेति–उच्छ्रयति । आव० ३४२ ।

उब्भातो–निसण्णो । नि० चू० प्र० ३५ आ ।

उब्भाम–भिक्षाचरग्राम । व्य० प्र० २५० अ ।

उब्भामइला–उद्भ्रामिला–स्वैरिणी । व्य० द्वि० ३१ आ ।

उब्भामओ–उद्भ्रामकः, जार । पिण्ड० १२३ । पारदारिक । ओघ० ९२ । बृ० तृ० ४८ अ ।

उब्भामगं–भिक्खायरिया । नि० चू० प्र० ७७ आ । नि० चू० प्र० ३६ आ । पारदारिका । ओघ० ७५ । बृ० द्वि० २६ अ । पारदारिगो । नि० चू० प्र० १०७ अ । सघाडगो । नि० चू० द्वि० ९४ आ ।

उब्भामनितोय – उद्भ्रामकनियोग –ग्राम । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भामिगा–उद्भ्रामिका–कुलटा । व्य० द्वि० १५० आ । उद्भ्रामिका–मनोगुप्तिदृष्टान्ते श्रेष्ठिसुतश्रावकजिनदासभार्या । आव० ५७८ । असती । दश० ५७ ।

उब्भामिज्जेंति–अपभ्राज्यन्ते । बृ० तृ० १३७ आ ।

उब्भामिया – कुशीला । बृ० द्वि० २६४ आ । उद्भ्रामिका–स्वैरिणी । आव० ४२१ ।

उब्भामे–भिक्खायरियं गच्छति । नि० चू० प्र० ११३ आ । भिक्षाभ्रमणम् । ठाणा० २६६ ।

उब्भावण–उद्भावन – महर्द्धिकतासम्पादनं कृतवान । बृ० तृ० ९३ अ । परिभव । ओघ० १४८ ।

उब्भावणा–उद्भावना–उत्प्रेक्षणा। भग० ४८९। उत्क्षेपणानि। ज्ञाता० १७७। उद्भावना। दश० ४४। प्रकाशनम्। नंदी० ५३। अपभ्राजना। उत्त० १६९।

उब्भिगा–उद्भिदो–भूमिभेदाज्जाता उद्भिज्जा –खञ्जनकादय। ठाणा० ३८६।

उब्भिज। नि० चू० प्र० ३३५ आ।

उब्भिज्ज – उद्भेद्या – वस्तुलप्रभृतिशाकभर्जिका। पिण्ड० १६८। उद्भिद्य भुव जाता उद्भिज्जा खञ्जनकादि। प्रश्न० ९०।

उब्भिज्जमाण–उद्भिद्यमानं–उद्घाट्यमानम्। जीवा० १९१।

उब्भिन्न–उद्भेदनं उद्भिन्नं साधुभ्यो घृतादिदाननिमित्तं कुतुपादेर्मुखस्य गोमयादिस्थगितस्योद्घाटनं तद्योगाद्देयमपि घृतादि उद्भिन्नम्। द्वादश उद्गमदोष। पिण्ड० ३४।

उब्भिय–उद्भेदनमुद्भित् उद्भिज्जन्म येषां ते उद्भिज्जा –पतङ्ग-खञ्जरीटपारिप्लवादय। दश० १४१। उद्भिज्ज–लवणाकरायुत्पन्नम्। आचा० ३५५।

उब्भुतिया–आभ्युदयिकी, देवतापरिगृहीता गोशीर्षचन्दनमयी भेरी। आव० ९७।

उब्भूयावेड। दश० चू० ८०।

उब्भेंति–उच्छ्रयन्ति। आव० ३४२। ऊर्ध्वयन्ति। उत्त० १४७।

उब्भेइम–उद्भेद्यं–सामुद्रादि। अप्रासुकम्। दश० १९८।

उभओ – उभयत –उभौ–शिरोऽन्तपादान्तावाश्रित्य। ज्ञाता० १५।

उभयं – उभयं–सयमासयमस्वरूपं श्रावकोपयोगि। दश० १५८। सघायसाडण, सङ्घातशातनकरणं, यस्य शकटोदाहरणम्। आव० ४६२।

उभयंभागा – उभयभागा–चन्द्रेणोभयतः – उभयभागाभ्या पूर्वत पश्चाच्चेत्यर्थो भज्यन्ते–भुज्यन्ते यानि तानि उभयभागानि, चन्द्रस्य पूर्वत. पृष्ठतश्च भोगमुपगच्छन्तीत्यर्थ.। ठाणा० ३६८। उभयभागानि – उभयं–दिवसरात्री तस्य दिवसस्य रात्रेश्चेत्यर्थ, चन्द्रयोगस्यादिमधिकृत्य भागो येषा तानि। सूर्य० १०४।

उभयओ–उभयत., उभयो –पार्श्वयो। सूर्य २९३।

उभयकप्पिय – उभयकल्पिक –यो द्वावपि सूत्रार्थौ युगपद् ग्रहीतुं समर्थ। बृ० प्र० ६३ अ।

उभयकाला–दिया रातो य। नि० चू० तृ० २१आ।

उभयकिडकम्मं–उभयकृतिकर्म–वन्दनम्। ओघ० २२।

उभयजं–गुणनिष्पन्नं, समयप्रसिद्धश्च। पिण्ड० ४।

उभयतरो–तं च तवं करेंतो आयरियाइवेयावच्चंपि करेति सलद्धित्तणओ एस उभयतरो। नि० चू० तृ० १२३ अ।

उभयनिसेहो–उभयनिषेध, सङ्घातपरिशातशून्यं, यस्य स्थूणोदाहरणम्। आव० ४६२।

उभयपंता–उभयप्रान्ता–अभद्रिका, अशोभनेत्यर्थ। ओघ० १५।

उभयपइट्ठिते – उभयप्रतिष्ठित –आत्मपरविषय। ठाणा० १९३।

उभयपदव्याहतं–गत्यागतिलक्षणे भेदः। आव० २८१।

उभयपदाव्याहतं–गत्यागतिलक्षणे भेद। आव० २८१।

उभयभविए – उभयभविकं–इहपरलक्षणयोर्भवयो यदनुगामितया वर्त्तते तदुभयभविकम्। भग० ३३।

उभयाक्षया– पञ्चविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वादेशादेरन्यथाकरणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिङ्गधार्यनेकश्रमणवत् सूत्रार्थोभयैर्विराध्येत्यर्थ। सम० १३३।

उभयास्तिकः। सम० ४२।

उमंथण–अवमंथमधोमुखम्। व्य० द्वि० ३२३ आ।

उमज्जायणसगोत्ते–पुष्यनक्षत्रस्य गोत्रम्। सूर्य० १५०।

उमा–प्रद्योतराजधान्यामुज्जयिन्यां गणिका। आव० ६८६। द्विपृष्ठवासुदेवमाता। आव० १६२। सम० १५२।

उमाए–अवमित परिच्छिन्नो वा। सूर्य० ९५।

उमाणं–प्रवेश स्वपक्षपरपक्षयोर्येषु तानि तथा। आचा० ३२६।

उमाव्यतिकर। आचा० १४६।

उम्मग्गं–विवर उन्मज्यतेऽनेनेति वोन्मज्यम्, ऊर्ध्वं वा मार्गमुन्मार्ग, सर्वथा अरन्ध्रमित्यर्थ। आचा० २३४। अकार्याचरणम्। आचा० २०३। उन्मार्ग। आव० ७७८। मार्गादूर्ध्वं, क्षायोपशमिकभावत्यागेनौदयिकभावसट्क्रम। आव० ५७१।

उम्मग्गगो–अडविपहेण गच्छति अहवा अपंथेण चेव। नि० चू० प्र० ३१९।

उम्मग्गजला–उन्मग्न जलं यस्यां सा उन्मग्नजला। जं० प्र० २३०।

उम्मग्गदेसणाए–उन्मार्गदेशनया–सम्यग्दर्शनादिरूपभावमार्गातिक्रान्तधर्म्मप्रथनेन। ठाणा० २७५।

उम्मग्गनिम्मग्गो – उन्मग्ननिमग्न–ऊर्ध्वाधोजलगमनम्। प्रश्न० ६३।

उम्मज्जगा – उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति। तापसविशेषा। निरय० २५। भग० ५१९।

उम्मज्जगो–उन्मज्जक –उन्मज्जनमात्रेण य स्नाति। औप० ९०।

उम्मज्जणिमज्जिय–उन्मग्ननिमग्निका –उत्पतनिपतता। ठाणा० १६१।

उम्मज्जति–स्पृशति। नि० चू० प्र० ११५ अ।

उम्मज्जा – उन्मज्जनमुन्मज्जा–नरकतिर्यग्गतिनिर्गमनात्मिका। उत्त० २८०।

उम्मत्तजला–रम्यक्विजये महानदी। जं० प्र० ३५२। नदीविशेष। ठाणा० ८०।

उम्मत्ता–मन्मथोन्मादयुक्ता, विटा। बृ० द्वि० १३८ आ।

उम्मत्तिगा–उन्मत्ता। आव० ४००।

उम्मत्तो–उत्–प्राबल्येन मत्ते उन्मत्ते, दरमत्तो वा उन्मत्तो। नि० चू० प्र० २७६ आ।

उम्मरीय–उम्बरीय –प्रत्युदुम्बरं रूपको दातव्य इत्येव लक्षण। बृ० तृ० ५१ अ।

उम्माओ–उन्माद –क्षिप्तचित्तादिक.। आव० ७५९।

उम्माणं–उन्मान–तुलारोपितस्यार्द्धभारप्रमाणता। प्रश्न० ७४। ज० प्र० २५२। ठाणा० ४६१। खण्डगुडादि धरिमम्। ठाणा० ४४९। तुलाकर्षादि तद्विषयम्। ठाणा० ४४९। नाराचादिः। आचा० ४१३। तुलाकर्षादि। ठाणा० १९८। तुलारूपम्। भग० ५४४। कर्षपलादि खण्डगुडादिद्रव्यमानहेतु। जं० प्र० २२७। अर्द्धभारमानता। भग० ११९। अर्द्धभारप्रमाणता। ज्ञाता० ११।

उम्माणजुत्तो–जइ तुलाए आरोविओ अद्धभारं तुलति तो उम्माणजुत्तो। नि० चू० तृ० ६१ अ। पुरिसो तुलारोवितो अद्धभारं तुलेमाणो उम्माणजुत्तो। नि० चू० द्वि० ८५ आ।

उम्माणा–उन्मानानि–तुलाया कर्षादीनि। ठाणा० ८६।

उम्माद्–चतुर्दशशते द्वितीय उद्देश। उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीय। भग० ६३०।

उम्माय – उन्माद –नष्टचित्ततया आलजालभाषणम्। असप्राप्तकाममेद। दश० १९४। चित्तविभ्रम। ठाणा० १५०। महामिथ्यात्वलक्षण. तीर्थकरादीनामवर्णं वदतो भवत्येव तीर्थकराद्यवर्णवदनकुपितप्रवचनदेवतातो वा यत्। ठाणा० ३६०। सग्रहत्वम्। ठाणा० ३६०। ग्रहो बुद्धिविप्लव.। ठाणा० ४७।

उम्मिमालिणीओ–नदीविशेष। ठाणा० ८०।

उम्मिल्लिज्जंते–उन्मील्यमाने। आव० ६३।

उम्मी – ऊर्म्मय–महाकल्लोला। भग० ७११। ऊर्मि–सबाध। औप० ५७। विचि, तरङ्ग। आव० ६०१। ऊर्म्मि –सबाध। भग० ४६३। कल्लोल। ठाणा० ५०२। सम्बाध, तरङ्ग, कल्लोलाकारो वा जनसमुदाय। भग० ११५।

उम्मीलिआ–उन्मिषितलोचना। जं० प्र० ५४, २९८। बहिष्कृता। ज० प्र० २९७, ५४।

उम्मीलिय–उन्मीलित–बहिष्कृतम्। सूर्य० २६४। प्रज्ञा० ९९। जीवा० २०९।

उम्मीसं–उन्मिश्र–शबलीभूतम्। आचा० ३२१। आगामुकसत्त्वसवलितं सक्तुकादि। आचा० ३२२। एकीकृत्य। ओघ० १६९। पुष्पादिमम्मिश्रम्, सप्तम एषणादोष। पिण्ड० १४७।

उम्मुक्को–उन्मुक्त –प्राबल्येन मुक्त, पृथग्भूत। आव० ५०८।

उम्मुग्गा–उन्मग्ना–नदीविशेष। आव० १५०।

उम्मुय–औल्मुक। प्रश्न० ७३।

उम्मूलणा सरीराओ–उन्मूलना शरीरात्, निष्काशनं जीवस्य देहादिति। प्राणवधस्य द्वितीय पर्याय। प्रश्न० ५।

उम्ह–उष्मा–परिताप। बृ० द्वि० १९४ अ।

उयट्ठी–कटी, जङ्घा। उत्त० ११८।

उयत्ति–तेयस्सिणो। नि० चू० प्र० ३०१ आ।

उयत्तिया–अपवर्त्य। आचा० ३४६।

उयरं–जलोयर। नि० चू० प्र० ५८ आ।

उयल्ला–मृता। आव० २७२।

उयविय–विशिष्ट परिकर्मितम्। राज० ९३।

उयवेंति–एतद्ग्रहे तत्र समुद्देशाप्यते इत्यर्थ। व्य० द्वि० ४५२ अ।

उयारं–उपकार। (महाप्र०)।

उयाहरे–उदाहरेत्–उद्घट्टयेत् । उत्त० ३४५ ।

उयाहु–उदाहु–उदाहृतवान् । उत्त० २७० ।

उरं–उर –वक्ष. । आचा० ३८ ।

उरंमुहो–अर्वाङ्मुख । आव० ४२७ ।

उरकंठसिरविसुद्धं–उर कण्ठशिरोविशुद्धम्–यद्युरसि स्वरो विशालस्तर्ह्युरोविशुद्धं, कण्ठे यदि स्वरो वर्तितोऽतिस्फुटितश्च तदा कण्ठविशुद्ध, शिरसि प्राप्तो यदि नानुनासिक-स्तत शिरोविशुद्धम्, अथवा उर कण्ठशिरस्सु श्लेष्मणाऽ-व्याकुलेषु विशुद्धेषु प्रशस्तेषु यद् गीयते तत् । अनु० १३२ ।

उरक्खंधगेवेज्जय – उरस्कन्धग्रैवेयक–भूषणविधिविशेष । जीवा० २६८ ।

उरक्खय–उर क्षत–उरोविघात , हृदयबाधा । विशे० १३१ ।

उरगपरिसप्पा–उरो–वक्षस्तेन परिसर्पन्तीति उर परिसर्पा । उत्त० ६९९ ।

उरगविही–शुक्रस्य महाग्रहस्य षष्ठी विथी । ठाणा० ४६८ ।

उरत्थ–उरस्थ', वक्षोभूषणविशेष । ज० प्र० २१३ । आचा० ४२३ । हृदयाभरणविशेष । ज० प्र० १०५ ।

उरपरिसप्पा–उरसा–वक्षसा परिसर्पन्तीति उर परिसर्पा.–सर्पादय । ठाणा० ११४ । सम० १३५ । उरसा परि-सर्पन्तीति उर परिसर्पा । प्रज्ञा० ४५ ।

उरब्भ–उरभ्र –ऊरण । जं० प्र० ३१ । जीवा० १८९ ।

उरब्भरुहिरं–उरभ्ररुधिरम् । प्रज्ञा० ३६१ ।

उरब्भिज्जं–उत्तराध्ययनस्य सप्तममध्ययनम् । उत्त० २७१ । सम० ६४ ।

उरलं–विरलप्रदेशम् । प्रज्ञा० २६९ । अल्पप्रदेशोपचितत्वाद् बृहत्त्वाच्च । ठाणा० २९५ ।

उरविसुद्ध–यद्युरसि स्वरो विशालस्तर्हि उरोविशुद्धम् । अनु० १३२ ।

उरसे–उपगतो–जातो रस'–पुत्रस्नेहलक्षणो यस्मिन् पितृ-स्नेहलक्षणो वा यस्यासावुपरम , उरसि वा–हृदये स्नेहा-द्वर्तते य स ओरस । पुत्रस्य पञ्चमो भेद । उरसा वर्तत इति ओरसो–बलवान । ठाणा० ५१६ ।

उरःशुद्धं–यद्युरसि स्वरो विशालस्तर्हि उरोविशुद्धम् । जं० प्र० ४० ।

उरस्ताडं–वक्षस्ताडम् । नदी १५७ ।

उरस्सं–उरसि भव उरस्यम् । जीवा० १२२ । उरसि भव उरस्य–आन्तरोत्साह । ज० प्र० ३८७ ।

उरस्सबल–अन्तरोत्साहवीर्यम् । उपा० ४७ ।

उरस्सबलसमण्णागए – औरस्यबलसमन्वागत –आन्त-रोत्साहवीर्ययुक्त । अनु० १७७ ।

उरस्सबलसमन्नागए–उरस्यबलसमन्वागत –आन्तरोत्सा-हवीर्ययुक्त । जीवा० १२२ ।

उराल–विस्तराल, विशालम् । ठाणा० २९५ । उदार–स्थूलम् । सूत्र० ५१ । स्वल्पप्रदेशोपचितत्वात् बृहत्त्वाच्च, मासास्थि पृयवद्ध यच्छरीर तत्समयपरिभाषया उरालम् । सम० १४२ । घडियं आभरणादि । नि० चू० प्र० ८२आ । प्रधान । सूर्य० ५ । ठाणा० ५०३ । आव० २८७ । वनस्पति-विशेष । प्रज्ञा० ३३ । शोभनो मनोज्ञो वा । सूत्र० १८४ । अत्यन्तोद्भट , समग्रसामग्रीक., मधुमद्यमांसाद्युपेत । सूत्र० ३२५ ।

उराला–उदारा –बादरा । ठाणा० १६१ ।

उरिणणं । ओघ० १६६ ।

उरितिय–उरसि त्रिकम् । औप० ५५ ।

उरुंमेइ–अवतारयति । आव० ४०८ ।

उरोविघातः–उर क्षतं, हृदयबाधा ।–विशे० १३१ ।

उरोहओ–अतेपुर । नि० चू० तृ० ४१ अ ।

उर्व्वशी–अरणि । नंदी १९ ।

उलग्गंति–अवलगन्ति । आव० ३९६ ।

उलजायगं–वीरल्लो । नि० चू० प्र० १५५ अ ।

उलूक–ऊर्ध्वकर्ण । अनु० १५० । मतविशेष । आव० ३७६ ।

उलूगि–उलूकी, तत्प्रधाना विद्या । आव० ३१९ ।

उलूयपणीयं–उलूकप्रणीतं–वैशेषिकप्रणीतम् । आव० ३२१ ।

उलोट्टए–अपवर्तन्ते । प्रश्न० ८६ ।

उल्मुकं–अलातम् । ओघ० १७ । प्रज्ञा० २९ । दश० १५४ । उल्कादि । आव० ५८८ ।

उल्लं–आर्द्र–प्रचुरव्यञ्जनम् । दश० १८१ ।

उल्लंघणं–ऊर्ध्वं लङ्घनम् । भग० ९२५ । उल्लङ्घन–कर्दमा-दीनामतिक्रमणम् । औप० ४२ । सहजात्' पादविक्षेपान्म-नागधिकतर पादविक्षेप उल्लङ्घनम् । प्रज्ञा० ६०६ । उल्ल-ङ्घन –बालादीनामुचितप्रतिप्रत्ययकरणतोऽध कर्त्ता । वत्सडिम्भा-

दीना चण्डश्वारभटवृत्त्याश्रयणतः। उत्त० ४३४। तथाविध-निमित्तत ऊर्ध्वभूमिकायुत्क्रमणे गर्ताद्यतिक्रमणे वा। उत्त० ५१९।
उलंछेइ–विगतलाञ्छन करोति। ज्ञाता० ८८।
उलंठं–उच्छृङ्खल.। आव० ३८४।
उलंडगा–मृद्गोलका। नि० चू० प्र० ३५६ आ।
उलंडणा–उलघणा। दश० चू० ७७।
उलंडा–मृद्गोलका। बृ० द्वि० २७१ आ।
उलंवण–उल्लम्बनं–वृक्षशाखादावुद्बन्धनम्। सम० १२६।
उलंवियगा – अवलम्बितका – रज्ज्वा बद्धा गर्त्तादावबतारिता.। औप० ८७।
उल्ल–आर्द्र। ओघ० १८८। उत्त० ५३०। भग० २३२। आर्द्रा स्तिमितसकलचीवरेतियावत्। उत्त० ४९३।
उल्लग–आर्द्र। आव० ६२१।
उल्लगजाति–वीरल्लगसउणो। नि० चू० प्र० २०४ आ।
उल्लच्छणा–अपवर्त्तना, अपप्रेरणा। प्रश्न० ५६।
उल्लण–येनौदनमार्द्रीकृत्योपयुज्यते उल्लणम्। पिण्ड० १६८। ओघ० १४६।
उल्लणिया–स्नानजलार्द्रशरीरस्य जलरूक्षणवस्त्रम्। उपा० ४।
उल्लदेत्ता–अवलाद्द–उत्तार्य। आव० २९१।
उल्लपडसाडओ–आर्द्रपटशाटक। आव० २११।
उल्लपडसाडगो–आर्द्रशाटिकापट। आव० ६८७।
उल्लपडसाडया–स्नानेनार्द्रे पटशाटिके–उत्तरीयपरिधानवस्त्रे। ज्ञाता० ८४।
उल्ललिया–चलिता। बृ० द्वि० १४९ आ।
उल्लवइ–उत्–प्राबल्येनासम्बद्धभाषितादिरूपेण लपति–वक्ति उल्लपति। उत्त० ३४४।
उल्लवितं–उल्लप्तम्। आव० ३४३।
उल्लविय–उल्लपितम्–मन्मनभाषितादि। उत्त० ४२८।
उल्लवेंत–उल्लापयन्। आव० ६९२।
उल्लवेंति–आलापयन्ति। (गणि०)।
उल्लवेइ–उल्लपति। आव० २१६।
उल्लवेयव्वो–विध्यापयितव्य। आव० ३८४।
उल्लहिज्जंति–उल्लिख्यमाना। आव० २००।
उल्ला–तिंता। नि० चू० प्र० ४६ अ। आर्द्र। आव० ६२२।
उल्लाट्टा–प्रत्यावर्त्त। व्य० प्र० १६७ आ।
उल्लालेमाणे–उल्लालयन्–ताडयन। जं० प्र० ३९७।
उल्लाव – उल्लाप –वचनम्। उत्त० ३३४। काक्वावर्णनम्। ठाणा० ४०७। काक्वावर्णनम्। ज्ञाता० ५७। भग० ४७८। प्रतिवचनम्। ओघ० ५२। उल्लापम्। आव० २२३। काक्वावर्णनम्। औप० ५७।
उल्लाविंतो–उल्लापयन्। उत्त० ८५।
उल्लिंचइ–उल्लिंचति–आकर्षति। पिण्ड० ११८।
उल्लिंचण–उदकनिष्काशनम्। नि० चू० प्र० २०७ आ।
उल्लिंचाविज्जिहिति। ओघ० ३३।
उल्लिउ–उल्लिखित। उत्त० ४६०।
उल्लिय–आर्द्र। आव० ६२१।
उल्लिहावेइ–चुम्बयति–आस्वादयति। आव० ६८०।
उल्ली – पनक। ठाणा० ४३०। पणगो। नि० चू० प्र० २५५ आ। पणओ। दश० चू० ८०।
उल्लीण–अपहाम। (मर०)।
उल्लीना–उपलीना–प्रच्छन्ना। आचा० ३७१।
उल्लोराइ। ओघ० १३७।
उल्लुका–जनपदो नदीविशेषश्च। विशे० ९२७। नदीविशेष। विशे० ९२७।
उल्लुकातीरं–उल्लुकानद्या समीपे नगरविशेष। धूलिप्राकारावृतत्वात् खेटमुच्यते। विशे० ९२७।
उल्लुगं–अवरुग्णम्–भग्नम्। प्रश्न० २२।
उल्लुगतीरं – उल्लुकतीरं–उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेष। उत्त० १६५।
उल्लुगा – उल्लुका–नदीविशेष। उत्त० १६५। आव० ३१७।
उल्लुगातीरं – उल्लुकातीरम्। पञ्चमनिह्नवोत्पत्तिस्थानम्। विशे० ९३४। आव० ३१२, ३१७।
उल्लुग्गंगी–म्लानाङ्गी। आव० ३९४।
उल्लुणिह–शिम्बी। नि० चू० द्वि० १४४ आ।
उल्लुयतीरे – उल्लुकतीरे–उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेष। भग० ७०५।
उल्लूहं। ओघ० १५८।
उल्लेति–आर्द्रयति। आव० १०१।
उल्लोअ–उल्लोक –उपरिभाग.। जं० प्र० ३२१।

उल्लोइआ–उल्लोयमिव उल्लोइअ च मेटिकादिना कुड्यादिषु धवलनम्। जं० प्र० ७६।

उल्लोइयं–सेटिकादिना कुड्याना धवलनम्। भग० ५८२। कुड्याना मालस्य च सेटिकादिभि सम्मृष्टीकरणम्। जीवा० १६०। राज० ३६। सम० १३८। कुड्यमालाना सेटिकादिभि सम्मृष्टीकरणम्। औप० ५। कुड्याना मालस्य च सेटिकादिभि सम्मृष्टीकरणम्। जीवा० २२७। प्रज्ञा० ८६।

उल्लोए–उल्लोक, उल्लोच। भग० ६४५। उपरिभाग। जं० प्र० ४९, ४००। जीवा० २०५। उल्लोच –चन्द्रोदय। सूर्य० २९३। उल्लोक –उपरितनभाग। जीवा० २०९, ३६०।

उल्लोय – उल्लोक –उपरिभाग। भग० ५४०। उद्देश। भग० ६५९। लेश्योद्देश। बृ० प्र० ७५० आ।

उल्लोयगं–उल्लोचम्। आव० १२४।

उल्लोलिया–मलगुटिका। गुटिका। आव० ६८०।

उल्लोलेइ–उल्लोडयत्। आचा० ४२३।

उल्हविज्जंतो–विध्यापित। आव० ३८४।

उवंगा – उपाङ्गानि – शिक्षादिषडङ्गार्थप्रपञ्चनपरा प्रबन्धा। भग० ११४। शिक्षादिषडङ्गव्याख्यानरूपाणि। अनु० ३६।

उवंगाइं–उपाङ्गानि–अङ्गावयवभूतान्यङ्गुल्यादीनि। प्रज्ञा० ४६९।

उव – उप–सामीप्यार्थे। प्रज्ञा० ४। दश० १४५। भग० ३७। उपमेतिवत्सादृश्येऽपि दृश्यते। उत्त० २३५। सकृदर्थे, अन्तर्वचन। आव० ८२८। अभ्यधिक पुन पुन। उत्त० ६४४।

उवइअ–उपचितौ, उन्नतौ, औपयिकौ, उचितौ, अवपतितौ, क्रमेण हीयमानोपचयौ। जं० प्र० ११२।

उवइगं–उद्देहिका। नि० चू० प्र० ५७ आ।

उवइज्जा–अवपतेत, आगच्छेत्। आचा० ३६५।

उवइस्सइ–उपदिश्यते–श्रोतृभावापेक्षया सामीप्येन कथ्यते। दश० ११०।

उवउग्गहकरो–किरियापरो। नि० चू० प्र० २६६ अ।

उवउत्त–उपयुक्त.–अनन्यचित्त। दश० १०६। अवहित। भग० ८९। णमोक्कारपरायणो। नि० चू० प्र० ८७अ। उपयुक्त –अभिष्वङ्गवान। भग० ९०५। व्यापृत', निश्रागत। विशे० ९७४। अभ्यवहृतम्। आचा० १७६।

उवएस–उपदेश –आदेश। व्य० प्र० १० आ। गुरुणाऽनुज्ञात। ओघ० १५१। हिताहितप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशनादुपदेश.। अनु० ३८। अन्यतरक्रियाया प्रवर्त्तनेच्छोत्पादनं उपदेश। वचनविभक्तेर्द्वितीयो भेद। अनु० १३४। यथा आत्मा न वध्यत इत्यादिविषय। दश० १२०। उपदेश –गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनम्। प्रज्ञा० ५८। श्रुतस्य पर्याय। विशे० ४२३। कथनम्। आव० ६०४, २६५।

उवएसदव्वमूलं–उपदेशद्रव्यमूलं–यच्चिकित्सको रोगप्रतिघातसमर्थं मूलमुपदिशत्यातुरायेति। आचा० ८८।

उवएसरुई–उपदेशो–गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनं तेन रुचि –जिनप्रणीततत्त्वाभिलाषरूपा यस्य स उपदेशरुचि। प्रज्ञा० ५८।

उवएसिया–उप–सामीप्येन देशिता उपदेशिता। आव० ६२।

उवओग–उपयोग –स्वस्वविषये लब्ध्यनुसारेणात्मन परिच्छेदव्यापार। जीवा० १६। उपयोजनमुपयोग –विवक्षितकर्म्मणि मनसोऽभिनिवेश। नदी १६४। ज्ञान, संविदनं, प्रत्यय। विशे० ३६। साकारानाकारभेदं चैतन्यम्। ठाणा० ३३४। जीवस्य बोधरूपो व्यापार। अनु० १६। अवहितत्वम्। उत्त० ५६१। भावेन्द्रियस्य द्वितीयो भेद। भग० ८७। मति। ओघ० ११६। उपयोग –लब्धिनिमित्त आत्मनो मनस्सान्निध्याद् अर्थग्रहणं प्रति व्यापार। आचा० १०४। उपयोग –आन्तर' श्रुतपरिणाम। विशे० २९७। चेतनाविशेष। भग० १४९। चैतन्य साकारानाकारभेदम्। भग० १४८। उपयोजनमुपयोग'–विवक्षिते कर्मणि मनसोऽभिनिवेश। आव० ४२६। विपाकानुभवनम्। दश० ८६। श्रोतुस्तदभिमुखता। आव० ३४१। सावधानता। औप० ४८। स्वाध्यायाद्युपयुक्तता। उत्त० १४५। स्वस्वविषये लब्ध्यनुसारेणात्मनो व्यापार प्रणिधानम्। प्रज्ञा० २९४। प्रज्ञापनाया एकोनत्रिंशत्तमं पदम्। प्रज्ञा० ६। उपयोजनं उपयोग भावे घञ्, यद्वा उपयुज्यते–वस्तुपरिच्छेद प्रति व्यापार्यते जीवोऽनेनेत्युपयोग, 'पुनाम्नि घ' इति करणे घप्रत्ययो बोधरूपो जीवस्य तत्त्वभूतो व्यापार। प्रज्ञा० ५२६। दश० १०८।

उवकप्पिया–उपकल्पिता। उत्त० २८७।

उवकरण–उपकरणं–अङ्गादानाख्य । बृ० तृ० ९८अ। उपकरणं–ग्लानाद्यवस्थायामन्येनोपकारकरणम् । प्रश्न० १२९ । उपधि । परिग्रहस्य पञ्चदश नाम । प्रश्न० ९२ । अङ्गम् । भग० २२४।

उवकरणपणिधाणे–उपकरणस्य लौकिकलोकोत्तररूपस्य वस्त्रपात्रादेः संयमासंयमोपकाराय प्रणिधानं–प्रयोग उपकरणप्रणिधानम् । ठाणा० १९६ ।

उवकरणसंवरे–उपकरणसंवर –अप्रतिनियताकल्पनीयवस्त्रादिग्रहणरूपोऽथवा विप्रकीर्णस्य वस्त्राद्युपकरणस्य संवरणम् । ठाणा० ४७३ ।

उवकरिंसु–अवकीर्णवन्त । आचा० ३११ ।

उवकरिज्ज–उपकुर्यात्–ढौकयेत् । आचा० ३५१ ।

उवकरेउ–उपकरोतु । उपा० १५ ।

उवकरणे–उपकरणे । बृ० द्वि० २८१ अ।

उवकुलं–कुलस्य समीपं उपकुलम् । जं० प्र० ५०६ ।

उवकुला–उपकुलानि । सूर्य० १११ ।

उवकोसा–कोशाया लघ्वी भगिनी उपकोशा । आव० ६९५ । आव० ४२५ ।

उवक्कम–उपक्रमण–आयु पुद्गलाना संवर्त्तनं समुपस्थितं तत् । आचा० २९१ । उपक्रमणमुपक्रम , उपक्रम्यतेऽनेनास्मादस्मिन्निति वोपक्रम –व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनम् । आचा० ३ । उपक्रमणं उपक्रम:–दीर्घकालभाविन्याः स्थितेः स्वल्पकालताऽऽपादनम् । उत्त० ३२१ । उपेति–सामीप्येन क्रमण उपक्रम –दूरस्थस्य समीपापादनम् । ओघ० १ । उपायेन परिज्ञानम् । ठाणा० १५५ । उपायपूर्वक आरम्भ । ठाणा० १५४ । प्रकृत्यादित्वेन पुद्गलाना परिणमनसमर्थं जीववीर्यम् । ठाणा० २२१ । अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षण । आव० २५७ । कालगमनम् । बृ० द्वि० २३० अ । नाशः । (आउ०) । उप–सामीप्ये, 'क्रमुपादविक्षेपे' उपक्रमणं दूरस्थस्य शास्त्रादिवस्तुनस्तैस्तै प्रतिपादनप्रकारै समीपीकरण–न्यासदेशानयनं निक्षेपयोग्यताकरणमित्युपक्रम । विशे० ४३० । कर्मवेदनोपाय । भग० ६५ । स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयनम् । प्रज्ञा० ५५७ । उपक्रम –दूरस्थस्य वस्तुनस्तैस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीपमानीय निक्षेपयोग्यताकरणं, उपक्रम्यते–निक्षेपयोग्य क्रियतेऽनेन गुरुवाग्योगेनेति, उपक्रम्यतेऽस्मिन शिष्यश्रवणभावे सतीति, उपक्रम्यतेऽस्माद्विनीतविनेयविनयादिति वा । अनु० ४५ । विशे० ४३० । उपक्रमणमुपक्रम इति भावसाधनः व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनेन निक्षेपावसरप्रापण, उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधनः, उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधन , उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनेयविनयादित्युपक्रम इत्यपादानसाधन इति । जं० प्र० ५ । उपक्रम्यते–क्रियतेऽनेनेत्युपक्रम – कर्मणो बद्धत्वोदीरितत्वादिना परिणमनहेतुर्जीवस्य शक्तिविशेषो योऽन्यत्र करणमिति रूढ , बन्धनादीनामारम्भ । ठाणा० २२१ । वस्तुपरिकर्म्मरूप । ठाणा० २२१ । अप्राप्तकालस्य निर्जरणम् । भग० ७१५ । आनुपूर्व्यादि । सम० ११५ । निरुक्तिस्तु उपक्रमणं उपक्रम इति भावसाधन , शास्त्रस्य न्यासदेशसमीपीकरणलक्षण , उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधन , उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधन , उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनीतविनेयादित्युपक्रम इत्यपादान इति । ठाणा० ४ । कर्मोदीरणकारणम् । ठाणा० ८९ ।

उवक्कमकाल – उपक्रमकाल – अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षण । विशे० ८३७ । अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षणसामाचार्यायुष्कभेदभिन्न । दश० ९ ।

उवक्कमिओ–औपक्रमिक –दण्डकशशास्त्रादिनाऽसातवेदनीयोदयापादक । सूत्र० ७८ ।

उवक्कमिया–उपक्रमणमुपक्रम –स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयनं तेन निर्वृता औपक्रमिकी । प्रज्ञा० ५५७ । औपक्रमिकी । सम० १४६ । प्रज्ञा० ५५४ । उपक्रमेण–कर्मोदीरणकारणेन निर्वृता तत्र वा भवा औपक्रमिकी–ज्वरातीसारादिजन्या । ठाणा० ८९ । कर्मवेदनोपायस्तत्र भवा औपक्रमिकी स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य कर्मणोऽनुभव । भग० ६५ । स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य वेद्यस्यानुभवात् औपक्रमिकी । भग० ४९७ ।

उवक्कम्म–उपक्रम्य–आगत्य । सूत्र० ३५६ ।

उवक्कयं–उपस्कृतं–नियुक्तम् । जीवा० २६८ ।

उवक्केस – उपक्लेशा –कृषिपाशुपाल्यवाणिज्याद्यनुष्ठानानुगता पण्डितजनगर्हिता शीतोष्णश्रमादयो घृतलवणचिन्तादि-

यश्च । दश० २७३ । उपक्लेश –स्वगतशोकादि । भग० ९२५ ।

उवक्खड – उपस्कृत – उपस्कर्तुमारब्धम् । पिण्ड० ६५ । उपस्करणमुपस्कृतं–पाक । ठाणा० २२० । लवणवेसवारादि-संस्कृतम् । उत्त० ३६० ।

उवक्खडणसाला–महाणसो । नि० चू० प्र० २७२ आ ।

उवक्खडामं–जहा चणयादीण उवक्खडियाण जे ण सिज्झंति ते कक्कटुया त उवक्खडियाम भण्णति । नि० चू० द्वि० १२५ अ ।

उवक्खडियं । ओघ १६० ।

उवक्खडेंति–उपस्कुर्वन्ति । आव० २९१ ।

उवक्खडे–उपस्कृतानि–नियुक्तानि । ज० प्र० १०५ ।

उवक्खडेउ–उपस्करोतु–राध्यतु । उपा० १५ ।

उवक्खडेज्जा–तदशनादि पचेत् । आचा० ३५१ ।

उवक्खरो–सर्पादिक । नि० चू० प्र० ३५६ अ । उपकरणम् । (मर०) । उपस्क्रियतेऽनेनेति उपस्कर –हिङ्ग्वादि । ठाणा० २२० ।

उवग–गर्त्ता । बृ० द्वि० ३१ अ ।

उवगओ–उपगत । आव० ४०० । सामीप्येन कर्मविगम-लक्षणेन प्राप्त । आव० ३८६ ।

उवगच्छया–कक्खा । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

उवगत–उपगत । आव० ३०८ । उपगत –आश्रित । उत्त० १७८ ।

उवगमं–उपगच्छति–सादृश्येन प्राप्नोति । उत्त० २३५ ।

उवगमण–उपगमनं–अवस्थानम् । सम० ३५ । अस्पन्द-तयाऽवस्थानम् । भग० १२० ।

उवगयं–उपगत–सामीप्येनात्मनि शब्दादिज्ञानं परिणतम् । नदी १८० । मृतम् । पिण्ड० १३४ । उपगतं–ज्ञातम् । आव० ८१२ ।

उवगरण–चोलपट्टको रजोहरण नैपथ्याद्वयोपेतं मुखवस्त्रिका उपलक्षणत्वादौर्णिकसौत्रिकौ च कल्पौ । बृ० प्र० २९५ अ । दडकं रजोहरण च । बृ० प्र० ७१ आ । उपकरण–औपग्रहिकम् । प्रश्न० १५६ । उपकरण–उपधिरेव । आव० ५६८ । आवरणप्रहरणादिकम् । भग० ९४ । लौहीकडुच्छुकादि । भग० २३८ । कङ्कटादिकम् । भग० ३२२ । व्यजनकटक-कवलकार्गलादि । आचा० ६० । उपकरोतीति उपकरणम् । ओघ० २०७ । वस्त्रादि । भग० ७५० । धर्म्मशरीरोपष्टम्भहेतुः । उत्त० ३५८ । अनेकविध कटपिटकशूर्पादिकम् । अनु० १५९ । रजोहरणदण्डकादि । ओघ० १२५ । द्रव्येन्द्रियस्य द्वितीयो भेद. । भग० ८७ । प्रज्ञा० ७३ । खड्गस्थानीयाया बाह्यनिर्वृत्तेर्या खड्गधारास्थानीया स्वच्छतरपुद्गलसमूहात्मिकाऽभ्यन्तरा-निर्वृत्तिस्तस्या शक्तिविशेष । जीवा० १६ । हस्त्यश्वरथासन-मञ्चकादि । आचा० १०० । औपग्रहिकम् । उत्त० ३५८ ।

उवगरणपडिया – उपकरणप्रतिज्ञा–उपकरणार्थिन समा-गच्छेयु । आचा० ३८४ ।

उवगरणसंजमे–उपकरणसयम –महामूल्यवस्त्रादिपरिहार, पुस्तकवस्त्रतृणचर्म्मपञ्चकपरिहारो वा । ठाणा० २३३ ।

उवगरयं(वरए)–अपवरकम् । आव० ६६६ ।

उवगसित्ताणं–उपसश्लिष्य, समीपमागत्य । सूत्र० १०७ ।

उवगहिओ–उपगृहीत –उपकृत । आव० ७६८ । उपग्र-हित । आव० ७९३ ।

उवगा–उपगा·–प्राप्ता । प्रज्ञा० ७० । उपगच्छन्ति–तदेक-चित्ततया तत्परायणो वर्त्तन्ते । जीवा० २६० ।

उवगारग्ग–उपकाराग्रं–यत्पूर्वोक्तस्य विस्तरतोऽनुक्तस्य च प्रतिपादनादुपकारे वर्त्तते तद् । आचा० ३१८ ।

उवगारियलेणाइ – औपकारिकलयनानि–प्रासादादिपीठक-रूपानि । भग० ६१७ ।

उवगारिया–राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीन् उपक-रोति–उपष्टभ्नातीति उपकारिका–राजधानीस्वामिसत्कप्रासा-दावतंसकादीना पीठिका । जीवा० २२२ । पीठिका । राज० ८१ ।

उवगिण्हह–उपगृह्णीत–उपष्टम्भं कुरुत । भग० २१९ ।

उवगूहिअ – उपगूहित–परिष्वक्तम् । सम्प्राप्तकामस्य षष्ठो भेद । दश० १९४ ।

उवगो–अन्यगच्छीय साधु । बृ० तृ० २१० अ । खुड्ड कुमारो वा । नि० चू० प्र० ८८ अ ।

उवग्गं–उपाग्र–समीपभूतम् । आव० ४०७ ।

उवग्गछाया–छायाभेद । सूर्य० ९५ ।

उवग्गह–उपग्रह –शिष्याणामेव ज्ञानादिषु सीदतामुपष्टंभक-रणम् । व्य० प्र० १७२ अ । उपष्टम्भ । पिण्ड० २७ । उपगृह्णातीति उपग्रह । ओघ० २०७ । शिष्याणा भक्त-

प्रतादिदानेनोपष्टम्भनम्। प्रश्न० १२६। अनाचार्याणामन्यगणगतकाना दिग्बन्ध कृत्वा धरणम्। व्य० प्र० २३५ अ। ग्रहणम्। ओघ० १४७। वस्त्रादिभिरुपष्टम्भ। ठाणा० ३३२। अवष्टम्भनम्। ओघ० १५४। उपगृह्णातीति उपग्रह – भक्तादि। ओघ० १८३।

उवग्गहितो - उवग्गहाति उवग्गहितो। नि० चू० द्वि० १११ आ।

उवग्गहिय–औपग्रहिकम्। ओघ० २१७। उपधि। उत्त० ५१७।

उवग्गहोवही–औत्पत्तिक कारणमपेक्ष्य सजमोपकरण इति गृह्यते। नि० चू० प्र० १७९ अ। उपग्रहोपधि –उपधेर्द्वितीयो भेद। अवग्रहोपधि –य कारणे आपन्ने सयमार्थं गृह्यते स। ओघ० २०८।

उवग्गाहियं–औपग्रहिक, सामुदानिकम्। उत्त० १०८।

उवग्गे–उपाग्रे–समीपभूते। विशे० ११७८। प्राप्ते। (महाप्र०)

उवग्घाय – उपोद्घात.–उपोद्घनन– व्याख्येयस्य सूत्रस्य व्याख्यानविधिसमीपीकरणम्। विशे० ६३८। अनु० २५८।

उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे – उपोद्घननं – व्याख्येयस्य सूत्रस्य व्याख्याविधिसमीपीकरणमुपोद्घातस्तस्य तद्विषया वा निर्युक्तिस्तद्रूपस्तस्या वा अनुगम उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगम। अनु० २५८। उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगम, निर्युक्त्यनुगमभेद.। आचा० ३।

उवघाइयणिस्सिया – उपघातनि सृता चौरस्त्वमित्याद्यव्याख्यानम्। प्रज्ञा० २५६।

उवघाइयाआरोवणा–सार्द्धदिनद्वयस्य पक्षस्य चोपघातनेन लघुना मासादीना प्राचीनप्रायश्चित्ते आरोपणा उपघातिकारोपणा। सम० ४७।

उवघात – उपघातो–पीडा व्यापादन वा। नि० चू० प्र० १३७ आ। अशुद्धता। ठाणा० ३२०। सत्त्वघातादि। सूत्रस्य द्वात्रिंशद्दोषे द्वितीय। अनु० २६१। बाधा। ओघ० १३७।

उवघातनिस्सिते–उपघाते–प्राणिवधे निश्रितं–आश्रित उपघातनिश्रितं दशम मृषा। ठाणा० ४८९।

उवघाय–उपघात –प्रतिसेवणादि। ओघ० २२५। सर्वतो घातनम्। प्रश्न० १२७। सयमात्मप्रवचनबाधात्मक। उत्त० ५१८। पिण्डादेरकल्पनीयताकरण, चरणस्य वा शबलीकरण, आधाकर्म्मत्वादिभिर्दुष्टता। ठाणा० १५९।

उवघायजणयं–उपघातजनकं–सत्त्वोपघातजनकम्। सूत्रदोषविशेष। आव० ३७५। सत्त्वोपघातादिप्रवर्त्तकम्। विशे० ८६४।

उवघायणामे–यदुदयात् स्वशरीरावयवैरेव शरीरान्त परिवर्द्धमानैः प्रतिजिह्वागलवृन्दलम्बकचोरदन्तादिभिरुपहन्यते, यद्वा स्वयंकृतोद्बन्धनभैरवप्रपातादिभिरुपघातनाम। प्रज्ञा० ४७३।

उवघायनिस्सिय–उपघातनिसृता–मृषाभाषा भेद। दश० २०९।

उवघेत्तुं–उपग्रहीतु, सस्थापयितु, निर्वापयितुं वा। बृ० द्वि० २१० अ।

उवचए–उपचीयते–उपचयं नीयतेऽनेनेति उपचय –पुद्गलसङ्ग्रहणसम्पत, पर्याप्तिरिति। प्रज्ञा० ३०९। प्राभूत्येन चय। प्रज्ञा० ४३२। स्वस्याबाधाकालस्योपरि ज्ञानावरणीयादिकर्मपुद्गलाना वेदनार्थं निषेक। प्रज्ञा० २९२।

उवचओ–उपचय –प्रभूततरा वृद्धि'। पिण्ड० ४१। परिग्रहस्य चतुर्थं नाम। प्रश्न० ९२।

उवचयति – उपचीयते–विशेषत उपचयमायाति। प्रज्ञा० २२८।

उवचरंति – उपचरन्ति–उपसर्गयन्ति। उप–सामीप्येन मासादिक्रमश्चन्ति अथवा श्मशानादौ पक्षिणो गृध्रादय उपचरन्ति इति। आचा० ३०८।

उवचरए–उपचरक –चर। आचा० ३७७। उपचारक'। आचा० ३६५।

उवचरगो–राजछिद्रान्वेषी। नि० चू० प्र० ३३५ अ।

उवचरित्तु–गृहीत्वा। नि० चू० प्र० २१ अ।

उवचार – उवचरति–पडिजागरति, उवचरति पुच्छति, लोगोपचारमात्रेणागच्छति, माभूणं मजाया नेव ज गिलाणस्स वट्टियव्व एस, ज्ञानादिक तस्समीपादीहतीत्यर्थं, पच्छित्त मा मे भविस्सतित्ति निर्जरार्थं एस उपचार। नि० चू० प्र० ३१९ अ। ग्रहण अभिगमेत्यर्थ। नि० चू० प्र० २० आ।

उवचारमेत्तं–कल्पनामात्रं। नि० चू० प्र० २१ अ।

उवचिअं – उपचित–साचितम्। आव० १७६। परिकर्मितम्। औप० १७।

उवचिए-उपशोभित-भृत। ज० प्र० २९२। उपचित-समृद्ध। ज्ञाता० ९८।

उवचिओ - उपचित -निवेशित। प्रज्ञा० ८६। जीवा० २२७, १६०।

उवचिज्जंति-निषेकरचनत निकाचनतो वा उपचीयन्ते। भग० २५३।

उवचिट्ठिज्जा-उपतिष्ठेत्-विनयेन सेवेत। दश० २४५।

उवचिण - उपचितवन्त -परिपोषगत। ठाणा० १७९। उपचयनं-चितस्याबाधाकाल मुक्त्वा ज्ञानावरणीयादितया निषेक। ठाणा० १९५। परिपोषणम्। ठाणा० ४१७।

उवचिणाइ - प्रदेशबन्धापेक्षया निकाचनापेक्षया वेति। भग० १०२।

उवचिणिंसु-उपचितवन्त। ठाणा० २८९।

उवचिय-उपचित-तेजितम्। प्रज्ञा० ९१। उपचित-परिकर्मितम्। राज० ३७। जीवा० २१०। युक्तम्। जीवा० २०४। मासलम्। जीवा० २७१। समानजातीयप्रकृत्यन्तरदलिकसङ्क्रमेणोपचय नीत। प्रज्ञा० ४५९। भृत। ज० प्र० ८२। परिकर्मितम्। भग० ५४०। विशिष्ट परिकर्मितम्। राज० ९३। उपचय -पौन पुन्येन प्रदेशानुभागादेर्वर्धनम्। भग० ५३। औपचयिक -उपचयनिर्वृत्त औपयिको वा-उचित। प्रश्न० ८१। निवेशित। औप० ५। बहुग प्रदेशसामीप्येन शरीरे चिता एवेति। भग० २४। युक्त। ज० प्र० ४८।

उवचीयइ - उपचीयते-उपचयमायाति। जीवा० ३२२, ३०६। उपचयमुपगच्छति। जीवा० ४००।

उवच्छगो-कक्खो। नि० चू० प्र० २११ अ।

उवच्छुभे। आव० १८०।

उवजाइय-उपयाचिते-देवताराधने भव औपयाचितक। ठाणा० ५१६।

उवजीवइ-उपजीवति-अनुभवति। भग० ११२।

उवजीवति - उपजीवति-जीवनार्थमाश्रयते। व्य० प्र० १६३ आ।

उवजीविओ-उपजीवित। ठाणा० ३७२।

उवजेमणा-रसवती। नि० चू० प्र० ३४९ आ।

उवजोइया-ज्योतिष समीपे ये त उपज्योतिषस्त एवोपज्योतिष्का -अग्निसमीपवर्तिनो महानसिका ऋत्विजो वा। उत्त० ३६४।

उवज्झाए-उपाध्याय। प्रज्ञा० ३२७। अध्यापक। आव० ३५३।

उवज्झाओ - उपयोगपूर्वक पापपरिवर्जनतो ध्यानारोहणेन कर्माण्यपनयतीति उपाध्याय। आव० ४४९।

उवज्झाय-उपाध्याय -उप-समीपमागत्य अधीयते-पठयते यस्य स ; उप अधि-आधिक्येन गम्यते स, उप अधि-आधिक्येन स्मर्यते सूत्रतो जिनप्रवचनं यस्मात् स, उपाधि -सन्निधिस्तेन तत्र वा आय -लाभ श्रुतस्य यस्य, उपाधीना-विशेषणाना आयो-लाभ यस्मात् स, उपाधिरेव-सन्निधिरेव आय-इष्टफल दैवजनितत्वेन आयानां-इष्टफलाना समूहस्तदेकहेतुत्वाद् यस्य, आधीना-मन पीडाना आयो-लाभ आध्याय, अधिया-कुबुद्धीना आयोऽध्याय, दुर्ध्यानं वाऽध्याय, उपहत आध्यायो वा अध्यायो येन स। भग० ३। सूत्रदाता। ठाणा० २९९। आचारगोचरविनयं स्वाध्याय वा आचार्यादेरु तस्मादुपाधीयते सद्ग्रहोपग्रहानुग्रहार्थं वा। तत्त्वा० ९-२४। उपगम्योपेत्य यतो येभ्योऽधीयते पठन्ति शिष्यास्त उपाध्याया, यच्च यस्मादुप-समीपे गतं-प्राप्तं शिष्यमध्यापयन्ति तत उपाध्याया, यस्माच्च स्वपरहितस्योपायमध्यायकाः उपायचिन्तकास्ततस्त उपाध्याया। विशे० १२३०। सूत्रार्थतदुभयविद ज्ञानदर्शनचारित्रेषूपयुक्ता-उपयुक्तास्तथा शिष्याणा सूत्रवाचनाप्रदानादिनिष्पादका एतादृशा भवन्ति। व्य० प्र० १७१ आ।

उवट्टगा। नि० चू० प्र० २३२ आ।

उवट्टणं-अक्कन् उवट्टण। नि० चू० प्र० १९० आ।

उवट्टित्ता-उद्वृत्य-तत्परित्यागेनान्यत्र गत्वा। उत्त० २९६।

उवट्ठिय-उपस्थापितः। आव० २८८।

उवट्ठवेति-उपस्थापयति, उपढौकयति, प्राभृतीकरोति। जं० प्र० २४४।

उवट्ठाइ-उत्तिष्ठते। आव० ३१८।

उवट्ठाएज्जा-उपतिष्ठेत्, उपस्थानम्-परलोकक्रियास्वभ्युपगमं कुर्यादित्यर्थ। भग० ६४।

उवट्ठाणं-गोसादिठाण। नि० चू० द्वि० ५० अ। उपस्थानेन-धर्मचरणाभ्यासेन वर्तते इति उपस्थान। आचा० २२५।

उवट्ठाणगिह – उपस्थानगृहं – आस्थानमण्डप । ठाणा० २९४ । भग० २०० ।

उवट्ठाणसाला–उपस्थानशाला–आस्थानसभा । औप० २३ । आस्थानशाला । आव० ३०० । उपवेशनमण्डप । निरय० ८ । आस्थानमण्डप । निरय० १० । जं० प्र० १८७ ।

उवट्ठाणा – मासद्वय चतुर्मासद्वयं चावर्जयित्वा पुनस्तत्रैव वसतामुपस्थानेति । ठाणा० ३२१ ।

उवट्ठावणा–उपस्थापना–महाव्रतारोपणरूपा । उत्त० ५६८ । उप–सामीप्येन सर्वदावस्थानलक्षणेन तिष्ठन्त्यस्यामिति उपस्थापना–शय्या । व्य० द्वि० १०४ अ ।

उवट्ठावणाए गहणं–तत्रोपस्थापनायां विधीयमानायां दत्तिदन्तोन्नताकारहस्तादिभिर्यद् रजोहरणादि गृह्यते तद् उपस्थापनाग्रहणम् । बृ० द्वि० २५६ अ ।

उवट्ठावणायरित्ते–उत्थापनयाचार्य । ठाणा० २३९ ।

उवट्ठाविए गहणं – उपस्थापितस्य – छेदोपस्थापनीयचारित्र प्रापितस्य यद् उपधेर्धारणं परिभोगो वा तद् उपस्थापितग्रहणम् । बृ० द्वि० २८६ अ ।

उवट्ठावित्तए – उत्थापयितु – महाव्रतेषु व्यवस्थापयितुम् । ठाणा० ५७ ।

उवट्ठिअ–उपस्थितं–उद्यतम् । ओघ० १७६ ।

उवट्ठिए–उपस्थित–प्रत्युद्यतम् । आव० ५४१ । दीक्षित । बृ० द्वि० २६४ अ । अत्यन्तावस्थायि । भग० १०० ।

उवट्ठिता–दूरीकृता । नि० चू० द्वि० ९४ आ ।

उवट्ठिताओ–गोलोपलखनि । नि० चू० द्वि० ४० आ ।

उवट्ठिय–उपस्थापित । आव० ५५९ । उपस्थित –उद्यत. । उत्त० ६३७ । प्रत्यासन्नीभूतम् । उत्त० ६६८ ।

उवणयं–उपनयनं–कलाग्रहणार्थं नयनं धर्मश्रवणनिमित्त वा साधुसकाशं नयनम् । आव० १२९ ।

उवणयणं–कलाग्राहणम् । भग० ५४५ । उपनयनं–बालाना कलाग्रहणम् । प्रश्न० ३९ ।

उवणिक्खिविउं–उपनिक्षिप्य । आव० ५५५ ।

उवणिवाय–उपनिपात –जनमीलक । ठाणा० ४२ ।

उवणिविट्ठं–उपविष्टं–सामीप्येन स्थितम् । जीवा० १९९ ।

उवणिहि – उप–सामीप्येन निधि. उपनिधि –एकस्मिन् विवक्षितेऽर्थे पूर्वं व्यवस्थापिते तत्समीप एवापरापरस्य वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण यन्निक्षेपणं स । अनु० ५२ ।

उवणीअ–उपनीत –नियोजित । ठाणा० २५९ । उपसहारोपनययुक्तमुपनीतम् । अनु० १३३ । उपनयोपसहृतमुपनीतम् । अनु० २६२ । उपसहारयुक्तम् । ठाणा० ३९७ । प्रापितम् । ठाणा० ४९४ । निगमित, योजितम् । ठाणा० २५९ ।

उवणीए–उपनीतं–योजितम् । जं० प्र० १०५ ।

उवणीते–उपनीतं–प्रापित, दशमो विशेष । ठाणा० ४९२ ।

उवणीय–उपनीत–योजितम् । जीवा० २६८ । उपनयोपसहृतम् । आव० ३७३ । विनीतं, ढौकितं, दायकेन वर्णितगुणं वा । औप० ३९ । प्रापित । आचा० ७८ ।

उवणीयअवणीयवचनं – उपनीतापनीतवचनं – कश्चिद् गुण प्रशस्य कश्चिन्निन्द्य । आचा० ३८७ ।

उवणीयवयणं – उपनीतवचन–प्रशसावचनम् । आचा० ३८७ । प्रज्ञा० २६७ । गुणोपनयनरूपम् । प्रश्न० १९८ ।

उवणीयावणीयवयणं – उपनीतापनीतवचनं – यत्प्रशस्य निन्दति । प्रज्ञा० २६७ । यत्रैकं गुणमुपनीय गुणान्तरमपनीयते तत् । प्रश्न० ११८ ।

उवणेइ–उपनयति, प्राभृतीकरोति । जं० प्र० २०४ ।

उवण्णं–प्रोक्षित । नि० चू० प्र० २७४ आ ।

उवण्णत्थ–उपन्यस्तं–उपकल्पितम् । दश० १७१ ।

उवण्हाणयं–माषचूर्णादिसिणाण । नि० चू० प्र० ११६ आ ।

उवतत्तो–उपतप्त –आपन्नसताप । प्रश्न० १९ ।

उवतेसणे–उपदिश्यत इति उपदेशनं–उपदेशक्रियाया व्याप्यमुपलक्षणत्वादस्य क्रियाया यद् व्याप्यं तत् कर्मेत्यर्थ । द्वितीया वचनविभक्ति । ठाणा० ४२८ ।

उवतेसरुई–उपदेश –गुर्वादिना कथनं तेन रुचिर्यस्येत्युपदेशरुचि । ठाणा० ५०३ । उत्त० ५६३ ।

उवत्तावलिए–चतत्रावलित । सूत्र० ३८७ ।

उवत्तिया–अपवर्त्तिता । ज्ञाता० ४८ ।

उवत्थड–उपस्तीर्णं –उपच्छादित । भग० ३७, १५३ ।

उवत्थमं–अस्तं । नि० चू० तृ० ६० अ ।

उवत्थाण–उपस्थानं–प्रत्यासक्तिगमनम् । निरय० ३३ ।

उवत्थाणियं–उपस्थानं–प्रत्यासक्तिगमनं तत्र प्रेक्षणककरणाय यदा विधत्ते । निरय० ३३ ।

उवत्थाणीअ – उपस्थानिकं–प्राभृतम् । जं० प्र० २०३, २५२ ।

उवत्थिए-अभ्युपगत । ज्ञाता० २२० ।
उवत्थिया-उपस्थिता-उपनता । सम० १८ ।
उवदंसं-उपदर्शनम् । आव० ७२६ ।
उवदंसणकूड-उपदर्शनकूट, उपदर्शननामक कूटम् । जं० प्र० ३७७ ।
उवदंसिज्जंति - उपदर्श्यन्ते-निगमनेन शिष्यबुद्धौ नि शङ्कं व्यवस्थाप्यन्ते । नंदी २१२ । उपदर्श्यन्ते उपनयनिगमनाभ्या सकलनयाभिप्रायतो वा । सम० १०९ ।
उवदंसिया-उप-सामीप्येन यथा श्रोतॄणा झटिति यथाव स्थितवस्तुतत्त्वावबोधो भवति तथा स्फुटवचनैरित्यर्थ, दर्शिता -श्रवणगोचर नीता उपदिष्टा । प्रज्ञा० ८ ।
उवदंसेइ-सकलनययुक्तिभि उपदर्शयति । भग० ७११ । ठाणा० ५०३ । उपदर्शयति-प्रकाशयति । भग० १४९ ।
उवदिट्ठाभावमूलं-उपदेष्टृभावमूल - उपदेष्टा-यै कर्मभि प्राणिनो मूलत्वेनोत्पद्यन्ते । आचा० ८८ ।
उवद्दवा-उपद्रवा राजचौर्यादिकृता । भग० ४६९ ।
उवद्दवेइ-उपद्रवयति-उपद्रव करोति । ठाणा० ३०५ ।
उवद्दवेह-उपद्रवयथ-मारयथ । भग० ३१८ ।
उवधाणं-उपदधातीत्युपधान-तप । दश० १०४ ।
उवधायपडगो-पडगस्स वीयो भेओ । नि० चू० द्वि० ३१ अ ।
उवधारणया-धार्यतेऽनेनेति धारण, उप-सामीप्येन धारण उपधारण-व्यञ्जनावग्रहेऽपि द्वितीयादिसमयेषु प्रतिसमयपूर्वापूर्वशब्दादिपुद्गलादानपुरस्सर प्राक्तनप्राक्तनसमयगृहीतशब्दादिपुद्गलधारणपरिणाम तद्भाव उपधारणना । नंदी १७४ । उपधारणता - अविच्युतिस्मृतिवासनाविषयकरणम् । ठाणा० ४४१ ।
उवधारियं-उपधारित-अवधारितम् । भग० १०१ ।
उवनंद-उपनन्द । आव० २०१ ।
उवनगरगामं-उपनगरग्राम । आव० ३०१ ।
उवनिक्खित्ते-उपनिक्षिप्त -व्यवस्थापित । आचा० ३८४ ।
उवनिग्गय-उपविनिर्गत -निरन्तरविनिर्गत । राज० ६ ।
उवनिहिते-उपनिधीयत इति उपनिधि -प्रत्यासन्न यद्यथाकथञ्चिदानीत तेन चरति तद्ग्रहणायेत्यर्थ इत्यौपनिधिक, उपनिहितमेव वा यस्य ग्रहणविषयतयाऽस्ति स प्रज्ञादेराकृतिगणत्वेन मत्वर्थीयाण्प्रत्यये औपनिहित इति । ठाणा० २९८ ।
उवनिहिय-उपनिधिना - प्रत्यासत्त्या चरति-प्रत्यासन्नमेव गृह्णाति य स औपनिधिक । प्रश्न० १०६ ।
उवनिही-उपनिधि -प्रत्यासत्ति । प्रश्न० १०६ ।
उवन्नास-उपन्यसन उपन्यास । दश० ३५ ।
उवन्नासोवणए-वादिना अभिमतार्थसाधनाय कृते वस्तूपन्यासे तद्विघटनाय य प्रतिवादिना विरुद्धार्थोपनय क्रियते पर्यनुयोगोपन्यासे वा य उत्तरोपनय स उपन्यासोपनय । ठाणा० २५४ ।
उवप्पयाण-उपप्रदानं-अभिमतार्थदानम् । विपा० ६५ । उपप्रदानम् । दश० १०९ ।
उवब्बूहियं - उपबृंहित-समर्थित, अनुमत वा । आव० ५३९ ।
उवभोग-उपभुज्यत इति उपभोग -सकृद्भोगोऽशनपानादि, अन्तर्भोग, आहारादि वा । आव० ८२८ । सकृद्भोग । भग० २९७ । आव० ८३० । पुन पुनर्भुज्यत इति उपभोग -वस्त्रालङ्कारादि । प्रज्ञा० ४७५ । ण्हाणवत्थाभरणगंधमल्लाणुलेवणधूवणवामतबोलादि । नि० चू० तृ० १ आ । धारणमुपभोग । आव० ३२५ । उपभोग -पौन पुन्येन चोपभोजनमुपभोग । भग० ३५० ।
उवभोगंतराए - उपभोगान्तराय - यदुदयवशात् सत्यपि विशिष्टवस्त्रालङ्कारादिसम्भवेऽसति च प्रत्याख्यानपरिणामे वैराग्ये वा केवलकार्पण्यान्नोत्सहते भोक्तुं तत् । प्रज्ञा० ४७५ ।
उवम-उपमीयतेऽनेन दार्ष्टान्तिकोऽर्थ इत्युपमानम् । दश० ३४ ।
उवमा-उपमा-सादृश्यम् । उत्त० २७९ । दृष्टान्ता । बृ० प्र० १६८ आ । सादृश्योपदर्शनरूपा । उत्त० २७२ । उपमादोष -हीनाधिकोपमानाभिधान, अष्टाविंशतितम. सूत्रदोष । आव० ३७४ । उपमा । प्रज्ञा० ३६४ । खाद्यविशेष । जीवा० २७८ । उपेत्युपयोगपूर्वक मेति ज्ञानं, उपमा-सम्प्रधारणा । उत्त० २२४ ।
उवमाणं-उपमानं-दृष्टान्त । ओघ० १७ ।
उवमादोसो-उपमादोष -यत्र हीनोपमा क्रियते । सूत्रस्य द्वात्रिंशद्दोषेऽष्टाविंशतितमो दोष । अनु० २६२ ।
उवयंति-अवपतन्ति-अवतरन्ति । आचा० २६६ ।

उवयरयं-अपवरकम् । आव० ७२२ ।

उवयातिते-उपयाचिते-देवताराधने भव औपयाचितक । ठाणा० ५१६ ।

उवयार - उपचार । आव० ५६, २१३ । पूजा । राज० ३६ । प्रज्ञा० ८६ । जीवा० २२७, २५५ । जं० प्र० ७७ । औप० ५ । आराधनाप्रकार । दश० २५० । लोकव्यवहार । औप० १३ । देवतापूजा । प्रश्न० ५१ । पूजा । उपकार । प्रश्न० ११७ । दश० ७९ । पूजा । भग० ५४० । व्यवहार । ठाणा० ४०९ । व्यवहार, पूजा वा । भग० ९२५ । यतो मुख्याभावे मति प्रयोजने निमित्ते चोपचार प्रवर्त्तते । विशे० १६६ ।

उवयारियलेणं-गृहस्य पीठबन्धकल्पम् । भग० १४६ ।

उवयारिया-उपकरोति-उपष्टभ्नाति प्रासादावतंसकानित्युपकारिका-राजधानीप्रभुसत्कप्रासादावतंसकादीना पीठिका । जं० प्र० ३२१ ।

उवयालि-अनुत्तरोपपातिकदशाना प्रथमवर्गस्य तृतीयमध्ययनम् । अनुत्त० १७२ ।

उवयाली - अन्तकृद्दशाना चतुर्थवर्गस्य तृतीयमध्ययनम् । अन्त० १४ ।

उवयिगा-उद्देहिया । नि० चू० प्र० ५३आ ।

उवयिया-त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः । जीवा० ३२ ।

उवयोगपदं-प्रज्ञापनायामेकोनत्रिंशत्तम पदम् । भग० ७१३ ।

उवरए-उपरत' - सङ्कुचितगात्र. । आचा० २०४ । उपरत -कालगत । व्य० द्वि० ३४आ ।

उवरति-उपरति -विरति' । ठाणा० ३ ।

उवरतो-उपरत.-रावः । उत्त० २१८ ।

उवरय-उद्वलको-वियोजक । सम० ४७ । उपरता । आचा० ३५० ।

उवराग-उपराग -ग्रहणम् । भग० १४७ । उपरञ्जनं ग्रहणमित्यर्थ । प्रश्न० ३९ ।

उवराते - उपराग' - राहुविमानतेजसोपरञ्जनम् । ठाणा० ४७६ ।

उवरिं - उपरि - कुड्यस्थाने । ओघ० १७५ । नीव्रादौ । ओघ० १६२ । अग्रे । ठाणा० २२५ ।

उवरिएणं-जत्थ गामे सखडी तत्थेव गतुकामा जे वा तस्स गामस्स उवरिएणंति मज्झेण गंतुकामा । नि० चू० प्र० ३१६अ । उपरितन । आव० २६२ ।

उवरिचरे-उपरिचर सत्यवादी वसू राजा । जीवा० १२१ ।

उवरिभासा-उपरिभाषा-उत्तरकालं तदेव किलाधिक यद् भाषते सा । आव० ७९२ ।

उवरिमागारो-उपरिमाकार -उपरितन आकार - उत्तरङ्गादिरूप । जीवा० २१६ ।

उवरियलेणं-उपरितलम् । भग० १९५ ।

उवरिल्लए-उपरितनं, उपरिभवम् । दश० २११ ।

उवरिल्ले-उपरितनम् । अनु० १७७ ।

उवरिल्ले माणसे - उपरितनमध्यमाधस्तनाना मानमाना सद्भावात् तदन्यव्यवच्छेदायोपरितने, माणसे-रागादिप्रह पणत. प्रागुक्तस्वरूपे सरसि सर प्रमाणायुष्कयुक्ते इत्यर्थ । भग० ६७४ ।

उवरिल्ले माणसुत्तरे-उपरितनमानसोत्तरे । भग० ६७४ ।

उवरुद्द-उपरौद्र -नरके षष्ठ परमाधार्मिक । आव० ६५० । यस्तु तेषामङ्गोपाङ्गानि भनक्ति सोऽत्यन्तरौद्रत्वादुपरौद्र, नरके षष्ठ परमाधार्मिक. । सम० २८ । उपरुद्र -षष्ठ. परमाधार्मिक । सूत्र० १२८ ।

उवरुवरि-उपर्युपरि-निरन्तरम् । प्रश्न० ५१ ।

उवरेगं-उपरेकं-एकान्त, निर्व्यापारता वा । उत्त० १९३ ।

उवरोह-उपरोध -निषेध । दश० १०८ । सङ्घट्टनादिलक्षण । आव० ५९३ । उपरोध -उपघात । विशे० ७४८ ।

उवलंवयरज्जू - विमानानामुपरितोऽधस्तायावद रज्जु । (दे०)

उवल-उपल -गण्डशैलादि । उत्त० ६८९ । टङ्काद्युपकरणपरिकर्मणा योग्य पाषाण । जीवा० २३ । प्रज्ञा० २७ । पृथिवीभेद । आचा० २९ । दग्धपाषाण । भग० २९३ । छिन्नपाषाण । नि० चू० द्वि० ८०अ । छिन्नपाषाणा । बृ० नृ० १६२आ ।

उवलद्धिमंति-उपलब्धिमन्ति-द्रष्टुणि । दश० १२९ ।

उवलद्धी-उपलब्धि , उपलब्धये-उपलब्धिनिमित्तम् । आव० २८० ।

उवलभसि-उपलम्भयसि, दर्शयसि । भग० ६८३ ।

उवलभेज्जा-उपलभेत-प्राप्नुयात । जीवा० १२३ ।

उवलिंपिज्ज–उपलिम्पनम् । आचा० १३५ ।
उवलित्ता–जातिजुगितामेओ । नि० चू० द्वि० ४३आ ।
उवलेद्दा–सतुष्ठा । उत्त० १९२ ।
उवलेवण–उपलेपन छगणादिना । अनु० २६ । छगलमट्टियाए लिंवण । नि० चू० प्र० २३१अ ।
उवलेवणकओवयारो–कृतोपलेपनोपचार ।आव० ४१६।
उवल्लियंती–उपलीयन्ते–आश्रयन्ति । व्य० द्वि० २७८आ ।
उवल्लिसामि–उपालयिष्ये–वत्स्यामि । आचा० ४०६ ।
उववज्जति–उत्पद्यते । जीवा० ११० ।
उववज्झिऊण–उपयुज्य–उपयोगं दत्त्वा । ओघ० ११६ ।
उववज्झा–उपवाह्या –राजादिवल्लभा । औपवाह्या –राजादिवल्लभाना कर्मकरा इति । दश० २४८ ।
उववण्णो–उपपन्न । जीवा० ९७ ।
उववत्तारो–वचनव्यत्ययादुपपत्ता भवति इति ।ठाणा० ४२०।
उववन्नो–उपपन्न –आश्रित । सूर्य० २८१ ।
उववाइए–उपपात –प्रादुर्भावो जन्मान्तरसक्रान्ति, उपपाते भव औपपातिक । आचा० १६ । उपपादुक –भवान्तरसङ्क्रान्तिभाक् । आचा० २० ।
उववाइय–उपपातेन निर्वृत्त औपपातिक –भवाद्भवान्तरगामीति । सूत्र० २० । उपयाच्यते–मृग्यते स्म यत्तत् उपयाचितं–ईप्सितं वस्तु । ज्ञाता० ८४ ।
उववाइया–उपपाताज्जाता उपपातजा अथवा उपपाते भवा औपपातिका –देवा नारकाश्च । दश० १४१ ।
उववाए – उपपात – उपपाताभिमुख्येनापान्तरालगतिवृत्त्येत्यर्थ । भग० ९६३ । देवजन्म । ठाणा० ४१९ । नादकागुपपातार्थं, द्वादशशते षष्ठोद्देशक । भग० ५९६ । उपपात –प्रादुर्भाव । प्रज्ञा० ३२८ ।
उववाएणं–उपपतनमुपपात, बादरपृथ्वीकायिकाना पर्याप्तानां यदनन्तरमुक्तं स्थान तत्प्राप्त्याभिमुख्यमिति भावनेनोपपातेन, उपपातमङ्गीकृत्य । प्रज्ञा० ७३ ।
उववात–उपपातं–नारकदेवाना जन्म । ठाणा० ४६६ । उपपात –गमनमात्रम् । ठाणा० ३७६ ।
उववातसभा–उपपातसभा–यस्यामुत्पद्यते सा । ठाणा० ३५२ ।
उववातो–उवसपज्जण । नि० चू० प्र० २४१अ ।
उववायं–उपपातं–जन्म । आचा० १६३ । भवनपतिस्वस्थानप्राप्त्याभिमुख्यम् । भग० १४३ । उत्पातेन निर्वृत्त औत्पातिकम् । आव० ७३१ । उप–समीपे पतनं–स्थानं उपपात दृग्वचनविषयदेशावस्थान । उत्त० ४४ । उपपात –सेवा । भग० १६८ ।
उववायगई–उपपाताय–उत्पादाय गमनं सा उपपातगति । भग० ३८१ ।
उववायगती–उपपात एव गति उपपातगति । गतिप्रपातस्य चतुर्थो भेद । प्रज्ञा० ३२६ ।
उववायसभा–सिद्धायतनस्योत्तरपूर्वस्या सभा उपपातसभा। जीवा० २३६ ।
उववास–उपवास, अभक्तार्थकरणम् । ठाणा० १२६ ।
उववूह–उपबृंहण–समानधार्मिकाणा सद्गुणप्रशमनेन तद्वृद्धिकरणम् । दश० १०२ । उपबृंहणमुपबृहा–दर्शनादिगुणान्विताना सुलब्धजन्मानो यूयं युक्तं च भवादृशामिदमित्यादिवचोभिस्तत्तद्गुणपरिवर्द्धनं सा । उत्त० ५६७ । समानधार्मिकाणा सद्गुणप्रशसनेन तद्वृद्धिकरणम् । प्रज्ञा० ५६ ।
उववूहइ–उपबृंहते–समर्थयति । दश० ४४ ।
उववेओ – उपपेत इति लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेत । ठाणा० ४६१ ।
उववेय – उपपेत –युक्त । जीवा० २७४ । भग० ११९ । उप अप इन इति शब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनादुपपेत –युक्त । ज्ञाता० ११ ।
उवसंकमित्ता–उपसङ्क्रम्य । सूर्य० ११ ।
उवसंकमित्तु–उपसङ्क्रम्य, आगन्नीभूय । आचा० ३३१। उपसङ्क्रम्य–उपेत्य । आचा० २७१ ।
उवसंखा–उपसख्या–सम्यग्यथावस्थितार्थपरिज्ञानम् । सूत्र० २१४ ।
उवसंत–उपशान्त–अनाकुलम् । ओघ० १७६ । यत् शेष सत्तायामनुदयागत वर्त्तते तद् । विष्कम्भितोदयमुपनीतमिथ्यास्वभावं च । विशे० २८६। किञ्चिन्मिथ्यात्वरूपतामपनीय सम्यक्त्वरूपतया परिणतं किञ्चिन्मिथ्यात्वरूपमेव । बृ० प्र० २१आ । रागद्वेषपावकोपशमाद उपशान्त । आचा० १५० । रूपालोकानाद्यौत्सुक्यत्यागत । अनु० १४० । अन्तर्वृत्त्या उपशान्त । भग० ४९० । विष्कम्भितो-

दयमपनीतमिथ्यात्वभाव च । विष्कम्भितोदयमित्यर्थं । ठाणा० ४८ । उपशान्त–न सर्वथाऽभावमापन्नं, निकाचितायवस्थोद्रेकरहित वा । प्रज्ञा० ४०३ । औप० ३५ । जं० प्र० १४६ । जं० प्र० ३८९ । जम्बूद्वीपैरवते तीर्थंकरनाम । सम० १५३ । पवज्जापरिणतं । नि० चू० द्वि० २८अ । उपशान्त –उपरत । दश० २०६ । सूत्र० ४१७ । अपगतसन्देह सवृत्त इति । सूत्र० ४०९ । अनुदयावस्थ । प्रज्ञा० २९१ ।

उवसंतकसातो-उपशान्तकषाय. । उत्त० २५७ ।

उवसंतजीवी – अन्तर्वृत्त्यपेक्षया उपशान्तजीवी । प्रश्न० १०६ ।

उवसंतमोह-उपशान्तमोह –अनुत्कटवेदमोहनीय । भग० २२३ । श्रेणिपरिसमाप्तावन्तर्मुहूर्त्तं यावदुपशातवीतराग । भूतग्रामस्यैकादश गुणस्थानम् । आव० ६५० ।

उवसंतमोहणिज्जो-उपशान्तमोहनीय – उपशान्त–अनुदय प्राप्त मोहनीयं दर्शनमोहनीय यस्यासौ । उत्त० ३०६ ।

उवसंपजहण – उवसपदनं उपसम्पद् – अन्यरूपप्रतिपत्ति, सा च हान च स्वरूपपरित्याग उपसम्पद्धानम् । उत्त० ४७० ।

उवसंपज्जइ-उपसम्पद्यते । आव० ८२५ ।

उवसंपज्जणा-उपसम्पद । दश० १०५ ।

उवसंपज्जमाणगति-उपसपद्यमानगति –यदन्यमुपसम्पद्य–आश्रित्य तदवष्टम्भेन गमनम् । विहायोगतेस्तृतीयो भेद । प्रज्ञा० ३२७ ।

उवसंपज्जसेणियपरिकम्मे-पञ्चम परिकर्म । सम० १२८ ।

उवसंपज्जित्ता-उपसम्पद्य–सामीप्येनाङ्गीकृत्य । दश० १५० ।

उवसंपन्नं-उपसम्पन्न–नियमायोरिथतम् । सूत्र० ४१० ।

उवसंपया-उपसपत्–सामीप्येनाङ्गीकरण यदेतदुत्प्रव्रजनम् । दश० २७३ । सामाचार्या दशमो भेद । उपसम्पत्–इतो भवदीयोऽहमित्यभ्युपगम । ठाणा ४९९ । उपसम्पत् । आव० २५९ । सामाचार्या दशमो भेद । उपसम्पत्–ज्ञानादिनिमित्तमाचार्यान्तराश्रयणम् । भग० ९२० । उपसंपन्निहप सपत्–ज्ञानाद्यर्थं भवदीयोऽहमित्यभ्युपगम । ठाणा० १४० । त्वदीयोऽहमित्येवं श्रुताद्यर्थमन्यदीयसत्ताभ्युपगम । अनु० १०३ । उवसपदन उपसम्पत्–अन्यरूपप्रतिपत्ति । उत्त० ६७० ।

उवसंहार-उपसहार –उपनय । दश० ५२ । बृ० तृ० १३६आ ।

उवसग्ग-उपसृज्यते–धातुसमीपे नियुज्यते इति उपसर्ग । प्रश्न० ११७ । बाधाविशेषा । ठाणा० २८० । राजादिजनित । ओघ० १९० । उप–सामीप्येन सर्जनम्, उपसृज्यतेऽनेनेति वा करणसाधन, उपसृज्यतेऽसाविति वा कर्मसाधन । आव० ४०४ । प्रव्रज्याग्रहणे निवारणम् । पिण्ड० १३९ । देवादिकृतोपद्रवा । ठाणा० ५२३ । राजस्वजनादिकृतो देवमनुष्यतिर्यक्कृतो वा । पिण्ड० १७० । उप–सामीप्येन सृज्यते तिर्यग्मनुष्यामरैः कर्मवशगेनात्मना क्रियत इति उपसर्ग । उत्त० १०९ । उपसर्ग –उपसर्जनं, धर्मभ्रशनम् । दिव्याद्य । भग० १०१ ।

उवसग्गपरिण्णा – उपसर्गपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे तृतीयमध्ययनम् । आव० ६५१ । उत्त० ६१४ ।

उवसग्गपरिन्ना-सूत्रकृताङ्गे तृतीयमध्ययनम् । सम० ३१ ।

उवसग्गसहो-उपसर्गसह । आव० ६४८ ।

उवसत्तो-उपसक्त –गाढमासक्त । उत्त० ६३२ ।

उवसमंति – उपशाम्यन्ति – सवर्त्तकवायुविकुर्वणान्निवर्तन्ते, सवर्तकवातविकुर्वणमुपसहरन्तीति भाव । राज० ७३ ।

उवसम-उपशममिति औपशमिकम् । विपाकोदयविष्कम्भणलक्षण । दश० ४३ । उपशम –विपाकोदयविष्कम्भणलक्षण । नदी ७७ । क्रोधाद्युदयाभावे भवति । आचा० १५० । शान्तिरूप । दश० २३४ । पञ्चदशदिवसनाम । जं० प्र० ४९० । सूर्य० १४७ । क्षायोपशमिक । सूत्र० ६ । विंशति तमो मुहूर्तनाम । जं० प्र० ४९१ । मध्यस्थपरिणाम । आव० ८५१ । उदीर्णस्य क्षय अनुदीर्णस्य च विपाकत प्रदेशतश्चाननुभवनम् । सर्वथैव विष्कम्भितोदयत्वमित्यर्थ । भग० ५९ । खमा । दश० चू० १२४ । उदयनिरोधोदयप्राप्ताफलीकरणम् । दश० २३४ ।

उवसमणा – उपशमना – उदयोदीरणानिधत्तनिकाचनाकरणानामयोग्यत्वेन कर्मणोऽवस्थापनम् । ठाणा० २२१ ।

उवसमविवेयसंवरं – उपशमविवेकसवरम्, चिलातस्य प-देश । आव० ३७१ ।

उवसमिए-उपशम –उदीर्णस्य कर्मण क्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्व स एवौपशमिक –क्रियामात्र, उपशमेन वा

निर्वृत्त औपशमिक –सम्यग्दर्शनादि । भग० ६४९ । औपशमिक – उपशमनमुपशम –कर्मणोऽनुदयाक्षीणावस्था भस्मपटलावच्छन्नाग्निवत् स एव, तेन वा निर्वृत्त । अनु० ११४ ।

उवसामिअ – उपशमित – भस्मछन्नाग्निकल्पता प्रापितम् । आव० ७९ ।

उवसामेमाण–क्षुद्रव्यन्तराधिष्ठितं समयप्रसिद्धविधिनोपशमयन्त इति । ठाणा० ३५३

उवसाहिज्जउत्ति–पच्यताम् । नि० चू० प्र० ३४९आ ।

उवसित–उपाश्रित –अङ्गीकृत । वैयावृत्त्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतर । द्वेष । शिष्यप्रतीच्छककुलायपेक्षा । भग० ३८५ ।

उवस्सए–उपाश्रय । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सओ–उपाश्रय –वसति । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सग–उपाश्रय –वसति । ओघ० १७३ ।

उवस्सगा–उपाश्रया । बृ० द्वि० १८३अ ।

उवस्सते–उपाश्रय –निलय । प्रश्न० १२८ ।

उवस्सय – उपाश्रय – वसति । ओघ० ६५, १७३ । दश० २१८ । ज० प्र० १२१ । उपाश्रय –गृहपतिगृहादिकम् । ठाणा० ३१५ । वसतेर्वृत्तिपरिक्षिप्त, परेषामनालोकवत इत्यर्थः । ज्ञाता० २०५ । उपाश्रया –उपाश्रीयन्ते–भज्यन्ते शीतादित्राणार्थं ये ते उपाश्रया –वसतय । ठाणा० १५७ । पडिस्सयो । सव्वग वा आसण । दश० चू० १११ ।

उवस्सयसंकिलेसे–द्वितीय सक्लेश । उपाश्रयो–वसतिस्तद्विषय सङ्क्लेश –असमाधि उपाश्रयसङ्क्लेश । ठाणा० ४८९ ।

उवस्सित–उपाश्रित –द्वेप । शिष्यकुलायपेक्षा । ठाणा० ४४१ । द्वेष , शिष्यप्रतीच्छककुलायपेक्षा । ठाणा० ३१९ ।

उवहडे – उपहृत – भोजनस्थाने ढौकितं भक्तमिति भाव । ठाणा० १४८ ।

उवहतो–अविसुद्धो । नि० चू० द्वि० ११६अ ।

उवहय–उपहति । उत्त० १४५ । सदोस । नि० चू० तृ० ८१आ ।

उवहयपरिणामो–उपहतपरिणाम । आव० ५१३ ।

उवहरइ–उपहरति–विनाशयति । ज्ञाता० १९२ ।

उवहाणं–उपधान–तप । सूत्र० ६५, ६९, ७५ । तपश्चरणम् । सूत्र० २५१ । अनशनादिक तप । सूत्र० ५८ । आगमोपचाररूपमाचाम्लादि । उत्त० १२८ । गुणोपष्टम्भकारि । प्रश्न० १५७ । उच्छीर्षकम् । बृ० द्वि० २२०अ । उपधान–करणम् । व्य० प्र० ५०आ । स्थगनम् । व्य० द्वि० ५आ । प्रायश्चित्तम् । व्य० द्वि० १९५अ । विहितशास्त्रोपचार । उत्त० ६५६ । तप । ठाणा० ४४५ । उपधान–तप । सम० ५७ । ठाणा० ६५, १९५ । उपधीयते–उपष्टभ्यते श्रुतमनेनेति उपधानं–श्रुतविषयस्तपउपचार । ठाणा० १८१ । विधानम् । सम० १२७ । उपदधातीत्युपधान–उपकरोतीत्यर्थ । ओघ० ११३ । अङ्गानङ्गाध्ययनादौ यथायोगमाचाम्लादितपोविशेष । उत्त० ३४७ ।

उवहाणग – पूयादिपुन्न सिरोवहाणं । नि० चू० द्वि० ६१अ । उपधानम् । ठाणा० २३४ । उपधानक–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके द्वितीयो भेद । आव० ६५२ ।

उवहाणपडिमा–उपधानं–तपस्तत्प्रतिमोपधानप्रतिमा, द्वादश भिक्षुप्रतिमा एकादशोपासकप्रतिमाश्चेत्येवरूपा । ठाणा० ६५ । सम० ९६ ।

उवहाणवीरिए–उपधानं–तपस्तत्र वीर्यं यस्य स उपधानवीर्य –तपस्यनिगूहितबलवीर्य । सूत्र० ६५ ।

उवहाणसुयं – उपधानश्रुतं – आचाराङ्गस्याष्टममध्ययनम् । उत्त० ६१६ । सम० ४४ । उपधानश्रुतं, आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्याष्टममध्ययनम् । आव० ६६० । प्रश्न० १४५ ।

उवहारं–उपहार । आव० १९० । वलि । आव० ६९८ ।

उवहारा–बलिमादिया । नि० चू० प्र० २६९अ ।

उवहारियं–अवधारित–निर्णीतम् । आव० ६३५ ।

उवहि–उपदधातीति उपधि –उप – सामीप्येन सयम धारयति पोषयति चेत्यर्थ । स च पात्रादिरूप । ओघ० १२ । उपकरणम् । उत्त० ५८८ । वर्षाकल्पादि । उत्त० ३५८ । उपकरणमाभरणादिद्रव्यतो, भावतस्तु छद्मादि येनात्मा नरक उपधीयते । उत्त० ४६३ । उपधिः–संस्तारकादि । ओघ० ८० । रजोहरणादि । ठाणा० ३१७ । उपधीयते–सङ्गृह्यत इति उपधि । आचा० १८० । आगमोक्त वस्त्रादि । दश० १९९ । पात्रनियोगादि । व्य० प्र० २३७अ । उपधि –वस्त्रादि । प्रश्न० १२४ । उपधीयते–ढौक्यते दुर्गति प्रत्यात्मा येनासावुपधि –माया, अष्ट-

प्रकार वा कर्म । सूत्र० ६८ । उपकरणम् । आव० ५६८ । प्रज्ञा० २९१ । प्रश्न० ३९ । उपदधातीति उपधि । ओघ० २०७ । माया । प्रश्न० ७८ । औधिक । प्रश्न० १५६ । माया । सूत्र० १०३ । उपदधातीति उपधि –उप–सामीप्येन सयम धारयति पोषयति चेति पात्रादिरूप । ओघ० १२ । आव० ६६१ । उपधीयते येनासावुपधि – वञ्चनीयसमीपगमनहेतुर्भाव । भग० ५७२ । उपधि –उपकरणम् । पिण्ड० १२ । कषाय । दश० ७६ । उवकरणं । नि० चू०प्र० ६४ आ ।

उवहिअसुद्धं–उपधिना–मायया अशुद्धं–सावद्यं उपध्यशुद्ध, अधर्मद्वारस्यैकोनत्रिंशत्तमं नाम । प्रश्न० २६ ।

उवहिए–उपधिक –मायित्वेन प्रच्छन्नचारी । ज्ञाता० ८१ । उपहित –प्रक्षिप्त –प्राप्त । भग० १०० । उपहितानि–गुरोराहाराद्यर्थं ढौकितानि । विशे० ४४० ।

उवहिओ–अधिकज्ञानाद्यर्थक सन् गुरुषु बहुमानपर । व्य० प्र० २३६अ ।

उवहिय–उपहित –क्षिप्त । विशे० ९४३ । औपधिक –मायाचारी । प्रश्न० ३० ।

उवहिसंकिलेसे–प्रथमसङ्क्लेशः । उपधीयते – उपष्टभ्यते सयम सयमशरीर वा येन स उपधि –वस्त्रादिस्तद्विषय सङ्क्लेश –असमाधि । ठाणा० ४८९ ।

उवहिसंभोग–उपधे सभोग उपधिसभोग । व्य० द्वि० ११९ आ ।

उवही–उवधि –परवंचनाभिप्राय । बृ० तृ० ४६ आ । नि० चू० प्र० २८९ आ ।

उवाइ–उत्लावकप्रधाना विद्या । विशे० ९८२ ।

उवाइक्कम्म–उपातिक्रम्य–सम्यक् परिहृत्य । आचा० ३५६ ।

उवाइणावित्तए – उपानाययितु, सप्रापयितुम् । बृ० तृ० ११४ आ । उपादापयितुं ग्राहयितुमित्यर्थ । ज्ञाता० १७७ ।

उवाइणावित्ता–उपादापय्य–प्रापय्य । भग० २९२ ।

उवाइणित्ता–उपनीय–अतिवाह्य । आचा० ३६५ ।

उवाइति–उपयाचते । आव० ४०४ ।

उवाईय–उपादित–उपभुक्तम् । आचा० १०८ ।

उवाईयसेसेण–उपादित–उपभुक्तम् , तस्य शेषमुपभुक्तशेषम् । आचा० १०८ ।

उवाए–उपाय.–अप्रतिहतलाभकारणम् । ज्ञाता० ३४ ।

उवाओ–अवपात । गर्त्त । आचा० ३३८ । उपाय । आव० ४१४ ।

उवागच्छति–पविसति । नि० चू० प्र० २३० अ ।

उवागच्छिज्जा–उपागच्छेयु –अतिथयो भवेयु । आचा० ४०३ ।

उवागमण–उपागमन–स्थानम् । आचा० ३७५ ।

उवात–अवपात । सेवा । ठाणा० १२९, ५१६ । ज्ञाता० ४ ।

उवातिणा–नयति । नि० चू० द्वि० २२ आ ।

उवातियं । नि० चू० द्वि० १४४ अ ।

उवातिया–उपयाचितम् । नि० चू० प्र० ३५१ आ ।

उवाते–उपाय –उपेय प्रति पुरुषव्यापारादिका साधनसामग्री स यत्र द्रव्यादावुपेये अस्तीत्यभिधीयते यथैतेषु द्रव्यादिविशेषेषु साधनीयेष्वस्त्युपाय , उपादेयता वाऽस्य यत्राभिधीयते तदाहरणमुपाय । आहरणस्य द्वितीयो भेद । ठाणा० २५३ ।

उवातो–आणानिद्देसो । दश० चू० १३९ ।

उवादानं–उपादान–आय., हेतु । विशे० ५४३ ।

उवादिणावेत्ता–उपादाय–गृहीत्वा, आक्रम्य । सूत्र० २३४ ।

उवादीयमाणा–उपादीयन्ते–कर्मणा बध्यन्ते । आचा० ७८ ।

उवाय–खड्ड । दश० चू० ५४ । उपाय –उदाहरणस्य द्वितीयो भेद । ३५ । एकान्तमृदुभणनादिलक्षण । दश० २४७ । उप–सामीप्येन (आय) विवक्षितवस्तुनोऽविकललाभहेतुत्वाद्वस्तुनो लाभ एवोपाय –अभिलषितवस्त्ववाप्तये व्यापारविशेष । दश० ४० । उपार्जनहेतु । उत्त० ६३१ ।

उवायकारी–उपायकारी–सूत्रोपदेशप्रवर्त्तक । सूत्र० २३४ ।

उवायकिरिया–उपायक्रिया–यद्द्रव्यं येनोपायेन क्रियते सा । सूत्र० ३०४ ।

उवायणं–अवपातयतो-प्रशतोऽकुर्वत. । व्य० प्र० २९अ ।

उवायवं–अवपातवान्–वन्दनशील , निकटवर्त्ती वा । दश० २५३ ।

उवारियालेणे – चमरचञ्चावलीचञ्चाभिधानराजधान्योर्मध्यभागे तद्भवनयोर्मध्योन्नताऽवतरत्पार्श्वपीठरूपे अवतारिकलयने । सम० ३१ ।

उवालंभ–उपालम्भन उपालम्भो–भङ्ग्यन्तरेणानुशासनमेव स यत्राभिधीयते स । आहरणतद्देशे द्वितीयो भेद । ठाणा० २५३ । उपालम्भ –इयमेवानौचित्यप्रवृत्तिप्रतिपादनगर्भा । ठाणा० १५५ । सपिपासशिक्षारूप उपालम्भ । बृ० प्र० १५०आ । सानुनयोपदेशप्रदानम् । व्य० प्र० ११७ अ ।

उपालम्भ । उपालम्भ –भंग्यैव विचित्र भणनम् । दश० ४६ ।

उवालियइ–उपलीयते । आचा० ३६५ ।

उवासंतर–अवकाशान्तर–आकाशविशेष, अवकाशरूपान्तराल वा । भग० ७७ ।

उवासंतराति । ठाणा० ८६ ।

उवासंतरे–द्वयोरन्तरमवकाशान्तरम् । भग० २७२ । ठाणा० ४३२ ।

उवासग–उपासक –श्रावक । आव० ६४६ । नि० चू० द्वि० २५अ । सम० ११९ । साधू चेइए वा पोसहं उवासतो उवासगो भवति । नि० चू० द्वि० १२९आ । उपासते-सेवन्ते यतीनित्युपासका –श्रावका । उत्त० ६१३ ।

उवासगदसा–उपासकाना-श्रमणोपासकाना सम्बन्धिनोऽनुष्ठानस्य प्रतिपादिका दशा –दशाध्ययनरूपा उपासकदशा. । उपा० १ । दश० ४७ ।

उवासणा–उपासना–नापितकर्म । आव० १२९ ।

उवासमाणा–रात्रिजागरणात्तदुपासनां विदधाना. । ठाणा० ३५३ ।

उवासय–उपासक । दश० ४७ ।

उवाहणं–उपानत् । आव० ३०५, ३४१ ।

उवाही–उपाधीयते –व्यपदिश्यते येनेत्युपाधि –विशेषण स उपाधि । आचा० १५६ ।

उविच्च–उपेत्य स्वप्रवृत्त्या । उत्त० ३९१ ।

उविद्धो–अववद्ध । आव० ३५१ ।

उविय–परिकर्मितम् । ज्ञाता० २३ ।

उवीलगो–आलोयग गूहत तो महुरादिवयणपओगेहिं तहा भणइ जहा सम्म आलोएति सो उवीलगो । नि० चू० तृ० १२८आ ।

उवीलणं–निश्चयम् । नि० चू० प्र० १४२अ । अवपीडना, बन्धनविशेष । ज्ञाता० २३२ ।

उवीलेमाणे–अवपीलयन–बाधयन । विपा० ३९ ।

उवेक्खेज्जा–उपेक्षेत–अवधीरयेत् । उत्त० ११२ ।

उवेक्खेयव्वो–उपेक्षितव्य । आव० ६४१ ।

उवेच्च–उपेत्य, आकुट्टिकया । बृ० द्वि० १३९आ ।

उवेहमाण–उपेक्षमाण –अकुर्व । आचा० १५६ । परीषहोपसर्गान् महमान इष्टानिष्टविषयेषु वोपेक्षमाणो माध्यस्थ्यमवलम्बमान । आचा० ४३० । उत्प्रेक्षमाणः–अवगच्छन् आचा० २१२ । पर्यालोचयन् । आचा० २२४ ।

उवेहा–उपेक्षा– उप – सामीप्येनेक्षा, अवधीरणायां वर्त्तते ओघ० ११४ ।

उवेहे–उपेक्षेत–औदासीन्येन पश्येत् । उत्त० ९१ ।

उवट्टंतो–अवपतन् । आव० २०३ ।

उव्वट्टइ–उद्वर्त्तयति–म्रक्षिततैलापनयनं करोति । जं० प्र० ३९४ ।

उव्वट्टण–उद्वर्त्तनं–तत्प्रथमतया वामपार्श्वेन सुप्तस्य दक्षिणपार्श्वेन वर्तनम् । आव० ५७४ । अपवर्त्तना । विशे० १००६ । उद्वर्त्तना–नारकतिर्यगेकेन्द्रियेभ्यो निर्गम । आव० ५३३ । उद्वर्त्तनं–लोठनम् । पिण्ड० १६४ । पङ्कापनयनलक्षणम् । दश० ११७ ।

उव्वट्टणट्ठ–उद्वर्त्तनार्थं–उद्वर्त्तननिमित्तम् । दश० २०६ ।

उवट्टयं–उद्वर्त्तक–चूर्णपिण्डम् । जं० प्र० ३९४ ।

उव्वट्टा–उद्वृत्ता । प्रज्ञा० ३९७ ।

उव्वट्टिताणि–उद्वर्त्तितानि । आव० ९८ ।

उव्वट्टिया–उद्वर्त्तिता–च्याविता । पिण्ड० १२३ ।

उव्वट्टति–एक्कसिं उव्वट्टति । नि० चू० प्र० ११६आ ।

उव्वट्टो–उद्वृत्त । आव० १७३ ।

उव्वणवेसो–उल्वणवेष । ओघ० १४६ ।

उव्वण्णो–उत्कठितः । व्य० द्वि २०३आ ।

उव्वत्ततो–उद्वर्तयन । आव० ३१३ । ओघ० ८४ ।

उव्वत्तणं–उद्वर्तनम्–मार्गपरावर्त्तनं । बृ० तृ० १२९आ । उत्ताणयस्स पासल्लियकरण । नि० चू० प्र० २११अ । उद्वर्तते–यतो व्रजस्ततो याति । ओघ० ४७ ।

उव्वत्तणा–परावत्तणाकुंचणपसारणा कायव्वा । नि० चू० प्र० ६०अ ।

उव्वत्तमाणे–अपवर्तयन् । आचा० ३४३ ।

उव्वत्ता–ज पाडिहारियणिद्दिज्जं तं । नि० चू० प्र० २२५आ ।

उव्वत्तिया–तेणेव अगणिनिक्खित्त ओयत्तेऊण एगपासेन देति । दश० चू० ८० ।

उव्वत्तेहि–उद्वर्त्तय । आव० ३५८ ।

उव्वरं–अतिप्रशस्यम् । व्य० द्वि० ४२१आ ।

उव्वरए । बृ० द्वि० ६२अ ।

उव्वरग–अपवरकम् । आव० ६२२ । नि०चू०प्र० १७४अ ।

उव्वरति-उद्धरति। आव० ८५९ ।
उव्वरयं-अपवरकम् । आव० ५६१ ।
उव्वरिअ-उदवरितं । गदधिक जातम् । ओघ० १८८ । अतिरिक्तम् । ओघ० १८६ ।
उव्वरियं-उद्धरितम् । पिण्ड ७९ । अशनादे शेषभाग । आव० ८५९ ।
उव्वरो-उद्वर -घर्मोपताप । बृ० द्वि० २९३अ ।
उव्वलणं-उद्वलनं, अभ्यङ्गनम् । बृ० द्वि० २११अ ।
उव्वलणेहि-उद्वेलनालि-देहोपलेपनविशेषाः । ज्ञाता० १८३ ।
उव्वसिए-उद्वमित'-उत्थित । ओघ० ४९ ।
उव्वसिय-उद्वस्य (उद्रुष्य) । आव० ७१ ।
उव्वाओ-श्रान्त । नि० चू० प्र० १६०अ ।
उव्वाण- उद्वानं-किञ्चित्सरिनग्ध । ओघ० १७१ ।
उव्वाता-परिश्रान्त । बृ०द्वि० ८०आ । व्य०द्वि० १५७अ ।
उव्वाया-उद्वाताः-अतीवपरिश्रान्ता । बृ०प्र० २४३आ । परिश्रान्ताः । व्य० द्वि० २०२आ ।
उव्वालना-उद्वालना, निष्काशना । बृ० द्वि० २५०अ ।
उव्वासिअ-उद्वामित -शोषित' । ओघ० १७४ ।
उव्वासेइ-उपहसति । आव० ६६९ ।
उव्विग्ग-उद्विग्न-खिन्नम् । भग० १६६ । सजातमय । विपा० ४३ । उद्विग्ना -अथ पुनर्नानेन सार्द्धं युद्धयामहे इत्यपुन करणाशयवन्त । जं० प्र० २३९ । उद्वेगवान् । प्रश्न० ५२ ।
उव्विद्ध-उद्विद्धं-ऊद्‌र्ध्वम् । औप० ३ । उद्विद्धं-उण्डम् । ज्ञाता० २ । ऊर्ध्वगत । ज० प्र० १६४ । उच्चा । आव० १८४ । उन्मिता , उच्चैस्त्वेन वा । अनु० १५८ । उद्विद्ध -अत्यर्थमुच्च । औप० ९ । उच्च । राज० ५ ।
उव्विहंताइं-उत्पतन्ति । ज्ञाता० २३२ ।
उव्विहइ-ऊर्ध्वं विजहाति, ऊर्ध्वं क्षिपति । भग० २३० । उद्विजहाति-ऊद्‌र्ध्वं क्षिपति । ज्ञाता० १६८ ।
उव्विहति-उप्पाडेति । नि० चू० प्र० २५६आ ।
उव्विहामि-नयामि । ज्ञाता० १३९ ।
उव्विहिय-उद्वूह्य-उत्प्रेर्य । भग० ६२८ ।
उव्वीलए-अपव्रीडक -लज्जापनोदको यथा पर मुखमालोचयतीति । ठाणा० ४८६ ।
उव्वीलणं-अपकर्णनम् । उप० मा० गा० ७७ ।
उव्वीहामि-उच्चेष्यामि । नि चू० प्र० २०१अ ।
उव्वेयग-उद्वेगक -इष्टवियोगादिजन्य उद्वेग , उद्वेजको वा लोकोद्वेगकारी चौरादिर्वा । भग० ११८ ।
उव्वेयण-उद्वेजनं-चलनम् । भग० ४७१ ।
उव्वेयणओ-उद्वेजनक -चित्तविप्लवकारी, उद्वेगकर । प्रश्न० ५ ।
उव्वेयणयं-उद्वेगकृत् । महाप्र० ।
उव्वेला-उद्वेला । आव० ५१४ ।
उव्वेलियं-उद्वेलितं, उत्सारितम् । बृ० द्वि० २५५आ ।
उव्वेलेंति-उद्वेलयन्ति । आव० १८९ ।
उव्वेलेउं-उद्वेलयितुं, उद्वेष्टयितुम् । बृ० द्वि० २५७अ ।
उव्वेह-उद्वेध । अनु० १७१ । जीवा० ३२२ । उण्डत्वम् । ३२५, ३४३, २२७ । राज० ९१ । ज० प्र० २८४ । सम० ९७ । ठाणा० ५२५ । बाहल्यम् । ज० प्र० ३२७ । भुवि प्रवेश । ठाणा० ६९ । भूगतत्वम् । ज० प्र० २८२ । भूमाववगाह । ठाणा० ४७९ । भूमिप्रवेश । जं० प्र० ७२ ।
उव्वेहलिया-वनस्पतिविशेष । भग० ८०४ ।
उष्णः-स्पर्शस्याष्टमो भेद । प्रज्ञा० ४७३ ।
उष्णरूपा-योनिभेद । आचा० २४ ।
उस-अवश्याय । विशे० १०२९ ।
उसक्कण-रंधियपुव्वस्स उसक्कणं करेज । नि०चू०प्र०१४२आ ।
उसक्काविउ-उत्ष्वष्क्य, अथ प्राप्य । आव० ६२१ ।
उसक्को-उत्कण्ठुल । नि० चू० तृ० ३६अ ।
उसगार-मत्स्यविशेष । प्रज्ञा० ४८ ।
उसडा-उत्सृता-उच्चा । ज० प्र० ४८ ।
उसण-उष्ण -प्रतिकूल । ठाणा० ४४८ ।
उसण्णं -लोअगपरिभोग उसण्ण भण्णइ । नि० चू० द्वि० १५९अ ।
उसण्हसण्हिआओ-अतिशयेन प्राबल्येन च श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उश्लक्ष्णश्लक्ष्णिका । अनु० १६३ ।
उसभ-ऋषभ , पञ्चदश कुलकरनाम । ज० प्र० १३२ । भरतचक्रिपिता । आव० १६२ । सम० १५२ । वृषभ -भूषणविधिविशेष । जीवा० २६९ । ब्रह्मदत्तपत्न्या शिलाया पिता । उत्त० ३७९ । समग्रसंयमभारोद्वहनात् वृषभ । आदिजिन । आव० ५०२ । सम्प्रदायगम्य द्रविडवंग-

जं० प्र० १०७ । पट्ट. । सम० १४९ । परिवेष्टनपट्ट । ठाणा० ३५७ । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभकण्ठो-वृषभकण्ठ -वृषभकण्ठप्रमाणो रत्नविशेष । जीवा० २३४ ।

उसभकूड-ऋषभकूट, जम्बूद्वीपे उत्तरार्द्धभरते पर्वत । जं० प्र० ८७ । आव० १५१ ।

उसभज्झया-वृषभध्वजाः-वृषभचिह्नोपेता ध्वजा । जीवा० २१५ ।

उसभनाराय-ऋषभनाराच-यत्पुन. कीलिकारहितं संहननं तत् । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभदत्त-नामविशेषः। भग० ६२०, ५३३, ५४९, ५५६, ५५७। आचा० ४२९ । नवमशते त्रयस्त्रिंशत्तमोद्देशकेऽभिहित । भग० ४७५ । ऋषभदत्त -इषुकारनगरे गाथापति. । विपा० ९५ । जम्बूस्वामिन पिता । नि०चू०द्वि० २९आ।

उसभपुरं-ऋषभपुरं, द्वितीयनिह्नवोत्पत्तिस्थानम् । विशे० ९३४ । धनावहराजधानी । विपा० ९४ । राजगृहस्यापरनाम । आव० ३१५ । नगरविशेषः । उत्त० १०४ । राजगृहम् । ठाणा० ४१४ । जीवप्रदेशप्ररूपकनिह्नवोत्पत्तिस्थानम् । आव० ३१२ ।

उसभसिरि-श्रीऋषभः । मम० १०६ ।

उसभसेण-मुनिसुव्रतजिनस्य भिक्षादाता । मम० १५१ । ऋषभस्वामिन प्रथमगणधर । मम० १५२ । बृ० प्र० २५४अ । ऋषभसेन -भरतपुत्र । आव० १४९ ।

उसभा-ऋषभा-शाश्वतप्रथमप्रतिमानाम । जीवा० २२८ ।

उसवियं-उवसामियं । नि० चू० प्र० २९४अ ।

उसह-ऋषभ, संयमभारोद्वहनादृषभ इव ऋषभ, वृषभो वा इति संस्कार, तत्र वृषभ इव वृषभ इति वा, वर्षेण मातीति वा वृषभ । जं० प्र० १३५ ।

उसहकूडप्पभाइं-ऋषभकूटप्रभाणि, ऋषभकूटाकाराणि । जं० प्र० ८८ ।

उसहकूडे-ऋषभकूट । जं० प्र० २५० ।

उसहच्छाया-वृषभच्छाया-छायाया सप्तमो भेद । प्रज्ञा० २२७।

उसहपुरं-ऋषभपुर-नगरविशेष । उत्त० १०५ ।

उसा-नेहो । नि० चू० द्वि० ८३अ ।

चू० द्वि० ११८आ । निदाघादिताप
उष्ण -घर्म । ठाणा० २८७। आह
अनुगत । अनु० ११०।उष्णो मार्दव
उष्ण -अप्रासुकम् । दश० २०६ ।

उसिणपरितावे-उष्णपरिताप-उष्ण
लादि तेन परिताप । उत्त० ८९

उसिणब्भूए-अस्वाभाविकमौष्ण्य प्रा

उसिणोदए-उष्णोदकं-स्वभावत एव
परिणामम् । बादराप्कायभेदः । प्रज्ञा

उसिणोदगं-उष्णोदकं-क्वथितोदकम्
वृत्तत्रिदण्डम् । पिण्ड० १७ ।

उसिणोदगवियडेण-उष्णोदकविकटे
नात्रिदण्डोद्वृत्तेन पश्चाद्वा सचित्तीभूते

उसिय-उत्सृतानि-लम्बमानानि । रा

उसीर-उशीर-वीरणीमूलम् । ज्ञाता०
राज० ३४ । मूलविशेष । जीवा०
मूलम् । प्रश्न० १६२ ।

उसीसट्ठवणं-सीमस्स समीवं उवमीसं
उसीस ट्ठवणं-णिक्खेवो । नि० चू०

उसु-इषु -बाण । भग० ९३, २३
दाय. । भग० २३० ।

उसुअ-इषुक -इषुकाकारमाभरणं, तिल

उसुआर-इषुकार -राजपुत्रविशेष ।

उसुआरपुरं-इषुकारपुरं-नगरविशेष

उसुकारिज्जं-इषुकारीयं-उत्तराध्ययने
उत्त० ३९३ ।

उसुकाल-उक्खलं, उदूखल । नि०

उसुगारपव्वय-पर्वतविशेष । ठाणा

उसुत्तियल्लयं-जेण वा कट्ठाइ सचाले
यल्लयं । नि० चू० प्र० ११६आ ।

उसुद्धसरीरो-मलपक्कियसरीरो उसुद्ध
चू० द्वि० ६५अ ।

उसुमट्टिता-कुट्टिया पुणो मट्टियाए
नि० चू० तृ० ६४अ ।

उसुयार-इषुकार -नगरविशेष., ऋषभ

उसुयारपुरं–इपुकारपुर, कुरुजनपदे नगरं, इपुकारराजधानी। उत्त० ३९५।

उसुयारिज्जं–उत्तराध्ययने चतुर्दशमध्ययनम्। सम० ६४।

उसू–इषु'–शर। सिद्धिगमने दृष्टान्त। आव० ४४२। तिलगो। नि० चू० द्वि० ९५अ।

उसूयालं–उदूखलम्। आचा० ३९७।

उसे–ऊष'–पांशुक्षार। दश० १७०।

उस्सओ–उच्छ्रय भावोन्नतत्वम्। अहिंमाया. पञ्चचत्वारिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

उस्सक्कइ–उत्ष्वष्कते–तदाकारभावमात्रधारणतस्तत्प्रतिविम्बमात्रधारणतो वोत्सर्पतीत्यर्थ, कृष्णलेश्यातो हि नीललेश्या विशुद्धा ततस्तदाकारभावं तत्प्रतिबिम्बमात्र वा दधाना मती मनाक् विशुद्धा भवतीत्युत्सर्प्पतीति। प्रज्ञा० ३७२।

उस्सक्कण–उत्ष्वष्कणं–परत करणम्। पिण्ड० ९१।

उस्सग्गनिवाइयाण–उत्सर्गपातिनामुत्सर्गेण संयममनुपालेयता यासाम्। व्य० द्वि० ४२९अ।

उस्सग्गो–उत्सर्ग'–उपयोग। ओघ० १५५। परिष्ठापनम्। ओघ० १३८। कायोत्सर्ग। आव० ७८२। उवओगं, काउस्सग्गो। नि० चू० द्वि० १६४अ। पइण्णकहा। नि० चू० प्र० २४०अ। कारणनिरपेक्षं मामान्यस्वरूपम्। बृ० तृ० ९७आ।

उस्सण्णं–लोअगपरिभोग उस्सण्णं भण्णइ। नि० चू० द्वि० १५९अ। उस्सण्णं एकान्तेनैव अलक्षणयुक्ता बोंदि सरीरमित्यर्थ। नि० चू० द्वि० ८५आ। उत्सन्नं–बाहुल्यत। औप० ८६। उत्सन्नं–अनुपरतम्। आव० ५९०।

उस्सण्णदोस–उत्सन्नदोष –अनुपरत बाहल्येन प्रवर्त्तते इति। आव० ५९०।

उस्सण्णपए–उत्सन्नपदे–प्रभूतपदे। व्य० प्र० ९३अ।

उस्सण्णा–अवसन्नाः–पङ्क इव निमग्नाः। प्रश्न० ६९।

उस्सण्णो–बहुतरगुणावराही। नि० चू० द्वि० ९०आ।

उस्सण्हसण्हिआ–उत्तरप्रमाणापेक्षया उत्–प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उच्छ्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। ज० प्र० ९४।

उस्सण्हसण्हिया – व्यावहारिकपरमाणुपुद्गलाना समुदाया'–द्व्यादिसमुदायास्तेषां समितयो–मीलनानि तासा समागम –परिणामवशादेकीभवनं समुदयसमितिसमागमस्तेन या परिणाममात्रेति गम्यते, सा एकाऽत्यन्तं श्लक्ष्णा श्लक्ष्णश्लक्ष्णा सैव श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्–प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। भग० २७५।

उस्सन्नं–प्रायश। आव० ५६८। अविरुद्धं। नि० चू० द्वि० ७०अ।

उस्सन्नकयाहारो–प्रायशोऽकृताहार-। आव० ५६८।

उस्सप्पिअ–उत्सर्प्पिता वर्त्स्युत्सर्पणेन। जं० प्र० १०२।

उस्सप्पिणी–सागरोपमाणा दशकोटीकोट्य एव दुष्षमदुष्षमारकक्रमेणैकोत्सर्प्पिणी। जीवा० ३४५। उत्सर्पति–वर्धते आरकापेक्षया वर्धयति (वा) क्रमेणायुरादीन् भावानित्युत्सर्पिणी। जं० प्र० ८९। उत्सर्प्पिणी–दशसागरोपमकोटाकोटिमाना। अनु० १००। ठाणा० ८६। उत्सर्प्पति–वर्द्धतेऽरकापेक्षया उत्सर्प्पयति वा भावानायुष्कादीन् वर्द्धयतीति। ठाणा० २७।

उस्सय–यस्मिंश्च सत्यूर्ध्वं श्रयति जात्यादिना दर्पाध्मातः पुरुष उत्तानीभवति स उच्छ्राय'–मान। सूत्र० १८०।

उस्सरति–उत्सर्पति। आव० ३०३।

उस्सवित्ता–उद्धहुत्ताणि काऊण। दश० चू० ८०।

उस्सविया – सस्थाप्योच्चावच्चैर्विश्रम्भजनकैरालापैर्विश्रम्भे पातयित्वा। सूत्र० १०६।

उस्सा–अवश्याय –स्नेह। अप्कायभेद। प्रज्ञा० २८। रजन्या यत्स्नेह पतति। आचा० ४०।

उस्साग–यन्निर्विशेषण क्रियते। उप० मा० गा० ४००।

उस्साबिन्दूथिवुगो–अवश्यायबिन्दु। आव० ८४५।

उस्सारिता–उत्सारिता–समीपमागता। आव० ८४१।

उस्सासनाम–उच्छ्वासनाम–यदुदयवशादात्मन उच्छ्वासनि श्वासलब्धिरुपजायते तत्। उच्छ्वासनि श्वासयोग्यपुद्गलग्रहणमोक्षविषया लब्धिरुपजायते तत्। प्रज्ञा० ४७३।

उस्सासविसा–उच्छ्वासे विषं येषा ते उच्छ्वासविषा। प्रज्ञा० ४६।

उस्सासा–उच्छ्वास –मुखादिना वायुग्रहणम्। भग० ४७०।

उस्सासो–उच्छ्वास। आव० ८४५।

उस्साहे–उत्साह –श्रवणविषये मनस उत्कलिकाविशेष। सूर्य० २९६।

उस्सिंघइ–उज्जिघ्रति, जिघ्रति। आव० ६७४।

उस्सिंघणा–उद्घ्राणम्। आव० ४२४।

उस्सिंचण–उदूर्ध्वं सेचन उत्सेचनं–कूपादे कोशादिनोत्क्षेपणम्। आचा० ४२। दृतौ वातस्य प्राबल्येन पूरणम्। आचा०

७४, ३७९ ।

उस्सिंचणाए–उत्सेचनेन–अरघट्टघट्टीनिवहादिभिरुदञ्चनेन । उत्त० ५९९ ।

उस्सिंचमाणे–उत्सिञ्चन–आक्षिपन् । आचा० ३४३ ।

उस्सिंचिया–उत्सिच्य–अतिभृतादुज्झनभयेन ततो वा दानार्थं तीमनादीनि दद्यात् । दश० १७५ ।

उस्सिउस्सिओ–उच्छ्रितोच्छ्रित । आव० ७७९ ।

उस्सिओदए–उच्छ्रितोदक –ऊर्ध्ववृद्धिगतजल । भग० २८१ ।

उस्सिट्ठा–उत्सृष्टा–प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । प्रज्ञा०९९ ।

उस्सित्तं–उत्सिक्तं–अत्यर्थं जलाभिषेचनम् । प्रश्न० १२७ ।

उस्सिन्न–अस्विन्नम्–वह्न्युदकयोगेनानापादितविकारान्तरम् । दश० १८५ । उत्स्विन्नम्–मुण्डेरकादि । बृ० प्र० २६७ आ ।

उस्सियं–उच्छ्रतं–प्रख्यातम् । सूत्र०४०८ । उच्छ्रितं–उत्कटम् । सूर्य० २६२ । उत्सृतां, उच्छ्रित्येवोच्छ्रित्य–उत्तरोत्तरसंयमस्थानावाप्त्या तामुच्छ्रितामिव कृत्वा वा । उत्त० ३४१ । उत्सृत.–अपगत । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सियनिसन्नओ–उत्सृतनिषण्ण । आव० ७७२ ।

उस्सियपडाग–उच्छ्रितपताकम् । आव० ७०३ ।

उस्सियफलिह–उच्छ्रितं स्फटिकमिव स्फटिकं–अन्त करणं यस्य स । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सीवेत्ता–उत्सीव्य । आव० ४२१ ।

उस्सुक्क–उच्छुल्का–अविद्यमानशुल्कग्रहणम् । विपा० ६३ । उच्छुल्का–मुक्तशुल्का । भग० ५४४ । ज्ञाता० ४० ।

उस्सुगो–उत्सुकः । आव० ३०१ ।

उस्सुत्तं–सुत्तादवेतं । नि०चू०द्वि० २३आ । ऊर्ध्वं सूत्रादुत्सूत्र , सूत्रानुक्त । आव० ५७१ । आव० ७७८ ।

उस्सुय–उत्सुक । ज्ञाता० १६१ ।

उस्सूरं–अकाल । नि०चू०तृ० १२६आ । ओघ० ९८ ।

उस्सूरलंभो–उत्सूरलाभ । आव० ८४३ ।

उस्सूरीभूतं–उत्सूर्यीभूतम् । आव० ८५२ ।

उस्सूलय–खातिका परबलपातार्थमुपरिच्छादितगर्त्ता वा । उत्त० ३११ ।

उस्सेइमं–पिष्टोत्स्वेदनार्थमुदकम् । आचा० ३४६ । मरहट्ठविसए उस्सइया दीवगा मीओदगे वुज्झति, अहवा पिट्ठस्स उस्सेज्जमाणस्स हेट्ठा जं पाणियं तं । नि० चू० तृ० ६०अ ।

उस्सेतिमामं–जहा पिट्ठं पुढविकायभायण आउक्कायस्स भरेत्ता मीसए अद्दहिज्जति मुहं से वत्थेण उहाडिज्जति, ताहे पिट्ठपयणय रोट्टस्स भरेत्ता ताहे तीसे थालीए जलभरियाए उवरिं ठविज्जति ताहे अहोछिड्डेण त पि ओसिज्जति हेट्ठाहुत्तं वा ठविज्जति तत्थ जं आम तं उस्सेतिमाम भण्णति । नि० चू० द्वि० १२५अ ।

उस्सेतिमे–उत्स्वेदेन निर्वृत्तं उत्स्वेदिमं–येन व्रीह्यादिपिष्टं सुरार्थं उत्स्वेद्यते तत् । ठाणा० १४७ ।

उस्सेहंगुल–उच्छ्रयाङ्गुलं–अङ्गुलस्य द्वितीयो भेद ।प्रज्ञा०२९९। अनन्तानां सूक्ष्मपरमाणुपुद्गलानामित्यादिक्रमेणोच्छ्रयो वृद्धिनयनं तस्माज्जात तत् । उत्सेधो–नारकादिशरीराणामुच्चैस्त्वं तत्स्वरूपनिर्णयार्थमङ्गुलमुत्सेधाङ्गुलम् । अनु०१५६,१६० ।

उस्सेह–उत्सेध –उच्चत्वम् । सम० ११४ । उत्सेध –शिखरम् । जीवा० २०४, ३६० । सर्वाग्रम् । जीवा० २२५ । उच्छ्रय –शिखरम् । राज० ६२ ।

उस्सेहपरिवुड्डी–उत्सेधपरिवृद्धि –सर्वाग्रपरिवृद्धि. । जीवा० ३२३ ।

उस्सोढुं–उत्सोढ्य–असोढ्वा । व्य० प्र० १६४अ ।

उहरिय–पेढियमादिसु आरुभिउं ओआरेति, अथवा कार्यं उच्चं करेज्जा उक्कज्जियडंडायतं तद्वद् गृह्णाति, कायं उड्ढं कृत्वा गृह्णाति उण्णमिय इत्यर्थ । नि० चू० तृ० ५९ अ ।

उहसेइ–अपहसति । आव० २१९ ।

(ऊ)

ऊखा–कुम्भी । प्रश्न० १७ ।

ऊणं–ऊनम्–वर्णादिभिर्हीनम् । सूत्रदोषविशेष. । आव० ३७४ । यद् व्यञ्जनाभिलापावश्यकैरसम्पूर्णं वन्दते, कृतिकर्मणि अष्टाविंशतितमो दोष । आव० ५४४ ।

ऊणगसयभागो–ऊनशतभाग –शतभागोऽपि न पूर्यत इत्यर्थ. । आव० ५२२ ।

ऊणोअरिआ–ऊनोदरस्य भाव ऊनोदरता । दश० २७ ।

ऊणोयरिया–अवमस्य–ऊनस्योदरस्य करणमवमोदरिका । भग० ९२१ ।

ऊनं–अक्षरपदादिभिरेव हीनमूनम् । हेतुदृष्टान्ताभ्यामेव हीनमूनम् । अनु० २६१ ।

ऊयरिणिया । नि० चू० प्र० ६१ आ ।

ऊरणय–ऊरणिका । आव० ६२३ ।

एकतोवक्रद्विधातोवक्रएकतश्चक्रवालद्विधातश्चक्रवालेचक्रार्द्धचक्रवालाभिनयात्मकं -चतुर्थी नाट्यविधि । जीवा० २४६। जं० प्र० ४१५।

एकतोवक्र-एकतोवक्रं नाम नटानां एकस्या दिशि धनुराकारश्रेण्या नर्त्तनम् । जं० प्र० ४१५।

एकतोवेदिका-एक जानु वाह्वोरन्तरे कृत्वेति । ठाणा० ३६२ ।

एकत्तवियक्कं-एकत्ववितर्कम् । आव० ३२७ ।

एकत्ववितर्कमविचारं - शुक्लध्यानद्वितीयभेद । आव० ६०३ ।

एकधारं-शस्त्रविशेष । दश० २०१ ।

एकभविक-तत्र एकस्मिन् भवे तस्मिन्नेवातिक्रान्ते भावी। एकभविक -योऽन्तर एव भवे इन्द्रतयोत्पस्यत इति। ठाणा० १०३ ।

एकभावं-एकत्वम् । उत्त० ५८० ।

एकमुखं । ओघ० ९९ ।

एकल्लओ-एकाकी । आव० ३०६ ।

एकल्लशाटक-एकवस्त्रक । ओघ० ४३ ।

एकविहारप्रतिमा-पञ्चमी प्रतिमा । समः ९६ ।

एकस्थीकृतं-न एकस्थमनेकस्थं अनेकस्थमेकस्थमिव कृतमेकस्थीकृतम्। आचा० ६३ ।

एका -एका -श्रेष्ठा सज्ञाशब्दत्वान्न सर्वादित्वम् । जं० प्र० १३१ ।

एकाए-एक । व्य० द्वि० ४१७ अ ।

एका त-एक एवाहमित्यन्तो-निश्चय । उत्त० ३०७ ।

एकान्तरः-अनन्तरसमय । आव० १४ ।

एकान्तवित्-एकान्तेन विदितससारस्वभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येवं वेत्तीति । सूत्र० २६५ ।

एकायतनं - एकं-अद्वितीयं आयतन-ज्ञानादित्रयम् । आचा० २०७ ।

एकावलिः-भूषणविधिविशेष । जीवा० २६८ ।

एकावली-विचित्रमणिककृता एकसरिका । जं० प्र० १०५। विचित्रमणिका । ज्ञाता० ४३ । कनकावल्यभिलापेनेत्यर्थ । औप० ३० ।

एकाशीतिपदवास्तुन्यासः । जं० प्र० २०८ ।

एकिका-प्रश्रवणम् । आचा० ४०९ ।

एक्कई-एकीकृत्य-यौगपद्येन । ओघ० १११ ।

एक्कगमा-एकगमा -तुल्याभिलापा । ठाणा० ५८१ ।

एक्कगमे-एकगम -पड्भ्योऽप्यन्तेऽङ्क एव पाठ । अन्त० ४।

एक्कडे-पर्वगविशेष । प्रज्ञा० ३३ ।

एक्कमुहा-जेसिं एक्कओ णालाण मूहा ते एक्कतोमूहा। नि० चू० प्र० १६१ अ ।

एक्कलओ-एकाकी । आव० १९३ ।

एक्कवारिआ । ओघ० ९७ ।

एक्कसंकलितवद्धा-एकशृंखलावद्धा । आव० ६३ ।

एक्कसरा-सहैव । आव० ३६७ ।

एक्कसिं-एकश । आव० ८१३ ।

एक्कसेल-एकशैल -वक्षस्कारपर्वत । जं० प्र० ३४७ ।

एक्काणिया-एकाकिनी । आव० ५६० ।

एक्कारसी-एकादशी तिथि । ज्ञाता० १५३ ।

एक्काहिज्जा-व्यन्तरीविशेषा । नि० चू० प्र० ३०४ आ ।

एगंगिओ-सघातिमासघातिमो एगंगिओ भवति । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।

एगंगियं- एकाङ्गिकं तज्जातदर्भिकं सदसिकाकम्बलीखण्डनिष्पादितम् । ओघ० २१४ । य एकेन फलकादिना कृत । बृ० तृ० १६२ अ । एकाङ्गिक-तज्जातदशिकं न वा द्वयादिखण्डनिष्पन्नम् । बृ० द्वि० २३९ अ ।

एगंत-एकान्तं-विजनम्। ज्ञाता० ८८ । नियम. । उत्त० २४१ । एक -अद्वितीय , कर्मणामन्तो यस्मिन्निति, मोक्ष । उत्त० ३०७। एकनिश्चय. । भग० २९० । एकान्तं-अनुपघातक स्थानम् । दश० १५६ । निश्चय । उत्त० ५८७। इतरव्यासङ्गपरिहारात्मकम् । उत्त० ६२२ । मोक्ष । दश० १६५ । विजनम् । भग० ३२३ । योजनमण्डलादन्यत्र । जं० प्र० ३८८ ।

एगंतचरिया-एकान्तचर्या-द्रव्यक्षेत्रकालभावेष्वसम्वद्धता । दश० १५१ ।

एगंतदिट्ठी-एकान्तदृष्टि -एकोऽन्तो-निश्चयो यस्या. सा तथा, सा चासौ दृष्टि, अनन्याक्षिप्ता । उत्त० ४५७ । एकान्तदृष्टि -एकान्तेन तत्त्वेषु-जीवादिषु पदार्थेषु दृष्टिर्यस्यासौ । सूत्र० २३४ । एकोऽन्तो-निश्चयो यस्याः सा एकान्ता सा दृष्टि -बुद्धिर्यस्मिन् एकान्तदृष्टि । ज्ञाता० ५१। एकान्ता-प्रा-

त्थमेवेदं मयेत्येवमेव- निश्चया दृष्टिर्यस्य स- । ज्ञाता० -८०। एकान्तेन निश्चला जीवादितत्त्वेषु- दृष्टि -सम्यग्दर्शनं यस्य स एकान्तदृष्टि.-निष्प्रकम्पसम्यक्त्व । सूत्र० १४१। -

एगंतदिट्ठीए-एकोऽन्तो-निश्चयो यस्या सा एकान्ता सा दृष्टि -बुद्धिर्यस्मिन्निर्ग्रन्थे प्रवचने-चारित्रपालनं प्रति तदेकान्तदृष्टिकम्। एकान्ता-एकनिश्चया दृष्टि -दृक् यस्य स एकान्तदृष्टिक । ज्ञाता० ५१।

एगतधारा-एकत्रान्ते-वस्तुभागेऽपहर्तव्यलक्षणे धारा-परोपतापप्रधानवृत्तिलक्षणा यस्य स एकधार । ज्ञाता० ८०। एकान्तधारा-तीक्ष्णधारा । उत्त० ३२७। एकान्ता-एकविभागाश्रया धारा यस्य सा एकान्तधारा । ज्ञाता० ५१।

एगंतपंडिए-एकान्तपण्डित -साधु । भग० ९१।

एगंतबाले-एकान्तबाल -मिथ्यादृष्टि अविरतो वा। भग० ९० ।

एगंतमंतं-एक इत्येवमन्तो-निश्चय यत्रासावेकान्त एक इत्यर्थ अतस्तमन्त भूभागम्। भग० २९०।

एगंतमोणेण-एकान्तमौनेन-सयमेन करणभूतेन। सूत्र० २३९।

एगंतरं-एकान्तरोऽनन्तरसमय.। विशे० २०९। एकान्तरं-एकेन चतुर्थलक्षणेन तपसाऽन्तर-व्यवधानं यस्मिंस्तत् उत्त० ७०६।

एग-एकः-असहायो रागद्वेषादिसहभावविरहितो गौतमादिरित्यर्थ । उत्त० २४१। तथाविधतीर्थकरनामकर्मोदयादनुत्तरावाप्तविभूतिरद्वितीय., तीर्थकरः। घातिकर्मसाहित्यरहित । उत्त० २४१। एकत्र। ओघ० ३३। असहाय.। ठाणा० ३५। तत्र प्रदेशार्थतया असख्यातप्रदेशोऽपि जीवो द्रव्यार्थतया एक, अथवा प्रतिक्षणं पूर्वस्वभावविक्षयापरस्वरूपोत्पादयोगेनानन्तभेदोऽपि कालत्रयानुगामिचैतन्यमात्रापेक्षया एक, अथवा प्रतिसन्तानं चैतन्यभेदेनानन्तत्वेऽप्यात्मना सग्रहन याश्रितसामान्यरूपापेक्षयैकत्वम् इति । सम० ५। मोक्षोऽशेषमलकलङ्करहितत्वात् संयमो वा रागद्वेषरहितत्वात्। आचा० २१२। पूर्वपूर्वरूप उत्तरोत्तररूप, आद्य, पर्यवमानो वा। प्रज्ञा० २६५। धर्मसहायविप्रमुक्त अल्पसागारिकस्थितो वा। दश० १८८। उद्रेकावस्थावर्तिनैकेन गुणेन स्पर्शाख्येनोपलक्षित इति एक -वायु-। आचा० ७५। एकाकी, असहायः। ठाणा० १९७। आन्तरव्यक्तरागादिसहायवियोगात् अद्वितीय तथाविधपदात्यादिसहायविरहात्। ज्ञाता० ३४। सहाय.। ज्ञाता० ५७। एक -रागद्वेषरहिततया ओजा, यदिवाऽस्मिन् समारचक्रवाले पर्यटन्नसुमान् स्वकृतसुखदुःखफलभाक्त्वेनैकस्यैव परलोकगमनतया सदैकक एव भवति। सूत्र० २६५। समान। राज० ४९। मोक्षः संयमो वा। सूत्र० २३५।

एगइओ-एकदा कदाचिद् एकतरो वा। आचा० ३३०।

एगइया-एकका, एके केचनेत्यर्थ । भग ३२।

एगइयाणं-एकेषा, न तु सर्वेषाम्। भग० १२९।

एगईओ-एक कश्चिदेकाकी वा। आचा० ३३०।

एगउ-एकस्मिन् देशे। ज्ञाता० ९३।

एगओ-एकत । ज्ञाता० ७०। एकः स एव एकक, एको वा प्रतिमाप्रतिपत्त्यादौ गच्छतीत्येकग। एकं वा कर्मसाहित्यविगमतो मोक्षं गच्छति-तत्प्राप्तियोगानुष्ठानप्रवृत्तेर्यातीत्येकग। उत्त० १०८।

एगओखहा-एकस्या दिश्यङ्कुशाकारा। ठाणा० ४०७। यया जीव पुद्गलो वा नाड्या वामपार्श्वदेशात् प्रविष्टस्तयैव गत्वा पुनस्तद्वामपार्श्वादावुत्पद्यते सा एकत खा, एकस्यां दिशि वामादिपार्श्वलक्षणाया खस्य-आकाशस्य लोकनाडी-व्यतिरिक्तलक्षणस्य भावादिति । भग० ८६६।

एगओजण्णोवइयकिच्चगए। भग० ११०।

एगओवंका-एकत -एकस्यां दिशि वङ्का-वक्रा. एकतोवक्रा। भग० ८६६।

एगओवत्ता-द्वीन्द्रियजीवविशेषा । प्रज्ञा० ४१।

एगखम्भ-एकस्तम्भ -एक स्तम्भो यस्मिन् स प्रासाद.। दश० ४१।

एगखुर-प्रतिपदमेक खुरो येषां ते एकखुरा -अश्वादय । जीवा० ३८। प्रतिपदमेक खुर -शफो येषा ते एकखुरा -अश्वादय । प्रज्ञा० ४१। एक खुर -चरणे येषामधोवर्त्यस्थिविशेषो येषा ते एकखुरा-हयादय । उत्त० ६९९।

एगगयं-एगागिकं-तकम्। व्य० द्वि० ८१ आ।

एगगुण-एकगुण एकेन गुणो-गुणनं-ताडनं यस्य स एकगुण.। ठाणा० ३५।

एगगुणकालए-एक.-सर्वजघन्यो गुण.-अशस्तेन कालक परमाण्वादिरेकगुणकालकः-सर्वजघन्यकृष्ण । अनु० १११।

एगग्ग-एकाग्रस्य-एकालम्बनस्यार्थाचित्तस्य भाव एकाग्र्यं-ध्यानम् । उत्त० ६२१।

एगग्गचित्त-एकाग्रचित्त -एकाग्रालंबन । दश० ५७।
एगग्गमणो-एकाग्रमना-अवहितचित्त । उत्त० ५९९।
एगग्गहण-एकग्रहणेन-एकशब्देन । भग० १४९।
एगग्गहणगहिया- एकग्रहणगृहीता-एकग्रहणेन-एकशब्देन-धर्मास्तिकाय इत्येवंलक्षणेन गृहीता ये ते तथा, एकशब्दाभिधेया इत्यर्थ । भग० १४९।
एगचरा-एकचरा -एकाकिन । आचा० ३०८।
एगचक्खू-अतिशयवत् श्रुतज्ञानादिवर्जितो विवक्षित इति एकचक्षु चक्षुरिन्द्रियापेक्षया। एकं चक्षुरस्येति । ठाणा० १७१।
एगचक्खू विणिहय - एकचक्षुर्विनिहत -एकं चक्षुर्विनिहतं यस्य स । प्रश्न० २५।
एगचरिया - एकचर्या - एकाकिविहारप्रतिमाऽभ्युपगम । आचा० २४३।
एगचोरो-एकचौर -य एकाकी सन् हरति स. । प्रश्न० ४६।
एगच्चा-एकार्च्या-अद्वितीयपूज्या सयमानुष्ठाने वा असदृशी अर्चा-शरीरं येषा ते एकार्चा । उपा० २९।
एगच्छत्त-एकछत्रा एकं छत्रं-नृपतिचिह्नमस्यामिति, अविद्यमानद्वितीयनृपति । उत्त० ४४८।
एगजंबूए-उल्लुकतीरे चैत्यविशेष. । भग० ७०५।
एगजडी-एकजटी-एकाशीतितमो ग्रहः । जं० प्र० ५३५। व्यशीतितमो ग्रह । ठाणा० ७९।
एगज्झं-एकध्यम्-एकवाक्यतया सम्प्रधार्य। आचा० ३३०।
एगट्ठ-एकस्थ.-एकत्र । आव० ७१०। एकार्थ-अनन्यविषयं एकप्रयोजनं वा । भग० १७।
एगट्ठभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्ठिभागाभ्याम् । सूर्य० १२।
एगट्ठाणं-एकस्थानकं-यथा अङ्गोपाङ्गस्यापितं तेन तथावस्थितेनैव समुद्देष्टव्यम् । आव० ८५३।
एगट्ठि-एगट्ठीगं । नि० चू० प्र० ५६ आ।
एगट्ठिआणुओगे - एकश्चासावर्थश्च-अभिधेयो जीवादि. स येषामस्ति त एकार्थिकाः-शब्दास्तैरनुयोगस्तत्कथनमित्यर्थः । ठाणा० ४८१।
एगट्ठिए-एकश्चासावर्थश्च-अभिधेय एकार्थ स यस्यास्ति स एकार्थिक, एकार्थवाचक इत्यर्थ । ठाणा० ४९२।
एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्ठिभागाभ्याम् । सूर्य० १२।
एगट्ठिभागे-एकषष्ठिभागान् । सूर्य० २५।
एगट्ठिया-एकमस्थिकं फलमध्ये येषां ते । भग० ८०४। एकमस्थिक-फलमध्ये बीजं येषा ते एकास्थिका. । भग० ३६४। एकास्थिका-नौः। विपा० ८०। ज्ञाता० २२७। फल फलं प्रति एकमस्थि येषां ते एकास्थिकाः। प्रज्ञा० ३१।
एगठाणं-एकस्थानम् । आव० ८५२। एक सङ्घाटक । ओघ० ९९।
एगणासा-एकनाशा पश्चिमरुचकवास्तव्या पञ्चमी दिक्कुमारीमहत्तरिका । जं० प्र० ३९१।
एगणिसेज्जाए-एकेनासनपरिग्रहेण । सम० ७२।
एगतियाओ-एकका -काश्चन । जीवा० १९८।
एगतो-एकत-एकस्मिन स्थाने । व्य० प्र० १७४ अ।
एगतोनिसहसंठिया - एकतो-रथस्य एकस्मिन् पार्श्वे यो नितरां सहते स्कन्धपृष्ठे वा समारोपितं भारमिति निषधो-बलीवर्दस्तस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा एकतोनिषधसंस्थिता । सूर्य० ७१।
एगतोवंका-एकओवंका-एकस्या दिशि वक्रा । ठाणा० ४०७।
एगतोवत्ता-एकतोवर्ता -द्वीन्द्रियजीवविशेषा । जीवा० ३१।
एगतोवेति-एगखीला । नि० चू० प्र० १२७ अ।
एगत्त-एकता, यैकता-निरालम्बनत्वम् । भग० ९२४। एकत्वं-अभेद, । ठाणा० १९१।
एगत्तवियके - एकत्वेन-अभेदेनोत्पादादिपर्यायाणामन्यतमैकपर्यायालम्बनतयेत्यर्थो. वितर्क -पूर्वगतश्रुताश्रयो व्यञ्जनरूपोऽर्थरूपो वा यस्य तदेकत्ववितर्कम् । ठाणा० १९१।
एगत्तीकरण-एकत्वकरणं-एकात्मत्वविधानम् । ज्ञाता० ४६।
एगत्था-एकार्था.-एके च ते अर्थाश्चेति एकार्था, एकेषाचिन् न सर्वेषा निखिलानां वक्तुमशक्यत्वादर्था -जीवादय । सम० ११३।
एगदिसिं-एकया दिशा पूर्वोत्तरलक्षणया। ज्ञाता० ४५।
एगदुवारा-एकद्वारा-एकप्रवेशनिर्गममार्गा । ज्ञाता० २३८।
एगदिट्ठी-एकदृष्टि -बद्धलक्षः। प्रश्न० १५८।
एगन्तुच्छेय-सर्वथा उत्-प्राबल्येन छेदो-विनाश एकान्तोच्छेद.-निरन्वयो नाश इत्यर्थ । दश० ४०।
एगपक्खं-एकपक्ष , एक. पक्षो ब्राह्मणलक्षणो यस्य तत् । उत्त० ३६०।

एगपक्खी-एकपक्षिक -एकवाचन , एककुलवर्त्ती। व्य० प्र० २१२ अ। एकपक्षिक -अल्पश्रुत । व्य० प्र० २१३ अ। गुरुभ्राता भ्राता गुरुगुरुर्गुरुनप्ता समानकुलश्च समानश्रुतो वा। बृ० तृ० १३६ आ।

एगपत्ती-एकपत्नी। आव० ९५।

एगपयेसोगाढं-एकप्रदेशावगाढम्-जीवापेक्षया कर्मद्रव्यापेक्षया च ये एके प्रदेशास्तेष्ववगाढम्। भग० ५३।

एगभविय-एकभविक -नोआगमत द्रव्यद्रुमस्य प्रथम. प्रकार , य. एकेन भवेनानन्तर द्रुमेषूत्पस्यते। दश० १७।

एगभायणो-समपंक्ति। नि० चू० तृ० ४७ अ।

एगभाव-एको .भाव -सासारिकसुखविपर्ययात् स्वाभाविकसुखरूपो यस्यासावेकभाव.। भग० ६४०। मध्यस्थता। ओघ० ११३।

एगभूए-एकभूतः एक एव-आत्मोपम । ठाणा० २१। एकत्व प्राप्त । भग० ६४०।

एगमंडवे-एकमडम्ब नाम यस्य निवेशस्य सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च नास्ति कोऽप्यन्यो ग्रामो नगर वा तस्मिन्नेकमडम्बे। व्य० द्वि० २१६ अ।

एगमणा-एक-दर्शनात्तगेकतजीवाजीवविभक्तावगततत्वेन मन - चित्त येषा ते एकमनस -श्रद्धानवन्तः। उत्त० ६७१।

एगमणो-एकमना.-एकाग्रचित्त । आव० ७८०।

एगमना-एकम्-एकत्र प्रस्तुते वस्तुन्यभिनिविष्टत्वेन मनो यस्यासौ एकमना । उत्त० ५९९।

एगमेगं-एकैकम् । सूर्य० ३३।

एगयओ-एकत एकस्कन्धतया। भग० १०४। एकत - एकीभय, सयुज्येत्यर्थ । भग० ७७४। एकत्र। ठाणा० ३१४।

एगयर - एकतर, अन्यतमत्। आव० ७३। एकतर - अनुकूल । आचा० २४२।

एगगेइंदियाए-द्वादशी एकगात्रमानेति। ज्ञाता० ७३।

एगराइया-एकरात्रिक -अपान्तराले वसामि तत्र गोकुलादौ प्रचुरगोरसादिलाभेऽपि प्रतिबन्धमकुर्वता कारणमन्तरेण सर्वैकरात्रमेव वस्तव्य नाधिकमित्येवंरूपेणाभिग्रहेण। व्य० प्र० १३६ आ। एकरात्रिकी। उत्त० ५३१। आव० २१६।

एगराइयाभिक्खुपडिमा - रात्रिप्रमाणा द्वादशी भिक्षुप्रतिमा। सम० २१।

एगराई-एकरात्रिकी। आव० ६४८।

एगरायं एका रात्रिर्यत्र तत् एकरात्र। एका रात्रि यावत् तत। उत्त० ११०।

एगलंभिए-य एक प्रधान शिष्यमात्मना लभते गृह्णाति शेषास्त्वाचार्यस्य समर्पयति, स एकलाभेन चरतीति एकलाभिक । व्य० प्र० २३२ आ।

एगल्ल-एकाकिन । ठाणा० ४१६।

एगल्लविहार-एकाकिविहार । आव० ३६५।

एगवंद-एकवृन्द एकाकी। व्य० प्र० २०१ अ।

एगविऊ-एकमेवात्मान परलोकगामिन वेत्तीति एकवित्, स मे कश्चिद् दु खपरित्राणकारी सहायोऽस्तीत्येवमेकवित्। एकान्तविद् वा -एकान्तेन विदितसमारम्भभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं तथ्य नान्यदित्येव वेत्तीत्येकान्तवित्, एक.-मोक्ष. सयमो वा त वेत्तीति। सूत्र० २६५।

एगविह-एकविधः। विशे० ३९६।

एगविहिविहाणा-एकेन विधिना प्रकारेण चक्रवाललक्षणेन विधान स्वरूपस्य करणं येषा ते एकविधिविधाना । भग० २८२।

एगसरा-विचित्तेहिं एगसरा एगावली। नि० चू० प्र० २५४ आ। जहा सजतीए पयालणी कसाग्गिवणी णिवभंगे वा ढिज्जति। नि० चू० प्र० १२७ अ।

एगसाडियउत्तरासंगकरण-एका शाटिका यस्मिंस्तत्तथा, तच्च तदुत्तरासङ्गकरण च-उत्तरीयस्य न्यासविशेष । ज्ञाता० ४६।

एगसालय-एकशालकम्। जीवा० २६९।

एगसित्थ एकसिक्थु-यत्रैकमेव सिक्थु भुज्यते तत्। उत्त० ६०८।

एगसेलकूडे-एकशैलकूटं, एकशैलवक्षस्कारकूटनाम। जं० प्र० ३४७।

एगसेलग । ज्ञाता० २४२।

एगसेले । एकशैलो नातखण्डपश्चिमार्धस्थमन्दरपर्वतस्ध्ये स्वनामख्याते वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ८०। एकशैलो जम्बूद्वीपस्थमन्दरपर्वतसमीपस्थे स्वनामख्याते वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ३२६।

एगा एका-अद्वितीया। आव० ८६५।

एगागारो-एकाकार· एकस्वरूप । जीवा १४३ ।

एगागिसमुद्दिसगा-ये न मण्डल्युपजीविन.। ओघ० ८७।

एगाणिओ-एकाकी । आव० ५५८ ।

एगाणुप्पेहा-एकस्य-एकाकिनो असहायस्यानुप्रेक्षा-भावना एकानुप्रेक्षा । ठाणा० १९० ।

एगाभिमुहा-एक भगवन्तं अभिमुखं येषा ते एकाभिमुखा । ज्ञाता० ४५ ।

एगाभोगो-एगा योगो भण्णति । नि० चू० प्र० ४७ अ।

एगामोसा- त्रिभिरङ्गुलीभिर्वा यद्गृहीतव्यं तदेकायै गृह्णाति सा, मध्ये गृहीत्वा हस्ताभ्या वस्त्रं घृषन् त्रिभागावशेषं यावन्नयति द्वाभ्यां वा पार्श्वाभ्या यावद् ग्रहणा । ओघ० ११०। एकामर्शनं एकामर्शा। उत्त० ५४१।

एगाय-एकाकिन.। सूत्र० १४०।

एगालंभी-एकलाभी-य प्रधान शिष्य तमेकं यो न ददाति अवशेषास्तु सर्वानपि प्रव्रजितान् गुरूणा प्रयच्छति। येषामेक एव लाभो-यथा यदि भक्त लभन्ते ततो वस्त्रादीनि न, यथा वस्त्रादीनि लभन्ते तर्हि न भक्तमपि, एकमेव लभन्ते इत्येवशीला एकलाभिन । व्य० प्र० २३२ आ।

एगावलि-तपविशेष ।आचा० ४२३।एकावली-नानामणिकमयी माला । औप० ५५। विचित्रमणिका । ज्ञाता० ४३ । विचित्रमणिकमयी । भग० ४७७ ।

एगावलिसंठिते-एकावलिसंस्थित -अनुराधानक्षत्रसंस्थानम्। सूर्य० १३०।

एगावली-एकावलिका-जघन्ययुक्तासङ्ख्यातकसमयानां समुदाय । जीवा० ३४४। विचित्रमणिकमयी। भग० ४५९।

एगावाती-एकवादी-तत्रैक एवात्माद्विरर्थ इत्येवं वदतीति। ठाणा० ४२५।

एगासणं- एकाशनं नाम सकृदुपविष्टपुताचालनेन भोजनम्। आव० ८५३ ।

एगाहं-एकाहं एकमहर्यावत् । जीवा० १०९ । दिने दिने गत्वा नोदयति, एकान्तरितं वा। बृ० तृ० १८२ आ। एकाहं-अभक्तार्थम् । व्य० द्वि० ३८६ अ।

एगाहच्चं-एका हत्या-हननं-प्रहारो यत्र जीवितव्यपरोपणे तदेकाहत्यम्। भग० ३२३ । एका एव आहत्या-आहनन प्रहारो यत्र भस्मीकरणे तदेकाहत्यम्। भग० ६७०। एक घातं, एकेन घातेनेति भाव । राज० १३४।

एगाहजातगा-एकाहर्जाता एकदिवसोत्पन्ना·।आव० ११६।

एगाहिगारिगा-एकस्मिन् शय्यातर पिण्डादावधिकृतदोषेऽनालोचिते एव यानि शेषदोषसमुत्थितानि प्रायश्चित्तानि तानि एकाधिकारिकाणि, एकाधिकारे भवानि एकाधिकारिकाणि। व्य० प्र० ३० अ।

एगाहिय-ज्वरविशेष । भग० ११७।

एगुरूया-एकोरुक -अन्तरद्वीपविशेष.। जीवा० १४४।

एगूरूता। ठाणा० २२५।

एगूरूयदीवे-अन्तरद्वीपे प्रथमः। ठाणा० २२५।

एगेभवं-एको भवान्। ज्ञाता० ११०।

एगोदगं-एकोदकं, सर्वात्मनोदकप्लावितम्। जीवा० ३२६।

एगोरुया-अन्तरद्वीपविशेष । प्रज्ञा० ५०।

एच्चिरेण-इयता। ओघ० ६५।

एज एजतीति एज -वायु कम्पनशीलत्वात्। आचा० ७५।

एज्जंत-आयान्तमागच्छन्तम्। उत्त० ३५८। आयान्तम्। आव० २८७।

एज्ज-एयाता-समागच्छताम्। बृ० तृ० १४१ अ।

एज्जमाणं-इयत्, आगच्छत्। जं० प्र० २३३। प्रत्यागच्छत्। ज्ञाता० १३९ । एज्यमानं-कम्प्यमानम्। जीवा० १८१।

एज्जा-आगच्छेत् । बृ० द्वि० १८७ अ।

एडगारूढो-एडकारूढ । आव० ४१७।

एडेंति-एडयन्ति-अपनयन्ति। जं० प्र० ३८८।

एडेइ-छर्दयति, तीरे प्रक्षिपति। ज० प्र० २३०।

एडेति-अपनयति । भग० ६६५।

एडेसि-छर्दयसि । ज्ञाता० ६९।

एणी स्नायु । प्रश्न० ८० । हरिणी। ज० प्र० ११० । जीवा० २७०। एण्य -स्नायव । ज० प्र० ११०।

एणीयारा-एणी-हरिणी मृगग्रहणार्थं चारयन्ति-पोषयन्ति ये ते। प्रश्न० १४।

एणेज्जग-गोपालपरावर्त्तिस्थानम्। भग० ६७४।

एतं-एनम्-एकम्। प्रश्न० १९।

एतमट्ठं-एत-पुद्गलानामपरापरपरिणामलक्षणमर्थम्। ज्ञाता० १७७ ।

एतेवं-एतदेवमित्यर्थः । भग० ४५५ ।

एत्ताहे-अधुना । आव० ३५९ ।

एत्तिओ-एतावान् । आव० ४२२ ।

एत्तिल्लयं-एतावत् । आव० ५५५ ।

एत्तियपरिक्खओ-ईयत्परीक्षक । आव० ८२६ ।

एत्तो-एषु । उत्त० १४२ । इत.-अहिकडेवरादिगन्धात् सकाशात् । ज्ञाता० १३० ।

एत्थं-अत्र, इह । दश० ९९ ।

एत्थ – अशोकवरपादपस्य यदधोऽत्रेत्येवं संबन्धनीय । ज्ञाता० ६ ।

एत्थोवरए-अस्मिन् संयमे भगवद्वच सि वा उप–सामीप्येन रत व्यवस्थित' । आचा० १६२ ।

एद्दहो-एतावान् । आव० ३४१ ।

एमेए-एवं अनेन प्रकारेण एते–येऽधिकृता' प्रत्यक्षेण वा परिभ्रमन्तो दृश्यन्ते । दश० ६८ ।

एयं-एतत्, एतावत्प्रमाणम् । सूर्य० ११३ ।

एयंतं-एजमानं, कम्पमानम् । ठाणा० ३८५ ।

एयंतगं-आगच्छत् । आव० २९१ ।

एयइ-एजते-कम्पते । भग० १८३ ।

एयकम्मे-एतद्व्यापार, एतदेव वा काम्यं–कमनीयं यस्य स । विपा० ४० ।

एयग्गो-एकाग्र'–एकचित्त. । आव० ७७३ ।

एयणुद्देसए – एजनोद्देशक –भगवतीसूत्रस्य पञ्चमशतकस्य सप्तमोद्देश । भग० २४६ ।

एयविज्जे-एषैव विद्या–विज्ञान यस्य स एतद्विद्य. । विपा० ४० ।

एयसामायारो – एतत्सामाचार –एतज्जीतकल्प । विपा० ४० ।

एयारूव-एतद्रूपं–वक्ष्यमाणरूपम् । भग० ३०२ । एतद्रूप-एतदेव रूप–स्वरूप यस्य स । जं० प्र० २२ ।

एयावंति-एतावन्त । आचा० २३ ।

एरंड-हडक्कित । बृ० द्वि० २१९ अ । तृणविशेष । प्रज्ञा० ३३ । एरण्ड । आचा० १९७ ।

एरंडइए-हडक्कयित । बृ० द्वि० १०६ आ ।

एरंडकट्ठसगडिया – एरण्डशकटिका–एरण्डकाष्ठमयी । ज्ञाता० ७६ ।

एरंडवीयाण-उत्कटिकाभेद । प्रज्ञा० २६६ ।

एरंडमिंजिया-एरडमञ्जिका–एरंडफलम् । भग०

एरगा-एरका–गुन्द्रा भद्रमुस्तक इत्यर्थ. । बृ० प्र०

एरवए-ऐरवत'–क्षेत्रविशेष. । ठाणा० ६८ । सूर्य० २२ । ऐरवत –कर्मभूमिविशेष. । प्रज्ञा०

एरवतीणदी-नदीविशेष । नि० चू० द्वि० ७९

एरावण-ऐरावण.–शक्रगज' । प्रश्न० १३५ । ठाणा० ३०२ । आव० ३५९ । गुच्छाविशेष । प्र

एरावणदहे-द्रहविशेष । ठाणा० ३२६ ।

एरावती-नदीविशेष' । ठाणा० ४७७ । कुणालान नदी । बृ० तृ० १६१ आ ।

एरावय – ऐरावतं–उत्तरपार्श्ववर्तिभरतक्षेत्रप्रति शेष । जं० प्र० ३३० ।

एरिंड-वृक्षविशेष । भग० ८०२ ।

एलए-एलक –उरभ्र । प्रश्न० ३७ ।

एलक-ऊरणक । अनु० १२९ ।

एलकच्छं-एडकाक्षं – योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृ यत्पूर्वं दशार्णपुर नाम नगरमासीत्, यत्र गजा पर्वतस्तत् । आव० ६६८ ।

एलगच्छा-एडकाक्ष –कायोत्सर्गे दृष्टान्त । आव एलकाक्ष –ग्रामविशेष । उत्त० ८७ ।

एलगमूओ – भाषमाण एडक इव बूबुयते ए आव० ६२८ ।

एलगा-एडका'–द्विखुरचतुष्पदविशेषाः । जीवा०

एलते-एडक –और्णक । प्रज्ञा० २५२ ।

एलमूअय-एलमूकता–अजाभाषानुकारित्वम् । दश

एलमूओ-एलमूगो भासइ एलगो जहा बुडबुडति मूगो भासति । नि० चू० द्वि० ३६ आ ।

एलयं-एलक-ऊरणकम् । उत्त० २७१ ।

एलवालु-चिर्भटविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ३७ ।

एला – फलविशेष । जं० प्र० ३५ । जीवा० ११६

एलापाडल-एलापाटला–पाटलाविशेष । ज्ञाता०

एलापुडाण-गन्धद्रव्यविशेष । ज्ञाता० २३२ ।

एलारस-एलारस'–सुगन्धिफलविशेषरस । प्रश्न०

एलालुकी-वल्लीविशेष । आचा० ५७ ।

एलावच्चसगोत्तं-इलापतेरपत्यं एलापत्य, एलापत्यैन सह गोत्रेण वर्त्तते यः स एलापत्यसगोत्र । नंदी ४९ ।

एलावच्चा-गोत्रविशेष । ठाणा० ३९० । एलापत्या-रात्रेः तृतीयं नाम । सूर्य० १४७ ।

एलावालुंकी-वल्लीविशेष । प्रज्ञा० ३२ ।

एलासमुग्गयं-एलासमुद्गकम् । जीवा० २३८ ।

एलिका-तृणपत्रनिश्रितो जीवविशेष । आचा० ५५ ।

एलिक्खं-ईदृशोऽभिहितार्थाभिज्ञ । उत्त० २८२ ।

एलिया-एडका । आव० ८५४ ।

एलिसय-ईदृग्-एतादृशम् । बृ० द्वि० २८७ अ ।

एलुए-एलुक-देहली । जं० प्र० ४८ ।

एलुकावालुङ्कं-तिक्तकम् । दश० १८० ।

एलुकः-उदम्बर, देहली । बृ० प्र० २५७ आ ।

एलुगं-देहली । आचा० २२२ ।

एलुगा-एलुका-देहल्यः । राज० ६१ । जीवा० २०४, ३५९ ।

एवं-एवं प्रकारवचनशब्द । दश० १३३ । प्रकारवाचक । ओघ० ५१ । उपमार्थे । उत्त० २२४ । प्रकारार्थ । प्रज्ञा० २५५ । इत्थंकरणाय । ज्ञाता० ११३ ।

एवं आया-एवमात्मा-एवंरूप । नंदी २१२ ।

एवं चतुसुं-पूर्वापरविदेहदेवकुरूत्तरकुरुरूपेषु क्षेत्रविशेषेषु । चतुर्विधस्य पर्याय । जं० प्र० ३१२ ।

एवं भागा-एवभागानि-वक्ष्यमाणप्रकारभागानि । सूर्य० १०४ ।

एवंभूओ-एवम्भूत, यथाभूतो नय विशेषयति । आव० ७८४ । य शब्देनोच्यते चेष्टाक्रियादिक प्रकारस्तमेव भूतप्राप्तं यतिक्रियाविशिष्टं शब्देनोच्यते तामेव क्रिया कुर्वद्वस्तु एवंभूतम् । अनु० २६६ ।

एवंभूत-एवमिति तथाभूत सत्यो घटादिर्यो नान्यथेत्येवमभ्युपगमपर एवंभूतो नय । ठाणा० १५३ । शब्दनयस्य तृतीयो भेद । उत्त० ७७ । य शब्देनोच्यते चेष्टाक्रियादिक प्रकारस्तद्विशिष्टस्यैव वस्तुनोऽभ्युपगमात्तमेव भूत-प्राप्त एवभूत । अनु० २६६ । यथाशब्दार्थं एवं पदार्थो भूत सन्नित्यर्थोऽन्यथा भूतोऽसन्निति प्रतिपत्तिपर एवभूत । ठाणा० ३९० ।

एवभूय-द्रष्टिवादे सूत्रस्य भेद । सम० १२८ । एवभूत-नयविशेष । प्रज्ञा० ३२५ ।

एवंमहालियं-इतिमहतीम् । ज्ञाता० ६२ ।

एवंमहालिया-एतावन्ति महान्ति । जीवा० ३९९ ।

एव-एवकार-क्रमप्रदर्शनार्थः । आव० १०१ समुच्चये । ठाणा० ५०४ । एव-अवधारणे भिन्नक्रमश्च । उत्त० २९४ । इति गाथालङ्कारमात्रे । विशे० १३४७ । पूरणार्थे । आव० ११० । एवम्-अनन्तरोक्तप्रकारेण । उत्त० २८५ । क्रमनियमप्रतिपादनार्थे । ओघ० २ । एवकार-परिमाणे । प्रज्ञा० ५५९ । एवशब्द-अपिशब्दार्थे । व्य० प्र० २१३ आ ।

एवड्डु-एतावत । आव० ४३० ।

एवमेयं-एवमेवैतत् यद्भवद्भि प्रतिपादितं तत्तथैवेत्यर्थ । ज्ञाता० ४७ ।

एवमेवं-बिन्दोरलाक्षणिकत्वादेवमेव । उत्त० ४०९ ।

एवमेव-उपनयवचनमिति । ज्ञाता० ९६ ।

एषः-एष-एषणमेषो-गवेषणम् । उत्त० ५१४ ।

एषणायामसमितत्वं-विंशतितमसमाधिस्थानम् । प्रश्न० १४४ ।

एषणासमिति-धर्मसाधनानामाश्रयस्य चोद्गमोत्पादनैषणादोषवर्जनम् । तत्त्वा० ९-५ ।

एषणीय-प्रासुकम् । भग० १११ ।

एषयति-प्रेरयति, प्रयोजयति । विशे० ४९८ ।

एसणा-एषणा-अभिलाष । पिण्ड० २ । एषणमेषो-गवेषण त करोतीति णिक् तत स्त्रीलिङ्गे भावे युटि एषणा । उत्त० ५१४ । गृहिणा दीयमानपिण्डादेर्ग्रहण एषणा । ठाणा० १५९ । शङ्कितादिलक्षणा । आव० ५७६ । गवेषणा । प्रश्न० १०८ । अनुत्त० ३ । पिण्डविशुद्धि । भग० २९८ ।

एसणासमिइए-एषणा-गवेषणादिभेदा शङ्कादिलक्षणा वा तस्या समिति एषणासमिति, गोचरगतेन मुनिना सम्यगुपयुक्तेन नवकोटीपरिशुद्ध ग्राह्यम् । आव० ६१६ ।

एसणाऽसमिए-एषणाऽसमित, योऽनेषणा न परिहरति । विंशतितमसमाधिस्थानम् । आव० ६५३ ।

एसणासमिति-सूत्रानुसारेण रयहरणवत्थपादासणपाणनिलओसहऽणेसण । नि० चू० प्र० १७ अ ।

एसणाऽसमिते-अनेषणा न परिहरति । विंशतितमसमाधिस्थानम् । सम० ३७ ।

एसणिज्जं-एष्यते-गवेष्यते उद्गमादिदोषविकलतया साधुभिर्यत्तद् एषणीय-कल्प्यम् । ठाणा० १०८, २१३ । एष्यत इत्येषणीय-कल्प्यम् । भग० २०६ ।

एसणोवघाते-एषणया-तद्दोषैर्देशभि: शङ्कितादिभि: तस्यो-पघात -अकल्प्यता। ठाणा० ३२०।

एसि-एषणीय-शुद्धम्। पिण्ड० १४८।

एसिआ-गोष्ठा। आचा० ३२७।

एसिज्जा-एषयेत्-पर्यवमितवृत्त्या कुर्यात्। उत्त० ४६।

एसियं-एषणीयं-आधाकर्मादिदोषरहितम्। आचा० ३३१। एषणीय-गवेषणाविशुद्धया गवेषितम्। भग० २९२।

एसिया-एषितु शीलमेषामिति एषिका-मृगलुब्धका हस्ति-तापसाश्च मांसहेतोर्मृगान् हस्तिनश्च एषन्ति, ये चान्ये पाख-ण्डिका नानाविधैरुपायैर्भैक्ष्यमेषन्त्यन्यानि वा विषयसाध-नानि ते। सूत्र० १७७।

एसु-एष्याम। ओघ० ७०।

एसुहुम-एतावत्सूक्ष्मः। प्रज्ञा० ६०१। जीवा० ३७५।

एसे-एष्यति-आगमिष्यति। पिण्ड० १६७।

एस्सा-एष्याः-भविष्यन्त। आव० ६८७।

एस्सुहुमो-एतत्सूक्ष्म। औप० १०९।

एहंता-एधयन्त -अनुभवन्त। दश० २४८।

एहति-एधते-प्राप्नोति। उत्त० ३१४।

एहा-एधा-समिधो यकाभिरग्नि प्रज्वाल्यते। उत्त० ३७२। एधा-समिध, काष्ठानि। आचा० ३०९।

एहामो-एष्याम। ओघ० ६५।

एहिं-अर्वाकालिक। इदानीम्। नि० चू० द्वि० १०९ अ।

एहिअगुणा-ऐहिकगुणा -इहलोकगुणा भक्तपानादय। ओघ० १९।

एहिइ-एष्यति। उपा० ४०।

ऐ

ऐर्यापथिकं-केवलयोगप्रत्यय कर्मबन्ध। प्रश्न० १४३।

ऐरावणापदम्। ठाणा० ४६९।

ऐरावती-शिखरिणि वर्षधरे दशम कूटः। ठाणा० ७२।

एरावतीया-स्त्राविशेष। जीवा० ६०।

ओ

ओअं-ओज -मानमोऽवष्टम्भ। औप० ३३।

ओअंसी-ओजस्वी-आत्मना वीर्याधिक। जं० प्र० २१९।

ओअट्टणं-उद्वर्त्तनम्। गाढतरमुद्वर्त्तयति। बृ० तृ० ७१ अ।

ओअविअ-परिकर्मितम्। ज० प्र० ५५।

ओअविआ-आरोपितानि। ज० प्र० २९२

ओअवेहि-साधय-अस्मदाज्ञाप्रवर्तनेनास्मद्वशान् कुरु। जं० प्र० २१८।

ओआलितं-द्रावितम्। आव० ३५०।

ओइंघइ-उत्तारयति। पउ० ३४-१५।

ओइण्णेसुं-उत्तिण्णेसु-अवतीर्णेषु कियत्स्वपि गृहिषु मध्ये स्थित प्रयाति। ओघ० ३२।

ओए- ओज -तैजसम्। सूत्र० ३४३। एक-असहाय। सूत्र० १०८। विषम, प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमा। पिण्ड० १६९। एको रागादिविरहात्। आचा० २५६। एकोऽशेषमलकलङ्का-ङ्करहित। आचा० २३१।

ओओ-ओज -आरोहादिकयुक्तता। बृ० प्र० ३०९ आ।

ओकच्छिया। ओघ० २०९।

ओकसणं-पंकपनकयो परिहसणम्। बृ० तृ० २२९ अ।

ओकुरुडो-उत्कुरुट-कुणालानगर्या टोपार्त्तेतर उपाध्याय-विशेष। आव० ४६५।

ओगसणं-नाशनम्। महाप्र०।

ओगाढं-अवतीर्णा अवगाढा वा प्रकर्षप्राप्तम्। ठाण० ३९९। आत्मप्रदेशेन सह एकक्षेत्रावस्थायि अवगाढम्। प्रज्ञा० ५०२। भग० २१। लोलीभावं गत। भग० ८३। अद्वीभूतं। नि० चू० प्र० ३२७ आ। साधुप्रत्यामन्नीभूत। ठाणा० १९०।

ओगाढरुइ-अवगाढनमवगाढं-द्वादशाङ्गावगाहो विस्तारा-धिगमस्तेन रुचि, अथवा ओगाढ-साधुप्रत्यामन्नीभूतरुतस्य साधूपदेशाद् रुचिरवगाढरुचि। भग० ९२६।

ओगाढरुती-अवगाहनमवगाढं-द्वादशागावगाहो विस्त-राधिगम इति सम्भाव्यते तेन रुचि, अथवा ओगाढत्ति-साधुप्रत्यामन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशाद् रुचिः। ठाण० १९०।

ओगाढा-प्रविष्टा। ज्ञाता० १३७।

ओगालीफलगं-आर्यक(प्रायक)प्रभृतीनामावल्या समागतं चंपकपट्टादिफलग। व्य० द्वि० १०७ आ।

ओगास-पडिस्सगस्सेगदेसो। नि० चू० प्र० ८३ अ। अव-काश -स्थानम्। आव० ५३५। मार्ग। आव० ६७८।

ओगाहंती-अवगाहन्ती-आगच्छन्ती। आव० २३२।

ओगाहणग्गं-यद्यस्य द्रव्यस्यावस्तादवगाढं तदवगाहनाग्रम्। आचा० ३१८।

ओगाहणनामनिहत्ताउए- अवगाहनानामनिधत्तायु -अवगाहते यस्या जीव साऽवगाहना-शरीरमौदारिकादि तस्य-नाम औदारिकशरीरनामकर्म तेन सह निधत्तमायु। प्रज्ञा० २९७।

ओगाहणवग्गणाओ-अवगाहना एकैकस्य भाषाद्रव्यस्या-धारभूता असङ्ख्येयप्रदेशात्मकक्षेत्रविभागरूपास्तासामवगा-हनाना वर्गणा'-समुदाया. अवगाहनावर्गणा' । प्रज्ञा०२६५ ।

ओगाहणसंठाण -प्रज्ञापनायामेकविंशतितमं पदम् । भग०३९६ ४९५, ८४२ । अवगाहनास्थानम् । प्रज्ञापनाया एकविंशतितमं पदम् । प्रज्ञा० ६ ।

ओगाहणसेणियापरिकम्मे-परिकर्मे चतुर्थभेद' ।सम०१२८।

ओगाहणा-अवगाहना-तनु, तदाधारभूतं वा क्षेत्रम् । भग०७१ । नियतपरिमाणक्षेत्रावगाहित्वम् । भग० २३६ । षड्जीवनिकायाना पादसङ्घट्टनम् । पिण्ड० १६१ । अव-गाहन्तेऽस्यामवस्थायामिति अवगाहना-स्वावस्थैव । आव० ४४४ । प्रज्ञा० १०८ । अवग्रहणं-परिच्छेद. । प्रज्ञा० ३०९ अवगाहन्ते क्षेत्रं यस्या स्थिता जन्तव साऽवगाहना-तनुरि-त्यर्थः । नंदी ९१ । अवगाहते यस्या जीव' सा अवगाहना-शरीरं औदारिकादि । प्रज्ञा० २१८ । ज्ञाता० २५० ।

ओगाहिमं-आदिमे जे तिण्णि घाणा पयतिते चलवलेत्ति, तेण ते चलवल ओगाहिमं भण्णति । नि० चू० प्र० १९७ अ ।

ओगाहिमगं-पक्वान्नम् । बृ० प्र० ३१२ आ । अवगाहिमम् । आव० ८५४ ।

ओगाहिमतो-अवगाहक । उत्त० १९८ ।

ओगाहिमाइ-अवगाहिमादि-पक्वान्नमण्डकप्रभृति । पिण्ड० १५२ ।

ओगाहे-आगच्छति । ओघ० १७४ । अवगाह -शरीरोच्छ्रय । प्रज्ञा० १८१ ।

ओगाहेज्जा-अवगाहेत-आश्रयेत । भग० २३३ ।

ओगाहेत्ता-प्रविश्य । सम० ८८ ।

ओगाहो-पत्तद्ग्रह' । बृ० द्वि० २५० आ ।

ओगिज्झिय-अवगृह्य-आश्रित्य । आचा० ४०३ ।

ओगिण्हणयाते-अवग्रहणतायैमनोविषयीकरणाय । ठाणा० ४४१ ।

ओगुद्दि-खिसा, निन्दाम् । पञ्च० ५६-१५ ।

ओगुंडिया-मलदिग्धदेहा । बृ० प्र० २७८ आ ।

ओगेण्हणया-अवगृह्यतेऽनेनेति अवग्रहण, करणेऽनट्, प्रथम-समयप्रविष्टशब्दादिपुद्गलादानपरिणाम , तद्भावोऽवग्रहणता । नंदी १७४ ।

ओग्गह-अवधारणं अवग्रह । आव० ३४१ ।

ओघ-औधिक', अशुभकर्मप्रकृतिजनितो भावोपसर्ग । सूत्र०७८ ओघ -सामान्यम् । आव० २५८, ४५८, ४८० । विशे० ८४२ ४५० ।

ओघजीवितं-नारकायविशेषितायुर्द्रव्यमात्रं सामान्यं जीवितम् ठाणा० ७ ।

ओघनिप्फन्नः-ओघ'-सामान्यमध्ययनादिकं श्रुताभिधानं तेन निष्पन्न. । अनु० २५१ । सामान्यशास्त्रनिष्पन्न. ।आव०५८ ।

ओघनिष्पन्ननिक्षेपः । ठाणा० ६ ।

ओघरूपा-सामाचारीविशेषः । उत्त० ५४७ ।

ओघसामाचारी-सामाचार्याः प्रथमभेद । व्य०प्र०१९ आ । ओघनिर्युक्ति । ओघ० १ ।

ओघसामाचार्युपक्रमकालः-सामाचार्युपक्रमकालस्य प्रथमो भेद' । ओघ० १ ।

ओघस्सरा । जं० प्र० ४०७ ।

ओघा-उन्मुखा निरीक्षमाणा । व्य० प्र० १३० अ ।

ओघाडिज्जइ-उद्घाट्यते-बाह्यः क्रियते । आव० ६९७ ।

ओघादेसेणं-सामान्यत । भग० ८६३ ।

ओघाययण-ओघायतनानि यानि प्रवाहत एव पूज्य-स्थानानि तडागजलप्रवेशौघमार्गों वा । आवा० ४११ ।

ओचार-अपचारि-दीर्घतरधान्यकोष्ठाकारविशेषः । अनु०१५१

ओचिया-आरोपिता । जीवा० १९९ ।

ओचूल-अवचूला -प्रलम्बगुच्छा. । जं०प्र०२६५ । प्रलम्ब-मानगुच्छ. । औप० ७० । भग० ४८० । जं० प्र० ५३० ।

ओचूलग- अवचूलकं-अधोमुखाञ्चल, मुत्कलाञ्चलम् । जं० प्र० २४७ ।

ओच्छगं--वस्त्र, आलिङ्गनम् । आव० ६८२ ।

ओच्छन्नपरिच्छन्न-अवच्छन्नपरिच्छन्न - अत्यन्तमाच्छादित । जीवा० १८८ ।

ओच्छवियं-अवच्छादितम् । ज्ञाता० २८ ।

ओच्छाइय-आच्छादित'-निरुद्ध । प्रश्न० १३४ । अवच्छा-दित । ज्ञाता० २८ ।

ओच्छाहिओ-उत्साहित'-उत्कर्षित. । पिण्ड० १३४ ।

ओज-ओज'-बलम् । प्रश्न० ११६ । आहारादि । भग० २० ।

ओजःप्रदेशं घनचतुरस्रं-सप्तविंशतिपरमाण्वात्मकं सप्तविंशतिप्रदेशावगाढ च, तत्र नवप्रदेशात्मकस्यैव पूर्वोक्तस्य प्रतरस्याध उपरि च नव नव प्रदेशाः स्थाप्यन्ते, तत सप्तविंशतिप्रदेशात्मकमोज प्रदेशं घनचतुरस्रंभवति। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं घनत्र्यस्रं-पञ्चत्रिंशत्परमाणुनिष्पन्न पञ्चत्रिंशत्प्रदेशावगाढं च, तच्चैवं-तिर्यग् निरन्तरा पञ्च परमाणव स्थाप्यन्ते, तेषा चाधोऽध क्रमेण तिर्यगेव चत्वारस्त्रयो द्वावेकश्चेति पञ्चदशात्मक प्रतरो जात, अस्यैव च प्रतरस्योपरि सर्वपङ्क्तिष्वन्त्यान्त्यपरित्यागेन दश, तथैव तदुपर्युपरि षट् त्रय एकश्चेति क्रमेणाणव स्थाप्यन्ते, एते मिलिता पञ्चत्रिंशद्भवंति। प्रज्ञा० १।

ओजःप्रदेशं घनवृत्तं-सप्तप्रदेश सप्तप्रदेशावगाढं च, तच्चैव-तत्रैव पञ्चप्रदेशे प्रतरवृत्ते मध्यस्थितस्य परमाणोरुपरिष्टादधस्ताच्च एकैकोऽणुरवस्थाप्यते, तत एव सप्तप्रदेश भवति। प्रज्ञा० ११।

ओज प्रदेशं प्रतरचतुरस्रं-नवपरमाण्वात्मकं नवप्रदेशावगाढ च, तत्र तिर्यग् निरन्तर त्रिप्रदेशास्तिस्र पङ्क्तय स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं प्रतरत्र्यस्रं-त्रिप्रदेशं त्रिप्रदेशावगाढं च तच्चैवं-पूर्वं तिर्यगणुद्वय न्यस्यते, तत आद्यस्याध एकोऽणु। प्रज्ञा० ११

ओजःप्रदेशं प्रतरायतं-पञ्चदशपरमाण्वात्मकं पञ्चदशप्रदेशावगाढ च, तत्र पञ्चप्रदेशात्मिकास्तिस्र पङ्क्तयस्तिर्यक् स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं श्रेण्यायतं-त्रिपरमाणु त्रिप्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रय स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० ११।

ओजःप्रदेशप्रतरवृत्तं-पञ्चपरमाणुनिष्पन्नं पञ्चाकाशप्रदेशावगाढं च, तद्यथा-एक परमाणुर्मध्ये स्थाप्यते, चत्वार क्रमेण पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु। प्रज्ञा० ११।

ओज्झा-उपाध्याय। दश० २४२।

ओझा-तुलादंडवद्द्वयोरपि मध्ये वर्तते म। वृ०प्र० १६० अ।

ओट्टिय-औष्ट्रिकम्। आव० ४२५।

ओडादि। ठाणा० २०३।

ओढणपरिहाणेसु। नि० चू० प्र० १४० आ।

ओढेऊणं। ओघ० २१७।

ओणए-अवनत, उत्तमाङ्गप्रधानं, प्रणमनमित्यर्थ। सम० २४। आसन्नम्। भग० ३५।

ओणता-अवनता। आव० २३७।

ओणमओ-अवनमत। ओघ० १७८।

ओणमित्ता-अवनम्य। आव० २३७।

ओणयं-उत्तमांगप्रधानं प्रणमनम्। वृ० तृ० १० अ। अवनति' अवनत-उत्तमाङ्गप्रधान प्रणमनम्। आव० ५४२। अवनत'। आव० २७७।

ओणामिणी-अवनामिनी-विद्याविशेष। दश० ४१।

ओतपोतं-(देशी०) आकीर्णम्। वृ० द्वि० ११९ अ।

ओतपोयं-(देशी०) मालयन्ति,। वृ० तृ० ७० अ।

ओतप्रोत-तद्रूप। भग० ६५।

ओतारो-अवतार। आव० ३८४।

ओतिन्नो-अवतीर्ण-गन्तुमुपक्रान्त। उत्त० २४७।

ओदइ-पश्यति। नदी ९९।

ओदइए-कर्मणामुदयेन निर्वृत्त औदयिक कर्मोदयापादितो गत्याद्यनुभावलक्षण। सूत्र० २३०।

ओदइयभावमूल-औदयिकभावमूलं-वनस्पतिकायमूलत्वमनुभवन्नामगोत्रकर्म्मोदयात् मूलजीव एव। आचा० ८८।

ओदग्गे-उत्कट उदग्रवय स्थितत्वेन वा उदग्रः। उत्त०३४९।

ओदण-ओदन। ओघ० २१५। कुरो। नि० चू० प्र० ५८ आ।

ओदनं-हिङ्ग्वादिभिरसस्कृत ओदनादि'। ठाणा० २२०। भक्तम्। उत्त० २७२।

ओदरा। नि० चू० द्वि० २२ अ।

ओदरिअ-औदरिका.-भट्टपुत्रा.। ओघ० ९५।

ओदारं-प्रधानं तीर्थकरादिशरीराणि प्रतीत्य। सम० १४२।

ओदूढो-आशातित', थूत्कृत'। उत्त० ३५६।

ओद्देसिकं-यावन्त. केचन भिक्षाचरा समागच्छन्ति तावन्त' सर्वानुद्दिश्य यत् क्रियते तत्। वृ० प्र० ८३ अ।

ओधाइओ-अवधावितः। आव० ४२४।

ओधूणण-अवधूननम्-अपूर्वकरणेन कर्म्मग्रन्थेर्भेदापादनम्। आचा० २९७।

ओपल्ला-अपदीर्णा, कुण्ठीभूता। ज्ञाता० १९२।

ओवद्धओ-विद्यादायकादिप्रतिजागरक। ठाणा० १६५।

ओवद्धपिंडितो-अवबद्धपिण्डिक । उत्त० २९५।

ओवारं-अवद्वारम् । आव० ३४९ ।

ओवोलेउं-उद्वुडयितुम् । आव० १९७।

ओभावणा-उवहावणा-परिभव । ओघ० १३१ । अपभावना-लाघवम् । बृ० प्र० २७९ अ ।

ओभासंति-अवभासयन्ति-सप्रकाशा भवन्ति । भग०३२७। अवभासयन्ति । सूर्य० ६३ ।

ओभासंतो-अवभासयन् । ईषदुद्द्योतयन् । जं०प्र० ४६१ ।

ओभास-अवभास-प्रभा । ज्ञाता० ४ । अवभास, प्रभाविनिर्गम । प्रज्ञा० ८० । प्रतिभाविनिर्गम । जीवा० १०७। पञ्चपष्टितमो ग्रह । जं० प्र० ५३५ । षष्ठपष्ठितमो महाग्रहविशेष । ठाणा० ७९ ।

ओभासइ-अवभासते । आविर्भवति, प्राप्यते इति। सूत्र० २१४ । अवभासयति-प्रकाशयति । सूर्य० ६ ।

ओभासणता । नि० चू० प्र० २४७ अ ।

ओभासिज्ज-अवभाषेत-दातारं याचेत् । आचा० ३४० ।

ओभासिज्जा-अवभाषेत-याचेत । आचा० ३५२ ।

ओभासित्तं-अवभाषितं-याचितं याचनं वा ।बृ०द्वि०१४२अ।

ओभासी-अवभासते-प्रतिभाति, अवभाषते-याचत इत्येवं-शीलोऽवभासी । ठाणा० २०७।

ओभासेई-अवभासयति-ईषत्प्रकाशयति । भग० ७८ ।

ओभुग्ग-अवभुग्नं-वक्रम् । ज्ञाता० १३८ ।

ओमंथ-पात्रमवाङ्मुखम् । बृ० प्र० १०७ आ ।

ओमंथियं-अधोमुखीकृतम् । विपा० ४९ । निरय० ६ । ज्ञाता०३३ । अवाङ्मुखम् । बृ० तृ० १९८ आ। ठाणा०२९९।

ओम-बाल । ओघ० १५१ । लघुपर्याय । ओघ० १८५। अवं-दुर्भिक्षम् । ओघ० ११, १८, ६३ । पिण्ड०७७ । आव० ५३६ । न्यूनम् । आव० १३० । दुर्भिक्षम् । नि० चू० प्र० १८३ आ । नि० चू० प्र० ५४ आ । अवमानि-अमाराणि । उत्त० ३५९ । अवमरात्निक । बृ० द्वि० १९ अ । दुर्भिक्षम् । व्य० प्र० १९८ आ । अवम-हीनम् । आचा० १६४ । ऊण । दश० चू० १६२ । ऊनम् । उत्त० ६०४ । अवमा-न्यूना । उत्त० ५३७। पर्यायलघु । ओघ० १५० । अवमम् । न्यूनम् । दश० २७२ ।

ओमचरओ-ओमत्ति-अवमसुपलक्षणत्वादवमौदार्यं चरति-आसेवते अवमचरक-न्यूनत्वासेवक । उत्त० ६०६ ।

ओमचेलिए-अवमचेलिक, असारवस्त्रधारी। आचा०३९७

ओमच्छगरयहरणं-उन्मस्तकरजोहरणम् । आव० ६३८ ।

ओमज्जायणं-अवमज्जायनं, पुष्यगोत्रविशेष. । जं०प्र०५०० ।

ओमत्तं-अवमत्व-ऊनता । भग० ७४२ । अवमता-हीनत्वम् । प्रज्ञा० ३०३ ।

ओमत्थिअ-उद्घाटमस्तक-, प्रच्छन्न इति । ओघ० १५ ।

ओमत्थिय-ओमत्थित., अधोमुखीकृत । ओघ० १४१ ।

ओमद्दिया-उन्मर्दिका-बहुमर्दनकारिका । भग० ५४८ ।

ओमया-पराजय, पश्चाद्भवनम् । बृ० द्वि० ७१ अ ।

ओमरत्त-अहोरात्रम् । ओघ० ११६ । अवमा-हीना रात्रिरवमरात्रो-दिनक्षय । ठाणा० ३६९ ।

ओमराइणिओ-अवमरात्निक । ओघ० १५० ।

ओमराइणिय-अवमरात्निक । आव० ७९३ ।

ओमरायणिको-अवमरात्निक । ओघ० १९२ ।

ओमाणं-प्रवेश । उत्त० ५५२ ।अपमानम् । बृ०तृ० १२०अ । ससवत्तिय । नि० चू० प्र० २०५ आ। अवमानानि-क्षेत्रादीना प्रमाणानि हस्तादीनि । ठाणा० ८६ । अवमानं-स्वपक्षपरपक्षप्राभृत्यजं लोकावहुमानादि । दश० २८० ।

ओमानं-अवमानं-अवमम् । बृ० प्र० २९० आ ।

ओमुयं-उल्मुकम् । ओघ० ११२ ।

ओमोअं-अवमोचक, आभरणम् । जं० प्र० १८८ । अवमुच्यते-परिधीयते यस्सोऽवमोचक -आभरणम् ।जं०प्र०१८८ ।

ओमोअर- अवम-न्यूनमुदर-जठरमस्यासाववमोदरस्तद्भाव अवमौदर्यं -न्यूनोदरता । उत्त० ६०४। अल्पाहाराख्यम् । उत्त० ६०४ ।

ओमोदरिता-दुब्भिक्ख । नि० चू० प्र० ७५ अ ।

ओमोदरिए-अवमोदरिका,धर्म्मधर्म्मिणोरभेदाद वा अवमोदरिक -साधु । भग० २९३ ।

ओमोयं-अवमुच्यते-परिधीयते यः सोऽवमोक -आभरणम् । भग० ५४३ ।

ओमोयरण-अवमं च तदुदर चावमोदर तस्मात्करोत्यर्थे णिचि ल्युटि चावमोदरण, अवमोदरकरणम् । उत्त० ६०४ ।

ओमोयरिय–अवमौदर्य–दुर्भिक्षम् । आव० ६२६ । अवम–न्यूनमुदर–जठरमस्यासाववमोदरस्तद्भाव अवमौदर्य–न्यूनोदरता । उत्त० ६०४ ।

ओमोयरिया–अवमं- ऊनमुदर–जठर अवमोदरं तस्य करणमवमोदरिका । ठाणा० ३६४ । अवमं–ऊनमुदर–जठर यस्य स, अवमं चोदर अवमोदर तद्भावोऽवमोदरता, अवमोदरस्य वा करणमवमोदरिका । ठाणा० १४८ ।

ओम्मिमालिणी–और्मिमालिनी–नदीविशेष ।ज०प्र०३५७।

ओयं–रसम् । (त०)

ओयंसी–ओजस्विन'–मानसावष्टम्भयुक्ता' । भग० १३६ । ओज –मानसोऽवष्टम्भस्तद्वान् ओजस्वी । राज० ११८ । निरय० २ । ज्ञाता० ७ । ओजस्विन –मानमवलोपेतत्वात् । सम० १५६ ।

ओय–ओजः–आहारग्रहणे प्रथमो भेद । ठाणा०९३ । ओज –आर्तवम् । ठाणा० १४५ । ओज –प्रकाश' । सूर्य० ७। विषम । सूर्य० १५६ । उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूहः। प्रज्ञा० ५१० ।

ओयइ–पश्यति । विशे० ३७४ ।

ओयणं–ओदनं । सूर्य० २९३ । कूर । प्रश्न० १५३ । कूरादि । ओघ० १३३ । ओदनं–कोद्रवौदनादि । आचा० ३१३ ।

ओयत्तण–व्याघात । पिण्ड० १६२ ।

ओयत्तति–परावर्त्तते । दश० १०८ ।

ओयन्ने–ज्ञाताया सप्तदशमध्ययनम् । आव० ६५३ ।

ओयपएस–विषमसंख्यप्रदेश । भग० ८६१ ।

ओयरह–अवतरत । आव० ३५२ ।

ओयरिआ–औदरिकानाम–यत्र गता तत्र रूपकादिक प्रक्षिप्य समुद्दिशन्ति, समुद्देशनानन्तर भूयोऽप्यग्रतो गन्छन्ति । बृ० द्वि० १२५अ ।

ओयरिया–औदरिका–उदरभरणैकचित्ता । ओघ० ७१ ।

ओयवणं–साधनम् । ज० प्र०–४८ ।

ओयविअं–अल्पसागारिक.–श्रावक, खेदज्ञम् । ओघ० ५१ ।

ओयविए–प्रसाधिते । व्य० द्वि० १७६आ ।

ओयवियं–सुपरिकर्मितम् । सूर्य० २९३ । तेजितम् । जीवा० १६४ । विशिष्ट परिकर्मितम् । जीवा० २३२ । परिकर्मितम् । जीवा०२७२ । परिकर्मितम् । प्रश्न० ८१ ।

ओयविया–कुशला । बृ० तृ० ५८अ ।

ओयवेइ–उपैति । आव० १५० ।

ओयसंठिती–ओजस – प्रकाशस्य संस्थिति –अवस्थानम् । सूर्य० ७९ ।

ओया–ओज'–प्रकाश । सूर्य० ७९ ।

ओयाए–उपायात –उपागतः । भग० ३१९ । सम्प्राप्त । निरय० ६ । उपायात –उपागत । ज्ञाता० १६७ । ओजसा–दाहापनयनादिस्वकार्यकरणशक्त्या । ज्ञाता०१७० ।

ओयाणेत्ति–अनुश्रोतोगामिनी, पानीयानुगामिनी । नि० चू० प्र० ४४आ ।

ओयारिया–अवतारिता । आव० ६८५ । अवतारिका । आव० ३५० ।

ओयारो–अवतार.–जलमध्यप्रवेशनम् । जीवा० १९७ ।

ओयाहारे–ओज –उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूह, ओज आहारो येषां ते ओजआहारा । प्रज्ञा० ५१० । तैजसेन कार्मणेन च शरीरेणौदारिकादिशरीरानिष्पत्तेर्मिश्रेण च य आहार स सर्वोऽपि ओजाहार, औदारिकादिशरीरपर्याप्त्या पर्याप्तकोऽपीन्द्रियानपानभाषामन पर्याप्तिभिरपर्याप्तक शरीरेणाहारयन ओजाहार' । सूत्र० ३८३ ।

ओयो–सजमो । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओरब्भं–औरभ्रं–उत्तराध्ययनेषु सप्तममध्ययनम् । उत्त० ९।

ओरस–आन्तर । भग० ६३१ ।

ओरस्स–उरसि भवं–औरस्य–शरीरबलम् । सूत्र० १६६ ।

ओरस्सबली–महापराक्रमा । बृ० तृ० १७४ आ ।

ओरालं– विस्तरवत्, समयपरिभाषया मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धम् । प्रज्ञा० २६९ । मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धम् । ठाणा० २९५ । उदार–अत्यद्भुतम् । सूर्य० २९४ । उदार –प्रधान । भीम । औप० ८४ । ओरालं–आशंसारहिततया प्रधानम् । भग० १२५ । उदारः–प्रधान । भग० १२ । भीम –भयानक । ज्ञाता० ७ । स्फाराकार । राज० ११९ । भीष्म, उग्रादिविशेषणविशिष्टतप करणत पार्श्वस्थानामल्पसत्त्वाना भयानक । जं० प्र० १६ । भग० १२ । सूर्य० ५। उदार ।जीवा० ३२० । एकेन्द्रियापेक्षया प्राय स्थूला द्वीन्द्रियादय इति । उत्त० ६०३।

ओरालतसा-त्रसत्वं तेजोवायुष्वपि प्रसिद्धं अतस्तद्व्यवच्छेदेन द्वीन्द्रियादिप्रतिपत्त्यर्थमोरालग्रहणम् ।ठाणा०३३५।

ओराला तसा-औदारिकत्रसा -स्थूरत्रसा ।जीवा० २८ ।

ओरालवण्णकित्तिसद्दा-उदारवर्णकीर्तिशब्दा· । आव० २९३ ।

ओरालसरीरे-उदारशरीर । उत्त० ३२५ ।

ओरालाइं-मनोहराणि ।ठाणा० २९४ ।उदाराणि-आशंसादोषरहिततयोदारचित्तयुक्तानि । ठाणा० २४७ ।

ओरालिए-उदार-प्रधानं, विस्तरवत्, उरल-विरलप्रदेशं न तु घन, ओराल-समयपरिभाषया मासास्थिस्नाय्वाद्यवबद्ध तदेव शरीर, उदारमेव औदारिकम् । प्रज्ञा० २६८ ।

ओरालिय-औदारिकम् । प्रज्ञा०४६९ । उदारमेव-प्रधानमेव वृहदेव वा औदारिकम् । जीवा० १४ । उदार-प्रधान उदारमेव औदारिकम् । ठाणा० २९५ ।

ओरालियसरीरणाम-यदुदयादौदारिकशरीरप्रायोग्यान् पुद्गलानादाय औदारिकशरीररूपतया परिणमयति परिणमय्य च जीवप्रदेशै सह परस्परानुगमरूपतया सम्बन्धयति तदौदारिकशरीरनाम । प्रज्ञा० ४६९ ।

ओरालियशरीरा-औदारिकशरीरा· । आव० ७९९ ।

ओरुहइ-अवतरति । आव० १८६ ।

ओरोहं-अवरोधं, अन्त.पुरम् । उत्त० ३०७ । अंतेपुरं । नि० चू० प्र० ८०अ ।विपा० ८२ ।अवरोध -प्रतोलिद्वारेष्ववान्तरप्राकार ।औप० ३। प्रतोलीद्वारेष्वन्त प्राकार । राज० ३ । अवरोधः-अन्त पुरम् । उत्त० १२० । अवरोध । आव० ३५९ । प्रतोलीद्वारेष्ववान्तरप्राकार । ज्ञाता० २ ।

ओलंडेंति-उल्लङ्घयन्ति । ज्ञाता० ६२ ।

ओलंडेह-उल्लङ्घयत । दश० ९९ । आव० ३५० ।

ओलंब-अवलम्बं-अवलम्बनस्थानम् । ज० प्र० ५२९ ।

ओलंबणदीव-शृङ्खलावद्धद्वीप । भग० ५४७ ।

ओलंबितो-अवलम्बित । उत्त० १२५ ।

ओलइओ-अवलगित । आव० २९७ ।

ओलइयं-अवलगितं-गोपितम् । उत्त० ११६ ।

ओलएइ-उपलगयति । आव० २१७ ।

ओलगिउं-अवलगितुम् । उत्त० ३०० ।

ओलग्गए-अवलगक । आव० १७६ ।

ओलग्गति-अवलगति-अनुसरति । उत्त० ८७ ।

ओलग्गयमणूसो-अवलगकमनुष्य । आव० ९२ ।

ओलग्गा-सेवा । परिचर्या । दश० ९७। जीर्णा । ज्ञाता० २८ ।

ओलग्गाए-अवलगनया । आव० ९० ।

ओलग्गिउं-अवलगितुम् । आव० ७१६ ।

ओलग्गिऊ-अवलगितुम् । दश० ९७।

ओलग्गिज्जामि-अवलगामि । आव० ३५६ ।

ओलग्गिता-सेवितुमारब्धा । आव० ८१८ ।

ओलग्गिय-अवलगित । आव० ४०१ ।

ओलिंति-अवलीयन्ते-प्रत्यागच्छन्ति । विशे० ८५३ ।

ओलिकापातः । ओघ० २०७ ।

ओलित्त-अवलिप्त । भग० २७४। आव० ५५९।

ओलित्ता-द्वारदेशे पिधानेन सह गोमयादिना अवलिप्ता. ।ठाणा० १२४ ।

ओलिहति । नि० चू० प्र० १९०अ

ओलुग्गसरीरा-भग्नदेहा. । विपा० ४९ । निरय० ९ । अवरुग्णमिव-जीर्णमिव शरीर यस्या सा, अवरुग्णा वा चेतसा अवरुग्णशरीरा । ज्ञाता० २८ ।

ओलुग्गा-अवरुग्णा-भग्नमनोवृत्ति ।विपा० ४९। निरय०९। क्षीणा । आव० ७१६ ।जीर्णा । ज्ञाता० ३३ ।

ओलुहति-अवरोहति । आव० १८१ ।

ओलेंति-परिभ्रमन्ति । आव० २७४ ।

ओलेत्ता-आर्द्रयित्वा । आव० २०९ ।

ओलोयणं-अवलोकनम् । आव० २२४, ३७८ ।

ओलोयणगए-अवलोकनगतम् । उत्त० ९१ ।

ओलोयणट्ठिओ-अवलोकनस्थित । आव० १४५ ।

ओलोवणे । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओल्यां-पनके वा आगन्तुकप्रतनुद्रवरूपे कर्दम एव ओल्याम्। ठाणा० ३२८ ।

ओल्लं-वासं । नि० चू० प्र० ६७अ ।

ओल्लि । नि० चू० प्र०' १२१अ ।

ओवइया-त्रीन्द्रियजीवविशेष । प्रज्ञा० ४२ ।

ओवक्कमियं–उपक्रम्यतेऽनेनायुरित्युपक्रमो ज्वरातीसारादिस्तत्र भवा या सा औपक्रमिकी। ठाणा० २७।

ओवक्खडितं–उपस्कृतम् । आव० ३५३ ।

ओवग्गहिओ-औपग्रहिक । उवग्गहित –गच्छमाहारणो। ओघ० ९२ ।

ओवज्झणं–प्रवाहे वहन । बृ० तृ० २२९अ ।

ओवट्टणा–वालना पश्चादानयनम् । बृ० द्वि० ८५आ ।

ओवणिहिए–उपनिहित यथा कथञ्चित् प्रत्यासन्नीभूतं तेन चरति य स औपनिहितिक, उपनिधिना वा चरतीति स औपनिधिक । औप० ३९ ।

ओवतिउं–अवपतितु–जेतुम् । दश० ५० ।

ओवत्तिया अपवर्त्य–अग्निनिक्षिप्तेन भाजनेनान्येन वा दद्यात्। दश० १७५ ।

ओवमिए–उपमया निर्वृत्तमौपमिक, उपमामन्तरेण यत्काल-प्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतुं न शक्यते तदौपमिकम्। ज० प्र० ९२ । उपमया निर्वृत्तमौपमिकं, उपमानमन्तरेण यत्कालप्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतु न शक्यते तदौपमिकम्। अनु० १८१ ।

ओवमिय–उपमया निर्वृतं औपमिकम्, उपमामन्तरेण यत् कालप्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतु न शक्यते तदौपमिकम्। भग० २७६ ।

ओवम्मं–औपम्य–उपमा । उत्त० ३२१ । उपमानमुपमा सैवौपम्यं–सदृश । ठाणा० २६२ ।

ओवमसच्चा–औपम्यसत्या –पर्याप्तिकसत्याभाषाया दशमो भेद । प्रज्ञा० २५६। उपमैवोपम्य तेन सत्य औपम्यसत्यम्। सत्याभाषाया दशमो भेद । ठाणा० ४८९। औपम्यसत्य नाम समुद्रवत्तडाग । सत्याभाषाया दशमो भेद । दश० २०९ । उपमीयते–सदृशतया गृह्यते वस्त्वनयेत्युपमा सैव औपम्यम् । भग० २२२। उपमानमुपमा सैवौपम्य अनेन गवयेन सदृशोऽसौ गौरिति सादृश्यप्रतिपत्तिरूपम् ।ठाणा०२५४।

ओवयइ–उत्पतति–ऊर्ध्व गच्छति । भग० १७९ ।

ओवयण–अवपदन–प्रोह्वनकम् । ज्ञाता० ४३ ।

ओवयमाण–अवपततो–व्योमाङ्गणादवतरत । ज्ञाता०४६। अवपतन् । ज्ञाता० १६६ ।

ओवयारिअविणय। औपचारिकविनय –विनयस्य द्वितीयो भेद । दश० ३१ ।

ओवरणं–अपवरकम् । आव० ५६० ।

ओवरिऊण–अवतीर्य । उत्त० ११९ ।

ओवसमिए-कर्मोपशमेन निर्वृत्त औपशमिक कर्मानुदयलक्षण । सूत्र० २३० ।

ओवहिए–औपधिक –उपधिना–छद्मना चरतीत्यौपधिक । उत्त० ६५६ ।

ओवहिया–औपधिका–मायाप्रयोजना–कषायप्रत्यया, उप-करणप्रयोजना वा । औप० १०७ ।

ओवाइणित्तए–उपादातु–ग्रहीतुं, प्रवेष्टुम् । ठाणा० १५७।

ओवाइयं–उपयाचितम् । विपा० ७७। याचितस्य–प्रार्थि-तस्य प्राप्तेरुपरि देवेभ्यो देयम् । उत्त० १३८ । उपया-चितम् । आव० ७०९ ।

ओवाई–ओलावयप्रधाना विद्या । आव० ३१९ ।

ओवाय–उपाये–मृदुपरुषभाषणादौ भवं औपाय, उपपतनमुप-पात –समीपभवनं तत्र भव औपपात–गुरुसस्तारास्तरण-विश्रामणादिकृत्यम् । उत्त० ५८ । विघ्नम् (मर०) अवपात –निर्देश । सूत्र० २४२। अवपात –प्रपातस्थान, यत्र चलन् जन सप्रकाशेऽपि पतति। जं० प्र० १२४ । अवपात –गर्त्तादिरूपम् । दश० १६४। अवपात –गर्त्ता-विशेष । प्रश्न० २२ ।

ओवायकारी–उपपातकारी–आचार्यनिर्देशकारी, यथोपदेशं क्रियासु प्रवृत्त, सूत्रोपदेशप्रवर्त्तक । सूत्र० २३४ । अव-पातो–निर्देशस्तत्कार्यवपातकारी–वचननिर्देशकारी सदा आज्ञा-विधायी । सूत्र० २४२ ।

ओवासो–अवकाश । दश० ५८ ।

ओवाही–विशेषेण उपाधीयत इति चोपाधि । आचा० १७४।

ओविअ–ओपित–परिकर्मितम् । भग० ४७८ । ओपित – उज्ज्वालित । जं० प्र० २००, ४६ ।

ओविय–परिकर्मितम् । औप० २४, ६६ । राज० ४८। उज्ज्वलित । ज्ञाता० २२१ । ओपित -परिकर्मितम् । प्रश्न० ७६ । ज्ञाता० १९ ।

ओविया–आरोपिता । ज० प्र० ४३ ।

ओवीलं–अवपीड–शेखरं, उपपीडा वा वेदना । विपा०७२ ।

ओवीलए-अपव्रीडयति विलज्जीकरोति यो लज्जया सम्यगनालोचयन्त मर्त्यं यथा सम्यगालोचयति तथा करोतीत्यपव्रीडक । ठाणा० ४०४ ।

ओव्वत्तिऊण-अपवर्त्त्य । ओघ० ३१ ।

ओव्विग्गमणो-उद्विग्नमनाः । आव० २२० ।

ओष्ट-दन्तच्छद । आचा० ३० ।

ओस-अवश्याय', शरत्कालभावी श्लक्ष्णवर्ष । उत्त० ३३४। क्षपाजलम् । ठाणा०२८७। अवश्याय -स्नेह । दश०१५१। अवश्याय -शरदादिषु प्रभातिकसूक्ष्मवर्षं । उत्त० ६९१।

ओसक्कइत्ता-उत्ष्वष्क्य-उत्सृत्य लब्धावसरतयोत्सुकीभूय। अवष्वष्क्य-अपसृत्यावसरलाभाय कालहरण कृत्वा यो विधीयते स तथा । ठाणा०३१५ । अवसर्प्य, प्राप्य वा । आव० १९ ।

ओसक्कणं-रन्धनवेला । ओघ० १४८ । अवष्वष्कणम्, विवक्षितविध्वंसनादिकालस्य ह्रासकरणम् , अर्वाक्करणम् । बृ० प्र० २६१आ । अवष्वष्कणं-स्वयोगप्रवृत्तनियतकालावधेरर्वाक्करणम् । पिण्ड० ९१ ।

ओसक्किय-प्रज्वाल्य । आचा० ३४५ ।

ओसक्किया-अवसर्प्य, अतिदाहभयादुल्मुकान्युत्सार्येत्यर्थ । दश० १७५ ।

ओसढ-उत्सृत -उपघातेभ्यो निर्गत । दश० २१९ । एमंगितं । नि० चू० द्वि० १८आ ।

ओसण्ण-चिरायण अपरिभोगट्ठाणं। नि० चू० प्र० १९३अ । ओमन्नं-बाहुल्यम् । प्रज्ञा० ५०३ । बाहुल्येन । भग० ३०८। अवसन्ना-श्रान्ता । भग० ५०२ । ओ यो वा सजमो तमि सण्णो ओसण्णो । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओसण्णद्धो-अपसन्नद्ध' । उत्सन्नद्ध । आव० ७१२ ।

ओसत्तमल्लदामा । आचा० ४२३ ।

ओसत्तो-उत्सक्त -उपरिसबद्ध' । औप० ५ । ज्ञाता० ४ ।

ओसधी-वण्णाइफला अबादिया । नि० चू० द्वि० १५७अ ।

ओसधीओ । ठाणा० ८० ।

ओसन्न-उत्सन्नं-प्रायेग । विशे०९२६। अवसन्न'-विवक्षितानुष्ठानालसः, आवश्यकस्वाध्यायप्रत्युपेक्षणाध्यानादीनामसम्यक्कारीत्यर्थ । ज्ञाता० ११३ । बाहुल्यलक्षणम् । भग० २१ । प्राय । भग० ३०९ । प्रवृत्ते- प्राचुर्यं बाहुल्य, बाहुल्येनानुपरतत्वेन । ठाणा० १८९ । प्रायस । आव० २८५ । उत्सण्णं-प्राचुर्येण । प्रश्न० २२ । अवसन्न -सामाचार्यसेवनेऽवसन्नवत् अवसन्न । आव० ५७ । एकान्तः । बृ० प्र० ११आ ।

ओसन्नकारणं-बाहुल्यं, बाह्यकारणम् । प्रज्ञा० २२३ । बाहुल्यकारणम् । प्रज्ञा० ५०३ ।

ओसन्नदोसे-बाहुल्येनानुपरतत्वेन दोषो हिंसादीना चतुर्णामन्यतर ओसन्नदोष । ठाणा० १८९ ।

ओसन्नया-पराभव. । उप० मा० गा० ३०० ।

ओसन्नविहारी-अवसन्नाना विहारो-बहूनि दिनानि यावत्तथा वर्त्तन अस्यास्तीति अवसन्नविहारी । ज्ञाता० १११ ।

ओसप्पिणि-अवसर्पति हीयमानारकतयाऽवसर्पयति वा-क्रमेणायु शरीरादिभावान् ह्रापयतीत्यवसर्पिणी । जं० प्र० ८९ । दशकोटीकोट्य सागरोपमाणां सुषमसुषमाद्यरकक्रमेण अवसर्पिणी । जीवा० ३८५ ।

ओसप्पिणी-अवसर्पन्ति-प्रतिसमयं कालप्रमाण जन्तूना वा शरीरायुःप्रमाणादिकमपेक्ष्य ह्रासमनुभवन्त्यवश्यमिति अवसर्पिण्यः, दश सागरोपमकोटिकोटीपरिमाणा । उत्त० ६५७। अवसर्पिणी-अवसर्पति हीयमानारकतया अवसर्प्यति वाऽऽयुष्कशरीरादिभावान् ह्रापयतीति, सागरोपमकोटीकोटीदशकप्रमाणः कालविशेष । ठाणा० २७ । अवसर्प्पिणी-दशसागरोपमकोटाकोटिमाना । अनु०९९ । कालविशेष. । आव० १२०, भग० ८८८ । दशसागरोपमकोटीकोट्यः प्रमाणा । ठाणा० ८६ ।

ओसमणं-व्यवशमनम् । बृ०द्वि० ७७अ ।

ओसरइ-अपसर्पति । उत्त० ५३ । अपसरति । उत्त० ३०२ । आव० ६४०, ३५९ ।

ओसरणं-बहूना साधूनामेकत्रमीलनम् । बृ०तृ०२१८आ । समवसरणम् । बृ०प्र०२७०आ । चउ० । व्याख्यानश्रवणादि । बृ०द्वि०२५२आ । अवसरणं-साधुसमुदाय. । पिण्ड०९२ ।

ओसरणा-आर्यिकाणामुपकरणविशेष । ओघ० २०९ ।

ओसरिऊण-अपसृत्य । आव० २९२ ।

ओसरिओ-अपसृत । आव० ४०५ ।

ओसरित्ता-अपसृत्य । आव० ९१३ । व्युत्सृज्य । आचा० ।

ओसरे-अवसर्पन्ति । आव० ६१८ ।

ओसवणं-प्रशमनम् । नि० चू० प्र० २०७ अ ।
ओसह-औषध । अन्तरुपयुज्यते । ओघ० १३४ । एकाङ्गम् । प्रश्न० १५३ । महातिक्तकघृतादि । भग० ३२६ । केवलहरीतक्यादि, अन्तरुपयोगि वा । पिण्ड० १९ । एकद्रव्यरूपम् । विपा० ४१ । ज्ञाता० १८१ । त्रिकटुकादि । ज्ञाता० १३६ । आव० ११५ । उत्त० १४२ । हरितक्यादि । ओघ० ६८ । एलायचूर्णगादि । नि० चू० प्र० ७६अ । बहुद्रव्यसमुदाय । नि०चू०प्र० १४४आ । एकद्रव्याश्रय, त्रिफलादि । औप० १०० ।
ओसहङ्गं-औषधाङ्गम् । औषधकारणम् । उत्त० १४२ ।
ओसहजुत्ती – ओषधयुक्ति –ओषधादीना–अगुरुकुंकुमादीना सज्जिकाराजिकादीनां च युक्ति –योजनं समविषमविभागनीतिर्वा । उत्त० ३० ।
ओसहाइ-औषधादि–अगुरुकुंकुमादि सज्जिकाराजिकादि च । उत्त० ३० ।
ओसहि-औषधय, फलपाकान्ता, ते च शाल्यादय । प्रज्ञा० ३० । औषधि–शाल्यादि । भग० ३०६ । आचा० ३० ।
ओसहिपत्ता-सर्वरोगापहारित्वात्तपश्चरणप्रभवो लब्धिविशेष । प्रश्न० १०५ ।
ओसही-औषधि –जयाविजयर्द्धिवृद्ध्यादय । उत्त० ४९० । फलपाकान्ता । उत्त० ६९२ । औषधी राजधानीनाम । जं० प्र० ३४७ । औषधि –फलपाकान्ता, शाल्यादि । जीवा० २६ ।
ओसहीओ-औषधय, शाल्यादिका । जं० प्र० १६८ । सालिमातियाओ । नि० चू० प्र० १९५आ ।
ओसही तिणा-औषधितृणानि–शाल्यादीनि । उत्त० ६९२ ।
ओसा-अवश्याय –जलविशेष । आव० ५७३ । स्नेह । जीवा० २५ । स्थानविशेषः । उत्त० ३७९ । रात्रिजलम् । भग० ६९४ ।
ओसारिथ-अवसारितं–अवलम्बितम् । भग० ३१८ । ज्ञाता० २२१ । प्रलम्बीकृता । ज्ञाता० २३९ ।
ओसारेज्जा-अपसारयेत्–पाटयेत् । अनु० १७६ ।
ओसावणि । नि० चू० प्र० ७६अ ।
ओसारेयव्वो-परित्याग । नि० चू० प्र० ३४२अ ।
ओसासिअ-आवश्यकी । बृ० द्वि० २१७आ ।
ओसित्तं-अवसिक्तं, आर्द्रीकृतम् । आचा० ३२१ ।
ओसीरं-ओशीरं–वीरणीमूलम् । प्रश्न० १६३ । चन्दनम् । उत्त० १४२ । उशीरं–वीरण मूलम् । जं० प्र० ३५ । वीरणीमूलम् । ज्ञाता० २३२ ।
ओसीरपुड-पुष्पजातिविशेष । ज्ञाता० २३२ ।
ओसीसं-उच्छीर्षम् । आव० ४५३ ।
ओसीसओ-उच्छीर्षक । आव० ३५४ ।
ओसीसा-सीसस्स समीवं उवसीस । नि०चू०प्र० २४७अ ।
ओसूरो-उत्सूर्यः । आव० ४१६ ।
ओसोवणि-अवस्वापिनीम् । आव० ३७१ ।
ओस्सट्टो-उत्साह । नि० चू० प्र० २८४आ ।
ओस्सन्नं-बाहुल्येन–अनुपरतत्वेन । भग० ९२६ ।
ओस्सारेह-उत्सारयत–पारयत । उत्त० १७८ ।
ओहजलिया-चतुरिन्द्रियजन्तुविशेष । जीवा० ३२ । प्रज्ञा० ४२ ।
ओह-ओघोपधि –उपधे प्रथमो भेद यो नित्यमेव गृह्यते । ओघ० २०८ । संक्षेप । नि० चू० प्र० १७९अ । ओघ – प्रवाह । जीवा० २०७ । सामान्यं, स्वपरपृथग्विभागकरणाभावरूप । पिण्ड० ७७ । प्रवाह । उत्त० २४१ । जं०प्र० ५३, ११७ । ओघ –सामान्य श्रुताभिधानम् । दश० १५ । भवौघ, ससार, अष्टप्रकार कर्म वा । सूत्र० २९ । अविच्छेद, अविच्छुटितत्वम् । प्रश्न० ८२ । ससारसमुद्र । सूत्र० १४५ । प्रवाहेणाविच्छिन्नम् । प्रश्न० ७४ । सामान्यम् । पिण्ड० १४७ । सामान्य । आव० ३३६ । प्रवाही । जीवा० २७७ । सामान्यम् । जं० प्र० ७ । उस्सग्गो–तत्थ सव्वं कालियसुत्त ओयरति त सव्वं ओहो भण्णति । पेढिया निसीहपेढिया । नि० चू० प्र० ९७आ । सुत्ते सुत्ते ज उस्सग्गदरिसण त ओहो, जो पुण अविसिट्ठा आवत्ती सो ओहो । नि०चू०तृ० १४५आ । सामान्यमध्ययनादि नाम । ठाणा० ५ । ओघ –प्रत्यक्षोपलभ्यमानं ससारसमुद्र । दश० २५६ । सक्षेप्त । ओघ० ८८ ।
ओहजीव-ओघजीव, भावजीवस्य प्रथमो भेद । दश० १२ ।
ओहट्टं-प्रार्थितम् । ओघ० ६७ । याचित । नि० चू० प्र० १६५ अ ।
ओहनिप्फण्ण-ओघनिष्पन्न । निक्षेपभेद । दश० १५ । अङ्गाध्ययनादिसामान्याभिधानन्यास । आचा० ३ ।
ओहबले-ओघबल । अव्यवच्छिन्नबल । औप० ७८ ।

ओहय–उपहत.–विनाशित । जं०प्र०२७७ । राज्यापहारादुपहता । ठाणा० ४६३ । विनाशनेनोपहता । ज्ञाता० ५६ ।

ओहयमणसंकप्प–उपहत.–ध्वस्तो मनस संकल्पो-दर्पहर्षादिप्रभवो विकल्पो यस्य स । भग० १८० । ज्ञाता० २९ । उपहतमनःसङ्कल्प । आव ६८२ ।

ओहयहय–उपहतहत । आव० ६५० ।

ओहरति–उपहरति–विनाशयति । ज्ञाता० १९२ ।

ओहरिए–विनाशयति । ज्ञाता० १९० ।

ओहरितभारो–उत्तारितभार. । ओघ० २२७ ।

ओहरिय–अग्निकायोपरि व्यवस्थित पिठरकादिकमाहारभाजनमपवृत्त्य । आचा० ३४५ । तिरश्चीनो भूत्वा । आचा० ३४४ । पार्श्वतो मुक्तः । उप०मा०गा० ४९९ ।

ओहसभोग–ओघसभोग , उपध्यादिद्वादशप्रकार । व्य० द्वि० ११९आ ।

ओहसण्णा–मतिज्ञानाद्यावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनयेत्योघसञ्ज्ञा । ठाणा० ५०५ ।

ओहसन्ना–ओघसञ्ज्ञा-मतिज्ञानावरणकर्मक्षयोपशमनाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रिया, दर्शनोपयोग इति, सामान्यप्रवृत्तिर्यथा वल्ल्या वृत्त्यारोहण वा । प्रज्ञा० २२२ । मतिज्ञानावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायते वस्त्वनयेति ओघसञ्ज्ञा । दर्शनोपयोग । सामान्यप्रवृत्तिरोघसञ्ज्ञा । भग० ३१४ ।

ओहसामायारी–ओघसामाचारी–सामान्येन सक्षेपत साधुसमाचाराभिधानरूपा । विशे० ८४२ ।

ओहसियं–अवघर्षणमवघर्षितं भूल्यादिना निमज्जनम् । जीवा० २१३ ।

ओहस्सरा–ओघस्वरा–चमरेन्द्रस्य घण्टा । जं० प्र० ४०७ । ओघेन–प्रवाहेण स्वरो यासा ता ओघस्वरा । जीवा० २०७ ।

ओहा–अपभ्राजना । बृ० प्र० ९९आ ।

ओहाइया–उद्धाविताः । आव० ६६ ।

ओहाडणी–अवघाटिनी–आच्छादनहेतुकम्बोपरिस्थाप्यमानमहाप्रमाणकिलिञ्चस्थानीया । जीवा०१८० । ज०प्र० २१ ।

ओहाडिअ–अवघाटित.–आच्छादित । ज० प्र० ७३ ।

ओहाडिओ–आधाटी. । आव०२०५ । निष्कासित । आव० ३५८ ।

ओहाडियं–स्थगितम् । आव० ८८८ । स्फेटितम् । आव०२०५ ।

ओहाडिया–उद्घाटिता । आव० ५१४ । अपस्फेटिता । आव० ३६८ ।

ओहाडेइ–आच्छादयति । आव० ३७० ।

ओहाडेति । दश० चू० ८८ ।

ओहाण–उवयोगो । नि० चू०द्वि०५८आ । विहारो, धावणेण लिंगो धावणेण वा । नि० चू० तृ० ३५ अ । अवधानम्–अपसरणम् । दश० २७१ । अवधावमाना. । ओघ० ६१ । अवधावनम् । ठाणा० २११ ।

ओहाणपेही–छिद्दं अलभमाणो रातो समाहिपरिट्ठवणलक्खेण ओहावेज्जा । नि० चू० प्र० १९४अ ।

ओहाणुप्पेही–अवधावनानुप्रेक्षी । दश० ९४ ।

ओहातेज्जा–उपहन्यात् । ठाणा० ३२८ ।

ओहामिए–अपभ्राजित । आव० ६६५ ।

ओहामिओ–अपभ्राजित, हीलित । आव० ६९४ । अपभ्राजित , तिरस्कृत । ओघ० ५३ ।

ओहामिज्जइ–अवधाव्यते । आव० २९५ ।

ओहार–अधो जले नावो नेता मत्स्यविशेष । बृ०तृ०१६१आ । जलजन्तुविशेष । प्रश्न० ५१ । कच्छप । पिण्ड० १०२ । मच्छो । नि० चू० द्वि० ७८आ ।

ओहारयित्ता–अवधारयिता-शङ्कितस्याप्यर्थस्य नि शङ्कितस्यैवमेवायमित्येवं वक्ता, अवहारयिता-परगुणानामपहारकारी । सम० ३८ ।

ओहारसंखड । नि० चू० द्वि० १०७ अ ।

ओहारिणी–अवधारणी–अवधारणात्मिका । उत्त० ५६ । अवधार्यते–अवगम्यतेऽर्थोऽनयेति अवधारणी–अवबोधबीजभूता । प्रज्ञा० २४६–२४७ । सक्रिया । दश० चू० १४० । अवधारणी–अवबोधबीजभूता । भग० १४२ ।

ओहारितं–अवहृतं–गृहीतम् । आव० ८५९ ।

ओहारेमाणीओ–बीजयन्त्यः । जीवा० २३३ ।

ओहावंत–अवधावन्ते, अवसर्पन्ति । ओघ० ६२ ।

ओहावइ–अवधावति । उत्त० १३३ ।

ओहावणं–अपभ्राजनं, अपमानं, निन्दा वा । पिण्ड० १४० । अवधावनं–पार्श्वस्थादिविहाराश्रयणम् । बृ० द्वि० १६३आ । लिंगविवेकबुद्ध्या गमनम् । व्य०प्र०२४९अ । अपभ्राजना–लाञ्छना । आव० ५३७ । अपभ्राजना । आव०३१९,६६५ ।

मलना । ओघ० ९३ । गृहस्थीभवनम् । बृ०तृ०१४४अ । अपभ्राजना । उत्त०१९२ । परिभव । ओघ०१८८ । हीलना । ओघ० ७४ ।

ओहाविअ–अवधावित –अपसृत. । दश० २४७ ।

ओहाविउकामो अवधावितुकाम । उन्निष्क्रमितुकाम । उत्त० ७३३ ।

ओहावेज्जा–अवधावेत् । व्य० प्र० १६६आ ।

ओहासणं–समयपरिभाषया विशिष्टद्रव्ययाचनम् । आव० ५७६ ।

ओहासणभिक्खा–ओहासणभिक्षा–विशिष्टद्रव्ययाचनं समयपरिभाषया ओहासण तत्प्रधाना या भिक्षा । आव०५७६ ।

ओहासिअ–ओभासिअ–पार्थित । ओघ०७०। सूत्र० ३८६ ।

ओहिंजलिया–चतुरिन्द्रियजीवभेद । उत्त० ६९६ ।

ओहि–अवधि.–अवधीयतेऽनेनास्मादस्मिन्वेति ।ठाणा०३४७। रूपिमर्यादा, करणनिरपेक्षो बोधरूप । ठाणा० ४४८ । अवधीयतेऽनेनेति, अवधीयत इति, अधोऽधोविस्तृत परिच्छिद्यते मर्यादया वेति, अवधीयतेऽस्माद् अस्मिन् वा, अवधानं वा विषयपरिच्छेदनम् । आव०८ । मध्ये । ओघ०२०८ । अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकम् । परिच्छेद । मर्यादा । उत्त० ५५७ । अव–अधोऽधो विस्तृतं वस्तु धीयते–परिच्छिद्यतेऽनेनेत्यवधि , अथवा अवधिर्मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि , यद्वा अवधानं –आत्मनोऽर्थसाक्षात्करणव्यापारोऽवधि ।नंदी६५। अवधि – अवशब्दोऽध शब्दार्थ , ततश्चाध इत्यधस्ताद्धावति अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकतयेत्यवधि , औणादिको डि , यद्वा 'अवे' त्यध एव धानं धातूनामनेकार्थत्वात् परिच्छेदोऽवधि , 'उपसर्गे घो किरिति (पा. ३–३–८२) कि', अथवाऽवधि – मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरित्येवंरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि । तृतीयं ज्ञानम् । उत्त०५५७। औधिक –विशेषगरहितः । प्रज्ञा० ३४२ ।

ओहिदंसणं–अवधिदर्शनं-अवधिरेव दर्शनं-रूपिसामान्यग्रहणम् । जीवा० १८ ।

ओहिमरणं–अवधिमरण-सप्तदशमरणभेदे द्वितीय । उत्त०२३०। पञ्चविधमरणे द्वितीय. । भग० ६२४ । अवधि –मर्यादा तेन मरण अवधिमरण, यानि हि नारकादिभवनिवन्धनतयाऽऽयुकर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यति तदा तत् । सम० ३३ ।

ओहियं–औधिकम् । ओघ० २१७, १९९ । औधिकम्–निर्विशेषण नरकम् । भग० ४५ ।

ओहियमत्तगं–प्रश्रवणमात्रकम् । नि०चू०तृ० १३२आ ।

ओहिया–औघिकी–तिर्यक्स्त्री । जीवा० ५९ ।

ओही–अवधि –प्रज्ञापनायास्त्रयस्त्रिंशत्तमं पदम् । प्रज्ञा०६ । अव–अधो विस्तृतं वस्तु धीयते परिच्छिद्यतेऽनेनेति अवधिः-मर्यादा वा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधि । प्रज्ञा० ५२७ ।

ओहीपदं–प्रज्ञापनाया त्रयस्त्रिंशत्तम पदम् । भग० ७१९ ।

ओहीरमाणी–प्रचलायमाना । भग० ५४० । वारवारं ईषन्निद्रां गच्छन्तीत्यर्थ । ज्ञाता० १५ ।

ओहुय–अवधुत उल्लंघित । बृ० द्वि० ६१ अ ।

ओहे–ओघमरणं सामान्यत सर्वप्राणिना प्राणपरित्यागात्मकम् । उत्त० ३२० ।

ओहेणं–ओघेण-सङ्क्षेपेण- । ओघ० ८८ ।

ओहोवधी–ओह –सङ्क्षेपः, स्तोकः, लिङ्गकारक , अवश्यंग्राह्यः । उपधेर्भेदः । नि० चू० प्र० १७९ अ ।

ओहोवही–ओघोपधिः–उपधेर्भेद । उत्त० ५३७ । ओघोपधिः नित्यमेव यो गृह्यते ओघोपधि । ओघ० २०८ ।

औदारिकं–चन्द्रिकम् । ओघ० ९० । उपादानात्प्रभृति अनुसमयमुद्गच्छति वर्धते जीर्यते शीर्यते । तत्त्वा० २–४९ ।

औदारिकबन्धनं–यदुदयवशाद् औदारिकपुद्गलानां गृहीताना गृह्यमाणानां च परस्पर तैजसादिपुद्गलैश्च सह सम्बन्ध उपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकसङ्घातनाम–यदुदयवशादौदारिकशरीररचनाऽनुकारिसङ्घातरूपा जायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकाङ्गोपाङ्गनाम–यदुदयवशादौदारिकशरीरत्वेन परिणताना पुद्गलानामङ्गोपाङ्गविभागपरिणतिरुपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदार्यं–दाक्षिण्यम् । जं० प्र० १८४ ।

औद्देशिक–शबलस्य षष्ठो भेद । प्रश्न० १४४ । आधाकर्म । सूत्र० १९१ ।

औद्भूतिकी–द्वितीयभेरीनाम । विशे० ६१९ ।

औपसर्गिकं–पदस्य तृतीयो भेद । आव०३७९ । परीति औपसर्गिकम् । अनु० ११३ ।

औलूक्यं–मतविशेषः । उत्त० ३३७

इति प्रथमो विभागः समाप्तः ।

आगमवाचनादातृ - बहुश्रुत-युगप्रधानसदृश - देवसूरतपागच्छसामाचारी-
संरक्षणकटिबद्ध-श्रेष्ठिदेवचन्द्रलालभाईजैनपुस्तकोद्धार-
श्रीजैनानन्दपुस्तकालयाद्यनेकसंस्थासंस्थापक-
अनेकग्रन्थप्रणेतृ - श्रीवर्धमानजैनागममंदिर-
(सिद्धक्षेत्र)श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममंदिर-
(सूर्यपुर)संस्थापक-आगमोद्धारक-ध्यानस्थस्वर्गत-

आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरसङ्कलितः

श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

(समस्तस्वरस्वरूपः प्रथमो विभागः)

श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई-जैनपुस्तकोद्धारे ग्रन्थाङ्कः १०१ ॥